



बालकृष्ण शर्मा नवीन व्यक्तित्व एवं काव्य

[ सागर विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. उपाधि  
के लिए स्वीकृत पाठ्य-प्रबंध ]

डॉक्टर सखीनारायण वृषे

हिन्दुस्तानी एकेडेमी  
इलाहाबाद

प्रकाशक  
हिन्दुस्तानी एकेडेमी  
दशाहाबाद



प्रथम संस्करण १९०० १९१४  
मूल्य १५.०० रु०



मुद्रक  
सम्पूर्णदाद पाण्डेय,  
नागरी प्रेस, दारामञ्ज  
दशाहाबाद

## समर्पण

कविवर 'नवीन' जी के सहपाठी श्रीर मनमय मित्र  
श्रेष्ठेय डॉक्टर द्वारकाप्रसाद मिश्र  
को  
सादर समर्पित



## प्राक्कथन

मुझे प्रसन्नता है कि हमारे विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक डॉ० मरुमीनारायण दुबे के छात्र-प्रबन्ध के प्रकाशन के लिये विश्वविद्यालय-प्रनुदान-आयोग से श्रेय-पत्र प्राप्त हुई है। डॉ० दुबे का यह प्रबन्ध हिन्दी के प्रमुख राष्ट्रीय-नवि और राष्ट्र-प्रेमी पविष्ठ वाचस्पत्युष्य वर्मा 'महीम की जोबनी तथा काम्य से सम्बन्धित है। यह एक साहित्यिक शोध-प्रबन्ध के साथ ही, एक राष्ट्रीय और सार्वजनिक व्यक्तित्व का धनुर्मासन भी है। इस कारण इस प्रबन्ध में साहित्यिकता के अतिरिक्त एक सार्वजनिक आशय भी विद्यमान है। मुझे इसकी भी प्रसन्नता है कि हमारे विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग में साहित्यिक शोध-कार्य की एक विद्यमान परम्परा बनी रही है। हिन्दी-विभाग के इन शोध-प्रबन्धों में से प्रायः एक दर्जन प्रबन्ध पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं और इस प्रबन्ध द्वारा उक्त संख्या में एक और वृद्धि हुई है।

डॉ० दुबे का यह प्रबन्ध उनके प्रबन्धसाय और साहित्यिक मननशीलता का स्वस्म है। उनके वचनशक्ति से उनके इस शोध-प्रबन्ध पर जो अभिमत विद्ये हैं उनसे इसकी पुष्टि होती है। मुझे आशा है कि डॉ० दुबे के इस पुस्तकाकार प्रकाशित होने वाले शोध-प्रबन्ध का विश्वविद्यालय में स्वागत होगा और इसे समुचित सम्मान प्राप्त होगा।

हामर  
दिनांक २५-१-५४

गणेशप्रसाद मट्ट  
उपकुलपति,  
हामर विश्वविद्यालय, हामर (म प्र०)



## प्रकाशकीय

यह प्रथम अवसर है कि हिन्दुस्तानी एकेडेमी की ओर से किसी प्राबुद्धिक कवि के जीवन और कृतित्व पर सांयोगिक प्रश्न प्रकाशित हुआ रहा है। विद्येय प्रवृत्तता की बात यह है कि यह कवि स्वयं ही बासहृदय्य नामी 'नवीन' है। नवीन जी की बहुमुखी प्रतिभा से सम्पूर्ण हिन्दी जनता परिचित है। राष्ट्रीय आन्दोलन में उनका सक्रिय सहयोग बहुमुख्य रहा है। राष्ट्र के उद्बोधन के लिए उनके स्वरसुक्त गीत राष्ट्र की बहुमुख्य निधि हैं। यह बात निर्विवाद है कि स्वयंभूत कवि नवीन जी की सेवा में उनका सर्वस्व देना की संस्कृति के प्रति उनकी सम्यक् निष्ठा और उनकी ऐतिहासिक अभिव्यक्त्यात्मक वर्तमान ओर जारी पीढ़ियों का मार्ग प्रदर्शन करती रहेगी।

इस ग्रन्थ "बासहृदय्य धर्मा 'नवीन' व्यक्ति एवं कर्म" के लेखक हैं, डॉक्टर मनमोहनारायण दुबे। यह सागर विश्वविद्यालय से पी-एच.डी., उपाधि के लिए स्वीकृत उनका छोटा-ब्रह्मण्ड है। डॉक्टर दुबे ने जिस परिधम ओर मनमोहन के साथ नवीन जी के सम्बन्ध में प्रश्न-सम्पूर्ण सामग्री का चयन कर इस छोटा-ग्रन्थ को संपादित बनाने का प्रयत्न किया है वह सर्वथा सनाध्य है। हमारा विश्वास है कि इस ग्रन्थ का हिन्दी संसार में स्वागत होगा और प्रत्येक कवियों सेखकों की जीवनी और कृतित्व के अध्ययन और श्रेष्ठता में यह सहायक सिद्ध होगा। सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉक्टर मनमोहन दुबे के प्रयास से, डॉक्टर मनमोहनारायण दुबे की इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए सहायता स्वरूप विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से ₹, १५०) रुपये प्राप्त हुए हैं। एकेडेमी की ओर से हम डॉक्टर मनमोहन ओर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग दोनों के प्रति आभार प्रकट करते हैं।

२४ अप्रैल, १९५४  
हिन्दुस्तानी एकेडेमी  
इलाहाबाद

विद्या भास्कर  
मन्त्रि तथा कोषाध्यक्ष





## विज्ञप्ति

सालर विरचविद्यालय हिन्दी-विभाग के प्रमुख पी.एच. डी. का घोष-कार्य विद्यते  
 दस वर्षों से नियमित रूप से चल रहा है और इस समय एक प्रायः चार दर्जन लोग-कर्ता  
 उपाधियों प्राप्त कर चुके हैं। प्रारम्भ में कठिण चिन्तित कर्मियों और साहित्य-पुस्तकालयों  
 पर घोष प्रकाश प्रस्तुत करते का श्रम बसा था। इस विषय में एक प्रमुख कठिनाई प्रामाणिक  
 जीवनी के प्रकाश को उपस्थित हुई। स्वतन्त्र जीवनी-लेखन-कार्य जब तक हिन्दी में  
 सम्पन्नतापूर्वक नहीं प्रकृतया गया तबतक मुख्य कारण उपरोक्त सामग्री की विरलता ही  
 कहा जायगा। यद्यपि हमारा घोष-कार्य कर्म कर्तृत्व पर ही केन्द्रित रहकर सम्पन्न हो सकता  
 था परन्तु प्रामाणिक जीवनीयों के प्रकाश में यह यथेष्ट फलन नहीं हो सकता था। अतएव  
 हमें प्राथमिक रूप से अपनी घोष-विद्या बसानी पड़ी। कुछ प्रकाश युवीन मूषिकार्यों पर भी  
 सिले गए हैं जिनमें युव-विशेष के साहित्य-ग्रन्थों की कृतियों का विवेचन किया गया  
 और उनके साहित्यिक और कलात्मक प्रदेय, प्रकाश में आए गए। यद्यपि यह काम हिन्दी के  
 मार्मिक साहित्यक धारणन के लिए आवश्यक और उपयोगी रहा है, पर इतने से ही सन्तोष  
 करना हमारे लिए उचित और सम्भव न था। तब हमने प्राथमिक युग के विभिन्न साहित्यिक  
 ग्रन्थों और उनके निरूप कला-दीप्तियों में से प्रत्येक को इकाई मानकर घोषकार्य का  
 सुतोष ध्यान प्रारम्भ किया। इस शब्द में स्वच्छन्दतावादी साहित्यिक विकास पर प्रायः  
 प्राये दर्जन घोष-विषय लिए गए, जिनमें से अधिकांश कार्य सम्भव हो गया है और कुछ घोष  
 है। स्वच्छन्दतावादी काव्य कथा-साहित्य साद्व्यक्तियों—समीक्षा तथा स्वच्छन्दतावाद के  
 सैद्धांतिक आधारों पर हमारे विभाग द्वारा धर्मेक घोष प्रकाश प्रस्तुत किये गये हैं और अब  
 भी उसके कुछ वर्षों पर कार्य किया जा रहा है। विद्युत् वैचारिक सैद्धांतिक और कला  
 प्राचीन कर्मों के अनुशीलन के लिए भी हमारे घोष-संज्ञा में स्थान रहा है और कुछ  
 चिन्तित घोष-कर्ता इस कार्य में भी संलग्न हैं। प्रारंभिक साहित्य-शास्त्र और कला-विवेचन  
 के सिद्धान्तों पर स्वतन्त्र रूप से ध्यान प्रथम घोष-कृतियाँ प्रस्तुत करने की दिशा में भी हम  
 ध्यसर हो रहे हैं क्योंकि हमें आज है कि भारतीय कला या साहित्य-शास्त्र का अनुशीलन  
 जब भी परम्परागत प्रणालियों से ही हो रहा है। इसमें नवीन चिन्तन और प्राथमिक वैज्ञानिक  
 अनुभवनाओं का सम्बन्ध बंध नहीं हो पाया है। हमारी पारिभाषिक धारणाओं को इस क्षेत्र  
 में अद्यतन नहीं है। प्राचीन साहित्य-चिन्तन को तथा स्वल्प और नई धारणाओं देने की  
 आवश्यकता है। इन सबके अतिरिक्त, कठिण साहित्यिक साहित्यिक समस्याओं और प्रदेय  
 पर भी संतुलित विचारणा की आवश्यकता है जिन पर पी.एच. डी. के घोष-कार्य साद्व्यक्त  
 करते हैं। इनकी घोष भी हमारी कर्म रही है और कुछ कार्य प्रारम्भ किया गया है।

सालर विरचविद्यालय के हिन्दी-विभाग में डी. लिट. के घोष-संज्ञा कुछ विषय  
 भी निर्धारित किए गए हैं। इनमें स्वभावतः अतिरिक्त साहित्यिक और अतिरिक्त विवेचन  
 तथा धारणन की आवश्यकता प्रतीत हुई है। डी. लिट. संज्ञा को दृष्टि-कार्य कुछ है

समय में एक स्पष्ट रूप-रेखा प्रहस्य करेगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि स्फुट और सहसा प्रत्यागत विषयों पर आनुवंशिक कार्य करने की प्रेरणा विद्विष्ट-बोधना के अनुसार सुसम्बद्ध और समग्र भूमिकाओं पर शोध कार्य करने में हमारी शक्ति शक्ति है और इस शक्ति को साकार रूप देने और फलप्रसन्न बनाने में हम पिछले कुछ समय से संलग्न हैं।

डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे का शोध-प्रबन्ध पुस्तक रूप में प्रकाशित हो रहा है—यह हमारे लिए विशेष प्रसन्नता की बात है। उनके शोध का विषय आरम्भ में— 'प्रमा' तथा 'प्रताप' के कवि और भी बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का विशेष अध्ययन—रक्ता गया था और इसी रूप में यह प्रस्तुत भी किया गया था। परन्तु शोध-प्रबन्ध का प्रथम भाग जो 'प्रमा' तथा 'प्रताप' के कवियों से सम्बन्धित था और जो 'नवीन' भी के काव्य को प्रबलत पीठिका देने के प्रायः से तैयार किया गया था इस पुस्तक में सम्मिलित नहीं किया गया। उसे एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित करने का विचार है। पुस्तक का शीर्षक अब— 'बालकृष्ण शर्मा नवीन'—व्यक्ति एवं काव्य रखा गया है। इसके प्रथम भाग में 'नवीन' की श्री श्रीवती व्यक्तित्व और श्रीवती-दर्शन पर शोधपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की गई है। लेखक ने इन अध्यायों में 'नवीन' की श्री श्रीवती का नव-निर्माण किया है जो उसके जननपरत परिश्रम और पर्यटन का परिणाम है। हममें से समस्त सूत्र मिल जाते हैं जिनका आधार शक्ति कवि के काव्य और उसके प्रेरक उपकरणों का सम्बन्ध शोध किया जा सकता है।

साहित्यिक विवेचन में बार स्वतन्त्र अध्याय लगाकर लेखक ने 'नवीन' की के काव्य पर विद्वान् और प्रबलत रूप से विचार किया है। 'नवीन' की के अनेक अप्रकाशित ग्रन्थों और स्फुट रचनाओं का इसमें समग्र उपयोग किया गया है जिससे इन अध्यायों में 'नवीन'-काव्य की सम्पूर्ण सामग्री का आकलन किया जा सका है। 'नवीन' की के काव्य को विविध प्रवृत्तियों काव्य-कर्मों और अभिव्यक्ति-शैलियों में विभाजित कर उनकी स्वतन्त्र साहित्यिक विवेचना की गई है। शोधकर्ता ने विशेष कर से 'नवीन' की के 'उमिता' काव्य का गम्भीर अध्ययन और विवेचन प्रस्तुत किया है जो इस प्रबन्ध की अस्मिन्नीय उपलब्धि है।

'नवीन'-काव्य का मूल्यांकन करते हुए लेखक ने कवि के काव्य-विषय का विस्तृत अनुशीलन और विवेचन किया है और तुलना की भूमि पर रखकर आधुनिक रूप के विद्विष्ट कवियों के साथ 'नवीन'—काव्य के विशेषत्व को उद्घाटित किया है। 'उमिता'-काव्य को 'महाराज्य का महारथ लेकर, लेखक ने जो निष्कर्ष रिये हैं वे साहित्यिक विद्वानों द्वारा समर्थित होंगे—ऐसी आशा की जाती है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि यह अपेक्षित विषय का मौलिक शोध-प्रबन्ध है और इसमें व्यक्त रिये गये विचार सर्वपूर्व और पुष्ट हैं। प्रथम बार हिन्दी के विद्विष्ट कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के काव्य का समग्र अध्ययन इस ग्रन्थ में उपलब्ध होता है। यह अभिनन्दनीय कार्य के लिये डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे हिन्दी-संसार के बन्धुवार्ध और प्रशंसा के अधिपति हैं। इसी विवशत के साथ, इस शोध प्रबन्ध को पुस्तक रूप में प्रकाशित देखकर, हम हर्ष का अनुभव करते हैं।

इस शोध प्रबन्ध के प्रकाशन के लिये विद्वान् विद्वान्-समय-अनुदान-आयोग से एक समुचित

इस्य राशि प्राप्त हुई है और हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग, के अधिकारियों ने इसका मुद्रण और प्रकाशन किया है। इस निमित्त हम विश्वविद्यालय-अनुदान आयोग और हिन्दुस्तानी एकेडेमी के अधिकारियों को धन्यवाद है। विशेषकर 'एकेडेमी' के वर्तमान अध्यक्ष श्री रामकृष्ण राव और उसके मंत्री श्री बिद्या भास्कर ने पुस्तक को समय पर प्रकाशित कराने में जो उत्पत्ता दिलाई है और पुस्तक के प्रकाशन में यदि ये अन्त तक बिलचस्पी सी है, उसके लिये हम उनके अत्यधिक अनुमोदित हैं।

सागर

महाशिवरात्रि

मं० २०२० ।

नन्ददुन्दारे वाजपेयी

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग

सागर विश्वविद्यालय सागर (मं० प्र०)

## निवेदन

स्वर्गीय श्री बाठरूपसुधर्मा 'नबीन' के सर्वज्ञोद्गी व्यक्तित्व ने हमारे काव्य-साहित्य को जो प्रभाव एवं धनुषी निधि प्रदान की है, उसके विविध एवं व्यवस्थित मूल्यांकन का प्रथम समय आ गया है। इस दिशा में प्रस्तुत-ग्रन्थ एक विभूत प्रयास है जो कि मेरे शोध-प्रबन्ध का परिष्कृत तथा परिमार्जित रूप है। 'नबीन' जी की रचनाओं में प्रारम्भ से ही मेरी अभिरुचि थी जिसने प्रथम शोध-वृत्ति का आकार बारम्बार कर लिया है। कवि के सांसारिक निधन के समय से ही मैंने इस विषय पर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था।

यह ग्रन्थ 'नबीन' जी के सहपाठी एवं अनन्य मित्र 'दृष्यामल-महाशय्य के रचयिता, सागर विश्वविद्यालय के घुलपूर्व उप-कुलपति तथा मध्यप्रदेश के वर्तमान मुख्य-मंत्री धावरश्रीय डॉ० द्वारकाप्रसाद मिश्र को सागर समर्पित किया गया है। 'नबीन' जी से अपने जीवन-निर्माता श्री गणेशचन्द्र विद्यापी के विषय में जो कहा था वही मैं भी पुण्य मित्र जी के लिये कह सकता हूँ— ठरे बरव हस्त छाए है सब भी मेरे मस्तक पर। इस दुःख भेंट को स्वीकार कर, उन्होंने मुझे चिर-उपकृत किया है। वे मेरे पुत्रनीय स्वजन हैं इसलिए उन्हें धन्यवाद ज्ञापित न करके मैं उनसे ममताशोध की ही कामना कर सकता हूँ।

प्रस्तुत-ग्रन्थ के 'प्राक्कथन लिखने की जो रूप शायद्वृत्ति श्री गणेशचन्द्राद भट्ट उप-कुलपति सागर विश्वविद्यालय सागर ने की है उसके लिए मैं उनका अत्यन्त धांधारी हूँ।

भद्रेश धांधारी श्री नन्दकुमारे बाबुरेयो ने ही मुझे यह विषय सुझाया और यन्त्रि 'नबीन' जी के शय्या में कहीं तो उन्होंने शोर मचाकर मैं जयपी भारत-श्रीप बाठी विद्याएँ संतोषी किया आलाकृत आसमान। उन्हीं के ही पुनीत तथा सारवमित निर्बंध के अनुसार मैंने 'नबीन' जी की 'जीसामूमि' एवं 'कर्ममूमि' से सम्बन्धित अनेक स्वार्थों की शोध-यात्राएँ कीं कवि के जीवन-जगत् के विभिन्न क्षेत्रों से संसन् व्यक्तियों से प्रत्यक्ष-भेंट की विविध सूचनाएँ और संस्मरण एकत्र लिये विस्तृत पत्र-व्यवहार किया और अन्ततः अपने शोध-विषय से सम्बन्धित प्रकाशित तथा अप्रकाशित और मौखिक एवं समीक्षारमक सामग्री का संकलन किया और उसे प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का सुविन्यस्त रूप प्रदान किया। सामग्री-संकलन एवं उसके समुचित उपयोग का ही नहीं इस प्रबन्ध में प्राणरस के संभार करने का भी सम्पूर्ण श्रेय उन्हीं का ही है। धांधारी बाबुरेयो जी का आभार प्रदर्शन के शोधकारिक-सूत्र से बना बाँधू, क्योंकि जिससे आसोक प्राप्त किया उन्हीं आसोकित करने की धृष्टता क्या की जाय ? वे मेरे 'सर्वस्व' हैं मैं उनके समस्त आभार नत-मस्तक हूँ।

धनी शोध-यात्रा सामग्री-संकलन पत्राचार आदि में जिन महानुभावों एवं संस्थाओं ने मुझे प्रत्यक्ष प्रयत्न परोष रूप में सामग्री, सूचना एवं सहयोग प्रदान किया है, मैं उन सब का हृदय से धांधारी हूँ। विशेषकर धांधारी डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी धांधारी श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र डॉक्टर श्री नगेन्द्र डॉ० श्री मुकेशचन्द्रप्रसाद मिश्र 'माधव' श्री सचमीचन्द्र वैन और श्री रामोदरदास आसानी डा० प्राठ स्नेह, सूचना सुविधा एवं सामग्री आदि प्रविस्मरणीय हैं।

घोर उपर्युक्त मनीषियों के प्रति मैं अपनी आत्मिक आभार एवं अहंतिम इतलहता आपित करना कर्तव्य समझता हूँ। इस प्रबन्ध में बिदर सैद्धों को कृत्रिमों आदि का उपयोग किया गया है, उनका मो मैं धनुगृहीत हूँ।

इस सुभाषण पर, मैं अपने अट्टाष्टाद पारिवारिक-जनों को भी नहीं भूख सकता हूँ जिनमें आ महादेवप्रसाद इमारी और श्री रामनारायण दुबे प्रमुख हैं। उपर्युक्त स्वजनों घोर धनुज-द्वय बि० हृदयनारायण दुबे, एम० ए , एम० एड०, 'साहित्यरत्न' एवं बि० जयप्रकाश नारायण दुबे एम० बी० बी० एस० ( प्रथम वर्ष ) ने जो प्रोत्साहन और सहयोग प्रदान किया उसके लिए मैं उनके प्रति पूर्ण अट्टा और निर्योप स्नेह अभिभक्त करता निजी धर्म समझता हूँ।

विश्वविद्यालय धनुमान-आयोग, सागर विश्वविद्यालय और हिन्दुस्तानी एकेडेमी का मैं निर्योप कृतज्ञ हूँ जिनके सम्मिलित प्रयत्न से मेरा शोध प्रबन्ध प्रकाशित ग्रन्थ में परिणत हो रहा है।

प्रस्तुत कृति में 'शरीर' की के कवि-व्यक्तित्व को उद्घाटित करने की मेरी दिनभ्र वेष्टा निहित है। यदि मैं उस महत्वपूर्ण और मन्वीर व्यक्तित्व को आधिक रूप से भी, इस ग्रन्थ में, उद्घाटित करने में सफल हुआ हूँ तो मेरी इतिकार्यता इतने से ही परियुक्त है। यदि बिद्वानों और पण्डितजनों को इसमें कुछ भी सार दिखाई दिया तो यह मेरे लिए अतिरिक्त नाम और परितोष का विषय होगा।

सी-१५ सागर विश्वविद्यालय }  
सागर (म० प्र०) }  
दिनांक १ मार्च, १९६४ ई०। }

नरुमीनारायण दुबे

## विशेषज्ञ-अभिमत

(१) ~ इस प्रकार यह देखा जायगा कि अनुसंधायक ने सूचनाओं की बृहत् राशि के संश्लेषण और उनके काव्य के प्रमुख प्रकार तथा प्रकृतियों के वर्गीकरण एवं विस्तेरण में महत् धैर्य प्रदर्शित किया है। अनुसंग्रहस्तु द्वारा जिस रूप में दोष-प्रबन्ध प्रस्तुत किया गया है, वह मार्ग-दर्शक कार्य की प्रकृति का है। कुछ नहीं तो शाय-प्रबन्ध स्वयं अपने ध्यान में एक पद्यभूत कृति है और इसी कारण विशेष प्रशंसा के योग्य है।

भाचार्य नन्ददुसारे बाजपेयी  
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी-विभाग  
सागर विश्वविद्यालय, सागर (म० प्र )

(२) प्रबन्ध-सैखक बड़े परिमती बाल पड़ते हैं। उन्होंने सामग्री-संकलन का कार्य बड़ी लगन और निष्ठा के साथ किया है। वे कुछ दुर्लभ सामग्री संकलित करने में सफल भी हुए हैं। स्व० पं बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' बड़े मस्तमौला और फनकड़ व्यक्तिये। उन्होंने अपनी रचनाओं की सुरक्षा भी कभी चिन्ता नहीं की। उनमें अपनी धापको सुराते रहने को धूर्त क्षमता थी। उनके अनिच्छ मित्र भी उनकी सभी रचनाओं के बारे में नहीं जानते। ऐसे फनकड़ कवि की रचनाओं को खोज निकालना और उन्हें कासकम से सजाकर साहित्यिक धामोचना का विषय बनाना कठिन कार्य था। मुझे यह कहने में प्रसन्नता है कि प्रबन्ध-सैखक ने इस कठिन कार्य को धैर्य के साथ किया और सफलता प्राप्त की है। प्रस्तुत परोक्ष 'नवीन' की के निष्कट सम्पर्क में जाने पर सबसर प्राप्त कर चुका है। परन्तु उसे यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि प्रबन्ध-सैखक की संकलित सामग्री में उस बहुत सी गई जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं। सैखक ने 'नवीन' की के काव्य का मुस्ताकन सहानुभूति के साथ किया किन्तु इस सहानुभूति से उनके विस्तेरण और धामोचन-कार्य में बाधा नहीं उपस्थित हुई। परन्तु सब विस्ताकर उनकी विनोयल-वृद्धि सुकिसंपन्न है और निष्कर्ष स्पष्ट और ग्राह्य है। उन्होंने हिन्दी साहित्य के भाषी दोषार्थों के लिए महत्वपूर्ण सामग्री भी है। भाषा प्रीड़ और विपदानुसूत है। सब विस्ताकर मुझे प्रबन्ध से सम्ताप है। इसक सैखक ने धनता कार्य बहुत धक्की तरह किया है। इस प्रबन्ध में उनकी विस्तेरण-वृद्धता और ठीक निष्कर्ष पर पहुँचने की क्षमता प्रमाणात हुई है।

भाचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी  
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी-विभाग  
पंजाब विश्वविद्यालय लखीगढ़ (पंजाब)

(३) ~ परन्तु उन्होंने दोष प्रबन्ध में इतनी कठोर साधना की है, प्रायः समस्त जनसम्प कोशों से इतनी उतावरे धामो एकत्रित की है कि उनका कार्य ऐतिहासिक परिभा का चिरस्मरणीय सैखक बन गया है। शाय प्रबन्ध, मुउन सामग्री को विपुल मात्रा में प्रकाश में

जाता है जिसे अनुपबिन्दु ने योग्यतापूर्वक ऋमबद्ध किया और बिदसेपित किया। इस प्रकार, घोष-प्रबन्ध सनम अनुसन्धान की दो आवश्यक परिधीमाद्यो की परिपूर्ति करता है यथा— (क) ठप्पों का धन्वेपण ( जिसका कि हम प्राप्नुय पाते हैं ) और (ख) टप्पों की अन्ततः व्याख्या और लेखन के आलोचनात्मक अनुपासन तथा परिपक्व निर्णय के सामर्थ्य को निश्चित करता है। यह स्वच्छ साहित्यिक षैली में लिखा गया है और सन्दर्भ, ठासिकाएँ एवं परिशिष्ट सबथा पूर्ण हैं। एतदर्थ ने संस्तुति करता है कि 'डॉक्टर आफ फिलॉसफी' की उपाधि से अनुसन्धायक को विनूयित किया जाय जिन्होंने हिन्दी की सच्ची सेवा की है।

डॉ० नगेन्द्र एम० ए० डी० लिट०

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी-विभाग

दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

(४) इसमें कोई सन्देह नहीं है कि श्री दुदे ने प्रत्येक प्राप्त सामग्री के आचार पर यह माप रक्त्त बड़े परिभम से सिद्धा और श्री 'नवीन' क सम्बन्ध में प्रत्येक इतिवृत्त और धम्ना का परिशीलन बड़े विस्तृत और व्यापक रूप से किया। किसी भी कवि के सम्बन्ध में इतनी विस्तृत समीक्षा अभा तक नहीं हुई। जहाँ तक इसके प्रकाशन का सम्बन्ध है यह प्रबन्ध निरन्तर ही प्रकाशन के योग्य है।

डॉ० रामकुमार वर्मा

एम० ए० पी०एच० डी०

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दा-विभाग

प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग (उ० प्र०)

(५) प्रथम की विज्ञप्ति' से उद्धरणीय श्रंदा— 'जहने की आवश्यकता नहीं कि यह बनने विषय का मौलिक-धोष-अग्रभ है और इसमें व्यक्त किये पये विचार तर्कपूर्ण और पुष्ट हैं। प्रथम बार हिन्दी क विभिष्ट कवि बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' क नाम का समग्र अध्ययन इस ग्रन्थ में उपलब्ध हाता है। इस अधिनतन्त्रोय कार्य क लिये डॉ० सखीनारायण दुबे हिन्दी संसार के धन्वबाद और प्रशंसा के अधिकारी हैं।'

भाचार्य नन्ददुलारे वाजपयी



## विषय-सूची

१ सूचिका	१
२ बीबनी	३७
३ व्यक्तिगत घोर बीबन-वर्णन	१०५
४ विहंगमचलोकन एवं वर्गीकरण	१४७
५ राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य	१८१
६ प्रेम एवं दार्शनिक काव्य	२१८
७ महाकाव्य उदयिता	२८८
८ काव्य-शिल्प	३८५
९. निष्कर्ष	४१५
१० परिशिष्ट	४२३

प्रथम अध्याय

भूमिका



## भूमिका

सामान्य—भाषुनिक हिन्दी-काव्य का इतिहास अपने स्टाइ में अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ एवं विविधताओं को समाहित किये हुए है। भाषुनिक काल में हमारे हिन्दी-काव्य की सर्वोत्तम प्रगति हुई और उसकी अपरम्पितों का शासक एवं ऐतिहासिक महत्त्व है।

भाषुनिक युग के भारतेन्दु एवं द्विवेदी-युग में हमारी कविता बारा में अपने भूतन शृंगार एवं विषय पाये। भाषुनिक हिन्दी-काव्य की नींव वहाँ भारतेन्दु-युग में स्थापित हुई, वहाँ द्विवेदी युग में उसकी परिपुष्टि हुई। छायावाद-युग में आकर हमारा काव्य प्रौढ़ता की ओर उन्मुख हुआ और उसकी विभिन्न शाखा-शखाशाखों में मौसमता तथा श्रुतता के वर्णन होने लगे। स्वप्नवादावाद की लहर ने जो द्विवेदी-युग को परवर्ती युग से विभिन्न किया। इसी सम्बन्ध युग में ही 'प्रवाद 'नवीन,' 'निराला आदि कवियों ने अपने काव्य का समारम्भ किया।

डॉ० नगेन्द्र ने भाषुनिक हिन्दी कविता की दो मुख्य विन्तापारा निकसित की हैं— आदर्शवादी विन्तापारा और भौतिकवादी विन्तापारा। आदर्शवादी विन्तापारा के अन्तर्गत वहाँ छायावाद तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता को सम्मिलित किया गया है, वहाँ भौतिकवादी विन्तापारा में प्रवृत्तिवाद एवं प्रयोगवाद की। वैयक्तिक कविता को आदर्शवाद और भौतिकवाद का सेतु-सार्थ माना गया है। ये ही भाषुनिक हिन्दी-कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ मानी गई हैं।<sup>१</sup>

श्री कामकृष्ण शर्मा 'नवीन' को आदर्शवादी विन्तापारा के द्वितीय पक्ष राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता-श्रेणी में रखा जाता है। आचार्य मन्दकुमारे बाबूदेवी ने वहाँ उन्हें 'बीर रम के स्वरेत प्रेमी कवि' कहा है,<sup>२</sup> वहाँ डॉक्टर नगेन्द्र ने भी उन्हें 'राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य पारा का ही कवि माना है।<sup>३</sup>

'नवीन' की के व्यक्तित्व तथा काव्य का अनुशीलन करना ही इस चौध-ग्रन्थ का मुख्य ध्येय है।

चौध की विषय परिधि—'प्रमा' एवं 'प्रवाप में प्रकाशित एवं प्राप्त नवीन की के लयप काव्य को प्रस्तुत प्रबंध में अनुशीलन का विषय बनाया गया है।

श्री कामकृष्ण शर्मा 'नवीन' के विषय अध्ययन में उनकी काव्य-श्रुतियों का ही अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, मद्य का नहीं। 'नवीन' की के मद्य का उपयोग उनकी विचार बाध भ्रंशण आत एवं यथावश्यक पुष्टि के लिए यत्न-सत्र किया गया है।

१ डॉ० नगेन्द्र—'भाषुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ', पृष्ठ ३।

२. आचार्य मन्दकुमारे बाबूदेवी—'हिन्दी साहित्य की लहरों का इतिहास', विचार, पृष्ठ ३।

३ डॉक्टर नगेन्द्र—'भाषुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ', राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता, पृष्ठ ११-११।

प्रस्तुत प्रबन्ध में 'नवीन' की की बीचनी व्यक्तित्व एवं विचारधारा के साथ ही उनके काव्य का विस्तृत एवं गहन अनुशीलन है। काव्य में भी न केवल प्रकाशित अपितु अप्रकाशित काव्य का प्रचुर उपयोग कर उसे भी समान रूप से विश्लेषण का साधारण बनाया गया है। अप्रकाशित काव्य को क्रिया भी प्रकार शीघ्रता या उपेक्षा का पात्र नहीं बनना पड़ा है।

इन प्रमुख परिशीलाओं तथा विश्लेषणों के अन्तर्गत प्रस्तुत शोध-विषय के अनुशीलन का अधिकतम प्रयास किया गया है। मानव-ज्ञान विभास महासागर के छद्मत्व है, यद्यपि उद्य पर बाधा करना अपनी मूर्खता तथा अहम्भावना का ही बाधा प्रदर्शन करता है। एतदर्थ प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में यथा-सामर्थ्यानुसार अनुशीलन करने की छुट देना ही की गई है।

विषय-विश्लेषण का दृष्टिकोण—साक्षात्कार तथा अनुसन्धान के अन्तर्गत को हृदयबन्ध करते हुए, प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में वैज्ञानिक पद्धति को ही अपनाने प्रयत्न किया गया है। उच्च एवं मर्म उद्घाटन वाला ही के सम्बन्धित रूप को प्रथम प्रदान करने की चेष्टा की है। मुझे विषय के आग्रह के कारण व्यापक क्षेत्र से सम्बन्ध रखना पड़ा है, एतदर्थ उसे भी अनुशीलन का धर्म ही माना गया है।

विषय-अनुशीलन में काव्यत्व एवं उसकी विविध समीक्षा को ही प्राधान्य दिया गया है और जो भी अन्य धर्म पापक-तत्व आनुपंगिक प्रवृत्तियाँ आदि धारि हैं उन्हें धारण्यता तथा प्रसंगानुसृत महत्व की सीमा से प्रतिबन्धित नहीं होने दिया गया है। विषय की प्रायः प्रत्येक वस्तु एक उपादान को प्रमुख पक्ष के सापेक्ष रूप में ही प्रस्तुत करने की भरसक चेष्टा की गई है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में पुनरावृत्ति से बचने का प्रयत्न किया गया है परन्तु जहाँ जहाँ और प्रसंगानुसृत यह आवश्यक भी हो गया है तो सम्बन्धित तथ्यों एवं मर्म उद्घाटन को एक स्थान पर ही प्रदानता की गई है और दूसरे स्थान पर उसको आनुपंगिक महत्व प्रासंगिक निर्देश प्रकृत संकेत मात्र से ही निरूपित किया गया है। कवि-व्यक्तित्व के गुण एवं प्रवृत्तियों का निरस्य-वृत्ति के साथ विश्लेषण किया गया है।

विषय की उपसर्ग सामग्री—प्रस्तुत शोध-विषय की सामग्री की कई स्थितियाँ एवं विशेषताएँ हैं जिनका सम्यक् उद्घाटन ही, सम्बन्धित चित्र का साधोपाग रूप उपस्थित कर सकता है।

मौलिक सामग्री—'नवीन' को के बिन्दु हुए साहित्य की समस्या पर विचार करते हुए इसका बहुत कुछ बोधोपेक्षण स्वयं कवि पर और कुछ अन्य व्यक्तियों पर किया जा सकता है। 'नवीन' की जैसे अन्वेषण एवं मर्म व्यक्तित्व में कभी भी अपने साहित्य का उद्योग प्रकृत विविध संघर्ष नहीं किया। इसका परिणाम अब दृष्टिकोण ही हो रहा है। डॉ० मुमन ने लिखा है कि अपनी रचनाओं के प्रकाशन के प्रति कवि का कुछ ऐसा उपेक्षा भाव था कि पात्र के रूप के आचरण-वर्तियों का राष्ट्रीय संघर्ष भी इस आभास का प्रविष्टिगत प्रवाह-मूल प्राप्त कर मरना बर्धन हो रहा है। डॉ० रामगोपाल अनुबेदी ने भी लिखा है कि डॉ० बाबूकृष्ण शर्मा 'नवीन' का गद्य-साहित्य मध्य-उत्तर विचार पड़ा है। उनकी प्रकाशित कहानियों

की जब एक झाना ही रहा गई है। उनके लिये सैर भी नहीं निकलने से मिलने कठिन है। जब वह 'प्रताप' में काम करते थे उनकी सेखनी का प्रसाद पाठकों को जब-तब मिला करता था किन्तु उन सेखों का भी किसी ने संग्रह मात्र तक नहीं किया है। उनके अनेक भाषण, जो उन्होंने मिला-मिला मौकों पर दिये थे, वे भी उपलब्ध नहीं। घामद ही कोई साहित्यकार इतना साधारण रहा हा अपने बारे में और अपनी कृतियों के बारे में, जितने नबीन जी थे।<sup>१</sup>

यथार्थ बस्तु-स्मिति का उद्घाटन इस कथन से होता है—भा बनारसीदास बतुबंदी ने लिखा है कि अभी उस दिन बिल्की बिस्वबिद्यालय के एक प्रतिष्ठित अध्यापक ने 'नबीन जी की रचनाओं का जिम्मे धारण पर हमसे कहा था— 'बिन व्यक्तियों के पास नबीन जी के पद्य और पद्य की सामग्री है उन्होंने घामद समझ लिया है कि वह लाखों रुपये की बीज है, सेक्टर वे एक बात मूल गये है वह यह कि वस वर्ष बाद उसे कोई तीन कौड़ी को भी नहीं पूछेगा।<sup>२</sup> बतुबंदी जी ने ही लिखा है कि 'यदि हम लोगों की इच्छा का यहाँ हास रहा था १० वर्ष के भीतर ही गरीब भी तथा नबीन जी की कृतियों को भी भोग बिलकुल मूल जायेंगे।<sup>३</sup> श्री बनारसीदास बतुबंदी ने मुझे लिखा था कि सम्बन्धित व्यक्तियों से नबीन जी विषयक मसाला, कुछ भी मिलना यदि प्रसम्भव नहीं तो प्रकल्प कठिन प्रयत्न है।<sup>४</sup>

'नबीन' जी के सात काव्य-ग्रन्थ ( कुंकुम रविपरेखा, भ्रमरक क्वासि जिनोबा स्तवन दर्मिशा एवं 'प्रणवर्ण ) प्रकाशित हैं और छ' ग्रन्थ अभी प्रकाशित हैं। वे छ. काव्यकृतियाँ उनकी दार्शनिक कविताएँ ('सिरजन की बसवारे' वा 'तुपूर के स्वर'), दोहों (नबीन दोहावली) लघु प्रेम कविताओं ('बीबन मन्दि' वा पावस पोड़ा) राष्ट्रीय कविताओं (प्रत्यर्कर), प्रणव-काव्य (स्मरण-दीप) और मरण-गीत (मुख्य धाम या शुभग मीम) से सम्बन्धित हैं।<sup>५</sup> इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका लगभग साबा काव्य-साहित्य प्रकाशित ही पड़ा है। इस साहित्य के खीम ही प्रकाशित होने की सम्भावना है। कलकत्ता में मेने हम लघुपूर्ण प्रकाशित काव्य-संग्रहों का उनकी मौलिक पाण्डुलिपि में अध्ययन तथा यथावश्यक टिप्पणी-लेखन किया है और उसका उपनाम प्रस्तुत घोष-ग्रन्थ में किया गया है।

'नबीन' जी की कविताएँ अनेकानेक पत्र-पत्रिकाओं की संशिकाओं में दबी पड़ी हुई हैं। अभी भी उपरिलिखित कयोचत काव्य-कृतियों में कतिपय कविताएँ नहीं धा पाई हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की पुरानी संशिकाओं से, इस प्रकार की कविताओं का भी मेने संकलन एवं संकलन किया है, जिनका उपयोग भी प्रस्तुत घोष-ग्रन्थ में किया गया है।

इस प्रकार, 'प्रभा' एवं 'प्रताप' की पुरानी संशिकाओं के काव्य का उनके प्रकृत और

१ 'प्राज्ञरत्न, 'नबीन' जी के पद्य-साहित्य पर एक दृष्टि, त्रिमासिक, १९६२, पृष्ठ ४९।

२ 'नर्ववा', प्रवृत्त, १९६१ पृष्ठ १४०।

३ वही।

४ श्री बनारसीदास बतुबंदी का मुझे लिखित दिनांक ६-२-१९६० का पत्र।

५ विभिन्न विषयों से मिले हैं—

उद्दिष्टकाव्य काव्य-संकलनों में से उपलब्ध कर, 'नवीन' भी की अप्रकाशित मौलिक काव्य सामग्री के ध्वनेपत्र एवं प्राप्ति की दिशा में जो प्रयत्न किये गये उनका बहुत संक्षिप्त विवरण मात्र ही दिया गया है।

समीक्षारमक सामग्री—प्रस्तुत सामग्री की दो बर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(अ) प्रकाशित सामग्री

(ब) स्व प्रयत्न द्वारा प्राप्त सामग्री।

(अ) प्रकाशित सामग्री—

'नवीन' जो पर उनकी मृत्यु के पूर्व एवं उत्पत्त्यात् जो सामग्री प्रकाशित हुई, उसके अपनी सुविधा के लिए, दो भागों में बाँट सकते हैं—

(१) जीवनी सम्बन्धी सामग्री

(२) साहित्यालोचन सम्बन्धी सामग्री

(१) जीवनी सम्बन्धी सामग्री—

'नवीन' की के व्यक्तित्व एवं जीवनी के विविध पक्षों को उद्घाटित करने वाली जो सामग्री समय-समय पर प्रकाशित हुई, उसका विवरण निम्नलिखित रूप में है। जीवनी सम्बन्धी सामग्री दो रूप में प्राप्त होती है—

(क) पुस्तकों में प्राप्त सामग्री

(ख) पत्र-पत्रिकाओं में प्राप्त सामग्री।

(क) पुस्तकों में प्राप्त सामग्री—

(१) 'साहित्यकारों की आत्म-कथा —

सम्पादक—श्री बैबलठ छात्री श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' द्वारा लिखित 'मेरी अपनी बात' पृष्ठ ८१ १०२।

(२) 'मैं हूँ ते मिला'—

जेटकर्ता डॉ० पद्मसिंह धर्मा 'कमलेश श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' पृष्ठ ३८-५६।

(३) 'रेखा चित्र'—

श्री बनारसीदास ज्युर्वेदी श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन', धीरेक शैब।

(४) साहित्यकार-निष्ठ से—

श्री बेबीप्रसाद धवन 'विक्रम' पं० बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' पृष्ठ १० १८।

(५) हिन्दी-साहित्य का विकास और कालपुर—

श्री नरेन्द्रचन्द्र ज्युर्वेदी बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' पृष्ठ २३७-२३८ तथा ३३६ ३५६।

(६) डॉक्टर नौदर के श्रेष्ठ निबन्ध—

सम्पादक—श्री भारतभूषण अग्रवाल 'बाबा' स्वर्गीय पं० बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' पृष्ठ १५७ १५५।

(७) बट-पीपल—

श्री रामचारी सिंह 'दिग्दर्शक'

पं० बालकृष्ण धर्मा 'नवीन'

(क) कुछ संस्मरण पृष्ठ २७-३१ (ख) एक अमिनन्दन-वचन पृष्ठ ३१ ३२ (ग) मिट्टी का पत्र आकाश के नाम, पृष्ठ ३३ ४० ।

(द) नये-पुराने धरोखे—

डॉ० हरिबंसाराम 'बच्चन' 'नवीन जी' एक संस्मरण पृष्ठ १७-३०, 'कविचर' 'नवीन' जी पृष्ठ ३१ ३८ ।

(३) आत्मघटाशी विविधा—(सन् १९६०)

श्री बबाइराम महारु बासकृष्ण शर्मा 'नवीन' पृष्ठ ६ ।

(ब) पत्र-पत्रिकाओं में प्राप्त सामग्री—

'नवीन' जी की बीचनी एवं व्यक्तिगत सम्बन्धी सामग्री उनके बीचन-काल तथा मरखोपरान्त प्राप्त होती है । यह सामग्री विशेषतया उनकी मृत्यु के पश्चात् विपुल रूप में प्रकाशित हुई । अधोनिर्दिष्ट तीस बर्गों की सामग्री में उनके व्यक्तिगत सम्बन्धी सूत्र प्राप्त होते हैं —

- (१) संस्मरण,
- (२) धडाअभियाँ
- (३) सम्पादकीय टिप्पणियाँ

उपरिलिखित बर्गों की प्राप्त सामग्री की विवरणात्मक विस्तृत तालिकाएँ इस प्रकार हैं । समस्त प्राप्त सामग्री को प्रकाशन के कासकमानुसार प्रस्तुत किया गया है —

(१) संस्मरण—(क) घटसु के पूर्व—

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
१	श्री रामारायण मुक्त	नवजीवन	५० बासकृष्ण शर्मा 'नवीन'	२०-७-५१	२३
२	"	"	"	१२ ११-५१	३
३	"	"	"	३० ११ ५१	५
४	श्री महेश चरण बौद्धी ललित	हुलचल	व्यक्तिवर्णन बासकृष्ण शर्मा 'नवीन'	१७-५ १९५५	११ १२
५	"	"	"	१-६-५५	११ १२
६	"	"	"	१६-६ ५५	७ वा १०
७	"	"	"	१-७-५५	११ १२
८	"	"	"	१६-७-५५	
९	"	"	"	३१ ७-५५	४
१०	"	"	"	१५-८ ५५	१३
११	"	"	"	३०-८-५५	१३



क्रम	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिनि	पृष्ठ
३१	श्री रामभारी सिंह दिलकर'	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	जिजीविया के चार वर्ष मृत्यु के साथ बीरता पूर्व संघर्ष श्री मार्मिक कहानी ।	१-७-१०	६१०
३२	श्री रामचरण शर्मा	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	फरीर बावणाह मेरे दादा	२-७-१०	१७-१८
३३	श्री रामचरण विद्यार्थी	"	मेरे जेल के साथी	"	२६
३४	शुभ श्री देववती शर्मा	"	निस्वार्थ प्रीति का बहु धर्म गायक	"	२३३३३
३५	श्री नरेगचन्द्र चतुर्वेदी	"	आमी देवमठ और सहृदय	"	१७-४
३६	श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	"	मनवन्त संघर्ष क प्रतीक नबीन जो	१०-७-१०	११ १२
३७	श्री पद्मासाठ निपाठी	"	नबीन श्री एक विमलरण्य व्यक्ति	"	१७ व १६ २०
३८	श्री प्रबन्धोन्म कुमार	"	बहु धर्म्या से लड़त और प्रेम के घागे भुङ्कते थे ।	"	१६
३९	श्री बहादुर शर्मा	"	पं वासुदेव्युध रार्मा नबीन जैसा मैंने उन्हें देखा ।	"	२३ २७
४०	श्री यशपाल शर्मा	"	नबीन जो जैसे मैंने	"	२७
४१	श्री ठाकुर प्रसाद सिंह	शाम्या	क्योंकि तुम जो कह मैंने हो तुम इतने रात का मय	२४-७-१०	३
४२	श्री रामानुज लाल श्रीवास्तव	सरस्वती	मुझका तो हो तुम नित नबीन	बुलाई ३०	२८-१०
४३	श्री प्रेमसंकर	हिमप्रस्थ	स्वर्गीय नबीन जो	बुलाई ३	३४ व ३
४४	श्री देवीप्रसाद शर्मा 'निकल'	ज्ञानमापटी	पं वासुदेव्युध रार्मा नबीन	बुलाई ३	६ व १०
४५	श्री कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'	शाम्या	नबीन जो रत्नाकर वे और रत्न पारसी थे	१५-८-१०	८
४६	श्री सूर्यनाथपण श्याम	बीला	बन्धुवर नबीन का पुष्प-स्मरण	प्रमत्त-सिध ० १६३०	४६१ ४६५

क्र०	लेखक	परिष्कार	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
४७	श्री रामानुज शास्त्री	बीरा	महीन जी एक सच्चे सिपाही	भागस्त-सित० १९६०	४९७-४९९
४८	श्री परियूर्णानन्द वर्मा	"	प० बालकृष्ण शर्मा महीन	"	५००
४९	श्री गोपीबन्धन उपाय्याय	"	बालकृष्ण शर्मा महीन जी	"	५०१
५०	श्री रामनारायण उपाय्याय	"	महीन जिनकी याद कभी पुरानी नहीं पड़ सकती।	"	५०२
५१	स्व० कृष्णलाल श्रीवास्तव	"	मेरे संस्मरण	"	५०४
५२	श्री मण्डेसराय शर्मा 'इन्द्र'	"	संगीतमय जीवन	"	५०५
५३	श्री बेबीप्रसाद बबन 'विक्रम'	ग्राम्या	पं० बालकृष्ण शर्मा महीन साहित्यकार	३०-९६०	५
५४	श्री शक्तिप्रिय द्विवेदी	कल्पना	धीर नेता	सित० ६०	२५-२८
५५	श्री गोपीनाथ शर्मा 'समन'	प्रहरी	हुतात्मा	१९१०-६०	७-८
५६	श्री बंकेश्वर नारायण त्रिपाठी	मनमोह	जेल के साथी	महीन जी	५१-५२
५७	श्री मयवतीचरण वर्मा	कमलम्बिनी	महीन जी	मन्मथर ६०	१८-२१
५८	श्री पद्मासाध त्रिपाठी	सरस्वती	महीन जी के जीवन की कुछ घण्टियाँ	दिस० ६०	३९९
५९	श्री राजबेन्द्र	नव जीवन	महीन जी के जीवन की कुछ घण्टियाँ	मन्मथर ६०	४०३
६०	श्री पद्मालाल त्रिपाठी	त्रिपयमा	महीन जी का व्यक्तित्व	सन् १९६१	—
६१	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	भास्व	पं० बालकृष्ण शर्मा 'महीन' जीवन की एक म्मलक	अप्रैम ६१	६५-६९
			महीन जी के जीवन की कुछ घण्टियाँ स्मृतिपी 'मेरा भाव तुम्हें करना होगा'।	११ ५-६१	१०

क्र०	कृषक	पत्रिका	शालांकुष्ण घमा नबीन	व्यक्ति एवं वयस्य
			दार्पक	त्रिधि पृष्ठ
६२	भा बुन्दावन माम बर्मा	बिन्दुन	नबीन वा मरा नबीन	जून-जुलाई २०-२८
६३	श्री कृपागकर त्रिबारी	"	रह	११ ५०
६४	डॉ० स्वामिमुन्दरनाथ दीक्षित	"	रह नबीन की बब	
६५	श्री कन्हैयालाल वैद्य	"	बुध पर बड़े से	५१-५६
६६	श्री जयबन्धनराय चौहरी	"	बिन्दु नवान पञ्चिन	
६७	श्री कृष्णकाल्य व्यास	"	बासकृष्ण घर्मा	५०-६२
६८	श्री मोहनचन्द्रनाथ महुटा	"	मासबा क महामानव	
६९	श्री निबन्धनाप सिद्ध	"	म अश्विन अंत	६३-६५
७०	श्री स्वकनकुमार गणैय	"	एक धनुज के मस्मरण	
७१	श्री हरिप्रकाश मयूरकर	"	के दिन मूष नशी पाता है।	जून-जुलाई ६६-६७
७२	श्री मोहनाथराय त्रिबारी	"	अश्विन मोन-दान से	६०-६८
७३	श्री कैलाश घर्मा	"	उपस-मुपस मन्वा मए।	
७४	श्री बाबूलाल कोठारी	"	माई नबीन बिन्दू	६८-७०
७५	श्री जगज्जुल मयंक	"	पूसना सबा असम्भव	७१-७३
७६	श्री देवदत्त मिश्र	"	वे जले मये लेकिन	
७७	डॉ० निबन्धनाप सिद्ध कुमन	"	बाँसुरी घुँस रही है।	७४-८०
७८	डॉ० पुष्पाब राय	"	त्रिधि दिन जिनकी	
७९	श्री रामचरण घर्मा	"	यार मठाठी	६१
			हो बिन्दु	
			उदारावैठा नवान की	८०-८१
			मोह-भाया त्याग-यव	८४-८५
			पर बड़ मए है।	
			आकाश में उमड़ी स्वर	८६
			लहरी मूँवेगी।	
			नबीन प्रतापवाटिका	२६४-६७ ३४
			के मुखर पुण्य	
			पण्डित बासकृष्ण घर्मा	२ मई ८६ ब
			नबीन	१६६२ ४७-४८
			बुध्नी की बिमुक्ति	घरगुन मं० १६७
			स्वर्ग की नमस्ति	२०१६ १७
			स्वर्गोय दादा नबीन की	७१ २१

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
८०	श्री रामनाथपण्डित	राजभारती	बीमारी की ब रालें बस बम हो गया	फरवरी २०१६	३३ ३६
८१	श्री गीतार्थकर द्विवेदी 'नंकर'	नर्मदा	बिस्तरण-भाषक की बासकृष्ण रामा नबीन	नबीन	६७-६८
८२	प० बनारसीराम चतुर्वेदी	"	स्मृति संकलन नबीन की द्वारा पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी का लिख गए महत्त्वपूर्ण पत्र ।	"	३ १८ ब १३७-१४४
८३	श्री प्रताप भाई	दैनिक 'राजभारत'	पुष्पसूक्ति गाजापुर में 'नवान' स्मृति समारोह	२२-६३	

(२) अडांबसिदा—(घ) गद्य—

क्र०	नाम	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
१	श्री बाबूदास बलरुपा	दैनिक प्रयाग	नबीन महो रहे बहु पूर्ण मानव से घोकाइगार	३ ५-६०	१
२	श्री बाबूदास मिश्र	"	"	"	३
३	डॉ० मुरारिदास रोहठगी	"	"	४ ५-६०	३
४	श्री रामस्वरूप शुभ	"	बहु भी एक समय का अडांबसि	"	३
५	श्री बहुराज दीप्रिय	पालिक	स्वर्गीय नबीन की एक अडांबसि	३-५ १८६०	२
६	श्री हरदासिदा शुभ	राजनाया	नबीन की की यात्रा में यत्र के दो फूल अडांबसि	२२ १-६०	५
७	श्रीमती महादेवी बर्मा	नबराम्पट्ट प्रयाग पत्रिका	नबीन की	मई ६	५२
८	श्री अमृतदास	कृति	अडांबसि	२७-६-६०	३
९	श्री सुनिभानन्दन पन्त	साप्ताहिक प्रयाग	नबीन की		
१०	श्री ईशमुखदास मेहता	साप्ताहिक प्रयाग	प्रभाषणाती व्यक्तित्व	३ ७-६०	४
११	डॉ० राधाकृष्णन	द्विमुञ्जान	बहु धनुषं साहसी से हिलने योग राण्डीयता का ऊँचा मेखक नबीन का मर नबीन बमर हो गये ।	३ ७-६०	५
१२	श्री श्रीप्रकाश	"	"		
१३	श्री पुष्पगतमशाम टण्डन	बीरगा	"	३ ७-६०	५८३
१४	श्री श्रीबिन्दादास	"	"	३ ७-६०	५८६

क्र०	नाम	पत्रिका	वार्षिक	ठिकि	पृष्ठ
१५	श्री धनपुराण घास्त्री	बीणा	मेरे चिर स्मरणीय मित्र	मम०-नि० ६०	५३५
१६	श्री इन्द्रगोपाल बिजब		उच्च कोटि के इन्सान		५३६
१७	श्री मारिक घाली		तबीन		
१८	डा० गजेंद्र प्रसाद	बिन्दन	अज्ञानि	पूत-जुलाई ६१	५
१९	श्री सम्पूर्णानन्द		"	"	५
२०	श्री हरिबिनायक पाटस्कर		"	"	६
२१	श्री धर्मशास्त्र राय	"	"	"	
२२	श्री कन्हैयालाल खासीबाबा	"	"	"	७
२३	श्री पोबर्टनबाब मेहता	"	"	"	
२४	श्री मोरसिंह	"	"	"	८
२५	श्री प्रकाशचन्द्र सेठी	"	"	"	
२६	श्री लक्ष्मीनारायण सेठ	"	"	"	
२७	श्री मंगलप्रसाद				
२८	श्री कस्तानिधि बंसल	घाबले			९
२९	श्री कमठा प्रसाद				"
३०	श्री काशीचरण प्रसाद				१०
३१	श्री बन्धुप्रसाद चौहरी				
३२	श्री नास्कर राय				
३३	श्री रघुनाथसिंह गौड़				
(ब) पत्र—					
१	श्री मयाप्रसाद धुवन 'तनेही'	दैनिक प्रकाश	भेवारीन जन बा	१-५-६	१
	। क्वाथगुम्बर डिपेटी इमान		कन्हैया कानपुर का		
			गोठि घपनाई बिस्व		
			कर्मों मे अफर्ना की		
			हाके रवेनकोपी मी		
			तबीन की तबीन से ।		

क्र०	नाम	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
४	श्री ध्याम सुन्दर त्रिवेदी 'ध्याम'	दैनिक प्रताप	भाज सब भीति से धमाया हुआ कानपुर	३-५-६०	१
५	श्री धर्मिराम	,	हा । नबीन जो		
६	"		हा नबीन बसते नौ		
७	श्री प्रभात शुक्ल		धस्त हुआ कानपुर के धाम का सितारा हाम		
८	"		बालकृष्ण देस के नबीन धमिमान से ।		
९	श्री क्रिष्णोत्तम कपूर क्रिष्ण	"	धमर नबीन		
१०	श्री ध्याम सुन्दर त्रिवेदी ध्याम		पूरी किस भीति होगी सति ।	८-५-६०	१
११			भडा के सुमन से		
१२	श्री विरिजानकर शास्त्री		कविता	५-५-६०	३
१३	श्री देवराज दिनैग	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	चिर नबीन	१५-५-६०	५
१४	श्री बिरसरे मिश्र	नई दुनिया	स्वर्गम भी नबीन जी के प्रति	१६-५-६०	२
१५	श्री कबालाब मिश्र 'प्रभात'	म्योरेस्ना	धामन्दे प्रपत्यमि मन्विद्यमि	नई ६०	X
१६	श्री रामाबताग रयामी	नबमागद टाइम्स	नबीन जी के प्रति दो भडा सुमन	०६-६-६०	५
१७	श्री धरुण व श्रीनिवास हार्डीकर	साप्ताहिक प्रताप	बालकृष्ण धर्मा नबीन	२७-६-६०	२
१८	श्री राजेन्दर धर्मा 'राज	साप्ताहिक प्रताप	नबीन के प्रति दूरी पूटो भडाबलि	२७-६-६०	२
१९	श्री बिरसमोहन पान्देय		भडाबलि		
२०	श्री प्रतापसिंह राठौर		चिर नबीन		३
२१	श्री धर्मनसात चतुर्वेदी	सहस्वती	नबीन मुकबीन में	जून ६०	३९१
२२	श्री मैथिलीचरण कुश	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	नबीन	३-७-६०	८
२३	श्री बालस्वरूप राठी		भडा के धर्म सुमन	"	३
२४	श्री देवराज देव		गण्डर्बि नबीन के प्रति		९

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिनि	पृष्ठ
२५	श्री बालूचाम पासीवाल	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	मृत्यु मर कर सो पाई है ।	१-७-६०	१७
२६	शुधी कमलेश सक्नाता		एक बहन के उद्गार	,	१
२७	श्री हरगोबिन्द गुप्त		नवीन जी से साप्ताहिक	१०-७-६०	२६
२८	श्री हरिहरकर धर्मा		पञ्चाङ्गलि		२७
२९	श्री बेशरताय कसाबर	नबराष्ट्र	हे बालकृष्ण हे चिर नवीन	२४-७-६०	१
३०	श्री सुदीपनि शान्धी		नवीन जी के प्रति		४
३१	श्री मटबरलास स्नेही	शोणा	पञ्चाङ्गलि	अपस्त स्ति० ६०	४६३
३२	श्री मयवतधरण जोहरी	,	तुम कैसे नवीन मठवाले		,
३३	श्री कुलीचन्द्र शशि		स्व० नवीन जी के प्रति		४६४
३४	श्री नरेन्द्र चतुर्वेदी 'चंचल'		नवीन जी के प्रति		४६५
३५	श्री महेशधरण जोहरी ललित		साजन तुम हो गए पराए		४६६
३६	श्री जगदीश चन्द्र धर्मा		नवीन जी के प्रति		४६७
३७	श्री निबधम्भु धर्मा				"
३८	श्री विनायकमार् महरोषा		मायाग दीप	,	४६८
३९	श्री मन्मोहास औरसिया		तुम फिर गये जोखो नवीन		४६९
४०	श्री सरमानारायण शामन		नवीन जी के निघन पर		
४१	श्री सिद्धपूजन धर्मा	,	नवीन	"	४७०
४२	श्री धामधराय ठाकुर अधनीश		रघुप मस्वर शैल को तुम		,
४३	श्री नरेन्द्र पवरा बीरज		नवीन जी के प्रति	,	४७१
४४	श्री मदनलाल जोशी	,	पञ्चाङ्गलि		४७२
४५	श्री सामशम बैरागी	विन्दन	नवीन	बून-बुलाई ६१	८
४६	श्री गणेशचन्द्र धर्मा 'दृग्'		मातृवपद्वि व्यातिर्पर	"	१८

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
४६	श्री जेहेधप्रसाद भारती	चिन्तन	धौसू की प्रपिठ है माता ।	जून-जुलाई ६१	१६
४७	श्री कौशल मिश्र	"	बिरह ब्यथा में	"	२१
४८	श्रीमती ज्ञानवती सक्सेना 'किरण'	"	धुम धुम-धुम ही के चिर प्रतीक	"	२२
४९	श्री रामलाला	ब्रजभारती	भद्रांजलि	फरवरी सं० २०१६ १७	१

(१) सम्पादकीय टिप्पणियाँ—

१	श्री नरेश महुता	कृति	बेप्युब बन नबीन की	मार्च ६०	३५-३६
२	शास्त्री सिधपुबन सहाय	साहित्य	भद्रांजलि		७-८ व ९३
३	श्री देवदत्त शास्त्री	नवराष्ट्र	कविवर नबीन का निघन	१-५-६०	४
४	श्री सुरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य	दैनिक प्रयाग	हे मनस पय-यात्री, घट घट प्रणाम ।		२
५	"	"	अख्येय पं० बालकृष्ण शर्मा राजनीति— साहित्य-साधनारत जीवन की एक झलक		"
६	श्री गोपीनाथ गुप्त	सहयोगी	पं० बालकृष्ण शर्मा नबीन का सटीरित जनकी बाणी सदा अमर रहेगी ।	२-५-६०	१
७	"	"	पं० बालकृष्ण शर्मा का देहावसान	"	३
८	श्री ब्रजमूषल जतुबेदी	कर्मवीर	पद्यमूषण पं० बालकृष्ण शर्मा नबीन : स्वर्गीय	७-५-६०	१ व ८
९	श्री देवदत्त शास्त्री	नवराष्ट्र	पं० बालकृष्ण शर्मा नवीन	१४-५-६०	४
१०	श्री बकिबिहाणे मदनानन्द	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	एक और नर-नेहरी बल बसा	१५-५-६०	३
११	एन० वि० कृष्ण वारिवर	युग प्रभात	नबीन की	१६-५-६०	४



क्र०	लेखक	परिष्ठा	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
१९	श्री हीरालाल चौबे	बासन्ती	नवीन भी एक धडाजति	मई ६०	६-७
१३	श्री नरेन्द्र मेहता	वृत्ति	महाप्रस्थानेर पक्षे	मई ६०	२०-२१
१४	श्री हरिमाऊ जपाध्याय	बीबन-साहित्य	नवीन भी गये क्या बीबन में से नवीनता बसी गई ।	मई ६०	१९५
१५	श्री रामनाथ गुप्त	रामराज्य	विषय पद्यभागी श्री नवीन धार्मुधों की मङ्ग भडाजति	मई ६०	१
१६	श्री अखिल दिनय	विश्व साहित्य	नवीन भी	मई ६०	२३
१७	श्री रामकृष्ण धर्मा बेनीपुरी	नई धारा	नवीन भी का निषल	मई ६०	९६
१८	श्री निम्बनाथ	नया साहित्य	स्व० बालकृष्ण धर्मा नवीन	मई ६०	१
१९	श्री भीमाउपण चतुर्वेदी	सरस्वती	पं० बालकृष्ण धर्मा का स्वर्गवास	मई ६०	३०४
२०	शुभ श्री सेखा विद्यार्थी	साप्ताहिक प्रकाश	बाल-गोष्ठी धडाजति परिचिष्ट	२७-६-६०	४
२१	श्री मोहनसाध भट्ट	राष्ट्र भारती	पं० बालकृष्ण धर्मा नवीन	जून ६०	३४३ ३४४
२२	श्री अन्नकुसुम विद्यालंकार	भास्कर	बालकृष्ण धर्मा 'नवीन'	जून ६०	४५
२३	श्री छिन्नमय पन्त	भारतवासी	स्व० बालकृष्ण धर्मा नवीन	जून ६०	२१
२४	श्री धर्मेश्वर धर्मा	कल्पना	धडाजति	जून ६०	२४
२५	श्री कमसाधोकर मिश्र	बीणा	नवीन स्मृति शंकर	जून ६०	४०७
२६	श्री गो० प० शैले	राष्ट्रवाणी	स्व० नवीन भी	जून ६०	२३
२७	श्री रामेश्वर द्विवेदी	संस्कृति	नवीन	जून-जुलाई १९६०	३५
२८	श्री बकि बिहारी भटनायर	सा० हिन्दुस्तान	सेवा धीर धडा के मे सोई से जून	३-७-६०	४
२९	श्री देवप्रथ धारत्री	नवराष्ट्र	नवीन परिचिष्ट	२४-७-६०	४
३०	श्री जेठनाथ जोशी	राष्ट्रबीणा	स्व० नवीन भी	जुलाई ६०	२०९

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिपि	पृष्ठ
११	श्री रामपाल पाध्ये	आदर्श	बादा बासकृष्ण धर्मा नबीन	अगस्त ६०	५
१२	श्री प्रभापचन्द्र शर्मा	बीला	तुम गुरुजी के साम नहीं, तुम हो गुरुजी के बास सबसे	अगस्त सितम्बर ६०	४५७- ४६२
१३	श्री बालकृष्ण राव	आदर्श	बालकृष्ण शर्मा नबीन	नवम्बर ६०	१८
१४	डॉ० मुषनेश्वरनाथ मिथ 'मासक'	परिपद् पत्रिका	बादाअलि	अप्रैल ६१	४
१५	श्री श्रीराम शर्मा	विद्यास भारत	नबीन श्री स्मृति	"	२४१
१६	श्री महेश्वरराव औहरी समित	चिन्तन	चिन्तन मंचन	जून-जुलाई १९६१	११५ १४२
१७	श्री रामनारायण प्रसबास	ब्रज भारती	स्वर्गीय पं० बालकृष्ण शर्मा नबीन	फरवरी सं० २०१६ १७	२-४
१८	"	"	ब्रजभारती का यह धंक	"	६५
१९	डॉ० बच्चन सिंह	नागरी प्रचारिणी पत्रिका	स्व० बालकृष्ण शर्मा नबीन	धंक १ सं० २०१७	९०
४०	डॉ० बसवेश्वरप्रसाद मिथ	जनभारती	पद्मसूयण नबीन श्री	धंक १ सं० २०१७	६६ ६५
४१	पं० बनारसीदास चतुर्वेदी	नर्मदा	'नबीन' श्री की स्मृति रक्षा	अगस्त १९६३	१५५- ४७

(२) साहित्यालोचन सम्बन्धी सामग्री—

नबीन जी के साहित्य और उसके विभिन्न पार्यों एवं धूमों पर प्राप्त सामग्री को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है —

(क) पुस्तकों द्वारा प्राप्त सामग्री,

(ख) पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्राप्त सामग्री ।

प्रस्तुत सामग्री का यहाँ विस्तृत विवरण उपस्थित किया जाता है—

(क) पुस्तकों द्वारा प्राप्त सामग्री—'नबीन' जी पर, पुस्तकों में प्राप्त सामग्री को भी दो भागों में विभाजित किया जा सकता है —

(१) प्रकाशित सामग्री,

(२) अप्रकाशित सामग्री ।

(१) प्रकाशित सामग्री—'नवीन' बी के साहित्य पर समीक्षारमक रूप में जो सामग्री प्रकाशित हुई है, उसका विवेचन अधोलिखित रूप में है —

(१) 'नवीन' बचन—लेखक प्रो० केदारदेव उपाध्याय, नवीन' बी के व्यक्तित्व एवं काव्य के कतिपय पक्षों पर सामान्य विवेचनारमक पुस्तक ।

(२) व्यक्ति और वाङ्मय—लेखक डॉ० प्रभाकर माधवे, बी बासकृष्ण शर्मा नवीन बचन, पृष्ठ २२ १०४

(३) साहित्य तरंग—लेखक श्री सद्गुरु सरस शबस्त्री गौरी-काव्य और बासकृष्ण शर्मा नवीन लेख पृष्ठ १२३ १२७ ।

(४) हिन्दी गद्य-गाथा—लेखक श्री सद्गुरुसरण शबस्त्री बासकृष्ण शर्मा लेख पृष्ठ १६७-१७४ ।

(५) प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ—लेखक डॉ० रामबिलास शर्मा साहित्य और समाज लेख पृष्ठ ९० १०१ ।

(६) हिन्दी के धार्मिक महाकाव्य—लेखक डॉ० मोहनराम शर्मा 'उमिष्ठा' पृष्ठ ११३ ४०५ ।

(७) प्रकाशित सामग्री—

(१) नवीन और उनके कविता—लेखिका सुम श्री कृष्णा चतुर्वेदी दिल्ली विश्व विद्यालय श्री एम० ए० परीक्षा के हेतु प्रस्तुत प्रबन्ध मन् १२६ कुस पृष्ठ १३१ प्रबन्ध की टंकित प्रति दिल्ली-विश्वविद्यालय-ग्रन्थालय में उपलब्ध ।

(२) डॉ० बासकृष्ण शर्मा नवीन का काव्य—लेखक श्री जयश्रीप्रसाद श्रीवास्तव राजकीय इन्वैरिमा महा विद्यालय भोपाल ( म० प्र० ) विश्व विश्वविद्यालय, जम्मैन ( म० प्र० ) श्री एम० ए० ( अर्थ ) की हिन्दी की परीक्षा के अर्थमें प्रश्न-पत्र में निबन्ध के स्थान पर प्रस्तुत प्रबन्ध कुस पृष्ठ २१४ प्रबन्ध की टंकित प्रति विश्व विश्वविद्यालय, जम्मैन के ग्रन्थालय में उपलब्ध है ।

(३) श्री बासकृष्ण शर्मा नवीन और उनके काव्य-साधना—लेखक श्री कृष्णकिशोर सक्सेना महाराणी लक्ष्मीबाई कासेब प्वासियर, ( म० प्र० ) विश्व विश्वविद्यालय, जम्मैन ( म० प्र० ) श्री एम० ए० परीक्षा के लिये प्रस्तुत प्रबन्ध कुस पृष्ठ ७०; प्रबन्ध की टंकित प्रति विश्व विश्वविद्यालय, जम्मैन के ग्रन्थालय में उपलब्ध है ।

(४) पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्राप्त सामग्री—कालक्रमानुसार उपलब्ध सामग्री की तासिका प्रस्तुत है —

कृष्ण समीक्षारमक सामग्री की तासिका—(क) पद्य के पूर्व

क्र	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिनि	पृष्ठ
१	श्री सूर्यनाथमण व्यास	बीणा	कविता नवीन की कविता	मार्च १९३४	४०२ ब ४०३

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिनांक	पृष्ठ
२	श्री प्रणयेश मुखर्जी	बीणा	कविधर, नवीन की प्रारम्भिक रचनाएँ	मार्च १९४४	२१२ २१६
३	श्री त्रिसोद्रीनारायण दोजित	श्यामाभी कल	पं० बालकृष्ण शर्मा से मेट ।	जून १९४९	७
४	श्री प्रयागनारायण त्रिपाठी	धाराकण	नवीन की कविता	अक्तू० १९५०	—
५	श्री सूर्यनारायण व्यास	विष्णु	रससिद्ध कवि नवीन	अप्रैल-मई १९५१	१७ २०
६	श्री विस्वनाथ सिंह	बीणा	श्रृंगार-प्रिय कवि नवीन	फरवरी १९५२	१२७ २३०
७	डॉ० चर्मबीर भारती	आसोचना	'अपलक' समीक्षा	अप्रैल १९५३	४८ ६३
८	श्री कृष्णकान्त दुबे	बीणा	मालवा के प्रवासी साहित्यकार बासकृष्ण शर्मा नवीन	अप्रैल-मई १९५२	३४०- ३४१
९	श्री रामचरण सिंह सारथी	साहित्य संदेश	नवीन की पत्रकार कला	जून १९५३	५११ ५१२
१०	डॉ० रामगोपाळ कसुबेरी	धाराकण	हम चिर हुलल चरपि पुणने	जून १९५३	—
११	समीक्षाकार	राष्ट्र भारती	'क्यासि' समीक्षा	जुलाई १९५३	५६०- ५६१
१२	श्री सुधीश कुमार श्रीवास्तव 'अक्षय'	सुधारणम	श्री बासकृष्ण शर्मा नवीन से एक मेट	अप्रैल सं० २०११	१०- ११
१३	श्री श्याम वरमार	विष्णु	नवीन और उनकी कविताएँ ।	अप्रैल १९५४	४० ४३
१४	श्री रामनारायण अग्रवाल	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	श्री बासकृष्ण शर्मा नवीन का प्रथमापा काव्य	१६ १२-५६	—
१५	डॉ० राजेंद्रवर पुर	नवराष्ट्र	श्रीमल धर्मिण्यंजना के कवि नवीन	दीपावली विशेषांक १९५७	—
१६	श्री अमरवीरचरण वर्मा	धाराकण	बासकृष्ण शर्मा नवीन	दिसम्बर १९५७	७-१० वा १६

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	दिनांक	पृष्ठ
१०	श्री श्री विहाणे मटनायर	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	नवीन का पराजय पीठ स्पष्टीकरण 'सम्पादकीय'	३-६-५६	—
(ख) सुरु के पश्चात्—					
१	श्री फ़ोहेबन्धु धर्मा भारतकर	नवभारत टाइम्स	नवीन श्री की हिन्दी सेवाएँ	३-४-६०	२
२	श्री सूर्यनाथयण्ड भ्यास	नई दुनियाँ	कविबर नवीन के प्रति	१६-५-६०	२-६
३	श्री उदयनाथयण्ड सिंह	धाम	राष्ट्रीयता के प्रतिनिधि कवि 'नवीन'	२६-५-६०	१०
४	श्री रामप्रबन्ध त्रिवेदी	धाम	पं० शास्त्रज्ञान धर्मा नवीन	२६-५-६०	६
५	श्री सत्यनाथयण्ड त्रिवेदी	"	भारती के भ्रमर बायक नवीन	"	"
६	श्री कस्तिका प्रसाद दीक्षित 'कुमुदाकर'	"	पत्रकार नवीन	"	"
७	श्री राममोनाथ चतुर्वेदी	सहयोगी	नवीन श्री की काव्य साधना	३०-५-६०	५
८	श्री नन्दकिशोर चतुर्वेदी	हृति	महामता नवीन श्री : राजनीतिज्ञ और पत्रकार	मई ६०	५५-५६
९	श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी	धरस्वनी	नवीन श्री की कविताएँ	जून ६०	१६५ ४०१
१०	श्री वैबीरामकर धरस्वनी	कल्पना	'अम्मिसा'	जून ६०	६२-६४
११	श्री विनयनाथ गुप्त	बीणा	नवीन श्री क्वाथि	जून ६०	३८६ ३९४
१२	श्री पद्मानाथ त्रिपाठी	त्रिपथगा	अस्तबैरनामय काव्य के सम्राट् नवीन	जून ६०	—
१३	श्री कर्मविश्वनाथ सोमरेवरा	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	राजनीति के पत्रकार	३-७-६०	१६-२० ५-२५
१४	श्री जगदीश श्रीवास्तव	"	प्राणार्पण नवीन श्री का धर्मकार्यत धर्म काव्य	"	२६-२७
१५	श्री कान्तिश्वर सीतारैवरा	"	नवीन श्री की काव्य प्रतिभा पर एक समीक्षामक दृष्टि	१७-७-६०	२७-३० ४९

क्र०	लेखक	पत्रिका	शीर्षक	तिथि	पृष्ठ
११	श्री रामचरणसिंह छारपी	नवराष्ट्र	अप्रतिदर्शी कवि नवीन बी	२४-७-६०	३
१७	श्री जयश्रीय श्रीवास्तव	"	नवीन बी की कविताओं के प्रेरणा-स्रोत	"	४-५
१८	श्री कृष्णदेव शर्मा	सरस्वती संसार	नवीन की काव्य साधना	जुलाई ६०	२६ ३२
१९	श्री ब्रजनाथमण दासपेयी	रामराज्य	नवीन बी का पीठि काव्य	१५-८-६०	८
२०	श्री जयश्रीय श्रीवास्तव	हमीरिया पत्रिका	राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविताओं का समर गायक नवीन	अगस्त १९६०	२१ २५
२१	श्री ईश्वरसिंह	घोणा	कमल और लसवार के धनी नवीन	अगस्त सित० ६०	५३२ ५३४
२२	श्री कमलाच श्रीमान प्रासिक	"	कवि हृदय स्व० पंडित बासकृष्ण शर्मा नवीन	"	५४२ ५४३
२३	श्री अमरनाथ	घोणा	सुमने युग की माँग जातकर अमनी बीणा के स्वर साये	"	५३७- ५३९
२४	शुंभर रामसिंह यादव	"	महान् एवं असाधारण व्यक्तित्व प० बासकृष्ण शर्मा नवीन	"	५४४ ५४६
२५	श्री अनन्त मारायण शौबे 'अनन्त'	"	अद्वैत नवीन की क्या थे घोर क्या न थे ?	अगस्त-सित० १९६०	५४७- ५४८
२६	श्री सुपुत्रकिशोर अरगर	"	मानव जीवन का समर गायक नवीन	"	५४९ ५१
२७	श्री विरहन्मर अष्टण	"	नवीन का गीठि काव्य	"	५५२ ५५
२८	श्री रामप्रताप मिश्र	युगप्रभात	पं बासकृष्ण शर्मा नवीन राष्ट्र घोर राष्ट्रीयता के महान् उपासक ।	१-९-६०	९ १० ५ १८ १९
२९	श्री श्यामकृष्ण मिश्र	बीणा	राष्ट्रीय काव्य-धारा घोर नवीन की	दिसम्बर ६०	६५-६८

क्र०	लेखक	वर्णिका	धीर्पक	तिथि	पृष्ठ
१०	डॉ० इरिका प्रसाद समसेना	बनभारती	अमिता का विरह बसंत	व्यस्तुत सं० १०-११-१७	२१-३२
११	श्री कृष्णचन्द्र बाजपेयी	,	नर-कैटकी नवीन श्री	"	४२-४४
१२	श्री अमरनाथ	साहित्य सम्बन्ध	दिवंगत साहित्यकार १९६० श्री	जनवरी फरवरी	१४४
१३	डॉ० देवेन्द्रकुमार	सप्तसिन्धु	बासकृष्ण शर्मा नवीन अमिता की प्रबन्ध कल्पना	१९६१ १९६१	४१-४५
१४	श्री विपिन बोधी	चिन्तन	'कुंकुम' की सुमिका	जून-जुलाई ६१	१०-४२
१५	डॉ० चिन्तामणि ज्जाध्याय	"	विनोबा स्तवन एवं स्वर्गीय नवीन श्री	जून जुलाई १९६१	९४-९६
१६	श्री बीमानाथ व्यास	"	नवीन श्री श्री महान् कृति अमिता		९७- १०४
१७	प्रो० गोवर्द्धन शर्मा	व्योत्समा	पं० बासकृष्ण शर्मा नवीन	जुलाई ६१	२५-२७
१८	श्री बनारसीदास चतुर्वेदी	नर्मदा	नवीन श्री श्री सङ्गमाजना	अक्तूबर ६१	८ व १५१ १५२
१९	श्री रतनलास परमार	मध्यप्रदेश संदेश	संस्कृति के उन्नायक स्वर्गीय नवीन श्री	२५ नवम्बर ६१	७-९ व २४
४०	श्री रामकृष्णलाल राय	विद्यास भारत	महाकवि नवीन श्री श्री व्योतिर्मयी स्मृति	जनवरी १९६२	३३-३७
४१	श्री जगदीश श्रीवास्तव	साप्ताहिक हिन्दुस्तान	नवीन दोहावली	८ जुलाई १९६२	७ व ४०
४२	"	रसबन्धी	स्वर्गीय नवीन श्री श्री साहित्य सम्बन्धी	सितम्बर १९६२	१७-२१
४३	डॉ० रामयोगात चतुर्वेदी	मात्रकस	नवीन श्री के गद्य साहित्य पर एक दृष्टि	"	४९-५० व ५४
४४	डॉ० सुरेशचन्द्र कुल	बनभारती	नवीन श्री श्री कव्य दृष्टि	मई ११, जून २	१४-१८
४५	श्री महावीर प्रसाद बही	नर्मदा	जीवन पठता रहा कसा पनपती रही ।	अगस्त ६३	१३३- ३५

उपयुक्त समीक्षात्मक सामग्री के प्रतिरिक्त, हिन्दी साहित्य के इतिहास की पुस्तक काव्य-समीक्षा-ग्रन्थों आदि में 'नवीन' को का अत्यन्त संक्षिप्त विवेचन प्रथम नामोन्मेष मात्र ही मिलता है।

सामग्री समीक्षा—'नवीन' को पर प्रकाशित सामग्री का अध्ययन करने पर हम कतिपय निष्कर्ष पर आ सकते हैं—

'नवीन' को पर एक मात्र पुस्तक ही प्राप्त होती है 'नवीन' दर्शन को कि कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के कुछ पार्श्वों का सामान्य उद्घाटन करती है। यह सामान्य विवेचनात्मक पुस्तक है जिसमें विस्तार एक महत्ता का प्रभाव है। अप्रकाशित काव्य साहित्य के विस्तरेण्य को बात तो दूर रही, इसमें प्रकाशित साहित्य का भी पूर्ण चित्र नहीं आ पाया है। इसमें महत्काव्य 'उर्मिसा' का विवेचन नहीं है। 'उर्मिसा' तथा 'नवीन दर्शन' के प्रकाशन की तिथि एक है। प्रस्तुत पुस्तक पर श्री खन्नारायण गुप्त द्वारा वैदिक नव जीवन सखनऊ में 'नवीन' की के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर संक्षिप्त लेख-मासा का भी प्रभाव देखा जा सकता है।

लोक-ग्रन्थों के रूप में जो पुस्तकें प्राप्य हैं, वे अभी तक अप्रकाशित हैं। एम० ए० परीक्षा के प्रबन्ध होने के कारण उनकी अपनी सीमाएँ एवं स्तर हैं जिनका वे प्रतिफल नहीं कर सकते।

इस प्रकार 'नवीन' की पर जो भी साहित्य प्रकाशित हुआ वह स्पष्ट लेखों में ही प्राप्त होता है। सम्बन्धित टालिकाओं को देखने पर भी यह विदित होता है कि कवि-जीवन में उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अल्पम्य ही सिखा गया और उन्की मृत्यु के पश्चात् उस पर कुछ अधिक ध्यान दिया गया।

'नवीन' की की मृत्यु के पश्चात् जो संस्मरणों की बाढ़ आई उनमें से अधिकांश का प्रचारत्मक ध्येय ही प्रकृत है। उनके स्थायी एवं विधिष्ट उपादेय सामग्री की उपसम्भि मही होती। संस्मरणों में कहीं-कहीं अपने महत्त्व का भी प्रतिपादन मिलता है परन्तु इन सभी वस्तुस्थितियों के होते हुए भी, कतिपय संस्मरण अष्ट श्रेष्ठ के हैं जिनके लेखकों में डॉ० नदीन्द्र की 'दिनकर डॉ० बच्चन की बनारसीबास चतुर्वेदी, श्री श्रीरूपण बस पासीबाल की वैपितीघरण गुप्त, श्री माखनदास चतुर्वेदी की मगवतीघरण बर्मा, डॉ० 'सुमन' आदि की गलना की जा सकती है।

'नवीन' को की जीवनौ विषयक सामग्री में भी कई बातों का पूर्ण प्रभाव है। उनकी वाक्यावस्था एक किशोरावस्था तथा शिक्षा-रीक्षा सम्बन्धी, जीवन-काल सम्बन्धी पल प्राप्त मधुने ही रह गये। इसी प्रकार उनकी बंध-परम्परा, माता-पिता आदि की पूर्ण जानकारी अब अत्यन्त दुर्लभ हो गई है। इस क्षेत्र को भी उपेक्षित रखा गया जा कि उनकी जीवनी को दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यदि कवि ने स्वयं अपनी लघु आत्म-कथा में कतिपय सूचनाएँ नहीं दी होती तो प्रायः 'नवीन' की के समय व्यक्तित्व का चित्रण करना असम्भव ही हो गया होता।

'नवीन' के साहित्य पर जो समीक्षात्मक सामग्री प्रकाशित हुई उसमें भी परिपक्वता तथा सुगुणमता का प्रभाव ही दृष्टिगोचर होता है। उनका काव्य-साहित्य की विवेचना पर



मुख्य ग्रन्थ अथवा रचना का दौर समाप्त है। मृत्यु के परचाए, जैसा कि इल्जाम ने लिखा है— 'Many a poet born after their death ?'

उनके साहित्य पर जो कुछ लिखा पढ़ा गया, वह जो सामान्य कोटि का ही है। परन्तु यह प्रसन्नता की बात है कि कवि की मृत्यु के परचाए हमारुआ ब्याज उनके साहित्य के प्रति धारकित हुआ। उनके अप्रकाशित साहित्य की नी प्रकल कर्ना यन-तम होने लगी। हिन्दी में जब कि 'हाकेत' और 'नामायमी' पर बीगियों श्रेष्ठ कोटि की समीक्षामक पुस्तकें प्राप्त हैं, 'अभिज्ञा' पर पुस्तक को तो छोड़िए, एक अन्ध सा अन्वस्मिज एवं सापोनाम चित्र प्रस्तुत करने वाला निबन्ध भी उसपरम नहीं है।

धार्मुनिक हिन्दी-साहित्य में पुस की प्रसाह, निराशा पन्त महादेशी कर्मी दिनकर धारि पर जितनी पुस्तकें लिखी गई, उतने नबीन जी पर, सम्भवतः उत्तम निबन्ध भी नहीं लिखे गये। "एक भारतीय धारमा के अन्वस्मिज एवं इच्छित्व पर जो जिनके काव्य-प्रकाशन तथा भीजन की कहानी 'नबीन जी से पर्याप्त साहस्य रखती है चार पुस्तकें लिखी गई, परन्तु 'नबीन' के विषय में इस दिमा में कोई प्राप्ति नहीं लिखाई पड़ती। अतएव 'नबीन' के साव-कर्ता को मोक्षिक तथा समीक्षामक दोनों ही सामग्री की दिमा में स्वल्प वृद्धी ही प्राप्त होती है जिसे उसे अपने बरेष्य भाचार्यों के मात-रन में बिगड़ समूह एवं प्रचलत करनी पड़ती है।

'नबीन जी समीक्षकों के द्वारा कथी उपेक्षित रहे। इसका शोप समीक्षकों पर उतना नहीं मझ जा सकना जितना स्वयं उन पर। उनके प्रसंगी अन्वस्मिज प्रकाशन के प्रति बिरेक एवं धारमस्य-वृत्ति राजनीति की अधिक महत्त्व एवं समय प्रदान करने और अपने की बिजाप्ति करने की कसा से कोशों दूर रहने क कारण, के विपुल समीक्षा मामग्री के नायक नहीं बन सके।<sup>१</sup>

एत सब तर्कों के होते हुए भी कतिपय विद्वान-मेलकों के धर्मों में 'नबीन' की विषयक अन्वस्मयन एवं समीक्षा के मन्नीर तथा प्रमावपूर्ण सूच प्राप्त हो जाते हैं जिनमें धाचार्य मन्वदुमारी बाजपेयी इत हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी तथा 'धार्मुनिक साहित्य डॉ हकारी प्रसाद त्रिवेदी की हिन्दी साहित्य डॉ० मनेश्वर की धार्मुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ तथा डॉ० मनेश्वर के श्रेष्ठ निबन्ध डॉ० बच्चन की नयी पुराने मरुसे धारि की सहर्ष पणना की जा सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'नबीन' जी पर अभी तक स्पुट एवं सामयिक सामग्री का प्राचुर्य रहा है। ऐसा कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है जिसमें उनके अन्वस्मिज एवं काव्य साहित्य का सापोनाम अन्वस्मिज तथा स्वरुप बिरेनेपण एवं प्रतिपादन हो।

स्व प्रयत्न द्वारा प्राप्त सामग्री—स्व प्रयत्न द्वारा कवि के अप्रकाशित काव्य-साहित्य के अन्वस्मयन एवं प्रस्तुत ताव प्रबन्ध में उनके उपयोग की बात का निवेदन बिगत पृष्ठों में किया ही जा चुका है। इसक धारिरेक 'नबीन' जी की प्रसंगीय कविताओं एवं कवि के भीजन

१ 'नये पुराने मरुसे' पृष्ठ ३६ से उद्धृत।

२ बिलुत बिबचन के विए बैबिजे, धर्म्याप ६७।

दर्शन तथा काव्य-शक्ति को समझने में सहायक प्रसक्तित गद्य-रचनाओं को भी एकत्रित करके उनका यहाँ प्रयोग करना, वांछनीय समझ गया ।

स्वप्रयत्न द्वारा प्राप्त सामग्री को निम्नलिखित रूपों में बाँटकर, उसका विवरण देना, समीचीन प्रतीत होता है —

- (क) घोष-यात्राएँ,
- (ख) प्रत्यक्ष भेंट,
- (ग) मौखिक सूचनाएँ एवं संस्मरण
- (घ) पत्राचार द्वारा प्राप्त संस्मरण
- (ङ) पत्र-व्यवहार
- (च) संकष्टन ।

(क) घोष-यात्राएँ — भूतनी विषय से सम्बन्धित बिखरी पड़ी घोष सामग्री के संकथन एवं सुसुयोगार्थ, मैंने 'नवीन' की से सम्बन्धित विभिन्न स्थानों एवं प्राप्त-साहित्य-स्वसों की यात्रा की । ये यात्राएँ कवि की सीतासूनि एवं कर्मसूनि से सम्बन्ध रखीं ।

कवि की सीतासूनि सम्प्रवेश रूढ़ी है । मध्यप्रदेश के भन्तगाँव धामपुर उम्रौन, इन्दौर, छएडवा घोषात बबलपुर आदि स्थानों की यात्राएँ की और यहाँ से लिखित एवं मौखिक सामग्री एकत्रित की ।

कवि की 'कर्मसूनि का सम्बन्ध उत्तर भारत से रहा है । उत्तर भारत के भन्तगाँव, मैंने धामपुर, नर्बल लखनऊ, बाराणसी, नई दिल्ली, पटना एवं कसकटा की यात्राएँ की । यहाँ से भी यथा-उपलब्ध सामग्री बटोरने की बेष्टा की ।

(घ) प्रत्यक्ष भेंट—भयनी घोष-यात्राओं में अपने विषय से सम्बन्धित विभिन्न स्थितियों, सूचनाओं एवं सामग्री प्राप्त के हेतु, जिन-जिन व्यक्तियों से भेंट की, उनकी पूर्ण वास्तव्य भवोत्तिष्ठित रूप में है —

(१) नई दिल्ली—डॉ० नरेन्द्र धीमती सरसा देवी धर्मा पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ० हरिचंद्र राय, 'बल्लभ', श्री सच्चिदानन्द बाल्यावन 'अज्ञेय श्री बाबू राम दासीबाब, श्री खेमचन्द्र, 'सुमन' श्री भारतसूयण अग्रवाल श्री रामचन्द्र धर्मा 'महारथी, डॉ० मुकुंदबीर सिंह, श्री उपपदाकर मट्ट, श्री जयवीरचन्द्र मापुर, श्री रामचन्द्र टण्डन, श्री रामसरन धर्मा, श्री पोषासहयण कोस, श्री चिरंजीव श्री अमोह बाजपेयी श्री प्रभाषनारायण त्रिपाठी श्री मोहन सिंह सेपर श्री विजयकुमार त्रिपाठी, श्री नरेन्द्र धर्मा श्री रामनाथयण अग्रवाल, डॉ० बसरण शोभा या सत्यदेव विद्यानंवार, तपस्वी सुन्दर सास, श्री गोपीनाथ धर्मा धर्मन, श्री यशपाल कैन, श्री भाईचंद्र उनाथ्याम श्री बकिं किहारी भटनागर श्री मुकुटबिहारी धर्मा, डॉ० रामयण धर्मा धारसी, श्री धार० प्रसाद (सह-सचिव, गृह मन्त्रालय), श्री बी० के० भार्गव (उप-सचिव विद्या मन्त्रालय) श्री चाँद नारामण (उप-सचिव साइसमा सचिवालय), श्री सत्येन्द्र धरद, श्री चन्द्रगुप्त विद्यानंवार श्री मोनासप्रसाद श्याम श्री हरिचंद्र त्रिवेदी श्री महेन्द्र मेहरा श्री बिष्णु प्रसाद, संसद-सदस्य या मुकुंदास त्रिवेदी श्री बेंकटेश नाथयण त्रिपाठी, श्री उमादीशर बोधिज डॉ० रामनारायण चतुर्वेदी श्री उमादीशर त्रिवेदी आदि ।

(२) बाराणसी—भाचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र की राजकृष्ण दास डॉ० राजबंसी पाण्डेय ।

(३) कानपुर—भीमती रमादेवी विद्यार्थी की पञ्चासत्त त्रिपाठी, की चञ्चोक विद्यार्थी की गौरीचन्दर त्रिवेणी की सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य, की मरेशचन्द्र ज्युबेबी प्रो० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी डॉ० मुन्शीगाम वर्मा डॉ० बृजलाल वर्मा आचार्य सद्गुरुस्वरूप प्रवन्सी की बबईच गुप्त, की रामनाथ गुप्त डॉ० भीकान्त गुप्त की शौंकार पंकर विद्यार्थी की किशोरचन्द्र कपूर 'किशोर' की दयासंकर दीनित 'दिहरी', की देवव्रत मिश्र आदि ।

(४) नरैल—श्री दयानाथ गुप्त 'पार्य' की अनन्तिकुमार कर्तु ।

(५) लखनऊ—श्री मन्मथीचरण वर्मा की बसवाम की सत्यदेव वर्मा की बाबूकृष्ण धर्मिहाथी ।

(६) कलकत्ता—श्री रामचारी सिंह 'दिनकर' पं० विष्णुव्रत मुक्क की लक्ष्मीचन्द्र देव आदि ।

(७) पटना—श्री देवव्रत दासी ( प्रव स्वर्गीय ) आचार्य गतिनी बिसोहन वर्मा ( प्रव स्वर्गीय ), डॉ० मुन्नैरवर नाथ मिश्र 'माधव' आदि ।

(८) झांझापुर—श्री रामचन्द्र बलवंत द्विवेदी, की रामचन्द्र श्रीवास्तव 'चन्द्र' डॉ० सिद्धमंथल सिंह मुमन की प्रताप माई की बंसी दास मानुर, की रामशारदायुग मानुर आदि ।

(९) उम्बल—प्रो० गुरुप्रसाद टाडन की बमनाथाय भद्रानी की गोविन्द पण्डरी नाम द्विदे की कैलाच बोपाल सांखिक आदि ।

(१०) इम्बीर—श्री बुद्धिचिंटर मार्बे की प्रभापचन्द्र वर्मा की हरिकृष्ण 'प्रेमी' की शमीदर दास भद्रानी आदि ।

(११) बण्डवा—डॉ० मासतहास ज्युबेबी ।

(१२) बबलपुर—डॉ० उदयनारायण त्रिबारी डॉ० राजबंसी पाण्डेय की रामेश्वर मुख्य 'धंभस' की मन्मथीप्रसाद त्रिबारी की रामानुज साह भीवास्तव की कामिनाप्रसाद दीक्षित 'कुमुमाकर' की सासिग्राम द्विवेदी आदि ।

यात्रा जिस क्रम में की गयी, उसी क्रम में नगरों के नाम लिखे गये हैं । यदि की कर्म भूमि की यात्रा प्रथमतः की गई थी तो सीताभूमि की तदनन्तर । कर्म-भूमि की यात्रा मई-जून १९६१ ई० में की गई । सीता-भूमि की यात्रा दिसम्बर १९६१ ई० एवं जनवरी १९६२ ई० में की गई ।

(ग) धार्मिक रचनाएँ एवं संस्मरण—यदि के व्यक्ति एवं इतिहास के समग्र जिन पर धामृत एवं 'प्रस्तावनी' के आधारे पर विविध कोटि की सूचनाएँ प्राप्त की गई । इनमें यदि के जीवन व्यक्ति काव्य-प्रेरणात्मक पृष्ठभूमि प्रकाशित साहित्य विचारधारा कामधौ-प्राप्ति धर्ममत आदि की जानकारीयाँ ली गई । यदि के जीवन एवं इतिहास से सम्बन्धित संस्मरण उचितरित लिखे गये । जिन बहुमानुषों से यदि सम्बन्धी धार्मिक संस्मरण प्राप्त लिखे गये हैं उनके नाम निम्नलिखित रूप में हैं । उनकी विधियाँ भी प्राप्ति बर्णित गई हैं । इन संस्मरणों व क्रम में सीताभूमि से कर्मभूमि की ओर सन्मुख हुआ गया है —

नाम एवं तिथि—

(१) भाचार्य श्री मन्दसुन्दारे बाबूदेवी सागर	(१४-११-६१)
(२) श्री वृद्धप्रसाद टण्डन, उज्जैन	(६-१२-६१)
(३) श्री जमनादास म्हासानी उज्जैन	(६-११-६१)
(४) श्री मोक्षिन्द पञ्चरो माधु हिरवे, उज्जैन	(१०-१२-६१)
(५) श्री केन्द्रव घोपाल तारिणक, उज्जैन	(१०-१२-६१)
(६) श्री बामोदर दास म्हासानी, इधोर	(१०-१२-६१)
(७) श्री प्रभाषचन्द्र वर्मा इन्डौर	(११-१२-६१)
(८) श्री मुक्तिठिठ भायंब इन्डौर	(११-१२-६१)
(९) श्री हरिहृष्ण प्रेमी इन्डौर	(११-१२-६१)
(१०) रामचन्द्र बसवंत गितूत धाजापुर	(८-१२-६१)
(११) श्री प्रताप भाई, धाजापुर	(८-१२-६१)
(१२) श्री बसंतीदास माधुर धाजापुर	(८-१२-६१)
(१३) डॉ० माळनसास चतुर्वेदी, सएरवा	(१३-१२-६१)
(१४) श्री मन्मथीप्रसाद ठिवारी जबलपुर	(७-१-६२)
(१५) श्री रामेश्वर मुक्त 'धर्मल' जबलपुर	(८-१-६२)
(१६) डॉ० उदयनाथराज ठिवारी जबलपुर	(७-१-६२)
(१७) श्री रामानुज लाल श्रीवास्तव जबलपुर	(७-१-६२)
(१८) श्री कानिजाप्रसाद दीक्षित 'कृष्णमाकर' जबलपुर	(७-१-६२)
(१९) श्री नरेन्द्र वर्मा नई दिल्ली	(२०-५-६१)
(२०) डॉ० हरिचंद्र राय 'बल्लभ' नई दिल्ली	(२१-३-६१)
(२१) श्री उमार्गवर दीक्षित नई दिल्ली	(२०-५-६१)
(२२) श्री प्रयाग नारायण त्रिपाठी, नई दिल्ली	(२३-३-६१)
(२३) श्री जयनन्दर मट्ट नई दिल्ली	(२४-५-६१)
(२४) श्री मन्मथलाल त्रिबेदी, नई दिल्ली	(२६-५-६१)
(२५) श्री अशोक बाबूदेवी, नई दिल्ली	(२६-५-६१)
(२६) श्री बतारसीदास चतुर्वेदी नई दिल्ली	(२६-५-६१)
(२७) श्री रामहृष्ण दास, काण्डोली	(१०-६-६१)
(२८) श्री भववतीचरण वर्मा सप्तमऊ	(१२-६-६१)
(२९) श्री सुरेश्वर शम्भू मट्टाचार्य कानपुर	(१३-६-६१)
(३०) श्री अर्जुनभार कण्ठ नर्मल	(१६-६-६१)
(३१) श्री प्रो० लक्ष्मीकांत त्रिपाठी कानपुर	(१३-३-६१)
(३२) श्री पन्नासाह त्रिपाठी, कानपुर	(१३-३-६१)
(३३) श्री जयदेव गुप्त, कानपुर	(१६-६-६०)
(३४) श्री इयांगकर बोधिज 'विहासो' कानपुर	(१६-६-६१)
(३५) डॉ० मुंघोराम वर्मा कानपुर	(१४-६-६१)

(३६) डॉ० भीकान्त गुप्त, जयपुर	(१७-६-६१)
(३७) श्री राममहाल गुप्त पार्षद, नर्मल	(१७-६-६१)
(३८) श्री रामघाटी सिंह, 'विनकर' कलकत्ता	(१८-६-६१)
(३९) श्री विष्णुदत्त कुसुम, कलकत्ता	(२१-६-६१)
(४०) श्री देवव्रत घास्त्री, पटना	(२६-६-६१)

उपरिनिर्दिष्ट व्यक्तियों के मौखिक संस्करण, मेरे पास लिपि बद्ध रूप में सुरक्षित है।

(घ, पत्राचार द्वारा प्राप्त संस्करण—पत्रों के माध्यम से, जिन व्यक्तियों के संस्करण मेरे पास किये, उनके नाम तथा पत्र तिथि सङ्गित सूची निम्नलिखित रूप में है—

(१) श्री जगन्नाथस म्हासानी उन्नीस	(२०-४-६१)
(२) श्री रामोदर बास म्हासानी, इन्दौर	(२६-६-६१)
(३) श्री रामप्रसाद धर्मा सैनिकच्छ (म०प्र०)	(१५-७-६१)
	(२५-७-६१)
(४) श्री काशीनाथ बलवन्त माधवे, रत्नाम	(२७-७-६१)
(५) श्री लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा इटा (म प्र०)	(७-९-६१)
(६) डॉ० प्रकाशकर माधवे नई दिल्ली	(१४-९-६१)
(७) श्री बिलयचन्द्र मोहनराय नई दिल्ली	(१९-१२-६१)
(८) श्री जगद्वेणु मासवीय भोपाल	(४-१-६२)
(९) श्री मुकुटचर पाण्डेय रायगढ़	(९-१-६२)
(१०) श्री मोहनदास राजचन्द्र गोखले इन्दौर	(२४-१-६२)
(११) श्री बुर्जानकर बुधे आजापुर	(२-८-६२)
(१२) श्री लक्ष्मीनाथ बघरी बाराकला	(२४-३-६१)

प्रत्यक्ष जेंट और पत्राचार के माध्यम से, नवीन श्री के प्राथमिक छात्रा, माध्यमिक छात्रा व महाविद्यालय के सहपाठी उनके कारागृह के साथी, उनके जीवन के विभिन्न क्षेत्र तथा राष्ट्रीय-संप्रदाय राजनीति, पत्रकारिता साहित्य कवि-सम्मेलन समा-गोष्ठी, पारिवारिक एवं काव्य क्षेत्र और जीवन-अपार्थ के विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों से उनके जीवन एवं साहित्य विषयक अनेक महत्वपूर्ण वार्ता एवं बहुमूल्य सूचनाएँ तथा संस्करण प्राप्त हुए हैं।

(ङ) पत्र-व्यवहार—'नवीन' श्री के व्यक्तित्व एवं कृतित्व और अन्य उपाचारों के लिए उनके कई महत्त्वपूर्ण पत्रकार-मित्रों एवं साहित्य-अभ्युत्थानों से विस्तृत पत्र-व्यवहार किया गया। यह पत्र-व्यवहार व्यक्तियों तक ही सीमित न होकर, पत्र-नविकारों एवं संस्थाओं से भी सम्बन्ध रखता है, जिनसे श्री प्रस्तुत शोध-विषय को सामग्री प्राप्ति एवं काव्य पाठकों के विषय में सूचनाएँ ग्रहण की गईं।

पत्र-व्यवहार के व्यापक क्षेत्र को सीम भागों में बाँटा जा सकता है —

- (१) व्यक्तियों से पत्राचार
- (२) संस्थाओं से पत्राचार,
- (३) पत्र-नविकारों से पत्राचार।

(१) व्यक्तियों से पत्राचार—शोध-विषय के सम्बन्ध में जिन व्यक्तियों से पत्र-व्यवहार किया गया उनके कतिपय नामों का उसी-ही विषय पृष्ठों में किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त, कुछ जिन विशिष्ट विद्वानों एवं साहित्यिकों से भी पत्र-व्यवहार किया, उनके नाम एवं प्राप्त-पत्रों की तिथियाँ इस प्रकार हैं —

(१) डॉ० नरेश (२५-८-६२) (२) श्री मम्ममनाथ गुप्त (६-७-६२) तथा (१३-१-६२)  
 (३) श्री शक्तिप्रिय द्विवेदी (१३-११-६१) (५-१-६२) और (१३-२-६२) (४) श्री अनामिका  
 गुप्त (१०-७-६१), (१०-८-६१), (५-१-६१) (५-१०-६१) (१३-१२-६१), (२६-१-६२)  
 (६-२-६२), (२०-२-६२) और (२०-८-६२) (५) श्री सुहृत्प्रसाद टण्डन (१६-१०-६१) और  
 (१३-४-६२), (६) डॉ० रामधन वर्मा बाली (१६-६-६१) (७) श्री महावीर त्यागी  
 (६-६-६१) (८) डॉ० प्रभाकर माधवे (२१-४-६१), (१-६-६१) (६-६-६१) और  
 (१४-१०-६१), (९) श्री महात्माप्रसाद मिश्र (१४-८-६२) (१०) श्री गोपालप्रसाद व्यास  
 (२४-११-६०), (१२-१-६१) तथा (१४-३-६१) (११) श्री अशोक बाजपेयी (२३-११-६०)  
 (१६-२-६१), (२४-७-६१) तथा (६-८-६२) (१२) श्री कन्हैयालाल माणिकलाल सुन्तो  
 (१२-७-६१); (१३) श्री नरमोहन बैन (२६-१२-६०), (१०-१-६१), (१४-३-६१),  
 (१६-३-६१), (१५-५-६१), (२-६-६१), (११-१-६२) एवं (१३-६-६२), (१४) डॉ० विवर्णगुप्त  
 सिंह 'सुमन' (१०-८-६१) (१५) श्री रामचारी सिंह 'विनकर' (३-१२-६०) एवं (६-२-६२)  
 (१६) डॉ० कुलावराय (१६-१०-६०) (१७) श्रीमती रमा विद्यापी (३-१०-६०) तथा  
 (१-१-६२), (१८) श्रीमती इम्बिया गाभी (२२-३-६१) (१९) श्री बालकृष्णपुर शास्त्री  
 (१६-७-६१), (२०) श्री जगदीश्वर बोधित (७-७-६१) एवं (१४-३-६१) (२१) डॉ०  
 पाठाप्रसाद गुप्त (५-२-६२), (२२) श्री रामेश्वर गुप्त 'अंबल' (२०-७-६२) आदि।

(२) संस्थाओं से पत्राचार—'नवीन' भी से सम्बन्धित सामग्री की सूचनार्थ प्राप्त करने के लिये विभिन्न ब्रह्मासय हिन्दी संस्थाओं, आकाशवाणी, लोकसभा राज्यसभा विभिन्न मन्त्रालय, विश्वविद्यालय आदि से विस्तृत पत्र-व्यवहार किया गया। इसकी सूची देने से कोई विशेष प्रयोजन हुआ नहीं होता।

(३) पत्र-व्यवहारियों से पत्राचार—हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से भी सम्बन्धित सामग्री की सूचनार्थ आदि के लिये विस्तृत पत्र-व्यवहार किया गया। इसकी सम्बन्धी सूची भी कोई विशेष उपयोगी प्रतीत नहीं होती।

(४) संकल्प—'नवीन' भी की सृष्टि एवं अर्धसदीय कर्मियों और गद्य-रचनाओं के समान उनके पत्रों के संकलन की निगा में भी प्रयत्न किया गया।

पत्रों में व्यक्ति का रूप भ्रष्टता है। इनमें उसने व्यक्तिगत मनाभाव विचार-रत्न साहित्यिक मान्यताओं तथा विविध पत्रों पर सुन्दर प्रकाश पड़ा है। 'नवीन' भी के लगभग ३२ पत्र पत्रों तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इनके अतिरिक्त ये

१—द्वितीय साप्ताहिक हिन्दुस्तान (३-७-१९६०) व (१०-७-१९६०) 'आज' (२६-५-१९६०) स्वभाषित टाइम्स (२६-६-६०) 'राष्ट्र' (जून १९६०), कृति (मई १९६०), बीला (अगस्त नितम्बर १९६०), जिनतन (जून-सुलाई १९६१), प्रकाश पत्रिका (२१-५-१९६०) आदि।

(३६) डॉ० श्रीकान्त गुप्त अमरपुर	(१७-६-६१)
(३७) श्री स्वामिसाह गुप्त पार्यट, नर्मल	(१७-६-६१)
(३८) श्री रामभारी सिंह, 'दिनकर' कलकता	(१८-६-६१)
(३९) श्री विष्णुबल सुकल, कलकता	(२१-६-६१)
(४०) श्री देवप्रस साहसी, पटना	(२६-६-६१)

उपरिनिर्दिष्ट व्यक्तियों के मौखिक संस्करण, मेरे पास लिपि बद्ध रूप में सुरक्षित है।

(घ), पत्राचार द्वारा प्राप्त संस्करण—पत्रों के माध्यम से, जिन व्यक्तियों के संस्करण होने प्राप्त किये, उनके नाम तथा पत्र विधि संहित सूची निम्नलिखित रूप में है—

( १ ) श्री बमनाथाय भ्रमाली, उम्बैन	(२०-४-६१)
( २ ) श्री रामेश्वर दास भ्रमाली, इन्दौर	(२४-६-६१)
( ३ ) श्री रामप्रसाद धर्मा लोनकण्ड (म०प्र०)	(१५-७-६१)
	(२५-७-६१)
( ४ ) श्री कधीनाथ बलवन्त माचरे, रतनाम	(२७-७-६१)
( ५ ) श्री सखीप्रसाद मिस्त्री 'रमा इटा (म० प्र )	(७-९-६१)
( ६ ) डॉ० प्रभाकर माचरे नई दिल्ली	(१४-९-६१)
( ७ ) श्री विनयचन्द्र मोहगुप्त नई दिल्ली	(१९-९-६१)
( ८ ) श्री अशुरसेन मामनीय नोपाल	(४-१-६२)
( ९ ) श्री मुकुटवर पाण्डेय रायगढ़	(९-१-६२)
(१०) श्री भोगावर रामचन्द्र गोखले इन्दौर	(२४-१-६२)
(११) श्री दुर्गाचकर बुधे त्याजापुर	(२०-८-६२)
(१२) श्री शचीन्द्रनाथ बबधी बाराणसा	(२४ १-६३)

प्रत्यक्ष में धीरे पत्राचार के माध्यम से, नदीन श्री के प्राथमिक छात्रा माध्यमिक छात्रा व महाविद्यालय के सहपाठी उनके कारागृह के छात्री, उनके जीवन के विविध क्षेत्र तथा राष्ट्रीय-संरक्षण, राजनीति पत्रकारिता साहित्य कवि-सम्मेलन, समा-भोष्टी, पारिवारिक एवं वास्तव क्षेत्र धीरे जीवन-अप्य के विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों से उनके जीवन एवं साहित्य विषयक अनेक महत्वपूर्ण अज्ञात एवं बहुमुख्य सूचनाएँ तथा संस्करण प्राप्त हुए हैं।

(ङ) पत्र-व्यवहार—'नदीन' श्री के व्यक्तित्व एवं कृतित्व धीरे अन्य उपादानों के लिए उनके कई सहयोगियों पत्रकार-मित्रों एवं साहित्य-अध्येतार्यों से विलगुत पत्र-व्यवहार किया गया। यह पत्र-व्यवहार व्यक्तियों तक ही सीमित न होकर, पत्र-पत्रिकाओं एवं संस्थाओं से भी सम्बन्ध रखता है, जिनसे भी प्रस्तुत शोध-विषय श्री मामनी प्राप्ति एवं अन्य पाठकों के विषय में सूचनाएँ प्रदण की गईं।

पत्र-व्यवहार के व्यापक क्षेत्र को तीन भागों में बाँटा जा सकता है —

- (१) व्यक्तियों से पत्राचार
- (२) संस्थाओं से पत्राचार
- (३) पत्र-पत्रिकाओं से पत्राचार।

(१) व्यक्तियों से पत्राचार—शोध-विषय के सम्बन्ध में जिन व्यक्तियों से पत्र-व्यवहार किया गया उनके कतिपय नामों का उल्लेख बिगत पृष्ठों में किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त, कुछ जिन विशिष्ट विद्वानों एवं साहित्यिकों से भी पत्र-व्यवहार किया उनके नाम एवं प्राप्त पत्रों की तिथियाँ इस प्रकार हैं —

(१) डॉ० मणेर (२५-८-६२) (२) श्री मम्मयनाथ गुप्त (६-१-६२) तथा (११-१-६२); (३) श्री धान्तिप्रिय त्रिवेदी (११-११-६१), (५-१-६२) और (१६-२-६२) (४) श्री छत्रनारायण मुक्त (१०-७-६१), (२७-८-६१), (५-९-६१) (३-१०-६१), (१३-१२-६१), (२६-१-६२), (१-२-६२), (२०-२-६२) और (२०-८-६२) (५) श्री गुरुप्रसाद टण्डन (२६-१०-६१) और (११-४-६२) (६) डॉ० रामधन धर्मा शास्त्री (२६-९-६१), (७) श्री महावीर त्यागी (६-९-६१) (८) डॉ० प्रभाकर माधवे (२१-४-६१), (१-९-६१) (६-९-६१) और (१४-१०-६१); (९) श्री भवानीप्रसाद मिश्र (१४-८-६१) (१०) श्री पोपासप्रसाद व्यास (२४-११-६०), (१२-१-६१) तथा (२४-३-६१) (११) श्री अशोक बाबयेयी (०१-२१-६०), (१६-२-६१), (२४-४-६२) तथा (६-६-६२) (१२) श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्दी (१२-४-६१) (१३) श्री लक्ष्मीचन्द्र बैन (२६-१२-६०), (१०-१-६१), (१४-३-६१), (१६-३-६१), (१५-५-६१), (२-६-६१), (३१-१-६२) एवं (११-९-६२), (१४) डॉ० शिवमंथल सिंह 'सुमन' (१०-८-६१) (१५) श्री रामधारी सिंह 'बिनकर' (६-१२-६०) एवं (६-२-६२) (१६) डॉ० सुसावरय (१६-१०-६०) (१७) श्रीमती रमा विद्यायी (३-१०-६०) तथा (१-२-६२) (१८) श्रीमती इन्दिरा गायी (२२-३-६१) (१९) श्री साधवहापुर शास्त्री (१६-७-६१), (२०) श्री उमाधरकर शिखर (७-७-६१) एवं (१४-३-६२) (२१) डॉ० बाणाप्रसाद गुप्त (५-२-६२) (२२) श्री रामेश्वर मुक्त 'मंजस' (२७-२-६२) आदि।

(२) संस्थाओं से पत्राचार—'नवीन' श्री से सम्बन्धित मामलों की सूचनाएँ प्राप्त करने के लिये विभिन्न प्रत्यालय हिन्दी संस्थाओं, प्राकाशनाली, लोकनमा राज्यसभा विविध मन्त्रालय, विद्वद्विद्यालय आदि से विस्तृत पत्र-व्यवहार किया गया। इसकी सूची देने में कोई विषय प्रयोजन हल नहीं होता।

(३) पत्र-पत्रिकाओं से पत्राचार—हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से भी सम्बन्धित सामग्री की सूचनाओं आदि के लिये विस्तृत पत्र-व्यवहार किया गया। इसकी सूची भी कोई विषय प्रयोजनी प्रतीत नहीं होती।

(ब) संकलन—'नवीन' श्री की स्फूर्त एवं अर्धवहीत कविताओं और पद्य-रचनाओं के समान, उनके पत्रों के संकलन की दिशा में भी प्रयत्न किया गया।

पत्रों में व्यक्ति का हृदय झँझटा है। इनमें उसके व्यक्तिगत मर्मोत्साह, विचार-दान, साहित्यिक मास्यताओं तथा विविध पत्रों पर मुखर प्रकाश पड़ता है। 'नवीन' श्री के लगभग १२ पत्र अग्रे तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इनके अतिरिक्त ये

१—देविये साप्ताहिक हिन्दुस्तान (१-७-१९६०) व (१०-७-१९६०) 'आज (२६-५-१९६१) 'नवभारत टाइम्स (२६-६-६०) 'राष्ट्र मासिक' (जून १९६०), कृति (जुलै १९६०) बीला (अगस्त तिसम्बर १९६०) बिम्बन (जून-सुलाई १९६०), प्रभाव पत्रिका (२१-१-१९६०) आदि।



नो कवि के कल्पित मौलिक पत्र संकलित किये हैं। इनमें कवि के व्यक्तित्व की मनुषी बातें उद्घाटित हुई हैं। इन पत्रों में कवि द्वारा सिद्ध किये निम्नलिखित पत्र हैं —

(क) श्री रामोदर दास अज्ञानी—(१) ४१ १९४८ (२) २१ १ १९४८,

(३) २४ १ १९४८ और (४) २४-२-५४।

(ख) श्री रामनारायण मापुर—(५) १६-३-५७।

(ग) श्री रामानुज मास भीवास्थ—(६) १ १ १९५६ (७) ८ १ १९५७

(८) २२-६-५८ (९) ४-३-५४ और

(१०) १६ ४-५२ धारि।

इस प्रकार एक प्रयत्न द्वारा प्राप्त सामग्री से कवि के साहित्य पर प्राप्त समीक्षात्मक सामग्री की कुछ घंटों में पुष्टि करने का प्रयत्न किया गया है। इन समस्त सूचनाओं तथा सामग्री का भी बच-वच इस घोष प्रबन्ध में उपयोग किया गया है।

इस प्रकार समग्र उपलब्ध एवं अनुपलब्ध सामग्री के द्वारा, इस घोष-प्रबन्ध की प्रवृत्तिका का निर्माण किया गया है। साथ ही इस ठाण का विशेष ध्यान रखा गया है कि ये समय सामग्री विषयक उपादान कवि-व्यक्तित्व के उद्घाटन में सहायक होकर ही धार्मिक और गहरे धार्मिकता से अधिक प्रमुखता या सुकरता प्राप्त न होने पावे।

घोष प्रबन्ध का संक्षिप्त रूपरेखा—प्रस्तुत घोष प्रबन्ध को तीन खण्डों एवं नौ अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम खण्ड के अन्तर्गत नवीनी के विभिन्न पत्रों का उद्घाटन है। द्वितीय खण्ड में काव्य समीक्षा और तृतीय खण्ड में काव्य-सम्पादन है।

प्रथम खण्ड में तीन अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में भूमिका हीर्षिक के अन्तर्गत प्रबन्ध के महत्त्व सामग्री तथा विशेषताओं धारि पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय में 'नवीन' की श्री जीवनी का काव्य-सापेक्ष आकलन किया गया है। तृतीय अध्याय में कवि-व्यक्तित्व का विभिन्न पत्रों एवं पत्रों का उद्घाटन करते हुए उसके जीवन-काल काव्य चिन्तन एवं उपायों की सेवाओं का प्रतिपादन किया गया है।

द्वितीय खण्ड के अन्तर्गत प्रायेः कर्तुर्ध अध्याय में 'नवीन' की के समय प्रकाशित एवं अप्रकाशित काव्य-साहित्य का सागोपास विवरण दिया गया है। काव्य विकास के क्रमिक घोषण एवं काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों या विषयों का विश्लेषण किया गया है। काव्य परिचय एवं काव्य सर्गाकारण के अन्तर्गत काव्य-परिष्कार एवं परिमार्जन का विश्लेषण किया गया है। साथ ही 'नवीन' की के आरम्भिक काव्य एवं 'प्रभा' तथा 'प्रताप' में प्रकाशित रचनाओं की समीक्षा की गई है।

पंचम अध्याय में 'नवीन' की का राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य का विस्तार से विश्लेषण दिया गया है। 'नवीन' का का स्वातन्त्र्य-पूर्व एवं स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-काव्य का व्यवस्थित प्रतिपादन किया गया है। 'नवीन' की द्वारा लिखित 'प्राणार्पण' खण्ड काव्य को धर्मो उक्त अन्तर्गत है उसकी विधिबन्ध धारिधना की गई है।

षष्ठ अध्याय में 'नवीन' की के समय प्रेष काव्य शृङ्गारिक रचनाओं विश्लेषण और उनकी आधिक्यता का उद्घाटन किया गया है।

हमि अध्याय में ही 'नवीन' की की आत्मपरक और रहस्यारक रचनाओं का विवर

विरलेपण किया गया है। कवि के दार्शनिक द्वाय की पृष्ठभूमि का विवेचन करते हुए, उसके मूल्य-मीतों का भी विस्लेषण किया गया है, जो अभी तक अप्रकाशित है।

सप्तम अध्याय में 'नबीन' जी की महान् उपसम्भि 'ज्मिता' महाकाव्य का महनता तथा विस्तार के साथ विस्लेषण किया गया है। उसकी रचना भूमिका, प्रेरणा-स्रोत परिष्कार, कथा-वस्तु, चरित्र चित्रण, संवाद, प्रकृति-वर्णन रस-योजना मौलिक प्रसंगोद्घातनाओं एवं विशेषता तथा महाकाव्यत्व आदि उपादानों की विवेचना की गई है। अन्त में 'ज्मिता' तथा 'साकेत' का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय के अन्तर्गत अष्टम अध्याय में कवि के काव्य के चिन्तन-मूल का विचारता के साथ उद्घाटन किया गया है तथा काव्य-शैली भाषा-योजना मीति-काव्य प्रकृति-चित्रण प्रबंध आदि एवं अन्त योजना आदि की समीक्षा की गई है।

अन्तिम अध्याय नवम अध्याय में समग्र प्रबन्ध का सार निहित है। कवि के युग व्यक्तित्व एवं काव्य का संक्षेप में विस्लेषण करते हुए, उसकी परिभाषा तथा महिमा का संक्षेप किया गया है। हिन्दी-काव्य को 'नबीन' का प्रवेय उनके द्वारा नव प्रवर्तन, उनका प्रेरक एवं प्रभावपूर्ण कवि-व्यक्तित्व और हिन्दी-साहित्य में उनके स्थान-निर्धारण आदि की विवेचना प्रस्तुत की गई है।

प्रस्तुत सौम्य प्रबन्ध के परिशिष्टों का भी सूचनात्मक सूच्य है। 'नबीन' जी की समग्र उपसम्भि काव्य-रचनाओं की उनके सेखन-तिथि के क्रमानुसार, विद्यमान वर्गीकृत टासिका प्रस्तुत की गई है।

'नबीन' जी के समग्र वाङ्मय को भी सूची-बद्ध करने का प्रयत्न किया गया है। उनकी समग्र कृतियों अर्थात् काव्य-संग्रह गद्य-कृति—निबन्ध कहानी, गद्य-काव्य, भाषण, वक्तव्य आदि को टासिका-बद्ध किया गया है। इनमें से सब रचनाएँ सम्मिलित हैं जो कि प्राप्त हो सकी हैं।

निष्कर्ष—इस प्रकार, 'नबीन' जी के कवि व्यक्तित्व के उद्घाटन की दिशा में जो कुछ भी अधिकतम प्रयास किये गये उनको यहाँ अत्यन्त विनम्रता एवं सम्मानपूर्वक प्रस्तुत किया गया है। यह मेरा विनीत प्रयत्न ही है जिसके प्रति मुझे रस-मात्र भी यत्न नहीं है। प्रस्तुत अध्याय में समग्र सामग्री के प्रस्तुतीकरण में भी तत्त्वों को समझ साने एवं उनके विवरण का ही प्रतिपादन करना मेरा एक मात्र लक्ष्य रहा है। मेरे प्रयत्नों के द्वारा एक धर्म ही उद्घाटित हो पाया है।

अन्त में निवेदन है कि प्रस्तुत सौम्य प्रबन्ध में प्रकाशित-अप्रकाशित संकलित-असंकलित अध्ययन-कार्य ( टैबिल बर्डी ) तथा व्यवहार भूमि ( फील्ड वर्क ), सभी प्रकार की सामग्री कार्य-विधियाँ एवं प्रणालियों को अपनाकर, सौम्य-तत्व की प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया गया है।



द्वितीय अध्याय

जीवनी





जन्म ८ दिसम्बर १८९७ ]

[ निधन २९ अप्रैल १९६०

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'



## पूर्वज एवं वंश-परम्परा

'नबीन' जी के पूर्वज आसिपर जिसे के परयना गिर के अन्तर्गत पोम्बा ग्राम के रहने वाले थे ।<sup>१</sup> यह ग्राम दक्षिणी सन्धाटी घुसाई बाबाओं की जागीर थी । वहीं पर ही इनके पूर्वजों की जमींदारी थी । यदि पूर्वज की गढ़ महाले धीरे हुमादे महाले थे । यह ग्राम भ्रंसी की महारज्जो सद्दीनी बाई का था । बाद में घरेबौ तासन के हस्तगत हुआ । घरेबजा ने इस आसिपर करैय को दे दिया । प्रकाश पढ़ने के कारण 'नबीन' जी के पूर्वज वहाँ से अपने पणु आदि को लेकर मातृका में आ गये । पञ्चोर स्वाम पर सब जानकर सर गये । जो हुमादे मेड़ता के दो पुत्र हुए—पं० इन्द्रजीत शर्मा और पं० जमनाशस शर्मा । ये दोनों 'मयाता' ग्राम में आ बस ।<sup>२</sup> यदि उत्पत्ति चापि सन्तनकुमार से माकी जाती है ।<sup>३</sup> 'नबीन' जी वाराणसी गोनाइमभ पुस्तक अनुबन्धीय थे । उन्हें छाका घोर भास्वर का कोई ज्ञान नहीं था ।<sup>४</sup>

पिता—शालङ्क्य के पिता कुम बा माई थे । इनमें पं० जमनाशस शर्मा छोटे थे ।<sup>५</sup> श्री जमनाशस आशानी के कथनानुसार, पं० जमनाशस शर्मा बास गुवाहाटपुर परलने ( जिहा धाजापुर, मध्यप्रदेश ) के रहने वाले थे । अनुमान से कहा जा सकता है कि वे इसी परलने के मयाता ग्राम के निवासी थे । वे साधारण पढ़े लिखे थे परन्तु सत्यं से बन्धन-सम्प्रदाय की बातें काफी जानते थे । उन्होंने कई सैद्धांतिक बातें सुन रखी थी । इस सम्प्रदाय के अनुयायी सठ नाम उनका बड़ा आदर करते थे । इन्हीं तथा सूरत के मध्य स्थित 'उपरपीब' स्वाम के सठ हरिभाई के वहाँ के प्रसूत जाया करते थे और जपरी चिनों तक रहते थे । पोसाय ग्राम में बन्धन-सम्प्रदायानुयायी गृहस्थ वैरागी सठ रघुनाथशस जो रहा करत थे जो कि बड़े धनाढ्य एवं धर्म-पापक व्यक्ति थे । इनके अत्यंत से कई व्यक्ति बैपत्य सम्प्रदायानुयायी बन गये । उठ युग में पासाय की प्रसिद्धि इन्हीं के कारण थी । इन्हीं सठ के सत्यं से जमनाशस भी भी बैपत्य सम्प्रदायानुयायी बने ।<sup>६</sup>

अबि के जन्म-स्वान 'मयाता' में उसके पिता की कुछ भूमि थी । परन्तु उसके उनका निर्वाह नहीं चलता था । इसलिये वे वहाँ से पोसाय, नाप टाण, धाजापुर आदि स्थानों में

१ श्री श्रीकारनाथ शर्मा सोनकन्द का मुठे लिखित पृष्ठ १२-१२६३ का पत्र ।

२ श्री हुजारीनाथ शर्मा तराना का मुठे लिखित दिनांक १२-६-१२६३ का पत्र ।

३ वही ।

४ 'नबीन' जी का श्री मोरोगकर द्विवेदी 'बैट' को लिखित १६ अक्टूबर, १९३५ का पत्र 'नबीन', अगस्त १९६३ पृ० ६५ ।

५ श्री रामोदरनाथ आशानी, इन्डोर से हुई प्रथम बैट ( दिनांक १०-१२ १९६१ ) में ज्ञात ।

६ श्री जमनाशस आशानी उन्नेय ने हुई प्रथम बैट ( दिनांक ६-१२-६१ ) में ज्ञात ।



पूमते रहे। उनकी धारणा-शक्ति बहुत बख्ती थी। इसी कारण पर श्री ब्रह्मनाथाय जी के सिद्धान्त, श्रीमद्भगवद्गीता तथा भागवत के नविय सित्वाहों का उन्हें ज्ञान था। इसी के बस पर वे परबेस में पर्यटन करके कुछ इन्ध संग्रह, वर्ष में एक या दो मास के लिए जाकर, कर लिया करते थे तथा शेष समय छात्रापुर में ही ध्यातिपूर्वक व्यतीत करते थे।<sup>१</sup> वे प्रायः कमरुता बम्बई गुजरात आदि स्वार्थों में परिभ्रमण करते थे और वहाँ के पर्यनिष्ठ वैष्णव बैठ उनकी धार्मिक सहायता करते थे।<sup>२</sup>

पं० ब्रमनाथस चर्मा जीसे तथा सरस स्वभाव के थे परन्तु प्रेय के बड़े तेज थे। उनमें कपट लेश-भास को भी नहीं था। उनका यह विश्वास था कि संसार के अन्ध व्यक्ति भी उनके समान धीमे होना चाहिए।<sup>३</sup> ब्रमनाथस जी के स्वभाव को उल्टा कई स्थानों में देखी जाती थी। धार्मिक भावनाया या सम्प्रदाय के विरुद्ध बात कहने पर अथवा मन को ठेस पहुँचाने पर वे बड़े क्रुपित हो जाया करते थे अथवा साधारण वृत्ति में वे हँसमुख तथा प्रसन्न भित रहा करते थे। झड़का देने पर वे उग्र रूप धारण कर लिया करते थे।<sup>४</sup> यही वृत्ति कवि में भी धाई थी।

ब्रमनाथस जी अपनी उत्पत्ति बात पर बहुतपूर्वक डूँ रहते थे टिके रहते थे चाहे कुछ भी हो जाय। धर्म के विरुद्ध बातें सुनना वे कबालि पसन्द नहीं करते थे।<sup>५</sup> अपने पिता श्री सत्यनिष्ठ एवं हृदय के गुण 'नवीन' जी में धा गये थे। ब्रमनाथस जी की उल्टा एवं निस्पृहता भी एक कथा इस प्रकार है—एक बार वे बम्बई गुजरात आदि स्वार्थों में गये। एक शाम में इनकी भेंट के सिधे ८०-९० रुपये सोमों में एकत्रित किये परन्तु उनमें से दिवो ने कुछ अल्प तथा वास्तवपूर्वक काव्य कह दिये। इस कारण सब इन्ध छोड़कर, वे घर वापस धा गये।<sup>६</sup> ब्रमनाथस जी स्वभाव से अत्यन्त निस्पृह तथा वैराग्य-वृत्ति के व्यक्ति थे। इन्ध-संग्रह वे यदि चाहते तो कर सकते थे परन्तु मन की निर्तोत वृत्ति के कारण संग्रह नहीं करते थे। धार्मिक इन्ध प्राप्ति हो जाने पर वे शीत-हीन व्यक्तियों को सहायता स्वरूप दे दिया करते थे। वे बड़े स्पष्ट बख्त्र थे।<sup>७</sup> उनकी यह निस्पृहता विरुद्ध असंग्रही-वृत्ति एवं स्पष्टता बासकृष्ण चर्मा में भी धा गई थी।

ब्रमनाथस जी वास्तव एवं सहकार के धोर विरोधी थे। उनकी लग्नयता भी उनके हकमीते धारधन में धा गई थी। 'नवीन' जी ने ही यह कतामी थी तरेत्र चर्मा को सुनाई थी कि एक बार उनके पिताजी धाचकन कथा कन पाठ कर रहे थे। कुछ मन्त्र घोटा-गण जो

१ श्री रामोदरबास भालानी का सुम्ने सिद्धिच दिनांक (२६-६ १९६१) का पत्र।

२ श्री ब्रमनाथस भालानी का सुम्ने सिद्धिच दिनांक (२०-५ १९६१) का पत्र।

३ श्री रामोदरबास भालानी द्वारा ज्ञात।

४ कवि के सहपाठी एवं वात-सजा श्री रामबन्ध बलबन्त त्रिगुन, छात्रापुर से हुई बैठ (दिनांक ८-१२ १९६१) में ज्ञात।

५ वही।

६ श्री रामोदरबास भालानी के दिनांक (१६-५ १९६१) के पत्र द्वारा ज्ञात।

७ वही।

पयल कर रहे थे। भागवत-कथा के पाठ में वे पूर्ण डूब गये और इतने तल्लीन हो गये कि किसी बात की भी मुझ-बुझ नहीं रही। इतने में कहीं से एक दीर आ गया जो सब घोंटा-गाए भाग गये, परन्तु पिता जो जो अपनी उम्रवठावस्था के कारण पता ही नहीं चला। वे वहीं बैठ रहे। बाद में लोगों ने जब उन्हें बताया तब मासूम पड़ा।<sup>१</sup>

जमनादास की सास पपड़ी बौचने से और बन्द चाकी मिलीं पहनते थे। उनका ऊँचा ब इकठूरा बदन था।<sup>२</sup> वे इयाम वरुण के बरिजवान् एवं बर्माण्ड व्यक्ति थे। जमनादास की माता के प्रभाव वैष्णवरीठ नाथद्वारा में भी कई वर्षों तक रहे, जहाँ कबि का शैशव-काल व्यतीत हुआ। नाथद्वारा के मन्दिर में जमनादास की 'पैटी पर' सेवाक थे। कबि अपनी वास्तवस्था में, यहाँ मन्दिर जाया करता था और यही से ही उसके वैष्णव-संस्कार एवं मक्ति बरेक परिपक्व होने लया। नाथद्वारा से जमनादास जो छात्रापुर आ गये और फिर यहाँ मुख्य पर्यन्त रहे।

निस्पृहता उत्सर्ग भाव, त्यागभाव तथा कष्ट प्रधान जीवन यही मनीष के पिताजी की कहतनी थी। ऐसे ही कट्टर वैष्णव बाह्यपरिवार में नवीन ने जन्म लिया था।

कबि का परिवार बर्मप्राल मस्कार-सम्पन्न धारम-दुष्ट और उच्चकुलीन रहा है। वे समाज्य जाति के बाह्यपर थे।<sup>३</sup>

जन्म तथा नामकरण—भारत के हृदय-स्थल में स्थित मासवा की मरठानी भूमि से ही कबि का परिवार का सम्बन्ध रहा है। मासवा की मौगोलिक सीमा को वाक्य-बद्ध किया गया है —

इत बाम्बल जत जेतवा मानव सीम सुबान,  
बखिर शिति है मर्मदा यह पुरी पहिचान।<sup>४</sup>

मासवा की बिरोपता को यह मर्मपूर्ण प्रतिब्यक्ति मिली है—

मासव घरणी महुम गम्भीर,  
मग-मग रोटी पच-पच भीर।<sup>५</sup>

कबि ने लिखा है—'मेरा जन्म म्वालियर राज्य के दुब्रासपुर परगने के मवाता नामक गाँव में हुआ था।'<sup>६</sup> अब यह मध्यप्रदेश राज्य के अन्तर्गत है। दुब्रासपुर (छात्रापुर) इसी प्रदेश का एक जिला है। म्बत् १९५४ के 'मासालामागरीयोऽहम् — महीनों में घेठ मार्गशीर्ष की पूर्णिमा के दिन लगभग ८ दिवसपर ७५ २८७ ६० को बाम्बल घर्षा का जन्म हुआ। इस सम्बन्ध में 'मनीष' जी ने अपनी एक कविता '४६वें वर्षाण्ड के दिन' (८ दिसम्बर १९५१) में लिखा है —

१. श्री लखन दामा, नई दिल्ली से हुई प्रथम भेंट (दिनांक २०-५-१९६१) में ज्ञात।

२. श्री माकलनाम बनुरेरी से हुई प्रथम भेंट (दिनांक १३-१२-१९६१) में ज्ञात।

३. 'बीला' मन्वाइकोव, 'मनीष' म्यूनिख संक. पृष्ठ ५१७।

४. 'बीला', जून, १९५२, पृष्ठ ५१४ में उद्धृत।

५. 'बीला' जुलाई, १९५०, पृष्ठ ५१६ में उद्धृत।

६. 'चितवन' स्वप्ति-संक, पृष्ठ १२।

सार्धशीर्ष की ऐल पूलिना की जीवन में छाया,  
किन्तु रही जीवन भर मेरे संग-संग तन को छाया ।<sup>१</sup>

कवि का जन्म अपने ताऊजी के घर के गायों के बाँधने के एक बाड़े में हुआ था। उस मौसामा में गायों ने नितने ही बछड़ों को जन्म दिया था। श्री बनारसीदास ज्युर्बेदी ने सिखा है कि यदि घास 'नवीन' की में बछड़ों बैसा कुछ गटछटपन पाया जाता है तो उसमें उनका कुछ भी पराध नहीं। वह तो उनके जन्म-स्वान की महिमा को ही प्रकट करता है।<sup>२</sup> अपनी कृष्णानुरागी वृत्ति और बासक के गोप्रासा में जन्म लेने के कारण कवि का नाम बासकृष्ण रखा गया। जन्म के समय पाली बजाने के प्रतिरिक्ति और कुछ धूमधाम नहीं हुई। कवि ने अपने पिता का स्मरण बहुत गरीब निःसाधन किन्तु मगध-मक बाह्य के रूप में किया है।<sup>३</sup> पिता का वैष्णव-भाव तथा माता के स्नेह एवं संगीत का कवि के जीवन पर गहन प्रभाव पड़ा।

श्रीदास व किशोरावस्था— 'नवीन' की ने सिखा है कि 'गाँव का सीसा-सादा जीवन गरीबी और धर्मभाव से मेरे चित्त परिरिक्त मित्र हैं।' <sup>४</sup> बासकृष्ण की प्रबन्धना जब कोई साईं तीन वर्ष की थी, तब उनकी माता गोर में सिटाकर खोरियाँ सुनाया करती थी। कवि की बाप्पाबन्धना वैश्य व जीवन के संधर्षों में व्यतीत हुई। धनैक बार साधु-नवन उन्होंने अपने बाप्पा-जीवन की बातें सुनाई है। कैसे कर्णों क ज्युर्वास में उनकी माँ अपने साइने को मोह में लेकर अपनी पीठ पर बरसात बुँद-बुँद उतारती। कैसे कचो मिट्टी के बरीबे में ऊपर की छत और पासपास की दीवार से बरसता पानी पचास्तर टपकता रहता और कैसे जगन्नाथ की कबिता गाते दुनदुनाते वैष्णव माता अपने बात्सल्य का पीयूष बासक 'नवीन' की प्रबोध चेतना में बुसाठी मिलाठी रहती। यह व्यथा-नया धनैक वर्षों में उनकी के मुँह से सुनने को मिली है।<sup>५</sup>

बासक तथात बड़ा होने पर ग्राम के अपने समवयस्क लड़कों के साथ मछा और न्बार की बड़की लेकर घूरे पर, छिठों की मैड़ों पर और चरस चलने के स्वान पर रोना करता था। छैठ में वह फिलडू था। कम उम्र होने के कारण और कुछ मुझ होने के कारण वह छान-खर्बदा अपने मित्रों का अनुकरण किया करता था।<sup>६</sup>

पिताजी धीमदूबस्मभाचार्य के वैष्णव-सम्प्रदाय के धर्मवादी होने के कारण ताबशाप चले गये। धतएव बासकृष्ण महित माता भी बरी चली गई। यहाँ बासक बासकृष्ण बन्दितों के विद्यास प्रायणों में विचरण करता विरता था। यहाँ हम परिवार को बड़े बट्ट के दिन व्यतीत करने पड़े। बरिहता तथा कसेध ने अपना बितान तान दिया। <sup>७</sup> जगन्नाथ दास दर्मा

१ 'अपलक', ४६वें वर्णान्त के दिन, पृष्ठ १६।

२ 'विद्याविम' पृष्ठ १६८।

३ 'विस्तन', शमनि-संस्कृ पृष्ठ १२।

४ वही।

५ श्री प्रयागनगर शर्मा—'बीगा', 'मुम मुबड़ी के लान नहीं मुम ही मुबड़ी के बाल लते अपलन तिनधर १९६० पृष्ठ ४३७-३८।

६ 'विस्तन' स्वलि-संस्कृ, पृष्ठ १२।

राज-बिन अपनी सेवा-गुजा के एक मात्र कार्य में ही संलग्न रहते थे। इसलिए कवि की माता को स्वयं परिश्रम करके ओबिकोपार्जन करना पड़ता था। घर का काम जो कुछ मिल जाता करता था, उसी के मावार पर जीवन बसता था।

अपनी संसृजावस्था में कवि को बच तक भी नसीब नहीं होता था। माँ का घरहाम प्यार वृत्ति बन हारों में उमर घाटा और घस्टों बक्षी पीस कर धबिठ पैधों से बासक के लिए बूझ कुटता।

कवि अपनी ऊम्र के लगभग घाटों बर्षों में नामझारा घाया या घौर तीन बर्ष तक रखा। नाबझारा में विद्या का कोई ब्यवस्थित ष्टम नहीं था इसलिए कवि की बुरदखिनी माता ने अपने धारमज का उच्छुद्धत न होने देने के लिये धाजापुर को प्रस्पाग किया घौर वहीं विबिबत् विद्या का समारम्भ हुआ।

विद्या-दीक्षा—बालहृत्पुत्र की ब्यवस्थित विद्या-दीक्षा का प्रारम्भ अपने बीबन व प्यारुछें बर्षों में धाजापुर में हुआ। कवि की माता ने धनाज पीस-पीसकर कवि को पढ़ाया। ऊमम करता व बूझ खेतना ही इस जीवन के मुख्य ध्ये थे। परिवार के सोग चार घाने महीने के मकान में रहते थे। फिर घाठ घाने महीने के किराये के मकान में रहने लगे। बर्षा ऋतु में मकान टपकता था। बालक बालहृत्पुत्र उस समय अपनी गरीबी के कारण मगे पैरों रहा करता था। किराये कुछ खरीदा जाती थी घौर कुछ माँग कर पड़ सी जाती थी। कवि के विद्या के पुरातन मित्र सैठ भयबानदास की भ्रासानी के परिवार ने 'नबीन' की को अपने यहाँ प्रथम प्रदान किया। इन्हीं के मन्मते पुत्र की दामोदरदास की भ्रासानी की बत्सलता से कवि पढ़ सिखा सका। कवि ने धत्सल धडा के साथ इन्हें, 'मिरे कीमार्म घौर पीनम्भ जीवन के सक्ता मार्म बनेक घौर तत्वबीपक के रूप में स्मरख किया है।'<sup>१</sup>

श्री मन्मथनाथ गुप्त ने लिखा है कि उन्होंने अपने परिवार का जो चित्रण किया है वह बहुत कुछ बन्धुसेखर धाजाव के परिवार से मिलता है, वहाँ तक धमि धर्म घौर बिस्पोटक होने का सम्मान है, 'नबीन' की विस्तुस ही बूखे क्षेत्र के होते हुए भी बन्धुसेखर धाजाव की ही तरह जोसोसे घौर उनकी समझ में घाने पर किसी भी प्रण पर सर्वेख स्योछाबर कर देने वाले थे।<sup>२</sup> 'नबीन' की की एक बहिन भी थी जिसका देहात्त बिबाहित होने पर हुआ।<sup>३</sup> धाजापुर में ही उनके मस्त तबियत अपने सहपाठियों के मध्य प्रसिद्ध थी। यहीं से ही तैलुब के भी गुल घाने सये थे। सन् १९१३ में धमिबी मिडिल स्कूल में बाविक मेसे के समय 'धुझारासस' नामक नाटक खेला गया था, जिसमें कवि ने बन्धुगुप्त का धमिनय किया था।<sup>४</sup> उन्वैन में भी धाला में 'बन्धुगुप्त' नाटक खेला गया था जिसमें कवि ने राजस ठका ससके

१ 'बिन्तान', स्मृति-धक, पृष्ठ १३।

२ 'कृति' बई, १९६०, पृष्ठ ६७।

३ 'श्री धारदा', पौडजीबी १२ धरतुबर १९२० पृष्ठ २-३३।

४ श्री रामबन्धु बलबन्ता निरून द्वारा ज्ञात।

बलिष्ठ मित्र सम्पू ने चन्द्रगुप्त का प्रतिनय किया था।<sup>१</sup> छात्रापुर में कवि बीबरी सूर्यनन्द भी माधुर नामक कट्टर धर्मधर्मात्री बन्धुसहस्र प्रत्यक्ष प्रभावित हुआ था<sup>२</sup> जिनके प्रति<sup>३</sup> कवि के हृदय में सर्वत्र झटका उठा।<sup>४</sup>

छात्रापुर से अंग्रेजी मिश्रित स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात्, बालकृष्ण रामों हाईस्कूल की शिक्षा ग्रहण करने के लिए सम्मेलन था गये। यहाँ के प्रसिद्ध 'माधव-महाविद्यालय' में इनकी शिक्षा हुई। यहाँ पर धर्मों की के मुख्य कार्य थे—पढ़ना-लेखना बड़ी-बड़ी तत्व की बातें करना और मरिचक क मतसूत्रें बोलना।<sup>५</sup> कोई समस्या सामने नहीं थी। 'नवीन' की वे धर्मों को पढ़ाई-सिखाई में निहायत छात्राणु और 'सर्व वसास बतसावा है। स्मरण छक्ति मामुसी और परिधम का माहा कम। अपने देखने और हुआई किसे बनाने में पक्षिक दूरे रहना।<sup>६</sup> धर्मों की वे सन् १९१७ में धर्मों बीबन के बीसवें वर्ष में यहीं से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। 'नवीन' की स्कूली विद्यार्थी के नाते बड़े कटखट धरारती और मेधावी व्यक्ति थे।<sup>७</sup>

सन् १९१६ की लखनऊ-कांग्रेस में 'नवीन' की को भी पण्डितवर विद्यार्थी का साम्निध्य और स्नेह प्राप्त हो गया था। पठएव, वे मैट्रिक परीक्षोत्तीर्ण कर, जून १९१७ में कानपुर चले गये। यहाँ पर पढ़ाई-सिखाई तथा अन्य व्यवस्था पूर्ण रूप से विद्यार्थी की ने की। कानपुर इन्स्टीट्यूट ऑफ़ कालेज से 'नवीन' की वे एफ० ए की परीक्षा उत्तीर्ण की। बी० ए प्रथम वर्ष की परीक्षा उत्तीर्ण कर जब वे द्वितीय (अन्तिम) वर्ष में थे, तब महारवा गान्धी के असहयोग आन्दोलन का ज्वार समस्त भारत में व्याप्त हो गया। अन्य सहपाठियों के साथ उन्होंने महाविद्यालयीन शिक्षा का परित्याग कर दिया और असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। यही थे ही उनके विद्यार्थी-जीवन की इतिहासी हा गई और वे राष्ट्रीय संग्राम तथा साहित्य-सुजन की तुमुभ तरंगों में अपनी शोका खेने लगे। कानपुर के विद्वान् काल में उनका जीवन सोचा-साधा ब धरत रहा। इस समय 'नवीन' की का वालीस वालीस रोडिया उड़ा जाना बाएँ हाथ का खिस था। छात्रावास के सभी महाराजों के लिए

१ कवि के सहपाठी श्री बेगमबोपाल साम्बिक, उज्जैन से हुई प्रत्यक्ष भेंट (दिनांक १-१२ १९११) में बात।

२ श्री बामोदरबास भ्रान्तानी द्वारा बात।

३ 'नवीन' को क्या थी रामनारायण माधव छात्रापुर को लिखित दिनांक (१६ १ १९५७) का पत्र।

४ श्री रामनारायण माधव—संश्लेष 'नवीन' की के प्रति काध्याज्ञति' (बुक्ति १) 'नवीन' की सम्बन्धी कुछ निजी बातें, पृष्ठ ३।

५ 'बिज्ञान' समिति-संज्ञ, पृष्ठ १०५।

६ वही, पृष्ठ ०६।

७ डॉ० प्रजाकर माधव—'व्यक्ति और बाङ्गमय' श्री बालकृष्ण रामों 'नवीन', पृष्ठ १११।

के नू-नू से ।<sup>१</sup> कानपुर के ही इसी जीवन-काल से उनकी राष्ट्र-शक्ति व लेखन-कला के प्राक् सुदृढ़ हुए ।

इस युग की विशिष्ट घटना (सखनऊ कांग्रेस) — 'नबीन' जी के जीवन पर सर्वाधिक प्रभाव सन् १९२१ में आयोजित पब्लिश भारतीय राष्ट्रीय महासभा, सखनऊ के भाषिक परिषेयन का पड़ा है । यह उनके जीवन की युगांतरकारी घटना है । इस घटना से एक शारील व शैत-हीन किमु नैसविक प्रतिभा-सम्पन्न बालक को जीवन के कुबे विस्तृत बहुमुखी व उन्मत्त संसार क्षेत्र में पीच किया । सखनऊ कांग्रेस ने उनकी जीवन-भारा को ही मोड़ दिया । उस समय धर्मा को उन्मत्त में दसवीं कक्षा में पढ़ते से धीरे तास्व्य की सामिमा उनके मुक्त-मनस पर धमती प्रारम्भिक झोल-किरनें विकीर्ण करती लगी थी । किछोपबन्धा की खरम परिणति थी । स्वयं कवि ने इसे सपूचा जीवन बदलने बासा योग कहा है ।<sup>२</sup> बम्बई में लोकमान्य बालमंगाधर तिलक ने, धमने उद्बोधक भाषण में धमी को सखनऊ-कांग्रेस में परिमित होने के लिए सल्लेह धामनिष्ठ किया । उस समय राष्ट्र के महान् धेमानी तिलक कोटि-कोटि जन-मालस को भाषना-धरणी के उफा-सधि से । उनकी मुन-अवर्तक बाणी ने भारत में अन्ति उपलियत कर दी थी । एक छोटा, एक कम्बल, एक धोती एक बन्धा धीरे धमने लपी-साधियों से उभार लिये बन्ध इनसे लैकर धर्मा की सखनऊ के लिए प्रस्थित हो गये ।

सखनऊ में जिन व्यक्तियों से 'नबीन' जी का परिचय हुआ, उनका कवि के साहित्यिक व राजनैतिक जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा । यहीं पर धर्मा जी श्री मेंट थी माखनलाल ज्युर्वेदी की मणोसंधंकर विद्यार्थी धीरे की मैबिलीधरण पुठ से हुई । ज्युर्वेदी जी उनके बन्धीय के रूप में समाहित हुए, विद्यार्थी जी ने 'नबीन' जी का निर्माण किया धीरे पुठ जी ने कवि के जीवन में धमज तथा 'दहा' के रूप में स्थान प्राप्त किया । गणेश जी के मित्र महासय कायोगाच जी धीरे व० विबनाधमण मिश्र का भी प्रभाव, कवि के जीवन पर पड़ा । कवि ने इस सुधरकर की महत्ता का प्रारम्भिक प्रकन इस प्रकार किया है—

'मे इस बात पर कुच वा कि धाम मैने बड़ी शारी जोर की । पड़नी बात तो 'प्रया' उन्मायक का पता पाया । धुधरी बात यह कि 'भारतीय धारवा का पूँपट इटाया । तीसरे यह कि विद्यार्थी जी के दर्शन हुए । बीये यह कि श्री मैबिलीधरण पुठ जी के मो दर्शन हुए ।'<sup>३</sup>

सखनऊ कांग्रेस में धर्मा जी ने लोकमान्य तिलक, महात्मा धाम्बो, मोठीलाल मैहन्, पैती वैवेष्ट, जवाहरलाल मैहन् धारि लोक-नायकों के दर्शन किये । विषय-समिति से लौटते हुए तिलक के खरण-धरणि किये धीरे धमने जीवन की लखोंपर कामना की पुति थी । धर्मा जी ने तिलक का 'हृदय-अभाद' कहा है । सखनऊ कांग्रेस का महत्त्व सिर्फ 'नबीन' जी के जीवन के लिए ही नहीं है, मरिण्डु भारत के धामुनिक-इतिहास में श्री इसको परिमा सद्रितीय

१ 'बिन्दन', समुनि-धंर, पृष्ठ १११ ।

२. वही, पृष्ठ १०१ ।

३ 'बिन्दन', समुनि-धंर, पृष्ठ १०६ ।

४ वही, पृष्ठ १०६ ।

यहाँ पर ही सर्वप्रथम राष्ट्र-नायक श्री जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का हृष्य प्राप्त किया था।<sup>१</sup>

लज्जान्त कंग्रेस की होने वाली घटनाओं, प्रतिक्रियाओं तथा संस्मरणों का 'नवीन' भी बड़ी रोचकता व विस्तार के साथ वर्णन किया है। ये सब उच्च जगती 'भास्य-कथा' में लिखे हैं।

## निर्माण काल : एक मूल्यांकन

बीसवीं शताब्दी के महान् चिन्तक भी लसील जिज्ञान से एक स्थान पर मर्मपूर्वक बात नहीं है —

Children are not your children

They do not come from you,

They come through you

You can give your love to them

But you can not give your thoughts.

Because, they have their own thoughts.<sup>२</sup>

यद्यपि बालक नवीन पर अपनी पैतृक-परम्परा का प्रभाव पड़ा परन्तु उनके स्वयं-विचार भी बीरे-बीरे अपने धनुमर्षों व चिन्तन से बनते चले गये। कवि की इस निर्मालावस्था की प्रशंसा का हम संक्षिप्त मूल्यांकन प्रबोधित उप-धीर्यकों के समर्पण कर सकते हैं—

(क) वास्य संस्कार—माता-पिता की वर्मप्राणमिच्छा बाबक 'नवीन' के जीवन में प्रतिफलित हुई और मृत्यु-नर्पण उनका मह ब्रह्मा-भासा से सीमा कम प्रखुष्ण बना रहा। अपने जनक-जननी से प्राप्त वैपुल्य रूप के उन्मु का उन्होंने कभी परिधाय नहीं किया। उनकी अन्तिम स्थावस्था के समय भी उन्हें 'वैपुल्य-जन' की संज्ञा से ही विभूषित किया गया।<sup>३</sup> वे वैपुल्य जन तो कैसे कहिए वे पीर पराई जाएँ रे के प्रसिद्ध पद की समस्त विशेषताओं से श्रेष्ठ थे। जेयब की शीनता तथा बहिष्ता का भी कवि के जीवन पर अमिट प्रभाव पड़ा। अपनी के फलस्वरूप वर्मा की पीढ़ियों के प्रति हार्मिक समवेदना रखने लगे और उनके दुःख-दैन्य को दूर करने के लिए सदा-सर्वदा कटिबद्ध रह्य करते थे। वास्यावस्था में बहुतों तहाँ से माँकर व काम करके जो उनकी माता ने उनका पालन-पोषण किया; उसका भी कम प्रभाव कवि पर नहीं पड़ा।

१ ५५ गांधी जी से पहले-पहल १९१६ में बड़े बिन की छुट्टियों में लज्जान्त कंग्रेस में मिलता। —श्री जवाहरलाल नेहरू, 'मेरी कहानी', बैंग का राजनैतिक वातावरण, पृष्ठ ५२।

२ 'बीला', प्रमस्त-सितम्बर, १९६०, पृष्ठ ४५८ से उद्धृत।

३ श्री नरेश मेहता 'हनि', टिप्पणी, वैपुल्य जन नवीन जी, प्रबल, १९६०, पृष्ठ ६५-६६।

'नबीन' भी स्वयं कहा करते थे कि 'मेरा धरीर मिद्याम पोषित है, घातः मुझे संग्रह करने का धमिकार नहीं है और इस धरीर से जो कुछ बन पड़े सब जन हिताय बह होता रहे, इसी में मेरा कल्याण है।' <sup>१</sup> इसीलिए हम देखते हैं कि कवि ने कुछ भी संग्रह नहीं किया और हमेशा बानी बना रखा। वे ध्यात्म बर-बिहीन ही रहे। उन्होंने लिखा है—

मैं सतत धमिकेठन क्यों माँपू कि तुम इक मेह है दो ।<sup>२</sup>

बाब्याबस्या में प्राप्त उनैसा वृत्ति के कारण कवि में सहज ही फलकड़टा, मस्ती तथा यतबासापन के घंघों का प्रावुर्भाव हो गया। हमारी किते बाँपने से कल्पना-प्रियता व माबोरेक के कुछ भी निकसित हो नये। कुछों के सहज तथा बहन करने की धक्ति का विकास भी 'नबीन' की मे धपनी लघु बर से किया है। 'नबीन' की मे धी भगवतीप्रसाद बाबपेयी के विषय में लिखा है कि यह बड़ी बात है कि कव्यों में जीवन-यापन करने वाले जन बहुधा क्यु हो जाते हैं। भगवतीप्रसाद भी इस नियम के धपबाव हैं। <sup>३</sup> इस निरूप पर 'नबीन' की को कसने पर, वे भी धपबाव ही निकसते हैं। धी बेबीबध प्रिभ ने लिखा है कि धमार्थों ने उन्हें कभी क्यु, बिहोये धपबा तुच्छ नहीं बनने दिया।<sup>४</sup>

(ख) साहित्यिक-संस्कार—'नबीन' की की धारमा में धपनी बाब्याबस्या से ही संघीत परिध्यात का। जनको माता बचपन में मजनों को कभी 'सारंग' में कभी 'काहूड' में और कभी 'धसावरी' में गाती थीं? <sup>५</sup> कवि ने लिखा है कि 'मुझे याद है कि जब मैं कोई छोटे छोत बर्य का बा तब मेरी माता मुझे मोर में सिटाकर, मोठे-मोठे बिहाग के स्वयों में धपटछप के पयों को पाकर मुझे सोरिया सुनाती और सुनाया करती थी। <sup>६</sup> इस प्रकार माँ के लोत पीठों ने बालक बालक्युण के हृदय में प्रविष्ट कर उसे कल्प-संस्कार का स्फुरण प्रदान किया—

पौड़ि रहीं धनध्याम बनेया लैहो पौड़ि रहीं धनध्याम ।  
धति धम मयो बन धीबें बराबत धीत परत है धात ॥  
बनेया लैहो पौड़ि रहीं धनध्याम ।<sup>७</sup>

शाजापुर में संस्कारों से, धप्यवन एवं प्रकृति ने परिपुष्ट किया। महाँ पर वे कविता की पुस्तकें धमिक पढ़ते थे।<sup>८</sup> उन्होंने 'धार्थसमाज-समा' की धनेक पुस्तकों को पढ़ा जाता था।<sup>९</sup>

१ 'बिस्तन', लमति-धर, पृष्ठ ११ ।

२ 'धपसठ', धान का प्रतिधान क्या प्रिय ?, पृष्ठ २० ।

३ धी भगवतीप्रसाद बाबपेयी धमिनस्वध धम्ब, भंगल कामना, पृष्ठ ५ ।

४ धैतिक ध्रताप, 'नबीन' ध्रताप बाटिका के लुबर लुप, २६ धमेल, १९६२, पृष्ठ १ ।

५ डॉ० वधतिह धर्मा 'कमलेध'—'धै हनते मिला', दूसरी कित्त, धी बालक्युण धर्मा 'नबीन', पृष्ठ ४९ ।

६ 'साहित्यकारों की धात्मकथा', पृष्ठ ८१ ।

७ धरी ।

८ धी रामकण्ठ बलमन्त धिपूत द्वारा ज्ञात ।

९ धी धामोदरबात ध्यनानी द्वारा ज्ञात ।



विस्तार में भी इस-परन्तु वर्ष की अवस्था तक बहुत ध्यानपूर्वक कर लिया था। दुनामी पीर सैटिन लेखकों को एक बड़ी सम्बन्धी शान्ति का प्रस्तुत की जाती है जिसे उन्होंने युवावस्था के पूर्व ही पढ़ लिया था।<sup>१</sup> 'नवीन' की सफर, 'सरस्वती' एवं 'प्रया' पढ़ा करते थे।<sup>२</sup> उन्होंने बात मुहम मुकबलियाँ करना भी प्रारम्भ कर दिया था जो कि वर्णनात्मक होती थी यथा, 'परीब का बयान' 'नदी से सहर्ष का कवन' आदि। वे प्राची कविताएँ 'सरस्वती' में भी प्रकाशनार्थ भेजते थे; परन्तु आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी उनका संशोधन कर वापस भेज दिया करते थे। वे प्रायः संपुत्र-धर्म के बीच सस्वर तथा गस्त होकर जाते थे। 'मदन पद्मो केड़े रे उनका अलम्ब प्रिय बीत था। आजापुर की प्राकृतिक-सुपमा के कवि को काव्य प्रभावित किया।<sup>३</sup>

उन्हीं में उनके ध्यान एवं विचार में पर्याप्त विकास किया। गहरी पर वे भी-मैपिस्वीसरल गुरु के 'रंय में संय एवं 'मोय-मिजय' काव्य-सत्य पढ़ पड़े थे। वे रीति-कालीन प्रवृत्तियों के विरुद्ध थे, क्योंकि वे कहे करते थे कि इनमें निमागी-अन्व्याधी धरो पड़ है। वे धूपल को ही पढ़ने का परामर्श दिया करते थे और 'मोय मिजय' में एवना तथा बन्धुगुप्त के चरित्र से बड़े प्रभावित हुए वे और अक्षर इसको बात किया करते थे। वे 'एक भारतीय धारणा' की रचनाओं से भी प्रभावित थे। 'एक भारतीय धारणा' की वह पंक्ति उन्हें कष्टस्व थी—

गुप्त स्वदेशी पोताम्बर क्या मापव को रहना न लकोमे ?

क्युवैरी की की इन बंधियों के प्रति भी वे मोहित थे —

आज जगत को राजपुस्तिका में भारत का नाम नहीं है,  
कर्मान्ध धारिकारों में हाथ हमारा काम नहीं है।  
रोना है सब देश, देश में दोनों को भी काम नहीं है,  
कविता कहते हैं सब सोय, यहाँ के लोचों में कुछ राम नहीं है।  
नाम नहीं है काम नहीं है, काम नहीं है, राम नहीं है,  
तो फिर इन्हें प्राण करने तक हमको भी धाराक नहीं है।<sup>४</sup>

उनका काव्य-विस्तार रूप में उजरने तथा था। गुरु की भी इस पंक्ति की समीक्षा करते हुए, वे कहते थे कि इन्हें कठोर पद्यों का प्रयोग किया गया है जो कि काव्य के लिए असाधनीय है—

क्या न विद्योत्कृष्टता लानी विचारोत्कृष्टता।

'नवीन' की वे अपने उन्हीं के विचारों-काल में ही 'प्रया' के प्रकाशन की योजना बना ली थी परन्तु इत्याचार्य के कारण उसे वे अध्याभित नहीं कर सके और बनपुर में जाकर ही स्योय जी के सहयोग में यह स्वन बाजार हुआ। आका में वे कविता लिखते थे। एक

१ "In the art of education he performed wonders and a formidable list is given of authors, Greek and Latin, that were read by youth"—S Johnson, 'Lives of English poets, Vol. 1., page 62.

२ श्री राजोदरदास आजापुरी द्वारा शाल।

३ श्री राजबन्धु बलवन्त मिश्र द्वारा शाल।

४ श्री सुपिन्दर मार्गव द्वारा शाल।

कविता को उन्होंने इस समय सिखी थी उसका शीर्षक था—'बासहृष्य का ऊचम । इस कविता में उन्होंने यह बखाना की थी कि यदि बासहृष्य धारण की धासा में पड़ते होत तो क्या-क्या छमन करते ? इस कविता में एक प्रकार से उन्होंने अपने को ही चरितार्थ किया था ।<sup>१</sup>

वे धीरे उनके धनन्य सखा सन्तु धासा में बिद्यार्थी शीर्षक हस्तलिखित पत्रिका भी निकालते थे ।<sup>२</sup> इसमें भी बासहृष्य की कविताएँ निकाला करती थीं ।<sup>३</sup> नबीन उपनाम का निर्माण धर्मी नहीं हुआ था ।<sup>४</sup> 'नबीन जी का ईश्वर का रसक रूप ही प्रिय था । वे सुकसी को 'सुधामी मस्तक ठब नई धनुष बाण लेधा हाथ' पंक्ति को बहुत पसन्द करते थे । उन्हें 'शब्द' की श्रुताएँ कच्छम थी । वे प्रतिदिन प्रातः बाल छिन्न-शंकर क मन्त्र का पाठ किया करते थे । संस्कृत की धोर उनकी धार्मिक रुचि थी । उज्जैन में उन्होंने शाता की हिन्दी माहिस्य समा के पुस्तकालय की समस्त पुस्तकें पढ़ बानी थीं । उन्हें भूपण की 'शिवा बाबनी बड़ी प्रिय थी । 'प्रताप' तथा 'सरस्वती' नियमित रूप से पढ़ा करते थे । वर्णन-शास्त्र में भी उनकी विशेष रुचि थी ।<sup>५</sup>

धारापुर में कबि जहाँ स्वामी सूर्यनन्द जी महाराज के धार्यसमाजी दृष्टिकोण से प्रभावित हुआ था वहाँ उज्जैन में धननी धासा के प्रधानाध्यापक प० नारायणप्रसाद मार्गब से भी प्रभावित हुआ जो कि बहुत धार्यसमाजी थे । 'नबात जी भी उस समय दृढ़ धार्य समाजी बन गये थे ।<sup>६</sup> उनके इस सूत्र का प्रभाव उनके प्रारम्भिक काव्य एवं 'जबिसा' पर भी धाँका था सकता है ।

'नबीन जी उज्जैन से ही काश्मिकारो दल में सम्मिलित होने के लिए बड़े इच्छुक थे, वस्तु भी नारायणप्रसाद मार्गब ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया ।<sup>७</sup> इस प्रकार किमिल सुबो ने उनके साहित्यिक संस्कारों के निर्माण में योगदान दिया ।

वे साहित्यिक संस्कार क्रमशः समय पाकर विकसित धीरे परिपुष्ट होते गये । धर्मा जी जब माधव-महाविद्यालय, उज्जैन में पढ़ते थे, तब उनके धार्मिक मित्रों में दो मित्र धनन्य व शाण्ड्यारे थे । एक थे साण्ड्या के 'स्वराज्य'-सम्पादक श्री सिद्धमाधवाधव धायरकर के लघु प्रकाश जिनका धरेलु नाम 'सन्तु था, धीरे दूसरे थे व्यासियर राज्य के पुस्तक-स्यबसायो धीरे सुबो के इन्स्पेक्टर स्व० सुन्दी बतुरबिहारो धासा के सुपुत्र भाई हरिधरल जिनका धरेलु नाम 'छोटे' था ।<sup>८</sup> 'सन्तु' का वास्तविक नाम थी बिप्लुमाधव सौदे धायरकर) था । वे

- १ श्री सुविठ्ठर भार्गव द्वारा ज्ञात ।
- २ श्री वेणकमोपाल सारिङ्क द्वारा ज्ञात ।
- ३ श्री काशीनाथ बलबन्त बाबडे का पुत्रे लिखित विनांक (१७-७-१९६१) का पत्र ।
- ४ बही, विनांक (११-१०-१९६१) का पत्र ।
- ५ श्री सुविठ्ठर भागव द्वारा ज्ञात ।
- ६ बही ।
- ७ बही ।
- ८ 'साहित्यकारों की ध्यातमकथा', पृष्ठ ६१ ।

प्रधानक ही प्येय से कास क्वसित हो गये।<sup>१</sup> इसका कवि के वास्तव-जन पर यहन प्रभाव पड़ा और उसने एक कहानी लिखी जिसका शीर्षक था 'सन्तु'। इस कहानी में 'नवीन' भी की भावभारा लहान बेग से मानो फूट पड़ी है।

भाचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के पास 'सरस्वती' में प्रकाशनाई यह कहानी भेजी गई। कहानी पढ़कर भाचार्य द्विवेदी जी ने अपनी सहकारी श्री हरिमाऊ उपाध्याय से कहा— 'इन्हें पत्र लिखकर पूछो कि किस बंगला कहानी का यह अनुबाद किया गया है।' उत्तर में 'नवीन' जी ने लिखा "ये ठी बंगला जानता ही नहीं और यह कहानी मेरी अपनी लिखी हुई है, अनुबाद नहीं। इसके उत्तर में द्विवेदी जी ने स्वयं एक काई लिखकर 'नवीन' के पास भेजा— "महाशय कहानी लिखी—छात्रुना। म० प्र द्विवेदी।<sup>२</sup> यह कहानी फिर 'सरस्वती' के जनवरी सन् १९१० के अंक में प्रकाशित हुई।<sup>३</sup> यह कहानी 'नवीन' जी की प्रथम रचना है। इस प्रकारसे यह सिद्ध होता है कि 'नवीन' जी में प्रारम्भ में ही काव्यी साहित्य-प्रतिभा और मेधा छिपी थी। इसलिये, कहानी की उत्कृष्टता व भावमयता को देखकर भाचार्य द्विवेदी जी को इसके बाँ ७ कहानी के ब्याप्तर होने का विप्रम हो गया था। कवि के दूसरे वाक्य सदा छोटे' का म ज्ञान्त सन् १९१० में हो गया। ये दोनों मित्र 'नवीन' जी को बना देकर बसे गये।<sup>४</sup> 'न' जी ने 'छोटे' पर कहानी<sup>५</sup> तथा कविता<sup>६</sup> भी लिखी।

वास्तव में भाष्य-कालेज उद्योग में पढ़ते समय उनकी काव्य-प्रतिभा से सब परिचित हो चुके थे और घाटा-अरी दृष्टि से देखते थे। श्री ब्यास ने लिखा है कि भाष्य-कालेज में वे के समय ही मित्रों ने पहचाना था कि यह द्विम्बी के रवीन्द्र हैं।<sup>७</sup>

(ग) कवि उपनाम—चर्मा जी ने अपनी उपनाम 'नवीन' रखा और इस नूतनता को लेकर वे काव्य-जगत् में प्रविष्ट हुए। यह उपनाम सर्वप्रथम उनकी कहानी 'सन्तु' में प्रकाशित हुआ था। 'सरस्वती' में यह कहानी सिर्फ 'नवीन' नाम से ही छपी है।<sup>८</sup> प्रथम बार 'सरस्वती' में प्रकाशित कविता 'तारा' के अन्त में भी 'नवीन' उपनाम दिया गया है। इस रचना को भाचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने मुद्र-मुष्ट का महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।<sup>९</sup> कवि के प्रच्छिन्नासी व्यक्तित्व और नूतन रूप-विधान का बीज इस कविता में

१ श्री गोपीवल्लभ उपाध्याय—'बीजा' अनुबाद की 'नवीन' जी, 'नवीन' स्मृति अंक, पृष्ठ ५०२।

२ श्री उद्धारदास गुप्त—'द्विज नवजीवन सं० बासुदेवदास चर्मा 'नवीन', (३०-७ १९५२)।

३ 'सरस्वती', 'सन्तु' जनवरी १९१० (पीप २२७४), भाग १९, अंक १, संख्या १, पूर्ण सख्या २१७ पृष्ठ ४२-४३।

४ साहित्यकारों की आत्म-कथा, पृष्ठ ९१-९२।

५ 'प्रजा', मेरा छोटे, मार्च, १९२३, पृष्ठ १९२-१९७।

६ 'सर्चना', प्रवेश, पृष्ठ १३।

७ 'बीजा', स्वति-अंक, पृष्ठ ४९३।

८ 'सरस्वती', जनवरी, १९१०, पृष्ठ ४५।

९ वही, तारा कविता, अर्पण, १९१०, पृष्ठ १६९।

सहज ही देखा जा सकता है। कवि की फिर अन्य रचनाएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित होती रही तथा 'बिरहाकुस' आदि।<sup>१</sup>

हिन्दी के अन्य उपनामों के सदस्य 'नवीन' नाम के धीरे धीरे कवियों का उल्लेख प्राप्त होता है। ऐतिहासिक प्रसिद्ध कवि श्री स्वाम जी के समकालीन बुन्वाचन के एक कवि नवीन का भी उल्लेख आया है। ये स्वाम जी के गुरुमार्ग से धीरे उन्होंने इनके साथ ही गोस्वामी दयानिधि जी के यहाँ काव्य-शास्त्र का अध्ययन किया था।<sup>२</sup> मिथलमधुओं में भी अपने मिथ बन्धु-विनोद' में इनका उल्लेख किया है और पद्मनाभ की कोटि का कवि निरूपित किया है। इनका एक अन्य रंग-रस' होना भी बतलाया गया है।<sup>३</sup> इसी प्रकार कामपुर के कवि श्री गदाधरप्रसाद ब्रह्ममट्ट (सं० १८६८-१९७८ वि०) का भी उपनाम 'नवीन' था। 'योगेश्वरवर्गीया', 'उपनिषद् प्रदीपिका' रामोपदेश-चन्द्रिका शिव-शास्त्र' शिवमहिम्न श्लोक, इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं।<sup>४</sup> इसी परम्परा में पं० केदारनाथ जी त्रिवेदी नवीन का भी नाम मिलता है। इनका अग्र-सम्बन्ध १९१२ वि० में ग्राम कोरियासरावाँ जिला सीतापुर में हुआ था।<sup>५</sup> परन्तु बालकृष्ण शर्मा ने अपना यह कवि-नाम एक मुग-बंश के काव्य-यारा से अपने पुस्तकवाचक सम्पत्ता प्रकट करने के लिए रखा था। उस युग में या तो अपनी मूलतः अविश्वकर्म करने वाले उपनाम रखे जाते थे अथवा काष्ठ के अनुकूल प्रबलमान राष्ट्रीयता की धारा के चोटक गया—'निरासा' 'एक भारतीय आत्मा' 'एक राष्ट्रीय आत्मा' आदि। डॉ० बच्चन ने लिखा है कि किसी प्राचीन के साथ अपना सम्बन्ध न देखकर ही उन्होंने अपना उपनाम 'नवीन' रखा होगा। 'निरासा' जी ने भी कुछ ऐसी ही परिस्थिति में अपने का निरासा कहा होगा। वास्तव में बीसवीं सदी के नव-जागरण के साथ हिन्दी के प्रायः सभी नवयुवक कवियों ने अपने समाज में अपने को अजनबी पाया होगा। समाज में अपने को अलग करना चाहा होगा किसी ने गया नाम लेकर, किसी ने गया रूप बनाकर बात बढ़ाकर किसी ने गया परिधान धारण कर।<sup>६</sup> कवि सदा-सर्वथा नवीन ही रहा—

तुम समझो हो कि अब हो जैसे हम नवीन प्राचीन !

यों भूलो हो कि हम अमर हैं ! हम हैं भीड़ धरोर !!!

सजो री, हम हैं मल्ल कछोर !<sup>७</sup>

'नवीन' होने के कारण ही, कवि ने जीवन में मूल्य मार्ग ही बनाया। 'सोक छवि दीनों जैसे धारण सिंह सपुत की छवि उन पर चरितार्थ होती है—

१ वही, बिरहाकुस कविता, विसम्बर १९१८ पृष्ठ ३०२।

२ श्री रामनारायण धर्मदास—'ब्रह्म भारती, स्वाम जी के समकालीन अज्ञात कवि श्री 'नवीन', आवाङ्-भाषण-माहपत्र, सं० २००६ वि, पृष्ठ ४०।

३ वही।

४ श्री गदाधरप्रसाद ब्रह्ममट्ट—'हिन्दी साहित्य का विकास धीरे कामपुर', ब्रह्मभावा के आधुनिक कवि, पृष्ठ ११४।

५ 'काव्य कलापर, परिचयार्थ, जनवरी १९३६, पृष्ठ १६१-१६२।

६ डॉ० हरिबंसाराय 'बच्चन'—'मधे सुरागे भटोसे', पृष्ठ २२।

७ 'अपलक्ष, हम हैं मल्ल कछोर, पृष्ठ ७१।

इस धनीक बोहड़ जैसे, चिरवी अपनी सीक ।

हमें न भावें धर्म को, मारण धार्मिकों, नीक ॥<sup>१</sup>

(घ) राष्ट्रीय संस्कार — राष्ट्र प्रीति तथा राष्ट्रीयता की पुनः 'नवीन' की श्रेय अपनी किमोरावत्ता से ही हमें प्राप्त की । इस सम्बन्ध के एक प्रकारण का उल्लेख स्वयं कवि ने किया है । जब शर्मा की मातृ-कासेक उन्मत्त में प्रथमपन कर रहे थे तभी यह बटना घटित हुई— 'एक बार तप्या में मैंने एक भाषण दे डाला । छापी-संघियों ने उसे बड़ा पसन्द किया । पर सिवाक सोपा मे काफी खबर लो । वे बोले — 'धर्म याद रखो देश-सेवा करने वाले बनने नहीं होते । बरा पढ़ने-लिखने की तरफ भी ध्यान देना चाहिए । भारत की खंजीर बखान से नहीं बसिके कठोर कर्मठ मानवार्थों से ही टूटती । देश-सेवा के लिए अपने को तैयार करो । उस बक लो यह बात बहर-जैसी कड़वी समी पर बाद में प्रकट धाई धीरे धीरे अपने कुस्वनों की बातों की सत्यता अनुभव की ।'<sup>२</sup>

देश-सेवा का यह भाव विकसित होने लगा । उस समय के समाचार पत्रों के सम्बन्ध के द्वारा उनका विचार-क्षेत्र विस्तृत होने लगा । वे 'प्रताप' के निम्नलिखित पाठक थे ।<sup>३</sup> साथ ही 'प्रताप' के बाहुक भी थे ।<sup>४</sup> वे दोनों पत्र उस युग के राष्ट्रीय धार्मिकता के बाहुक के रूप में दीर्घ-स्थिर पर थे । प्रकृत स्वामाधिक का कि नवीन जो की यह मानना बसवती होती बनी गई । सन् १९१६ की सखन-कासेक ने कवि की इस प्रथम मानना की मुतनित को ही मुहड़ कर दिया । सन् १९१७ में वैदिक उत्पीड़न करने के परचात, धार्मिक सिद्धा प्रकृत करने के हेतु, उन्होंने अपनी भावा से अनुमति चाही । इस बटना का संस्मरण भी शर्मा के उन्मत्त में इस प्रकार है— 'मैं ने नहूँ— बैठा अपने सोप बरीक है । अपने पास साधन नहीं कि तू कहीं जाकर धार्मिक पढ़ सके । वे सब अपने की बातें अपने मन से निकलत । बड़ी भयवान की भारी धर धीरे को कुञ्ज प्रसाद-रूप प्रभु से उनी से भरण-नोपण कर । मैं की इस क्विच्छता से इस संकल्पकृति प्रविष्ट-द्रष्टा, स्वल्पधीन शासक नवीन पबराका नहीं निराप नहीं हुआ । उसने निश्चय किया कि अपने-धर्मों धीरे धर्मात्तों के इस निरिराज से बड़ टककर सेवा धीरे अपना नवीन मार्ग प्रकृत करेगा । उत्तर दिया— 'बीभी भववान की भारी तू मर मैं तो सब मारण जाता की भारी भर्त्सा धीरे इस जीवन को देश-हित में समर्पित करूँगा । उनका यह संकल्प प्रकृत-पुत्र हुआ धीरे तपुसे देश से उस संकल्प-सिद्धि का स्वयं साक्षात्कार भी किया ।'<sup>५</sup>

शासक पढ़कर धीरे धर्मरतहीय की गणेशकर्त विद्यार्थी के मार्ग-दर्शन का सीमाम्य प्राप्त कर, 'नवीन' जो मे हमार नारतीय राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संघाम में जो तन-धन से सहायता दिया वह सर्व-निर्दिन ही है । भारत-यात्रा की भारी मरने के लिए 'नवीन' जो मे

१ 'नवीन' बीहाबनी निरर बड़ नाहर, १७ की रचना ।

२ 'साहित्यकारों की शासक बका', पृष्ठ ६३ ।

३ बही, पृष्ठ ६६-६७ ।

४ जो शासकगण शर्मा 'नवीन'—'राष्ट्रीय वैचिनीकरण मुञ्ज धर्मनयन बका' एकादशमिष्ठ वैचिनीकरण मुञ्ज, पृष्ठ ३५३ ।

५ जो प्रभाषकगण शर्मा—'बीला', सत्यावरीय, धर्मन-निर्णय, १९६, पृष्ठ ४३८ ।

धरना सर्वस्व त्याग दिया। पाठनाएँ सही धीर मरत पान कर, पाठों पर मन्द-स्मिति की मयूर रेखा सदा-सर्वथा बिखेरते रहे। पं० माखनदास बतुर्वेदी ने लिखा है कि वे धरनी माँ के कथाचित् इच्छाते बेटे थे। किन्तु चिरजीव बासकृष्ण ने मासबा की पुकार नहीं सुनी। बूढ़े पिता की, मर्राई हुई धाबाव भराकर बिमान हा हा रझे। बीबी मरते समय उठ बासकृष्ण को पुकारती रझी। किन्तु बासकृष्ण का सौटना कैठे सम्भव हो सकता था? 'नबीन' जो ने धरनी को रैस-देबा के लिए समर्पित कर दिया। इसीलिए उनके बीबन को 'समर्पित बीबन' कहा गया है।<sup>१</sup>

## उत्कर्ष-काल

कानपुर के बीबन से ही 'नबीन' जो के उत्कर्ष-काल का समारम्भ होता है। इसके पा पद्य थे—

(क) साहित्यिक बीबन

(ख) राजनैतिक-सामाजिक बीबन।

प्रत्येक की प्रमुख एवं काव्योपयोगी बटनाओं का विवरण इस प्रकार है।

(क) साहित्यिक बीबन कवि ने धरनी सर्वप्रथम कविता माँग पीकर सिखी की जो कि श्री ज्ञानादत्त शर्मा द्वारा सम्पादित मुरदाबाद की 'प्रतिभा' नामक मासिक-पत्रिका के कुछ-पृष्ठ पर प्रकाशित हुई थी।<sup>२</sup> इस कविता का शोषक या शीघ्र ईश्वर वार्तालाप पर। पं० माखनदास बतुर्वेदी जो इन्हीं दिनों यहीं पर ही थे। वे कानपुर स्वास्म्य-भारत के लिये गये थे। बतुर्वेदी जो ने लिखा है कि चिरजीव बासकृष्ण शर्मा 'नबीन' उन दिनों माँ को धामन्वित करने के लिए उन्हें तरह-तरह की बातें सुनाया करते।<sup>३</sup> बतुर्वेदी जो की माता भी भी साप में हो गई थीं। सन् १९१७ के जुलाई के बाद के किसी महीने में बतुर्वेदी जो कानपुर पहुँचे थे।<sup>४</sup>

छोटे-थोड़े करके 'नबीन' जो प्रकाश में लिखने लग गये। उनकी प्रथम कविता का सम्मान भी हुआ था। मित्रों के प्रस्तावना व प्रकाशन से उनकी यह नैसर्गिक वृत्ति प्रगति के बाधन पर धारक हा गई, वे कवि हो गये।<sup>५</sup> कवि ने लिखा है कि 'मैंने कविता के लिए किसी से 'इतसाह' नहीं सी। छत्रों धीर तुम्हें का ज्ञान था, संवीत भी मेरे प्राणों में बसा था।'<sup>६</sup>

१ 'सरस्वती', जून, १९६०, पृष्ठ ३८१।

२ जो जगदनीधरण शर्मा—'सरस्वती', मेरे घातीय 'नबीन', जून, १९६०, पृष्ठ ३९६।

३ डॉ० बटुर्वेदी शर्मा 'कमलेश'—'मैं इनसे मिलता', इतरती इति, श्री बासकृष्ण शर्मा 'नबीन', पृष्ठ ४८-४९।

४ जो कवि बीबनी औद्योगिक बटना — माखनदास बतुर्वेदी 'बीबनी', पृष्ठ ३४४।

५. वही पृष्ठ ३४६।

६. 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ४९।

७. वही।

हम धार्मिक बीहड़ बनीं सिरबै धपनीं लीक ।

हमें न भावें धर्म को, मारय धार्मिकीं, नीक ॥<sup>१</sup>

(घ) राष्ट्रीय संस्कार—राष्ट्र प्रीति तथा राष्ट्रीयता की पुनः 'नवीन' जी को धपनी किञ्चोरावस्था से ही सग गई थी। इस सम्बन्ध के एक प्रकरण का उल्लेख स्वयं कवि ने किया है। जब धर्मा जी माधव-असेज जर्जैन में अध्ययन कर रहे थे तभी यह घटना घटित हुई— 'एक बार समा में मैंने एक भाषण दे डाला। सार्धा-संगियों ने उसे बड़ा पसन्द किया। पर जिसके लोगो ने काफी खबर ली। वे बोले—'धर्मा भाव रखो देश-सेवा करने वाले बननी नहीं होते। बर्रा पढ़ने-लिखने की तरफ भी ध्यान देना चाहिए। भारत की खंबीर बचान से नहीं बल्कि कठोर कर्मठ भावनाओं से ही दूटोगी। देश-सेवा के लिए धपने को तैयार करो। उस वक़्त तो यह बात बहुर-जैसी कड़वी लगी पर बाद में अकल धाईं धीरे में धपनें पुस्तकों की बातों की सत्यता अनुभव की।'<sup>२</sup>

देश-सेवा का यह भाव विकसित होने लगा। उस समय के समाचार पत्रों के अध्ययन के द्वारा उनका विचार-क्षेत्र विस्तृत होने लगा। वे 'प्रताप' के निबन्धित पाठक थे।<sup>३</sup> 'साध ही प्रमा' के साहक भी थे।<sup>४</sup> ये दोनों पत्र उस युग के राष्ट्रीय धार्मिकता के साहक के रूप में धीरे-धीरे पर थे। अतएव स्वभाविक था कि 'नवीन' जी की यह भावना बलवती होती चली गई। सन् १९२६ की सखनऊ-कांग्रेस में कवि की इस सम्बन्ध-भावना की मूलमिति को ही सुदृढ़ कर दिया। सन् १९१७ में मैट्रिक उत्तीर्ण करने के परचात् धार्मिक शिक्षा ग्रहण करने के हेतु, उन्होंने धपनी माता से अनुमति चाही। इस घटना का संस्मरण धी धर्मा के छात्रों में इस प्रकार है— 'मां ने कहा—'बेटा धपनें सीम मरीब है। धपनें पास साधन नहीं कि तू कहीं जाकर धारे पढ़ सके। मैं सब धपनें की बातें धपनें मन से निकाल। यहीं भगवान की म्भरी धर धीर जो कुछ प्रसाद-रुम प्रभु है उसी से भरण-पोषण कर। मां की इस विवशता से हड़ संकल्पवृत्ति धर्मिय-वृत्ता, स्वल्पशील बासक नवीन बचराया नहीं निराश नहीं हुआ। उसने निरश्चय किया कि धरतीकीं धीर धर्माकीं के इस निरिराज से बह टककर लेगा धीर धपना माथी मार्य प्रपसठ करेगा। उत्तर दिया— 'बीबी भगवान की भाठी तू जर मैं तो धम नारत-माता की म्भरी मर्कां धीर इस जीवन को बेध-हित में समर्पित करूंगा। सनका यह संकल्प धर्मत घुल हुआ धीर समुने देश में उस संकल्प-सिद्धि का स्वयं साक्षात्कार ही किया।'<sup>५</sup>

बासकृष्ण नवीन धीर अमरउद्दिध धी नखेजवेकर विद्यापी के मार्य-वर्तन का सोमाम्य प्राप्त कर 'नवीन' जी ने हमार भारतीय राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम में जो उन-मन से सहयोग दिया वह सर्व-विदिन ही है। भारत-माता की म्भरी भरने के लिए 'नवीन' जी ने

१ 'नवीन बोहावनी' विवर बड माहर, १७ की रचना।

२ 'साहित्यकारों की धार्मिक कथा', पृष्ठ ६३।

३ वही, पृष्ठ ६६-६७।

४ धी बासकृष्ण धर्मा 'नवीन'—'राष्ट्रीय मैजिनीकरण गुप्त धर्मिनम्बन धर्म', एकरासनिष्ठ मैजिनीकरण गुप्त, पृष्ठ ३५३।

५ धी प्रमापबन्ध धर्मा—'बीला', सभ्याबन्धेय, धपसत-मिलम्बक, १९६, पृष्ठ ४३८।

प्रपत्नी सर्वस्व त्याग दिया। पाठगार्ह सही धीर मरत पान कर, मोठों पर मन्त्र-स्मिति की मयुर देखा सरा-सर्वथा बिछोटे रहे। पं० भाजनसाह चतुर्वेदी ने लिखा है कि वे प्रपत्नी माँ के कर्वाणिए इकतीये बेटे थे। किन्तु चिरञ्जीव बालकृष्ण ने मानवा की पुकार नहीं मुरी। बुढ़े सिता की, मर्राई हुई भाबाब मर्राकर बिनीन हा हा रही। बीबी परते समय एक बालकृष्ण को पुकारते रही। किन्तु बालकृष्ण का बौटना कैसे सम्भव हा सफटा या ? 'नबीन' जो ने मरने का देय-सेवा के लिए समर्पित कर दिया। इसीलिए उनक जीवन को 'समर्पित जीवन' कहा गया है।<sup>१</sup>

## उत्कर्ष-काल

कानपुर के जीवन से ही 'नबीन' जी के उत्कर्ष-काल का समारम्भ होता है। इसके दो पक्ष हैं—

(क) साहित्यिक जीवन

(ख) राजनैतिक-सामाजिक जीवन।

प्रत्येक का प्रमुख एवं काम्योपयोगी बटनामों का विवरण इस प्रकार है।

(क) साहित्यिक जीवन कर्ष में प्रपत्नी सर्वप्रथम कविता बाँग पीकर लिखी थी जो कि भी आसावत धर्मो हाय सम्पावित मुपशबाब को 'प्रतिमा' नामक मासिक-पत्रिका के मुख-पृष्ठ पर प्रकाशित हुई थी।<sup>२</sup> इस कविता का ध्येयक या बीब ईश्वर बाधसाय पर। पं० भाजनसाह चतुर्वेदी भी इन्हीं दिनों यहीं पर ही थे। वे कानपुर स्वात्म्य-नाम के लिये गये थे। चतुर्वेदी जी ने लिखा है कि चिरञ्जीव बालकृष्ण धर्मो 'नबीन' इन दिनों माँ को घानमिक्त करने के लिए जहाँ लख-लख का धार्ते धुमाया करते।<sup>३</sup> चतुर्वेदी बा की माता जी भी साब में हो गई थीं। सन् १९१० की जुलाई के बाब के फिसो महीने में चतुर्वेदी जी कानपुर पहुँचे थे।<sup>४</sup>

धोरे-धोरे करते 'मबान' जो 'प्रठाप' में लिखने लय पये। उनकी प्रथम कविता का सम्मान भी हुआ था। दिनों क प्रातःसाहज ब प्रकाशन से उनकी यह नैर्घविक कृति प्राति के बाहन पर माक्य हो गई, वे कवि हो पये।<sup>५</sup> कवि ने लिखा है कि 'मैने कविता के लिए दिनों के 'इच्छा' नहीं सी। कर्षों धोर तुर्षों का ज्ञान था संगीत थी मेरे प्राणों में बया था।<sup>६</sup>

१ 'सरस्वती', मुम्ब, १९६०, पृष्ठ १८१।

२ जी बयबनीचरण धर्मा—'सरस्वती', मेरे भारतीय 'मबान', मुम्ब, १९६०, पृष्ठ १९१।

३ डॉ० पद्मसिंह धर्मा 'कर्मयोग'—'मैं इनसे मिलता', इन्दौर विस्व, श्री बालकृष्ण धर्मा 'नबीन', पृष्ठ ४८ ४९।

४ भा कवि कविनी कीर्तिक 'बदमा'—साधननाम चतुर्वेदी 'जीबनी', पृष्ठ १८८।

५ वही पृष्ठ १४६।

६ 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ४९।

७ वही।



उनके राजनीति के कुछ हाने के साथ था गणेशशंकर बिद्यापी साहित्य-सेखन के भी प्रेरणा-स्रोत हुए। यथा जो ने इस तथ्य की स्वयं स्वीकृति देते हुए, लिखा है कि "लिखने की धोर जो मेरी प्रकृति हुई उसका भेष भी पूज्य मण्डल जी को ही है। मैं तो बहुत पहले से लिखने की धोर खि जो पर प्रेरणा गणेश जी की हो थी। धरम मैं यों कहूँ कि उन्होंने मुझे कसम पकड़कर लिखना सिखाया था अत्युक्ति न होगी।"

घर्मा का व्यक्तिगत साहित्यिक धोर राजनीतिक दो रूपों में बँटा हुआ है, परन्तु परस्पर ये दूतने अन्योन्याभित हैं कि पृथक्करण की रेखा खींचना बुझकर कार्य है। राष्ट्रीय आन्दोलन की बटनाधों ने कवि का गहन रूप से प्रभावित किया था और उनकी कबिल व्यक्ति पत्रकारिता तथा भावस्वी वाली ने इस संग्राम में सब शक्ति का संचार किया था। अग्रगण्य कवियों के समान 'नवीन' भी भी प्रारम्भ में अपनी प्रणय रहस्य तथा विविष्ट रीति के उत्तमों को समाहित करने काव्य-प्रणय में उतरे थे। कवि की कविताधों को सम्मान 'सरस्वती' में स्वयं मिलने सया था। यथा नाम तथा गुण के अनुसार, नूतन युग की अन्वयारणा उनके काव्य में होने लगी थी।

एक दिन काठपुर में मनवानदास जी के कर्मचयक प्रेस में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी प्रादि सम्मन बैठे हुए थे। बासकृष्ण घर्मा भी वहीं पर विद्यमान थे। द्विवेदी जी ने अपनी ठंड बैसबाड़ी में कहा 'अब हो बासकृष्ण ! तुम्हारे ऊँ प्रेस की कहीं खूब है जेकर बारे में तुम्हें अपनी कवितायें लिखा करित हो ?' बासकृष्ण जी ने अब यह सुना तो वे उत्तर देने के बजाय बड़े प्रगाढ़, उठकर बस दिने। तबन्तर अतुर्बेरी जी ने निवेदन किया— आरका जमाना बुरा है और बासकृष्ण दूसरे जमाने के निर्मास में सगा है। उसे निर्मास करने का धोर धूलें करने का भी क्या पूर्वक अधिकार दीजिए। इसके कुछ कास पश्चात् 'नवीन' जो ने 'प्रताप' में लिखित एक लेख में आचार्य द्विवेदी जी की खूब खबर की।<sup>१</sup> कुछ जी ने लिखा कि 'नवीन' जी ने आचार्य द्विवेदी जी को तरकास उत्तर दिया था— अब तुम बूढ़ होव पएओ का करिओ, इनका मरम पालिए। टकाका सवाते हुए द्विवेदी जी ने 'नवीन' जी को एक पूसा लगाया और बोले— बड़े मुरदा हा। इस बटना का अर्थ होना यहाँ प्रताप प्रेस में बतलाया गया है।<sup>२</sup> 'नवीन' जी के इस उत्तर अहित आश्चर्य का कारण वं० बगारसोनास अतुर्बेरी<sup>३</sup> और श्री बेंदट्टेय माण्डण तिवारो<sup>४</sup> ने भी किया है। 'द्विवेदी मीमांसा' का अर्थन माधनतास जी के साक्षर्य में है।<sup>५</sup>

१ 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ४६।

२. वं० माधनतास अतुर्बेरी—'सरस्वती', त्यास का बुरा नाम बासकृष्ण घर्मा 'नवीन' पृष्ठ ३८०, जून, १९६०।

३ 'वैदिक नवजीवन', (१२ ११-१९५१)।

४ 'दिवा बिज', पृष्ठ २०३-२०४।

५ 'सरस्वती', जून १९६०, पृष्ठ ३८८।

६ 'एक बार द्विवेदी जी बासकृष्ण घर्मा 'नवीन' से अर्णों की मण्डली में खूब बैठे— "राहे हो बासकृष्ण ई तुम्हारे लक्ष्मी, लक्ष्मी, लक्ष्मी, प्राल को आर्य। तुम्हारे कविता माँ इनका यहाँ खिबर रहन है। सब लोग हँस पड़े और 'नवीन' जी भँस गए।— जो प्रेमनादास टण्डन, द्विवेदी मीमांसा, पृष्ठ २३४।

'नबीन' की की निर्माँक्या हुमेसा अपने निर्द्वन्द्व रूप में अभिव्यक्त हुमा करती थी । आचार्य महाबोरप्रसाद द्विवेदी को मखेस की भरना मुह मानते से धीर उन्हीं के ही अधीनस्थ उन्हींने अपनी पत्रकारिता का स्वतन्त्र पाठ पढ़ा था । विद्यार्थी की को धगर द्विवेदी की की विषय-मण्डली में सर्वप्रधान स्थान दिया जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी ।<sup>१</sup> फिर भी हम देखते हैं कि 'नबीन' की से इस परम्परा का क्मात् अपनी उद्य ब यथास्थय ग्रहण कृति के कारण, नहीं किया । इसी प्रकृति का रूप धारण जाकर विकसित हुमा धीर उन्हींने अपने मजमेद के समय धीर साबरकर, महात्मा गान्धी, जवाहर लाल नेहरू ब पुस्तोत्तमदास टण्डन का भी यथावसर विरोध किया ।

उपर्युक्त बटनाएँ कवि के स्वभाव ब व्यक्तित्व की परिचायिकाएँ हैं । इनसे यह भसी-भक्ति निम्नित हो जाता है कि उठते ब बढ़ते हुए कवि के कुछ अपने निश्चित मान सिद्धान्त ब विचार थे । कवि अपनी सैसी को क्मद्य यह रहा था धीर उसकी माम्यताएँ हमारे समक्ष उभर कर ब चुनकर धा रही थी ।

इन सब बात-प्रतिघातों के पदधातु भी उनके हृदय में किसी प्रकार का विकार या बँठ नहीं बँपती थी । सन् १९२२-२३ में कानपुर के हिन्दी साहित्य-सम्मेलन से अधिवेशन में आचार्य महाबोरप्रसाद द्विवेदी स्वागतार्थ्यक्ष ब । उन्हींने अपने भाषण का प्रारम्भिक भाँस ही उद्यमें पढ़ा था धीर सैपाद्य का पाठ समा जो से किया था ।<sup>२</sup>

मखेस का एवं 'प्रताप' परिवार के अतिरिक्त कवि कानपुर के साहित्यिक समाज से भी सदा-सबँया संलग्न रहा । उस समय कानपुर में दो साहित्यिक मण्डल थे—

(क) साहित्य-मण्डल

(ख) साहित्य-समिति ।

साहित्य-मण्डल को मण्ड-मण्डल कहते थे धीर भी रामाज्ञा द्विवेदी तथा भी राधाराम मुख 'एक राष्ट्रीय आत्मा' इसके अध्यक्ष एवं मन्त्री थे । 'साहित्य-समिति' का 'सम्ब-मण्डल' कहते थे । भी गयाप्रसाद मुख 'सनेही' इसके अध्यक्ष थे धीर भी बिस्वम्भरनाथ धर्मा 'कौषिक' सचिव थे । 'नबीन' की का सम्बन्ध दोनों मण्डलों से था धीर दोनों पर ही उनका प्रभाव प्रभाव<sup>३</sup> था ।

'नबीन' की विधेयकर 'कौषिक मण्डली' से संलग्न थे । इस मण्डली से वे अस्वर कविता-पाठ करते थे ।<sup>४</sup> 'नबीन' की के प्रत्येक छन्द में वेदना, पीड़ा, निवेदन, धाम-त्रण तथा कस्या भी पुकार सुनकर बिनोदी कौषिक प्राय उद्याना सपाकर कह दिया करते थे कि—

१ भी वेचनत शास्त्री—'मखेस'पर विद्यार्थी प्रारम्भिक बीबन, पृष्ठ ९ ।

२ भी गोपीबल्लभ जपाध्याय—'बीणा' बन्धुकर की 'नबीन' की, धगस्त-सितम्बर १९९० पृष्ठ ५०२ ।

३ भी कानिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर', जलपुर से हुई प्रत्यक्ष भेंट (दिनांक ७-१ १९९२) में ज्ञात ।

४ भी वेचोप्रसाद बबन—'साहित्य', सुधी प्रेमचन्द्र, जून, १९९१, पृष्ठ २३ ।

इसके ने बेकार इनको कर दिया,  
करना ये भी भावनी से काम के।<sup>१</sup>

राष्ट्रभाषा के प्रति प्रेम तथा उत्सर्ग की भावना का विकास उनमें प्रारम्भ से ही हो गया था। उन्होने जर्मन में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं के प्रचार में अपने शासक प्रबानाम्पायक के साथ काफी सहयोग दिया था।<sup>२</sup> कानपुर में भागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई थी। यह सभा सन् १९२७ में टूट गई। इसके भी 'नवीन' भी सक्रिय सदस्य रहे।<sup>३</sup>

पत्रपरिष्ठा के अतिरिक्त कवि ने सम्पादन-कार्य भी किया था। कानपुर में अन्य साहित्यिकों के साथ उसकी मुन्दी प्रेमचन्द से भी बनिष्ठता हो गई थी।<sup>४</sup> 'नवीन' भी के साहित्यिक जीवन को उनके सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन से काफी प्रभावित किया।

(घ) राजनीतिक-सामाजिक जीवन सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन से उनका ('नवीन' का का) राजनीतिक जीवन प्रारम्भ हुआ और तब से वे उस दिन तक परतन्त्रता के विरुद्ध संघर्ष में संलग्न रहे जब तक देश स्वाधीन नहीं हो पाया।<sup>५</sup>

श्री अन्ताराष्ट्रीय युवक ने लिखा है कि सिखने-लिखाने का सिसधिता करती ऐसी पकड़ रही था कि पान्थी बाबा की पानी बत पड़ी और पू० पी० के सत्याग्रहियों के पहले बत्थे में बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' का नाम मौजूद था। हाँ 'नवीन' ने निरी शान्तिता में बहकर पानी बर्तों के सिपाही का बाबा पहिन लिया तो सो बात नहीं है। नवीन उन दिनों भी० ए फरसस में पढ़ते थे और उनके दो बिरादरी दोस्त थे—यं० द्वारकाप्रसाद मिश्र और पं० उमाचंकर शिखित। इन तीनों ने लगातार एक सप्ताह मूब विचार-विनिमय और तर्क-वितर्क के बाद आन्दोलन में भाग लेना स्वीकार किया था। परन्तु इस विचार के बाद भी निर्णय की प्रेरणा ध्येय की तर्क सम्मिलता ने नहीं की थी बल्कि उनके ही चर्चों में इस भावना ने कि— 'बूढ़े गान्धी की बाणी में देश की अन्तर्ध्वनि सुन्नर हो उठी है और यदि अपने आपको इस धाम में सोंक न दिया तो जो मैं यह कसक जिन्यमी भर के सिधे रह जायेगी कि एक तप-पूत प्राणी ने देश की बेरी पर आह्वान किया और हम देश-द्रोहियों की तरह जान बचाये बैठे रहे।' अन्त में जो बटना बरित हुई उससे सुबना साप्ताहिक 'प्रताप' में इस प्रकार प्रकषित हुई—

'ब्रह्मस्त वर्ष अनेक कानपुर के निम्नलिखित विद्यार्थियों ने कांग्रेस के प्रस्तावानुसार अनेक छोड़ दिया है—

१ 'साहित्यकार निष्ठा से', पृष्ठ १७।

२ श्री सुपिण्डर भार्यब द्वारा कृत।

३ श्री विष्णुवल्लभ युवक द्वारा कृत।

४ श्री बालकृष्ण वर्मा 'नवीन'—'प्राज्ञरस', प्रेमचन्द, एक स्मृति-चित्र, कानपुर १९३२।

५ दैनिक 'नवजीवन', (१९११-१९३१)।

(१) शिवप्रसाद द्विवेदी, चतुर्थ वर्ष, (२) हनुमानप्रसाद मुखर्जी, चतुर्थ वर्ष (३) उमाचंकर दीक्षित, तृतीय वर्ष, (४) श्री बालकृष्ण, शर्मा, चतुर्थ वर्ष।<sup>१</sup>

'नवीन' जी को राजनीति के विस्तृत मैदान में ला खड़े करने का सम्पूर्ण श्रेय श्री मणोरमचंकर विद्यार्थी को है। मणोरमचंकर विद्यार्थी गृहस्थी बेघ में रहते हुए भी सबसे कम में जितना प्रयत्न से अपने ध्यापको प्रसन्न कर चुके थे। वे अपनी मण्डल के रह थे। पढाए बिहाराकर खड़े हुए तापस के सामने वे हिमालय के समान ऊँचे व्यक्तित्व से बनेकों को अपनी ओर खींच रहे थे। 'नवीन' जी भी उनके प्रदक्षिण भारत में खिंच घाय और जो उन्होंने एक बार उस दिग्गम्वर मति-मण्डल में बीसा सी तो कालिदास के शब्दों में जन्म पर्यन्त प्रकिंचनत्वं व्यक्तिके के रूप बन गए।<sup>२</sup>

मासबा के एक मस्ताने तक्षण को गणेश जी ने देवदत्त साहित्यिक व सोक-नायक के प्रोत्साहन रूप में परिणत कर दिया। सन् १८१६ की लखनऊ कांग्रेस और इसके पश्चात् गणेश जी के व्यक्तित्व की मधुरिमा व धारुर्पण के मोह-जास में फँसकर, सन् १९१७ में 'नवीन' जी का कानपुर प्रस्थान कर जाना, हमारे खरिज-नायक के बीबन जी ऐतिहासिक घटनाएँ प्रमाणित होती हैं। 'नवीन' जी ने अपनी जीवन का सिद्धांतसोकन करते हुए सिखा है कि 'घात्र मैं जब पीछे भी घोर झूमकर बेशका हूँ और तब यह पाठा है कि मेरे जीवन में लखनऊ कांग्रेस की मेरी यात्रा और परोक्षा के बाद कानपुर की यह यात्रा बहुत महत्वपूर्ण साबित हुई। उन्होंने मेरे जीवन का प्रवाह एकदम बदल दिया। पहली यात्रा में गणेश जी माखनसाल जी धारि मुरबनो के दर्शन मिले उनसे परिचय हुआ। दूसरी यात्रा में मणोरम जी का धामय मिला हुनिया की देखने का प्रसर मिला और राजनीति तथा साहित्य में बोझा बहुत प्रवेश करते एवं कार्य करने की प्रेरणा मिली।<sup>३</sup> वास्तव में इन दो यात्राओं ने शर्मा जी के राजनीति प्रवेश की पृष्ठभूमि का निर्माण किया। इस पृष्ठभूमि के बनते समय भारत की राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन व सक्रियता की सहरें उठ रही थीं।

भारत के राजनीतिक संघर्ष पर महारना गांधी के धारिर्भाव तथा परिहासबाव के प्रवर्तण के पूर्व राष्ट्र-सेवा का धारण कुछ और था। उस समय राष्ट्रमर्च्छों की सेवा-साधना की कसौटी यह थी कि कौन कहीं तक सघन राजनीतिक क्रान्ति के साथ संलग्न है। उस समय का राजनीतिक धारण था—हाम में गीता तिये फाँसी के तख्ते पर हँसते हुए बड़ जाता। ऐसे देश एक राष्ट्र की मुक्ति के साधक माने जाते थे और राष्ट्र उनकी पूजा करता था। दासत्व पृथक्ता से भाव-माठा के बन्धन काटने के लिए जो शोष मारकाट के मार्ग पर प्रसर होते थे वे राष्ट्रमर्च्छों में विधेय सम्मान तथा भय के पात्र माने जाते थे। सोक-दृष्टि में राष्ट्र सेवा की उपासना का एक मात्र पथ था—साहसपूर्ण दैर्घ्य सहित संघर्षों का सामना करना तथा

१ सासाहित्य 'प्रनाप' कार्तिक कृत्य ११ सं० १९७७, ८ नवम्बर, १९२०, भाग ८, खण्ड १, पृष्ठ १।

२ डॉ० बामुदेवाराण धारबाव—'विद्यास भारत', ख० 'नवीन' जी, जून १९६०, पृष्ठ ४७३।

३ 'विद्यास', स्मृति-संघ, पृष्ठ १११।

समस्त प्रकार के बसिनाओं के निमित्त सदा-सर्वदा प्रस्तुत रहना। इस पथ पर चलनेवाले साहसी शीर, शीर शीर महान् त्यागी माने जाते थे। वे ही लोग एक प्रकार से देश के नेता थे।<sup>१</sup> १९१६ के मखनऊ कांग्रेस में एक प्रसूतपूर्व बात हुई। शीम्य वह शीर उग्र हम दोनों ने इसी अधिवेशन में पारस्परिक गठ-बन्धन किया। हिन्दू-मुसलमानों की एकता का मुसल पून भी यहाँ भाकर परिपक्व रूप में परिचित हो गया। इसी कांग्रेस में 'नवीन' भी के मस्तक को लोकमान्य तिलक ने दो बार पत्रबपाया<sup>२</sup> शीर एक प्रकार से उसी क्षण से शर्मा जी के मन-मस्तिष्क में प्रयास व उत्तेजना की विद्युत् चिर-कास के लिए समा गई। कांग्रेस की शीम्य व मजदुर नीति के विरुद्ध तिलक जी ने अपना स्वतः शिक्षताया शीर उग्र तथा बाम-पथ के पथ को गाड़ा। उन्होंने सुधार व आन्दोलनों का आधार बात नहीं बसितु कार्य निरूपित किये। तिलक-सम्प्रदाय के अनुयायी गणेश जी थे। वे उनका अपना 'राजनैतिक गुरु'<sup>३</sup> मानते थे शीर उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलते थे। 'प्रताप की नीति भी इसीलिए हमेशा आन्विकारी कटु समीक्षा पूर्व व सप्रदसीय रही है। अपने गुरु का अनुगमन शीम्य बालकृष्ण ने भी किया। श्री प्रभाषचन्द्र शर्मा ने लिखा है कि नवीन जी मूलतः राजनीति में तिलक-विचार वाता से अनुयायी थे। इसलिए आह्वयित वे शीर अग्रमनीतावादी दृष्टि भाव उनके जीवन भर प्रोत्सवित रहा।<sup>४</sup>

लोकमान्य तिलक ने सांस्कृतिक पुनर्जागरण व आधार पर राष्ट्रीयता का निर्माण किया था।<sup>५</sup> सन् १९१९ के प्रमोदसर कांग्रेस से ही तिलक का प्रभाव शीर-होने लगा शीर भारत के राजनैतिक चिंतन में 'महात्मा गान्धी की जय' का आह्वय बुलन्द होने लगा। श्री बहादुरभात गेहक ने इस कांग्रेस को 'पहली गान्धी कांग्रेस' कहा है।<sup>६</sup>

प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् भारत में तीव्रगति से आन्विकारी परिवर्तन होने लगे।<sup>७</sup> गान्धी जी अथ पूर्ण अग्रमेप के साथ भारतीय राजनीतिक चिंतन के प्रातःकालीन सूर्य बन गये थे। उन्हीं के ही राष्ट्रीय आह्वान पर नवीन जी ने अपना शिला-अम बन्ध कर, अपने को राष्ट्र के पुनीत धर्म में डाल दिया। इस प्रकार की सुबोध परिस्थितियों में नवीन जी ने राजनीति में प्रवेश किया। समाचार-पत्रों के नियमित व निष्ठावान् पाठक होने के नाते वे

१ श्री लक्ष्मीशंकर ध्यास—'पराङ्मुख जी शीर पत्रकारिता' बीकानेर-अण्ड, पृष्ठ १४।

२ 'चिन्तन' स्पृति-संक, पृष्ठ १०९।

३ गणेशशंकर विद्याजी राजनैतिक चिंतन, पृष्ठ १९।

४ 'बीला' अग्रम-सितम्बर १९६० पृष्ठ ४९१।

५ आचार्य आर्जेकर—'आधुनिक भारत', पृष्ठ ९८।

६ 'दिली कहानी' गान्धी जी सैदान में पृष्ठ ७५।

७ 'Until 1910 Britain's hold on India was confident and secure. But world war I had transformed India so radically that the old attitude towards this country and its peoples was no more longer tenable'—Shri S. R. Sharma, 'the Making of modern India' page 650

की उत्तरेक उत्काकोन परिस्थितियों ने उनके दुःख का ऋकभोर दिया। उनकी कर्म नृत्ति कानपुर में उन दिनों काफ़ी भापण हुआ करत थे जिनमें इस धान्योसन के पक्ष-विपक्ष की संस्तुति बबबा समीक्षा की जाती थी। 'नबीन' जो के एक मित्र, जो बालिकप्रसाद बोसित 'कुमुमाकर' है, बिगड़ोनि भी इसी समय कानपुर में पढ़ना छोड़ दिया था, सिखा है कि धमहयोग धान्योसन के पक्ष में कानपुर में जो लोग बोसते थे उनमें अमर छाहीब ग्योअरंकर बिद्यार्थी मौमाना धाबाब सुमानी मौमाना हुसरत मोहानी श्री बालहृष्यण र्मा 'नबीन' और भीमती सरनवती तथा स्वर्गीय रामप्रसाद मिश्र के भापण जनता को बिधीय क्म से प्राकपित करते थे। इनके भापणों के प्रभाव में प्राकर कितने ही बिद्यार्थियों ने पढ़ना सिखना छोड़ दिया।<sup>१</sup> डा० भीमरथ मिश्र के महागुहार धान्योसन के दिनों में अपने धामस्वी भापणों के कारण वे कानपुर के घेर' कहे जाते थे।<sup>२</sup>

राजनैतिक सामाजिक जीवन की प्रमुख घटनाएँ— नबीन' की राजनीति के प्रमुख व्यक्ति होने के साथ-साथ प्रभावपूर्ण सामाजिक कार्यकर्ता भी थे। उनका जीवन काफ़ी अधिकेशनों तथा कारबास में ही व्यतीत हुआ है। प्रसहयोग धान्योसन के समय 'नबीन' को जो धम्य नेताओं के समान कारबास में डास दिये गये थे। यह अत्यन्त पूर्ण उत्साह के साथ धनवरत बाधु रहा।

सन् १९२० ई० में ही प्रसहयोग धान्योसन के समय साप्ताहिक प्रताप' का दैनिक संस्करण भी प्रारम्भ किया गया था। 'नबीन' जो है इसमें अपने जोशीने सेख सिख-सिख कर स्वअज्ञता की धमि-सिखा को मोत्साहित किया। सन् १९२५ ई में अखिल भारतीय काफ़िस का बालीसर्वा अधिकेशन कानपुर में सम्पन्न हुआ। इसकी अध्यक्षता भी भीमती सरोजिनी नापणु। इस अधिकेशन के स्वागतकारिणी समिति के प्रधान मंत्री बिद्यार्थी भी ही थे। इस अधिकेशन का पूर्ण भार बालिब ब ब्यबस्था गयोध जो, 'नबीन' जो प्रादि ने सम्पन्न की। इस अधिकेशन के कुशल प्रबन्ध देखता ब सफलता की सब से मुक्त-कण्ठ से तारोफ की।

कवि ने प्रसहयोग के दिनों में अपनी अद्वितीयबिद्यार्थी का परिषय अपने 'विप्लव गान' से दिया था जो कि गान्धीवादी परम्परा' के बिच्छ उद्बोध था।<sup>३</sup> इसकी धमिम्यत्रि में 'राष्ट्रीय धमन्तोप की आबना,'<sup>४</sup> निहित थी। राष्ट्रीय धमियान का द्वितीय दौर भी सन् १९३० के बाद विचिब होने सया था। महात्मा गान्धी के पास उनकी प्रसफलता के तार देव-बिन्ध से धाने लये थे।<sup>५</sup> ऐसे ही युग में कवि ने विप्लवक विप्लव की बयमना कर, नई स्फूर्ति ब नव-निर्माण का परोक्ष ज्ञान किया था।

२४ मार्च मयतबार सन् १९३१ ई० को कानपुर में हिन्दू-मुस्लिम बंधा गुरु हुआ।  
 डा० ६४ मार्च को मरोध जो है धाम्यदायिकता के गरल का पान कर लिया और अपनी धाम्य

- १ 'साप्ताहिक धाम', २९ मई, १९६०, पृष्ठ ९।
- २ 'हिन्दी साहित्य का अरमभ और बिद्यार्थी', पृष्ठ २२०।
- ३ 'मैं हलते मिला', पृष्ठ ५१।
- ४ 'धाम्यिक हिन्दी काव्य में निपटाबाब', पृष्ठ ३१४।

५ Ishwari prasad and Subedar—'A History of modern India' Chapter 20 Gandhian Era, page 416-34

बलि बढ़ा दी। उस समय कराची में अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा का वार्षिक अधिवेशन हो रहा था। जब यह खबर बर्ही पहुँची तो यू० पी० कैम्प में जोर की घटा छा गई। ऐसा मासूम पड़ा कि उसकी घान बली गई। लेकिन फिर भी उसके दिल में यह प्रतिमान था कि गणेश जी ने बिना पीछे करम उठाये भीठ का मुकदमा किया और उन्हें गौरवपूर्ण भीठ मधीब हुई।<sup>१</sup> कराची में खबर पाकर महात्मा जी और पं० जवाहरलाल जी ने तार दिया कि हृष भी पुढोत्तमवास टण्डन जी और पं० बालकृष्ण धर्मा 'नबीन' को भेज रहे हैं। 'नबीन' जी के कानपुर आ जाने पर ही २६ मार्च, १९३१ ई. को गणेश जी का ध्व-वाह संस्कार सम्पन्न हुआ।<sup>२</sup> महात्मा गान्धी ने निम्नलिखित तार बिछायाँ जी के सम्बन्ध में पं० बालकृष्ण धर्मा के नाम भेजा था — 'काम में बहुत व्यस्त रहने के कारण मैं न तो कुछ लिख सका और न तार ही दे सका। मद्यनि हृदय खून के घाँसु रोता है, फिर भी मण्डेससंकर की बेसी छानसार मुस्तु पर समवेदना प्रकट करने की भी नहीं चाहता। यह निश्चय है कि आज नहा तो धामे किसी दिन उनका निष्पाप खून दिव्य-मुस्लिम देख्य की मुहड़ बनावेगा। इसीलिए उनका परिवार समवेदना का नहीं बल्कि बचाई का पात्र है। ईश्वर करे उनका यह दृष्टान्त संक्रमक साबित हो—गान्धी।'<sup>३</sup> मण्डेस जी की मृत्यु 'नबीन' जी के जीवन की सर्वाधिक शोकप्रद घुषटना है। उन्होंने बिछायाँ जी की धारमाहृति को धारबठ रखने के लिए, उसे काव्य के चिररतन करी में धारबठ कर दिया है।

बिछायाँ जी की मृत्यु के बाद उनके स्मारक के सम्बन्ध में एक समिति भी बनी थी। उसने धर्मा के बेटासिधों से बन-दान देने की प्रतीस की थी। इसके लिए जो धनीस-मत्र प्रकाशित हुआ था उसमें जवाहरलाल नेहरू पुढोत्तमवास टण्डन सुन्दरलाल कृष्णदाम्ब मातबीम लसपुत्रु धहमर शेरबानी, बामोदरस्वस्म सेठ भीकृष्णदत्त पालीवास रधी धहमर त्रिदबई मोहनलाल लक्तेना चिबप्रसार गुल, मोविन्दबस्मम पंठ भी प्रकाश डा० भुरारीलाल कमसापति त्रिबानिया धादि प्रक्याठ नेताधों के हस्ताक्षर थे।<sup>४</sup> इस स्मारक के हेतु इत्य-संघय की एकान्त प्रिम्बेवारी 'नबीन' जी कर वाली गई। स्वयं महात्मा गान्धी ने 'हरिजन संक में एक लेख लिखते हुए देश की जनता को यह कहकर धारबठ दिया कि जिस सम्पदा कर संरदाक बालकृष्ण हो उनके बारे में सोच-विचार ही क्या?' गान्धी जी सर्वात्मिक रूप से इस प्रकार का पत्रवा बेने के मामने में बहुत ही कृपण माने जाते थे।<sup>५</sup>

सन् १९३७ के चुनाव में 'नबीन' जी न तो किसी क्षेत्र से खड़े हुए और न उन्हें कोई पद ही मिला। उन्होंने स्वयं एम० एम० सी की मत्रदूर सीट के लिए भी इच्छिरलाध वाली जी नामजदगी के लिए भी मोविन्दबस्मम पंठ ब रधी धहमर त्रिदबई ने धनुगय निबा था। इस दिशा में जो नतास सिद्धान्त था उसे उन्होंने धी बड़ेवालास मिष प्रमाकर को बताया

१ 'मेरी कहानी' कराची, पृष्ठ ३८०।

२ 'मण्डेसांकर बिछायाँ, धारमोत्तम', पृष्ठ ११०-१११।

३ वही, पृष्ठ ११५।

४ 'मण्डेसांकर बिछायाँ', धारमोत्तम, पृष्ठ ११६-११७।

५ 'बीणा' धगस्त-सितम्बर, १९६०, पृष्ठ ५६१।

वा कि मण्डेय जी पढ़ा गए हैं कि राजनीति तरक हो जाता है जब उसमें वे नहीं रहती से ही यह जाती है।'

'नबीन जी के जीवन को साहस व कर्तव्य के प्रति निष्ठा की एक बहाली अपूर्व धोर प्रविस्मरणीय है। गणेश जी की पुत्री सरसा पूजन करते समय धारती की ली से धधकती-सी हो गई। उसे बचाने में 'नबीन जी के हाम बस गए धोर करतल की छाल बिलकुल निश्चल गई। सगमप बर्ष भर तक यह हाथों के कुछ काम नहीं से सके थे। काड़ा पहनता भी स्वतः सम्भव नहीं था। जब हाथ बन्धे हुए तब उनमें जलने के बाग के कारण खेठ रंग आ गया। उनके एक बिरौधी ने धनना क्षोभ, उन्हें 'कोडो' कहकर, धरती मण्डसो में प्रकट किया। जब यह बात को धरती विश्वम्भरनाथ कीर्तिरु को बिचिठ हुई तो उन्होंने उन महाशय को बुलाकर अपने तमिष्ठ क्रिया धोर उन हाथों को पुष्पारसा के हाथ कहा। इस बात के बिचिठ होने पर 'नबीन' जी ने अपने इन हाथों क कारण अपने को सोभाय्यासा माना।<sup>१</sup> इस कुरम के कारण भी श्रीकृष्णरत्न पासीबाब ने उन्हें 'प्रकृत साहसो' व 'बलिबानी' कहा है।<sup>२</sup> यह घटना सन् १९१९ में पटी थी। 'नबीन जी ने धनसक' की 'बस बस, धब न मयो यह जीवन' धोर 'क्यों न सुनोये बिनय हमारी' एवं 'कवासि' की 'प्रिय जीवन-नय धनार नामक कविताओं के धन में स्थान व रचना-विधि के साथ सिखा है— 'मिचिरीसा कास'। इन तीनों रचनाओं की रचना-विधि ८-१ १९४०, २१ १२ १९३९ धोर १०-६ १९३९ ही गई है। 'मिचिरीसा कास' का रहस्य इसी घटना में सचिहित है। सन् १९४२ में सरसा के लय-रोग से पीड़ित होने के धारण, कवि काठगृह से १५ दिन के लिए पैरोल पर कानपुर गया। इस विषय में, नबनीर के परामर्शदाता मिस्टर मार्श को सिखे धरने प्रार्थना-पत्र में 'नबीन' जी ने सिखा था कि 'जस मरणासक बालिका के साथ मेरी बेंसी रिस्ते-गरी गहो है बेंसी दुनिया में होती है पर परि मनुष्य की भावना का कुछ धर्य धोर मइल है तो मैं उठी परिवार का एक सदस्य हूँ धोर यह बालिका मेरी प्रातीय है।' मरसा की मृत्यु से कवि को आबात पहुँचा था धोर उसकी बर्षों के पुष्य बचसर पर, एक स्तुति-संक गीत भी लिखा था।<sup>३</sup>

१९३९ ई० की त्रिपुरी बर्षेस में आस्थाकक उत्तक हो गया था। भी गेहक ने सिखा है कि '१९३९ की शुक्रवात में उष्ट्रपति के चुनाव के बल बर्षेस में बहुत झनड़ा हुआ। बद-रिस्तेना से नीचाना धनुसकताम आबाब ने चुनाव में लड़े होने से इन्धार बर दिया धोर चुनाव लड़ने के बाद मुभायबल कोस जुने गये। इससे धनेक प्रधर की उत्तममें धोर धरंवा पैरा हो गया था जो कई महीनों तक बचता रहा। त्रिपुरी बर्षेस में बैहवा दरप देखने में धामे। \* चुनाव के परिणाम प्रकट होने पर योधी जी ने पायण कर लो कि 'पट्टानि जी हार

१ 'साक्षात्क हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ ११।

२ वही, पृष्ठ २०।

३ 'साक्षात्क सैनिक', पृष्ठ ७।

४ 'मयाक' पृष्ठ १४-१५।

५ वही, पृष्ठ ३२ ३३।

६ 'आस्था', १५ अगस्त १९६०, पृष्ठ ८।

७ 'मिरी बहानी', बाँध छाल के बाब, पृष्ठ ८४७।



मेरी हार है।" इससे रोग में हलचल मच गई। जिन लोगों ने सुभाष बाबू के पक्ष में मत दिया था वे मान्सी की धीर उनके नेतृत्व में विश्वास प्रकट करने लगे। इससे एक परीक्षण करनेवाली परिस्थिति उत्पन्न हो गई।<sup>१</sup> श्री 'नबीन' भी ने इस कांग्रेस की प्रथमजता के लिए पट्टामि के विरुद्ध सुभाष बाबू को मत्त दिया था। दूसरे ही दिन, मान्सी को का बळ्क्य सुनकर, धामने सुभाष बाबू को ठार देकर सूचित किया कि यदि आप मान्सी की के विरुद्ध भीते हैं तो अपना बोट आपको मैंने गछती से दिया है।<sup>२</sup> यहाँ हमें 'नबीन' की के निर्भीक व्यवहार धीर स्पष्ट अनुशासन-वृत्ति के दर्शन होते हैं।

सन् १९४२ के बम्बई ध्विनेशन में भाग लेकर, सौंठे समय, 'नबीन' को बबलपुर उतर गये। 'नबीन' भी को बबलपुर से प्रभाव एक उच्च रेश्मे कर्मचारी की एम्पो-इंडियन पत्नी की संरक्षका में निरवाया गया। इस समय 'नबीन' भी को कोट, पतसुन टाई, कातर व हूट पहनाकर पूरे छात्र के स्वाम में भेजा गया था।<sup>३</sup>

उत्तर कात्पुर में 'नबीन' भी की निरपत्तारी का कारण निकल गया था। धारे नगर में यह संवाद फैल गया था कि धर्मा भी का गोमी भार देने की आका है। धर्मा भी जब कात्पुर पहुँचे धीर जब यह संवाद उन्हें विरिक्त हुआ तो उन्होंने स्वर्भाव गलेब भी के पुत्र की इरिचंकर विद्यार्थी से परामर्श कर, एक पत्र स्वामीन विद्यापीठ की स्टिफेस को लिखा। उसमें उन्होंने धामने की निरपत्तार होने के लिए सहज ही सिल दिया। पत्र-बाहक को विद्यापीठ महोदय ने नहीं रोक दिया धीर यह आका की कि जब तक धर्मा भी निरपत्तार न हो जाएँ, उनको नहीं रचना होया। धर्मा भी को पकड़ने के लिए बड़े क्पाल व इन्स्पेक्टरों सहित समय ५० सिपाहियों के बल के पीठछाना पहुँचकर विद्यार्थी भी के निवास को घेर लिया। सभी सिपाही बन्धुओं से व बानेशर पिस्तौल से सज्जित थे। एक निहारी धीर को निरपत्तार करने के लिए इतनी बड़ी बज-पत्र प्रसारण-स्वपूर्ण होने पर भी सम्भवतः द्विदिन मीति के अनुसार एक बड़े किले पर विजय पाने के समान थी। धर्मा भी प्रत्यक्ष सम्मीरतापूर्वक सुस्कारते हुए भीचे उतर धामने। कोसी नालने की प्रावणकता न पड़ी धीर यदि पकड़ी थी तो यह धीर उसके किचिद् मात्र भी भय न आता यह निश्चित था।<sup>४</sup> डॉ० बागुदेवदरण प्रबन्धाल ने लिखा है कि धामने ऐतिक रूप में वे सर्वथा फाला कसे रहनेवाले मोझा थे। उनका बुद्धर रूप ऊपर ही रखा रखा था। धामने हुआ नहीं कि उतर में बुर पड़े। धामना-नीछ सोचने का समय धीर स्वभाव ही न था। द्विदिन से ऊपर बठ गए थे। एक ही बज एक ही निस्व-निमग रह गया था—समय पर धामने का पालन। जिसे धामना गुद या नेता चुन दिया था उसके धारण धीर मार्ग पर धामने बज से धामने बड़ते रचना।<sup>५</sup>

१ श्री वृत्तमि सीधारायैव्या—कांग्रेस का इतिहास', खण्ड २, अध्याय ३, त्रिपुरी १९९९, पृष्ठ १०८।

२ श्री राध्यारीतिह 'दिनकर', बट-बीपल, पृष्ठ ३६।

३ 'सरस्वती सुनार्ई १९६० पृष्ठ २९-३०।

४ साहायिक विद्युत्तान', १० सुनार्ई, १९६०, पृष्ठ १७।

५ 'विमान भारत', जून, १९६०, पृष्ठ ४०९।

सन् १९४४-४६ में 'नवीन' भी अपने एक मात्र प्रतिद्वन्द्वी हिन्दू महासभा के उम्मीदवार श्री श्रीराममोहन दास को ७५ के मुकाबले १७७१८ मतों से पराजित कर केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के सदस्य बने। उस समय उनकी आयु ४८ वर्ष की थी। वह एक के संयुक्त प्रांत की प्रसिद्ध साठ नगरियों की ओर से प्रतिनिधि चुने गये थे। इसके पूर्व प्रतिनिधि के रूप में यहीं से श्री मोतीलाल नेहरू डा० भवबानदास प्रभूति प्रसिद्ध नेता चुने गये थे। द्वितीय विरव-युद्ध के बीच में पड़ जाने के कारण यह निर्वाचन २२ वर्ष बाद हुआ था और कांग्रेस ने जैसे हुए व निष्प्राप्त व्यक्ति को यहीं से प्रावस्था महासुख को भी, जिसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त व्यक्ति 'नवीन' भी ही प्रमाणित हुए।<sup>१</sup>

उल्लेखनीय बायसराय सर्जेंट वेबल ने, जो कि भारत में सन् १९४९ में आये थे एक बार केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के कुछ सदस्यों को भोज के लिए आमन्त्रित किया। 'नवीन' भी भी बुलाए गए। बायसराय को संस्कृत प्राणी थी। सर्जेंट वेबल ने जब 'नवीन' भी को यह बताया कि 'इन्डीनियर' शब्द संस्कृत का है—'एजिमनौ धातु से इन्डीनियर शब्द बना है तो 'नवीन' भी उनके संस्कृत-ज्ञान से विस्मयान्मिभूत व परम आश्चर्यित हो गये। उसी समय से 'नवीन' भी का यह मत घटूट हो गया कि हिन्दो में पारिभाषिक शब्दों का निर्माण संस्कृत से किया जाय। इसके बाद बिपल में दो गई मुक्तियों को वह कोई महत्व नहीं देते थे।<sup>२</sup>

सन् १९२० से लेकर १९६० ई० तक के अपने ४० वर्ष के राजनीतिक जीवन में 'नवीन' श्री सयागार कानपुर सहर कांग्रेस के सदस्य, उपसभापति, प्रदेश कांग्रेस कमेटी एवं कौंसिल के सदस्य तथा पश्चिम भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य निर्वाचित होते रहे। सन् १९६६-६७ के समय में वे कानपुर सहर कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। सन् १९६८ से 'नवीन' श्री वरिष्ठ कमेटी के प्रधान मंत्री निर्वाचित हुए थे।<sup>३</sup>

अन्तिकारियों से सम्बन्ध—'नवीन' भी का अन्तिकारियों से सम्बन्ध अणुधर्मि एवं 'प्रताप' के माध्यम से स्थापित हुआ।

'नवीन' के सम्बन्ध अणुधर्मि नाम साम्बाल, अणुधर्मि अटर्नी अजय घोष, राजकुमार सिंहा अजयकुमार सिंहा, बटुकेश्वरदास पादि अन्तिकारियों के साथ थे। अणुधर्मि अणुधर्मि तथा सरदार भवतसिंह के साथ भी उनका सम्पर्क था। 'नवीन' भी के अन्तिकारियों के साथ के सम्बन्ध को सक्रिय न कहकर, सामान्य ही कहा जा सकता है।<sup>४</sup> जिस समय कारागृह में सरदार भवतसिंह एवं उनके साथियों सुबोध व राजगुरु ने, भूख-हड़ताल की थी उस अवसर पर, अणुधर्मि भी वे भवतसिंह को समझाने व भूख-हड़ताल तोड़ने के लिए 'नवीन' भी को ही भेजा था। उसी समय, 'नवीन' भी के कटापी के अन्तिकारियों 'टिबूट' में अपना अन्तिकार्य भी दिया था।<sup>५</sup>

१ श्री बहादुर दामा—'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', पण्डित दासद्वय दामा 'नवीन'—  
 २ श्री वेने देवा, १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ २६।  
 ३ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ १९।  
 ४ श्री, ३ जुलाई १९६०, पृष्ठ ३९।  
 ५ श्री सुरेशचन्द्र अणुधर्मि द्वारा ज्ञात।  
 ६ श्री अणुधर्मि अणुधर्मि द्वारा ज्ञात।

मेरी हार है।" इससे रैच में हसबस मच गई। जिन लोगों ने मुझसे बाबू के परा में मत दिया था वे पाम्पी भी धीरे उनके नेतृत्व में बिस्वात प्रकट करने लगे। इससे एक परेषान करनेवासी परिस्थिति उत्पन्न हो गई।<sup>१</sup> जो 'नबीन' भी ने इस कार्य के कौशलपूर्णता के लिए पट्टाभि के विरुद्ध मुझसे बाबू को मत दिया था। दूसरे ही दिन, पाम्पी भी का बकव्य सुनकर, अपने मुझसे बाबू को ठार देकर सूचित किया कि यदि आप पाम्पी भी के विरुद्ध बीते हैं तो अपना बोट घावको मैने मसती से दिया है।<sup>२</sup> यहाँ हमने 'नबीन' को के निर्भीक व्यवहार धीरे स्पष्ट अनुशासन-वृत्ति के वर्धन होते हैं।

सन् १९४२ के बम्बई परिषेधन में भाग लेकर, सीटों समक, 'नबीन' को बकलपुर उठार गये। 'नबीन' को को बकलपुर से प्रयाग एक उच्च रेलवे कर्मचारी की एंग्लो-इंडियन पत्नी की संरक्षण में भिन्नबाया गया। इस समय 'नबीन' की को कोट, पतलून टाई कातर ब हैट पहनाकर पूरे साहब के स्वाम में भेजा गया था।<sup>३</sup>

शहर काानपुर में 'नबीन' की को गिरफ्तारी का बारम्भ निकल गया था। सारे नगर में यह संवाद फैल गया था कि धर्मा भी को गोली मार देने की धाजा है। धर्मा भी बक काानपुर पहुँचे धीरे बच यह संवाद उन्हें विहित हुमा तो उन्होंने स्वर्गीय बसेब भी के पुत्र भी हरिदासक विद्यार्थी से परामर्श कर, एक पत्र स्वामीय विद्यार्थीय भी स्टिकेस को लिखा। उसमें उन्होंने अपने को गिरफ्तार होने के लिए सहज ही सिद्ध किया। पत्र-बाहक को विद्यार्थीय महोदय ने बहोँ रोक लिया धीरे यह धाजा की कि अब तक धर्मा भी गिरफ्तार न हो जाएँ, उनको यहाँ रहना होगा। धर्मा भी का परकने के लिए बड़े अस्पताल ब इस्पेक्टरी सहित सपमग ५० सिपाहियों के बस के पीठबाना पहुँचकर विद्यार्थीय को के निवास को बेर लिया। धर्मा सिपाही बन्धुओं से ब पानेशर विस्तीर से सज्जित थे। एक निहल्ये धीरे को गिरफ्तार करने के लिए इतनी बड़ी अज-बज अघाम-बस्वपूर्व होने पर भी सम्भव द्विष्टि मीति के अनुसार एक बड़े क्रिडे पर विजय पाने के समान थी। धर्मा भी अत्यन्त पम्पीरतापूर्वक मुस्कराते हुए भीचे उठर धाये। गोली मारने की आकरपकटा न पड़ी धीरे बचि पकड़ी भी तो यह धीरे उघसे किचित् मात्र भी भय न घाजा यह निरिबज था।<sup>४</sup> डॉ० बामुदेववररु अघवात ने लिखा है कि अपने ऐनिक रूप में वे सर्वथा अछा कसे रहनेवासे योधा थे। उनका बुझर रूप ऊपर ही रखा रहता था। धारेब हुमा नहीं कि समर में मूर पड़े। धाबा-वीछा सोचने का समय धीरे स्वभाव ही न था। द्विष्टि से ऊपर उठ पए थे। एक ही अघ, एक ही नित्य-नियम रह गया था—समय बर धाईज का पातन। मिसे धनता बुब या मैठा पुन लिखा था उठके धारपी धीरे कार्य बर समय मात्र से धाये बड़े रहता।<sup>५</sup>

१ भी पट्टाभि सीतारामेय्या—कावेस का इतिहास', अण्ड २, अण्पाय ३, निपुरी

१९३९, पृष्ठ १०८।

२ भी रामपारीसिंह 'दिनकर, बट-योपन, पृष्ठ ३६।

३ 'सरसबतो' सुलाई १९६०, पृष्ठ २९-३०।

४ 'साहायिक विन्दुज्ञान', १० सुलाई, १९६०, पृष्ठ १०।

५ 'विप्रात बापल', मून, १९६०, पृष्ठ ४०३।

सन् १९४५-४६ में 'नवीन' भी अपने एक मात्र प्रतिस्पर्धी हिन्दू महासभा के सम्पीडवार भी चौधममोहन लाल को ७५ के सुझावसे १७७९८ मतों से पराजित कर केन्द्रीय व्यवस्थापिका-सभा के सदस्य बने। उस समय उनकी अवस्था ४८ वर्ष की थी। बहु तर्क के संयुक्त प्राप्ति की प्रसिद्ध सात नगरियों की धार से प्रतिनिधि चुने गये थे। इसके पूर्व-प्रतिनिधि के रूप में यहीं से भी मोठीसाल नेहरू, डा० भगवानराव प्रमोदि प्रसिद्ध नेता चुने गये थे। द्वितीय विरव-गुड क बीच में पड़ जाने के कारण यह निर्वाचन २२ वर्ष बाद हुआ था और कांसस में मंत्रि हुए ब निष्प्रयुक्त व्यक्ति को यहीं से प्रावश्यकता महसूस की थी, जिसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त व्यक्ति 'नवीन' भी ही प्रस्तावित हुए।<sup>१</sup>

उत्सामीन बावसराय साईं बेबल ने, जो कि भारत में सन् १९४३ में छोटे से एक बार केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के कुछ सदस्यों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। 'नवीन' को भी बुलाए गए। बावसराय को संस्कृत छापी थी। साईं बेबल ने जब 'नवीन' को का पढ़ बताया कि 'इंजीनियर' शब्द संस्कृत का है—'एजिनर्ना' वापु से इंजीनियर शब्द बना है, 'नवीन' भी उनके संस्कृत-ज्ञान से विस्मयानिमित्त ब परत आह्लाहित हो गये। उन्नीस वर्ष 'नवीन' भी का यह मत प्रकट हो गया कि हिन्दी में पारिभाषिक शब्दों का निर्माण संस्कृत से किया जाय। इसके बाद विपक्ष में ही गई पुस्तकों को बहु कोई महत्त्व नहीं देने से।<sup>२</sup>

सन् १९२० से लेकर १९६० ई० तक के अपने ४० वर्ष के राजनीतिक जीवन में 'नवीन' की लगातार कानपुर गहर कांसिस के सदस्य, जनसभापति, प्रयोग कमेटी के सदस्य के सदस्य तथा प्रथम भारतीय कांसिस कमेटी के सदस्य निर्वाचित हुए थे। सन् १९३६ ई० के समय में वे कानपुर गहर कांसिस कमेटी के अध्यक्ष थे। सन् १९३८ में 'नवीन' को कांसिस कमेटी के प्रधान मंत्री निर्वाचित हुए थे।<sup>३</sup>

क्रान्तिकारियों से सम्बन्ध—'नवीन' को का क्रान्तिकारियों से सम्बन्ध 'मोर्चा' के 'प्रयाण' के माध्यम से स्थापित हुआ।

'नवीन' के सम्बन्ध उषीशनाथ साव्याल, जोसेफबन्ध जदों, जद दन, जदुल-जिहा, विरवकुमार सिन्हा, बटुनेश्वरदास यादि क्रान्तिकारियों के साथ थे। जदुलका कारण तथा कारण भगवतिह के साथ भी उनका सम्बन्ध था। 'नवीन' को के क्रान्तिकारियों के दृष्टि के सम्बन्ध को सखिय न कहकर, साधारण ही कहा जा सकता है।<sup>४</sup> जिस समय जदुल में जदुल भगवतिह एवं उनके साथियों मुसदेब ब उग्रपुत्र थे, जदुल-इन्द्रान का जदुल जदुल जदुल को भी भगवतिह का सम्बन्ध ब मुसदेब-इन्द्रान सांने के लिए 'मोर्चा' का ही जदुल था। इसी समय 'नवीन' को के जदुल के माध्यम 'हिन्दु' में जदुल जदुल जदुल दिया था।<sup>५</sup>

१. श्री बहुरत दासा—'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', दैनिक कानपुर दन 'मोर्चा'—  
 जैसे जैसे देना १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ २६।  
 २. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ २६।  
 ३. बहुरत ३ जुलाई १९६०, पृष्ठ ३६।  
 ४. श्री जोसेफबन्ध बटुबार्थ द्वारा ज्ञान।  
 ५. श्री बहुरतदर जदुल द्वारा ज्ञान।

'नवीन' को नै अनेक पर्यन्तकारियों व व्यक्तिकारियों को प्रथम प्रकाश किया था उन्हें सङ्गमोम दिया था और छात्र-संबंधा उनके प्रति सहाय्यपूर्ति रखी थी।<sup>१</sup> प्रसिद्ध व्यक्तिकारों को भी सचीन ज्ञान्यास के साथ भी उनके सम्बन्ध थे।<sup>२</sup>

सन् १९४२ की स्थिति में सरकार बल्लभभाई पटेल ने स्पष्ट रूप से कहा था कि अब नई बार एक छात्रों के भीतर घासन ठप्प कर दिया जायगा। इस टोकफोड़ को योजना का प्रचार 'नवीन' को नै जबसपुर में भी किया था। वे उत्तर प्रदेश में छात्र-सञ्चालकों का भी कुछ प्रबन्ध करना चाहते थे जिसके लिए वे एक छात्रों से ऊपर सुमियत भी रहे।<sup>३</sup>

इस प्रकार 'नवीन' को नै अपनी मातृभूमि के स्वातन्त्र्य के हेतु, सभी प्रकार के माध्यमों से कार्य किया और उसके लिए कोई कौर-कसर बाकी नहीं छोड़ी। उनके विरोधी स्वभाव के यह संबंधा अनुकूल था। भी मयबतीकरण शर्मा ने उन्हें बल्लभभाई विरोधी कहा है।<sup>४</sup>

बन्दीजीवन को गाथा—भी बालकृष्ण शर्मा सन् १९२० से लेकर १९४० ई० तक छ' बार कारावास में और अपने जीवन के लगभग ९ वर्ष वहीं पर ही व्यतीत किये। उनका अधिकांश साहित्य-सृजन कारावास में ही हुआ है। जेल के बाहर तो मानो वे साहित्य के घासी रहे ही नहीं। हर समय राजनीति-राजनीति राजनीति !!! चारों ओर वह राजनैतिक व्यक्तित्वों से घिरे रहते थे।<sup>५</sup>

अपने अग्रदूतोंप धान्योलन में सर्वप्रथम वे सन् १९२१ में कारागृह गये। १९ सितम्बर, १९२१ ई० को प्रयाग में उत्तरप्रदेशीय कांग्रेस समिति की बैठक के होते समय, 'नवीन' भी उद्दिष्ट १५ व्यक्ति पकड़ लिये गये थे। भी बैठक ने भी उक्त बैठक का उत्सीह किया है।<sup>६</sup> प्रयाग के जिलाधीश नास ने सबको डेढ़-डेढ़ वर्ष का कारावास दण्ड दिया। 'नवीन' भी पहले बनारस केन्द्रीय कारागार में रके गये तदुपरांत बनारस जिला कारागार में। इसके परचात् शान्त घर के सब उच्च श्रेणी के बन्दी सज्जन जिला कारागार में भेज दिये गये। 'नवीन' भी भी इस प्रकार सज्जन था पहुँचे।<sup>७</sup> सज्जन में सात बन्दी मयानक समझे गए। उनके नाम थे हैं :—बहादुरभास बैठक स्वर्गीय बार्दे आर्यक, स्वर्गीय महादेव बेगार्दे, पुस्तोत्तमराव टण्डन देवराव गान्धी परमानन्दसिंह (बसिया) और बालकृष्ण शर्मा। अत्र इन सब व्यक्तियों को सबसे प्यार एक छोटी सी पुइसास में रख कर दिया गया।<sup>८</sup> भी बैठक के विवरण से भी इस

१ 'बीला', अगस्त सितम्बर, १९६०, पृष्ठ ४९१।

२ वही, पृष्ठ ४९४।

३ भी रामानुजभास श्रीबालक—'बीला', नवीन भी एक उच्च श्रेणी तियाही अगस्त-सितम्बर, १९६०, पृष्ठ ४९७।

४ 'तरसवती', जून, १९६०, पृष्ठ ३९१।

५ वही, पृष्ठ ३९१।

६ "कुछ प्रांतीय कांग्रेस-कमेटी के लोग सब के सब (५५ व्यक्ति), सब से कमेटी को एक भीटिय कर रहे थे, एक साथ विरवतार कर लिये गये। 'मेरी बहानी', पहली जेल-यात्रा, पृष्ठ १२।

७ 'कमिन्ता' भी लक्ष्मणबहाल(बल्लभभास), पृष्ठ ४-५।

८ वही, पृष्ठ ५।

कपन की पुष्टि हाथी है।' लखनऊ काउगृह में मेहक बी 'नबीन' जी व देवदास गान्धी की संश्लेषी व सुमिति पढ़ाया करते थे। यहाँ पर ही 'नबीन' जी ने मेहक को से सेक्सपियर की महार हृति 'मैकनेय' को प्राधोपान्त पढ़ा।<sup>१</sup> श्री 'नबीन' ने अपनी 'जेल-जीवन' के संस्मरण सुनात हुए कहा है कि 'फिस तरह मैं तथा देवदास बबाहर भाई के साथ सेक्सपियर पढ़ा करते थे जिस तरह हम लोग रहते थे, ' फिस तरह पूम्प टम्बन की गुड़ में मूँगफली पागकर मुझे घोर देवदास को बड़े बरसस्य से बिहाया करते थे। फिस तरह मैं कष्टान बनकर बबाहर भाई और देवदास भादि मित्रों तथा साधियों को कमायब कराया करता था—प्रादि बाजों का स्मरण-मात्र हृस्वप्राप्ति है।'<sup>२</sup>

सन् १९३० में धर्मा जी की दो बार छः-छः मास का काठवास बख मिला।<sup>३</sup> इस समय उन्हें पाबीपुर व जर्दखाबाद के काउगृहों में रखा गया। यहाँ पर मैतामिरी ने 'नबीन' जी का निन्द नहीं छोड़ा। जर्दखाबाद के काठवास में धर्मा जी का अधिकतर समय पुस्तकों के अध्ययन में ही व्यतीत होता था। यहाँ पर वे भजन भी गाया करते थे। अतुर्प बार नबीन जी की निस्मर, सन् १९३१ में करकरी १९३४ तक काउगृह में रहना पड़ा।<sup>४</sup> इस समय 'नबीन' जी कैलाबाद जेल में रहे। श्री रामस्वस्व ब्रुस ने लिखा है— 'जब सन् १९३२ के प्राम्बोत्तन में बनपुर के गंगाजी के बोटाहे बाने कोने के १२ नं० बरक में पं० बालकृष्ण धर्मा पं० रघुबर दयाल घट्ट, सात्ता मोनालदास, श्री रामरतन श्री गुल्ल दयव धोप घोर में एक साथ रहते थे सोड़े दिनों के लिए श्री तबलफिघोर भरठिया भी बहाँ थे। धर्मा जी ठो गीता के गम्भीर विचारक थे ही। श्री दयवधोप जो एक कम्युनिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी हैं धास्या न होते हुए श्री गीता के धर्मों की महारुई में उतरते थे। परस्पर लुब विचार-विमर्श होता था। उस समय वेठ हमारें अध्ययन-केन्द्र बने हुए थे। सात्ता रामरतन गुल्ल घोर पं० रघुबरदयाल घट्ट को

१ 'हमारें ऊपर लखनऊ पीरे-बीरे बड़ने लगीं, घोर क्वाबा-ग्वाबा सतल हापदे तामु निचे बाने लगे। सरकार ने हमारें प्राम्बोत्तन की नाप-जोस कर ली थी, घोर बह हर्से यह महसूस करत देना चाहती थी कि हमारें मुदाबला करने की हिम्मत करने के सब से बह हम पर जिस बहर भाराव है। नये जापनों के कामु करने या उनके प्रमल में साने के तरीकों के जेल-व्यवहारियों और राजनैतिक कैदियों के बीच प्रगड़े होने लगे। कई महीनों तक तरीक-करोब हुए सब ने—हम लोगों की संख्या जता जेन में कई ली थी—बिरोप के तीर पर म्भारतों करना छोड़ दिया था। बाहिर है कि यह खयाल दिया गया कि हमसे नें कुछ ममदा कराने बाने हैं इसलिए साठ धारदियों को जेल के एक दूर क हिस्से में बदल दिया गया, जो जाम बँटनी से बिलकुल अलहूदा था। इस तरह त्रिन लोगों को प्रमल दिया गया जने में मुष्पोतमवात टण्डन, महादेव देलाई, बात्रं जोसक, बालकृष्ण धर्मा और देवदास कापी व।'—'मेरी बहाणी', लखनऊ जेल, पृष्ठ १४०।

२ 'कर्मिला', सुमिध, पृष्ठ ल।

३ 'जै हमसे मिला', पृष्ठ ५०।

४ 'कर्मिला', पृष्ठ ल।

५ बहो, पृष्ठ ल।

इस प्रकार 'नवीन' जी के जीवन का मुख्य धर्म जो कि राष्ट्रिय व लोगों से परिपूरित था, कारागृह भी बहारीकारियों में कटा। यहाँ उन्होंने अध्ययन व ममन किया जो कि उनके काव्य के विकास में अतीव उपादेय प्रमाणित हुआ। जेस-बीवन की याचनाओं को सहेते हुए भी, उन्होंने अपने को कभी भी राष्ट्रीय कृत्यों से निरास नहीं बनने दिया। यहाँ उन्होंने बिनतन को परिपक्व बनाया तन-भन को स्वस्व किया और अपनी योजनाओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया। अन्य राष्ट्रीय नेताओं व कवियों के सहित 'नवीन' जी ने भी अपने कारावास के समय को व्यर्थ बिताने नहीं किया।

## प्रौढ़-काल

'नवीन' जी जैसे ही बीर सपुत्रों के बलिदानों सहीरों की आत्माकृति व विश्वबन्ध 'बापू' के पवित्र मार्ग-दर्शन के फलस्वरूप भारत को असह्यी बिर-भनीपित स्वतन्त्रता प्राप्त हुई।

स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् वे देश की संविधान परिषद् के सदस्य मनोनीत हुए। वे संविधान परिषद् के गृह-मन्त्रालय सम्बन्धी समिति<sup>१</sup> भूचना एवं प्रसार मन्त्रालय की समिति<sup>२</sup> और 'रैलवे की वित्त समिति'<sup>३</sup> के सदस्य रहे। इसी परिषद् के सरस्य काल में भारत की ओर से भिजे गये सांस्कृतिक विष्-मण्डस के सदस्य के रूप में उन्होंने इङ्ग्लैण्ड तथा अन्य यूरोपीय देश-देशान्तर्गों का परिभ्रमण किया। एक दूसरे विष्-मण्डस के सदस्य बनाकर उन्हें चीन भेजा जा रहा था, परन्तु उस उन्होंने कुछ कारणों से अस्वीकार कर दिया।<sup>४</sup>

माधुच व्यक्ति होने के कारण वे कानपुर की राजनीति से कभी दुरी रहते थे। कानपुर के राजनीतिक जीवन में स्पष्ट रूप से 'नवीन' जी निरान्त अस्फल रहे।<sup>५</sup> की पश्चात्मात निपाठी ने लिखा है कि बहाँ तक उनके योग्यता का सम्बन्ध था, उत्तरप्रदेश में राजनीतिक सामाजिक एवं साहित्यिक क्षेत्र में उनके समान दूसरा न था किन्तु प्रायः की पार्टी बन्दी ने उन्हें एम पी० बनाकर दिल्ली भेज दिया ताकि वह यहाँ की सरकार में कोई बड़ा पद न सम्हाल सें।<sup>६</sup> भारत के प्रथम गणतन्त्रीय काँग्रेस मन्त्रिमण्डल में प्रयातमन्त्री की महक

१ श्री कुम्भबिहारी बाबरेयी—'तत्सौर तुम्हाटी है, बातकृत्यण शर्मा 'नवीन', के प्रति, पृष्ठ ८७।

२ 'Constituent Assembly Debates : official Report' Vol 1, No 8 26th November, 1947, Page 704

३ वही Vol III. No 1, 11th December 1947 page 1703

४ वही, Vol 1, No 4 20th November, 1947, page 351

५. 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', अज्ञातलि-अंक, पृष्ठ १२।

६ श्री परिपूरानन्द शर्मा—'बीला', पं० बातकृत्यण शर्मा 'नवीन', स्मृति-अंक पृष्ठ ५००।

७ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६० पृष्ठ १७।

ने उन्हें उप-मंत्री बनने को आमन्त्रित किया था, परन्तु 'नवीन' भी ने उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया।<sup>१</sup> उन्हें संसद के नीतिपरक प्रिय मानवों में अग्रकक्ष बुनियादार<sup>२</sup> कहा।

सन् १९३२ में वे कानपुर से भारतीय लोक-सभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे। सन् १९५७ में वे पञ्जापत से पोटित हो चुके थे इसलिए उन्हें इस द्वितीय निर्वाचन के अवसर पर लोक सभा की अपेक्षा राज्य सभा का सदस्य चुना गया था। इसका कार्यकाल समाप्त होने पर, सन् १९६० में अपनी मृत्यु के एक मास पूर्व वे पुनः राज्यसभा के सदस्य निर्वाचित किये गये थे। लोक-सभा में 'नवीन' भी ने कई बार भाषण दिये और अपने मत-वैमत्य अभिव्यक्त किये। राज्य-सभा में उन्होंने प्रायः भाषण नहीं दिये।<sup>३</sup> वे अक्सर कहा करते थे कि 'मेम्बरों के वकीले से दिन कटने में मजा नहीं आता।'<sup>४</sup> वस्तुतः 'नवीन' की अपने दिल्ली अधिवास काल में, बीजन व संसद के प्रति निराशा अधिक अभिव्यक्त करने लगे थे। वर्तमान सरकारी कार्य-कलापों व भारत की स्थिति से भी उन्हें सन्तोष नहीं होता था। उन्होंने अपने दिनांक २-१०-५६ के पत्र में लिखा था कि भारत के लिए बेकारी अभिघात है। पता नहीं सरकार शिक्षा पद्धति में द्वायुत परिवर्तन क्यों नहीं करती। अकसोच है धर्मिक गये परन्तु हमें मानसिक गुलाम बनाकर छोड़ गये। आज का भारत शसता का भारत है। यहाँ के लोगों की जिन्दगी करने के लिए नहीं खाने के लिए है, फिर भी खाना नहीं मिलता। चारों तरफ धर्मन्यता का साम्राज्य है काहिमों का बोसबाजा है। काम करना कोई नहीं चाहता, मीज उठाना सभी चाहते हैं।<sup>५</sup> निराशा व अवसाद की मात्रा बढ़ावस्था तथा इच्छा के घाम बढ़ती ही जसो गई जिसका प्रभाव हमें उनके उत्तरकामीन काम्य के वार्षिक रूप में देखने को मिलता है। 'नवीन' भी ने लिखा था कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्, जैसे हमारे तुरंग की बसा डौली हो गई है जैसे बह, डौली, गगनचुम्बी घिघर की ओर बढ़ते-बढ़ते सड़ता मुड़कर पवन की छाई की ओर होइ सगामे-बासी है।<sup>६</sup> प्लेटो के मतानुसार, अल्पव्यय कोटि के कवि

१ 'बीला', स्पृति-अंक, पृष्ठ ५२१, १।

२ 'दैनिक नवजीवन', (१२ ११-१९५१)।

३ 'I am directed to say that the Late Shri Balkrishna Sharma 'Navin' during the period of his membership of the Rajya Sabha did not deliver any speech on the floor of the House'—Shri M A Amladi under Secretary, Rajya Sabha Secretariate, New Delhi का सुभे लिखित (दिनांक २२ ११-१९६०, पत्रांक धार० एष०१८—ई० सी० डी०, ५९-६० का) पत्र।

४ 'दैनिक नवजीवन', (१२ ११-१९५१)।

५ श्री रामनारायण सिंह 'मधुर',—'साप्ताहिक धारा' नवीन की के दो पत्र, २९ अर्ष, १९६० पृष्ठ १०।

६ श्री बामहृदय धर्मा 'नवीन'—साप्ताहिक 'विश्व-वाणी' अर्ष १, संख्या २७, ११ अर्ष, १९५९, 'हम डिपर बा रहे हैं', पृष्ठ १।



कसा से नहीं प्रत्युत् प्रेरणा से काव्य-निर्माण करते हैं।<sup>१</sup> यह कवय 'नवीन' की पर-पूर्व-परिचय होता है।

गार्हस्थ्यिक पक्ष—'नवीन' की का विवाह मई सन् १९१६ में अपनी किशोरवस्था में ही हो गया था। उनकी छात्री भुवनापुर के श्री रामपाल महाराज की पुत्री के साथ हुई थी।<sup>२</sup>

द्विरागमन के पूर्व ही होने के इनकी बाल-पत्नी का वैद्वान्त मायके में ही हो गया। बहुत समय तक उन्होंने फिर विवाह नहीं किया।<sup>३</sup> यद्यपि वे विधुर से फिर भी एक प्रकार से उन्हें प्रतिवाहित ही माना जा सकता है। उन्होंने जीवन का एक लम्बा पय एकाकी ही व्यतीत किया। इसीलिए, उनके काव्य में लक्ष्मिपथक भावनाएँ समझ पड़ी हैं।<sup>४</sup>

कैलाश्वर जेल में सन् १९३२ में जब श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' से 'नवीन' की से कहा था कि आप कविता लिखने वाली लक्ष्मी चाहेंगे। इस पर 'नवीन' की ने बहुत ठप्पी घोर हँस मरी लम्बी साँस लेकर उत्तर दिया था—'निरन्तर, कविताएँ लिखने को तो मैं ही काफ़ी हूँ वह ऐसी हो कि मुझसे कविताएँ लिखा सके। कानपुर में ही एक लक्ष्मी से कभी उनका प्रेम हुआ था। दोनों ने विवाह करके बेच-भेजा करने का संकल्प किया था पर लक्ष्मी के पिता ने लक्ष्मी को मुझ के सम्बन्ध बाग बिछाकर एक धनी मुसक से विवाह करने को राजी कर लिया था। मुझकर 'नवीन' की उससे मिले घोर वायसों की बाप बित्तार्थ तो उसने कहा—'तुम दो रोस जेस काटते फिरोगे मैं क्या कर बीटी भाइ भ्येहूँगी।' घोर 'नवीन' की जस्टै पैर वहाँ से लौट घाय।<sup>५</sup>

कवि को अपने मन का ख़ाबी आश्रम प्राप्त नहीं हुआ। श्री चाम्तिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है कि जीवन का योग पद्य उनका सुनापन पया बैठा था अपने दाहण भ्रमाव को वे हास्य से मनोरंजक बना देते थे। बर्षों पहिले ( स्वतन्त्रता के पहिले ) किसी में जब वे एक मित्र के यहाँ टूटे हुए थे तब हँसी-हँसी में उन्होंने मुझसे कहा—'क्याव केसनि धस करी'।<sup>६</sup> 'नवीन' की ने अपने ४६ वें वर्षान्त के दिन लिखा था—

बच-भ्रूँखल में घात्र पड़ लुकी दिव्यालीस ये कड़ियाँ,  
दिव्यालीस तप-श्रुतुएँ बीतीं दिव्यालीस ही कड़ियाँ,

१ "All good poets compose their beautiful poems not by art, but because they are inspired (Plato) —Selected Passages by R. W Livingstone, page. 180

२. श्री दुर्गाधर दुबे छात्रापुर का मुझे लिखित (दिनांक २०-८-१९३२ का) बच।

३. श्री बेंकटेश नारायण तिवारी—'नवीन' नवीन की, प्रस्तुत १९६०

पृष्ठ २५।

४ 'घनतक' बच में, पृष्ठ ४१।

५. 'नवभारत टाइम्स', २६ जून १९६०, पृष्ठ ६।

६ 'कम्बुधरा', हुनातमा, तितम्बर, १९६०, पृष्ठ २८।

किन्तु शुम्भबद ही बीती है मेरी जीवन-यज्ञियां  
 सब तो तुम निब बंध, शुम्भ के बाप भाग में, घर हो ।  
 प्रियजय ! आज एक यह घर हो ।

देवमऊ और राष्ट्र-माझा 'नबीन' बी ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक देव स्वल्प  
 न होया जब तक मैं धापी नहीं करूँगा—भारत को गुलाम मस्तान की घेंट नहीं हूँगा ।<sup>१</sup> उन्होंने  
 इस प्रतिज्ञा का निबध किया ।

श्री कृष्णरायण गुप्त ने लिखा है कि चिर युवक सदा बहादुर कवि की 'धनिकेयनता  
 के कारणें घोर धनै पामाचत का भावरण बाधते हुए सन् ४६ की ७ जुलाई की सरला की  
 'नबीन' के जीवन में आई । सरला को के सम्बन्ध में क्या कहें ? उनके सौन्दर्य और सुबत्त की  
 प्रशंसा तो चिर कुमायी पद्यमा गायडू ( स्व० श्रीमती सरोजिनी गायडू की पुत्री ) तक करती  
 हैं, मगर हम तो उनके धनपूरणी रूप के ही कायल हैं । विवाह के बाद इतना प्रसन्नता हुआ  
 कि निम्न दिनों में नबीन की नै धनैकावृत्त कम कविताएँ लिखी हैं ।<sup>२</sup>

इस विवाह का निमन्त्रण-पत्र धनूद्य था । उसमें स्पष्ट लिखा था कि धाने का कट्ट  
 न करे, केव न धापीबा<sup>३</sup> भेज दे ।<sup>४</sup> विवाह के सूत्र-विकास का सैखन म्प्रासंगिक नहीं होना ।  
 'नबीन' को निबन्धन महारत्ना गायत्री की धस्त्रियों का बिचर्जन करने के लिए प्रयाप गये । सैनिक  
 द्रुक पर धस्त्रि-कर्मण था ब उद्यो में प्रमानमत्ता भी नैहक भी बैठे थे । धपार भीड़ थी ।  
 मुनुस धनन श्री घोर बङ्ग जया जा रहा था । मोड़ के रैने को एक सुकुमार सुबती सहने में  
 धसमय थी । 'नबीन' की नै उधे धपनी 'धामानु बाहु' का सहाय है द्रुक पर बङ्ग लिया  
 घोर नहीं एक स्थान य दिया । संगम पर 'नबीन' भी से परिचित हो उस युवती ने कुछ दिन  
 परचात् मर्म की सयौं करने बासा एक धम्यबाद का पत्र उन्हें लिखी लिखा । 'नबीन' की नै  
 उम सीधा साधा पत्रोत्तर-दिया । उस युवती के बी-तीन भावमय पत्र धाये । कुछ दिन के परचात्  
 यह युवती धनने पिता के साथ नई लिखी धा पहुँची । पिताजी प्रोडेरर से घोर युवती  
 एम० ए० । पिता नै विवाह का प्रस्ताव रखा । धापी लम्पक हो गई । 'नबीन' की नै  
 भी 'प्रभाकर' से कहा था कि 'धुम जानते हो धपनी लिखी तो धोबड़-धाबाप रही है,  
 सब इन साधी पत्नी के पुत्र से धावर यह तर जाए ।'<sup>५</sup>

उनके कथन के 'धामर' का उल्ला-भाव सिद्ध हुआ । उनका धाम्यय धीधन सफल नहीं  
 हुआ ।<sup>६</sup> उन्होंने ११ सितम्बर, सन् १९५५ को बम्बई से लिखी धाते धमय धपनी एक धस्त्रिम  
 कविता में लिखा था—

१ 'धपलक' पृष्ठ १६ ।

२. श्री हरिमाझ उगाम्याय—'बीजन साहित्य', लम्पारकीय, नबीन को धा गये क्या,  
 जीवन में से नबीनना धनी गई, गई १९६० पृष्ठ १९५ ।

३ सैनिक 'नबजीवन' (१०-११ १९५१) ।

४ 'साप्ताहिक धाम' १६ नई १९६०, पृष्ठ ६ ।

५ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ १२ ।

६ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', यज्ञावति-धक, पृष्ठ ४० ।

क्या मिला ? नहीं कुछ भी तो मिला यहाँ सुन्दरों,  
 जीवन यह एक मिला वा वह भी छा बैठे,  
 क्या ही बिबिध सोता है किसी खिलाड़ी को—  
 हम एक सते थे, किन्तु क्या हो हो बैठे ।<sup>१</sup>

'नवीन' की भी एक मात्र पुत्री रश्मिरेखा है जो अभी छाया है और संघीत व नृत्य का अभ्यास भी करती है ।

परिणत स्थिति तथा प्रभाव—'नवीन' की सहस्रहस्त नहीं बन सके । श्री 'दिग्दर्शक' ने लिखा है कि 'आप बूमते-बूमते गृहस्था के बापरे में आ तो गये थे लेकिन गृहस्त्री कमी आपको बाँध नहीं सकी ।<sup>२</sup> १९४८ से १९६०—कुल बारह वर्ष । यह बारह वर्ष का काल ही 'नवीन' के लिए वास्तविक संघर्ष का काल रहा है । इन बारह वर्षों में एक महान् सैनानी क्रमशः टूट रहा था । अमानक कुछाएँ उनके जीवन में भर गई थी ।<sup>३</sup> उन्होंने अपने अस्तित्व दिनों में सङ्कटकारी अमान से बड़ा था—मेरा कोई नहीं । इन तीनों समयों में उनके बुध्दात्त जीवन की एक स्पष्ट झलक हीक पड़ती थी ।<sup>४</sup> 'नवीन' की ये अपने काव्य-जीवन के प्रारम्भिक काल में एक कविता में जो लिखा था वह बार से बरिठार्व हो गया—

नटनर ! यह विद्योप का अस्तित्व क्या करो है चित अशास्ति

क्या मेरे जीवन-नाटक का अस्तित्वही होगा बुध्दात्त ?<sup>५</sup>

कवि ने अपनी परिणत स्थिति को निम्न काणी प्रभाव की है—

मीने तोड़ा जो कुल्ल लुलुम तो क्या बेबा ?

उसके अन्तर में एक अर्धकर ललक है ।

मीने सोचा—मीने क्या अस्ति अयमान किया ?

जो सुन्दरों मिला परोक्षित—जीवन-भलक है ।

मैं फितना हूँ सषांनिभूत बुध्द मत पूछो

मैं सहस्रता ही रहता हूँ प्रयेक घड़ी;

जो ललक सुध्दो लपटे बैठा है ऐसे,

जते मैं हूँ अन्दर को कोई एक छड़ी ।<sup>६</sup>

कवि की परिणत स्थिति एवं मनोरथा का प्रभाव उसके काव्य पर साहज ही बेबा व भाँका वा सकता है ।

'बीत जसो वासन्ती-बेला जीवन की'—

१ वही, पृष्ठ २३ ।

२ 'नवमारत टाइम्स', २६ जून, १९६०, पृष्ठ ३ ।

३ श्री जयवतीबरण बर्मा—'काव्यिणी', वासुदेव्युधरणी 'नवीन' प्रवेशिका पृष्ठ १० ।

४ 'संस्कृति' जून-सुसाई १९६०, पृष्ठ २२ ।

५ 'सारस्वती' विद्यापुत्र, रितम्बर, १९१७, पृष्ठ ३०२ ।

६ 'राजराज्य', डॉ. गुरु-सुख, डॉ. अहि-भारतियन है जीवन मेरा, १५ अगस्त, १९६०, पृष्ठ ३ ।

'नवीन' की की दुःखावस्था स्पष्टता तथा निराशा में व्यतीत हुई। सन् १९५०-५१ में उन पर एक बार हृत्प-रोग का आक्रमण हो चुका था। परन्तु उनका वास्तविक रोग-काल सन् १९५५ के प्रायः-मास से प्रारम्भ होता है। इस समय से उन्हें सँस लेने में कष्ट होने लगा था और कर्णों के पास घब-घब सी कोई धात्राज मुताई पड़ती थी।

सन् १९५६ में उन्हें ऐसा समने लगा था कि कोई प्रचण्ड रोग उनके मात में बैठा है। उन्होंने खाने-पीने में काफ़ी संयम तथा रसना मित्रह प्रारम्भ कर दिया था। इसी वर्ष उन्हें पक्षाघात का भयावह आक्रमण हुआ और वे महीनो नई लिस्ती के चिस्तिगहन चिखिस्तासम में पड़े रहे। इस प्रकार वे दो वर्षों तक काफ़ी कष्ट रहे। सन् १९५६ में पुनः संसह के केन्द्रोय मदन में पक्षाघात का द्वितीय आक्रमण हुआ। उन्हें पुनः चिखिस्तासय मित्रबाया गया और बाड़े स्वस्थ होने पर वे घर वापस आ गये। बर्षान्त में उनकी तबियत फिर अधिक बिगड़ गई और उन्हें चिखिस्तासय में ले जाया गया।<sup>१</sup> श्री बिनकर<sup>२</sup> ने लिखा है कि छप्पन से लेकर साठ ईस्वी तक रोगों से बहूँ कटकर लड़े वे और इन्च इन्च पर उन्होंने संयाम किया था।<sup>३</sup>

अन्तिम समय में कवि की बाणी के साथ ही साथ उनकी स्मृति भी जली गई थी। उन्हें बहूँ माव नहीं रहता था कि कौन सी कविता उनकी है? उनकी लोभ, कुण्डा निराशा व पक्षयर्षता बढ़ती जाती गई। कवि ने अपनी अन्तिम कविता में वासन्ती-जेसा के जसे जाने के विषय में लिखा है।<sup>४</sup>

कवि की पढ़ने-लिखने की शक्ति भी जाती गई थी। बहूँ किसी का भी नाम नहीं लिख पाता था परन्तु उनके मुनने और समझने की शक्ति में कोई अन्तर नहीं आ पाया था। अन्त समय में उन्हें आभ्यास बर्षा और हरिसंगत बहुत प्रिय लगता था। श्री व्यास ने लिखा है कि लम्बी बीमारी ने उनके शरीर को मरुभूत किया है। उनके पुत्र स्वस्थ भूक गए हैं उनका पुष्ट बक्षस्वस बँस गया है, उनका मरा हुआ बेहूँ सुख थाया है और उनके सहउठे हुए बनेठ कैदों ने अपनी स्निग्धता छोड़ दी है। लेकिन उनकी आत्मा का तेज धात्र भी अक्षय है, जो छ-छकर उनके बेहूँ पर भक्षक मारता रहता है। बाणी गई तो जाये, लेकिन अनुसृष्टि धात्र भी कार्य कर रही है। सोन-हीन धमी भी उनके पास पहुँचते हैं। मात्र भी बहूँ उनकी कक्षा से इवित होते हैं। चित्रभूट में बसे रहनी की तरह धात्र भी उनके संदिश धीमनों, शरकारों अक्षरों और समर्थ व्यक्तियों तक पहुँचते छूते हैं। बहूँ कह न सकें, मुनते छ है समझते छ बहूँ हैं।<sup>५</sup> रोमों व उलझनों ने शरीर को मष्ट भष्ट कर दिया था। वे शरीर से प्राचीन होने लगे थे।<sup>६</sup>

१ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', अद्यावति संक शृष्ठ ६१०।

२ वही, शृष्ठ १०।

३ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' नवीन की की सात कविनाएँ अद्यावति-संक शृष्ठ २३।

४ श्री गोपालप्रसाद व्यास—'बैनिक हिन्दुस्तान', तन मन के संघर्ष में सोन—

५० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (१८-७-१९५८)।

५. 'अक्षर' शृष्ठ १७।

प्रायिक दृष्टि से कवि के ये तीन-चार वर्ष बहुत बुरे लखे प्रतीत हुए।<sup>१</sup> निराशा व अकसाह की भावा में प्रतिक्रमिक वृद्धि होने लगी। अपने जीवन के अन्तिम वर्ष में प्रसिद्धि के प्रभाव में आये वही भावा उनमें घीर भी बढ गई थी।<sup>२</sup> अपने दुःख और मानसिक पक्ष को उन्होंने श्री 'मधुर' को लिखित अपने दिनांक १२-४-५६ के पत्र द्वारा प्रसिद्ध किया है— 'इसके मेरे क्या मानसिक क्या धारीरिक दोनों को ह्रासव प्रकटी नहीं। लज्जा है जैसे मैं अधिक दिन तक सोचों का सुर्मा नहीं हो पाऊँगा। जीना भी नहीं चाहता। इस जिन्दगी में मेरे जो-जो कुछ भले हैं वे ही क्या कम हैं। इस क्षण और कष्ट की दुनिया में रहकर क्या कसैगा? तुम सोचते होगे किसी हिन्दुस्तान को राममानो है तो यहाँ के लोग सुधी होंगे सम्भव होंगे परन्तु यहाँ भी तबाही है भुखमरी है, बेकारी है। अपने का अपना नाश हो रहा है अज्ञान की माननाएँ बनायी जा रही हैं फिर भी लगता है कि महात्मा जी के रामराम्य का सपना प्रचुर ही रह जायगा।<sup>३</sup> कवि के जीवन परण पकने लगे थे। उसका उल्लास मन्त्र पढ़ चुका था प्राणा मुक्त हो गई थी।<sup>४</sup>

अपने इच्छा-काश में कवि ने छाक की मात्रा पहनना शुरू कर दिया। नाम-जाप व मन्त्र जाप करने लगे और 'ॐ नमः शिवाय' का पाठ करने लगे।<sup>५</sup> वे प्रकृत हैं राम ! और 'पौष्ट्यपूरणमस्तु' कहा करते थे। उनकी होम्योपैथिक तथा प्रायुर्वेदिक सभी ङंग से चिकित्सा की गई। चिरञ्जी के साई बाबा कानपुर के एक सन्त और काशी मात्रा के चित्त उन्होंने घर पर लपका लिये थे। महात्मजय और अक्षरवेद के मन्त्रों का जाप भी करवाया गया। श्री अमरपुरम पाखी ने अक्षरवेद के मन्त्र का पाठ करने को बड़ा सा छो वे स्वतः किया करते थे। दामिक अनुष्ठानों के प्रति उनकी बड़ी आस्था थी।<sup>६</sup>

डॉ० मनेन्द्र ने लिखा है कि अनेक श्रीमण्डल रोगों ने मिलकर उन पर प्रहार किए—हृदय रक्तचाप पचापात घटा और अन्त में कर्णाक्षि केन्द्रों का कैम्बर।<sup>७</sup> २६ दिसम्बर, १९५६ ई० को कवि को नई दिल्ली के बिलियन अस्पताल में भर्ती किया गया। मरण-सन्देश चार मास परचाह ही आ गया।

कैसा मरण-सन्देश आया—कवि का मन डोहने लगा। डॉक्टरों और मित्रों के स्वास्थ्य सुधार के आश्वासनों से भी वे समुष्ट नहीं हुए। उन्हें विविक्षित हो गया कि जीवन को अन्तिम पक्षी आ गई है। वे स्वयं अमरक के पोत्र आह्वान के लिए उत्सुक हो गये। मृत्यु का पापक कवि अब मृत्यु को अपने अन्तिम-माघ में आबद्ध करने के लिए उत्तत हो पड़ा। उनके

१ सं० रामराम रामों—'अक्षरभारती', स्वामीयः। दारा नवीन श्री, पृष्ठ २२।

२ 'आश्रम' भाई १९६१, पृष्ठ ६।

३ 'साप्ताहिक आश्रम' २६ मई १९६० पृष्ठ १०।

४ 'अक्षरभारती', एक अन्तर्गत कविता—जीवन अन्तिम कामरूप रामों

नवीन' स्पृति-संघ पृष्ठ ८।

५ श्री प्रयागनारायण

६ श्री अयोध

७ डॉ० मनेन्द्र के

सूत्रों व गीत पर घोष के लक्षण स्पष्ट रूप से परिचित्रित होने लगे। किन्तु वे भी कुछ नहीं बर्न इच्छा कवि की नहीं रह गई। उनके पास जो उस समय सम्भव थे वे वे 'बस सब हो गया'।<sup>१</sup> मृत्यु के दो दिन पूर्व जाना गीता बर कर दिया। साथ ही धीरे धीरे के लिए लड़कों का वाक्य था। शिर्षक भी कवि की बस रही थी।<sup>२</sup> २६ मार्च सन् १९६० के अफराह्ण तीन बजे कवि के अन्त मुँद गये। कवि मरण-सम्बन्ध सुन चुके थे।

'डोसा लिए चलो तुम भटपट'—उठी दिन रात्रि की छाठ बजे की विधिष्ट गाड़ी से मोर और लोक को अपनी मगरी दिल्ली से कवि का घर अपनी कर्मभूमि कानपुर से जाया गया। ३० मार्च, १९६१ को प्रातः सवा छः बजे कानपुर दाब पहुँचा। कर्मठ कवि की कर्मभूमि मगरी में कवि की निष्क्रिय देह पहुँची और मर्यादा १२॥ बजे बह धनि-सपरों के प्रभु में चिर-काल के लिए विनीत हो गई। कवि का शाला 'सम्भन प्रबन' पहुँच गया। इन धनिकेउन का मर्यादा गायक कवि, धार्मिक धनिकेउन ही रहा।<sup>३</sup>

पद और सम्मान—उत्तरैतिक व सायाधिक सेवाओं की दृष्टि से कवि के लोक कला और राज्य समा के सहाय होने के धनिकेउन 'नवीन' की धनिकेउन पर अपने जीवन के उत्तरकाल में धारीन रह चुके हैं।

सन् १९७५ में श्री बाबागंमर और श्री धनिकेउन में केन्द्रीय सरकार ने 'हिन्दी भाषा' को स्थापना की। डॉ० हुबारीप्रसाद द्विवेदी, श्री रामचारीतिह 'दिनकर' सादि हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों के साथ 'नवीन' की भी इस धनिकेउन के सदस्य बनाये गये जिसके कारण हिन्दी के पक्ष को काशी बस प्रातः हुआ।

राजभाषा धनिकेउन बह बन्दई गया, तब सन् १९६६ में उसकी एक बैठक में डॉ० सुनीलकुमार वाटुम्पां धनिकेउन ने हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने पर राष्ट्रीय एकता में धनिकेउन पहुँचने की बात कही। इस पर 'नवीन' की बहउत्तर के सहाय देहाइ उठे थे—

If Hindi ever tried to come in the way of our national unity would burry it five fathoms deep<sup>४</sup>

धी धनिकेउन ने इसी धनिकेउन के एक संस्मरण में लिखा है कि "उन्हा राष्ट्र प्रेम और स्वभाषा प्रेम केवल साहित्य तक सीमित नहीं था। धनिकेउन धनिकेउन को प्रत्यक्ष जीवन के धनिकेउन प्रबन्धन में जाने का धनिकेउन धनिकेउन करने वाली में से है एक से और हम नाम में बड़े दया रहते थे। होटलों में हम सब लोग एक ही साथ नाश्ता करते थे। धनिकेउन का धनिकेउन का नाम भी साथ किया करते थे। होटल के धनिकेउन के धनिकेउन नामों का धनिकेउन इनका धनिकेउन धनिकेउन है कि सब

१ श्री रामचारीतिह अफराह्ण 'बहभारती', धनिकेउन की धनिकेउन, सृष्टि-धनिकेउन पृष्ठ ३६।

२ श्री बाबागंमर धनिकेउन—'सांसाहित्यिक धनिकेउन', धनिकेउन-धनिकेउन धनिकेउन या धनिकेउन की धनिकेउन, १३ मई १९६० पृष्ठ ५।

३ 'दधिमरेका', पृष्ठ १२६।

४ श्री रामचारी तिह 'दिनकर' से धनिकेउन बहभारती में धनिकेउन धनिकेउन (धनिकेउन १-६ १९६१) में धनिकेउन।

कोई उन्हें 'बैरा', 'बाँस' नाम से ही पुकारते और जानते हैं। इन अनेक बपके पहले हुए लौकिकों को किसी दूसरे नाम से नहीं पुकारा जाता। लेकिन 'नबीन' भी जो अंग्रेजी नाम से पुकारना बड़ा खटखटा था। उनकी दृष्टि में अपनी भाषा का अर्थ घाबरावक था। इसलिये वे कई बार 'घरे लड़के', 'ये लड़के' कहकर पुकारते। लेकिन लड़के से उन्हें सम्बोध नहीं होता क्योंकि उनके सामने जो प्रायमी भाषा बह लड़का ही होता था। 'बैरा' के लिये उन्हें सार्वक शब्द नहीं सूझ था जिससे काम बनता। इसलिये वे साधारण हाकर लड़के के साथ 'बैरा' भी जाड़ देते। ऐसे प्रसंग पर बिबशता की जो मानसिक किन्तु उनके चेहरे पर दिखाई पड़ती उसे मैं भूल नहीं सकता। सौम्य किन्तु के साथ लड़कों को पुकारनेवाले की ओर हाटल में भेठे हुए लोगों का ध्यान घबराव किन्तु जाता और वे साबते कि राजभाषा प्रायोग में एक व्यक्ति ऐसा है जो हिन्दी का सच्चा जोरदार और व्यावहारिक हिमायती है।<sup>१</sup>

लोकतमा के अग्रगण्य भी अन्तर्द्वयन अग्रगण्य में रामचन्द्रा के समापति डॉ० राजकृष्ण जी सहमति से संघीय निधि और प्रशासकीय अर्थों के लिये हिन्दी पर्याय निरिख करने के उद्देश्य से संघ संघस्यों की एक संयुक्त समिति ३ मई १९५६ को नियुक्त की। रामचन्द्रा पुस्तकालय टिप्पण का इस तदर्थ समिति का समापति बनाया गया। इस समिति के संघीय संघस्यों में डॉ० बालकृष्ण शर्मा 'नबीन' भी भी एक थे।<sup>२</sup> अस्वस्थ होने के कारण मध्य नबीन भी इस समिति की प्रथम कार्यवाहियों में तो भाग नहीं ले सका फिर भी समिति की कुल ११३ बैठकों में से १२ बैठकों में सम्मिलित हुए।<sup>३</sup>

इसमें डॉ० कवि के पद्यरूपण डॉ० सूर्यनारायण व्यास के समापतिव में मालवा साहित्य परिषद् की ओर से अमिनन्धन का आयोजन हुआ था।<sup>४</sup> अथवा अज्ञातता में कवि को गणतन्त्र भारत के राष्ट्रपति महोदय ने 'पद्यरूपण' को उपाधि से सम्मानित किया था। इस उपाधि का प्रमाण-पत्र और स्वर्ण-पत्रक कवि को अपनी मृत्यु के सिर्फ तीन दिन पूर्व (२६ अगस्त, १९६० ई०) ही प्राप्त हुए थे।<sup>५</sup>

इसी प्रकार कवि के देहावसान के चार मास पूर्व उनके ३३वीं वर्षगांठ पर ८ दिसम्बर, १९३९ ई० को दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से उनका जन्मोत्सव तथा अमिनन्धन समारोह मनाया गया। भी रामचारीनिह दिनकर ने अमिनन्धन-पत्र पत्र का नाम समापित किया। दिनकर ने सिखा है कि अमिनन्धन पत्र पद्य-पत्रने के भीतर बह मास

१. भी डॉ० प्र० मेने—'राष्ट्रवालो', स्व० नवान जी हुए संस्मरण जून १९६०।  
जिनको पाठ कभी पुरानी नहीं पड़ सकनी, स्मृति-संक, पृष्ठ ५-६।

२. 'राज्य अमिनन्धन अर्थ' हिन्दी विधिक शाखाकी ओर टण्डल को भी राजेन्द्र द्विवेदी पृष्ठ १२२।

३. हिन्दी विधिक शाखाकी निर्मात्री समिति के सचिव डॉ० राजेन्द्र द्विवेदी का मुझे लिपिन (दिनांक २-५ १९६१ का) पत्र।

४. 'बीला', स्मृति-संक, पृष्ठ ४९३-४९३।

५. 'साहित्य', सम्पादकीय, अज्ञातलिपी, आचार्य शिवपूजन लहाय, अग्र, १९६०, पृष्ठ ८।

बना, हो न हो बेबशा की भाव यह अन्तिम पुत्रा है, अब घोर पुत्रा सेते की यह नहीं टिकेगा।”<sup>१</sup>  
 जब अमिनमन-पत्र में कवि, योद्धा घोर मनीषी का एकत्र स्तवन था। तत्कालीन अथक  
 अनुकृपा फूट गई और सब की भाँसें छलझला गई। डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है कि “हिन्दी के  
 साहित्यिक जीवन में यह एक अपूर्व घटना थी कि हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य की तीन विक्रम  
 रेखाएँ मानो एक भावबिन्दु पर आकर घनाभास ही मिल गई थीं।”<sup>२</sup> दम्पत्यत्वा के कारण  
 कवि अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति सिर्फ़ ही राम अथर्व से कर रहा था।

इस समारोह में सर्वथी मैथिलीचरण गुप्त रामचारीसिंह ‘दिनकर मयवतीचरण  
 वर्मा, सेठ मोक्षचन्द्रास डॉ० हरिचंद्रराय ‘बचपन’, डॉ० नगेन्द्र सिंह मजीमा बाबो धीमन्नाचरण  
 चण्दास, बनारसीदास अतुबेरी एवं केन्द्रीय मन्त्री श्री राजबहादुर झादि ने भाग लिया।<sup>३</sup>  
 समारोह में गुप्तजी ने अपना पद्यत्मक आशीर्षन दिया था—

मसा तुम्हारा प्रेम मधु, हो जितन्य प्राचीन ।  
 उही क्षम से तात तुम, निज में नित्य मनीन ।<sup>४</sup>

भी उदयचक्र मट्ट ने भी कहा था—

हे अमर भारती के सुपुत्र, भी आलङ्कृत्य धार्मी ‘मनीन’  
 तुम अन्व-उपवन के मेघदूत, तुम जीवन के गायक प्रवीण ।  
 तुम स्वयं अर्ह के हीन मान, पर बुद्ध इवित मृत कष्टकार,  
 तुम अपनी जिन्ता से बिरत, तुम सरस्वती-सुत बण्डहार ।<sup>५</sup>

फानपुर में भी कवि का यह अन्व-विषय ‘कामपुर लेखक संघ’<sup>६</sup> ने उत्साह  
 बध्या था। कवि का यह अन्तिम सम्मान था।

## सम्बन्ध-घृत

(क) संख्यायां से सम्बन्ध—धार्मी की वन हिन्दी की धार्मिक संस्थाओं से आन्त  
 सम्बन्ध बना रहा। हिन्दी के वे महात् प्रेमो तथा प्रहरी से घोर हिन्दी की अर्थोंमें भी सेबाएँ  
 की; उनका अपना एक पूवर् इतिहास है। वे हिन्दी की अमूर्त निधि थे।

१ श्री रामचारीसिंह ‘दिनकर’— साप्ताहिक ‘हिन्दुस्तान’, त्रिजीविया से चार अर्थ,  
 अष्टावलि-अंक, पृष्ठ १०।

२ डॉ० नगेन्द्र— ‘आजकल’, दादा आलङ्कृत्य धार्मी ‘मनीन’, मार्च १९३१  
 पृष्ठ ८-९।

३ दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्यसम्मेलन, आचार्य-विचारण, सन् १९५६-५७,  
 पृष्ठ ४।

४ कवि ‘हिन्दुस्तान’, निज में नित्य ‘मनीन’ ( १०-१२ १९५६ )।

५ वही, शुभकामना।

६ वैदिक ‘आजकल’ ( ११-१२ १९५६ )।



श्री श्रीगारायण चुनबेदी ने लिखा है कि 'हमें यह सोचकर दुःख होता है कि अब हिन्दी संसार की धार से इन्हें सम्मानित करने का समय आया तब कुछ भले भावमियों की कृपा से साहित्य सम्मेलन समाप्त-प्राय हो गया। न हिन्दी-संसार उन्हें साहित्य सम्मेलन का समापति बना पाया और न साहित्य वाचस्पति की उपाधि से ही उन्हें सम्मानित कर सका।'<sup>१</sup> फिर भी 'नवीन' की के अन्तिम भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के छात्र पुण्डरीक सम्मन्वय रहे हैं। गोरखपुर सम्मेलन के धनस्र पर इन्होंने बासुदेवी-साहित्य विरोधी प्रस्ताव का विरोध किया था। यहाँ उनकी माफ्युष्य व्यक्ति का अद्भुत रूप देखने को मिला था।<sup>२</sup> इन्दौर मध्यभारत साहित्य समिति की सुसन्तानिका 'बीला' में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के उदयपुर अभिवेदन के सिद्धे, समापतित्व का पं बासुदेव्युष्य धर्मा नवीन' का नाम पेश किया गया था। श्री धर्मप्रिय डिबेदी ने उनके पत्र में एक अनीत निकाली थी।<sup>३</sup> बँटवारे के पहले कटाची हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जो अभिवेदन हुआ उसमें समापति पर के लिए 'नवीन' की भी एक उम्मीदवार थी। परन्तु राजपि पुरुषोत्तमरास टण्डन के सहयोग के कारण श्री विद्योगी हरि निर्वाचित हुए।<sup>४</sup> भारत के स्वामी होने के पश्चात् हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रथम अभिवेदन मेरठ में हुआ था। सम्मेलन श्री विषय-समिति में नवीन' की ने यह प्रस्ताव रखा था कि भारत भर के समस्त विद्वत्विद्यार्थियों में विद्या का माध्यम और उच्च स्वाध्यायों के काम-जात्र की भाषा अविनाश हिन्दी होनी चाहिए। प्रस्ताव सुपुत्री उत्साह और हृष के बाठाकरण में पारित हो गया। इसकी मयंकर प्रतिक्रिया हुई। टण्डन की धीरे राहुत की धारि चिन्तित हो गये। अठक यह प्रस्ताव पुनः विचार के लिए प्रस्तुत किया गया और यह अनुरोध हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेशों तक ही सीमित कर दिया गया। 'नवीन' की चुन रहे नवीन' धनका हृष तो पुण्डरीक प्रस्ताव के छात्र संतप्त था।<sup>५</sup>

'नवीन' की उत्तरप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के काफी बस्ती व फर्कबाजार अभिवेदन के अन्वय रहे।<sup>६</sup> वे किसी प्राथमिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भी अन्वय रहे चुके हैं।<sup>७</sup>

इस साहित्य मण्डल, मधुरा के नवीन' की प्राण रहे। बाकायदाही से अत्रयाया का अन्वय धारण करने का प्रयत्न भी उन्हीं के द्वारा उनके समापतित्व अन्त में सम्पन्न हुआ था। वे ही उक्त विद्वत् मण्डल के नेता थे जिनके अनुयाय ने बाकायदाही पर अत्रयाया की

१ 'सरस्वती', लखनऊ, पं० बासुदेव्युष्य धर्मा 'नवीन' का स्वर्णनाम, मई, १९६०, पृष्ठ १०४।

२ 'विद्या विज्ञ', पृष्ठ २०७-२०८।

३ 'आगाधी वक्त', मई, १९४४, पृष्ठ ६।

४ 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', १० फ़रवरी, १९६०, पृष्ठ ११।

५ वही, पृष्ठ १९।

६ वही अज्ञात-संज्ञ, पृष्ठ ४०।

७ 'राजपि अन्तिम-अन्त', हिन्दी प्राथमिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पृष्ठ ७१७।

स्वयं निर्या है।<sup>१</sup> ब्रज साहित्य मण्डल द्वारा आयोजित चौद्विंशत्यम-महोत्सव<sup>२</sup> 'सूर जयन्ती'<sup>३</sup> आदि महोत्सवों में वे सम्मिलित हुए और भाग्य विधे। ब्रज साहित्य मण्डल के कसबदा, झापरस और मेरठ के अधिवेशनों में वे रीति-नीति के प्रयुक्त कर्तव्यों में से रहे। सं० २००६ में आयोजित ब्रज साहित्य मण्डल के सहारनपुर के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता 'नबीन जी' ने ही की थी। इस समय का उनका अध्यक्षीय भाषण हिन्दी भाषा, विधि व संकों के सम्बन्ध में उनके निजी विचारों का सागर है।<sup>४</sup> इस सम्मेलन के स्वर्गित हा जाने की पूर्वका से बोझा की जा चुकी थी<sup>५</sup> परन्तु 'नबीन' जी ने अपने विश्वासी रूप व मित्रमत्तारिता के कारण, सम्मेलन को सजुएण किया व उसमें प्राणों का संभार किया। यहाँ पर प्रेम व श्रेय रस व मस्ती का सागर सहराने लगा था। हास्य और प्रयुक्तता का संभार उनके ही कारण इस अधिवेशन में हो सका।

मध्यभारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'नबीन' जी क बड़ घनिष्ठ व पुराने सम्बन्ध रहे हैं। वे इस सम्मेलन के सन् १९६०-६१ दिमम्बर १५२ और जनवरी १९५१ के ममानति रहे चुके हैं। इस सम्मेलनों में अध्यक्ष-पद से विधे गये उनके भाषणों का वैचारिक व साहित्यिक दृष्टि से काफी मूल्य है। हिन्दी की वर्तमान गमीसा पत्रियों और विचार धाराओं पर उनके निजी दृष्टिकोण इन्हीं बहसों में अर्कतहित है। उन्होंने यह मुझया था कि 'सभी बन्धु यह जानते हैं कि इमारी साहित्या/वाचन प्रणाली में इमर कुछ ऐसी धारणें बह निकली हैं जिनके कारण मये साहित्यिक और पुराने भी बड़ी मड़बड़ी में पड़ गये हैं। एक प्रकार का बुद्धिभ्रम फैला जा रहा है। साहित्य सम्मेलनों का, हमारे देश की साहित्यिक संस्थाओं का, यह कर्तव्य है कि वे इस पर विचार करें और साहित्यकारों तथा वालोचकों को दिया मुझाने का प्रयत्न करें।<sup>६</sup> 'नबीन जी' को मध्यभारत हिन्दीसाहित्य समिति के उपाध्यक रहे चुके हैं।<sup>७</sup>

राजीव हिन्दी परिषद् कसकता के साथ धर्मा जी का सम्बन्ध उसके बन्धु के ही साथ

१ 'ब्रजभारती', स्वर्णिय सं० आतहरण धर्मा 'नबीन', भी नबीन समिति-संक, आसुन सं० २०१६ १७ पृष्ठ ४।

२ 'ब्रजभारती', भाद्र सं० २०१० वि० पृष्ठ ४२।

३ बहो, श्रेय-मासपत्र सं० २००६, पृष्ठ ११।

४ 'ब्रजभारती', ब्रज साहित्य मण्डल के सहारनपुर अधिवेशन में अध्यक्ष पर से दिए गए भाषण का मुख्य अंश, भी आतहरण धर्मा 'नबीन आशिकन-आसुन, सं० २००६, पृष्ठ २-६।

५ 'ब्रजभारती', सहारनपुर सम्मेलन अधिवेशन स्वर्गित, आशिकन-आसुन सं० २००५, पृष्ठ ४६।

६ डॉ० राजबिहाल धर्मा 'प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ' साहित्य और पत्रार्थ, पृष्ठ ६५।

७ 'बीला', जून, १९६०, पृष्ठ ४०६।

रहा है। वे परिषद् के स्वापो सन्त्य थे।<sup>१</sup> मुंबरात प्रांतीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति<sup>२</sup> और प्रखिल भारतीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति<sup>३</sup> के साथ भी 'नवीन' की प्रवृत्ति स्वीकृत सम्बन्ध बनाये रहे। वे प्रसन्न इनके अधिवेशनों में भाग-भाग्य करते थे।। हिन्दी जनपदीय परिषद् में उनकी काफ़ी प्रतिबद्धि थी। सन् १९५९ में आयोजित हाबरस की प्रवृत्तिजननीय परिषद् में वे सम्मिलित हुए थे। इस परिषद् के वे प्रधानमन्त्री चुने गये थे और परिषद् की वैधानिक प्राथमिकता जनपद के सम्पादक-मण्डल में भी जनपद नाम रहा।

वर्मा जी का बहुमुखी जीवन होने के कारण उपर्युक्त संस्थाओं के पतिरिक्त भी, कई संस्थाओं से उनका मूल्य सम्बन्ध रहे है।

नवीन जो सन् १९५० से १९६० ई० तक संसदीय हिन्दी परिषद् के उपाध्यक्ष रहे। वे सन् १९५४ से १९६० ई० तक इसी कार्यकारिणी समिति के सदस्य भी रहे।<sup>४</sup> 'परिषद्' की 'वैधानिक पत्रिका के वे सं० २०१४ से २०१८ वि० तक सम्पादक भी रहे।<sup>५</sup> जोपुर के 'साहित्य पत्र मठशाळा' में वे जो पुनाकराय भी श्रीनारायण चुनवेंटी घाटि के साथ 'मठशाळा मण्डल' के सदस्य भी रहे।<sup>६</sup> 'नवीन' का 'कविताई १९५४' नामक काल्य-संस्करण के भी विरिजानुमार मापुर के साथ परामर्शराश रहे।<sup>७</sup> 'नवीन' की मुम्बई प्रतिनयन प्रवृत्ति के जो श्रीनारायण चुनवेंटी की उदयकर मठ भी वलकल मठ और भी वैदेश्य सत्पार्थि के साथ सम्पादक-मण्डल के सदस्य रहे। इसी प्रकार 'सिद्ध गोविन्दराव प्रतिनयन प्रवृत्ति' के सम्पादक-मण्डल में प्रा० पुनाकराय डॉ० हुमायुनप्रसाद द्विवेदी भी चन्द्रगुप्त विद्यासंस्कार और डॉ० नयेर के साथ वे भी एक सदस्य थे।<sup>८</sup>

'नवीन' जो नई दिल्ली के 'सरस्वती समाज' एवं बाह में, फरवरी सन् १९५९ से लेकर जून १९५८ तक 'साहित्य महाविद्यालय', नई दिल्ली के अध्यक्ष रहे। महाविद्यालय के जीवन के लिये प्रशासन द्वारा वा भूमि प्राप्त हुई उसका वास्तविक भोग उन्हें ही है। संस्था के

१ 'जनप्रारती' पत्रनारायण नवीन की सं० १, वई ८, सं० २०१०, पृष्ठ ३५।

२ राष्ट्रकोण। सम्पादक की कलम से, १९० नवान का चुनवाई १९६०, पृष्ठ २०९।

३ राष्ट्रभारती, सम्पादककोय, पं० बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' जून, १९६०, पृष्ठ ३४३।

४ संसद् सभाय भी मन्त्रालय द्विवेदी नई दिल्ली से हुई प्रत्यक्ष में (दिनांक २५-५ १९६१) में प्राप्त।

५ वही।

६ 'मठशाळा', सन् १९५१-५२।

७ 'कविताई १९५४' साहित्य निकेतन कावपुर, सन् १९५५।

८ 'मुम्बई प्रतिनयन प्रवृत्ति' मुम्बई प्रतिनयन प्रवृत्ति समिति, नई दिल्ली सन् १९६०।

९ 'सिद्ध गोविन्दराव प्रतिनयन प्रवृत्ति', सिद्ध गोविन्दराव होरक कपल्ली समारोह, नई दिल्ली, ५ दिसम्बर, १९५६।

सिए उन्होंने जो कुछ किया, बसकम पूर्णतया चर्जन कर सकना सम्भव नहीं है।<sup>१</sup> सन् १९५१ में, 'नबोन' भी मध्यभारत पत्रकार परिषद् के अध्यक्ष हुए।<sup>२</sup>

अत्युक्त संस्कारों के प्रतिरिक्त कवि का राजनैतिक संस्कारों में, बापेल से घाबीजन सम्बन्ध रहा। धर्मों जो कावेस के कर्मठ कार्यकर्ता रहे। उनकी मृत्यु पर बापेल ने भी हार्दिक शोक प्रकट किया था।<sup>३</sup>

(स) व्यक्तियों से सम्बन्ध—'नबीन' की भी मृत्यु १९ वर्ष की अवस्था में हुई थी। सन् १९६१ को सञ्चलन कावेस से उनका सक्रिय जीवन का समापन होता है। सन् १९२१ के महाद्वयम धान्धोलन में सम्मिलित होने के-उत्तरान्त उनके जीवन का एक निश्चित विधान बन गया था जिस पर वे सन् १९५७ तक चलते रहे। इसके पश्चात् उनका जीवन दिल्ली के राजनैतिक व साहित्यिक कार्यकर्ताओं तथा देश के अन्य भाग से इसी प्रकार के सम्बन्ध-निर्वाह में व्यतीत हुआ। उन्होंने क्रिस्तने ही कवि-सम्मेलनों की अध्यक्षता को समाप्त-वोटियों में भाग लिया सहस्राधिक बार भाषण दिये। इन सब व्यापक सामाजिक व राजनैतिक कृत्यों के कारण उनका सम्बन्ध-वृत्त काफी व्यापक व विस्तृत था। भारत के राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री से लेकर साधान्य धर्मिक व कृषक से उनकी पहिचान व स्नेहित सम्बन्ध थे। सन् १९१९ से लेकर १९६१ ई० तक के अत्यन्त सक्रिय व उदात्त जीवन के ४५ वर्षों में उनका सामाजिक सूत्र सारे देश से संलग्न हो गया। वे देश हुए मध्यभारत में कार्य दिये उत्तरपदेश में और मृत्यु का बख्श दिना में किया। उनके मिन यदि घासाम में है तो करन में भी है। इन प्रकार इस विद्याल और महात्मा परिवृत्त को घात्रेष्टित किये धर्माजी का जीवन गुजरठ के महास्य जीन-दोन बाता इज्जिनाबर इस्ता है। मोस्वामी तुससोरास की ने जो कहा है उपरहि धनठ धनठ धर्म सङ्घी—बहु 'नबीन की के निस्तीर्ण' जीवन के कर्म-व्याप्ति पर पूर्णकमेण चरितार्थ होगा है।

इन घणाह सम्बन्ध-वृत्त में से कुछ विजिष्ट कर्मन्वीं का यहाँ विवरण देना उचित होगा जिनके सूत्र कवि के जीवन के सामाजिक, साहित्यिक राजनैतिक और धार्मिक चरों के सम्भार में विखरे पड़े हैं। इनमें से धनेकों ने कवि जीवन का बनाया है, मोड़ा है धपवा स्वठ प्रेरणा प्राप्त की है। इन सूत्रों से हमें कवि के मानसिक व चार्गिक विरासत को समझने में भी बड़ी बहायता प्राप्त होती है।

कुछ प्रवाल व महात्मानुल्लं सम्बन्ध सूत्रों का विस्तेफण उपोसिखित रूप में देखा जा सकता है।

१ महाविद्यालय के प्राचार्य को विनयबन्ध मोहुरात्म का मुझे लिखित ( दिनांक १९१२-१९ का ) पत्र।

२ 'विजय', कन्नड़ी, १९५१, पृष्ठ १२।

३ अन्वीय कावेस वल, दिल्ली, चार्गिक परिदेशन, सन् १९६०-६१, पृष्ठ १।

पारिवारिक सम्बन्ध—कवि-माता—कवि-माता श्रीमती राधाबाई ही कवि-जीवन की 'नवीन-विवाह पूर्व की एक मास सम्बन्ध थी। माता ने बड़े कष्ट सहकर अपने 'बासकृष्ण' को फिर नवीन बनाया।' बासकृष्ण को कवि' व 'संवीत प्रेमी' बनाने का प्रारम्भिक श्रेय उन्हीं को ही है। बासकृष्ण शर्मा के जीवन के उप-कासीन क्षितिक का सर्वप्रथम प्रेरणाकारी और निर्माता रूप उनकी माता का है, जिससे यह मार्तण्ड प्रकट हुआ। मीरा नारायण स्वामी, भयबन रसिक सूर धारि के भजन सुनाकर उन्हींने कवि के स्वर में संवीत व माधुर्य का वाचन अपने रूप में मिला लिया था।<sup>१</sup>

'नवीन' जी की माता परमेश स्नेहमयी पतिव्रता पवित्र प्राचरण वाली एवं कर्मनिष्ठ महिला थी। वे धुन-धुन का बहुत धार्मिक विचार करती थी। शाकापूर धाने पर वे 'नवीन' जी को मो-मुत्र द्रिङ्गकर, पवित्र करने फिर चरण-स्पर्श करती होती थी। वे रसोई को देखने भी नहीं देती थी।<sup>२</sup> वे नल का पानो नहीं पीती थी।<sup>३</sup> वे पापुत्रा ग्रहण नहीं करती थी।<sup>४</sup> जब वे एक बार कानपुर गईं तो रमड़े-स्टेशन पर गणेश जी धारि उनको लेने के लिये घाये और उनका शुकुष बनाकर बड़ी धान से उन्हें प्रताप प्रेम से बसे।<sup>५</sup> वहाँ पर उनके लिए बासकृष्ण हुए का जम स्वत साठे थे।<sup>६</sup>

बासकृष्ण अपने पिताजी को 'कृष्ण' और माता का बीबी कहने से।<sup>७</sup> माता-पिता दोनों उन्हें एकबार सन् १९२१ में मन्ननऊ बैज में देखने गये थे। श्री श्रीनिवास कुश ने लिखा है—'मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि सन् १९२० में भैया मन्ननऊ जिता बैज में राजबन्दी से धीर मैं उनके पूज्य पिताजी और माता जी का साथ लेकर मन्ननऊ जिता बैज उनसे मिलने गया। शर्मा जी के माता-पिता धन्य बन्धन मन्त्रदाय के एकनिष्ठ वैष्णव थे।

१ 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' सम्पादकोप, १४० बासकृष्ण शर्मा 'नवीन', वर्ष ६५, अंक १, सं० २०१०, पृष्ठ ६१।

२ 'व्यक्ति कविता' उन्हींने हमें सन् १९३८ या ३९ में उरई कवि सम्मेलन के बाद एकांत में सुनायी थी। तब तब हम यह नहीं जानते थे कि वे वैष्णव परिवार के हैं। उसे सुनकर हमने उनसे कहा—'नवीन जी, आप तो बिरहुत वैष्णव की तरह बोल रहे हैं। यह तिथाय वैष्णव के बोल बह सकता है? अथवा ही आप हूय भि वैष्णव हैं। तब उन्हींने हमें बतलाया था कि वे वैष्णव परिवार में उत्पन्न हुए थे, और बालकपन में उनकी माँ उन्हें सूर, मीरा, नारायण स्वामी भगवान रसिक धारि के पद सुनाया करती थी।—श्री श्रीनारायण बनुरेडी, सरस्वती नवीन जी की कविताएँ, जून, १९६०, पृष्ठ ३६५।

३ डॉ० श्रीकान्त गुठ द्वारा ज्ञात।

४ श्री वैद्यर शास्त्री द्वारा ज्ञात।

५ श्री बासकृष्ण बनुरेडी द्वारा ज्ञात।

६ श्री प्रतापसिंह शर्मा द्वारा ज्ञात।

७ श्री जयनारायण भातानी द्वारा ज्ञात।

८ श्री मारतनान बनुरेडी—सरस्वती, जून, १९६०, पृष्ठ ३७६।

पिता-माता हम सोच-विचार में व्याकुल थे कि वेग बाध लक्ष्मीकण्ठ में भ्रष्ट हो गया होगा, किन्तु जब मैया बाबूकण्ठ को बाहर का मकसस लगाये तब उस निडर माण्डवी बोली फड़फड़े हुए, गले में तुपसी की माथा पहने हुए, लड़ाऊमा पर जाने या रहे हैं उनके माता पिता ने देखा तो मैया बाबू भाविक है, पूछें वैष्णव है उनके प्रेमाद्यु भ्रान्ति लये। धर्मा की बन्दीगुह के द्वार से धाकर एक कैम में आ मिले। माता-पिता भी माण्डवी कर बोसे— 'काया पाँव हील।' माता-पिता ने उम्हें हृदय से लमा लिया। पिताजी ने कहा 'द्वैत धर्म धीर बासकण्ठ को हृदय में छया रखिये। धर्मा की नै बड़ी बिनमता से निवेदन किया— 'बाबा तुम्हारे चरणों की कृपा से धर्म निर्वाह होगा। धरने माता-पिता की मायनाओं धीर भारतीय संस्कृति की मर्यादा का ध्यान कैस रखा बाडा है, धर्मा की उरके प्रताक ये।'

कवि माता का सुनपती माया के लक्ष्मीकण्ठ धीर विन्दी के 'अमरगीत लक्ष्मीकण्ठायी घादि कण्ठ्य थे। पहले तो वे धाकापुर में किराये के मकान में रहीं परन्तु बाद में धीरे-धीरे वैसा जाइकर एक मकान बनवा लिया था। तबल ही भी कपो-कपो उनको वैसा भेजने से बिसका से दाय्यत मित्यमिता के साथ उपयोग करती थीं। वे अपने मकान को धाकापुर के वैष्णव मन्दिर को बान कर गईं। वे थी रामोदरदाम भासानी के यहाँ पर ही भवमर रहती थीं।

उनकी मत्यु की गोया, धी रामोदरदाम भासानी के लक्ष्मी में इस प्रकार है— 'ता० २३ दिसम्बर, १९६० का उम्होंने मायकास भगवान के दर्शन किये धीर एधि ८-९ बने एक क्या-मार्ग्य घादि का साम लेकर घर पर धाकर सो गईं। प्राय काल ६-मात बने भदवान के दर्शन का ने नहीं धाईं तब लोगों ने जाकर इनको पुषारा परन्तु घर के किराड ता रीनों तरक से बन्द थे धीर धन्वर से माँ ने बोई उठर नहीं दिया। तब लक्ष्मी ने धाकर मुझे लखर सी में तुलन वहाँ पहुँचा। बाहर से माँ को पुषारा परन्तु बाई उठर नहीं लिया। कण्ठ में मिन्दी की कुलबाबर धीर किराड का बुन्दा बुन्दाधर धन्वर जाकर वैसा तो 'माँ एक कण्ठ पर धयन कर रही थी। मुठ धाग ब हास्यमय था ब हास्य में भयकधानस्मरण की माना थी। स्वाम-जाड़ी बन्द थी। पहले तो माता का बिषय छहन नहीं होने से मुझे दाय्यत कुछ हुआ— क्या बई ? कैने बई ? कुछ भी कसम नहीं पड रहा था परन्तु कण्ठ में कर्तव्य का स्मरण करके कि बाबूकण्ठ को उमी समय ठार स लखर सी। परन्तु बासकण्ठ बहुत दूर था।' माताको का बाह-मैस्कार थी रामोदरदाम भासानी के पुत्र में किया।<sup>१</sup>

कवि पर पिता की धीरेसा माता का धर्किक प्रभाव था। पिता का वैशान्त हम् १९२१ २४ में ६० ३० वर्ष की अवस्था में हुआ था।<sup>२</sup> 'नबीत की नै, धी रामोदरदाम भासानी की सिरी अपने एक वन में अपनी माता की के विषय में लिखा है कि 'मेरे बीवम में जो

<sup>१</sup> धी बीमिवाल गुठ—'ईमिक प्रताप', २वा बाबूकण्ठ, ६ वर्ष, १९६०, पृष्ठ ३।

<sup>२</sup> धी रामोदरदाम भासानी का मुझे लिखित ( दिनांक २६ ६ १९६१ का ) पत्र।

<sup>३</sup> धी रामोदरदाम भासानी द्वारा काल।

<sup>४</sup> बही।

कुछ भी सर्कलित, सुन्द, मयुर सत् एवं विष का घंघ है, वह सब जीवी का वरदान है।<sup>१</sup>

कवि-वस्ती—कवि की वर्तमान विधवा-वस्ती भीमती सरसा धर्मा का सम्बन्ध एव १९४९ से हुआ। विवाह-पूर्व कवि ने उनके प्रणयाकुल हृदय से यह प्रश्न किया था— 'मैं तुम्हारी पिता को उन्नत का हूँ—अपनी भविष्य की दृष्टि से इस पर तो विचार करो। 'नवीन' की क कवि-हृदय को यह उत्तर सुनकर बिलसता प्राप्त हो गई थी— 'क्या आपको विश्वास नहीं है कि यदि कोई दुर्घटना हो जाए, तो मैं एक द्विगु-विधवा की तरह अपना जीवन जीवन व्यतीत कर सकती हूँ।' प्रणय के संगम पर यह प्रेम-संगम हुआ था। 'नवीन' को की धारा सरस्वती के समान सूख गई।

भीमती सरसा देवी धर्मा एक प्रोफेसर की धारमाता हैं और एम. ए. हैं। सम्प्रति वे नई दिल्ली में रहती हैं।

भासाणी परिवार—कवि का धारापुर के भासाणी परिवार का सात बड़े पुराने व पवित्र सम्बन्ध रहे हैं। सेठ भगवानदास जी भासाणी कवि-पिता के पुण्डित मित्र हैं। इन्हीं के तीन पुत्र—सर्व भी अमनादास भासाणी रामोदरदास भासाणी और गोपालदास भासाणी कवि के प्रारम्भिक जीवन के धन्य रहे हैं। श्री रामोदरदास भासाणी की विधवा हुआ रही। इन्होंने कवि को पढ़ाया सिखाया।<sup>२</sup> सम्प्रति भी अमनादास भासाणी उज्जैन में हैं ही और भी रामोदरदास भासाणी एवं रामदास भासाणी इन्डोर में हैं। अमनादास जी एवं रामोदरदास जी कवि के धर्मपुत्र भी रहे चुके हैं। कवि ने रामोदरदास जी के विषय में लिखा था कि 'धीपुत्र रामोदरदास जी द्वितीय साहित्य के मर्मज्ञ तथा ब्रह्मर्षि के पूर्ण परिचित हैं।<sup>३</sup> कवि के समूचे परिवार का यही पर ही प्रथम निवास था। नवीन को इस परिवार के प्रति धार्मिक श्रद्धा एवं भ्रष्टाणु बने रहे। भासाणी परिवार के अनेक व्यक्तियों का कवि ने धारा सरस्वती के विषय और छोटों का सुभाषण दिया।

विद्यार्थी-परिवार—नवीन जी के गणेश जी और उनके कुटुम्ब के साथ पारिवारिक सम्बन्ध थे। गणेश जी ने ही वासुदेव्य को व वासुदेव्य धर्मा नवीन के रूप का बचन पहनाया। 'नवीन' जी ने उनके विषय में लिखा है कि 'मुझे पण्डित क्यों तक धर्म्य मण्डल वरर जी विद्यार्थी के घरलों में बैठने का उनके मैत्र्य में काम करने का उमरी प्रेरणा मे वारदात की और अग्रगण्य होने का सोभाष्य प्राप्त हुआ है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मुझे उनके मदद भूमत धारमा मात्र तक देखने को नहीं मिला। मैं एग बात पर सर्व करता हूँ कि मैं नर-वाररणी हूँ। एक निगाह में साधों का ठोस सेना हूँ। गणेश जी-सा नरवर मैंने मात्र तक नहीं देखा।<sup>४</sup> गणेश जी से हुई प्रथम भेंट का कवि ने बड़ा रोचक वर्णन दिया है।

<sup>१</sup> 'नवीन' जी का मैं दिवंगो से (विभाह ४ १ १९४८ का) श्री रामोदरदास भासाणी को लिखित पत्राणि पर।

<sup>२</sup> साप्ताहिक 'विद्युत्काल', १० जुलाई, १९६० पृष्ठ १२।

<sup>३</sup> साप्ताहिकों की धारमाणा, पृष्ठ ८५-८६।

<sup>४</sup> प्रभा, साप्ताहिक विप्लविणी, धनस, १९२४, पृष्ठ ३३३।

<sup>५</sup> विमलन, स्वर्णि-धंज, पृष्ठ १११।

श्री माधवनाथ जगन्नेत्री ने सर्वप्रथम उन्हें १९१६ ई० की सखनऊ कांग्रेस में मिलायी।  
 कवि ने गणेश जी को यह कथना की थी कि वे डॉ. माई-सू. फुल जैसे यवान होगे विद्याभ  
 उपाय बाँधते होंगे, हाथ में एक भारी सठ रखने होंगे। मुँह में महातरणप्रदान की तरह ऐंठी  
 हुई होंगी। परन्तु अब उन्हें देखा ता वे निकले निहायत ही मझासे या लिगने कर के दुबले  
 लठसे युक्त। गणेश जी ने धर्मा जी का इस रुपये लिये ताकि वे कांग्रेस का टिकट अर्पण करें।  
 धर्मा जी ने फिर क्लृप्त अर्पण देखा। गणेश जी का भाव में जानकर बुध हुआ कि धर्मा जी  
 बिना कम्बल के ही ठण्डी रातों में सिद्धुइते रहे। प्रथम जेट में हा गणेश जी के प्यार के मयल  
 ने धर्मा जी के हृदय का पराभूत कर लिया था। अब दूसरी बार सन् १९१७ में सदा के  
 लिए धर्मा जी का वातपुर गये ता गणेश जी कार्य-व्यस्त तथा दृष्टि-दाय के कारण व्याप्त  
 न थे सके। इस पर धर्मा जी को कुछ सपा। परन्तु बाद में जब गणेश जी ने पहिचाना तो  
 धर्मा जी से विनया लिया और फिर सन् १९११ ई० तक वे उनके हृदय में दूर नहीं हुए।  
 उन्होंने धर्मा जी को नेता केवच पत्रकार, प्रमुखा रहनुमा सब कुछ बना दिया। मनीष जी  
 ने प्राचार्यण सिद्धकर धर्मा जी का भावमौनो धमर-धर्मावलि धरित की। धर्मा जी  
 धर्मावत गणेश जी के लक्ष्यण बने रहे। गणेश जी की मृत्यु के पश्चात् धर्म धरनी  
 धर्म के बाद भी धर्मा जी ने विद्यार्थी-परिचार के प्रति धरनी धनस्त पदा व  
 सहयोगिता उदेती। धर्म की सरतों को धरने धर्ममय धर्मिक कर्तों से बुझकर उन्होंने उस  
 परिवार के प्रति धरने धार्या व धर्मिक की मीम-गाथा कह सी है।

धरना 'रिविरेका' धर्म्य संग्रह कवि ने धरने परमयिषी श्री हरिद्वार विद्यार्थी को समरित  
 किया है और विद्या है कि 'यह मरा एक मीत संग्रह है। यह तुम्हें समरित है। तुम्हारा मेरा  
 धर्मिक मय्यम है। उसके लिए मैं क्या कहूँ? तुमसे पराविष होने की इच्छा है और वह  
 मरा रहेगी नी। मध नैयत में तुमसे पराविष होकर मैं धर्म हुआ।' विद्यार्थी-परिचार के धर्म  
 मय्यों पर कवि का मृदु-मय्य प्रेम बना रहा।

मित्र मण्डला—कवि ने धरनी धर्म-धर्या में धरने मित्रों व सहकायियों का  
 उल्लेख किया है। इसक धर्मिक धर्म्य मूर्तों से भी इस सम्बन्ध का मान प्राप्त होता है।  
 उनका विरलेक्य या बली में सङ्घ ही किया जा सकता है। —

धर्म-मण्डलो—धर्मपुर विद्या-धर्म में कवि के मित्रों में रामू बाबा रामजी  
 धर्मन्त विद्वान्, गोविन्द धर्मन्त बाबा धर्मि धर्मि।<sup>१</sup> इनका बाळ प्रीधर्मों से कवि को धर्म  
 धर्मिता व उल्लेखिता प्राप्त हुई।

उत्तम क धर्मन्त-धर्म में कवि के मिय धर्म्य मित्र'धर्मू' व 'दो' रहे हैं।<sup>२</sup> उनकी  
 धर्म्य-धर्मि ने धर्मा जी को वेदना प्रदान की और हृदय का धर्म्य से धर्म बना दिया।  
 कवि ने इनकी धरनी धर्मनायक धर्मन्त धरित की थी।

१ 'विद्यार्थी' पृष्ठ ११०-१११।

२ 'रिविरेका', धर्म्यर्था।

३ 'धर्मिकधरनी' की धर्म्यधर्या, पृष्ठ ८१-८२।

४ कवि पृष्ठ ११-१२।



तरुण-महदनी—प्राने कानपुर प्रवास व स्वामी निवास के प्रारम्भ में कवि के धर्मिक मित्र व सहाय्यामी रहे। कालेज-जीवन के दिनों में वर्मा जी ने श्री डमार्चकर बीलिंग को बड़े स्नेह से स्मरण किया है। बीलिंग जी व श्री अग्रभास जोहरी ने सन् १९१० व १२ में बम्बई में राष्ट्रीय व्याख्यान का संवादन किया। 'नवीन' ने उनके विषय में लिखा है कि 'मेरी श्रिष्टी श्री सबसे श्रेष्ठतरीन प्राणियों में डमार्चकर का स्थान बहुत ऊँचा है। वह मेरे लिए सब कुछ है। वह मेरे मित्र है, सखा है पत्र-प्रत्यर्क है और मेरे मित्र का श्रेष्ठतरीन रूप है।'<sup>१</sup>

'नवीन' जी के कालेज-जीवन के अन्य सहायियों दिनों व स्नेहियों में श्री डारका प्रसाद मिश्र<sup>२</sup>, श्री सन्तुषारण प्रजापति<sup>३</sup>, श्री सबमोहन त्रिपाठी<sup>४</sup>, श्री कालिकाप्रसाद बीलिंग 'कुमुदाकर'<sup>५</sup> धारि हैं। श्री डारकाप्रसाद मिश्र—'नवीन' जी डॉ० पीएच वर्मा और अपने को श्री मस्केटियर्स<sup>६</sup> मानते थे।<sup>६</sup>

(ग) दीनानिधुन-सामाजिक-राजनेतिक सम्यग्—विद्या-गुरु—कवि पर उसके विद्या गुरु प्राज्ञेश्वर धर्मेश व मिलिन्द इबलस का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है।<sup>७</sup> इन्हीं गुरुदेवों से उसने निष्ठा, कर्तव्य भावना व अनुयायन बृत्ति का पाठ ग्रहण किया जो कि उस के जीवन की विशेषी है। इन बातों गुरुओं के विषय में 'नवीन' जी ने लिखा है—

"I can, even at this distance, gratefully recall the figures of two great good teachers who gave us what we had not. Malis Stuart Doughlas and Edwin Warring Ormerod, the two men of 33 coin and a postatic fervour, men of real sympathy and deep understanding are unforgettable. To sit at their feet and to try to learn from them was a priviledge. Doughlas was our Principal and teacher of English, Ormerod was our vice-principal and taught us Ancient History and Philosophy. I cherish their memory with devotion. xxx In our formative years Doughals and Ormerod gave us much that was necessary to make men of us. Forth rightness courage, devotion to duty

१ 'बिस्तन', व्यक्ति-चंद्र, पृष्ठ ११२।

२ तराबनी, जुलाई, १९१०, पृष्ठ २०।

३ 'तराबनी', जून १९१०, पृष्ठ १७९।

४ साप्ताहिक 'शिशुस्तान', अडाबनि-चंद्र, पृष्ठ ३७।

५ साप्ताहिक 'सात', २९ मई, १९१०, पृष्ठ २।

६ 'तराबनी', जुलाई १९१०, पृष्ठ २२।

७ 'सातमकथा', पृष्ठ १११।

and upright conduct emanated from them as light from a lanterns We felt the glow We are grateful to them"<sup>1</sup>

'नवीन' की के विद्यार्थी-कल का एक संस्मरण है। दर्शन के प्राचार्य मार्सेड छात्रावास के सरोकार थे। एक बार उन्होंने यह नियम बताया कि का विद्यार्थी रात में छोटे समय बिजली बलती छोड़ देना, उसे पीछे खपे का बल्ब रिमा जायेगा। एक दिन रात में 'नवीन' की ने मार्सेड के गृह में बिजली बलती देखो सो वे उसी समय घर में गये और स्वयं ऊनी बलती पकड़ ली और स्पष्टतापूर्वक बता मा दिया। यह उनकी निर्भीकता का दृष्टान्त है। इसका गहन-निश्चलनशील व्यक्ति थे और 'नवीन' का दार्शनिक रूप बहुत कुछ उन्हीं का ही प्रदेव है।

प्राचार्य बगसस अपने विनोदी थे। वे समय और सुपंस्कृत थे। वे विनोदी स्वभाव के भी थे। बासहृण्य छात्री के हस्ताक्षर पढ़ाए होने के कारण वे कबतर इस बात पर शंका करते थे।<sup>2</sup> 'नवीन' की अपने प्राचार्य के विषय में लिखते हैं— 'A hefty Sportsman a shrewed administrator, a man of broad sympathy and deep under standing with a mischievous twinkle in his benign eyes, Douglas took us by storm Meticulous in his choice of synonyms Douglas would send a thrill through us while explaining Bacon or Shakespeare or Milton or other Masters. xxx His fund of humour of was really astoundingly limit less'<sup>3</sup>

प्राचार्य बगसस ने श्री बासहृण्य के विषय में लिखा था —

"H K.—Ardent, ready of speech, skilled in debate, was already showing promise that would had to exalted place"<sup>4</sup>

बनपुर-महजली—बामपुर के पुत्रनीय महाशय कातोमाय जो का कवि पर गह्रा प्रभाव पड़ा। गणेश जो भी उन्हें बहुत मानते थे। पदोन जो ने लिखा है कि "महाशय बनगीनाय ने उन दिनों जिस तरह मेरे मस्तिष्क को परिपक्व करने में सहायता दी वह

1 Christ Church College, Kanpur Diamond Jubilee Magazine 1902 Shri Balkrishna Sharma 'Navin, And I also ran P 83

2 श्री पर्यावरण बीडिल, नई दिल्ली से हुई प्रत्यक्ष घेंट ( दिनांक २२ ५-१९९१ ) में प्राप्त।

3 श्री जयवनीचरण वर्मा द्वारा प्राप्त।

4 श्री स्वामीदास बिगारी द्वारा प्राप्त।

5 Christ Church College, Kanpur Diamond Jubilee Magazine 1952 Page 85

6 Christ Church College Magazine, 1957 58, Rev M S Douglas, 'As it was then, page 3

मासौवन कुजहडापूर्वक स्वरण करने की वस्तु है।" इनके प्रतिरिक्त भी नारायणप्रसाद चरौड़ा<sup>३</sup> की शिबनारायण मिश्र की वैभवत शास्त्री, श्री सुरेशचन्द्र मूढाचार्य, डॉ० सुरागीताल डॉ० जवाहरलाल रोहृणवी भारि से भी 'नवीन' की के सम्बन्ध सम्बन्ध रहे।

महसमा गान्धी—गान्धी जी का वर्णन जी पर काफी स्नेह था। नवीन की अपनी धारणा गान्धी जी का गवा' कड़ा करने से।<sup>४</sup> गान्धी जी ने कवि के काव्य और जीवन को बड़ा प्रभावित किया है। अपने वैयक्तिक जीवन में वर्णन जी ने कभी कभी अपने प्रकृति व निष्ठा के अनुसार गान्धी जी का विरोध किया था परन्तु उनके यज्ञ में कभी भी सेतु-मात्र कभी नहीं आई। बासकृष्ण में वे गान्धी जी के मजबूत थे। गान्धी जी का प्रभावार्जन करते हुए 'नवीन' जी ने लिखा है कि 'हमारे साहित्य पर हमारे काव्य जन्मास कथा-साहित्य पर, हमारे विद्वान् एवं शालीनता-साहित्य पर, गान्धी के महामहिम व्यक्तित्व की, उनकी प्रकृतिक कर्मठता को उनके अनाशन किन्तु निरत सब सिद्धांतों की समित छाप पड़ी है।<sup>५</sup> गान्धीबादी के नरस उद्घोषक 'नवीन' जी ने ठीक ही लिखा था कि चोड़ा पत्रन की खाई की घोर शोका था रहा है। गान्धी अर्थात् वे गया 'हे राम ! ? हम क्या समझे ? कदाचित् कुछ न समझे। पर, समझना है। गान्धी की पुकार को समझना है और स्मरण रहे—देश के प्रत्येक जन को समाज के प्रत्येक भंग को पूर्वोक्ति को अग्रणी की कृपण को सम्पुलित प्रायः अनीशों को, समाज सेवक को, अज्ञानी को सबको गान्धी का यह अर्थात् हृदयमय करना है।<sup>६</sup> कानपुर की एक समा में गान्धी जी बोस रहे थे और माहक में पढ़ाई था गई। इस पर वर्णन जी के मन से माहक कार्य सम्भव किया गया।<sup>७</sup> द्वितीय के विषय में गान्धी जी के पत्र का अनुगमन 'नवीन' जी ने नहीं किया।

नेहरू-परिवार—'नवीन' जी के श्री जवाहरलाल नेहरू और उनके परिवार से पुराने व घनिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं। वे मोतीलाल नेहरू से भी बहुत परिचित थे।<sup>८</sup> 'नवीन' जी ने तरकालीन अवाध गान्धीय परिस्थितियों में सं० मोतीलाल नेहरू का मूल्यांकन करते हुए लिखा था कि देवगन्धी हस्तगत निरत अज्ञानि मार्ग की विस्मृति पीड़ा व वैश्यामय बोधे, समय समय पर अन्ध शत्रु के अज्ञाने, धातुजनों की वैयक्तिक श्रेष्ठार्थे रायकन की मोक्षिणी और मैत्रिमयन का सुधा से कार्य और वे समय ऐसे होते हैं या किन्ही न किन्ही अज्ञान हाथ की कृपण हुए दुःखी और अज्ञान का अज्ञान और मोक्ष सेने उनके बहुते हुए एक को देखने और

१ 'आत्म कथा', पृष्ठ ११२।

२ 'श्री नारायणप्रसाद चरौड़ा अभिनन्दन सम्बन्ध', सन् १९५०। श्री बासकृष्ण वर्मा, कुजनीय चरौड़ा जी, पृष्ठ ४-५।

३ 'तरकाली', जून, १९६, पृष्ठ ३८२।

४ श्री बासकृष्ण वर्मा 'नवीन',—'साहित्य समीक्षा' भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी ही है, पृष्ठ १८२।

५ बहो, साप्ताहिक 'विजयवाणी', हम विपर जा रहे हैं ? पृष्ठ ३।

६ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' पृष्ठ १५।

७ 'बहो', १९ अगस्त, १९६२, पृष्ठ ८।

उनके व्यक्तिगत भाग पर छात्रों के लिए लेप लगाते थे। सिप धामे बढ़ाते हैं। यदि ऐसा न होता, तो निराशा, दुःखने वनों का निराधार होकर गूट ही हो जाने का संदेह देती; और स्वेच्छाचारी यही समझते कि जो कुचले का सपने के उनके द्वारा कुचले जाने ही के लिए रथे रथे हैं। पंजाब में मोचला तथा एक की विपत्ता में न्याय और छात्रों के स्थापना का सामुदायिक रूप कारण करके भीगण छात्रों के रूप किया।<sup>१</sup> कहते हैं कि एक बार पीपुठ महावीर त्यागी के साथ प्रत्याप होने पर उन्होंने प्रान्त में प्रान्त में वं जब हरलास नेहक को नकी बाँटे गुना बी बी और बहादुरलास बी बी माता स्वर्णरामी नेहक की भासा पर वं बाह्यस्थ बी बी गुस्ता प्राप्त हुआ था।<sup>२</sup> जयपुर कांग्रेस में और पालियामेण्ट में भी नेहक बी से टकराने में 'नबीन' को ने कोई संकोच नहीं किया।<sup>३</sup> फिर भी नेहक बी धर्मा जो को बहुत चाहते थे। एक बार धर्मा बी सदन में कुछ ऐसी बातें कह गये जिनसे पक्ष का अनुशासन में घुसा समझ गया। एक बेने के प्रश्न पर विचार किया गया। एक न देने से अनुशासन नहीं रहता। एक ने कहा कि यह बालहृष्ट्य बीबन भर हमारे लिए कूम्हा रहा है। अन्तिम निर्णय नेहक बी पर छोड़ा गया। उन्होंने कहा— बालहृष्ट्य को बच देना ऐसा सगता है जैसे अपने पापको बच देना।<sup>४</sup> उन्हें बेताबनी मर दे दी गयी।<sup>५</sup> नेहक बी ने अपनी 'प्रामन्य' में धर्मा बी का उल्लेख किया है और जिनके ४० वर्षों से एक-दूसरे को सहमान प्रदान किया है। हिन्दी के प्रश्न पर 'नबीन' बी ने अपने उत्तर हिन्दी प्रश्न के कारण नेहक बी का धमसस कर दिया था।<sup>६</sup> कहते हैं संविधान-परिषद् के समय पार्टी की एक ममा में उन्होंने प्रयानमन्त्रों को यह कर निरस्त कर दिया था कि बाह्य होकर प्राय यह कहते हैं कि उन्हें धाय पर लायी नहीं गयी, यह भाषकी मानुमाया है? उन्हें भाषके भी पूर्वको पर धारी हो गयी थी।<sup>७</sup> इन सब धर्मों के होते हुए भी, स्वर्ण कवि के धर्मों में बहादुर से मुझे प्रत्यधिक प्रेम है। धाय देख रहे हैं—यह स्त्री (उमकी पत्नी) कितनी सुन्दर है पर यदि योका धाय ता व (मै) बहादुरलास के लिए अपनी सुन्दर पत्नी को भी योनी बार सके हैं।<sup>८</sup> नेहक बी ने उन्हें अपने छोटे बर्षों तथा जोरोंसे व्यक्ति के रूप में स्मरण किया है।<sup>९</sup>

धर्म का सन् १९२१ में सखनऊ बीन में नेहक बी का नाय रहा। वे नेहक जा को बहादुर भाई कहते थे और इनी दीर्घक से उन्होंने एक सुन्दर लेख भी लिखा था। 'नबीन' बी

- १ श्री बालहृष्ट्य धर्मा 'नबीन'—'प्रमा, मानवीय वं मोलीलास नेहक, जयपुरी, १९२०, पृष्ठ ४६।
- २ 'सरस्वती', जून १९६०, पृष्ठ ३८०।
- ३ श्री पूर्वभारतपाल व्यास—'दैनिक नई दुनिया', अखिर नबीन के प्रति, १६ मई, १९६०, पृष्ठ ३।
- ४ श्री मैथिलीधरल गुप्त—'सरस्वती, बालहृष्ट्य धर्मा 'नबीन', जून, १९६०, पृष्ठ १००।
- ५ साप्ताहिक 'सन्धि' १८ मई १९६० पृष्ठ ७।
- ६ 'नबीन', पृष्ठ ३।
- ७ 'बिम्बन, इमनि धर्म पृष्ठ ६७ से उद्धृत।
- ८ श्री बहादुरलास नेहक—'भारतवाली विपिन', सन् १९६०, 'नबीन'।

कहते थे कि बासकृष्ण धर्मा को तो बाराहुर माई मुझ समझते हैं। 'श्रीमती कमला नेहरू' एवं श्रीमती बिजयसक्ती वरिष्ठ के प्रति भी कवि के मन में सद्भाव रहे हैं। कमला नेहरू कवि की कमला मामा' थी।<sup>१</sup> श्री नर्मदेवर जगुंजी से घटने एक संस्मरण में लिखा है कि एक प्रीतिभाव में देव क बड़े-बड़े नेता सम्मिलित थे। बिजयसक्ती जो प्रत्य सद्योगियों सहित बिना पिना रही थी। नबीन जो अपने साधियों के बीच हँसी-मजाक के साथ कहकहे तथा रहे थे। इसी बीच बिजयसक्ती जी उबर घा निकली। पता नहीं उन्होंने क्या समझ करते हुए बोल उठी— माई साहब के पास छोड़ें हैं किन्तु मन रंगीन। नबीन भी ने छूटे हीरुहा 'माई का ही नहीं बहुत का भी। इस पर मनी समवेत स्वर से बेर तक हसते रहे।<sup>२</sup> श्रीमती इन्दिरा गान्धी के थे 'बाबा' थे।<sup>३</sup> अपनी 'इन्दु बेटी' को उन्होंने अपना प्रथमक नामक गीत संग्रह समर्पित किया है। उसके समर्पण में लिखा है 'जिसे दिन तुम्हारा विवाह हुआ था उस दिन धनक बनो मे तुम्हें मेट उपहार समर्पित किये थे। मैं निर्दोष मन मसोस कर रह गया। तुम्हें क्या देता? उद्यो दिन सोचा था अपनी कोई इति हूँगा। इतने दिन बीत गए। आज यह धनकर धारा है। यह प्रथमक' नामक मेरा गीत संग्रह स्वीकार करो है।<sup>४</sup>

शाबाय बिनोबा भाबे—धर्माजी बिनोबा जो के मूल थे। उन पर सन्त बिनोबा के दर्शन का काफी प्रभाव पड़ा है। व्यक्तिगत रूप में भी वे बिनोबा भाबे के सिद्धान्तों का प्रचार करते थे और प्रवचन देते थे। कवि उनके शास्त्रार जरण-स्वर्न को अपने जीवन की सफ़लता के रूप में धारिता है। उन्होंने लिखा है कि बिनोबा एक महान् नैतिक भक्तिपुत्र हैं। मैं उन्हें श्रीरंगसुक्त मानता हूँ। उनकी धारमोपसम्भि की साधना निस्सन्देह प्रत्यन्त प्रचार निताम्न एकनिष्ठ निवातस्य वीन-सिद्धात्पुं धनिकिता एवं धर्मय है। कर्म-सन्धास उनको सहज सिद्ध हो चुका है। \* कवि को यह धरा तथा प्रदूट भक्ति उसकी काव्य कृति 'बिनोबा-स्तवन' के रूप में साकार दिखाई पड़ती है।

भाई वीरसिंह<sup>५</sup>—नबीन जी पञ्जाबी के प्रसिद्ध साहित्यकार भाई वीरसिंह से भी प्रभावित थे।<sup>६</sup> उनके विषय में कवि ने लिखा था कि 'भाई वीरसिंह उन गुरुजनों में हैं जिनके चरणों के समीप बैठकर मुझ जैसे मानव अपना जन्म सफल कर सकते हैं। भाई साहब वीरसिंह जी उस सन्त परम्परा के वरिष्ठ हैं जो हमारे देव में राजानियों से बसी धार ही है।'<sup>७</sup>

१ 'बीछा', स्मृति-संक, ४५३।

२ 'बिबासि', पृष्ठ ३८-३९।

३ 'पवित्रत नेहरू', कमला मामा, पृष्ठ २६३०।

४ 'कृति' मई १९३० पृष्ठ ५९।

५ 'बीछा', स्मृति-संक पृष्ठ ४५६।

६ 'प्रथमक', समर्पण।

७ 'बिनोबा-स्तवन'—सन्त बिनोबा, पृष्ठ २।

८ 'भाई वीरसिंह धर्मितम्बन प्रबन्ध', पृष्ठ १७३-१८९।

९. श्री बासकृष्ण धर्मा 'नबीन'—'साक्ष्यप्रवाही-प्रसारिका', भाई वीरसिंह, धर्मन ज्ञान, १९५७, पृष्ठ १०-२३।

१० 'वीर बचनावली', कवि चरित्र, सन् १९५९।

प्रयाग—स्वर्गीय राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था कि 'यह कहना मुश्किल है कि नबीन जी को राजनीति साहित्य-क्षेत्र में से धाई या उनकी साहित्यिक प्रतिभा उन्हें राजनीति में ले आई। उनके लिए देशसेवा और साहित्य-सेवा दोनों में कोई फर्क नहीं था।'<sup>१</sup> डॉ० राधाकृष्णन जी उनके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व के कामल थे। उन्होंने धर्मा जी को एक स्टेडी एग्जम के रूप में स्मरण किया है।<sup>२</sup> राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के साथ नबीन जी सन् १९२१ में ससनरू-बेल में रहे थे। तब से उनका परिचय स्वभाव बढ़ा गया। दिल्ली के प्रश्न पर धर्मा जी ने टण्डन जी का साथ दिया था परन्तु धर्मों के विषय में उनसे मतभेद हो गया था। टण्डन जी के साथ धर्मा जी सन् १९४१ में केन्द्रीय कारागार बरेली में भी रहे थे।<sup>३</sup> टण्डन जी ने धर्मा जी पर बर्ताना में कहा है कि मुझे उनकी ओर सदा मातृवत् स्नेह रहा। उनका सा स्नेहमय ज़बान कल्याणपूर्ण और त्याग के लिए तत्पर-हृदय बहुत कम देखने में आया है।<sup>४</sup>

श्री रफी अहमद किरबई के साथ धर्मा जी के बड़े अच्छे पारिवारिक व राजनैतिक सम्बन्ध रहे हैं। वे राजनीति में सबसे रफी अहमद किरबई के साथी रहे हैं। नबीन जी के इन प्रज्ञापनिक निबन्ध में एक कारण किरबई जी की मृत्यु भी थी। उनके देहान्त से वे एक प्रकार से टूट गये थे। मन से वे अपने आपको एकाकी अनुभव करने लगे थे। रफी साहब के सम्पर्क में कबि सन् १९२० में आया। सन् १९२१ में ससनरू के जिला कारागार में उनसे निष्कट का साक्षात्कार हुआ। इस प्रकार दोनों का '४ वर्षों का साथ रहा। उनकी मृत्यु पर कबि ने लिखा था कि 'इस देश में एक नेता खोया एक सासक खोया। लेकिन सहस्रों जन ऐसे हैं जिन्होंने अपना धामय-राहा खोया और अपना मधम खोया। और मैं भी उन सहस्रों में से एक हूँ।'<sup>५</sup> बाबा के नाम से वे रफी साहब को धराने से बहुत धराने पाते थे। जो काम धर्मा जी नहीं कर सकते थे वो रफी साहब से कराते थे। बनपुर के देहात के एक पुराने देशभक्त को नबीन जी ने स्वयं हीन सी रूपसे और रफी साहब से पाँच बी रूपसे लेकर इस प्रकार कुल पाठ ही सचे, उनके भरण-पोषण के हेतु मँच लीखने के बाले बिलबा दिये थे।<sup>६</sup> रफी साहब के साथ धर्मा जी सन् १९४१ के धराने बरेली कारागार के परिचित में भी रहे थे।<sup>७</sup>

सरदार बल्लभभाई पटेल धर्मा जी की योग्यता में आस्था रखते थे। यदि बल्लभभाई कुछ दिन और जीते तो धर्मा जी को अवश्य ही कोई उच्चनायित्व व महत्वपूर्ण मन्त्री पर प्राप्त हो जाता। श्री मोक्षमार्ई महु कहा करते थे कि मुक्त पक्षी बालहृन्म से सरदार प्रसन्न रहते

१ आन्तरिक 'हिन्दुस्तान', अज्ञातलि-वर्क, पृष्ठ १६।

२ वही पृष्ठ ४।

३ 'किमोबा-स्तवक', भूमिका, पृष्ठ ६।

४ 'बीला' दम्बि-वर्क, पृष्ठ ४८०।

५ श्री बालहृन्म धर्मा जीवनी — 'साक्षर', हीन-वाग्नु रफी अहमद किरबई, बनबरी १९५५, वर्ग १०, पृष्ठ २५-२६।

६ 'बीला', दम्बि-वर्क पृष्ठ ४५६-४६०।

७ किमोबा-स्तवक पृष्ठ ४।

से।<sup>१</sup> कवि के मौलाना प्रह्लादलाल, आजाद तथा बाबा साहेब मावसंकर से भी अच्छे सम्बन्ध रहे। कवि के जेल के साथी श्रीकृष्णदास ने लिखा है कि 'नवीन' की नैनी जेल के कुत्ता बैरक में मौलाना आजाद से अन्तर विभिन्न विषयों पर जुम-मिलकर बर्षों जिया करते थे।<sup>२</sup> सन् १९४२ में उन्होंने राष्ट्रपति का दैतिक जेल जीवन दीर्घ करने लेख में मौलाना आजाद की दिनचर्या और सठठ अभ्यसन का वर्णन किया है।<sup>३</sup> 'नवीन' की से लोक-सभा के अध्यक्ष भी मावसंकर महोदय को दस वर्षों तक (सन् १९४६-१०-५६) निकट से देखा। कवि के यथानुसार वे सुलझे, सम्बुद्धि और सहरे समवेदनात्मक सुखेच्छक थे। बाबा साहेब मावसंकर भी का जीवन एक सफल जीवन था। उष्णकोटि के बर्फीय जलवायु के विश्वास प्राप्त गान्धी-भुगीन राजनीति के प्रचली दश लोकसेवक सद्गुरुत्व और रचनात्मक कार्यों के उन्नायक मावसंकर महोदय हमारे देश के बहुत ऊँचे मानकों में थे।<sup>४</sup>

श्री गोविन्द बल्लभ पन्त सात बहादुर छात्री महावीर त्यागी सारिक प्रती विधि नारायण शर्मा योशीनाथ श्रीवास्तव श्रीवाचरण सिंह मोहनलाल मोहन कृष्णदेव मालवीय मुञ्जकर हुसेन रणजीत शीताराम पण्डित डॉ. सम्बुद्धिन्ध गंगाधर परीश जोर हूरवताथ कुंजरक प्रहल्लाल छात्री पारि राजनीति व समाज के गम्भिरान् व्यक्तियों से उनके सम्बन्ध अपने कारावास अभिवास या राजनीतिक कार्य-कलाओं के कारण थे। अपने कारावास के जीवन में शर्मा जी सारिकप्रती व लालबहादुर शास्त्री की बहुत सजाक उड़ाया करते थे क्योंकि वे जेल में सबसे छोटे थे।<sup>५</sup> श्री अवधुताथ छात्री ने एक बार 'नवीन' जी के विषय में अपने सामान्य बार्थानाप में कहा था कि 'बुम्हादा और कैला मूमता हुआ बत रहा है। मे दिव्यगी भर से राजनीति में इस कम्बल का विरोध कर रहा हूँ और यह हमेशा मुझ पर उपकार ही लायता था रहा है। जिस दिन यह भावनी नहीं रहेगा मेरे प्रवेश का सबसे बड़ा फोकेट फ्रीजदार बना बायबा। हर समय दूसरे के लिए त्याग करने को तैयार।<sup>६</sup> एक बार कानपुर के फूटबाय की एक सार्वजनिक समा में शर्माजी ने श्री गोविन्द बल्लभ पन्त का स्वागत हतमी प्रोजेक्ती व प्रभावपूर्ण वाली में किया था कि कानपुर वालों को प्रसन्नता हुई थी कि शर्मा जी ने पन्त जी जैसे ब्रेष्ठ बागी के मुकाबले में नगर श्री साज रख ली थी।<sup>७</sup> इसी प्रकार श्री हूरवताथ कुंजरक के कानपुर में डबार-नीति के पक्ष में बोसने के बाद शर्मा जी ने छठी सभा में भाषण दिया। इसमें उन्होंने कुंजरक जी के धारम-स्याय पवित्रता और विद्वता की काथी प्रशंसा की लेकिन उनके समस्त तर्कों का सुन्दरता के साथ सख्तन कर दिया।<sup>८</sup> इस प्रकार के कई प्रसंग शर्मा जी के जीवन में अपने व्यावहारिक सम्बन्ध-क्षेत्र में घाये थे।

१ 'लापनाहिक 'हि-डुस्तान', १० जुलाई १९६०, पृष्ठ २६।

२ 'प्रयास पत्रिका' २२ मई, १९६१, पृष्ठ १।

३ 'आयाती कल', जमाई, १९४५, पृष्ठ ११।

४ 'त्रिपत्रवा' मार्च, १९५६, पृष्ठ ६२-६३।

५ 'प्रहरी', १६ अक्टूबर, १९६०, पृष्ठ ६।

६ 'बोला', समुलि-संक पृष्ठ ४५६।

७ 'नवीन', अक्टूबर, १९६०, पृष्ठ ६५।

८ 'बही', पृष्ठ ६४।

स्वर्गीय श्री कृष्ण बाल श्रीपरानी ने 'नबीन' की भी तुलना दीवोवन से की है। वे उनके संस्कार व मूल्यर व्यक्तित्व से बड़े प्रभावित थे।<sup>१</sup> श्री साहित्य समी सम्रां श्री के उदार दिल और काव्य-पाठ से बड़े प्रभावित थे।<sup>२</sup> लेड योबिन्सदास और 'नबीन' की हिन्दी के प्रस्त पर संसद् में सदा एकमत रहे हैं। सेठजी ने लिखा है कि 'नबीन' जो जब अपने काव्य वा स्वयं पाठ करते थे तब बहु दरार तों देवताओं के वर्णन के योग्य हाथा पा। उनकी मानमुभा, बाली का प्रोच, शशों का गाम्भीर्य तथा उनकी लमिउ स्वर सभी नबीनता रखते थे।<sup>३</sup> सन् १३२१ में सखनरु बैल में कवि का 'बाबा कृष्णमानो' से परिचय हुआ था।<sup>४</sup> वे दीवरी सुबेना कृष्णमानी को 'माभी' कहते थे।<sup>५</sup>

श्री का सम्बन्ध इत घनेतानेक संसद्-सदस्यों प्रांतीय मन्त्रोगण, राजकीय अधिकारीमण और राजपुरुषों को समाहित करता था। उन्होंने कितनी ही व्यक्तियों को सेवा में लयाया और अपनेको को समय-अपय पर मदद की। अतएव उनके मर्त्ये, अज्ञामुर्षों और स्नेहियों श्री कल्याणपण्डित है।

(घ) साहित्यिक सम्बन्ध—सामान्यतया 'नबीन' की की कवि साहित्यिकों में अधिक रही थी। उनके बलिष्ठ मित्रों की संज्ञा में भी साहित्यिकों का अधिक स्थान था। यद्यपि वे अरर से राजनैतिक व्यक्ति प्रतीत होते थे परन्तु मूलतः वे साहित्यिक ही थे। उनके संस्कार राजनीति के न होकर साहित्य के ही अधिक थे। साहित्यिकों में उनका कानपुर व नई दिल्ली के साहित्यिकों से, अधिक सम्बन्ध रहा। इसके अतिरिक्त उनके अपने मित्रों व गृहजों की संख्या सारे भारत में फैली हुई है। प्रायःक साहित्यिक के लिए उनका संवेदनशील हृदय सार समर्पित था। सबका व सहयोग देते थे, प्रेरणा देते थे और अपना स्नेह उदक दिया करते थे। सबको, ह्य विद्या में पत्रोत्तर देना वे अपना कर्तव्य समझते थे।<sup>६</sup> उन्होंने कई कवियों को बेदना या

१ कव० कृष्णबाल श्रीपरानी—'बीला', मेरे संस्करण, स्मृति-संक पृष्ठ ५२९।

२ श्री साहित्यसमी—'बीला', उच्छकोटि के दरगत नबीन, स्मृति-संक, पृष्ठ ५३६।

३ लेड योबिन्सदास—'बीला', नबीन की नर कर भी अरर हो गये !, स्मृति-संक, पृष्ठ ४८८।

४ 'मे इबसे जिना', पृष्ठ ५०।

५ 'मे अपनी मामी सुबेना से केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि मैंने किसी प्रमोदन के कारण अपने विचारों को बताने में विवशत नहीं किया है। —श्री रामा 'नबीन', पृष्ठ ६३५०।

Parliamentary Debates House of the People official Report 11th May, 1953

६ 'क्या हुआ कि मैं तुमसे परिचित नहीं? तुम्हारी धारणा से तो परिचित हूँ जो मानव-जात में उनाय होनी है। तुम्हारी यह संज्ञा निमूल है कि मैं आपसे तुम्हें तुम्हें बसकर पत्र का उत्तर न हूँ। मेरे पास जो पत्र आते हैं, उन समय उत्तर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। —श्री रामनाथप्रसद सिंह 'मसुदा' को विविध 'नबीन' की वा ( विभाक ८-१० १९५६ ) वर साप्ताहिक 'वाक', २६ मई, १९६०, पृष्ठ १०।



विद्योग की अपेक्षा राष्ट्रोत्थान की कविता करने की प्रेरणा व मार्गदर्शन दिया है।<sup>१</sup> नई कवियों की कविता-मुस्तकों में उनके घासीबाँद<sup>२</sup> एवं शुभकामनाएँ<sup>३</sup> भी पाई जाती हैं। इस प्रकार कवि ने अपने सर्वोत्तुकी व्यक्तिव और सहायता-कोश से प्रत्येक को यथासम्भव प्रफुल्ल, उत्कर्षधीन बनाने का प्रयत्न किया है। सांसारिक भात-प्रतिभात बेध-समीक्षा धारि से मुक्त कवियों को उनका स्नेहात्मक मुखित व सन्तुष्ट कर दिया करता था।<sup>४</sup> कवि के कतिपय प्रमुख साहित्यिकों के साथ सम्बन्धों का समाहार इस रूप में है—

कानपुर मसहफ़ी—कानपुर के साहित्य सेवियों में प० विश्वम्भर नाथ धर्मा 'कौशिक' बाबू मयवतीचरण वर्मा पण्डित गणपतिसाह शुक्ल 'सनेही धारि महानुवाचों से कवि का बलिष्ठ परिचय व स्नेह-सूत्र रखा है।

कवि ने कहा है कि "कानपुर में जब तक कौशिक जी जीवित थे प्रायः उनके यहाँ बैठक बना करती थी। जब ऐसा साधन नहीं रहा जहाँ बैठक-बाजी हो और मित्रों की चोंचें बड़े। बीबन में व्यवस्था से भी इसकी सुविधा नहीं रही।<sup>५</sup> कौशिक जी के निवास-स्थान पर कानपुर की साहित्यिक मण्डली संख्या समय बमती थी और वहाँ बुद्धिमान छनती थी। सभी स्नेही मिलकर साहित्यिक धामान-संवाप द्वारा मनोरंजन करके उस समय का सहुपयोग करते थे।<sup>६</sup> वहाँ पर छिटीपी भी सनेही जी, रमाशंकर प्रबन्धी प० बलिष्ठप्रसाद मिश्र धारि सभी एकजिह्व होते थे। इन सभी से धर्मा जी के स्वस्व सम्बन्ध थे। कौशिक जी की मृत्यु से कवि को धामात पहुँचा था।<sup>७</sup>

श्री मयवतीचरण वर्मा 'नवीन' जी के अत्यन्त प्रार्थनीय थे। धर्मा जी का धर्मा जी से परिचय प्रायः ४२ वर्ष पूर्व हुआ था।<sup>८</sup> यह निश्चय सन् १९१८ से प्रारम्भ हुई जब दोनों कानपुर में थे। उन दिनों 'नवीन' जी कानपुर के ब्राह्मण वर्च काव्य के इण्टर-मीजिएट कक्षा

१ "तुम्हारी कविता पढ़ी, अच्छी है। परन्तु यदि लघु-विद्योग की कविता न लिखकर राष्ट्रोत्थान की कविता लिखते तो बड़ा अच्छा होता। —श्री 'नवीन' जी का (दिनांक १२४ १९५३ का) पत्र।

२ श्री बाबूराज पालीवाल—'बेतमा' काव्य संग्रह, नवीन जी का घासीबाँद।

३ श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रवात'—'ज्वाला', 'नवीन' जी की मूमिका।

४ 'प्रायः सबके धामय सबके लहानक और सबके मित्र थे और सुभे तो अपने पात केवल प्रायः ही बिठाया था। पाद है, यहाँ से घाहूत हीकर में धरके सामने किन्तु प्रकार छटागटाता था और प्रायः धरे जहाँ पर किन्तु प्रेम से अपने पीयूष का लेप चढ़ाते थे।' — 'बिनकर' नवभारत दाहम्स', मिट्टी का बर प्रायः के नाम २६ जून १९६० पृष्ठ ३।

५ 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ३८।

६ 'बोलता' स्मृति-पत्र, पृष्ठ ३०३।

७ श्री बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' साप्ताहिक 'प्रवात', हा ! विश्वम्भरनाथ, (१८-१२ १९४५) पृष्ठ २।

८ श्री मयवतीचरण वर्मा—'काव्यमित्री', बालकृष्णवर्मा 'नवीन' प्रवेजक पृष्ठ १८।

में पढ़ते थे 'प्रठाप' में काम करते थे और कविता लिखते थे।' बर्मा जी भी ब्राह्मण स्कूल में पढ़ते थे।<sup>१</sup> 'नबीन' जी उम्र में बर्मा जी से प्रायः ४ या ६ साल बड़े थे। दोनों के कार्य क्षेत्र असब-असन रहे हैं। बर्मा जी ने लिखा है कि "नबीन व्यास-सा असम्भ्र हुभा व्यक्तित्व पा उनका। वहा असम्भ्र और असम्भ्र—ये दो शब्द अन्न जन पर पूरी तरह लागू होते थे।"<sup>२</sup> बर्मा जी ने 'नबीन' जी को महान् उदार व्यक्तित्व पाया है। वे परिचित-अपरिचित सभी की संस्तुति किया करते थे।

कानपुर की मण्डली के मित्रों ने बर्मा के प्रोत्साहनकारी वातावरण का निर्माण किया। बर्मा की प्रथम कविता भी इन्हीं मित्रों की प्रेरणा से प्रकाशित हुई थी।

'प्रठाप' परिवार से सम्बन्ध—कवि ने लिखा है कि 'प्रठाप प्रेस से सम्बन्ध होने के कारण ही पूरबीय असब भी मैथिलीशररर गुप्त जी, बाबू कुन्दाबनसास वरमा ५० सन्धीबर बाबपेयी, स्व० पं० बरपीबाब मह पं० बैकटेश मारमरर सिबारी धारि मित्रों सहित बर्मा का सम्बन्धकार हुभा।'<sup>३</sup>

श्री मैथिलीशररर गुप्त से कवि का परिचय सन् १९१६ की सनऊ कांग्रेस में हुभा था।<sup>४</sup> गुप्तजी ने लिखा है कि 'बासीय वर्ष से अधिक का उमरसे मेरा सम्बन्ध था। हम दोनों प्रथम परिवार के थे। निकटता के कारण वे उसके अभिभावक संभ बन गये।' घाट वर्षों से मिल 'नबीन' की सन्ध्या समय गुप्त जी के निवास स्वाम पर जाया करते थे और २३ पढे बैठते थे। अब सर्वप्रथम 'नबीन' जी ने गुप्तजी को देखा तो वे शाल पाय बांधे थे।<sup>५</sup> श्री मासनसास बगुर्वेरी ने गुप्तजी से बर्मा जी का परिचय करवाया था। उस समय बगुर्वेरी जी ने गुप्तजी के बररररररर किये थे और 'नबीन' जी को अपनी 'बुक' के रूप में बठाया था।<sup>६</sup> बड़ी बात 'नबीन' जी ने अपनी धारम-रुपा में भी लिखा है।<sup>७</sup> परन्तु मासनसास बगुर्वेरी के

१ श्री असम्भ्रीबररर बर्मा—'आसकल', बालकृष्ण धरमा 'नबीन', विसम्बर, १९५७, पृष्ठ ८।

२ श्री असम्भ्रीबररर बर्मा—'सरररररी', मेरे धारवीय 'नबीन', जून, १९६०, पृष्ठ १९१।

३ वही पृष्ठ १९४।

४ 'बिगत', इमूनि धक पृष्ठ १११।

५ वही पृष्ठ १०८।

६ श्री मैथिलीशरररर गुप्त—'सरररररी बालकृष्णधरमा 'नबीन' जून १९६०, पृष्ठ ३७७।

७ श्री बालकृष्ण धरमा 'नबीन'—'राधुकवि मैथिलीशरररर गुप्त अभिनयन-असब, एकादशमिष्ठ मैथिलीशरररर गुप्त पृष्ठ ३५३।

८ वही।

९. 'बिगत', पृष्ठ १०८।

बीबीअर ने इसमें तथ्य का प्रभाव देखा है।<sup>१</sup> 'नबीन' भी दहा के भारतीय थे। सन् १९३६ में भारतसभ्राद् पंचम बार्ब के रजत-जयन्ती-समारोह के समय सरस्वती<sup>२</sup> में जब गुप्त जी को सम्म-मत्त कहा गया था तब 'नबीन' जी ने प्रताप में उसका विरोध किया था।<sup>३</sup> सन् १९५२ में धर्मा जी ने अपने एक संस्करण में गुप्त जी को सनातन का पोपक पीर नबीन का अविरोधी कहा था।<sup>४</sup> 'नबीन' जो कई दिस्सी में गुप्त जी के यही अपने जाने के समय, धाटे-धाटे नियमित रूप से चरखुस्पर्श किया करते थे।<sup>५</sup> गुप्त जी के पुत्र अग्निशावरण का भी धर्मा जी के प्रति प्रभाव अनुत्पन्न था।<sup>६</sup> गुप्त जी ने 'नबीन' जी को अपनी अर्द्धांगिनि निम्नलिखित पंक्तियों से ही है :-

कहाँ प्रायः यह बन्धु हमारा,  
 नित 'नबीन' बिलकी रस-बाण—  
 धामोदित करती थी हमको,  
 उससे अर्द्धांगिनि की धागा,  
 रकती थी मेरी धमिलावा,  
 प्रणवुमी ही प्रिय है धम को।<sup>७</sup>

गुप्त जी के अनुबन्ध भी तियारामशरण गुप्त से कवि का बड़ा स्नेह था। 'नबीन' जी ने

१ 'राधुकवि मैचिनीशरण गुप्त अमिनन्धनग्रन्थ के द्वितीय खण्ड की भूमिका में भी बालकृष्ण धर्मा 'नबीन' ने मैचिनीशरण को माऊनसाल का मुक बतलाया है। जब माऊनसाल की लौटकर आये, उन्होंने मरे हृदय धोर भारी कण्ठ से सुझो कहा, 'धाम' मीने, अपने गुप्त बाबू मैचिनीशरण गुप्त के चरखु स्पर्श किये। 'नबीन' जी ने जसा स्वीकार किया है, इस संवाद में बहुत कुछ बड़ तथ्य नहीं है, जो होना चाहिए। माऊनसाल जी क यदि मुक हो सकते थे तो महावीरप्रसाद द्विवेदी, जो मैचिनीशरण जी के मी गुप्त थे। पर महावीरप्रसाद जी द्विवेदी को गुद-नाम में माऊनसालका ने कमी नहीं लिया। उनके जीवन में एक ही गुप्त रहे हैं और वे हैं पुण्यवर माधवराव जी सप्रे। माऊनसाल जी की धोर से मैचिनीशरण जी को अपना मुक मागना निस्सन्देह मुक की बात नहीं है। मैचिनीशरण जी धीर माऊनसाल को की धामु में केवल एक वर्ष से भी कम कुछ मास का धन्तर है। दोनों ही इस धामु में प्रपना-प्रपना कृतित्व प्रस्तुत कर रहे थे। हम-जन्म पूर्वकों में गुद-सिन्धु का माध सम्भावना से घी परे होता है।'<sup>१</sup>—की अरि अमिनी कौशिक 'बदधा' माऊनसाल अतुर्वेदी, माघ १, पृ० ३३५।

२ डॉ. कमलाकान्त पाठक—'मैचिनीशरण गुप्त व्यक्ति धोर काव्य' बीबी, पृष्ठ ५६।

- ३ 'द्विगुस्तान' साप्ताहिक, अगस्त, १९५२।
- ४ डॉ० नरेन्द्र के 'चेष्ट निबन्ध' पृष्ठ १५१।
- ५ वही, पृष्ठ १५४।
- ६ 'सरस्वती' जून, १९६० पृष्ठ ३७८।

'प्रज्ञा' के 'सियारामचरण गुप्त बंध' में लिखा था कि सियारामचरण श्री परिहास में कल्पे हैं। इसको मनोरंजक कहानी भी थी थी।<sup>१</sup>

श्री मैथिलीचरण गुप्त के काव्य का मूल्यांकन करते हुए 'नवीन' जी ने लिखा था कि "बाबू, मैथिलीचरण गुप्त का काल प्राचीन और नवीन—ये प्राचीन और नवीन शब्द यहाँ सापेक्ष दृष्टि से व्यवहृत हुए हैं—के बीच का सन्धिकाल है और श्री गुप्त जी उस सन्धि के मोड़क एवं विपाकक हैं। गुप्त जी आयरण-आस के प्रारम्भिक गायक हैं। उन्होंने धातु के सबेरे का साहजान किया है।"<sup>२</sup>

श्री माखनलाल बसुबेदी की भेंट सर्वप्रथम सन् १९१६ में रेल के एक डिब्बे में रिसयोर महीने में सखनऊ कांग्रेस वाले समय, 'नवीन' जी से हुई थी। उस समय शर्मा जी का उभाड़ा सिर उबलत सटाट साधारण घीर बेठरतीव पहिने काड़े हाथ में कान टक जाने वाली साठी उबाहुने पैर, घोर बीचन की परबाह न करिबासा घरीर था।<sup>३</sup> माखनलाल जी के प्रति शर्मा जी की बड़ी पूज्य भावना रही है। माखनलाल बसुबेदी जी स प्रथम भेंट का पत्रक निबधण नवीन जी ने दिया है। नवीन जी इन्हीं के साथ पहले छः रुपये किराये के कमरे में एक रात ठहरे थे जो प्रतिदिन के हिसाब से देना पड़ता था। इनके परबाह परोय जी के पास गये। प्रसा' के नियमित पाठक होने के कारण शर्मा जी का माखनलाल जी के इस रहस्य को जानने में देर नहीं लगी।<sup>४</sup> 'नवीन' जी फिर कई बार जम्बवा घाय घोर कनि सम्मेलन में शाम्भ-याठ भी किया। यह सन् १९२५ की बात है। इस समय 'नवीन' जी का गसा बैटा था फिर श्री कविता पढ़ी।<sup>५</sup>

शेनों कवियों ने कायवास की यात्राएँ सड़कर राष्ट्रीय काव्य के विमर्श में महान् योगदान दिया है।

मदनमूर, सन् १९२७ में श्री बनारसीदास बसुबेदी का सर्वप्रथम परिचय 'नवीन' जी से प्रयाग काव्यमय में हुआ था। यह परिचय गलेय जी ने कराया था। उस समय 'नवीन' जी काण्ट बर्ष कालेज क एक० ए० में पढ़ते थे। बसुबेदी जी ने अपने अधिपानवध प्रारम्भ में उनकी उपेक्षा की थी। फिर 'नवीन' जी अपनी रचनाएँ प्रयागनार्य विद्यालयारठ में बसुबेदी जी को भेजने लये।<sup>६</sup> नियत पत्रों से तबान थी (गिस्की में) की उनके साथ बड़ी पनीपठता हो गई क्योंकि वे अपने अधिनियम विनों में दो जगह संख्या समय जात थे—या ठी 'दहा

१ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अष्टावलि-घंटा, पृष्ठ २३।

२ श्री वासुदेव शर्मा 'नवीन'—'काव्यसापर' श्री मैथिलीचरण स्वर्णब्रह्मन्ती, मदन १९२९, पृष्ठ ३३७-३३९।

३ श्री माखनलाल बसुबेदी—'तररबती', रयाग का इमरा नाम वासुदेव शर्मा 'नवीन', जून, १९२०, पृष्ठ १७९।

४ 'विजय' हृदयि-घंटा, पृष्ठ १००।

५ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अष्टावलि-घंटा, पृष्ठ ३५।

६ 'दिवादिन', पृष्ठ २००-२०१।

जीवनीकार ने इसमें तथ्य का समान देखा है।<sup>१</sup> 'नवीन' की 'दहा' के आरम्भ में। सन् १९३२ में मारुतसम्पाद पंचम भाग के रजत-जयन्ती-समारोह के समय 'सरस्वती' में जब गुप्त जी को राज्य-मन्त्र कहा गया था तब 'नवीन' जी ने प्रताप में छुटका विरोध किया था।<sup>२</sup> सन् १९५२ में शर्मा जी ने अपने एक संस्मरण में गुप्त जी को सनातन का पोषक घीर नवीन का प्रबिराधी कहा था।<sup>३</sup> 'नवीन' जी गई दिल्ली में गुप्त जी के यहाँ अपने जाने के समय, भाते-भाते निवमिष क्य से चरणसुख किया करते थे।<sup>४</sup> गुप्त जी के पुत्र अमिताचरण का भी शर्मा जी के प्रति प्रभाव अनुसूया था।<sup>५</sup> गुप्त जी से 'नवीन' जी को अपनी अज्ञातनि निम्नलिखित पंक्तियों से ही है —

कहाँ आज वह बन्धु हमारा,  
 नित 'नवीन' बिलकी रस-घारा—  
 आलोडित करती थी हमको,  
 उससे अज्ञातनि की आशा,  
 रखती थी मेरी प्रविलाया  
 अन्वहोली ही मिय है मन को।<sup>६</sup>

गुप्त जी के अनुज जी तियारामचरण गुप्त से कवि का बड़ा स्नेह था। 'नवीन' जी ने

१ "राष्ट्रकवि मैबिलीचरण गुप्त अमिताचरणचन्द्र, के द्वितीय अक्षर की मूिका में भी बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने मैबिलीचरण को माञ्जनलाल का मुक कतमाया है। जब माञ्जनलाल जी भीटकर घाये, जगूनि मरे हृदय घोर भारी कण्ठ से सुमसे कहा, 'आज मैंने, अपने मुक बाबू मैबिलीचरण गुप्त के चरण सुख किया। 'नवीन' जी ने जैसा स्वीकार किया है, इस संवार में बहुत कुछ बह तथ्य नहीं है, जो होना चाहिए। माञ्जनलाल जी के यदि मुक हो सकते थे तो महावीरप्रसाद द्विवेदी, जो मैबिलीचरण जी के भी गुरु थे। पर महावीरप्रसाद जी द्विवेदी को मुक-पाष में माञ्जनलालजी से कभी नहीं लिया। उनके जीवन में एक ही गुरु रहे हैं घीर ने हैं पुण्यवर माञ्जराच जी सप्र। माञ्जनलाल जी को घीर से मैबिलीचरण जी को अपना गुरु मानना निस्सन्देह मुक की बात नहीं है। मैबिलीचरण जी घीर माञ्जनलाल जी की प्राण में केश एक बर्ष से भी कम कुछ मात्र का प्रसर है। दोनों हो इस प्राण में अपना-अपना कतिरव प्रस्तुत कर रहे थे। हम-अज्ञ सुबकों में गुरु-शिष्य का भाव सम्भावना से भी परे होता है।"<sup>७</sup>—श्री कवि अमिनी कीमिठ 'बकभा' माञ्जनलाल अतुर्वेदी, भाग १, पृ० १३५।

२ डॉ० कमलाकान्त पाठक—'मैबिलीचरण गुप्त व्यक्ति घीर कार्य' जीवनी, पृष्ठ ४३।

३ 'शिवुत्तान' साप्ताहिक, अस्त, १९५२।

४ डॉ० मवेन्द्र के 'श्रेष्ठ निबन्ध' पृष्ठ १५३।

५. वही पृष्ठ १५४।

६. 'सरस्वती', अत, १९६० पृष्ठ ३०८।

'प्रज्ञा' के सियारामधरलु गुप्त शंकर' में लिखा था कि 'मिथुन' का चिह्न है—  
 इसको मनोरंजक कहानी भी दी थी।<sup>१</sup>

श्री वैदिसीधरलु गुप्त के काव्य का मूल्यांकन करते हुए 'वाङ्मय' मैगजिन्सिन गुप्त का काल प्राचीन और मध्य-काल के बीच का माना जा सकता है।  
 सापेक्ष दृष्टि से व्यक्तित्व रूप है—के बीच का प्रतिबन्ध है जो दो गुणों के बीच एक एक विषयक है। गुप्त की जागरण-मार्ग के अन्तर्गत है। अन्तर्गत  
 मन्त्रों का वाङ्मय किया है।<sup>२</sup>

श्री माधननाथ चतुर्वेदी की मते सर्वप्रथम १९३३ ई. में 'प्रज्ञा' के  
 रिसम्बर महीने में सञ्चनक संघके वाले समय 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 का उपाड़ा फिर उच्चत सञ्चन साधारण धीरे-धीरे प्रकाशित  
 वाली लाठी उपाड़ने पैर, धीरे-धीरे की पराहट का प्रकाशन  
 क प्रति धर्म की की बड़ी पूज्य भावना रहा है। 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 रोचक विवरण नहीं भी दिया है। 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 कर्मों में एक एक ठहरे थे जो प्रतिदिन क प्रकाशन के अन्तर्गत  
 के पाठ गये। 'प्रज्ञा' के नियमित पाठक होने के अन्तर्गत  
 उत्सव का जानने में बेर नहीं लगी।<sup>३</sup> 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 सम्पन्न में काव्य-मार्ग भी किया। यह मन्त्र ३-३४ के अन्तर्गत  
 गया बैठा था फिर भी कविता पढ़।<sup>४</sup>

श्री श्री कविता ने कारावास की कारावास में प्रकाशन  
 पाठनात किया है।

दसम्बर मन्त्र १९३३ में श्री चतुर्वेदी का प्रकाशन  
 'प्रज्ञा' का प्रकाशन में हुआ था। यह 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 की प्रकाशन वर्ष बालक क १९०० ई. में प्रकाशित है।  
 में उनकी उपाड़ा की थी। फिर 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 चतुर्वेदी का की प्रकाशन लगे।<sup>५</sup> 'प्रज्ञा' का प्रकाशन  
 प्रकाशन का प्रकाशन के अन्तर्गत प्रकाशन का प्रकाशन

१ साप्ताहिक 'मिथुन' का प्रकाशन, १९३३ ई.

२ श्री चतुर्वेदी का प्रकाशन, १९३३ ई. का प्रकाशन, १९३३ ई. का प्रकाशन, १९३३ ई.

३ श्री माधननाथ चतुर्वेदी का प्रकाशन, १९३३ ई. का प्रकाशन, १९३३ ई.

४ 'प्रज्ञा' का प्रकाशन, १९३३ ई. का प्रकाशन, १९३३ ई.

५ साप्ताहिक 'मिथुन' का प्रकाशन, १९३३ ई.

६ 'प्रज्ञा' का प्रकाशन, १९३३ ई.

के बहाँ धरना बतुबेदी भी के यहाँ।<sup>१</sup> यद्यपि 'नबीन' भी बतुबेदी भी से उन्नत में पाँच बर्ष छोटे थे परन्तु फिर भी वे प्रेमपूर्वक श्रम स्त्री के साथ जनक धरुण बन गये थे और उनका व्यवहार बतुबेदी भी के साथ बैसे ही होता था जैसे बड़े माई का छोटे भाई के साथ। विगत ८ वर्षों में 'नबीन' भी ने बतुबेदी को जो अठारह बार 'बैबकूट' की उपाधि से विभूषित किया था।<sup>२</sup> शर्मा भी ने बतुबेदी भी को कई पत्र लिखे।<sup>३</sup>

श्री श्रीकृष्णदास पासीवाल से भी 'नबीन' भी की बनिष्ठता रही है।<sup>४</sup> कानपुर में रहकर, दोनों ने पर्याप्त समय तक 'प्रभा' एवं 'प्रताप' का सम्पादन किया है।

ग्रन्थ विशिष्ट साहित्यिक युग—स्वर्गीय अयशांकर प्रसाद से 'नबीन' भी का बनिष्ठ सम्बन्ध है। उन्होंने पं० सूर्यनारायण व्यास को लिखा था कि 'आपने प्रसाद जी के सम्बन्ध में जो चिन्ता प्रकट की है, उसे देखकर मैं आपके शोचन्य और सीद्धान्त का कायल हो गया हूँ।'<sup>५</sup> एक बार श्री बनारसीदास बतुबेदी ने प्रसाद जी के विषय में लेख लिखा था जो 'नबीन' भी ने उन्हें इस विषय में प्रकृष्ट ज्ञाती बात बताई थी।<sup>६</sup>

निराला जी से कवि की प्रशंसा वैसी थी। इस मित्रता का माध्यम 'प्रभा' पत्रिका रही। सन् १९२४ में 'माधो का मित्र' नामक एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें 'निराला' की प्रारम्भिक कविताओं पर यह आक्षेप लगाया था कि ये रवि बाबू का रंग-काव्य के नादानुवाद मात्र हैं। यह लेख एक शत्रु के नाम से लिखा गया था जिसके वास्तविक लेखक मुंशी अजमेरी<sup>७</sup> थे। लेख के अन्त में 'निराला' के काव्य पर व्यंग्य था—

इस प्रकार मितान करने से यह मासूम हो गया कि जिसकी के युव-अर्थात् कवि श्रीसूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की 'छट पर और क्यों हँसती हो? 'कहाँ रोह है? ये दोनों

१ श्री बनारसीदास बतुबेदी—'संस्कृति एवं बालकृष्ण शर्मा 'नबीन' का जीवन-चरित, नून-नुमाई, १९६०, पृष्ठ २२।

२ श्री बनारसीदास बतुबेदी—'नबनारायण टाइम्स', नबीन जी के कुछ सम्मरण, २६ नून, १९६० पृष्ठ ५।

३ श्री बनारसीदास बतुबेदी—साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', नबीन जी पत्र-लेखक के रूप में, अज्ञात-व्यक्ति-लेख, पृष्ठ ३६।

४ 'सन् १९२३—विगत अलेख जी के लेख में होने से 'प्रताप' का सम्पादन पासीवाल जी हो कर रहे थे। वह कुर्सी बर बैठे थे और 'नबीन' साहिनी तरल कहे। पासीवाल जी ने बोस्ताना धरा से उनसे कुछ पाने की फर्मावश की, और 'नबीन' बाएँ हाथ से उनका साहिना कान पकड़कर ना बने। क्या गाया माई 'नबीन' ने सुने यह नहीं, यह इतनी ही रह गई है कि वह अक्षय कपन पकड़ने वाले अक्षय सुखबाब की भी बहबानकर मान ले सकता है।'<sup>८</sup>—श्री वास्तव्य लेखन शर्मा 'अप', व्यक्तिगत, भारतीय श्रीकृष्णदास पासीवाल, ३०।

५ 'बीला' स्मृति-संक, पृष्ठ ४९४।

६ 'नबनारायण टाइम्स', २६ नून १९६०, पृष्ठ ५।

७ श्री मैचिन्तोशरण गुप्त जी का सुने लिखित (दिनांक २११ १९६१ का) पत्र।

कविताएँ भी रबीन्द्रनाथ टैगोर को 'विजयति' और 'निश्चय यात्रा' नाम की कविताओं को रक्कर की हैं। क्या हिन्दो संसार हिन्दी की इस गौरव-बद्धि के लिए, जो बिपाठी जी महापुत्र को बर्बाद या बन्धुवाद न देया ? और क्या कोई मध्य भाग्य इस बात का दम्भेपल न करेगा कि इसी प्रकार उनकी और कविताएँ भी रवि बाबू या मध्य किसी कवि की कविताओं से टकराती हैं या नहीं ? १

इस आधार पर, तत्कालीन 'प्रभा' सम्पादक 'नवीन' जी ने निराशा जी को एक पत्र लिखा था। १ इस पर महाप्राण 'निराला' ने भी प्रत्युत्तर दिया था जो कि 'मत्तबाला' में प्रकाशित हुआ था। उसमें उन्होंने बताया था कि "बहाँ कहीं भी उन्होंने बंगला-काम्य का पाव लिया है वा क्यातर किया है, उसका उल्लेख पाठ-टिप्पणी में यथा-समय किया था।" २ इसके पश्चात् दोनों कवि प्रयाग मित्रता व सौजन्य-म्यत्रहार के धार्मिक में मान्य हो गये। दोनों महान् संपीठ-सेवी थे।

प्राचार्य मन्मथसारे बाबूदेवी जी के कवि के साथ मित्र ३ वर्षों से अनिच्छ सम्बन्ध रहे हैं। प्राचार्य बाबूदेवी जी मगधपुर के रहनेवासे हैं जो कि कानपुर के पास ही है। अतएव कानपुर में अश्वर 'नवीन' जी से उनकी भेंट हुआ करती थी। इसके धार्मिक दिस्ती में प्राचार्य बाबूदेवी जी 'नवीन' जी के यहाँ अपने प्रवास में अथप ही मिसने जाया करते थे। प्राचार्य बाबूदेवी के धतुस के यहाँ 'नवीन' जी की कानपुर में बैठक रहा करती थी। ४

श्री रामकृष्णदास से कवि के बड़े धन्दे सम्बन्ध थे। 'नवीन' जी अश्वर बाटणसी जाने पर कला-मकन में ही ठहरते थे। धर्मा जी ने सन् १९१६ की ललनऊ कापिस में अपने विभिन्न नूतन परिचितों में श्री रामकृष्णदास का भी उल्लेख किया है। ५ श्री वेदारनाथ पाठक ने रामकृष्णदास जी को 'नवीन' जी से मिलाया था। ६ नवान जी का ध्यान जब कला-मकन की ओर गया तो कुछ नहीं तो कम हीस-जासीस सहकर बरये उन्होंने बड़ी लगन प्रयत्न

१ 'प्रभा', भाबों की मिङ्गल, सितम्बर, १९१४ पृष्ठ २१४।

२ बहो, सम्पादकीय टिप्पणियाँ, 'निराला' बनाम 'रबीन्द्र', सितम्बर, १९२४, पृष्ठ २१६।

३ प्राचार्य श्री मन्मथसारे बाबूदेवी द्वारा प्रवस सूचना के आधार पर।

४ प्राचार्य बाबूदेवी जी से बाबूदेवी द्वारा बात।

५ 'सन् १९१६ का बर्न, ललनऊ-कापिस-प्रतिवेदन, सितम्बर मास बाबू जी संख्या कापिस मण्डल के बाहर का एक निबिद-युएयनोकर गणेशगंकर विद्यापी, स्व बन्धुवर मित्रनारायण मिश्र रामकृष्णदास जी, रहा और कुछ धाय जन।'— श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन', 'उपद्रुकि मैपिलीसरण अभिनमन धण्य,' पृष्ठ १५३।

६ "इन पाठक जी से हमारा सम्पर्क सन् १९०८ में हुआ, इन्होंने ही हमारा परिचय प्राचार्य द्विवेदी जी, मैपिलीसरण गुप्त और नवीन जी से कराया जिसके फलस्वरूप मैं मैपिलीसरण जी और उनकी मण्डलती वा लान्निध प्राप्त हुआ। प्रसार जी से भी सन् १९०९ में इन्होंने ही मिलाया।"— श्री रामकृष्णदास, 'मैं इनसे मिला', पृष्ठ २६।



एवं परिधम से कालपुर धारि स्वानों से एकत्रित करके, उसको दिखे । वह उनका गौरवपूर्ण प्रयास था ।<sup>१</sup>

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी से कवि के बड़े सहरे सम्बन्ध थे । दोनों में विनोद व सीतार्द्र का व्यवहार क्रियाशील था । 'द्विवेदी धार्योग' के माते इतका कपडि निकट का सम्बन्ध इन दिनों रखा । उक्तभाषा धार्योग के सदस्य की भिने मे अपने एक संस्मरण में लिखा है कि '१९५६ के बून में हम लोग भीमगर के होटल में ठहरे थे । उत को डॉ० हजारीप्रसाद की के कमरे में मैं बैठ बा । नवीन की भी धा पहुँचे । काव्य सम्बन्धी बर्षा झिड़ी धोर उन्ते कविता सुनाने की प्रार्थना की गई । धोर फिर हम को ओताधों मे षटे भर तक उनके कष्ट से कविता पात सुना । कविता के भाव विचारों में ठन्वीन हो पूरी प्रसन्नता से उन्हीके कविता सुनाई । वह उत धाव भी मेरे स्मरस में स्थायी बनी हुई है ।<sup>२</sup> 'बिनकर की भी इन दिनों नवीन की के धाय रह्ये थे धोर स्वास्थ्य की चिन्ता किया करते थे । 'नवीन' की की बैठक कमी-कमी बिनकर की के यहाँ भी बम बाया करती थी ।<sup>३</sup> 'बिनकर' की को कवि से सर्वप्रथम मेट सन् १९३१-३६ में सुपिंग (बिहार) में हुई थी ।<sup>४</sup>

डॉ० नगेन्द्र 'नवीन' की के प्रति बड़ा रक्षित थे । वे उनसे सन् १९४५ में 'भ्रताप' कर्वालय में मिले थे धोर बाध में वे बिन्नी में नगेन्द्र की के 'बाया' हो गये ।<sup>५</sup> उन्हीमे अपनी पुस्तक 'भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा' 'नवीन' की को सावर समर्पित की है ।<sup>६</sup> डॉ० बच्चन भी कवि के श्यानु रहे हैं ।<sup>७</sup>

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी की कवि के साव प्रथम मेट सन् १९२३ में 'भ्रताप' कर्वालय में हुई थी । उन दिनों वे प्रया साक्षिक पत्रिका के सम्पादक थे ।<sup>८</sup> स्वर्गीया श्रीमती सुनद्राकुमारी श्रीहान को कवि अपनी बहिन मानते थे धोर उनकी मस्यु के परभाव, उनके घर बाकर फूट फूट कर रोये थे ।<sup>९</sup> डॉ० सुर्यनाथल श्याल से कवि के सम्बन्ध सन् १९२२ से स्थापित हुए ।<sup>१०</sup> धोर की रामानुज साल श्रीवास्तव से सन् १९३०-३१ से<sup>११</sup> धोर फिर पत्रिकापत्रिक स्वैह की बृद्धि होती गई । इनके प्रतिरिक्त कवि के प्रति श्री रामसहय शर्मा भी प्रभावचक्र धर्मा की प्रयायनारामल त्रिपाठी, श्री प्रसोक बाबवेवी धारि व्यक्तियों की प्रगाढ़ बड़ा रही है ।

१ श्री रायकृष्णदास से हुई प्रत्यक्ष मेट (दिनांक १०-६ १९६१) में ज्ञात ।

२ 'राष्ट्रवाली', बून, १९६० ।

३ साप्ताहिक 'द्विवेदी', पत्रिका-संक ९१० ।

४ श्री रामधारी सिंह 'बिनकर' द्वारा ज्ञात ।

५ डॉ० नगेन्द्र के 'मेठु लिबन्ध', पृष्ठ १४८ ।

६ 'भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा', समर्पण ।

७ डॉ० बच्चन—'नये पुराने परोखे', पृष्ठ १८-३० ।

८ श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी - कल्पना, हुताश्रमा, सितम्बर, १९६०, पृष्ठ २६ ।

९. 'सरस्वती', सुनार, १९६०, पृष्ठ २८ ।

१० 'बीरता', स्पृति-संक पृष्ठ ४९१ ।

११ 'सरस्वती', सुनार, १९६१, पृष्ठ २८ ।

इस बहुमुखी सम्बन्धों में कवि के विपद् व्यक्तित्व व जीवन के निर्माण व प्रभावित करने में बड़ी मदद पहुँचाई है। 'जीवन' जो जो अपने पुष्पों से घायीबीर व स्नेह मिठा सम बयस्त्रों से समता घरी मैत्री प्राप्त हुई और कनिष्ठ व्यक्तियों से घटा और मावसीना सुमन्यपनाएँ।

### निष्कर्ष

श्री बाबूहण्ड्य धर्मा गवोन' के सम्पूर्ण शास्त्रम में उनका सुम तथा जीवन पुंजायमान है। धनुमशों व परिस्थितियों के घात-प्रतिघात और घटनाओं के बाव्यावशों में उनको अपनी मान्यताएँ बनाये की विद्या में एक प्रदान किये। उनका समय बाबल प्रायेह-मबरोह की कसण कहानी से प्रान्नामित है। उन्होंने राम-विदाव दोनों में विम व्यतीत किये। श्लोत्रों और मट्टासिक्क्यों का दुःख-मुख मोगा। उनके जीवन-सूत्रों में समस्त मध्य भारतीय जीवन-जगत् के इतिहास के साथ उन्हें पिरो दिया है।

धर्मा जो के खरिज, भावण तथा सिद्धान्तों में जो कविपय विद्रिष्ट उपासना में अपनी विरिष्ठ स्वान बना लिया था, उसका कारण उनके जीवन की विस्तृत व उर्वर पीठिका है। एक बाव्य में दहा भाव कि उनकी माता व शुब यणेयधकर विद्यापी में उनके जीवन को बनाया और मोगा। गणेश जी के वे जीवन स्मारक थे। जिस समय वे अपनी जीवन की प्रारम्भिक किरणें बिखीर कर रहे थे उस समय उनका प्रवेश मातवा एक विचित्र प्रकार की घामन्धवाही प्रवा व व्यवस्था से घाजाल था। ऐसे बातावरण में जादुकारिता या बन्ध क परिविक्त काई पय नहीं था। बाबूहण्ड्य धर्मा प्रारम्भ से ही ऐसे बातावन क घायी नहीं थे और यणेय जी की विव्यता के द्वारा घाकषि होने के कारण उन्हें अपने स्वानिक बातावरण का राख नहीं बनना बड़ा। यणेय जी के रास्ते पर वे धान्यम बसत रहे न पीछे हटै और न विचलित हुए।

उनका सम्पूर्ण जीवन एक योद्धा का जीवन है। लड़ना, बूमना उकराना और पराजय की भावना का उत्पन्न न होने देना ही, उनके जीवन का सार है। उनका जीवन एक युद्ध था। वे प्राजीवन लड़ते ही रहे। परिस्थितियों से लड़े, बीर्यम महामुष्पों से लड़े, भारत की बसता से लड़े, कायपाल में बिबाओं से लड़े, स्वाय के प्रसन पर व यणेयमों से भी लड़े। गान्धी जी के 'ययनू' और 'गया' होने पर भी उनसे लड़े। बकाइर के 'छोटे भाई' रहते हुए भी उनसे लड़े और टम्पनजी का 'प्रायुधत् स्नेह' प्राप्त कर, उनसे भी लड़ने से नहीं बूके। धन्निम समय में रोनों से बूके, समाज की कड़ियों से बूके बैठ में घाल लपारी। माहिरर में वे लड़ते हुए ही दिखलाई बड़े हैं। नई मायगार्थी की प्राय- प्रविष्टा के लिए उन्होंने अपने इस यन्त्र का प्रयोग बन-बन सर्वत्र किया। परन्तु इस सेनाजी में नहीं भी उण्डू बनता नहीं दिखाई देती। वह कहीं भी परगो विमलता का परिधि का उल्लंघन नहीं करता। जिनको मना उन्हें बन्ध उठ पाता सदा लड़ते लड़ते माना। जिन्हें स्नेह दिया उन्हें धाकण्ट बुनो दिया। यही उनके जीवन की सबसे बड़ी विठोरता रही है। ऐसा प्रेम-सन्धक योद्धा और छात्रिक सेनाजी धन्पत्र दुर्लभ है।

उनके व्यक्तित्व व भाव्य के निर्माण में उनके जीवन की अपनी स्थिति बड़ी स्पष्ट हो जाती है। बाव्यावस्था में निरंकुश रहने के कारण और परना प्रारम्भिक धार्मिक धाने हाथों से

पढ़ने के कारण, स्वाभाविक रूप से ऐसे व्यक्तियों में मनोविज्ञान के आधार पर बिरोह तथा संघर्ष की शक्ति का उत्पन्न हो जाता अपना नैसर्गिक रूप ही रहता है। संसार के क्रम महापुरुषों की शक्ति के भी अधिकतर संसार की पाठशाळा में ही अधिक शिक्षित व सीखित हुए। पाठ्य-पुस्तकों की प्रवेष्टा उन्होंने खुले संसार का अनुभव प्राप्त किया और अपनी मान्यताएँ स्थिर कीं। भारतीय बुद्ध दैत्य तथा वातनाएँ ध्रुपठने के कारण उनमें कछुआ की भावना का अत्यधिक प्रसार हो गया था। सर्वा-सर्वथा संसार में तलवार कसे सेनापति के समान उन्होंने अपने जीवन के पहरों परबतों व नदियों को पार किया। कभी मधुवन धामे और कभी बौद्ध बन। सांसारिक मुझ व मोम के प्राप्त न होने के कारण और अन्त में रोमों से आश्रय शरीर को लिए हुए होने के कारण उनमें निराशा की भावनाएँ भी अपने पक्ष छोड़ने लगी थीं। मानव के प्रति मानव के अपने प्यार के प्रयत्न होने के कारण उनमें मानुषता की भाषा का अत्यधिक विकास हुआ और इस भावनोत्रेक की स्थिति में उनके राजनीति के विकास में बड़े प्रबोध उपस्थित किये।

यहाँ हमें उनकी राजनीति व साहित्य के बहुचर्चित व विवादास्पद क्षेत्र पर भी थोड़ा विचार कर लेना चाहिए। उनके जीवन की कच्ची राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास की कच्ची है। हिन्दी पत्रकारिता राष्ट्रीय क्रम और स्वाधीनता संग्राम के ही चीत महत्वपूर्ण पक्षों के अभावत विकसित का यदि किसी को अध्ययन करना है तो वह उनकी बीवनी में देख सकता है। उन्होंने देश के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया। निर्धन होकर वे सिद्ध की शक्ति बहाकते थे। ऐसे मोर-पुत्रों पर भारत-माता को गर्व है। उपवर्गीय नीति में आस्था रखने के कारण वे आभरण धोतीसे व लीक्य बने रहे। उनके मन में मिस नाम की वस्तु नहीं थी। वे उस बट-बुद्ध के समान थे जो सब को खपा प्रदान करता है। वे सूर्य किरणों के समान सबको प्रकाश देने वाले थे। समीर के समान उन्होंने राधा रंज सभी को आम्बता प्रदान की। उनके जीवन के दो प्रबल पक्ष, राजनीति व साहित्य थे। ये दोनों धापस में टकराते रहे और समझौता करते रहे। राजनीति की मृगतुष्ठा उन्हें प्रागे लीक से जाती थी और साहित्य अपना अल्प बिभनेपण करवाता रहता था। बेला काय तो उनकी साहित्यिकता में उन्हें अल्प राजनीतिज्ञ नहीं बनने दिया और उनकी राजनीतिज्ञता ने उन्हें साहित्यिक नहीं बनने दिया। राजनीति में 'हरण की आशयकता नहीं होती। बड़ी बुद्धि, कूटनीति अथवा की उपयोगिता बुद्धि-कीकस धारि के हाथ अपनी गोटें बिठवी जाती है मोहरे लकी जाती है। एक अमेरिका आम्बकारी के कथा है कि 'राजनीति वह मानुष कथा है जिसके अरिथि गरीबों से मोह और समीरों से बुनाव के लिए अपने यह कहकर सिधे जाते हैं कि हम तुम्हारी एक-बुधरे से रखा करेंगे।' परन्तु ऐसी राजनीति को चर्मा की में कभी आषय नहीं दिया, न के स्वभावतः ऐस कर ही सकते थे। वे एक पक्ष के ही होकर, स्पष्ट व्यक्ति बने रहते थे। मध्यम मार्ग को अपनाता उन्हें पसन्द नहीं था। प्रत्येक समस्या पर उनका साक व एकपक्षीय मत रहता था। उनके व्यक्तित्व में द्विविधा को कोई स्थान नहीं था। उनमें भावना कल्पना आशेष प्रेम, स्नेह, ममता सीझार और अविश्वसीलता थी इसलिये वे सब पुण्य उनकी राजनीति के पक्ष में कष्टक बन गये। निम्ना व

साहस्यर उन्हें पसन्द नहीं थे। राजनीति के कार्यकर्ताओं में व्यस्त रहने के कारण, वे साहित्य की भी उपेक्षा करते रहे। इसका प्रभाव उनके साहित्य-प्रकाशन और विविधत्व समीक्षा के पाठ न होने के रूप में दिखाई दिया। दिन-रात संघर्षों की चिह्ननामों में साहित्यकार को हृदय के एक कोने में ही कुसकुसाकर रह जाना पड़ा। राजनीति की शकाँधों के समान कवि को अपने कवित्व-यक्ति से सम्बन्ध बीपक का क्याल नहीं रहा। उसने अपने कवि को हमेशा ही उपेक्षित रखा। उनकेसजक और समझ कसाकार ने अपने का द्वितीय-साहित्य में आरोपित करने का तर सहा प्रयत्न किया लेकिन उनके धन्वर वाली राजनीतिक मुनसुप्ला ने उस कसाकार के मार्ग में हमेशा बाधा पहुँचायी।<sup>१</sup>

राजनीति के दिन धारकर्मों के पीछे कवि भागता रहा वे स्वामी प्रमाणित नहीं हुए। वे बुरबुरे बनकर फूट पड़े। कवि को इस वास्तविकता का ज्ञान अपने जीवन की सम्पत्ता में हा गया था, इसलिए निराशा व शोक को भावनाएँ अभिकाथिक उसको कुपिठ करत लगा थी। इस बुधारी लक्षधार पर बतकर, सर्मा जी ने अपना जीवन व्यतीत किया।

मेरा अपना मत है कि बासकृष्ण सर्मा सुलत व प्रधानतः साहित्यिक थे, राजनीतिज्ञ नहीं। राजनीति में व्यसक्तता मिलने का प्रयत्न कारण भी यही रहा। उनके जीवन का काम भी इसी प्रकार रहा कि वे सुलतः साहित्यिक हो बनते वा रहते। भावावेश सहजयता प्यार, बहुत दिनभरा और साहित्यिकता के उपादान उनके साहित्यिक पक्ष के ही परिचायक हैं न कि राजनीतिज्ञ होने के। राजनीति ने कवि को बारम्बार अपने बमकते धारण से धाँधलित किया परन्तु उनका सहज व्यक्तित्व, जो कि साहित्य की शीति से सम्बन्ध या धाँधले व ठकपन के साथ बाहर निरसत पड़ना था। उनके काव्य में जो हमें इस संघर्ष की कहानी कर्मतीय तन्तुओं में बँधी दिखाई पड़ती है। राजनीति तो बंदता है बढ़ती गरी की बारा है। उसका अपना कोई स्थिर रूप नहीं। कभी सूख जाती है कभी बाढ़ या जाती है और कभी धार बहल लेती है। राजनीति का रूप बासकृष्ण सर्मा के पास था और रहा परन्तु बड़ बीरे-बीरे तिरोहित हो जायेगा। उनके राजनीतिज्ञ रूप को कोई बिर-स्वायी महत्ता नहीं मिलने वाली है। बड़ अलसगुण है। उनका वास्तविक व प्रकृत रूप साहित्यिक का ही रहेगा जो कि पुन-पुनान्तर तक प्रमित रहने वाला है। ससु ससम्प पं० बासकृष्ण सर्मा का नाम समाचार-पत्रों में परिचित रहा उन पुच्छों के साथ विपक्षित हा जायेगा परन्तु बराबि और 'अम्मिता' के कायक महान् कवि को सारा संसार वाह करता रहेगा। राम-रूप की परम्परा की वे स्वामी एवं धर्मिणव कही बन गये हैं।

'नवीन जो के जीवन-चरित का यह सरर गुणों के जंगल खोजना रहेगा—

में है भारत के मरिय का सुतमान बिहारात महान्।

में है भारत हिमाचल सम चिर, में है धूमिमान् बलिदान ॥



तृतीय अध्याय  
व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन



## सामान्य व्यक्तित्व

बालकृष्ण धर्मा व्यक्तित्व-सम्पन्न कवि थे। सामान्यरूपेण ही उनके व्यक्तित्व का प्रभाव इष्टा पर पड़ता था और वे सहज रूप में ही व्यक्तित्व व अनुभूति लिखाई पढ़ते थे। 'दिनकर' जी ने लिखा है कि 'मैंने बिन साहित्यकारों को देखा है, उनमें से पण्डित निराशा और 'नबीन' से तीन ही हैं जो दर्शन-मान से प्रभावित करते हैं। नबीन जी जब बण्ड नहीं हुए थे, चुप रहने पर भी, उनके व्यक्तित्व से आश्चर्यकृत किरलें फूटा करछी थी।' <sup>१</sup> यह धामा कवि को प्रकृति-प्रदत्त थी। उनका मोहक व प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व तथा-सर्वदा भावपूर्ण का केन्द्र रहा है। स्वयं सुमित्रानन्दन पन्त ने धर्मा जी के व्यक्तित्व का बर्णन निम्नरूप में किया है—“एक शब्द में 'नबीन' जी का व्यक्तित्व स्फटिक के समान शुभ्र तथा मर्म के समान उदार रहा है। <sup>२</sup> श्री आनन्दचन्द्र शौनरेकता ने उनके जैसा नभ्य-व्यक्तित्व भारत में कहीं नहीं देखा। उनका मध्य और व्यक्तित्व, उन्मुक्त किन्तु रस-विदग्ध हास्य और हिम-वैत केय-वादि ने प्रत्येक को आकृष्ट कर रखा था।” <sup>३</sup>

इस नैसर्गिक धामा से मण्डित कवि का वादस-स्वस्व तथा रूप ही बना है, इष्टा बनने का प्रवृत्त उसे नहीं मिला। श्री मैथिलीचरण गुप्त ने लिखा है कि 'क्या कहना है उनके व्यक्तित्व का। क्या रूप, क्या बर्ण और क्या बोधबाल, उनका सब कुछ आकर्षक था। जैसा विषय वैसा ही प्रथम। जब बिन रूप में वे रहते थे, बड़ी उन्हें प्यारा था।’ <sup>४</sup>

घाटीरिक्त संगठन—यद्यपि व्यक्तित्व का बोध सिर्फ घटीर के अनुपात व प्रवृत्तों के अनुगत से ही नहीं होता है फिर भी इसकी व्याप्ति में घटीर का बहुत बड़ा माप रहता है। मुझ व पाँकों से हम व्यक्ति की बहुत-सी बातें व स्वभाव जान जाया करते हैं। 'नबीन' जी को प्रकृति की सबसे बड़ी देन उनकी घाटीरिक्त मधुरता थी। उनके विषय में दोस्वामी सुसोदाक को निम्नलिखित पंक्ति उपपुष्टता से चरितार्थ होती है—

मृग स्वयं वैहरि टबनि बलनिधि बाहु विद्याल।

माँय-वेधियों के सुसंपट्ट होने का अपना मुहूर्त घटीर रत्न के कारण वे महाकवि अर्जुनचन्द्राचार जी 'कामायनी' के मनु के समान बलाज्जी व होज्जी इन्टिपोर होते थे—

प्रवयव को हृदय-वेधियों अर्जस्थित या भीर्य धरार,  
एकीन निराय स्वयं रत्न का होता था जिनमें सचार।”

१ श्री रामपारी सिंह 'दिनकर'—'श्री सुमित्रानन्दन पन्त रच्युनि-चित्र', परिचय सुमित्रानन्दन कृत, पृष्ठ १२६-१२७।

२ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अज्ञात-पंक्ति, पृष्ठ २६।

३ वही।

४ 'नरस्वामी' कुन, १९६०, पृष्ठ ३०३।

५ 'कामायनी', बिन्ना लर्न, पृष्ठ ४।



के धाबानु बाहु ये इसलिये अपनी कृतियों में यह शब्द तथा पुरा-निरूपण अनेक बार आया है।<sup>१</sup>

उनकी छाती पुष्ट व सुशील थी। श्री बैजनाथ सिंह 'बिनोर' ने कहा था कि 'नबीन' की साठ वर्ष की लगभग उम्र के हैं पर आठ मी बच उठे में नये बदन बेबता हूँ वो ऐसा लागता है, जैसे पोखर का पुंज उधरे छाती में छिंच कर दिया गया है। व्यक्तिगत तो इतना प्राकृतिक है कि व्यक्ति स्वयं उस ओर खिंचता जमा जाता है।<sup>२</sup> ऐसी ही छाती का कवि ने बर्णन किया है—

इतनी विस्तृत, इतनी चौड़ी हो इस मानव की छाती,  
बिसे गिराव कर स्वयं सुजत भी कहे, लक्ष्मी, भिरी छाती।<sup>३</sup>

श्री बेंकटेश नाटावरण तिवारी ने लिखा है—“नबीन की का कव्य सम्भा-चौड़ा था। उनका उन्नत कलाट छिर पर पुंज-रसे नेत्रों का गुच्छा, विद्याल नेत्रों में प्रतिमा की धामा, गौर बर्ण का शरीर, उनसे सावगी इनकी जंचसता उनकी स्त्रीहूणों बार्से किरके मम को मोह न लेती थी।<sup>४</sup>

उनके मस्तक की केश-राशि श्वेत पैराम के स्निग्ध छरने लैसी बगती थी। श्री पान्थैप केचन वर्मा 'उग्र' ने उनके केश को 'सन्ताप्ट घोष' के विज्ञापन की तरह बोधी-बबल बताया है।<sup>५</sup>

घाँसे रसमन्त सबाबब भरे प्यासे-खी छटिगोचर होती थी।<sup>६</sup> कवि ने अपने आपको 'सौह-शरीर' सम्मन बतसाया है।<sup>७</sup>

श्री धाम्तिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है कि 'नबीन' की प्रारम्भ में पुबसे-नतसे एकहरे नवयुवक थे।<sup>८</sup> किपौर 'नबीन' का बर्णन करते हुए श्री माखनलाल बजुर्वेदी ने लिखा है कि "मोर बर्ण ठेकस्वी बालकृष्ण बच अपनी बात कहते एक बाठावरण सा बागूत हो जाता, बापु मखन सा प्रकमित्त हो उठता और यह स्पष्ट शीख पकता था कि यह तख्त को कुछ कह रहा है, अपने विस्वासी में बूबकर कह रहा है।<sup>९</sup> प्रारम्भ से ही वर्मा जी के व्यक्तित्व में एक अनुपम ठेक व निरासी सब-बब मिसली है। बाव में यह अपने पूर्ण उन्मेष में हमें दिखाता है

१ (i) 'अपलक', पृष्ठ ५५।

(ii) 'श्रीकन मबिरा' या 'पाबस पीड़ा', पाबिब ३६ वीं कविता, छन्द ८।

२ में इनसे मिला', पृष्ठ ३६।

३ 'प्रथिम रैछा' सजल नैह-बन-मीर रहूँ, पृष्ठ ५५।

४ 'सरस्वती' कुन, १९६०, पृष्ठ ३८५।

५ 'समास' विन्दु-विन्दु विचार, अग्रेल, १९५४ पृष्ठ ३।

६ 'मैं इनसे मिला' पृष्ठ ५१।

७ 'अपलक', हम हैं मस्त कलीर, पृष्ठ ७३।

८ 'कल्पना', तिलम्बर १९६० पृष्ठ २६।

९ 'तरफती', कुन, १९६० पृष्ठ ३७६।

पढ़ने लगी। सना-भोटियों में जब भी उन्हें कोई हार भावि पहनाया जाता था, तो उनका व्यक्तिगत धोर भी अधिक खिल उठता था।<sup>१</sup>

बेज-भूपा—घरनी ब्राह्मण-वस्त्रा में धर्मा की घरनी पारिवारिक बखिता क कारण वैभव लये कपड़े पहनते थे। वो पोती पर पूरा बर्ष बल जाता करता था। नये पैरों रखते थे।<sup>२</sup> घरनी क्लिपोरबस्त्रा में वे उमारे सिर रहते थे धोर बैठतौब कपड़े पहनते थे। हाथ में लाठी रखते थे।<sup>३</sup> इतीसिए धी बनारसीशस कनुर्वी ने इनको प्रथम बार देखकर, 'बिहाठी रैपस्ट कहा था।<sup>४</sup> घरने प्रोडकाल में धर्मा की का समय व्यक्तिगत इन पँकियों में निहित हो गया— 'स्मटिक बसेठ नुपराते बाल, मय्य लवाट, सूर्याम मुबब बिराधरित नयन, वीर्य नासा, प्राकानु बाहु चौड़ा बल, अँबा पूरा दुहरी हृदी का बील डील। उठ पर बसेठ पवल सलीकेदार बाहर का कुरता पाजामा, नेहक बाकेट माटा बरमा धोर कमी-कमी हाथ में छड़ी धोर बड़ी यह पा उनका बाह्यावरण। बाछी में सम्माहक-गर्जन स्वर में मनोमुग्धकारी मारकपण, बरणों में उरवि-गाम्भीर्य, धलमस्त कलकड़ यही था उनका ऊपरी व्यक्तिगत।<sup>५</sup> धर्मा की कमी खेरबानी धोर खुशीदार पाजामा थी पहनते थे। घर में वे बखी धोर घुटमा पहनते थे।<sup>६</sup>

बेज-भूपा से मनुष्य के बिचारों का यनिष्ठ सम्बन्ध होता है। धर्मा की की बेजभूपा उनके राबरीय ब प्रभावपूर्ण व्यक्ति होने के माते, उपयुक्त ब समीचीन थी। उन्हें साध कपड़े पहनने का शौक था।<sup>७</sup> कपड़ों के प्रति धर्मा के हृदय में उलट लालसा नहीं थी। बेज-भूपा में भी उनकी घरनी प्रथमस्ती का प्रथम अधिक होता था। कमी-बकी वे एकमात्र अधिया ब र्वी पहने भी भूमने निकल जाया करते थे।<sup>८</sup> 'मनीन की कौ टोपी सपाने की घरनी बिटोपता थी। वो 'उध' ने लिखा था कि "नबीन बाई की बाँकी टोपी पर निगाहें इस तरह पड़ जाती हैं कि दूसरे कपड़ों की धोर प्यान नहीं जाता।<sup>९</sup> इतीसिए धी शोरासप्रसाद ब्यास ने उनके जीवन-काल में ही लिखा था—

बन पन बालकभूत महाराज कि छैला टैकी टोपी बाते,  
बतायो एक बात तो विस कि तुम ने कैसे लिखे कबिन,  
दुषामो मत बिहुरन के बिल लाम जाम के कु धारे ॥<sup>१०</sup>

- १ 'बया बीकन', विसम्बर, १९९०, पृष्ठ २९।
- २ 'साहित्यशास्त्रों की प्रारम्भिका', पृष्ठ ८५।
- ३ 'सरस्वती', जून, १९९०, पृष्ठ ३०९।
- ४ 'रतिमरीका वित्र', पृष्ठ २००।
- ५ 'बीला', स्मृति-संक पृष्ठ ४५७।
- ६ 'सरस्वती', जुलाई १९९०, पृष्ठ ३०।
- ७ 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ३८।
- ८ साहायिक 'हितुस्तान', धर्मा-विसि-संक, पृष्ठ ९।
- ९ 'समाज', अक्टूबर, १९५४, पृष्ठ ३।
- १० 'रतिक 'धनुन', सन् १९४३।

ज्ञान-पानि—धपनी तस्यावस्था में वर्मा की बड़े मोहन-प्रिय थे। डक्टर साहू थे। चासीस चासीस रोटियाँ खाना उनके लिए मामूली बात थी। मोहनदास के महापत्र उनके बंदहाते थे।<sup>१</sup> धपनी बुढ़ावस्था में इच्छावस्था के कारण वे खाने-पीने के मामले में काफी नियमित ब संवमित हो गये थे। बूझरों को भी रोकने-टोकने खते थे।<sup>२</sup> उनका रचना निष्ठा पूर्ण भाषा में था। खाने की मेज पर सामने परोसी हुई प्रच्छी से प्रच्छी चीनों को बिना छुए, रुखा-मुखा खाकर उठ जाते थे। बीबन के घण्ट में कवि धपरिवही हो गया था।

प्राचार-विचार—वर्मा की पहले वैष्णव थे। कलकत्ते में एक सम्मन ने काली की के बर्तनों का प्रस्ताव किया। उन्होंने बड़ी धीमे मुझ के साथ कहा 'माई साइज नहीं कोई पर्यु-बनि हो रही हो। मैं उसे देखकर बाबा-शक्ति के प्रति धपनी बधा को कम नहीं करना चाहता।'<sup>३</sup> वर्मा की संस्कृति ब सिष्टाचार की प्रतिभूति थे। वे धपने कुस्वर्णों के नाम के धापे 'धाय' लगाते थे।<sup>४</sup> बीबन के प्रतिमकाल में उनकी मधुमत्स्यक बड़ नहीं थी। वे विनय-पत्रिका और रामायण पढ़ने का भी धापेस किया करते थे।<sup>५</sup>

विचारों से वे क्रान्तिकारी और विरोधी थे। धप्याम क्रूरतियों ब कंधापी से वे डक्टर घुम्ते थे। भारतीय समाज के दोषों के अर उन्हीं बहुरुर के समान प्राक्रमण किया और उन्हें विन्यस करने का प्रयत्न किया। धपनी समय में कानपुर में साहित्य में कमस्यापूर्ति-प्रया के वे बड़े विरोधी थे। उध समय 'सुकवि' नाम का एक पत्र निकलता था जिसमें सप्ताहिक समस्वार्थों की पूर्ति कवि-मण किया करते थे। इसे वर्मा की व्यर्थ की वस्तु मानते थे और इसमें उन्हें कोई भास दिखाई नहीं देता था।<sup>६</sup>

उनका व्यवहार स्यादानुसूल ब समान रहता था। वे किसी के साथ पकपाठ नहीं करते थे। सब के साथ वे एक समान स्नेह करते थे। सब के 'प्रया' के सम्पादक थे तब लेखकों के नाम के धाधार पर नहीं धपितु रचना की उत्कृष्टता ब धपनी समान बर्तन के धनुसूल रचनाएँ प्रकाशित करते थे।

नवीन की को सर्वोच्च सार्टिफिकेट एक साम्यवादी मित्र ने दिया था "नवीन की सहुयव है, मोसे है और मरमाये वा सच्छे है। की बतारखीरास क्तुबेदी ने कहा है कि मनुष्यता सहुयवता पर दुख-कातरता और बहारता की दृष्टि से नवीन की का स्वान बर्तमान लेखकों और कवियों में सबसे ऊँचा था।<sup>७</sup> एक अर में वर्मा की के व्यक्तित्व का विवरण यदि किसी को करना हो तो यह उसके लिए बहना पर्याप्त होगा कि वास्तव में सब

१ 'विवरण' स्युनि-अर, पृष्ठ २२१।

२ 'सरस्वती' जून १९६०, पृष्ठ ६७८।

३ डॉ गुनाबराय—अर भारतीय पृच्छी की विवृति स्वर्ण की सम्पति, स्मति अंक, पृष्ठ २०।

४ वही।

५ साहायिक हिन्दुस्तान, 'अडोबलि-अर, पृष्ठ १०।

६ साहायिक हिन्दुस्तान अडोबलि-अर, पृष्ठ १४।

७ 'नवनायक टाइम्स', २६ जून, १९६०, पृष्ठ ६।

के सही धर्मों में 'धर्मों की सम्मन से'।<sup>१</sup> श्री भगवद्गीतारण धर्मा में प्रतिपद्य उदार और सहृदय इन दो धर्मों में बाह्यरूप के व्यक्तित्व को देखा है।<sup>२</sup> सरल सोचने का समुदाय बनना हो तो मनीष की के स्वभाव को हल्लाचल रूप में रखा जा सकता है। उनका व्यक्तित्व वास्तव के समान निर्मल और श्रेष्ठ था।<sup>३</sup>

डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है कि एक प्रायुक्त विद्वाने उनके जीवन-कास में ही कहीं सिखाया कि वे महात्मान थे। इस पर एक उप्यवर्णी धार्मिक में सम्बन्ध प्रसन्न किया कि क्या मानव चरित्र के एक भी दोष से युक्त वे थे? प्रायः मैं सोचता हूँ कि वे-सत्य क्या है और मेरा हृदय ही नहीं बुद्धि भी यह उतर देती है कि इन दोषों के धरातल में तो वे मानव ही न रहते।<sup>४</sup> 'सम्बन्ध में वे बोझ' और 'सिमरट' के घोषित रहे हैं। साफ निगाह में पानी पीना साफ बिस्तर पर सोना और सार्विक मोक्ष के वे प्रेमी थे।<sup>५</sup>

धनुसासन वृत्ति—बाह्यरूप धर्मा में अपने एक लक्ष में लिखा है उनमें (श्री बालमुकुन्द वृत्त) द्विप्य भावना (Spirit of disciplinship) निघमान थी। मैं बहुधा अपने धनुषों एवं मित्रों से कहा करता हूँ कि जिस व्यक्ति के धर्मात् में द्विप्य-भावना का तिरोधान हो जाता है, उसका विकास रुक जाता है और उसका धार्मिक और मानवतात्मक पथन प्रारम्भ हो जाता है। × × × × × स्मरण रखिये द्विप्य-भावना का धर्म धर्म के विना भूमि-रिपण नहीं है। द्विप्य-भावना का धर्म है अपने वस्तुत्व के वातापन को बुना रखना और उच्च विचार-वायु को प्रविष्ट होने देना या अक्षर बना।<sup>६</sup>

इस वृत्ति के कारण वे हर-इमेया सिपाही-ही बने रहे। सन् १९४२ की शक्ति में गांधी को का विराम करने पर भी, वे अपने नेता के आदेश के विरुद्ध नहीं गये और अन्य सार्विक के सामान राष्ट्रीय आत्मा की सपटों में बूद पड़े। इस रूप में वे महान् धार्मिक-मानव थे। ऐसे समय उनमें सैम्य धनुसासन का बड़ बड़ा सिपा करता था। एक बार धार्मिक नरेन्द्रदेव के निपल में कायेस से बाबा राजबहाल को वैजाहार से कहा किया था। धार्मिक नरेन्द्रदेव के इति धर्मा की श्री वस्तुत्व सम्मान की भावना थी। परन्तु धार्मिक-धनुसासन और दल-धनुसासन के धार्मिक पर बहूँने नरेन्द्रदेव का उकर विरोध किया चुनाव में कायेसी उम्मीदवार को ही मनवान देने का प्रचार किया और धार्मिक की को हराने में कोई कसर उठा नहीं रखी।<sup>७</sup>

१ 'सरस्वती', जून, १९६०, पृष्ठ १८५।

२ 'सही', पृष्ठ १९३।

३ 'विगत भारत', जून १९६०, पृष्ठ ४०३।

४ डॉ० नगेन्द्र के चोष्ठ निबन्ध पृष्ठ १५५।

५ 'नवभारत टाइम्स', २६ जून, १९६०, पृष्ठ ६।

६ 'श्री इन्दिरा बिना', पृष्ठ ४१ व ३३।

७ 'सही', पृष्ठ ५८।

८ श्री बालमुकुन्द धर्मा 'नवीन'—'बालमुकुन्द गुड समारक-धर्म' के जिक्रोंने प्रथम बनाव, पृष्ठ ४०५।

९. साक्षात्क हिन्दुस्तान, १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ १९।

संविधान परिषद् में उन्होंने हिन्दी के पक्ष में अपनी पूरी व्यक्ति तथा भी धीरे धीरे व स्वार्थों का मोह न करके, अपनी छद्म-भावना पर श्टे रखे। इस विधा में भी ने गहान् अनुशासन वाले व्यक्ति थे।

भारत के स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् रेडियो की भाषा नीति बड़ी विचित्र थी। हिन्दुस्तानी के प्रचार व शासकीय शासन का यह युग था। हिन्दुस्तानी के नाम पर अरबी व अरबी का प्रचार किया जाता था। हमारे हिन्दी के नेताओं ने इस सम्बन्ध में आकाशवाणी कार्यक्रमों में राष्ट्रभाषा हिन्दी को उचित स्थान व आभार दिलवाने की बड़ी कोशिशें की परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला। इस स्थिति को देखकर 'नवीन' की के हृदय में अपनी अनुशासन की भावना जाग्रत हो गई। वे उस समय आकाशवाणी की एक केंद्रीय परामर्श-दात्री समिति के सदस्य थे। उन्होंने समिति से त्यागपत्र दे दिया। अन्य सदस्य को बियोबीहुरि व श्री गीतिकाश्र धर्मा ने भी त्याग-पत्र दे दिया। इसकी हिन्दी बन्द में अनुकूल प्रतिक्रिया हुई। अन्ततःपश्चा धर्मा के सहयोग के कारण, आकाशवाणी को अपनी हिन्दी नीति बचाने पर विवश होना पड़ा।<sup>१</sup>

मैत्री भावना—डॉ० बासुदेवभरण धर्मराज ने लिखा है कि 'मित्रों के लिए वे क्या करत थे। सोचने की बात के पट्टे सोत थे।<sup>२</sup> डॉ० रामप्रबन्ध द्विवेदी ने लिखा है, 'सुमे स्मरण है कि एक बार पश्चिम गिहक कातपुर में भाषण कर रहे थे और मंच पर उनके निकट नवीन भी बैठे थे। पश्चिम की को कामरेड' के हिन्दी पर्यायवाची शब्द की आकाशवाणी पढ़ी और उन्होंने बूमकर नवीन' को से पूछा—'कामरेड' की हिन्दी बोसो। नवीन की ने कहा—'सच्चा'। पश्चिम की ने कुछ ठेक बचान में कहा—'यह संस्कृत है, हिन्दी बोसो'। नवीन की ने उत्तर दिया—'हुएया'। यह शब्द पश्चिम को को पसन्द आया और वह अपने सम्पूर्ण-भाषण में 'कामरेड' की बगल पर हुएया बोसते रहे। इस छोटी सी रोचक बटना के बाद न जाने क्यों मेरे मन में कामरेड शब्द और नवीन की का सम्बन्ध घरा के लिए स्थापित हो गया। आस्यर ऐसा हम-तप हुमा कि नवीन की में मैत्री की वह भावना, जिसे अंग्रेजी में 'कामरेडरी' कहते हैं बूट-भूटकर मरी हुई थी। परिचितों और मित्रों से उन्मुक्त मन से विदना उन्हें पहले से जना जना सबेब उनकी सहानुभूति और समर्थन प्रदान करना, ये 'नवीन' की के स्वामित्व गुण थे।<sup>३</sup>

विद्वान्धारिता और सामाजिकता के पावन उपादान धर्मा की में, विपुल-भाषा में उपलब्ध होते थे। अपनी अराशास-बीजन में इन्हीं गुणों से वे बड़े सोकप्रिय व सर्व-जन हितकारी बन गये थे। श्री भयवतीभरण धर्मा ने उन्हें 'आधुनीय की उपाधि से विभूषित किया है।<sup>४</sup> अपने मित्रों व स्नेह-भाक्तों के प्रति उनका बड़ा ममत्व भरा व्यवहार था। व

१ श्री रामप्रताप त्रिपाठी— सेठ गोविन्ददास प्रतिमन्त्र-बन्ध', श्री सेठ गोविन्ददास की और हिन्दी साहित्य सम्मेलन व्यञ्जित और इतिवत्, पृष्ठ ७१।

२ 'विद्वान् भारत, जून, १९६०, पृष्ठ ४७१।

३ साप्ताहिक 'आज' २९ मई, १९६०, पृष्ठ ६।

४ 'सरस्वती', जून १९६०, पृष्ठ ३९३।

‘दिनकर जी का बत बचाने के लिए, उन्हें ‘अनि-सार्थक’ कहा करते थे। वे सब के भाषण, सब के सहायक और सब के मित्र थे। ‘दिनकर जी ने लिखा है कि “भाषकक इम जिसकी भी वित्तभत्ता की प्रार्थना करना चाहते हैं, उसे सीधे प्रभावशाली कह सकते हैं।” किन्तु, सच तो यह है कि साहित्य में, प्रभावशाली केवल ‘नवीन’ जी थे।’ उन्होंने कभी भी अपने भाषणों ‘बड़ा भारती’ नहीं माना। उनकी मेरी मौखिक नहीं थी। इस सम्बन्ध में लोकनायक सन्त कबीर का यह श्लोक उन पर उचित अनुनात में प्रतिपाद्य किया जा सकता है—

मेह निवाहे ही बिने दूकी बने न धान।

लज से, मन से, सोच से, मेह न बोले जात ॥<sup>१</sup>

अपने मित्रों के द्वेष को वे धरना द्वेष मानते थे। उनके परसम्मान-प्राप्ति में उनकी धार्मिक प्रवृत्ति होती थी।<sup>२</sup> वे अपने मित्रों की बड़ी चिन्ता करते थे।<sup>३</sup> उनके दैनिक जीवन के सम्बन्ध में जो वे उचित न मार्गदर्शक रहते थे। बस्तुतः सौंदर्य न मैत्री के वे जीवनोपयोगी भाषण थे।

बिनायक वृत्ति—अपनी जी की सामाजिक सफलता में उनका हास-परिहास मुख्य अंग है। वे अटकर बिनायक करते थे और इसी कारण वे जसो ही बुद्ध-मिस जाते थे। वे बुद्धी व्यक्त के व्यक्ति थे। वे अपने को ‘बुद्धी पुस्तक’ कहा करते थे।<sup>४</sup> इधर कुछ दिनों से उनका जीवन भी बुद्धी पुस्तक की तरह हो गया था।<sup>५</sup> अपने कुछ हास्य से अपने मन्त्रियों या स्वामियों को पुञ्जायमान कर दिया करते थे।

उनके हास्य के माध्यम विभिन्न प्रकार के थे। कभी ता-वे नाम बियाह कर करते या लिखते थे, कभी—‘मुंशी मनीमाला’ को उलटकर उसका बाह्यी नाम ‘सीधु पोगो बान’ बना देना<sup>६</sup> या ‘अर्जुनाहास को’ कान-हिताप नाम लिखना जिसका अर्थ ‘बड़प्पा या गवा है।<sup>७</sup> पत्र में भी इसी का ही रूप कहीं-कहीं मिलता है कभी—

१ ‘निबन्धात्त टाइम्स’, १६ जून, १९६०, पृष्ठ ५।

२ ‘नवीन’, अक्टूबर, १९६०, पृष्ठ ६५।

३ श्री सुर्वभारतपाल व्यास, ‘बीला’, समुक्ति-ग्रन्थ, पृष्ठ ४९२।

४ “धीनपर में सोचो होटल के पास ही एक छिपर है जिसपर का लिख-लिख रहते हैं, रिकॉर्डबुक जी का स्वागिन किया हुआ है। जब भी बाबुराम सक्सेना और हजारीप्रसाद द्विवेदी की मित्र जी का बर्तन करने को उस छिपर पर जाने लगे, नवीन जी ने मुझे उन लोगों के साथ जाने से रोक दिया। कहा—“इन लोगों को नकल मत करो। वहाँ हार्ट स्ट्रेन कर बैठे तो हम मलकर रह जायेंगे।” —श्री रामचारी सिंह ‘दिनकर’, साप्ताहिक ‘हिन्दुस्तान’, अद्योचित-संक, पृष्ठ ६।

५ “Don't hesitate, I am an open book.” ( जिसको मत में एक पुस्तकी हुई पुस्तक है। )—‘नवीन’ जी, ‘मैं अपने मित्र’, पृष्ठ ३२।

६ श्री विद्याराजचरण गुप्त का मुझे लिखित ( दिनांक १६ व १९६१ का ) पत्र।

७ ‘महती’, १६ अक्टूबर, १९६०, पृष्ठ ८।

८ साप्ताहिक ‘हिन्दुस्तान’, १० जुलाई १९६०, पृष्ठ ११।

“श्री पण्डित बनारसीबास जी साह जी चतुर्वेदी की सेवा में,  
महोदय,

आपके पण्डित श्रीकृष्णदास वालीवाल आपके कुर ब्रह्मनाथ पुत्रमोय जी मैबिलीघरल  
जी गुप्त के आवास में अस्तुकतापूर्वक आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

क्या आप अपना कञ्चु संभालते हुए यहाँ अपने अनुप्यवों से गुप्त जी के आवास को  
कुर-कुरा करने की कृपा करेंगे—आपका हार्दिक आभारपूर्ण धर्म, १२ १२ १२ । श्री पण्डित  
बनारसीबास जी साह जी चतुर्वेदी, साह-सबन १२१, मार्च एकेम्पु ।”<sup>१</sup>

सामान्य बार्धातान में भी वे विनोद की बात कहकर, बाठाबरस को उत्कृष्ट कर दिया  
करते थे ।<sup>२</sup> उनकी मौलिक मजाक की कल्पना के लिए, निम्नलिखित दो पद्य स्मरणीय हैं—

पासनस्य सु-सबने घंटायैर्ब न बैठते को,  
तैनाम्बा यदि सुतिनी बर बन्ध्या कीहूँको नाम ?

इस पद्य में महादेव ने पार्वती से कहा है—

कन्यी तोनपर धनु  
नास्ति टट्टी धर्म सुधम् ।  
सुनासा टट्टि साधस्तु ।  
पुष्य लम्बा बरानने ।<sup>३</sup>

इस प्रकार वे अपनी विनोदी वृत्ति से सब का मनोविनोद किया करते थे । उनका यह  
विनोद कभी-कभी अपने दिनों पर धारीरिक क्रिया-प्रक्रिया के रूप में भी उतर पड़ता था ।<sup>४</sup>  
उनकी हास-परिहास की वृत्ति ने उन्हें बहुत दिनों तक स्वस्थ रखा । एक प्रान्त कवि ने कहा है  
कि “हैंसते समय दुनिया साज होती है रते समय कोई साज नहीं रता । ” हास्य शक्ति  
सामाजिक भाव माना गया है ।

१ 'नवभारत टाइम्स', २६ जून १९६० पृष्ठ ७ ।

२ ऐसे ही, एलार्कुमल से धरकराचार्य जी के जन्म-स्मरण तक जाने का जब कार्यक्रम  
बन रहा था, तब नवीन जी ने बड़े ही विनोद से कहा—' बिनकर, ये लोग । यानी मोदुरी  
की सत्यनारायण, हजारीप्रसाद जी (धारि) धाम्नी जी के बेटे हैं । ये धार्ये तो कम जी  
करेंगे । मगर, अपना तो बापु के गये ठहरे । जाया और हीर्षी-हीर्षी करके छो रहे । सी,  
इन्हें तो जाने दो, किन्तु तुम मत जाना । ’—श्री रामधारीसिंह 'बिनकर', साप्ताहिक  
हिन्दुस्तान अखबार-धरक, पृष्ठ १ ।

३ 'बीला', स्मृति-धरक, पृष्ठ ४११ ४१२ ।

४ श्री सुयनाचरण व्यास, बीला, स्मृति-धरक, पृष्ठ ४११ ।

५ 'Laugh and the World laughs with you,  
Weep and you weep alone

For the sad old earth must borrow its nuith  
But has trouble enough of its own”

Ella Wheeler Wæcox, 'Solitude' (1883)

मातृक और कल्याणशील—नवान भी मूलतः बलि से प्रभावित थे अपनी भावनाओं से अधिक परिभाषित होते थे। उनमें बुद्धि-वृद्ध की अपेक्षा हृदय-वृद्ध का प्रमुख अर्थ था। आचारिक व कल्याण के लक्ष्य उनका व्यक्तिगत के प्रमुख धर्म थे। इस प्रकार के बहुत अन्धी धारणा में आ जाते थे और धार्मिक दायरा भा हो जाते थे। बच्चों को मारना-पीटना उन्हें अज्ञान नहीं लगता था और ऐसे समय उनकी कल्याण उमर का गाय का का नो से लिया करता था।<sup>१</sup> चीन-बुद्धियों का देवद्वार व सहज हा प्रविष्ट हा जाया करते थे। वे स्त्री-पुरुष पर पहुँचकर निकट बसने के बजाय दिक्रि के दीने किसी अन्तर्मन का देहर पर बास्य भा जाया करते थे।<sup>२</sup> बीमारों के दिनों में भी धर्मों की ने जाने पद्य और बिक्रिता के निरु बचाने हुए पैरों का मोह नहीं किया और उनमें का भी कुछ धर्म के अकल्पमन्त्र व्यक्तियों को देखे रहे।<sup>३</sup> अपनी इसी मातृका व कल्याणशीलता के कारण वे राजनीति में भी धर्म लोगों को पद निम्नाने व सहायता करने में सदा प्रयत्नी रहे, परन्तु कुर कभी कुछ नहीं किया। एक बार भी अबाहरतास नेहक ने कहा था कि यदि वे बलि न होते तो राजनीति में बहुत धार्य जाते और यदि राजनीति में न होते तो एक बहुत बड़े बलि होते।<sup>४</sup>

मातृक वे इनमें अधिक थे कि अन्तर से लिया करते थे। इन्हीं के एक बलि-उन्मत्तन में उन्होंने एक पेरना भर कबिता सुनी तो उस बलि के रोते हुए पैर पकड़ लिये।<sup>५</sup> ऐसे अवसरों पर उनका सौह पुरुष मोम के समान चिपस जाया करता था। आचारिक में वे कभी-कभी बहक भी जाया करते थे। ऐसे समय उनके आचारिक के साथ उनकी अस्थिरता भी निष्ठ जाया करती थी।<sup>६</sup>

वे इनमें मातृक थे कि अन्तर मिलने वाले को उनकी स्थिति का टीक भाष भा नहीं होता था। क्रिस्ता ही बार तो वे अन्तर में माता के सरदार-भार को धार जानेवाले रास्ते में

> एक दिन हम दोनों सप्या-समय संसर् के सदस्यों की बस्ती मार्च ऐक्यु में दृष्ट रहे थे। सहमा एक घोर से एक बच्चे का चीरकार सुनाई दिया जिसे अपने पिता पबका अधिकारक का कोप मानन बनना पड़ा था। बाधकृत्य पित्रे वाले की बगल अन्तन सुनकर पोन्नेसोस की बरबडे हुए गरक उडे घोर उन घोर भरते। मैं हनन-ना हो गया और उनके साथ सीढ़ियाँ चढ़कर अन्तर पहुँचा। उनका उदर का देहरर ताकूत ही नहीं वादित भी सहम गया। वह हनर देकर मुझे धारकी एक अन्तराधिग रचना 'तामबना' की दो बंकिर्वा स्मरण भा यों—

बच्चों के माँ-बाप कभी यदि उनको मारें,  
तो भी बच्चे उन्हें छोड़कर जिसे पुकारें ?

—श्री मैजिमीयारल गुल, तस्त्वनी मून, १९६०, पृष्ठ ३००-३९।

२. सासाहिक 'नेत्रिक', १८ मार्च, १९६०, पृष्ठ ७।

३. अन्तराल टारुम्ब २६ मून, १९६० पृष्ठ ६।

४. 'दिव्यप्रसव', सुनाई, १९६०, पृष्ठ ४।

५. 'बीला', स्मृति-वर्धक, पृष्ठ ५३६।

६. श्री मोरीकम्बज उवाच्याय, 'बीला', स्मृति-वर्धक पृष्ठ १०३।



जब स्वाम पर एक बिजली के झम्मे के नीचे खड़े कविता लिखते दिखलाई पड़े जिसके निम्न भावकम कागपुर का पुस्तकालय खरी इष्टर कासेब है और जहाँ पहले विवाहोपनिषद् मीरानक कासेब और स्कूल था।<sup>१</sup>

अनन्त-मल्लह—पत्रकृता के मोप शन से वर्मा जी के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ था। पत्रकृता के रूप में वे सदा प्रसिद्ध रहे हैं। उनके काव्य में भी यह रूप दिखाई देता है। जीवन के अन्तिम दिनों में तो उन्हें कितो बात की चाह नहीं रह गई। कबीरदास का यह बोधा जन पर असाधारण प्रयुक्त होता था—

चाह गई, चिन्ता गई, मनुष्य बैपरचाह।

जिन्हें क्यू ना चाहिए, वे नर धार्जसाह।।

वर्मा जी के पत्रकृतन में अरुस का अभाव था। पत्रकृता के मुख में यही भावना कार्यधीन थी। मस्ती मादकता मत्तमात्मान और चिन्ताबिहीनता मार्गों बनीभूत होकर, उन पर प्रभुवाकर बिखर गई थी। कवि ने स्वयं अपने आपको मस्त फरीर कहा है।<sup>२</sup>

श्री भवतीचरण वर्मा ने लिखा है कि 'मैंने उत व्यक्ति को टूटते हुए देखा है जिसके अन्तिम क्षण तक वह लड़ता रहा। उसके अन्तरवानी मैत्री और ईमानदारी अन्तिम क्षण तक कायम रही—अन्तिम क्षण तक यह उदार रहा, जनों का अन्त्यारण ही करता रहा।'<sup>३</sup>

उनकी पत्रकृता के अन्तर ही श्री माखनलाल गुप्तजी ने लिखा है कि 'जो वास्तव्यय नखीय भी आचार्य महावीरप्रसाद जी जिनकी तथा अपने अन्त्य गुणगनों के काबू में नहीं रह सके, सुने बार-बार सन्देश होता है कि वे अपनी मस्यु के काबू में कैसे रह सकेगे ?'<sup>४</sup>

अवधर-शानी—अवधर अन्त पोस्वामी तुलसीदास का है जो कि अपनी अर्ध-अन्ति के साथ वर्मा जी पर भी अरिताई हो गया है। इस रूप में वे 'अन्तर मादकता' और 'लीलकण्ठ' के रूप में सम्बोधित किये जाते थे।<sup>५</sup> अपनी अन्त्यावस्था में भी वे अपने शान के मोह का संवरण नहीं कर सके।<sup>६</sup> राजनीति में शरी के रूप में जो अ्याति थी रषी अहमद खिरबई को मिली-बहु साहित्य में निराला व नदीन को प्राप्त हुई। यह बात अर्ध-विरिचि थी कि वर्मा जी के मुख से 'नहीं' नहीं निकलता है। परिचित-अपरिचित सभी व्यक्ति उनके घर ठहरते थे और अोजन-मास्ता अ्यादि सभी का वे प्रबन्ध करते थे। वर्मा जी का रसोहया मुरली भी जन्ही

१ साप्ताहिक 'भाब', २६ मई १९६०, पृष्ठ ६।

२ 'अपलक', पृष्ठ ७३।

३ 'सरस्वती' जून, १९६०, पृष्ठ ३९४।

४ वहीं, पृष्ठ ३८९।

५ श्री रामसरण वर्मा—साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', कबीर बाबसाह मेरे शान अन्त्यावलि-अंक पृष्ठ १७।

६ 'पहुली बीमारो के बाब मैंने एक दिन उनकी पत्नी से पूजा—वर के अर्ध-अर्ध का क्या हाल है? यह बोली—किसी तरह चल जाता है। सुविस्त तिरु, यह है कि बालकृष्ण का हाल नहीं करता।—श्री रामदायी सिंह 'दिनकर', साप्ताहिक हिन्दुस्तान अन्त्यावलि-अंक पृष्ठ १०।

के समान भावुक व सेवा-साधो था। श्री मूर्धनारायण व्यास ने लिखा है कि श्री श्रीनारायण बनुरेडो ने उस पर भी एक कविता बनाई थी।<sup>१</sup> परन्तु यह बात ठीक नहीं है।<sup>२</sup>

वे विभिन्न प्रकार से सहायता दिया करते थे। उन्होंने कई बार अपने स्नेहियों को मनीषाबंद से दसरे भेजे।<sup>३</sup> साहित्य-प्रियों के सहायार्थ उन्होंने खुश सेवक लिखकर, उसके पारिवारिक का देखा, उनके पास भिजवाता था।<sup>४</sup> श्री-ने पहिने के कपड़े भी उन्होंने षटपट मापने वालों को दे दाने थे।<sup>५</sup> 'नबीन' श्री को तीन-श्री दसरे मासिक प्रयाग' परिवार से मिलते थे। हिन्दु कुल रकम बड़ा किसी सहाय परिवार को दे देते थे।<sup>६</sup> वे इनसे मासे थे कि उन्हें 'मोतेनाथ के बियोसण से बियुपित करला अनुचित प्रतीत नहीं होगा था।'<sup>७</sup> हमने देखते समयसे वे हँसकर बेबबूठ बन जाया करते थे। किसी ने याचना की थीर उनके हाथ कर्ण का हाथ सहायता को बढ़ा। फिर चाहे मापने वाला मूढ़ ही क्यों न हो उनकी सज्जनता का नाम ही क्यों न उछा रहा हो।<sup>८</sup>

इन प्रवृत्तियों के कारण वे अपने मन को निष्कपटता सात्विकता व सौम्यता को बड़ी अपनी समाज में बिखेर सके बड़ी उनका काव्य में भी ये ही गुण प्रचुर-मात्रा में उपलब्ध हो सके।

निर्भीक-प्रखर—उर्मा श्री जहाँ बया व कष्टों के प्रसंग पर अत्यन्त भावुक थे बहाँ व्याप व सिद्धान्त के पीछे छिद्र भी बटाने के लिए तैयार थे। वे व्यक्ति का बिरोध नहीं करते थे बलितु सिद्धान्तों का बिरोध करते थे। उनका उग्र व प्रखर स्वभाव बार बार उभर आया करता था। इस मामले में वे किसी का भी मय नहीं खाते थे धीर अपनी बात का ही समर्थन करते।

१ 'बीरणा', स्मृति-संक, पृष्ठ ४२२।

२ श्री श्रीनारायण बनुरेडो का मुझे मिलिन (दिनांक १६/१/१९६० का) पत्र।

३ कन्हूपाताल मिश्र 'प्रभाकर', साप्ताहिक हिन्दुस्तान, १० जुलाई १९६०, पृष्ठ ११।

४ "यह एक अकरो पत्र है। मेरे एक मित्र हैं धीर साहित्य-सेवी हैं। वह बीनार एने हैं। प्युरसो के गिहार हैं। बहुत बुद्धि हैं धीर बहुत निर्धन। मैं उन्हें छ महीने तक धाराम देता चाहता हूँ, मुझे २५) महीने उनसे लिए चाहिए। क्या धाय यह कर सकते हैं कि मैं 'बिद्याल भारत' के लिए छ महीने तक लगानार सेत्र निर्णय धीर धाय ५) महीना लीये जहाँ के बात मेरे सेत्रों के पुरस्कार के रूप में, भिजवाते रहें?"—श्री बनारसीदास बनुरेडो का मिलिन श्री बालकृष्ण शर्मा का (दिनांक १० जून १९६० का) पत्र, साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' अर्द्धात्रि-संक, पृष्ठ ११।

५ श्री रामचरण शर्मा—'नवभारत टाइम्स', साधर सङ्कल्पना बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', २६ जून १९६०, पृष्ठ ३।

६ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अर्द्धात्रि-संक, पृष्ठ १६।

७ श्री रामचरण शर्मा—'नवभारत', स्वर्णोद दादा नबीन श्री मार्गशीर्ष संक २०११, पृष्ठ ७०।

८ श्री रामचरण शर्मा, साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अर्द्धात्रि-संक, पृष्ठ १३।

अनुचित बात पर उन्हें एकदम क्रोध या क्रिया कटा बा। यी कृप्युसास भीतरानी ने सिखा है कि 'बे बरम मित्राब के बे। मैंने कई बार उन्हें प्रेस-पत्रो से भीबे मजन में सरन की कार्यवाही के बोध गरम होते हुए देखा बा। सुभे सँका होती बा कि उनकी बाहुकटा राजनीति के सोपान पर बड़ते समय प्रबन्ध ही बाबक रही होयी। मैं नहीं जानता कि उन्हें अपनी स्पष्टबाहिता को क्या नीमल सुझानी पड़ी। उन्हें ग्राम्य बातों की अपेक्षा बाह्याङ्ग्य और डॉग से प्रस्नस्त हो चुला बी।<sup>१</sup> 'बे स्पष्टबादी व्यक्ति थे। जो बात भी कड़नी पड़नी, उसे बिना किसी लाप-लापेट से कह देते थे। बिचार न बिपमता नामक वस्तु का उनके हृदय में कोई स्थान नहीं था। साफ बात मुँह पर ही कहते हुए सगे बाहे मला।<sup>२</sup> उनके व्यक्तित्व में ठेकठिक्का थी। बे बड़े खरे थे।<sup>३</sup> इस ठेकठिक्का पुस्य में हिन्दी के बिरोध को व्यक्तिगत रूप से भी कमो सहन नहीं किया।<sup>४</sup> बे इतने निर्भीक थे कि जिस बात को बे कहना चाहते, उसे कहकर ही छोटे बाहे फिटना ही बिरोध क्यों न हो घोर कोई घट मने ही हो बाय। परन्तु बाबा-मानन में भी यही छूटा फिर उनकी बिचलाई देती थी।<sup>५</sup>

१ 'बीरगा', स्मृति-दीक, पृष्ठ ५२६।

२ 'एक दिन एक ग्राम्य महारजन के काम-बिम के उपलक्ष्य में एक कवि महाशय कुछ पद्य लिखकर लामे घोर सुभे सुनाने लगे। वह रचना सुभे न उनके योग्य लगी और न उन्होंने के लिए बिनके लिए वह लिखी गई थी। फिर भी सुभे यह कहते हुए लकोब हुपा। एक पद्य के लिए प्रबन्ध कह बिना इसे न पड़ा बाय तो प्रच्छा। उन्होंने 'हाँ' तो कह बिना परन्तु ऊपर के मन से। मैं सोचने लगा, लेखक को अपनी रचना का मोह कैसा होता है। तब मुक बालकृष्ण धा गये। कवि महाशय ने सुभेसे कहा— नबीन जी को भी सुना दू और वह पद्य भी। मैंने कहा 'बसी प्रापकी इच्छा। नबीन जी कबिता सुनने के पहले ही अपनी ब्रांसा करमे लगे—'अरे इनका क्या कहना, ये तो समा-सम्मोहन हैं। परन्तु क्यों ही कवि महाशय अपनी रचना पढ़ने लगे, नबीन जी का भाव परिवर्तन होने लगा। उस पद्य के सुनते ही बे कठोर होकर बोल पडे 'कुछ नहीं' कुछ नहीं, वो लौड़ी बी। इने फाइ केकी इसे समा में मत पढ़ना। —बी मैबिलीकरण सुता-सरस्वती', जून १९६१, पृष्ठ १७८।

३ भी पशपाल बेन—साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान, नबीन जी कले पए, १० जुलाई १९६०, पृष्ठ २७।

४ 'जिस दिन बी संकरराज देव ने अपने भागण में कुछ ऊन-जतुन बाते हिन्दी के बिरोध में कहीं, उस दिन इस तर केसरो ने उन्हें डाँटा घोर अपनी बोनी बाहुँ ऊपर उठा ली। उस समय कई सबस्य उन्हें समभा बुलाकर परिवर से बाहर ले घाय। बी बाइरल धर्म, साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान १० जुलाई १९६१, पृष्ठ २६।

५ '१९४९ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के प्रस्ताव में धर्मा जी ने धर्म के अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के ऐतिहासिक अगस्त अधिवेशन में एक संशोधन उपस्थित करने की सुचना दी। वह संशोधन नहीं अपितु उनकी अपनी भाषा में प्रस्ताव का पुनर्लेखन बा। स्वभाबत-अप्यक्त महोदय ने उस संशोधन को उपस्थित करने की अनुमति नहीं दी और उसे नियम बिच्छु घोषित किया। इस तर धर्मा जी न बिड़े, न तिलमिताये उन्होंने बहुत ही

साहसिकता—श्री० बख्त ने 'जवान बी को बिना दाई' कहा है। 'जिन्दगी' वाली बट्टा ही प्रमाणित कर सकती है कि वे नामुस में रहने शुरू हो। मरुत व नामों के सबसे धाम रहते थे और ऐसे समय धर्म प्रार्थों का हँसना पर तब कि... बख्त के धर्म के आधार पर वे धाम-धोखा कुछ नहीं देखते थे। बख्त का ही समय इनका मुख्य लक्ष्य रहता था। ऐसे समय के धर्म जनकाली दुर्गों का... स्थिति को सम्हालने में सफल हो बाया करते थे।<sup>१</sup> धर्मों की वे धर्म...

धामत माव से पूछा कि 'बधा उन्हें बोलने का प्रवृत्त विवेगा। धर्मों की... धीर उन्हें बोलने का प्रवृत्त विगा। धर्मों की ने छोड़े होते ही बट्टा... उनके बोलने से स्थिति में कोई प्रवृत्त प्रार्थना। इस पर धर्मों... बाधो, बेट बाधो। धर्मों की ने शान्त माव से उत्तर दिया—... बेट जाता है। किन्तु बोलने का उन्हें प्रवृत्त या धीर लगना... कायेपो नै धर्मों को छोड़ो धर्मों बना को। धर्म में उन्होंने धर्म... दिया—'मिरे को विचार ये, मैं प्रवृत्त कर बुधा। धर्म धर्म... धर्मिक के समान पालन कर पा।'—श्री रामधरल विपरीत,...

१ 'मये पुराने खरोपे', पृष्ठ २६।

२ 'एक बार जलाब जेत में कातपुर के एक... धर्मर विवर्ध उनके साथ थे। इन प्रतिष्ठित धर्मर बन की... का। मकरधर्मों को प्रवृत्त में धर्मों की हास बनने के... कायेत बन ने धर्मों की व धी रफी धर्मर से किसी प्रवृत्त... को कहा। सभी प्रकार का प्रतिबाध रहते हुए भी धर्मों... हुए उनके घर से पत्र भरणाने का प्रवृत्त किया एक धर्म... के माग से उनके बात बन धर्मों की धर्मरवा थी। धर्मर... के धर्मों से पत्र या सभना प्रत्यन्त कठिन हो नहीं बरप... लयो का साह्य न था कि बहु इत कतरनाक बाय को... इन धर्मों को धर्मर करने का निराधय दिया। धर्मों में... पदा धीर धर्म में उन्हें धर्म मिल सका। धर्म धर्म... बहु बिना धोनी का विचार बने धर्मों मित्र की अनुभव... हुए।'—श्री पञ्चालात विपरीत, धार्मिक 'विपुल',

३ 'बहुतना धर्मों को धर्म के उपरान्त...

एकचित हो गई थी। बख्त बहुलता की के मित्र, धर्म... धीर भीड़ के कारण उनका धीरर बहुलता धर्मर... धोलने को कहा था। मैं नहीं चाहता था कि वे धीर... धीर से धीरर धर्मना हाथ धिमाधर धर्मरवालों... धीर से धर्मरवाले (धर्म) विपुल धर्म में धर्म... धर्मर-धर्म, पृष्ठ ५९६।

काशी साहित्यिका प्रकाशित की थी। उन्होंने दिन रात कष्ट भेसे परन्तु जब फलप्राप्ति का प्रबन्ध भाया तो वे दूर ही बने रहे। तब भी राजनीति प्राण-दान की राजनीति थी।<sup>१</sup> इसमें वे बस वे घोर खूब बूझे। जब 'कुर्सी' व 'भोग' की राजनीति घाई, वे अपनी प्रकृति के अनुकूल गिरपेल रहने लगे। स्वतन्त्रता के परचाट् वे निरे बैस मछ ही बने रहे, राजनीतिज्ञ नहीं। यदि उनमें लोकपटुता होती तो वे प्रबन्ध ही अपनी स्थिति का पूरा 'सुदुपयोग' करते घोर राजनीति में मन्त्रिपत्र प्राप्त करते तथा साहित्य में प्रकिये व सम्मान के घागी होते। परन्तु वे आर्चान्त बाबा भोजानाच' ही बने रहे।

अभ्ययन—अपने बहुसुखी व व्यस्त जीवन के होते हुए भी सर्मा जी को अभ्ययन का व्यसन न था। वे काठवास में किताबों ही पढ़ते रहते थे। उनको सिर्फ पुस्तकों के अपने पास कुछ रखते भार लगता था।<sup>२</sup> श्रीकृष्णभास जीवरानी ने लिखा है कि वे मेरी अंग्रेजी पुस्तकों, कविताओं तथा नाटकों से प्रम रखते थे। गामिब, सेसपियर, पचाकर, औरच-बाणी आदि का उनका विशेष अभ्ययन था।

अपनी माता से सीखा वह पर भी उन्हें बड़ा स्वीकर था—

अरि जाहु रो जाब, ऐसी मेरे कौन काब,  
घामे कमल नयन नीके देखल न बीन्हें ॥<sup>३</sup>

सर्मा जी तुलसीदास के मछ थे। उनके ऊपर सूर मीरा और कबीर का रंग बहुत पड़ा था।<sup>४</sup> उन पर उपनिषद्, बीठा तथा भागवत का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा था।<sup>५</sup> आत्मिकीरामायण का भी उन्होंने विशेष अभ्ययन किया था।<sup>६</sup> वे समाजवाद के छाठा थे<sup>७</sup> और प्योरवाच केरिफ एगिस्त आदि के मतों का उठरण देते थे।<sup>८</sup>

उनके काव्य पर विद्वक महात्मा गांधी व आचार्य विनोबा भावे के आधुनिक सिद्धान्तों व अर्थ-प्रस्तावितों का प्रभाव देखा जा सकता है। वे हिन्दी संस्कृत संयत्ता व अंग्रेजी भाषा के साहित्य में आकण्ड बूधे हुए थे।

'नबीन' की का यह विश्वास था कि विज्ञान के द्वारा आत्मा की स्थिति प्रबन्ध ही प्रमाणित होगी। वे आत्मज्ञान को ही जीवन का अरमोद्देश्य मानते थे। वे आटे की संस्कृत अंग्रेजी भाषी 'विकसनरी' हमेशा अपने पास रखते थे और उसी से अम्ब देखा करते थे। उन्होंने खेती कीट्ट तथा बच् सबर्न का भी अम्ब अभ्ययन किया था।<sup>९</sup> आस्कर वाइस एवं

१ 'मे इतसे मिला' पृष्ठ ५०।

२ 'अहरी', १९ अक्तुबर १९६० पृष्ठ ८।

३ 'सरस्वती' जून, १९६० पृष्ठ १७८।

४ 'व्यक्ति घोर वाङ्मय', पृष्ठ १४३।

५ 'बीछा', समसि-अंक, अग ४९१।

६ 'अजिता', अमिका, पृष्ठ 'अ'।

७ 'अबमारल डाइस', २६ जून, १९६० पृष्ठ ६।

८ 'अवाति', अमिका।

९. श्री अय्यमनारायण त्रिपाठी द्वारा आत।

विक्टर ह्यूगो उनके प्रिय साहित्यिक थे।<sup>१</sup> 'कबीर प्रत्याबसौ' का उन्होंने गहन अध्ययन किया था।<sup>२</sup> अपने मोहन-काष्ठ में वे कान्ही भी की पुस्तकें और उनका पत्र 'बन इच्छिया' खूब पढ़ते थे। इसी प्रकार विलक बो का साहित्य और साता साजराउठय के पत्र 'प्युरिस' का भी काफ़ी अध्ययन करते थे। यी साबले के भाषण एवं रवि बाबू की पुस्तकों का भी उन्होंने यत्नपूर्वक किया। एच० बी० वेन्स तथा जार्ज बर्नार्ड शा के भाङ्गमय का भी उन्होंने वाचन किया।<sup>३</sup> रिशाराबसा में उन्होंने हिन्दी एवं बराठी के कई उपन्यासों का भी अध्ययन किया था। 'भारतमठ' उनका प्रिय उपन्यास था।<sup>४</sup> 'नबीन' भी ने हर्बर्ट रीड की 'पोमट्री एण्ड यनाक्सिस'<sup>५</sup> और यी मार्बलर की धारमचरित्सात्मक पुस्तक,<sup>६</sup> क्यो उपन्यासकार पिडिमोर श्वेड कोफ, टासस्टाय व तुर्वनैद के कर्मण 'सीमन्', 'भनाकटेमिना' तथा 'सिखा \* के भी नाम उनमें अध्ययन-साजिका में पाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने, साहित्य, दर्शन, इतिहास, राजनीति, विज्ञान आदि समस्त क्षेत्रों का बहुत अध्ययन एवं मनन किया था।

रचना विधि नबीन की में कहा है—“सिखने का ढंग ऐसा कि जो कोई भी छत्र छापने या क्या उसी पर मग्न होने लया घोर उसको प्रथम पंक्ति सिख ली। अधिकतर एक ही शैली में लिखता हूँ। मैं कॉपीय पॉसल से सिखता हूँ ताकि पिटें नहीं। सिखने के लिए मोट्टुके खोद लेता हूँ। प्युब्लिशिंग पैर से इसलिए नहीं लिखता कि यदि उसे खोसूँ और बीच में छोड़ने लग जाऊँ तो स्वाही मुझ आय घोर पति एक आय। अपनी कविता सिलकर किसी को सुनाने की इच्छा नहीं होती। मैं कोई प्रेमी भा भाय घोर कहे तो दूसरी बात है। सिखने का कोई समय भी नहीं है। जब उर्मा पाती है, सिख लेता हूँ। बात यह है कि मेरे जीवन में नियमितता का अभाव है, इसलिए नियमित सिखने का अभाव नहीं है।”

'नबीन' की एकलत या 'मुझ' धारि के धारम्बर प्रिय व्यक्ति नहीं थे। प्रातः स्वप्नाहार करते में पर बैठकर वे उपकाल साहित्यिक रचना का निर्माण कर लिया करते थे। यी प्रमाकर ने उन्हें कैलाश-कारावास में 'अभिला' काव्य लिखते हुए देखा था। उनका दर्शन उन्होंने इस प्रकार से किया है—“एक दिन मैं बरनों के पीछे यी ही का निखता, तो देखा, घात पर उलटे लेते वे कुप लिख रहे हैं। मैं धारे-धीरे जाकर धारोक बूझ के पीछे खड़ा

१ यी जयवनीकरल बर्मा द्वारा ज्ञात।

२ यी कन्नालाल त्रिपाठी द्वारा ज्ञात।

३ यी ईश्वरत घाडी द्वारा ज्ञात।

४ कवि के सहपाठी यी व० च० गोखले इन्वीर का मुझे लिखित (दिनांक २४ १ १९११ का) पत्र।

५ 'विद्याल भारत', कलकत्ता, १९११, पृष्ठ १५।

६ 'त्रिचकपा', मार्च, १९५१, पृष्ठ ६३।

७ 'बोला', बृह, १९५०, पृष्ठ ४६६-४७१।

८ 'मैं हूँ यी मिला', पृष्ठ ५५।

९ 'मन्नालाल दासभा', २६ अग, १९६०, पृष्ठ १०।

हो गया। वे गुनगुनाते बातें घोर लिखते जाते। बीच में बोड़ी बना लेते, बी-बार कथ खींचते घोर बिचारों में खो जाते। बोड़ी बुझ जाती पर उन्हें पता न चलता घोर के कथ खींचते रहते सुर्मा न निकलता, पर उन्हें इसका पता ही न चलता। बार में व्यान टूटता तो वे फिर बोड़ी बनाते घोर २४ कथ के बार वह फिर बुझ जाती तो नई बनाते। गुनगुनाते बरबर रहते घोर मन में बसा भाव होता खेद के को वे रेखाएँ बसी ही बरबरी रहतीं। कमी के उपरुक्त हो उठते, कमी एकदम उबाल। कमी के शून्य नाम से बहुत दूर सामने बैठते रहते तो कमी के सिर जमीन पर रख लेते घोर उसे धपनी सन्धी सुबाधों में लपेट लेते। फिर सिर घुमते, कुप्य सोफते, कुप्य सुनतुगाते घोर कुप्य लिखते। वे कविता लिख रहे थे। कोई ४५ मिगट बार के छठे घोर धपनी बैठक को घोर बने, तो सुने गया कि बीसे कोई प्यूनवान धपनी पट्टों को मोर करा कर प्रकाशे से धा रहा हो। सुने यह धर्मीय ता जया, पर बार में जाना कि वे धपने विद्याल काव्य 'कविता' का परिमार्जन कर रहे थे घोर लिखते समय धपनी नायिका के बुझ में इतने दूब जाते थे कि जनका सम्पूर्ण रवायु-जाल बोझिल हो उठता था।<sup>१</sup> कवि के सैखन-विधि से जसकी एकरसता लम्पयता व बहज प्रकृति का आभास मिलता है।

काव्य-पाठ—'नवीन भी धपने कविता-पाठ में बिष्पात व प्रतिष्ठा प्राप्त थे। रंमंज पर इस समय जनका पूर्ण आधिपत्य हो जाया करता घोर के श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर दिया करते थे। कविता पाठ करते समय व्यक्ति का ऐसा उठार-बढ़ाव होता था जो मार्गों के नाव द्वारा मूर्तिमान् करता जाता था।<sup>२</sup> डॉ० मनेन्द्र ने लिखा है कि "काव्य-पाठ करते समय जनका व्यक्ति एक विशेष रस-बीधि से मन्थित हो उठता था जनका स्वर-संवात जहाँ हरय के कविराज का बाहुर की घोर संप्रेषण करता था; वही धर्म-निमीलित धीरे-धीरे जस बर्धित रस को फिर स प्राणों की घोर खींचने का प्रयास-सा करती थी। काव्य का सन्धार्य जेने दूसरे बार श्राणों के रस से समिपिक हा उठता था। उनके इस लम्पय काव्य-पाठ को देख-सुनकर घनावास ही संसृष्ट काव्य-धारा की इस माय्यता का सञ्जन हो जाता था कि कवि करोति काव्यानि रसं आनाति पवित्रत"<sup>३</sup> उनके कविता-पाठ को भी प्रीताद्यमण चतुर्वेदी ने कुछ हिन्दी उच्चारण के धारण का मसूना माना है। शर्मा भी में मालवा के माधुर्य घोर उत्तरप्रदेश के पुंजल का धपुपुप मेस हुआ था।<sup>४</sup> जब वे बेसमकि की कविता का पाठ करते थे तो परिस्थिति को प्रकर्मित कर देते थे।<sup>५</sup>

डॉ० बल्लभ ने उनके कविता-पाठ की समय स्थिति-विन की रेखाएँ खींचते हुए कहा है कि 'माधान ऊँची घोर भारी उम्ह-उम्ह का उच्चारण प्रलय-मलय धाक-साफ पूरी

१ 'नवभारत टाइम्स', २६ जून, १९९०, पृष्ठ ६।

२ 'मैं इनसे मिलता', पृष्ठ ३५।

३ डॉ० मनेन्द्र के लेख निबन्ध, पृष्ठ १५०।

४ 'सरस्वती', जून १९९०, पृष्ठ ३९५।

५ वही, पृष्ठ ३८०।

परिचय-राम से ऐसी सधी जैसे काई पक्का बायक कविता सुना रहा है। नबीन जी धारम  
मीन हाकर कविता सुनाते थे पासची मार, रीढ़-गर्दन सीधी कर छापी फुलाकर जैसे कोई  
साधक प्राणायाम करने को बैठा हो।<sup>१</sup>

संगीत प्रेम—उनका कण्ठ मधुर था। उन्हें यह बन्मनाथ प्राप्त हुआ था। उन्होंने  
संगीत का विषय बहुत ध्यान में रखा था और वे आठवेंस आठवीं सीमपलाठी, केदार  
बादि रागों में अपने गीत का गायन करते थे।<sup>२</sup> उनका गला मीरब राग गाने के लिए बना था  
जिसके विषय में कहा गया है कि 'गाठ बरब बर पावे तब मीरब राग उठारै। एक बार  
विन्धी रैखियो के कवि-सम्येसन में यह ठानपुरे के साथ कविता-गाठ करने को बैठे थे।'<sup>३</sup> उनकी  
नई कविताओं में रागों के नाम जो लिखे हुए हैं यथा 'मीरबी ठिठाठा' 'कतिपड़ा' 'मासावरी  
भुव' 'मादि'।

एक पारभाष्य समीक्षक ने लिखा है कि प्रायः सभी कवि बायक होते हैं।<sup>४</sup> 'नबीन' जी  
भा संगीतज्ञ थे। वे राष्ट्रीय बाधार पर भी काव्य-गायन करने का धन्यास करते थे।  
१०. विनायक राव पटवर्धन जी के गायन से वे बड़े प्रभावित थे। वे छोटे-बड़े सभी कलाकारों को  
बहुत प्रोत्साहन देते थे। उनके प्रसिद्ध राष्ट्रीय-गीत 'जमठारिणी मन देवद्वारिणी है' को  
कवि जी उपस्थिति में, नई विन्धी के पारबर्ष महाविद्यालय के ५ कलाकारों ने सहयोग के रूप  
में अपने बापिनोष्ठक के धबधर पर गाया था जिसे सुन कर स्वयं रचयिता भी गढ़-गढ़ हो गया  
था।<sup>५</sup> 'नबीन' जी धोंनारनाथ ठाकुर एवं पन्नाकास घोष की संगीत-कला क जी बड़े प्रेमी थे।<sup>६</sup>

सन् १९४० में बारणसी में श्री रायहृमणदास के आवास पर 'नबीन' तथा 'निराला'  
में एक बार संगीत प्रतियोगिता-सी हो गई थी। दोनों ही संगीतज्ञ-कवियों ने अपने संगीत-ज्ञान  
एवं कविकार का प्रभावपूर्ण ढंग से प्रदर्शन किया। दोनों ही भूम-भूम कर मस्त होकर पाते थे।<sup>७</sup>  
इस प्रकार 'नबीन' जी का संगीत-ज्ञान अन्वकीर्ति का था।

१ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' पत्रावलि-कक, पृष्ठ ३४।

२ 'बोला', स्मृति-दीप, पृष्ठ ४११।

३ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', पत्रावलि-कक, पृष्ठ १५।

४ 'रतिमरेला' रस-कहिणी, पृष्ठ ४६।

५ बही माध-मैय, पृष्ठ १०६।

६ 'धपलक', प्रसन्न कल-कक करो पृष्ठ १०७।

७ "All poets are singers, more or less and the purely  
lyrical poet is the one possessed in the greatest degree of the  
quality and impulse of song. He is the natural egoist, concerned  
entirely with the world of himself—His thoughts and emotions—  
Vernon Knowles The exp of Poet

८. श्री विमलचन्द्र बोधपाय का मुझे मिलन (दिनांक ११ १२ १९६१ का) कव।

९. श्री अमोठ बाबूदेवी द्वारा ज्ञान।

१०. आचार्य मन्मदुलारे बाबूदेवी द्वारा ज्ञान।



वस्तुत्व-कला — एक अंधेज पत्राधिकारी ने जिसने धमा भी श्री बोलते हुए कई बार मुना या मुम्ने कहा था— 'विभुज हिन्दी के छट को यदि कोई देखना चाहे तो उसे एक बार धर्मा भी के मापण को मुन लेना चाहिये, उनको धुतकर उसे विभुज हिन्दी के कासित्य और मिळस का बोझ बहुत बोध हो जावेगा।' यह अंधेज-पत्राधिकारी धर्मा भी की हिन्दी पर बैठक लट्टु वा । 'नवीन' भी हमेशा देखस्वी रूप में बोलते थे। उनका भाषण व उद्वेगना भाषण में प्रकट हो जाता करती थी। वे महान् बाप्पी के और धनसाधपूर्ण बनता में भी नई स्फूर्ति भर दिया करते थे। श्री मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है कि 'वे बापों के बनी थे। ज्यों बाप-प्रवाह बोलने की शक्ति उनमें थी।' वे धर्मेशी के भी शब्दों बकता थे। गौड़टी काशेध में वे बापबाहिक रूप में धर्मेशी में ही बोले थे।<sup>१</sup> संसद में वे हर-हमेशा हिन्दी में ही बोलते थे परन्तु यदा-कदा धर्मेशी में भी<sup>२</sup> वह भी शक्य है।<sup>३</sup>

'नवीन' की भावुक उद्वेगनाधीस और धोखस्वी बकता के रूप में धाते थे। वे हिन्दी के प्रथम श्रेणी के बकताओं की पंक्ति में धाते हैं और उनकी तुलना धाचार्य मरेन्द्रेश धारि मनीषियो से की जा सकती है जो इस युग के प्रधान-बकता माने गये हैं।<sup>४</sup> डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है—

'मैंने एक बार बिराट समा में हिन्दी की परिभा पर उनका भाषण सुना था— प्रबाममन्त्री के कुछ वाक्यों से सहसा वे उल्लेखित हो उठे थे। ऐसा लगता था जैसे पाठसिधुष की बाह्यनी में बाड़ धा गई हो। इस प्रकार के और भी कई बिज मरी स्मृति में शास्त्र थे।'<sup>५</sup>

समग्र व्यक्तित्व एक मूर्त्यांकन—डॉ० रामधरष द्विवेदी ने लिखा है कि 'जिन लोगों ने 'नवीन' की जो केवल पिछले २३ वर्षों से जाना है, जब वे पीड़ा से बस्य और प्रबसस थे उनके लिए 'नवीन' की के उस पूर्व रूप की कल्पना करना कठिन है जो मस्ती, धनद्वपन धीर्म तथा सहानुभूति और भावुर्य से भोठ-भोठ था। जिन लोगों ने उन्हें केवल स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बार हो जाना है जब वे अपने ही कबतानुसार पासमिष्ट का बधीष्य था रहे थे वे भी उनके व्यक्तित्व के सम्पूर्ण प्रभाव को समझने में प्रसमर्थ हैं। 'नवीन' की बोझा और भाषक थे तथा उनके ये दोनों रूप मिसकर स्वातन्त्र्य-संग्राम के दिनों में ही निरकर

१ श्री बेंकटेश मारायण सिचारी—'नवीन', प्रस्तुवर १९६०, पृष्ठ २४।

२ 'सरस्वती' जून, १९६० पृष्ठ १७८।

३ 'वीणा', स्मृति-संक ५९१।

४ Parliamentary Debates, House of the People, official Report, 11th May 1953, page 6362

५ वही १ मई, १९५३ पृष्ठ २३५३।

६ धाचार्य नरवृमारे बाबवेयी द्वारा श्रात।

७ डॉ० नगेन्द्र के श्रेष्ठ लिख्य पृष्ठ १५२।

सामने आये।<sup>१</sup> श्री बासुदेवराव राव ने लिखा है कि 'इस समय मान इतना ही कहने की इच्छा होती है कि यदि किसी उपन्यासकार ने नबीन जी के इतिवृत्त की कल्पना की होती उन जैसे नायक का निर्वाणन किया होता, तो हम धायद यही कहते कि उसने अतिरंजना की है। हम कहते कि न तो कोई इतना सरस, सुदृढ, भावुक उदार और साहसी होता है जितना उसने अपने चरित्रनायक को बनाया है, न ऐसे मरुपुङ्गव के अस्तित्व दिन इतने विपाक हो होते हैं। पर यह अतिरंजना किसी उपन्यासकार ने नहीं की थी—न यह अतिरंजना ही थी।'<sup>२</sup> श्री धनुतराव के मतानुसार, 'नबीन जी को बाबमो जानता बाब को भा, पहिले प्यार करता था क्योंकि वह खुद बाबमी को बाब को जानते थे पहले प्यार करते थे। बड़ा कठिन है जिन्दगी में रोति को निबाह सकता मगर उन्हीं ने निबाहा और ऐसी धुबसूरती से निबाहा कि प्रायः सब कहते मये हैं तो ऐसा लग रहा है कि उनके साथ एक युग बना गया।'<sup>३</sup> श्री बनारसी-दास खनुवंशी ने लिखा है कि—'हिन्दी के उन बर्तमान लेखकों और कवियों में, जिनसे मेरा परिचय है, एक ही ऐसे व्यक्तित्व को सही जानता जो नबीन जी की कृतियों के तस्मे पोलने की भी माफ़ता रहता हो।'<sup>४</sup>

वास्तव में 'नबीन' जी की कहानी राजनीति एवं साहित्य की गामा है। बाबायं बाबुपेयी जो हैं उनके जीवन को बेच-सेवा के व्यावहारिक कार्य और उच्च उल्लास होने वाली असाध्यताओं में व्यस्त बताया जा।<sup>५</sup> बाबायं हुजारीप्रसाद त्रिबेदी ने भी लिखा था कि 'नबीन जी राजनीतिक कार्यकर्ता है। उनका जीवन राजनीति के कणमकस में बीता है।'<sup>६</sup>

'नबीन' जी के व्यक्तित्व को सहज ही विरोधार्थी का इन्द्र-बनुप कहा जा सकता है। वे महान-सुपु, प्रकण्ड-विनवदीस आसक्त-अनासक्त रईस रंक की विरोधी भावनाओं को एक साथ लेकर चलते थे। उपनिषद् के तेज स्पष्टतः मुंजीबा' की जीवन प्रतिमा थे। 'निराशा' की वह पंक्ति 'मरण को जितने बरा है उसी ने जीवन मरा है' उन पर सटीक बैंगनी है। मोड़ यदि उन्हें या ता मैत्री, मस्ती, मुक्त दान और सहज महत्व गूम्यता से। धामती महादेवी बर्मा ने उनके जीवन-चरित्र में एक अस्मिताकी का आत्म-त्याग, एक मोड़ का सौंदर्य और एक कवि की भावुकता की विरोधार्थी की त्रिबेदी पाई है।<sup>७</sup> डॉ० गुलाबराय उनकी प्रोबन्सी वाली 'बाबुपेयी' से बड़े प्रभावित थे।

१ साप्ताहिक 'प्राय', २६ मई १९६०, पृष्ठ ६।

२ 'प्रयास पत्रिका', २९ मई, १९६०, पृष्ठ ३।

३ वही, पृष्ठ ४।

४ श्री बनारसीदास खनुवंशी का मुझे लिखित (दिनांक ११-२-१९६२ का) पत्र।

५. बाबायं मन्वदुनारे बाबुपेयी—'हिन्दी साहित्य-बीनबीं प्रतापदी' पृ० ४।

६. बाबायं हुजारीप्रसाद त्रिबेदी—'हिन्दी साहित्य', पृष्ठ ४०१।

७ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', अडॉबलि-संक, पृष्ठ १६।

८ डॉ० गुलाबराय का मुझे लिखित (दिनांक ०२-१-१९६० का) पत्र।

९. 'बाबुपेयी', कवनि-संक, पृष्ठ २०।

## जीवन-दर्शन

विचार-बारा वा जीवन-दर्शन व्यक्ति के जीवन चरित्र तथा व्यक्तित्व का नवनीत है। अनुभव, प्रथम्यता एवं चिन्तन से मनुष्य के विचारों का निर्माण होता है और उन्हीं के द्वारा उसके जीवन का परिचालन होता है। ये विचार ही दृष्टिकोण का रूप धारण कर सिमा करते हैं। कवि अपने विचार या दृष्टिकोण की प्रामिष्यवना प्रत्यक्ष भववा परोक्ष रूप से अपने काव्य में करता है। इन्हीं विचार-सूत्रों को एकत्रित कर, कवि के दृष्टिकोण और दर्शन के विषय में सम्पूर्ण परिचालन प्राप्त किया जा सकता है। 'नवीन' भी के विचार उनके काव्य लेखों एवं भाषणों में भरे पड़े हैं। इनके आधार पर उनके सर्वांगीण जीवन-दर्शन का समीचीन चित्र खींचा जा सकता है।

जीवन-दृष्टि—डॉ० प्रभाकर माचरे ने लिखा है कि 'उनके व्यक्तित्व में तीन सूत्र जैसे एक प्राण हो गये हैं—मर्फी धाम्पारमबासी-बह्वाबासी-कुम्भरू- धारम-प्रगल्भ नेता और प्रथम व्याकुल-सौन्दर्यवासक-सहृदय कलाकार।' १ निरुपय ही उनकी जीवन-दृष्टि इन्हीं सूत्रों के माध्यम से हमारे समक्ष आती है। प्रथमक मनीषी साहित्यकार का जीवन को देखने का एक अपना दृष्टिकोण होता है। 'नवीन' का जीवन, हमारे समक्ष इस रूप में आता है—

तुम विचार-प्रगति के ज्वालक,

तुम नवीनता ज्वालक

तुम प्राचीन इमन के भेदक

तुम अज्ञता के प्रति-वाक्य। २

कवि के जीवन को देखने की दृष्टि का एक विशेष पक्ष है। वह माटी के पुतले को बुढ़त्व प्राप्त करते देखता है। इसके विषय में उसने लिखा है— 'ये इन्द्रिय उपकरण यह पंचमहासूतात्म का वेद यह मन यह प्राण ये सब भी तो मृत्तिका-संभूत ही हैं न ? और इन्हीं उपकरणों के बस यह वेद बड़बोही विवेकत्व बुढ़त्व और बाह्यी स्थिति को प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। क्लोपनिषत्कार ने कहा है परांच कामाननुमन्ति वासा।' ३ प्रकृति वास्तव बण प्रकृति निर्बुद्धिजन बाह्य कामलाधों—केवल मात्र इन्द्रिय सुत्रों और भौतिक वस्तुओं का अनुभवन करते हैं उन्हें ही पाने में अपना जीवन बिता देते हैं। किन्तु जो इस प्रकार—केवल बहुभुक्त जीवन-यापन करते हैं उपनिषद्कार के शब्दों में 'ते मृत्योर्मान्ति विकल्पपात्रम्' के सर्वव्यापिनी मृत्यु के पाश में धा बाते हैं। धात्र क्य क्य विलतस्य मृत्योः पात्रम्—कैसी हुई विलुप्त मृत्यु के पाश में धँसा हुआ है। बहुभुक्तो वृत्ति ने संसार की यह पति बना ली। किन्तु जो नै क्य बुका है इही मृत्तिका के पुतले ने एक दिन बुढ़त्व एक दिन नान्धीत्व प्राप्त किया था। वास्तव में इन्हीं पंक्तियों में कवि का जीवन-दर्शन चित्रा हुआ है। राग और विराग का संघर्ष चिर-पुच्छन है। राग से मानव को मुक्ति भी प्राप्त नहीं होती और 'नवीन' के मशानुसार राग का पुच्छ

१ 'व्यक्ति और बाङ्गमय', पृष्ठ १११ १००।

२ 'क्रमिता' मृतीय सर्ग पृष्ठ २४६।

३ 'रसिमेखा', परांच कामाननुमन्ति वासा' पृष्ठ ३।

लाग उचित भी नहीं है परन्तु हमें उसमें पूर्णरूपेण सिद्ध नहीं होना चाहिए। मनुष्य को सदा ऊर्ध्वगामी बनना है।<sup>१</sup>

'नबीन' जी ने संयुक्तप्रान्तीय सष्ठम हिन्दी साहित्य सम्मेलन काशी के अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था कि "हम मानव को उसका मानवरूप प्रदान करने की ओर सतत धरसर हों। मानव से धर्मस्तल-निवासी गुहा-मानव को उरुमल के, विकास के मार्ग की ओर धरसर करने में ही सच्चा पुकार्य है। यही ध्येय का मार्ग है। इसी के द्वारा प्रेय की भी सम्पुर्ण हो सकती है। इसी प्रकार योग-योग का बहन हो सकता है। साहित्य-निर्माण करते समय यही प्रेरणा हमें प्रखोदित करती रहे—यह मेरा बिनय मनुरोय और मेरी बिनय प्रार्थना है।"<sup>२</sup>

राष्ट्रीय भावना और राजनसिक दृष्टिकोण—परतन्त्र मारु में कवि न अपने जीवन का सव्य साम्राज्यवाद के विरुध्द स्वतन्त्र मारु की कामना और अन्याय व अत्याचारों का विरोध बना रहा था। इस रूप में वह सदा-संबंदा वैश्य बना रहा है।

'नबीन' जी ने मारु को 'राष्ट्र' ही माना था। मध्यमराष्ट्रीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आन्ध्रियर अधिवेशन के अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा था कि 'आर्थिक व सामाजिक विषमता जाने पीने विषयक अनेकता, उभनेतिक एकाधिपत्य का प्रभाव आदि के उठे हुए भी हमारा यह नारसर्ष सदा से प्रागैतिहासिक काम से एक राष्ट्र रहा है।'<sup>३</sup>

राष्ट्रीय आन्दोलन में 'नबीन' के दृष्टिकोण में आदेश व आदेश के मात्रा की प्रचुरता मिलती है। ऐसे समय में कवि प्रेम-गीत गाना भी उचित नहीं समझता।<sup>४</sup> इस युग में कवि का राष्ट्रीय-दर्शन और दृष्टिकोण अतिमाद्य-युग का अनुगमन करता है।

'नबीन' अपने जीवन के प्रारम्भिक काम में आर्म-समाज की विचार-धारा से प्रभावित थे। उनके विचारों में उत्तेजना के धंस के धाने का कारण मड़ा था। साथ ही तास्य का प्रबल ध्येय भी पूट रहा था। ध्येय की स्थिति उत्तेजना व वात्याधर्म से परिष्कारित थी। इससे उनकी बाली में भी उग्रता था गई। इस प्रदीप्त वातावरण में कवि ने अपने आन्दोप का विप्लव के घोसों से भरे गीतों व प्रजाप' के धध-नेसों के द्वारा धमिधमकत किया। परतन्त्र मारु में कवि की धारणा का भैरव-हुंकार अपने प्रबल वेग से पूट पड़ा था। कवि का अन्ति काशी जीवन-दर्शन अपने अलमसत रूप के साथ मिलकर धात्रा है।<sup>५</sup>

१ 'व्यक्ति', पृष्ठ २३।

२ 'बीला' राष्ट्रभागा सस्कृति का अधिवेशन धंस है, नवम्बर १९४७, पृष्ठ १०-२२।

३ 'व्यक्त्य', दिसम्बर, १९५२, पृष्ठ ९।

४ 'रामिरेगा', पृष्ठ १००।

५ 'रामिरेगा', काशी पृष्ठ ७४।

कवि की व्यापक राष्ट्रीय-भावना व राजनैतिक चेतना विभिन्न रूप में प्रस्तुत हुई है। सामयिक योर्तों व कविताओं का भी निराला किया गया है। साथ ही धारम-भाव और बसिराम को स्वतन्त्रता-प्राप्ति का मुख्य साधन माना गया है।

राजनैतिक दृष्टिकोण में कवि उपग्रन्थी है, क्योंकि वह विद्यमान-सम्राज्य की विरोध को लेकर बसता है। साथ ही उस पर प्रहिता का भी काफ़ी प्रभाव है, क्योंकि वह गान्धी की से परामुक्त रहा है। उस समय अत्य-प्रहिता को परनेस्वर के स्वल्प में ही प्रकृत किया जाता था। 'साम्राज्यवाद के विनाश के मूल मन्त्र को कवि ने अपनी बाणी का द्वार बना लिया था। उसके राम भी साम्राज्य के विध्वंसक के रूप में धाते हैं।'<sup>१</sup>

इस प्रकार 'नवीन' के जीवन-दर्शन में समग्र राष्ट्रवाद का रूप समाहित है। कवि के राष्ट्रीय दृष्टिकोण को गान्धीवाद ने पर्याप्त रूप से प्रभावित किया है। उसने स्वयं कहा है— 'मेरे लिए गोवा का स्वतन्त्र-प्रजा सन्घासी विपुलसतीव भक्त एवं ज्ञानी कल्पना से परे की वस्तु है। गान्धी के चरणचरुण करके ही गीताकार की उत्सवनी मायता को धर्म्य एवं व्यवहार्य मान सका हूँ।'<sup>२</sup> अपने सुप्र साहित्य पर पड़े गान्धी जी के प्रभाव का दर्शन करते हुए, 'नवीन' को ने सिखा है कि 'हिन्दी भाषा के साहित्य में जो भाषाचारिता पूर्ण विद्रोह की अभिव्यक्ति है, वह गान्धी की है। जिस प्रकारहीमान् महोदयहीमान् परम उपस्वी मरोत्तम गान्धी ने की हों' कहने वाले इस शेष को 'क्यापि नहीं? कहने का पूर्वमनीव साहस प्रदान करके मानव समाज के इतिहास में एक अमिट्य पूर्ण महामुक्त राष्ट्रीय मन्त्रि की ज्ञाता प्रव्यसित की उसका प्रभाव हिन्दी साहित्य पर कैसे न पड़ता? 'भाव उस प्रभाव का विन्व धाम अपने साहित्य के प्रत्येक संम पर शेष सकते हैं।'<sup>३</sup> भारत के स्वाधीन हो जाने के पश्चात् भी कवि ने गान्धी के अन्वेष को अपनाते की बात कहते हुए लिखा था 'मे कहुता हूँ माई, पवि नसिक धाचरण को, सन्व्यवहार को, दया-वाक्षिण्य, पारस्परिक स्नेह एवं धीरार्थ को, धार धार्यात्मिक अर्थात् मानव को अर्था उठानेवाला सुप-सुल नहीं मानते तो भी, राम के नाम पर, इतना तो मानिए कि धार की परिस्थिति में जब तक धार-रुम नैतिकता का अर्थव्य नहीं होते, जब तक हम अपने 'राजनैतिक अस्तित्व की भी रक्षा नहीं कर सकते हैं?''<sup>४</sup>

स्वतन्त्रता के पश्चात् कवि के शर्त में काफ़ी अन्तर आ गया था। वह जनतन्त्र में विश्वास तो करता था परन्तु इस प्रपत्तिधीन अवस्था व देश में बहुत सावधानी बरतने का पक्षपाती था। बहुमत का यह धर्म नहीं है कि हम कोई ऐसे कार्य करें जिसका प्रभाव सारे राष्ट्र व एशिया पर पड़े और बहुमत जनतन्त्र के सिद्धांत को भी पक्ष्य दे।<sup>५</sup> महत्वपूर्ण विषयों पर वह विचार

१ आचार्य आबदेकर—साप्ताहिक भारत, पृष्ठ ३२९।

२ 'अमिता', पृष्ठ १५५।

३ 'बीसा', नवम्बर, १९४० पृष्ठ ९।

४ 'साहित्य—समीक्षा' पृष्ठ १८६।

५ 'विन्ववाली', ११ अग्रेत, १९४९, पृष्ठ १।

६ Parliamentary Debates, House of the People Official Report, 11th May, 1953 page 656

के दार्शनिक वास्तविकता की भी भाषा-विधा लेना उचित मानता था।<sup>१</sup> वह निम्न दृष्टि का प्रवर्तक था।<sup>२</sup> वह किसी भी प्रसोक्त के कारण अपने विचारों के बनावे में विश्वास नहीं करता था।<sup>३</sup> राजनीति के विषय में वह तटस्थ रहने लगा था। उसे यह विश्वास हो गया था कि जब रामराज्य धारण जाता नहीं है और महारामा माग्यो का स्वप्न प्रचुरा रह जायेगा। साय ही वर्तमान सरकार के प्रति वह भाषा सरी दृष्टि से नहीं देखता था। भारत की प्राथमिक दुःखता से भी वह दुःखी था।<sup>४</sup> इसमें वैयक्तिक व समष्टिगत दोनों प्रकार के कारण निहित थे। इस महान् सेनानी ने वैयक्तिक के बनावेस को मुक्ताने का कभी भी, प्रयत्न नहीं किया।

मानवतावादी व सामाजिक दृष्टिकोण— नवीन अपनी पूरी सच्चाई व निष्ठा के साथ मानव के ही गायक थे। उन्होंने मानव के परतन्त्र दुःखस्त व हेयवर्णों की हमें भ्रमियाँ दिखाई हैं और उनमें पाषा की किरलें विकीर्ण करने का प्रयत्न किया है।

'नवीन' मानवता का पोषा था। उसे विद्वे की पहिमा ही सर्वस्व थी। उसे हम मारी का सच्चा पक्षधर कह सकते हैं। कवि प्रवसा में निम्न मानव को उस पुष्प बनाता पाइता है, वह मानव का महान् सेवा-दारी है। वह मानवता के धारण से सम्पुष्टि या निसे प्रव्याप्तवत्त का एक धर्म माना गया है।<sup>५</sup>

धर्म में नारियों की प्रतिष्ठा का वह उपासक है। वह नारी को और-आर्षसकता के रूप में देखता है।<sup>६</sup> इससे उच्च विश्वास नारी के मुक्त होने को धार है। वह उनके अस्त-शुद्धता का पक्षधर नहीं।<sup>७</sup>

१ वही, पृष्ठ २३०१।

२ वही, पृष्ठ २३६१।

३ Parliamentary Debates, official Reports, 11th May, 1953 P 6357

४ साप्ताहिक 'धाम', २६ मई, १९६०, पृष्ठ १०।

५ "The services of suffering humanity in the subjective outlook and attitude of worshipping Distiny is by itself an entire programme of a new form of spiritual practice that can independently lead an aspirant upto the goal of God realization. Surely this is an innovation and a precious acquisition in the World's store-house of religious sadhana— Ibid, Swami Vivekanand, Volume IV, Page 681

६ 'क्रिमिता', प्रथम खण्ड, पृष्ठ ४०।

७ 'पुष्पों ने मेरे बहना है कि तुम जिनों को अपने हातसे से दुर्लभ मुक्त होने से, उन्हें अपने बराबर का समझो — यो बवाहरमान नैरक, हिन्दुस्तान की तपस्याएँ, पृष्ठ २२६।

कवि की व्यापक राष्ट्रीय-भावना व राजनैतिक चेतना, विभिन्न रूप में प्रस्तुत हुई है। सामयिक पीठों व कविताओं का भी निर्माण किया गया है। साथ ही धात्म-स्वाय और बलिदान को स्वतन्त्रता-प्राप्ति का मुख्य साधन माना गया है।

राजनैतिक दृष्टिकोण में कवि उपग्रन्थी है, क्योंकि वह विचर-सम्प्रदाय को विरासत को लेकर बसता है। साथ ही उस पर बहिष्ता का भी काफ़ी प्रभाव है, क्योंकि वह मान्सी की छे परासूत रहा है। उस समय सत्य-बहिष्ता को परमेश्वर के स्वरूप में ही ग्रहण किया जाता था।<sup>१</sup> छात्राग्यबाब के विचार के मूल मन्त्र को कवि ने अपनी बाणी का द्वार बना लिया था। इसके राम भी छात्राग्य के विचर-सम्प्रदाय के रूप में धारते हैं।<sup>२</sup>

इस प्रकार 'नवीन' के जीवन-दर्शन में समग्र राष्ट्रवाद का रूप समाहित है। कवि के राष्ट्रीय दृष्टिकोण को मान्सीबाब ने पर्याप्त रूप से प्रभावित किया है। उसने स्वयं कहा है— 'मेरे लिए गोवा का स्वतन्त्र-प्राप्त, धर्मोपेक्षी विपुलाशील भक्त एवं ज्ञानी कल्पना से परे की वस्तु है। मान्सी के बरगुणदर्शन करके ही पीठाकार की उत्सम्भनी भाव्यता को सम्मन एवं व्यग्रहार्ज मान सका हूँ।<sup>३</sup> अपने युग साहित्य पर पड़े मान्सी की प्रभाव का संकलन करते हुए, 'नवीन' को ने सिखा है कि 'हिन्दी भाषा के साहित्य में जो आकाशविता पूर्ण विरोध की प्रसिद्धि है, वह मान्सी की देन है। जिस अणुरोपीयान् महतोमहीयान् परम तपस्वी नरोत्तम मान्सी ने भी हूँ' कहने वाले इस देश को क्यापि नहीं? कहने का दुर्भाग्य साहस प्रधान करके मानव समाज के इतिहास में एक अमिटिष्ठ पूर्ण अहमुत् राष्ट्रीय अन्ति की ज्वाला प्रस्फुटित की उसका प्रभाव हिन्दी साहित्य पर कैसे न पड़ता? 'आज उस प्रभाव का विन्म धाप अपने साहित्य के प्रत्येक अंग पर देख सकते हैं।<sup>४</sup> भारत के स्वायत्त हो जाने के पश्चात् भी, कवि ने मान्सी के संघेस को भगवाने की बात कहते हुए लिखा था 'मैं कहता हूँ सही, यदि नैतिक आचरण को, सन्ध्याबहार को, दया-वाञ्छिण्य, पारस्परिक स्नेह एवं प्रोद्यार्थ को, धाय धायारिमक अर्थात् मानव को ऊँचा उठानेवाला सुय-गुल नहीं मानते तो भी, राम के नाम पर, इतना तो मानिए कि आज की परिस्थिति में जब तक आप-हम नैतिकता का आशय नहीं लेते, तब तक हम अपने राजनैतिक अस्तित्व की भी रक्षा नहीं कर सकेंगे?''<sup>५</sup>

स्वतन्त्रता के पश्चात् कवि के दर्शन में काफ़ी अन्तर आ गया था। वह अन्तर्गत में विश्वास तो करता था परन्तु इस प्रयत्नशील अवस्था व देश में बहुत आकाशनी बरतने का पसवाली था। बहुमत का यह भव नहीं है कि हम कोई ऐसे कार्य करें जिसका प्रभाव सारे राष्ट्र व एशिया पर पड़े और बहुमत अन्तर्गत के सिद्धांश को भी पकट दे।<sup>६</sup> महत्त्वपूर्ण विषयों पर वह विचार

१ छात्राग्य बाबूकृष्ण—साप्ताहिक भारत, पृष्ठ ३३२।

२ 'अमिता', पृष्ठ ५५५।

३ 'बीला' नवम्बर, १९४० पृष्ठ २०।

४ 'साहित्य—समीक्षाजति', पृष्ठ १८६।

५ 'विन्मवाली', ११ अप्रैल १९४९, पृष्ठ ३।

६ Parliamentary Debates, House of the People Official Report, 11th May, 1953 page 636





कवि 'नारी' की अपनी भावांशुति समर्पित करता है—

सृष्टि मन्वन की पुरानी तुम पहेली पुनः,  
गहन सम्झन धनिय तुम तुम ज्ञान पति विक्रमुह  
तुम भ्रमित, प्रति बलित, बिबलित, बलित भाव समुह,  
सुतभ किर किर जलभरी तुम प्रथम वृत्ति बुद्ध !<sup>१</sup>

धर्म, संस्कृति और दर्शन—नवीन सनातन धर्म के अनुयायी थे। इसका धर्म एक धर्म न होकर सार्वत्रिक धर्म है।<sup>२</sup> हमारे धर्म की वर्तमान कुदशा पर 'नवीन' ने कुछ प्रकट किया है— 'बहु यह कि हमारा धर्म नाम धी-चारिक बनकर रह गया है। पंख-बंटा ब्रह्मिणस बनाना स्तोक-नाठ करना अन्धन प्रभञ्ज फूस प्रादि मूर्ति पर चढ़ाना धारती करना वत उपवास रख लेना संया-स्तान करना वस माना धर्म कर्म ही क्या। हमारे धर्म के जो मुसवत्न हैं उनके ऊपर न इम मनन करते हैं और न उन्हें अपने जीवन में उतारने का प्रयास करते हैं।<sup>३</sup> वे बिनोबा प्रखीठ विचारधारा में पूर्ण आस्था रखते थे। उनके महागुणार परमेश्वर की पूजा याने दीन दुखी जनो की सेवा।<sup>४</sup> इसी भावना को विवेकानन्द ने भी परिभाषित किया था।<sup>५</sup> भारतीय-संस्कृति व पुराणों में कवि की पूर्ण आस्था है। कवि के लिए एकमात्र पूज्य वस्तु सत्य है।<sup>६</sup>

संस्कृति के विषय में 'नवीन' की ये सिखा है— 'संस्कृति है अहम-विषय, संस्कृति है राय-शरीकरण, संस्कृति है माय उदात्तोत्तरण।'<sup>७</sup> मूर्तकर्म में संस्कृति को उन्होंने महापुरुषों में पाया है यथा गान्धी बिनोबा कबीर तुलसी सुर, ज्ञानदेव समर्थ तुकाराम आचार्य तुलसी महर्षि रामण आदि।<sup>८</sup>

१ 'जीवन मरिचा' या 'पाचस पीड़ा' नारी, ६वीं कविता, पृष्ठ १।

२ 'सन् १९२१ की सेंटस (मनुष्य पखना) हो रही थी। यिनने बाला धाया। रत का बल था। प्रताप' प्रेस में पब्लिश बालकृष्ण धर्मा, वं सिबलारायण मिश्र और विद्यार्थी की बैठे थे। यिनती की जानापुटी होने मयी। जब मसहूब बाला जाना धाया तो विद्यार्थी की ने कहा—बालकृष्ण, माई धर्म क्या लिखाया जाय ? माई बालकृष्ण ने कहा—'पलेइजी,' धर्म तो एक ही है—सनातन धर्म। इस पर गलेइ जी बड़े प्रकठ हुए। —श्री वैष्णव धाडी, पलेइइमंकर विद्यार्थी, पृष्ठ ५०।

३ 'बिनोबा-स्तवन', मृमिका, पृष्ठ १।

४ वही, पृष्ठ ११।

५ 'God is here before—you in various forms, he who loves His creatures serves God—Vivekanand The Cultural Heritage of India Vol 4 718

६ 'अर्मिता', पृष्ठ सर्प, पृष्ठ १११।

७ 'ब्यासि', 'ब्यासि' की यह डेर मैरी पृष्ठ २३।

८ वही, पृष्ठ १४-१५।

कवि भारतीय चिन्तकों व उपलब्धताओं द्वारा सुम्नयी परम्परा को ग्रहण करता है। इस ढंग में उस पर परिचय का कोई प्रभाव परिलक्षित नहीं होता।

कवि पदार्थवादी दर्शन को अप्राप्त मानता है। वह गांधी व बुध के दर्शन को वास्तविक मानना चाहता है। वह मस्तिष्क की सभी सिद्धियाँ खोलकर, चिन्तन करने के पक्ष में है—“मैं यह निश्चयन प्रथम करना चाहता हूँ कि वे अपने मस्तिष्क को खोलकर न बना दें, विचारों को मुक्त बातावरण में पलने दें और अपने को निगड़ बड़ कर लें।”

वे श्री बन्धन-सम्प्रदाय के अनुयायी थे। अपनी उपासना के धाराध्य देव का वर्णन शिवास्वीनियम के ‘स पर्यगाभ्युत्थमक्रायमत्रणम्’ तथा प्रथम मन्त्रों से करते थे।<sup>१</sup> उनका साधारण ब्रह्म भी उन्हें कन्हाई के रूप में ही पूज्य है।<sup>२</sup> इस क्षेत्र में कवि विचारों की स्वतन्त्रता को अधिक महत्त्व देता है फिर भी वह भारतीय दर्शन व मनीषियों से पूर्णतः प्रभावित है।

कला, साहित्य और वाक्यशास्त्र—महात्मा कसाकार की वाक्यशास्त्र रचना ‘नवीन’ में सदा-सर्वदा कला की उपासना व बन्दना की है। वे जीवन-सापेक्ष कला के पक्षपाती थे। कला में ‘सुन्दर’ पक्ष उसका प्राण होता है।

कवि प्रतिभा-सम्पन्न है और क्रम्य-नैष्ठिक की उसे सदैव प्रेरणा प्राप्त होती है—“बाद सौकान बुद्ध धुवाँ सा मन में भंडराने लगता है और बुद्ध बहने की नवाहिन हो उठती है।”<sup>३</sup> और “घरा-कवा, जब नन्द भीतर से सुन-सुन हुई लिखने बैठ गया।”<sup>४</sup> कविता भी यही बात कहती है—

बुद्ध भावामिच्छति बरबस ही ऐसी चक्षियों में हो जाती,  
धनिपूरिण कनराणि पया, बन लणिना, सापर में लो जाती।<sup>५</sup>

इस प्रकार कवि ने काव्य के मूल में प्रतिभा को प्रधानतया प्रदान किया है जिसे हमारे प्राचार्यों ने कवित्व का बीज माना है—

कवित्वबीजं प्रतिभाभाषम्, जग्यान्तरागनसङ्कार विरोध-कवित्वम्।<sup>६</sup>

उमिता ने कपन का मुनवर बद्धमर्ष की उक्ति को याद हा घायी है कि ‘काव्य में प्रबल भावनाओं का नैसर्गिक प्रवाह रहता है। ‘नवीन को ने कविता से शक्ति व प्रेरणा के महत्त्व योश प्राप्त के लिए भी प्रार्थना की है—

१ ‘अपलक’, गिरे क्या राजस मीन ?, पृष्ठ ५६।

२ वही।

३ ‘वधाति’, पृष्ठ ३५।

४ ‘सरलनी’, जून, १९६०, पृष्ठ ३६०।

५ ‘वधाति’, पृष्ठ ३३६।

६ ‘कुबुध’, बुद्ध भाते, पृष्ठ १८ १९।

७ ‘कविता’, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १०२।

८ प्राचार्य कामर—हिन्दी वाक्यान्तर मूत्र, १९१६।

९ “Poetry is the spontaneous overflow of power feelings”  
The Poetical Works of William Wordsworth — ३३५

सती, सुप्ते बर हो कि मरती मैरी हो कम्पायी ।

मैं लक्ष्मिगु हूँ, सुखि हीन हूँ और निपट ब्रह्मानी ॥<sup>१</sup>

वैवी-श्रेण्या और उन्मीलता की बात जैटो ने भी की है।<sup>२</sup> सत्-काव्य के लक्षण कवि ने ये माने हैं—“उपयोगिता, उपादेयता, प्रगतिशीलता, अपलायनवादिता, सामन्ती विचार-आराधरोपक, विद्रोहवादिता, औद्योगिक पूर्वोद्धार अन्य संघर्षोत्प्रेरक मण्डोत्तम ने लो, अह्न पटक हो भ्रान मय क्रान्ति आवाहन, इन्धुम्यनाता-विष्-विष्नाद-श्रेण्या, दुर्गन्ताक्रान्तक-अन्य-वन्तीत्यावन-सर्विध-अनुनतोस्ता ॥”<sup>३</sup> कवि के अनुसार साहित्य-कथा में ये गुण होने चाहिये—‘स्वाम्यायतमक कल्पना-सक्ति शब्द-सामर्थ्य, भाव-समाह-सम्ययन, यथासम्भ्य ब्रह्म (Gnp of Fundamentals) कला-सौष्ठव स्थिति-सृजनशक्ति (Power create situation), जीवन-विचरण-सामर्थ्य, समाधि-सामर्थ्य (Power of mediation) और आदर्श ईमानदारी।’<sup>४</sup> वास्तव में यहाँ पर हमारे आचार्यों यथा-वामन भट्टराय खट नामक अभिनव गुप्त आदि के द्वारा प्रतिपादित प्रतिमा व्युत्पत्ति प्रवचन अनेकानु आदि काव्योद्देशु के उपाचार्यों का ही प्रत्यक्ष रूप प्राप्त होता है। कल्पना व सृजनशक्ति का सम्बन्ध प्रतिमा से ही है—‘प्रज्ञा नवनवोत्प्रेरकशक्तिप्रतिमा प्रतिमा मता<sup>५</sup> और प्रतिमा अनुसंधानसृजनादिनाम प्रज्ञा।’<sup>६</sup> इस प्रकार काव्योद्देशु के रूप में कवि ने प्रतिमा व्युत्पत्ति व वैवी आशीर्वाद को महत्ता प्रदान किया है। काव्य के उत्पत्ति के रूप में कवि ने अनुसृष्टि पर अधिक बल दिया है। विद्वन्मनाविहीन अनुसृष्टि द्वारा प्राप्त वर्णन स्वच्छ व निर्भ्रम होता है। स्पष्टता का विशेष ध्यान रखा जाता चाहिये।<sup>७</sup> काव्य नाचना की स्मृति के लिए अनुसृष्टि की सहाय्य रूपसंशिता भी आवश्यक है।<sup>८</sup> कविरत्न गुणों का विकास प्राप्त उन्होंने व्यक्तियों में होता है जो वास्तविक अनुसृष्टि के प्रभाव में भी अनुसृष्टि मात्रप्रदुष्ट में सक्षम होते हैं।<sup>९</sup> यह कवन ‘नवीन’ की इस उक्ति के साक्ष्य में रखा जा सकता है कि ‘कलाकर या तो स्वयं अपने निजी जीवन में और या फिर अपने परिवर्तन-गुण हृदय की कल्पना के द्वारा बहुत से

१ ‘कर्मिणा’, प्रथम सर्ग, आर्चना, पृष्ठ ४।

२ All the epic Poets, the good one after all their beautiful poems not through art but because they are divinely inspired and possessed and the same is true of the good lyric Poets” Quoted from Dictionary of Worlds Literary Terms, page 228

३ ‘अपलक’, मिरे क्या सबल पीत ? पृष्ठ ४।

४ ‘नवाति’, सुमिका, पृष्ठ १३।

५ आचार्य भट्टराय—काव्यानुशासन, पृष्ठ ३ से उद्धृत।

६ आचार्य अभिनव गुप्त—व्याख्यालोकोचन, १(६)।

७ ‘कु कुम’, कुसु बर्से, पृष्ठ १७-१८।

८ श्री बाबूराज पालीवाल—‘विनता’ काव्य संग्रह, ‘नवीन’ का आशीर्वाद पृष्ठ ५।

९ “The Poetic gifts are generally found in men who can realise what they portray without actually experiencing it”—Worsfield, the Principles of Criticism, p 169

उपों की अनुसृष्टि करता है और उनको सृष्टि करता है।<sup>१</sup> उनके मतानुसार—सत्य-सिद्ध-सुन्दर से युक्त काव्य ही उत्कृष्ट काव्य है—

बिना सत्य गिब के रहन सुन्दर तदा अपूर्ण,  
 त्यों सुन्दर बिनु सत्य गिब, किमि हूँ है सम्पूर्ण ?<sup>२</sup>

समता-सामंजस्य स्थापित करना कलाकार का कर्तव्य है।<sup>३</sup>

मानवोत्थान और जन-कल्याण को कवि ने काव्य के प्रयोग के रूप में प्रकृत किया है। उसका मत है—“मेरे निकट सन्साहित्य का एक ही मानक है—यह यह कि किस सीमा तक कोई साहित्यिक कृति मानव को उन्नत, अधिक परिपक्व एवं समर्थ बनाती है। यही साहित्य सत् है, बड़ी साहित्य कल्याणकारी एवं सुन्दर है जो मानव को स्नेहमय ध्यानरहित, बिभारवान् तथा बिलगनीत बनाता है। बड़ी साहित्य सत् है जो मानव में निरस्त एवं निरर्थक कर्मरति जागृत करता है। बड़ी साहित्य सत् है जो मानव को सर्वभूत हित की ओर प्रवृत्त करता है। बड़ी साहित्य सत् है जो मानवीय संकुचित इतिषीं को अनिश्चित करने तथा मानव स्व को विस्तृत करने में मानव का सहायक होता है।”<sup>४</sup>

काव्य तो यही कहा है कि जो साहित्य मानव को इस धार (अर्थात् आत्म-विश्रय, राय बलीकरण और भाव-उदात्ताकरण), से जाम, बड़ी सत्-साहित्य है।<sup>५</sup> कवि के कर्मोपदेश का जो वेपथ्व नहीं करते।<sup>६</sup> कवि अपनी सखती को अस्मिता-समय के युद्ध-माल से सार्थक मानता है।<sup>७</sup> उसका यह दृष्टिकोण भारतीय हरिश्चन्द्र से मिलता है।<sup>८</sup> इसके द्वारा कवि की शक्ति का निष्पन्न होता है।

१ ‘कुतुब’, कुल्लु बालें, पृष्ठ २।

२ ‘अस्मिता’ वंशम सत्य, पृष्ठ ४४२।

३ ‘अनसु एवं अनुसुन्दर क प्रति विराय तथा सत् एव सुन्दर के प्रति अनुसुन्दर उत्पन्न करना एवं जीवन में जो कुल्लु प्रयत्नित है, उतका लीव करके उसमें समता एवं सामंजस्य को स्थापित करना, कलाकार का काम है।’—‘कुतुब’ कुल्लु बालें, पृष्ठ १०।

४ ‘रश्मिरेखा’, परोक्ष कामानुपपत्ति वास्ता, पृष्ठ १।

५ ‘जगति’ कथाति की यह डेर मेरी, पृष्ठ २४।

६ ‘मैं भी उद्भव लेकर, साहित्य पैदा करने के हक में नहीं हूँ। मैं साहित्य स्वयं करना चाहता हूँ। पराहृततया सार्थ-समाज में एक उद्भव को लेकर दम्ब रहने की कोशिश की की विमका मतीका यह हुआ कि वे केवल एक मरे हंस की तुल्यमियों तक पहुँच गए।’—‘जगति’ जो जो भी बनारसी अनुसुन्दरी की को लिखित एक पत्र, विद्याल अरत, अगस्त, १९६७, पृष्ठ ४७१।

७ ‘मेरा यह काव्य-सम्बन्ध पाठकों के सम्मुख उपस्थित है। यह कैसा है, इसका निर्णय वे स्वयं करें। इस ध्यात्र मे पैरी भारतो सीमा-राम और अस्मिता-समय का युद्ध का लही इसी में मैं अपनी सार्थकता मानता हूँ।’—‘अस्मिता’, पृष्ठ ३।

८ जो वाक्यि कत्र मत्र लत्र जपुरे नुर मुम दम्ब।

रमना पावन करन को पावन लोर हरिचन्द्र।

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ‘भारतेन्दु पञ्चावली’, द्वितीय भाग, पृष्ठ ७४८।

डॉ० सुरेन्द्रचन्द्र कुल ने लिखा है कि 'नवीन' की है महाकाव्य के विषय में मौखिक दृष्टि से चिन्तन करने का प्रयास किया है।<sup>१</sup> "वस्तुतः प्रथिमधता, नवीनता, मौखिकता, बहुत प्रयोगों में कलाकार की अनुभूति पर प्रबलम्बित होती है, अतः काव्य के लिए ऐतिहासिक-पौराणिक विषय, केवल मात्र चरित-चर्चस के तर्क के आधार पर, त्याज्य या वर्ज्य नहीं हो सकते।"<sup>२</sup> इस सम्बन्ध में हमारा पौरस्त्य या पारश्चात्य भाषायों के भी प्रथिमत्व है कि कवि-कोष्ठत तो उसकी पुनर्निर्माण करारिवो में निहित है<sup>३</sup> और कवि को अपनी कवि व समता के अनुसार वर्ध-विषयो का चयन करना चाहिए<sup>४</sup> व इनमें प्राज्ञ प्रथाज्ञ का कोई भेद नहीं होता; वह कवि के समर्थता-असमर्थता पर अधिक प्रबलम्बित करता है।<sup>५</sup>

कवि रस का काव्य की धारणा मानता है।<sup>६</sup> कसुररस की धोर उसका विशेष गुणत्व है।<sup>७</sup> माया के विषय में कवि संस्कृतनिष्ठ भाषा-लेखन का अनुगामी रहता है। उसकी भाषा में उत्तम शब्दा का प्राचुर्य मिलता है। इस सम्बन्ध में उसका मत यह है—“इसके विषय में मेरा प्रयत्न मत्त यह है कि माया के सम्बन्ध में साहित्य-दृष्टियों को धारित देना प्रथम श्रेणी की पूर्णता है। ज्ञानदेव, तुकाराम, समर्थ, तुलसी, मुर जायसो आदि को यदि इस प्रकार का धारित देने वाले सुक मिले होते तो 'सिर धुनि विरा कामि पद्धिता' के सहस्य वे भी विचार प्रयत्न सिर हुम्ते धोर पद्धतते। × × × कवि अपनी भाषा प्राय वा लेते हैं, प्रथिमत्व निरर्थक है। × × × इस क्षेत्र में अधिक सरलता से अन्य भाषा-भाषियों द्वारा भी जो भाषा समझी जा सकती है और समझी जाती है, वह है संस्कृत-अथ प्रथम-भाषा। × × × अतः परिश्रम यह निकला कि यदि हिन्दी व कवि तथा अन्य प्रकार के हिन्दी साहित्यिक शैल्य्यापी तुमम भाषा लिखना चाहते हैं तो उन्हें निश्चय ही अपनी भाषा को संस्कृत-निष्ठ बनाना पड़ेगा।”

१ डॉ० सुरेन्द्रचन्द्र कुल—साधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त, राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता के अन्य सिद्धान्त प्रतिपादक कवि काव्य के भेद पृष्ठ ३२७।

२ 'कर्मिन्ता' मुनिम्, पृष्ठ ३।

३ "प्रज्ञा नवनवोत्प्लेख्यातिनी प्रतिभा मत्ता।

तदनुप्रासनाबीच्छर्त्तानिपुल कवि।

तस्य कर्म स्मृतं काव्यम् ॥'

—साधार्य महतीत। काव्यानुप्रासन (हेतुचन्द्र) पृष्ठ ३ से उद्धृत।

४ सेंट्सबरी द्वारा होरेस के मत्त का उद्धरण।

"Take care that your subject suits both your style and your powers — A History, of criticism and Literary Taste in Europe' m Vol 1 page 222

५, "There are in poetry no good and bad subjects there are only good and bad poets' Victor Hyugo-Loci Critica, page 418

६ 'कनो रत्त-सिद्ध सुनायो अखिल विश्व को निम्न रस सिद्धयत'—'कर्मिन्ता', अथ ३, प्रथम सर्ग, पृष्ठ २।

७ कुल ऐसी रस-भार बहा है अरुण-कसण रस-माली,

रि, मत्त जगत की लक्ष्म भीरता बहे विकल उतराती।

—'कर्मिन्ता' द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १६५

हमारी काव्य समीक्षा के सम्बन्ध में 'नवीन' ने लिखा है कि 'हमारे कुछ आलोचकों ने टीसने के लिये एक नवी-नवाई तुसा और कुछ बिसे-बिचाये बाट उधार से लिये हैं और उन्हें अपना कड़कर टीस-नाप करने लगे हैं। बड़ी मानव-आत्मा बाबां के बन्धनों में अकड़ दी जायगी, बड़ी यह मानो कुण्ठ हो जायगी, या फिर यह प्रतिष्ठिता भयंकर हो कर उभर उठेगी। इसलिये भारतीय साहित्यकारों और आलोचकों को सावधानी बरतनी होगी।' पाठ्यालय समीक्षक टी० ए० इत्तिपट ने भी पूर्वाग्रहों व बाधनाओं से विहीन निष्पन्न समीक्षा की बात लिखी है।<sup>१</sup> 'नवीन' लिखते हैं कि 'विज्ञान के नाम पर आज हमारे साहित्य में जो चमा चौकड़ी मच रही है, प्रगतिवाद के नाम पर जो व्यक्ति-समष्टि सिद्धान्त प्रसारित किये जा रहे हैं, सामान्य सामान्य-बोयल बर्न-विरोध के नाम पर जो बखर-बण्ड पेसे जा रहे हैं वे वास्तव में इतने धार्मिक हैं कि जितनी कोई सीमा नहीं।'<sup>२</sup>

आध्यात्मिक के सम्बन्ध में कवि ने निष्कर्ष रूप में कहा है कि किसी बल की सांस्कृतिक, साहित्यिक कृतियों का मूल्यांकन बिना उस बल की विशेषताओं को ध्यान में रखे किया नहीं जाना चाहिये।<sup>३</sup> यह उचित भी है। कांछीसी समीक्षक ट्रेन ने काव्य की आलोचना के लिए रचनाकार की आतिगठ मनोकृतियों, सामाजिक व राजनैतिक परिस्थितियों और पुनः को धरने ध्यान में रखने पर विशेष धोर दिया है।<sup>४</sup>

धर्मा जी ने अपने विचार भारतीय साहित्य और हिन्दी साहित्य पर भी यथामुक्त प्रकट किये हैं। उनके मतानुसार, मानव को मुक्ति का संकेत देना और इसे—प्रयत्न धरने को भी—व्यक्त-नाथ से मुझने का उत्तम प्रयत्न करते जाना यही भारतीय साहित्य का धर्म, अन्तिम व परम उद्देश्य है।<sup>५</sup> उनकी हासिक प्रशिक्षणा भी कि हिन्दी में जन-समुह की दृष्टियों, धार्मिकताओं, धार्मिकता, विकास का साहित्य-सूचन हो।<sup>६</sup> उन्होंने हमारे विद्व-साहित्य के धर्मों में धारने का निर्देश प्रदान किया है।<sup>७</sup>

१ श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन'—'हिन्दी प्रचारक', हिन्दी साहित्य की समस्यार्ण, अगस्त, १९५४, पृष्ठ ६।

२ वही, पृष्ठ ५।

३ The critic should endeavour to discipline his personal prejudices and cranks — 'Selected Essays page 25

४ 'अपलक', मुद्रिका, पृष्ठ ३।

५ 'व्यक्ति', मुद्रिका, पृष्ठ २०।

६ 'सिद्धान्त और प्रयत्न', पृष्ठ ३०२।

७ 'व्यक्ति', मुद्रिका, पृष्ठ २४।

८ वही, पृष्ठ १८।

९ 'आज की हमारी आकाशवाणी यह है कि हम विद्व-साहित्य के लक्ष्य में धारने, ह्वाय मानव-मानव गिन उठे, नवीन विचारधारा हमें आत्मार्थिक करे और हम नवविचारधारात्मिक होकर आत्मसाहित्य का निर्माण करें और इन प्रकार हम हिन्दी धारा को विश्व-वैश्वता को वाली बनाने में सफल हों।'<sup>८</sup>—'कुतुब', कुतुब बाते, पृष्ठ ४।

## पत्रकारिता

'नवीन' भी की पत्रकारिता एवं सम्पादन-कला का प्रत्यक्ष एवं प्रमुख सम्बन्ध कानपुर की मासिक पत्रिका 'प्रभा' एवं दैनिक तथा साप्ताहिक पत्र 'प्रताप' से रहा है। 'प्रताप' से ही उन्हें सम्पादक के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई। प्रभा के कुत्साई सन् १९२३ से 'नवीन' की धीरे साधनसाधन चतुर्वेदी सम्पादक हुए। अक्टूबर १९२३ ई० से 'नवीन' भी ही 'प्रभा' के एकमात्र सम्पादक रहे और अन्त तक बने रहे। इनके सम्पादन-काल में विनों के आघार पर लिखित कविताओं का रूप खीण हो गया और पत्रिका में व्यंग्य-विनों के प्रकाशन की संख्या बढ़ गई। 'नवीन' भी के ही सम्पादन में 'मन्दा विद्येपाठ' प्रकाशित हुआ था जिसकी सर्वत्र प्रशंसा<sup>१</sup> हुई, और उस युग के पत्रों में इसका बड़ा महिमामय किया।<sup>२</sup> इसमें मन्दा-सत्याग्रहियों के परिचय बलिदान की कथा और अन्ध-विषमक कविताओं का समावेश था। इसके १८ पृष्ठों के विद्यास कलौबर में विपुल सामग्री भरी पड़ी है। 'बेसगाव करिसे प्रक'<sup>३</sup> भी अत्यन्त सुन्दर निकला था।

'प्रभा' में 'नवीन' भी ने अनेक प्रकार की सम्पादकीय टिप्पणियाँ लिखीं तथा 'संज्ञ' यानि 'मध्य एशिया पर यूरोप की आँखें' अन्वयायी कानून की भाँति' धारि। उनकी टिप्पणियों एवं प्रपत्तियों में राष्ट्रीयता तथा निर्भीकता के प्रबुर ग्रंथ प्राप्त होते हैं। इस समय वे सामान्य भाषा का ही प्रयोग करते थे। श्री रामनाथ 'सुमन' ने 'नवीन' की 'प्रभा' सम्पादन-कला और सृष्टिविषयक आदर्श का निरूपण करते हुए लिखा है कि "सुदिकठ से दो एक ऐसे मिसेसे जो 'शोक' देखते हैं समझते हैं कि कविता क्या चीज है और महत्त्वपूर्ण रचनाएँ किसे कहते हैं? किन सम्पादकों से धमी तक मुझे काम पड़ा है, उनमें प्रभा' सम्पादक और नवीन स्कूल के सहपाठ्य कवि पं. बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' मुझे इस विषय में बहुत अच्छे सगे। तुफनगी होने पर वे बड़े कवियों की 'कविताएँ' लौटा देते थे। मित्रता भी उन्हें सुमा न सकती थी—वो तो शोक सब में होते हैं उनमें भी थे। उन्होंने कितनी ही बार मेरी तुफनखियाँ भेरे भेज, लौटा दिने हैं। उनका यह व्यवहार समाजोन्मोहित ग्याव पर आधारित था इसलिये कभी मेरे मन में कुमाव न आया बल्कि स्नेह-बन्ध बढती गई। 'प्रभा' में अपनी जीवन में, प्रीतक, सब हिन्दी-पत्रिकाओं से अच्छी कविताएँ और गम्भीर लेख निकाले। अन्तराष्ट्रीय परिस्थिति सम्बन्धी वे विद्वत्पूर्ण टिप्पणियाँ और सम्पादकीय बख-आम्य भाव भी पाठ करते हैं।"<sup>४</sup>

'प्रताप' में प्रारम्भ से ही नवीन भी सह-सम्पादक के रूप में कार्य करते रहे। वे सर्वप्रथम साप्ताहिक 'प्रताप' के दो अंकों के सम्पादक २० सितम्बर १९२३ व २४ सितम्बर १९२४ ई० के बने। गणेश भी के आलोचनार्थ के पत्रार्थ ३ अप्रैल १९३१ ई० से 'नवीन' की 'प्रताप' के

१ 'प्रभा', १ अक्टूबर, १९२३।

२ श्री नरैणचन्द्र चतुर्वेदी—हिन्दी साहित्य का विकास और कानपुर, पृष्ठ १९८।

३ 'आसुटी', १५ नवम्बर, १९२३, पृष्ठ ५०७।

४ 'प्रभा', जनवरी १९२५।

५ 'विद्यास भारत' कुत्साई १९२८ पृष्ठ २८।

मुरक, प्रकाशक और सम्पादक हो गये। बाद में 'नवीन' की एवं भी हरिदासकर बिद्यापी ही 'प्रताप' के मुख्य कार्यकर्ता रहे। 'प्रताप' दृष्ट के ये दोनों महानुभाव भाजम दृष्टी बने रहे।<sup>१</sup> २ जुलाई १९३१ ई० के प्रलेख 'गया सूबे में घाय समाने का इरादा है ?' के प्रसंग में नवीन की पर धारा १२४-ए का अभियोग चला था।<sup>२</sup>

'नवीन' जो ने अपने जीवन का बहुधा-सा याग पत्रकार-कला की साधना में ही<sup>३</sup> व्यतीत किया। पत्रकारिता की शिक्षा नवीन' भी ने गणेश जी के चरणों में बैठकर ही। उनकी सम्पादकीय टिप्पणियों में युग तथा समाज का आबद्ध किया गया है। 'प्रताप' पर चले दो प्रसिद्ध मुकदमे 'रायबरेली मानहानि कस' और 'भैरपुरी अभियोग' के मूल स्रोत— नवीन' की के ही शक्तिकारी प्रलेख थे। उनकी 'बि शीर्षक सम्पादकीय टिप्पणी सर्वोत्कृष्ट टिप्पणी' नामी जाती है। इसके प्रतिरिक्त 'धारा दो बेम' मिर्चों की सुनी और उमाबा' घोषमेन प्राकृत ही' कला साहसन बनाम गण साहसन', 'संघोटी की धूम' 'विपयत धारि प्रख्यात प्रलेख माने गये हैं। श्रीकृष्णरत्न पानीबाज ने लिखा है कि 'उसके लेखों की शक्ति की। धरोवी के अन्धे अन्धे दैनिक पत्रों में भी बाणहृदय के लेखों की चर्चा होती थी।<sup>४</sup> उनकी धरोवी भाषा पर भी सम्पूर्ण आभिरुचि या और इसके भी के पत्रकार हो सकते थे परन्तु राष्ट्रभाषा के प्रेम ने उन्हें ऐसा नहीं बनने दिया।

गणेश जी की पत्रकारिता के आदर्श सिद्धान्त और सम्पादकीय लेखन की पद्धति से 'नवीन' जो की पत्रकारिता में साम्य एवं वैपय्य दोनों ही हैं। गणेश जी जहाँ 'जन भाषा का प्रयोग करते थे, वहाँ 'नवीन' जो संस्कृति निष्ठ' हिन्दी का। गणेश जी विदुष्य वैपय्य तथा निर्भीक पत्रकार थे परन्तु नवीन' जो में इन गुणों के हाठे हुए भी, कवि-हृदय का स्वाभिरुचि था जो कि उनके गद्य पर भी आभिरुचित है। 'नवीन' जो स्वतः आन्दोलित हो अर्थों को आन्दोलित करते थे। जब कि गणेश जी स्वयं आन्दोलित न हो दूसरों को उत्तेजित कर दिया करते थे। गणेश जी के प्रलेखों में राजनैतिक प्रखरता मिततो है जब कि 'नवीन' जो में साहित्यिक प्रखरता। गणेश जी की अपेक्षा 'नवीन' में भावबोध जोय मर्यादा के अतिक्रमण के अंत प्रसिद्ध इतिहासकार होत है। 'नवीन' ने अपने पत्रकार-जय पर सर्वदा जमी प्रवीर को प्रकल्पित रखा जिसमें से गणेश जी द्वारा प्रकल्पित मानव सेवा उपरचर्या साहसशीलता तथा धोरत्विता की उन्नत किरणें नि-सृष्ट हो रही थीं। जो सम्पन्नताय पुत्र के 'नवीन' में पाठक को उत्तेजित कर देने का सबसे बड़ा गुण पाया था<sup>५</sup>।

'नवीन' की पत्रकारिता तथा उनके लेखों के प्रति भी सर्वत्र सचेत तथा शक्तिकारी रहा करते थे। उनके महापुत्रार, पत्रकार को अपने दिमाग की निरक्षरियां सदा सुनी रखना चाहिए।<sup>६</sup>

१ जो बेबरत शाही—गणेशदासकर बिद्यापी, पृष्ठ १२६।

२ वही पृष्ठ १३६।

३ Constituent Assembly Debates, Vol 1 No 3 Official Report, page 265

४ दैनिक 'नवराज्य' २४ जुलाई १९६०।

५ 'दृष्टि', आई १९६०, पृष्ठ ७०।



घोर क्रांतिमस्ती में रहकर भी अपने सिद्धान्त से झुठ नहीं होना चाहिए ।<sup>१</sup> वे सन् १९३१ में 'सम्भारत पत्रकार परिषद्' के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए थे ।<sup>२</sup> आचार्य विबुधन सहाय ने सिखा या कि 'उसके ( प्रथाप ) कुशल सम्पादक पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' समरगढ़ीय विद्यार्थी भी के सोवनीय समाज में भी उसका म्प्रा पहुले ही की तरह ठँका किये हुए है । उसके सम्पादकीय स्तम्भों में हृदय की आवाज मस्तिष्क का तेज धारणा की हुंकार व्यक्ति माया का चमकदार धीर रण-व्यथी की सतकर नयी होती है ।<sup>३</sup> 'नवीन' की सम्पादन कला हिन्दी पत्रकारिता का प्राभूपण है ।

उनका मत था कि भारत की एक भाषा का प्राचीन तथा वर्तमान साहित्य उसकी दूसरी भाषा में भी धामे । हिन्दी के प्राचीन तथा आज के साहित्यकारों की रचनाओं का भी अन्य भाषाओं में अनुबाद होना चाहिए ।<sup>४</sup> वे बंग भाषा और साहित्य की भाँदर की दृष्टि से देखते थे और हिन्दी भाषा तथा उसके साहित्य पर उसके प्रभाव को भाँदते थे ।<sup>५</sup> वे आज के समाज में अज्ञा भास्या व विश्वास की प्राण-प्रतिष्ठा के लिये ब्रजभाषा के वैष्णव-साहित्य में पूर्ण धारणा रखते थे और उसके प्रचार-प्रसार में अपना विश्वास प्रकट करते थे ।<sup>६</sup>

रबड़ छन्द की प्रयुक्त कविता से उन्हें चिढ़ थी । प्रगतिवादी कविता व समीक्षा प्रणाला के वे भी अप्रस नहीं थे ।<sup>७</sup> राष्ट्र-सम्भारना और टैक्नीक की दृष्टि से वे भी सुमित्रानन्दन पन्त को पसन्द करते थे । भी मयवतीचरण शर्मा व 'पिनकर' को प्राणुक्त कवि मानते थे । सर्वेभी बयंकर प्रसार मैपिछीचरण सुष्ठ व भावनासास चतुर्वेदी की वे हिन्दी कविता के आचार्यों में गणना करते थे । इनके दान व महाम् काव्य बंधन की वे अनुसनीय मानते थे । नवीन पौड़ी के कवियों में वे डॉ० विबुधन सिंह 'सुमन' की गरेन्द्र शर्मा और भी मवानीप्रसाद मिश्र में प्रतिभा और धोज देखते थे ।<sup>८</sup>

राष्ट्रभाषा सम्बन्धी कार्य एवं विचार—शर्मा जो राष्ट्रभाषा हिन्दी के महान् रसकों एवं उन्नायकों में से रहे हैं । उन्होंने हिन्दी को राजभाषा के पद पर अतिविश्रुत करने के लिए जो मवीरप प्रयत्न किये स्वयं व पद-नोकुपता को दुष्टराषा उजनेवाओं से मुठनेइ ली और सरुसता प्राप्त की है वह हिन्दी भाषा के लिए एक अविस्मरणीय गाथा है । अविधान-परिषद् में हिन्दी का राजभाषा के रूप में स्वीकार कराने में उनकी प्रबल व महत्त्वपूर्ण कार्य भूमिका रही है । इस रूप में वे सदा-तवदा हिन्दी के प्यारे व प्रतिष्ठित नेता तथा अविभाक माने गये ।

१ 'प्राधानी कम' अग्रज १९४५, पृष्ठ ५ ।

२ 'दिग्गम' करवरी १९३१, पृष्ठ ११ ।

३ 'विबुधन रत्नावली', तृतीय खण्ड, पृष्ठ ११३ ।

४ बंग सम्मेलन में हिन्दी परिषद् के सभापति पद से किया गया भाषण, 'साहित्य सम्मेलन', विसम्बर, १९३६, पृष्ठ २५१ ।

५ वही, पृष्ठ २४६-२५० ।

६ श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'—'ब्रजभाषा', ब्रजसाहित्य की महत्ता और उपयोगिता, मार्गदर्श, सं० २०१६, पृष्ठ १ ।

७ 'भारत टाइम्स', २६ जून, १९६०, पृष्ठ ७ ।

८ श्री इनते मिश्रा, पृष्ठ ५६-५७ ।

राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध 'नवीन' ने लिखा था— 'यदि प्राय मुझे पूछना चाहें कि हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न किन् दिनों प्रारम्भ हुआ तो मैं इतिहास के पृष्ठों को छासो बकाकर कहूँगा कि बहु या द्वात्रिंशत् से (सन् १९३५ ई०) २९ वर्ष ३ मास पहले का सन् १९१६ के दिसम्बर मास के अन्तिम सप्ताह का कोई बहु दिन, त्रिंशत् दिन गान्धी जी के मोमुक्षु से हिन्दी के लिए भारत की राष्ट्रभाषा की उपाधि विनिर्भूत हुई।'<sup>१</sup> गान्धी जी के अनुसंधान के फलस्वरूप सन् १९२१ में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में हिन्दी सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ और बहु पाठ हो गया। प्रस्ताव इस प्रकार था 'कश्चित् की यह तथा प्रस्ताव पास करती है कि कांग्रेस, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और बहिष्कृत कमेटी की बरकराई आन्दोलन पर हिन्दुस्तानी में चलेगी। अगर कोई बच्चा हिन्दुस्तानी में बोलता हो या दूसरी प्राकृतिकता पाने पर अंग्रेजी या प्रान्तीय भाषा इस्तेमाल की जा सकती है। प्रान्तीय कमेटियों को बरकराई आन्दोलन पर प्रान्तीय भाषाओं में चलेगी। हिन्दुस्तानी को इस्तेमाल की जा सकती है।'<sup>२</sup>

हिन्दी के राष्ट्र भाषा प्रश्न पर 'नवीन' जी का गान्धी व जवाहरलाल नेहरू से सहारा सहज हो गया था। महात्मा गान्धी 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते थे जिसे नवीन जी ने कभी भाषा के रूप में ही स्वीकार नहीं किया। हिन्दुस्तानी का भारत बरकार और हिन्दुस्तानी अकादमी ने जो स्वरूप निकाला बनाया व निर्धारित किया था वह हिन्दी व उर्दू दोनों का विभक्त था।<sup>३</sup> महात्मा गान्धी के धर्म के लिये यह रूप प्रयोग में आया था बचता है—

“हिन्दुस्तानी—हिन्दी—उर्दू—हिन्दी—उर्दू—”<sup>४</sup> की कल्पना पाण्डेय ने लिखा था कि हिन्दुस्तानी नीति को भाषा हो सकती है, प्रतीति को कदापि नहीं, हिन्दुस्तानी नीति ही भाषा बन सकती है, प्रीति को कदापि नहीं।<sup>५</sup> हिन्दुस्तानी का रूप महात्मा गान्धी के धर्म में मेरो इति में आकरो और उर्दू लिये जो स्थाव किया जाना है जो भाषा न बरकती रूप है न सफलमयी है।<sup>६</sup>

राजपि भी पुत्रोत्तमदास टण्डन ने इस विषय में सर्वोपरि निवृत्त किया। ठेठ गौडियदास बासुपाण्डेय धर्म प्राप्ति ने उनका इस क्षेत्र में पूर्ण सहयोग किया। इस विषय में टण्डन जी व गान्धी जी में मतभेद हो गया था। टण्डन जी का इस विषय में मत था— “भाषा और लिये दोनों ही के सम्बन्ध का प्रश्न है, क्योंकि अनुभव से दिखाई पड़ रहा है कि भाषाएँ कामों में ही हम एक भाषा बनाकर ही लिये में उभरे लिये हैं, हिन्दु एहरे

१ 'साहित्य समीक्षा', पृष्ठ १७४।

२ 'भारतीय भाषाओं की हिन्दी सेवा' पृष्ठ १४६ में उद्धृत।

३ श्री कल्पवृक्ष पाण्डेय— हिन्दी की हिमायत क्यों? पृष्ठ ५६।

४ वहाँ, पृष्ठ ६०।

५ वहाँ, हिन्दुस्तानी की विभाजन क्यों, पृष्ठ १।

६ महात्मा गान्धी का श्री पुत्रोत्तमदास टण्डन को लिखित (दिनांक २७-५-४२) का 'राजपि अखिलभारत-भाषा', पृष्ठ २०।

घोर साहित्यिक कार्यों में एक भाषा घोर हो लिपि का सिद्धान्त बनेगा नहीं। भाषा का स्थायी समन्वय तभी होया जब हम देश के लिए एक सामारस लिपि का विकास कर सकें। काम बहुत बड़ा आवश्यक है, किन्तु राष्ट्रियता को दृष्टि से स्पष्ट हो व्युत्पन्न महत्व का है।<sup>१</sup> पान्थी जी ने इस विचार को स्वीकार नहीं किया घोर अपने विनांक २३-७-१९४५ के पत्र द्वारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन से त्याग-पत्र दे दिया। इस पत्र में उन्होंने लिखा "राष्ट्रभाषा की मेरी व्याख्या में हिन्दी घोर अब लिपि घोर दोनों शैली का ज्ञान प्राप्ता है।"<sup>२</sup> सेठ गोविन्दवास ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मेरठ अधिवेशन में सन् १९४८ में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था— 'हिन्दुस्तानी कोई भाषा है ही नहीं। उसका न तो कोई व्याकरण है न साहित्य। जिस भाषा का अस्तित्व ही नहीं, वह राष्ट्रभाषा कैसे बनाई जा सकती है?'<sup>३</sup> इसी भाषण में उन्होंने हिन्दी के पक्ष का इतिहास निरूपण करते हुए कहा था कि विदेशी राजतन्त्राधीनता को अन्तर्गत करने के प्रश्न पर सब एकमत था किन्तु जो लिपियों वाले कुबिम हिन्दुस्तानी को वह सिंहासन दिया जाय प्रथम विज्ञ को एकमात्र वैज्ञानिक लिपि नाबरी से सज्जिता इस विज्ञान देश की स्वयंसिद्धा राष्ट्रभाषा हिन्दी को दिया जाय—इस प्रश्न को लेकर दो विचारवादाओं के समर्थक बल बन गये। एक बल में राजनीति के कार्यवाहों की शक्ति घोर दूसरे में करोड़ों जनता को हासिक भावनाओं का समवेत स्वर था।<sup>४</sup>

'नवीन' जी ने भी हिन्दुस्तानी का अटकर विरोध किया। उन्होंने इस विषय में लेखनो एवं बाली दोनों का ही अनुपयोग किया। उन्होंने लिखा था कि "भारत की आम भाषा को फरसी घोर अरबी का नामा पहिला देना अर्थात् घोर अन्धकाराधिक हो नहीं, बल्कि अमाननीय भी है। × × × × वर्तमान हिन्दुस्तानी में हम अपने उच्चतम भाषा घोर भावनाओं को व्यक्त ही नहीं कर सकते। वैज्ञानिक विचार घोर भावपूर्ण व्यक्तार्थ, कभी प्राकृतिक घोर शारीरिक प्रयोग में अनावृत्त भाषा द्वारा व्यक्त नहीं की जा सकती।"<sup>५</sup>

संयुक्त प्रांतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन प्रयाग में ३१ मार्च १९४५ को डॉ॰ रामप्रसाद त्रिपाठी की अध्यक्षता में हुआ था जिसका उद्घाटन राजपि टण्डन ने किया था। इस अधिवेशन में डॉ॰ सम्पूर्णानन्द ने हिन्दुस्तानी प्रचार समा सम्मेलन के वर्षों के निर्णयों के विरोध में एक प्रस्ताव रखा था जिसका समर्थन करते हुए 'नवीन' जी ने कहा था कि "यह कहना साम्य अरनीय घोर मुक्ततापूर्व ज्ञान पड़ेगा कि पान्थी जी हिन्दी का अस्तना कर रहे हैं, पर इतना ही निःसंशय है कि जैसे हिन्दी के अस्त को अस्त नहीं हो सकती। मैं बार-बार कह चुका हूँ कि संस्कृत घोर प्राकृत मिश्रित हिन्दी हमारे देश की

१ वही, (विनांक ११-७-४५) पृष्ठ ९२।

२ वही पृष्ठोत्तरवात् टण्डन का महत्त्वा पान्थी को विनांक ११-७-४५ को लिखित पत्र, 'राजपि' अभिनन्दन प्रकाश, पृष्ठ ९४।

३ सेठ अभिनन्दन प्रकाश, पृष्ठ ६६।

४ वही, पृष्ठ ३५।

५, 'धायामी कस', हिन्दुस्तानी का प्रचार प्रस्ताव है, मई १९४४, पृष्ठ ३९।

राष्ट्रभाषा है। यदि हम हिन्दुस्तानी के रूप में कोई नयी भाषा बसाते हैं तो वह बंगला, मराठी, गुजराती, मुसलमानों पर एक नयी बीज लाव देना होगा। इससे बड़ी गड़बड़ी पैदा होगी।<sup>१</sup>

कयी प्रशिक्षण के सम्पत्तीय भाषण में श्री 'नवीन' जी ने अपने विद्वानों के कहे या कि 'यै इस बात का शेर बिरोधी हूँ कि हिन्दुस्तानी नामक किसी कथोक्त-कल्पित भाषा के सुबन के नाम पर हिन्दी का स्वल्प विकृत किया जाय। हिन्दुस्तानी नामक भाषा का हमारे जीवन में, हमारी संस्कृति में, हमारे जन-रुचि में, कोई स्थान नहीं है। हिन्दुस्तानी नामक कथोक्त-कल्पित भाषा एक ऐसा उपहासस्वर प्रयास है जो कि सांस्कृतिक सम्मेलन के नाम वास्तव में संस्कृति लांछ्य को प्राखोरित करता है। मैं समझता हूँ कि गान्धी जी हिन्दुस्तानी का उद्घोष करते देश को भ्रान्त किया जो शीघ्र से जा रहे हैं।<sup>२</sup> उनका यह स्पष्ट मत था कि 'मेरे देश की ऐतिहासिक बरिपाटी, सांस्कृतिक जनरुचि एवं जन हित धारणा का यह धारणा है कि वर्तमान प्राबल्यकता एवं वर्तमान विचारधारा को व्यक्त करने वाली प्रसिद्ध शब्द संस्कृत शब्दावली भाषाओं से ही प्रार्थी।'<sup>३</sup>

'नवीन' जी से इस प्रस्ताव को, कि भारत को राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा राष्ट्र-लिपि देवनागरी हो, भारतीय संविधान परिषद् के कांग्रेस दल में स्वीकृत कर लिया था।<sup>४</sup> डॉ० जगन्नी दत्तार ने लिखा है कि 'राष्ट्रभाषा सम्बन्धी प्रस्ताव को लेकर संविधान सभा में का बाल-निर्वाह हुआ उसे सुझाने में श्री हिन्दी के पक्ष का प्रतिपादन करने में 'नवीन' जी की सेवाएँ बिरहमरखीय रहीं।'<sup>५</sup>

अन्ततोऽन्तः हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा व राजभाषा का पुनीत व महान् पद प्राप्त हुआ। श्री वासुदेव शर्मा के अनुसार, एक राष्ट्रभाषा व राजभाषा को हमारे देश को प्राबल्यकता थी। निम्न-लिखित भाषा भाषी भारत देश में अन्तर्जातीय आशान-प्रदान के लिए एवं केंद्रीय शासन संभालन के लिये एक राजभाषा की प्राबल्यकता अनुभव की। देश भर को एक रूप में प्राबल्य करने के लिए राजभाषा चाहिये थी और सर्वाधिक जनप्रिय जानेवासी भाषा होने के कारण, देश में हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया।<sup>६</sup> इसके अलावा प्राबल्यकता भी हा सकती है।<sup>७</sup> हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने पर अहमद अज साहित्य सम्मेलन के सहायपुर अधिवेशन में अहिन्दी भाषा-भाषियों के प्रति अपनी दृढता प्रकट की

१ 'बीला', अगस्त, १९४५, पृष्ठ २१२।

२ वही, अगस्त, १९४०, पृष्ठ १७-१२।

३ 'बीला' अगस्त, १९४०, पृष्ठ १७-१२।

४ वही, अक्टू २१।

५ 'मासोप मैनाजी की हिन्दी सेवा', अक्टू १८०।

६ राजगिरि सम्मेलन के सहायपुर अधिवेशन के सम्पत्तीय दल से लिया गया भाषण, 'राजगिरि', सप्टेम्बर, अक्टू १९।

७ 'साहित्य सम्मेलन', अगस्त, १९४६, अक्टू २५०।

को ।<sup>१</sup> उनका स्पष्ट मत था कि हमारे मन में यह भाव नहीं उठता कि हम लोग हिन्दी भाषा को किसी अन्य भारतीय भाषा-भाषियों पर बहात् आरोपित करें ।<sup>२</sup>

हिन्दी के राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि के राक्षसीय लिपि हो जाने के पश्चात् उन्होंने कुछ कर्तव्य वेतावनीयाँ व निर्देश भी दिये थे । वे समस्त भारत के विद्वान्विद्यार्थियों में शिक्षा का माध्यम हिन्दी चाहते थे । उनका मत था कि विद्वान्विद्यार्थियों का शिक्षा माध्यम हिन्दी हो जाने के कारण प्रांतीय भाषा-भाषियों के विचारों में बहुत ही स्वल्प एवं कल्याणकारी परिवर्तन होगा । उनकी दृष्टि विस्तृत होगी, उनके विचार उदार होंगे । हिन्दी के द्वारा वे देश की व्यापक प्रारम्भ के दर्शन कर सकेंगे ।<sup>३</sup> हिन्दी को एकमूर्तता के प्राथमिक के लिए वे देश के सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्चन्यायालय की भाषा भी हिन्दी चाहते थे ।<sup>४</sup> उन्होंने वेतावनी भी की कि हमें अपनी भाषा को सीमित एवं संकुचित रूप में नहीं रखना चाहिये ।<sup>५</sup> हमारे अभीष्ट कार्यों की ओर संकेत करते हुए उन्होंने सुझाया था कि सर्वों का शक्तिय दूर करना है । शासन सम्बन्धी विभाग सम्बन्धी, न्यायालय सम्बन्धी कर्मकोशों के निर्माण की ओर ध्यान देना है । हमें शिक्षा सम्बन्धी पोषियों का निर्माण करना है ।<sup>६</sup>

धर्मों के मामले में शर्मा जी का दृष्टान्त भी से मत्तमेर हो गया था । दृष्टान्त जी नापटी धर्मों के पक्ष में थे जब कि शर्मा जी रोमन धर्मों के । धर्मों के सम्बन्ध में विधान-परिष्कार ने यह निर्णय किया था कि भारत-राज्य संघ के राज्य-काय के लिए धर्मों का जो रूप प्रयुक्त होगा, वह भारतीय धर्मों का अन्तर्गत स्वरूप होगा । उसी धारा में तबसुक्ति विधान के सत्रहवें भाग की १४१ की धारा (१) के उपधात में विधानपरिष्कार ने यह सिद्धान्त भी स्वीकृत कर लिया है कि केन्द्रीय पार्लियामेन्ट किसी भी प्रांतीय धर्म के लिए अपने विधान द्वारा देवनागरी धर्मों का प्रयोग लागू कर सकती है ।<sup>७</sup> 'नवीन' जी ने कहा था कि "इसका स्पष्ट धर्म यह है कि पञ्चदश वर्ष के उपरान्त यदि केन्द्रीय लोक सभा चाहे तो भारत-राज्य के प्रत्येक विभाग में देवनागरी धर्मों का प्रचलन प्रारम्भ कर सकती है । सुनें ब्रह्म है कि धर्मों को लेकर हम एक आम्बोलन खड़ा कर रहे हैं । इस प्रकार का व्यवहार हिन्दी की भाषी जनता में बाधक बनेगा ।"<sup>८</sup> धर्मों के सम्बन्ध में 'नवीन' जी ने निवेदन किया था—“काशी नापटी प्रचारियों सभा, साबरकर जी और विनोदा जी तथा काय कालेसकर जी निवि परिवर्तन की आकांक्षयता अनुभव कर रहे हैं । इस दशा में प्रयत्न भी प्रारम्भ हो गए हैं । अब सीपा सा प्रश्न यह है कि अब हम निवि में परिवर्तन करने की बात सोच सकते हैं

१ 'जबभारती', स्मृति-धर्म, पृष्ठ ५१ ।

२ 'साहित्य सम्बन्ध', दिसम्बर, १९५१, पृष्ठ २३० ।

३ 'जबभारती', स्मृति-धर्म, पृष्ठ ११ ।

४ वही, पृष्ठ १४ ।

५ वही, पृष्ठ ११ ।

६ वही, पृष्ठ ११-१२ ।

७ 'जबभारती', स्मृति-धर्म, पृष्ठ ५१ ।

८ वही ।

तब क्या हम संघों में परिवर्तन करने की बात का सुनना भी सहन न करेंगे ? मेरा निवेदन है कि हम इस संघों वाले विचार को लेकर ऐसा कोई काम न करें, जिससे वही परिपाटी पूजा की भावना परिपुष्ट हो, यदि परिपाटी प्रेम बल पकड़ गया तो हम अपना स्वयं का नाश कर लेंगे ।<sup>१</sup> जो अखिलीय कुमार ने लिखा है कि 'नवीन' जो है एक विचार सभा में कहा था कि 'विद्यार्थी छात्र छात्र से शिक्षण की भाषाएँ रोमन संघों का व्यवहार कर रही हैं । हर्षे उनसे भावना का इस विषय में आदर करना चाहिये । यही कारण है कि 'नवीन' जो है, अखिल जी का भावनी संघों के लिए अक्षर समर्पन हाथें हुए भी रोमन संघ रखने का कभी विरोध नहीं किया ।<sup>२</sup>

ये सभी भारतीय भाषाओं के लिए एक सिद्धि के पक्ष में थे । मूलपूर्व राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद व आचार्य किनोबा भावे भी इसी मत के अनुयायी हैं । व एक सिद्धि के रूप में वैधानिकी की प्रतिष्ठित करना चाहते थे क्योंकि प्रायः बौद्ध संसद के लयमन जनतन्त्रा वैधानिकी सिद्धि के द्वारा अपना काम बनाने और शिक्षा प्रद्वेष करने की प्रवृत्ति है ।<sup>३</sup> वंग सम्मेलन में हिन्दी परिषद् में अपने अध्यक्षीय भाषण में अर्मा जी ने कहा था कि 'यदि सभी भारतीय भाषाएँ एक ही सिद्धि में लिखी जा सकें तो सभी भाषाएँ हमारे लिये कुछ अधिक सुगम हो जायेंगी । एक सिद्धि का स्वप्न हमारे पूर्वजों ने देखा था । उन पूर्वजों में बंगाल, आंध्र और महाराष्ट्र प्रांत के मनीषी थे और आज से अर्धशताब्दी के पूर्व उन्होंने भारतीय भाषाओं के लिए सिद्धि के आन्दोलन का आरंभ किया था । उन मनीषियों का मान्य रूप आज से अर्धशताब्दी से है । स्वर्गीय भी राजेन्द्रप्रसाद विन और मुख्य स्तोक लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने महानुभाव से उन्होंने प्राचीन भावना से ऊपर उठकर इस बात को अक्षरपूर्वक हमारे सम्मुख रखा कि इस देश में सभी भाषाएँ वैधानिकी सिद्धि में लिखी जानी चाहिये ।<sup>४</sup>

हिन्दी के राजभाषा बन जाने के पश्चात् भी, राष्ट्रभाषा का यह केहूटी और और केतनी इतना दृष्टिगत ही रहा और हिन्दी के प्रश्न पर हमेशा प्रचली होकर चूम्बटा रहा । १ नवम्बर, एम् १९५४ को उत्तरप्रदेश हिन्दी सभियत सम्मेलन के बस्ती अधिवेशन के अध्यक्ष पर से 'नवीन' जी ने इस बात पर और दिया था कि 'केन्द्रीय शासन द्वारा एक हिन्दी शाखा की स्थापना घोष की जाय । जब तक इस प्रकार के भाषाओं की स्थापना होकर व्यवस्थित रूप से हिन्दी की उन्नति की योजना नहीं बनती तब तक वास्तव में राष्ट्रभाषा का उचित प्रकार सम्भव विचारों नहीं पकटा ।<sup>५</sup> केन्द्रीय शिक्षा-विभाग की राष्ट्रभाषा के प्रति उदारचित्त उपेक्षा की और अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहा था—'जो लोग हिन्दी को विपुल, सुदृढ़, आत्मोत्तम और अत्यन्त बना रहे हैं, वे अखिलीय शिक्षा अन्तःस्थ के लाहने हैं । जो अखिलीय भाषा के लोगों के अधिक हैं वे शिक्षा अन्तःस्थ के प्यारे कोषकार हैं । वा सुपनी हिन्दी-

१ अखिल, पृष्ठ ६१ ।

२ आन्तरिक 'हिन्दुस्तान', १० जुलाई, १९६०, पृष्ठ १९ ।

३ 'आखिलीय सभियत', दिसम्बर, १९५६, पृष्ठ २५० ।

४ वही ।

५ 'अखिलीय', आन्तरिकीय, आन्तरिकीय, सं० २०११, पृष्ठ ७९ ।

प्रचारक संस्थाओं के विरोध में बढ़े हो जाते हैं, वे प्रिन्सा-मन्त्रालय के अनुदान के हामी हैं। जो जो प्रकार की हिन्दी को बर्ते करते हैं, वे उनके चलेते हैं।<sup>१</sup> केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त 'हिन्दी समिति' के वे सदस्य बनाये गये और उन्होंने अपनी गरिमापूर्वक पूर्ण परम्परा के अनुसार, हिन्दी का निःसंकोच समर्थन किया। हिन्दी भारती को 'नवीन' जैसे समूहों पर ही गर्व है।

संस्कृत निष्ठ हिन्दी के राष्ट्रभाषा रूप के उन्मायक नवीन भी ने अपने जीवन विचारधारा एवं साहित्य में संस्कृतनिष्ठता को पूर्णतः उदार किया था। वे विदेशी भाषाओं से वैज्ञानिक शब्द ग्रहण करने के विपक्ष में थे। इस विषय में कवि ने बिहड़र इन्टर एजुबीर का धामार माना था। 'नवीन' भी ने कहा था—“मेरा निश्चित मत है कि हमारी वैज्ञानिक सिस्त्रिणाची, वैश्वकार्मिक, साहित्यिक, दार्शनिक मनोवैज्ञानिक, धार्मिक, राजनैतिक, वैधानिक आदि सम्भावितियाँ संस्कृत तथा एतद्देशीय भाषाओं की प्राप्तीयता, उनके अस्तित्व के आधार पर ही निर्मित होंगी चाहिये।<sup>२</sup> 'नवीन' भी उन्हें के विरोधी हो गये। उन्होंने इस दिशा में कहा था कि “जब एक ऐसी भाषा है जो कृषि है। हमारे जन-जीवन से अलग कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। वह ऐसी भाषाओं को लेकर भीजित हुई है जो हमेशा से ही अभाषीय रही है और इसीलिये उच्चका हमारे देश की संस्कृति से कोई लेन नहीं खाता है।<sup>३</sup>

भी 'दिनकर' ने लिखा है कि संविधान-परिष्कार के समय के हिन्दी-हिन्दुस्तानी विचारक प्रभाव तो ऐसा गम्भीर हुआ कि 'नवीन' भी, सुन-सुनकर, अरबी-फारसी के शब्दों का बहिष्कार करने लगे। एक दिन तो बड़े प्यार से उन्होंने मुझे समझाया था, 'मित्र', कविता हमारे अस्त-पुर की भाषा है। इसमें तो अरबी-फारसी के शब्द मत रखो।<sup>४</sup> कवि ने इस दिशा में गम्भीर ही भाष्य का सर्वत्र एवं पर्याप्त परिष्कार ही नहीं किया। अन्तिम 'दिनकर' की 'नवीन' की पूर्णक कविता का भी परिष्कार कर डाला।<sup>५</sup>

राष्ट्रभाषा का यह प्रहृष्ट राष्ट्रभाषा के वाह्य एवं साहित्यकारों के प्रति भी उभय रहा। उनके मतानुसार, प्रगतिवादी कवियों के विचार पदानुवादी दर्शन की विधि पर आधारित हैं। इसलिये हिन्दी के अन्तर्गत साहित्यकार जब तक उस पदानुवादी दर्शन का स्वीकृत नहीं करते तब तक उनके कृतियों और पदानुवादी भाषाचर्चों के बीच इस प्रकार का अन्तर्गत अन्तर्गत हो चला। हिन्दी में जन समूहों की इच्छाओं-आकांक्षाओं, विचारों की इच्छाओं तथा नव-निर्माण की भावनाओं को लेकर जैसे स्तर का साहित्य सुजन हा। कवि भी साहित्य अन्तर्गत कृतियों यदि मानव समाज को अन्तर्गत ठगाने वाली है तब तो वे अन्तर्गती अन्तर्गत वे अन्तर्गत चली चली चली। भारत की अन्तर्गत ही भारतीय साहित्य की अन्तर्गत है।

१ 'अन्तर्गत', सम्पादकीय, माह-अन्तर्गत, स. २०११, पृष्ठ ७९।

२ अन्तर्गत हिन्दी साहित्य सम्मेलन, अन्तर्गत अन्तर्गत, स. २०११ का कार्य अन्तर्गत, अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत का अन्तर्गत, पृष्ठ २१-२५।

३ 'अन्तर्गत' अन्तर्गत स. २०११, पृष्ठ १०-११।

४ 'अन्तर्गत', पृष्ठ २९।

५ अन्तर्गत, पृष्ठ १०।

सम्बन्ध साहित्य बड़ी है जो मानव को ईमानदारी और एकता के रास्ते पर से जाने का प्राणकर्म है। 'नवीन जी का मठ था—'निरासा से वह विचार रहा है और धार भी है कि साहित्य किसी बार-बिरोध की सीमाओं से बाहर नहीं किया जा सकता। प्रगतिवाद का मूल धर्मवाद धर्मका विचार बिरोधवाद का प्रतिपारक साहित्य ही साहित्य है—ऐसा जोनेबाने अपने अन्दर और अर्थों पर जो प्रस्थाप करते हैं। तत् साहित्य वह है जो मानव के अस्वास्थ्य साधन में बहापक हो सके और वह कहना कि बेसी बेता प्रेरक साहित्य ही मानव अस्वास्थ्य साधन में अर्थ है, तो वह एक ऐसा सिद्धान्त है जो मानव-अस्वास्थ्य को प्रत्यक्ष जीवित कर देता।"२ कवि का यह स्पष्ट मठ था कि धार का मार्ग सिद्धान्त समन्वित प्रगतिवाद की प्राणायो कर्म को धर्मपुत्र स्वभाव में परिणत होने को है।३

बाल्यम की इतर आश्चर्यकारियों के प्रति भी के उत्कर्ष एवं चिन्तित थे। रंगमंच के विषय में उन्होंने कहा था कि द्विती के रंगमंच को देश में बहुत आश्चर्यकता है। इस विद्या में धर्मो लोग कोई प्रयत्न नहीं कर रहे हैं पर देशी नाटक को प्रोत्साहन देने के सिधे रंगमंच होना अनिवार्य है। द्विती के रंगमंच न होने से देश की प्राचीन धर्मनिरासा और माधुश्याओं को प्रदर्शित करने का मौका नहीं है, इसलिये वह गिरती सी जा रही है। उसे चिन्म देश के प्रधान धर्मनिरासा उपरीयक अन्तर् न इस ओर कदम उठाया है पर उसमें सरकार और जनता के सहयोग की परम आवश्यकता है। ४

राष्ट्रभाषा के मधुपुत्रक साहित्यकारों के लिए उनका कहना था कि 'मेरी समझ में तो प्राथमिक मातृभाषा ही सिद्धान्त है कि तत्साहित्य के सिधे स्वाध्याय निरन्तर आवश्यक है। हमारे अस्वास्थ्य साहित्य-सम्बन्धों को सदा यह तत्त्व अपने सम्मुख रखना चाहिये।"५ राष्ट्रभाषा के साहित्यकारों की स्थिति के प्रति भी के उत्कर्ष तथा महकटी रहते थे। महाकवि 'निरासा' के प्रति उनके हृदय में बड़ी ही महानुक्ति थी और उन्होंने कहा था कि 'निरासा' गूढ-निर्वाण किया जाय। वे स्वयं अज्ञानो कर्म बढ़ाने के लिए उत्तम थे।"६ राष्ट्रभाषा पर यह महान् उपसर्क न केवल नवीन धर्मपुत्र प्राचीन सहकर्मियों के प्रति भी प्रभाव रहा। राष्ट्रभाषा के धर्म-बोध की प्रार्थना करते हुए, 'नवीन जी ने भी माधुर्यम धर्म' धर्म के विषय में एक विचार कवि-सम्मेलन के समापति पर उ० बहा था कि धर्म जो अर्थों के स्वामी, धर्म के अर्थोवर मुहावियों के गिरजनहार और साहित्य के प्रकाश के अन्तर्पदसमान थे। पुनर्निर्वाण की में धर्म-निर्वाण की अथवा अज्ञानपरण रूप से

१ 'सुधारम', कालिक, सं० २०११, पृष्ठ ११।  
 २ 'साहित्य-समीक्षा', पृष्ठ १८६।  
 ३ 'आगामी कर्म', जनवरी १९४२, पृष्ठ १२।  
 ४ 'सुधारम', कालिक, सं० २०११, पृष्ठ ११।  
 ५ 'बीला', स्वाध्याय और तत्साहित्य मञ्ज, जून, १९४०, पृष्ठ ४०१।  
 ६ श्री विनोदीयाध्याय जीवित—'आगामी कर्म', निराला गूढ निर्वाण किया जाय  
 ७ डॉ० आनन्द गुप्ता—'गङ्गा बोनी बाबा में धर्मनिरासा', पृष्ठ २७६।



विद्यमान थी। जिस बहू के किचकिचाकर लिखते थे, तो उनके शब्द ऐसे होते थे कि पढ़ते-पढ़ते पाठक स्वयं घंटि फिटकियाने लगता था।<sup>१</sup>

निष्कर्ष—भारत के पानकर्ता तथा धर्म्य सेनानी ने अपने विचारों में सदा निष्प्रविरोध राष्ट्रीयता और मानवता को फिर स्थापन प्रदान किया। जीवन और साहित्य दोनों में वे एक रूप थे। उनकी समस्त चिन्तन-प्रणाली बंधन कल्याण बन्धुत्व के मूख भावों से भेद-भेद है। जीवन की बिम्बाचिन्ती भावों की संजीवनी और विचारों की बद्धि ने हमारे कवि के काल में त्रिपुरी स्थापित कर ली है। उनके विचारों में यदि अपने युग का आलोच है तो काल बिमर्श की कर्मनीयता भी। उनका जीवन-वर्तन अपनी परिपक्वता तथा विधिष्टता को लिये हुए, अपनी अनुपमय स्थापन रखता है।

चतुर्थ अध्याय  
विहंगावलोकन एवं वर्गीकरण



## काव्य-परिचय

विषय-प्रवेश—श्री बालकृष्ण चर्मा 'श्रीमद्मन्मथसुखी प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार' हैं। काव्य-लेखन के प्रतिरिक्त उन्होंने निरन्तर सम्पादकीय टिप्पणियों द्वारा 'नव-नव गद्य-काव्य' एवं 'कहानियाँ' को लिखा। उनकी सर्वप्रथम प्रकाशित रचना 'सन्धु' दीर्घक कहानी है जो कि सन् १९१८ में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई।<sup>१</sup>

'रतिमरेका' सन् १९५१) की प्रतिक्रिया में 'नवीन' भी ले लिखा है कि 'हीस-पैसीस क्यों ले लिख रहा है।' इसके विरिक्त होता है कि उन्होंने सन् १९१३-१६ से सिद्धांत प्रारम्भ किया था। उनकी सर्वप्रथम प्रकाशित कविता 'जीव-ईश्वर बार्दासाय' विषय पर, सन् १९१८ में श्री आचार्य द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका 'प्रतिभा' के मुक्त-पृष्ठ पर छपी थी।<sup>२</sup> यह कविता 'आवाहन' दीर्घक से प्रकाशित हुई।<sup>३</sup> स्वतः 'नवीन' को भी अपने साहित्य-सुजन का प्रारम्भ सन् १९२० से माना है।<sup>४</sup> बस्तुतः सन् १९१८-१९ में उनकी कविता रचनाएँ ही प्रकाशित हुई थीं।<sup>५</sup> सन् १९२० से उनकी कविताओं का द्रुत एवं आचार्यादिक प्रकाशन दृष्टिगोचर होता है।

श्री आचार्ययुक्त युक्त ने लिखा है कि 'नवीन' को द्वारा अब तक लिखी गई सृष्ट कविताओं की संख्या एक हजार के आस-पास होगी।<sup>६</sup> श्री प्रभाकर चर्मा ने उनकी कविताओं

१ 'प्रभा', निम्नोक्त विन्ता, १ नवम्बर, १९२०, पृष्ठ १०४ वृत्त ४२ ४५।

२ 'सरस्वती', सन्धु, जनवरी १९१८ 'प्रतिभा' प्रकाशक-बीजा मार्च १९१६, पृष्ठ १७२-१७६, 'श्री आचार्य', वी. बी.जी., १२ अक्टूबर, १९२० पृष्ठ २० ३१ 'प्रभा' आगामी, १ अक्टूबर, १९२० पृष्ठ १ २ ४२६, 'प्रभा' मेरा दीर्घ, मार्च, १९२१, पृष्ठ १९२ १९७ 'प्रभा', हाइ का बँकाल, आदि।

३ 'सरस्वती', जनवरी १९१८, वी. १९७४ भाग १६, पृष्ठ १, संख्या १, पूर्ण संख्या २७ पृष्ठ ४२ ४३।

४ 'रतिमरेका' पद्य का आधा अनुपमित आभास, पृष्ठ १।

५ श्री. पदसिंह चर्मा 'कमलेश'—श्री इनसे विन्ता, दुधरी विन्ता, श्री बालकृष्ण चर्मा 'नवीन', पृष्ठ ४८ ४९।

६ 'प्रतिभा' आवाहन अगस्त, १९१८, भाग २, पं. १।

७ 'द्वारायण', श्री सुधीरचन्द्र श्रीवास्तव 'असल', श्री बालकृष्ण चर्मा 'नवीन' में एक बेटे का निवेदन, सं. २०२१, वर्ष ३, पं. ८, पृ. २०।

८ 'प्रतिभा', आवाहन, अगस्त, १९१८, पृष्ठ १, 'सरस्वती' तारा, अगस्त १९१८, पृष्ठ १६६, 'प्रतिभा' अगस्त, अक्टूबर १९१८, पृष्ठ ६६; 'सरस्वती' विरहासुख, दिसम्बर १९१८, पृष्ठ ३०२ 'प्रतिभा', संयोग, अक्टूबर, १९१९, पृष्ठ ६५, 'प्रतिभा' मुरली को तान, अगस्त, १९१९, पृष्ठ १३४।

९ श्री आचार्ययुक्त युक्त—'दैनिक 'नवीन', विरहित बालकृष्ण चर्मा 'नवीन' (१२ ११-१९५१), पृष्ठ १।



## काव्य-परिचय

विषय-प्रवेश—श्री बालकृष्ण धर्मा श्रमण सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार थे। काव्य-लेखन के अतिरिक्त उन्होंने निबन्ध सम्पादकीय टिप्पणियाँ, अष्ट-श्लोक, एक-काव्य एवं कहानियाँ भी लिखीं। उनकी सर्वप्रथम प्रकाशित रचना 'सम्पु चौपक कदाही है को कि सन् १९१८ में 'तरस्वती' में प्रकाशित हुई।<sup>१</sup>

'रतिमरेखा' सन् १९५१ की प्रथिका में 'नवीन' बी में लिखा है कि तोस-येहीस क्यों ले लिख रहा हूँ।<sup>२</sup> इससे विदित होता है कि उन्होंने सन् १९१३-१६ से लिखना प्रारम्भ किया था। उनकी सर्वप्रथम प्रकाशित कविता 'बाब ईश्वर कार्तारनाथ' विषय पर सन् १९१८ में श्री बालादेव धर्मा द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका 'प्रतिभा' के मुख-पृष्ठ पर छपी थी।<sup>३</sup> यह कविता 'साधारण शीर्षक से प्रकाशित हुई।<sup>४</sup> स्वतः 'नवीन' बी में अपने साहित्य-सूचन का प्रारम्भ सन् १९२२ से माना है।<sup>५</sup> वस्तुतः सन् १९१८-१८ में उनकी कतिपय रचनाएँ ही प्रकाशित हुई थीं।<sup>६</sup> सन् १९६० से उनकी कविताओं का इत एव भारताधिक प्रकाशन दृष्टिगोचर होता है।

श्री बालादेव धर्मा ने लिखा है कि 'नवीन' बी द्वारा अब तक लिखी गई स्रष्ट कविताओं की संख्या एक हजार के घास-पास होगी।<sup>७</sup> श्री प्रमाणचन्द्र धर्मा ने उनकी कविताओं

१ 'प्रभा, निरीय विन्ता, १ नवम्बर, १९२०, पृष्ठ ३०४ पृष्ठ ४२-४३।

२ 'तरस्वती' सन्, जनवरी १९१८ 'प्रतिभा', अमिताभ-बीणा मार्च १९१९, पृष्ठ १७२-१७३, 'श्री धारदा', गोई बीबी, १२ अक्तूबर, १९२०, पृष्ठ २३-२३ 'प्रभा, बाबली, १ जून, १९२२ पृष्ठ १२२-४२३, 'प्रभा' विरा छाटै; मार्च १९२३, पृष्ठ १९२-१९० 'प्रताप', हाड़ का लंकाल, प्रादि।

३ 'तरस्वती, जनवरी, १९१८, पौष १९०४ भाग १९, अण्ड १ संख्या १, पृष्ठ संख्या २१०, पृष्ठ ४२-४३।

४ 'रतिमरेखा' परांक: बालादेवधर्मा बाला, पृष्ठ १।

५ डॉ० परमिहू धर्मा कथनेन—मैं इनसे मिला, दूसरी विस्त, श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन', पृष्ठ ४८-४९।

६ 'प्रतिभा' साधारण अग्रेत, १९१८, भाग २, पंक १।

७ 'सुधारण', श्री सुनीलकुमार श्रीवास्तव अग्रेत, श्री बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' में एक बेंद कालिक सं० २०११, अं ३, पंक ८, पृ० १०।

८ 'प्रतिभा', साधारण, अग्रेत, १९१८, अण्ड १, 'तरस्वती' ताटा, अग्रेत १९१८ अण्ड १३९; 'प्रतिभा' अग्रेत, सुभाई १९१८, अण्ड ९९; 'तरस्वती' विरहाणुन, रितम्बर १९१८, अण्ड ३ २ 'प्रतिभा, संयोग जून, १९१९, अण्ड ९५; 'प्रतिभा' सुरभी की ताटा, अग्रेत, १९१९ अण्ड १३४।

९ श्री बालादेव धर्मा—'दैनिक 'नवशोक', अग्रेत बालकृष्ण धर्मा 'नवीन' (१२ ११-१९५१), अण्ड ३।

की, कुछ संख्या लयमग चार-साढ़े-चार-सहस्र बटाई है ।<sup>१</sup> अपनी ४२ वर्षों—सन् १९१५-६० ई० की काव्य-साधना में कवि की सिर्फ साठ-काव्यकृतियाँ प्रकाशित हुईं । उनके जीवन अन्त में उनका विपुल काव्य-साहित्य अप्रकाशित ही पड़ा रहा ।

पुस्तकाकार एवं प्रकाशन के दृष्टिकोण से 'नबीन' की के विद्यत काव्य-साहित्य को निम्नलिखित विभागों में बाँटा जा सकता है—

- (क) प्रकाशित काव्य-कृतियाँ
- (ख) अप्रकाशित काव्य-कृतियाँ
- (ग) पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाएँ ।

'नबीन' की के पाँच-कविता-संग्रह तथा दो प्रबन्ध-काव्य के प्रतिरिक्त छः अप्रकाशित काव्य-संग्रह हैं । इसके प्रतिरिक्त उनकी अनेक कविताएँ अमी भी, प्रकाशित तथा अप्रकाशित काव्यसंग्रहों में स्थान नहीं पा सकी हैं और पत्र-पत्रिकाओं की प्राचीन संविधाओं में बरी पड़ी हैं ।

प्रकाशित काव्य-कृतियाँ—'नबीन' की की प्रकाशित काव्य-कृतियों, उनके पाँच स्तुत काव्य-संकलन—'कुङ्कुम' हरिदेबा, 'भयलक' क्वासि तथा 'बिजोबा-स्वतन' और दो प्रबन्ध काव्य—'अमिता' एवं 'प्राणार्पण' का स्थान आता है । उपर्युक्त ग्रन्थों का परिचय अधोलिखित रूप में है—

कुङ्कुम—कवि के द्वारि काव्य-संग्रह 'कुङ्कुम' का प्रकाशन-काल १९१९ ई० है । इसके प्रारम्भ में एक बम्बी भूमिका भी है जिसका शीर्षक है 'कुछ बातें' ।<sup>२</sup> नागपुर साहित्य-सम्मेलन के कवि सम्मेलन के समापति पर से बिये बयै अपने भाष्य को <sup>३</sup> 'नबीन' की में किचित् परिवर्तित रूप में भूमिका के रूप में प्रस्तुत कर दिया है ।<sup>४</sup> प्रस्तुत भूमिका में उन्होंने कवि-सम्मेलन का स्वस्व, परिवर्तन की आवश्यकता, धातुनिक कवि तथा काव्यधारा की विद्येपत्ताएँ और भाषाप्रबन्ध के विषय में अपने विचार समिभ्यस्त किये हैं । २४ जनवरी १९१९ ई० को लिखित 'नबीन' की के विचार (सम्बन्धित समास्यों तथा प्रश्नों पर) आज भी नबीन प्रतीत होते हैं । इस भूमिका में उन्होंने टार्लिक सत्को का निष्पण किया है । काव्य तथा कला पर 'नबीन' की की विचारधारा से सम्बन्धित होने के सिद् प्रस्तुत भूमिका अत्यन्त उपायैव तथा महत्वपूर्ण है । 'कुङ्कुम' की भूमिका में साहित्य के विषय में, स्वर्गीय 'नबीन' की के बुनियादी विचार संग्रहीत हैं ।<sup>५</sup>

'कुङ्कुम' में ३८ कविताओं को संग्रहीत किया गया है । अपनी परवर्ती रचनाओं के लक्ष्य इस कृति में 'नबीन' की के कविताओं के संज्ञान-रिधि का उल्लेख यथास्थान नहीं किया है ।

१ श्री प्रभायचन्द्र धर्मा, इन्वीर से हुई प्रत्यक्ष चेट ( दिनांक १३-१२ १९११ ) के आधार पर ।

२ 'कुङ्कुम', कुछ बातें, पृष्ठ १ १९ ।

३ डॉ० हरिबंशदास 'बच्चन'—'नये पुराने करोसे', 'नबीन' की एक संस्मरण पृष्ठ २४ ।

४ 'कुङ्कुम', कुछ बातें, पृष्ठ १ ।

५ श्री विपिन जोशी—'निबन्धन', 'कुङ्कुम भूमिका', 'नबीन' स्पृति-संक, पृष्ठ ८८ ।

यह संकेत प्रबन्ध प्राप्त होता है कि 'ये बहुत पहले लिखी गईं हैं।' सम्भवतः इनका लेखन काल सन् १९२१ से १९३२ ई० की कालविधि के अन्तर्गत प्रायः है। अनेक कविताएँ 'प्रभा' 'प्रवाप' आदि पत्रों में प्रकाशित हो चुकी हैं। श्री मंगलतीचरण बर्मों ने कहा था कि 'यदि 'नवीन' की अपने प्रबन्ध सम्बन्ध में, अपनी चुनौती हुई रचनाएँ ही प्रकाशित करते तो उसका प्रभाव हिन्दी-संसार पर अक्षय्य पड़ता।' 'चतुर्वेदा जी ने भी लिखा है कि 'एक गुप्त मुहूर्त में 'कुङ्कुम' प्रबन्ध प्रकाशित हो गया था परन्तु उन्होंने उसमें प्रायः अपनी सर्वोत्तम रचनाएँ नहीं धाने थीं। धायर उनका ऐसा बोझा ही उन्होंने नहीं रखा।' डॉ० बच्चन ने कहा है कि वे 'प्रकाशन साधन के अभाव में इसीलिए उनकी रचनाएँ बड़े विज्ञान से प्रकाशित हुईं और विविध समीक्षा भी नहीं हुई। उनको अपनी रचनाओं का प्रकाशन दूसरी ढंग से करना था। सर्वप्रथम अपनी उत्कृष्ट कविताओं का प्रकाशन करवाते। इसके पश्चात् साहित्यिकों में निहाला जाती तो फिर 'अन्य-अन्य' अपनी पुरानी रचनाओं का संग्रह निकलवाते। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। पहले क्रमानुसार अपनी प्रारम्भिक व पुरानी रचनाओं को प्रकाशित किया और तदनन्तर दूसरी कविताओं को।' सम्भवतः, 'नवीन' की का यह विचार रहा था कि रचना-क्रम एवं प्रकाशन क्रम में अनवरत सम्बन्ध रचना पाठ्ये।

'कुङ्कुम' में बेधमभक्तिपरक रचनाएँ ही अपना प्राधान्य रखती हैं। कवि की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचनाएँ 'विप्लव नायक' एवं 'परब्रह्म-गीत' इसी सफलता की भीष्टि करती हैं। और उस से बरिष्ठ कविताओं के कारण, काव्य-मी में सुविधा पा गई है। श्री बोहान ने लिखा है कि- 'कुङ्कुम' में संग्रहित राष्ट्रीय आन्दोलन नामधोबाद और प्रगतिवाद से प्रभावित गीतों में उनका व्यक्तिवाद 'दिनकर' की तरह प्रगति की इतिहास चेतना का विरवाध भरा वर्ष-संगीत स्वर लेकर प्रकट हुआ।' उनका व्यक्तिवाद राष्ट्रीयता के पथ पर अग्रसर होता हुआ दृष्टिगोचर होता है।' राष्ट्रीयता के अतिरिक्त श्रम और चिन्तन प्रभाव कविताएँ भी प्राप्त होती हैं। प्रेम के संयोग एवं विषय-दोनों पक्षों का कवि ने स्पर्श किया है।

इन संकलन में गीत, प्रगीत तथा मुक्तक—तीनों प्रकार की काव्य प्रशंसियों को कवि ने अपना प्रदान किया है। पढ़ी बोली के साथ ही साथ, ब्रज-भाषा में भी कतिपय रचनाएँ

१ 'कुङ्कुम', पृष्ठ ३०, पृष्ठ १।

२ श्री प्रणयेश शुकल—'बीणा', कविद्वय 'नवीन' की प्रारम्भिक रचनाएँ, मार्च १९४४, पृष्ठ ११२।

३ 'पैसा बिना', पृष्ठ २०१।

४ डॉ० हरिवंशदास 'बच्चन', नई दिल्ली से हुई प्रथम घंट (दिनांक १३-२-१९६१) के आधार पर।

५ 'कुङ्कुम', पृष्ठ ६-१४।

६ वही, पृष्ठ ११-१७।

७ श्री विद्यालाल श्रीवास्तव—'वाच्यपारा', हिन्दी कविता का विकास, पृष्ठ ४०।

८ श्री विद्यालाल श्रीवास्तव—हिन्दी साहित्य का अन्तर्गत और प्रवृत्ति, हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल, पृष्ठ ४६१।



की कुछ संख्या लगभग चार-साढ़े-चार-सहस्र बताई है ।<sup>१</sup> अपनी ४२ वर्षों—सन् १९१५-६ ई० की काव्य-साधना में कवि की सिर्फ़ साठ काव्य-कृतियाँ प्रकाशित हुईं । उनके जीवन-काल में उनका विपुल काव्य-साहित्य अप्रकाशित ही पड़ा रहा ।

पुस्तकालय एवं प्रकाशन के दृष्टिकोण से, 'नवीन' की के विषय काव्य-साहित्य को निम्नलिखित विभागों में बाँटा जा सकता है—

- (क) प्रकाशित काव्य-कृतियाँ
- (ख) अप्रकाशित काव्य-कृतियाँ
- (ग) पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाएँ ।

'नवीन' की के पाँच-कविता-संग्रह तथा दो प्रबन्ध-काव्य के अतिरिक्त छह अप्रकाशित काव्य-संग्रह हैं । इसके अतिरिक्त उनकी अनेक कविताएँ अभी भी, प्रकाशित तथा अप्रकाशित काव्य-संग्रहों में स्थान नहीं पा सकी हैं और पत्र-पत्रिकाओं की प्राचीन संश्लेषणों में बची पड़ी हैं ।

प्रकाशित काव्य-कृतियाँ—'नवीन' की की प्रकाशित काव्य-कृतियों उनके पाँच स्तुत काव्य-संग्रह—'कुङ्कुम' 'उत्थिरबा' 'अपसक' 'वासि' तथा 'विनोबा-स्वतन' और दो प्रबन्ध-काव्य—'अमिसा' एवं 'प्राणार्पण' का स्थान पाता है । उपरोक्त ग्रन्थों का परिचय अन्वेषित रूप में है—

कुङ्कुम—कवि के आदि काव्य-संग्रह 'कुङ्कुम' का प्रकाशन-काल १९१६ ई० है । इसके प्रारम्भ में एक लम्बी भूमिका भी है जिसका शीर्षक है 'कुछ बातें' ।<sup>२</sup> नामपुर साहित्य-सम्मेलन के कवि सम्मेलन के समापति पत्र से दिये गये अपने भाषण को<sup>३</sup> 'नवीन' की ने क्विबि परिचरित रूप में भूमिका के रूप में प्रस्तुत कर दिया है ।<sup>४</sup> प्रस्तुत भूमिका में उन्होंने कवि-सम्मेलन का स्वल्प, परिवर्तन की आवश्यकता, प्राबुद्धिक कवि तथा काव्यशास्त्र की विशेषताएँ और प्राधान्य महत्त्व के विषय में अपने विचार अभिव्यक्त किये हैं । २४ जनवरी १९१६ ई० को लिखित 'नवीन' की के विचार (अन्वेषित समाप्ताओं तथा प्रश्नों पर) आज भी नवीन प्रतीत होते हैं । इस भूमिका में उन्होंने तार्किक चर्चों का निष्कर्ष किया है । काव्य तथा कला पर 'नवीन' की की विचारशास्त्र से प्रभावित होने के लिए प्रस्तुत भूमिका अत्यन्त उपार्थक तथा महत्त्वपूर्ण है । 'कुङ्कुम' की भूमिका में साहित्य के विषय में, स्वर्गीय 'नवीन' की के दुनियावी विचार संक्षेपित हैं ।<sup>५</sup>

'कुङ्कुम' में ३८ कविताओं को संक्षेपित किया गया है । अपनी परबर्ती रचनाओं के अद्वय इस दृष्टि में 'नवीन' की की कविताओं के सौजन्य-विधि का उल्लेख यथास्थान नहीं किया है ।

१ की प्रमायचक्र शर्मा, इन्डोर से हुई प्रत्यक्ष भेंट ( दिनांक १३ १२ १९११ ) के आधार पर ।

२ 'कुङ्कुम', कुछ बातें, पृष्ठ १-१६ ।

३ डॉ० हरिचंद्रराय 'बच्चन'—'नये पुराने नदोसे', 'नवीन' की एक संस्मरण पृष्ठ २४ ।

४ 'कुङ्कुम', कुछ बातें, पृष्ठ १ ।

५ की विपिन बोधी—'अमिसा', 'कुङ्कुम भूमिका', 'नवीन' स्मृति-संग्रह, पृष्ठ ८८ ।

एवं प्रपक्वचित दोनों ही-काव्य संघर्षों में स्वाम एवं त्रिवि विहीन है। स्वाम के दृष्टिकोण से 'प्रियरेखा' में गाबीपुर, कैलाबाव, उबाव बरेली के काठगृह और कानपुर व रसपत्र में निहित रचनाओं का संकलन है। त्रिवि व स्वाम के प्रतिक्रिक कवि ने कतिपय कविताओं में निहित समय का भी प्रकृत किया है। बरेली-काठगृह एवं सन् १९४३ की रचनाओं का प्राधान्य है।

प्रथम, निप्रसन्न भूमार रस, मधुवाद, बारवज्य, प्रकृति चित्रण व्यक्तित्व मस्ती धारि उपादानों में भी धपना प्रभाव बिखेर रखा है। कवि की प्रति विख्यात कविता 'हम प्रतिकेउन' को इसी संघर्ष में स्वाम प्राप्त हुआ है। धाकार्य मन्दबुझारे बाबपेयी ने इस कविता की सराहना करते हुए बताया है कि 'हम प्रतिकेउन 'हम प्रतिकेउन' वाली कविता में जो स्वारस्य वा वैयक्तिक भावनाओं को जो व्यक्त किया गया था, उससे उनकी साहित्यिक सेती में भी उत्तम काव्य लिखने की सूचना प्राप्त हुई थी। प्रतिकेउन वाली कविता सुभे बहुत पसन्द आई थी और मैंने उन्हें इस पर पत्र भी लिखा था।' समय काव्य में ध्वनि-सौन्दर्य विचार पड़ा है।

परलोक—'नबीन की का तृतीय काव्य-संकलन' उपलब्ध सितम्बर, १९५१ ई० में प्रकाशित हुआ। मेरे क्या सबसे सीट? धीरेक १० ११ पृष्ठ की भूमिका में मार्क्सवादी साहित्य वर्तन तथा प्रगतिवादी साहित्य की विचारधारा से कवि ने धपना समझाए मजबूत किया है। इस इस्ताबना की प्रगतिवादी साहित्यिकों में व्यापक प्रतिक्रिया हुई थी। डॉ० धर्मवीर भारती ने 'धपसक' की कटु समीक्षा की। उन्होंने लिखा था कि वास्तव में किसी समय लसकर वर विप्लव क नीव और मूम-मूमकर प्रणय के सीट लिखने वाले नबीन धाम कितने पिछड़े हुए, कितने isolated (पछड़े हुए) हो गये हैं यह इन बुस्तक की न भूतो न कविप्यति' भूमिका से पता लगता है जो न सिखी जाती हो तो बहुत ही बर्से कपो-मुझे रह जाती और कवि का द्वि ही होता।<sup>१</sup> जो प्रजाकर मार्कसे ने भी लिखा है कि त्रिपं उन्हें ये सब वैज्ञानिक तक किन्ता बहू धामो भूमिकाएं कविता-संघर्ष में नहीं लिखनी चाहिये। उनके बिना भी उनकी काव्य रचना के धामर में कपो नहीं जाती। फिर क्यों यह बिठप्य? कवि की 'धपसक' की भूमिका को लेकर जो धन्यत्र विचार उठ उठा हुआ था, उसका प्रभाव उनके मध्यमरत हिन्दी साहित्य सम्प्रेक्षण के आसिपर प्रतिकेउन के प्रथमोप भाषण पर पड़ा।<sup>२</sup> डॉ० कमलेश द्वारा 'परलोक' की उपरुक्त धामोचना पर 'नबीन की का ध्यान प्राकृष्ट त्रिपे जाने पर, उगुलि कहा था—'बह धामोचना मैंने पढ़ी है। उसके लिये जाने वा कारण 'धपसक' की भूमिका है जिसमें मैंने विज्ञानवाद और प्रगतिवा' पर प्रहार किया है। साहित्यधामोचन में हम प्रकार की जो नैनी बात पढ़ी है, वह साहित्य का मध्याय मुन्याकन करने में निताक्त धपमय है। इतिहास

१ धाकार्य मन्दबुझारे बाबपेयी द्वारा ज्ञान।

२ 'धामोचना' डॉ० धर्मवीर भारती, धामर, ध्यत १९५९, खंड १, संक ३ पृष्ठ २२।

३ जो प्रजाकर बाबपे—ध्वनि धोर बाट-मय', पृष्ठ १२३ १२४।

४ 'परलोक'—ध्यान उबाव, दिमाबर, १९५२, पृष्ठ १०।

उपलब्ध होती हैं। कवि के प्रथम संकलन से ही यह निश्चित हो जाता है कि उसकी काव्य-यात्रा को प्रधान विभागों—राष्ट्रीयता तथा प्रणय के कूलों को स्पष्ट करती प्रभावित हो रही है। इस काव्य-संग्रह की भावोचना करते हुए, श्री प्रकाशचन्द्र पुस्त ने कई वर्ष पूर्व लिखा था कि 'कुंकुम' के प्रकाशन पर काव्य के प्वाले में एक सुखान सा उठ खड़ा हुआ है।<sup>१</sup>

रश्मिरेखा—शर्मा जी का द्वितीय काव्य संग्रह 'रश्मिरेखा' अगस्त १९५१ में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत मोठ संग्रह को कवि ने 'मायुष्मान् हरिसंकर विद्याधी' को समर्पित किया है जिनका परिवार 'नवीन' जी का प्राण रहा है।

संकलन की प्रस्तावना में 'नवीन' जी ने अपने जीवन-वर्तन एवं साहित्य सम्बन्धी मार्गदर्श और अपनी कृतियों की मुखधार का सुन्दर विश्लेषण किया है।<sup>२</sup> अनेक कृतियों में सबसे छोटी सुमिका इसी संग्रह को प्राप्त हुई है जो कि सिर्फ चार पृष्ठों में ही समा जाती है। पुस्तक की सुमिका में श्री सहायसुन्दरराय अग्रवस्ती ने विस्तार से 'नवीन' जी के कौटिल्य-काव्य पर सरस प्रकाश डाला है।<sup>३</sup> सम्बन्धित सुमिका अग्रवस्ती जी की पुस्तक 'साहित्य-तरंग' में भी संग्रहित है।<sup>४</sup>

'रश्मिरेखा' में ५७ कविताएँ संकलित हैं जिनका लेखन-काल अग १९३० से १९५४ ई० के अन्त में अवस्थित है। इस संग्रह की अधिकांश रचनाएँ त्रिचि व स्वान-बुद्ध हैं। सिर्फ चार कविताओं में त्रिचि एवं स्वान का संकल प्राप्त नहीं होता।<sup>५</sup> 'नवीन' जी के तृतीय अग्रकाशित काव्य-संग्रह (संश्लेषा क्रमांक तीन) 'जीवनमहिरा' या 'पावस पीड़ा' (अबु प्रेम कविताएँ) में भी अग्रबुद्ध चार कविताओं को संग्रहित किया गया है जिनमें से तीन के अन्त में त्रिचि-स्वान मिलता है। 'कह लेने दो' की लेखन-त्रिचि १४ मई, १९३५ ई० तथा स्वान जीमयोध कुटीर 'प्रठाप' अगपुर है।<sup>६</sup> 'असल बहार' के अन्त में, ९ फरवरी १९३५ ई० की त्रिचि और भी गणेश कुटीर, 'प्रठाप' कायांजव अगपुर का स्वान संकलित है।<sup>७</sup> 'मिल गये जीवन डगर में' की एक कविता में ११ जुलाई, १९३५, ई० की त्रिचि और रेख-अव अगपुर इलाहाबाद के स्वान का संकल प्राप्त होता है।<sup>८</sup> 'बहु सुख अमृत राग' कविता, अग्रकाशित

१ श्री विश्वनाथसिंह—'बीला' अंगारिकविद्य कवि 'नवीन' अरवरी, १९५३, पृष्ठ ५३० से उद्धृत।

२ 'रश्मिरेखा' 'पराय कामानुमति वाला', पृष्ठ १-४।

३ वही जील-काव्य और वासुदेव्युषा शर्मा 'नवीन' पृष्ठ १-२६।

४ श्री सहायसुन्दरराय अग्रवस्ती—साहित्य तरंग, जीलकाव्य और वासुदेव्युषा शर्मा 'नवीन' पृष्ठ १२३-१४७।

५ 'रश्मिरेखा' (क) 'कह लेने दो' पृष्ठ ३५-३६ (ख) 'बहु सुख अमृत राग' पृष्ठ ७०-७२ (ग) 'असल बहार' पृष्ठ २३०-२३२ और (घ) 'मिल गये जीवन डगर में', पृष्ठ १३३-३४।

६ अग्रकाशित काव्य-संग्रह 'जीवन महिरा' या 'पावस पीड़ा', ३७ वीं कविता।

७ वही, ४९ वीं कविता।

८ वही, ५० वीं कविता।

९ वही, ३४ वीं कविता।

एवं प्रकाशित दोनों ही-काव्य संग्रहों में स्थान एवं तिथि निश्चीन है। स्थान के दृष्टिकोण से 'दरिदरेखा' में गाजीपुर, फैजाबाद, उच्चाब बरेली के कारागृह और कानपुर व रसपय में निश्चित रचनाओं का संकलन है। तिथि व स्थान के प्रतिरिक्त, कवि ने कविपय कविताओं में निश्चित समय का भी संकेत किया है। बरेली-कारागृह एवं सन् १९४१ की रचनाओं का प्राचास्य है।

प्रलय, विप्रसम्म शृंगार रस मधुवाद, वासस्य प्रकृति चित्रण व्यक्तिगत मस्ती आदि उपादानों ने भी अपना प्रभाव बिखेर रखा है। कवि की प्रति विख्यात कविता 'हृदय प्रतिकेयन' को इसी संग्रह में स्थान प्राप्त हुआ है। आचार्य नन्ददुलारे बामपेयी ने इस कविता की सराहना करते हुए बताया है कि 'हृदय प्रतिकेयन' 'हृदय प्रतिकेयन' वाली कविता में जो स्वारस्य वा; शैथिलिक भावनाओं को जो व्यक्त किया गया था उससे उनकी साहित्यिक ऐसी में भी उत्तम काव्य लिखने की सूचना प्राप्त हुई थी। प्रतिकेयन वाली कविता मुझे बहुत पसन्द आई थी और मैंने उन्हें इस पर पत्र भी लिखा था।' समग्र काव्य में 'अग्नि-सौन्दर्य' विकसित पड़ा है।

अपसक—नबीन जी का तृतीय काव्य-संकलन अपसक सितम्बर १९५१ ई० में प्रकाशित हुआ। मेरे क्या सबल योत ? धीरे-धीरे ११ पृष्ठ की भूमिका में मार्क्सवादी साहित्य वर्तन तथा प्रगतिवादी साहित्य की विचारधारा से कवि ने अपना संग्रहण मजबूत किया है। इस प्रस्तावना की प्रगतिवादी साहित्यिकों में व्यापक प्रतिक्रिया हुई थी। डॉ० बर्मबीर भारती ने 'अपसक' की कटु समीक्षा की। उन्होंने लिखा था कि वास्तव में किसी समय बलकार कर विप्लव के योत और मून-मूनकर प्रलय के गीत लिखने वाले नबीन' ध्यान कितने विपन्न हुए, कितने ossalised (पगलारे हुए) हो गये हैं, यह इस पुस्तक की न भूतो न भविष्यति' भूमिका से पत्र लगता है जो न लिखी जाती हो तो बहुत सी बातें बची-भुंरी रह जाती और कवि का शिष्ट ही होता।' श्री प्रभाकर भास्कर ने भी लिखा है कि सिर्फ उन्हें ये सब वैज्ञानिक तक चिन्ता बहस वाली भूमिकाएँ कविता-संग्रह में नहीं मिलनी चाहिये। उनके बिना भी उनकी काव्य रचना के ध्यान में कमी नहीं आती। फिर क्यों यह बिगड्या?' कवि की 'अपसक' की भूमिका को लेकर जो धन्यत्र विचार उठ खड़ा हुआ था; उसका प्रभाव उनके अन्धकारतु हिन्दी साहित्य सम्मेलन के व्याख्यान अन्विकेयन के अन्धकारोप भाषण पर पड़ा। डॉ० कमलेश द्वारा 'अपसक' की उपर्युक्त आलोचना पर 'नबीन जी का ध्यान घाटप्ट क्रिये जाने पर, उगहने कहा था—'यह आलोचना मैंने पढ़ी है। उसके जिले जाने का कारण 'अपसक' की भूमिका है जिसमें मैंने विज्ञानवाद और प्रगतिवाद पर प्रहार किया है। साहित्यालोचन में इस प्रकार की का ऐसी कम पड़ी है, यह साहित्य का दयार्थ मुष्पावन करने में नितास्य असमर्थ है। इतिहास

१ आचार्य नन्ददुलारे बामपेयी द्वारा ज्ञान।

२ 'आलोचना' डॉ० बर्मबीर भारती, अज्ञात, अज्ञात १९५२, वर्ष १, संक १, पृष्ठ २२।

३ श्री प्रभाकर भास्कर—'व्यक्ति और वास्तव्य', पृष्ठ १११ ११४।

४ 'विप्लव'—अज्ञात उच्चाब, सितम्बर, १९५२, पृष्ठ १०।

को सपार्यबाहिनी भाव्य-बोधी धीर साहित्यालोचन की परिस्वित्तिमुक्त टीका लेखी एक सीमा तक हमारे ज्ञान को निखारती है। उनकी सीमाओं का ज्ञान दृष्टि के सञ्चिपान में हो तब तो ठीक, अन्यथा 'बाग़र कर करवात' की उक्ति करिठार्य हो जायगी। भाव बड़ी बात हो रही है। मानव के इतिहास को मानव की संस्कृति को मानव की अभिव्यक्ति को जब तक हम मानववाद की दृष्टि से नहीं देखेंगे तब तक राम न जाहेगा। यदि हम इनकी धीर पूर्वोक्त या समाजवाद की दृष्टि से देखते रहें तो हमें बिना का विकृत रूप ही दिखाई देगा। भाव के सामोचक बिना में ऐसे ही विकृत रूप को देख रहे हैं। वैश्विन् हमें इसकी चिन्ता नहीं है। क्योंकि कविता में प्राण है तो वह तिर बढ़े जायु की मति बोधती रहेगी। फिर यहाँ कुम्हड़ बतिया कोऊ नाही को ठरनी देखि डर जाहो।<sup>१</sup>

'अपमक' में ५२ कविताएँ संगृहीत की गई हैं। वास्तव में इस संकलन में ५१ कविताएँ ही हैं क्योंकि 'कुहु की बात' शीर्षक कविता 'पूर्व संकलन 'रतिमरेखा' में भी आ चुकी है। संकलित काव्य-रचनाएँ सन् १९३३ सन्—१९४८ के मध्य सिखी गईं। डॉ० बचन ने लिखा है कि 'नवीन' की हर रचना के साथ तिथि भी दिया करते थे। इन तिथियों की भी बड़ी महत्ता होगी। कहीं-कहीं परिस्वित्तियों का भी संकेत है। इनसे कविताओं की प्रेरणा उनके मातावरण धारि को समझने में सहायता मिलेगी। 'नवीन' की कविताओं का मूल अन्तर्गत घनसुक्तियों में मिलेगा।<sup>२</sup> तिथियों तथा परिस्वित्तियों के अतिरिक्त 'नवीन' की नै स्वान तथा कहीं-कहीं समय का भी उल्लेख किया है। प्रस्तुत संग्रह की तीन कविताएँ तिथि-विहीन हैं।<sup>३</sup> इनमें से प्रथम दो कविताएँ 'भान्त' तथा 'मिच्छारी' में सैखन-स्वान का प्रभाव भी है। कवि के तृतीय धर्मकावित काव्य-संग्रह (शीर्षक अज्ञात तीन) 'शोचन मरिच' या 'पावस पीड़ा' (अधु प्रेम कविताएँ) में भी 'भान्त' तथा 'मिच्छारी' कविताओं को संगृहीत किया गया है, जिनके अन्त में तिथि न स्वान का उल्लेख प्राप्त होता है। 'भान्त' की तिथि १७ जनवरी, १९३४ धीर स्वान बिसा जेत असीयड है। इसी प्रकार 'मिच्छारी' की तिथि २९ अगस्त १९३३ तथा स्वान, बिसा बैस कैजाबाय है। प्रस्तुत संकलन की रचनाएँ अजय बरेली असीयड तथा कैजाबाद अराण्डों धीर भी पणोष कुटीर अणपुर में लिखि गईं। परिस्वित्तियों में कवि ने 'अनि बीसा अस्त' 'रोग अस्त' व भाई रणजित सीताराम पण्डित के पद्यप्रयास<sup>४</sup> के उल्लेख प्राप्त होते हैं।

१ 'मैं इनसे मिला', दूसरी निस्त, पृष्ठ ३६-५०।

२ 'अपमक', 'कुहु की बात' पृष्ठ ३२-३३।

३ 'रतिमरेखा', कुहु की बात, पृष्ठ ५३-५४।

४ 'अप-मुदाने अरोजे' पृष्ठ ३७।

५ 'रतिमरेखा' (क) अन्त पृष्ठ २८-२९, (ख) मिच्छारी पृष्ठ ३-३३; (ग) तुम

बिन मूना होगा बीचन, पृष्ठ ३८-३९।

६ 'अपमक' (क) अस्त-अस्त, अस्त न मचो यह जीवन, पृष्ठ ३४, ३५, (ख) 'अपा न तुनोये बिजय हमारी', पृष्ठ ३२-३३।

७ बही, मैरो यह सतत टैर पृष्ठ ४८-४९।

८ बही पृष्ठ ३४-३५।

प्रस्तुत संकलन में सन् १९४१ की कविताएँ अधिक संग्रहित हैं और कवि ने प्रयाग-कायानुद्धारण में ही रचनाएँ अधिक लिखीं।

'धर्मलोक' का मूल काव्य-विषय प्रेम है। प्रेम में स्मृतिरम्य विनोद एवं वेदना के बिना अधिक उमर कर आये हैं। प्रेम-परक कविताओं के अतिरिक्त, आत्मरिक्त व्यक्तिगत चरित्र-व्याख्या तथा प्रकृति विषय सम्बन्धी कविताएँ भी मिलती हैं। यहाँ प्रथम सम्बन्धी गीतों में निराशा-बन्ध वेदना की प्रमुखता है, यहाँ चिन्तनपूर्ण रचनाओं में भी कवि धार्मिक भावनाओं की अभिव्यक्ति करते-करते, ओठिफटा की धार समुच्च हो जाता है। व्यक्तिगत चरित्र-व्याख्या की अभिव्यक्ति में, 'हम हैं मस्त फकीर' कवि की प्रतिनिधि रचना है। डॉ० द्विवेदी ने लिखा है कि 'विन्तीय कालांतर बरेली में सन् १९४१ में लिखी हुई 'हम हैं मस्त फकीर' धीरे-धीरे कविता कवि की स्वाभाविक मनोकृति का धारक है। कुछ और प्रेम में फलरूपन सदैव मिलता है।'<sup>१</sup>

'धर्मलोक' मूलतः शैलिकाम्य है। शीत तथा प्रगीत शैली के दृष्टान्त हमें प्रचुर-मात्रा में प्राप्त हैं। कवियत्र मुक्तक भी हैं। अभिव्यक्ति का माध्यम लड़ोबारी है। संकीर्ण भी प्रत्य-सुखिता प्रवृत्तमान है। 'कुंजुम' में कुंजुम धीरे-धीरे कविता प्राप्त नहीं होती यही हाल 'रविमोक्ष' का भी है, परन्तु 'धर्मलोक' की अन्तिम कविता 'धर्मलोक पर चमक मरो धीरे-धीरे चमक को बहान करती है।'<sup>२</sup>

प्रस्तुत कविता-संग्रह श्रीमती इन्दिरा पागो को सन्नेह समर्पित किया गया जिसके परिवार से कवि के पुत्रपुत्र एवं पतिष्ठ सम्बन्ध रहे हैं।

कवियत्र 'कुंजुम' या 'धर्मलोक' से ही प्रकाशित संग्रह उनके व्यक्तित्व का सम्यक् विवरण तथा उपस्थित करते। उनसे प्राप्त रचनाओं में उनका व्यक्तित्व कहीं अधिक निर्यात है।<sup>३</sup> कुछ भी नै लिखा है कि "बिना प्रकृत की निर्यात धारोचक को उनके संकलन 'कुंजुम' से हुई थी, यही 'धर्मलोक' से भी होती है। धार नवीन' के स्वर में जो धारोचक है वह इन कविताओं का पढ़ने में नहीं मिलता। 'धर्मलोक' की सुमिठा और 'नवीन' की भी विचारधारा ने निर्यात मत्तमेर होने के कारण कुछ भी" तथा अन्य प्रवृत्तबानी लेखकों एवं समीक्षकों ने

१. डॉ० रामप्रकाश द्विवेदी—साप्ताहिक 'धारा', पवित्रत बालकृष्ण समी नवीन', १९ मार्च, १९३०, पृष्ठ ६।

२. 'धर्मलोक', पृष्ठ १०७-८।

३. श्री प्रकाशर माधवे—व्यक्ति और बालकृष्ण, पृष्ठ १००।

४. श्री ब्रह्मचन्द्र गुप्त—साहित्यधारा, धर्मलोक, पृष्ठ १३८।

५. 'धर्मलोक' की रचनाधारा में 'नवीन' की नै धारोचक द्विवेदी धारोचकता के लक्षण में कुछ बातें बही हैं, जो निर्यात धारक हैं। कवियत्र शैली मात्र है, और इनके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। 'कुंजुमो नामलकारी कवि ये' 'उमो पूँजीबारी को', इन धार की स्थापनाएँ द्विवेदी धारोचकता में धारोचक कोई समीर लेखक नहीं करता। धार विचारधारा के कुछ से धारने लेनी बातें सुनी ही, या लोचक बरं बुरं की अभिव्यक्ति धारके बार्को में सुँच रही होंगी। इन लक्षणों हैं कि धार की द्विवेदी प्रवृत्तियों का समीर धारोचक करने द्विवेदी की लेखक की धार उठाना चाहिये।—बही पृष्ठ १३६।

‘उनकी कृतियों की कटु समीक्षाएँ की हैं। वास्तव में तटस्थ दृष्टिकोण से देखने पर, ‘नवीन’ की भी भूमिकाओं से उनकी कथ्य सम्बन्धी मांग्यताएँ, विचार-दर्शन तथा भारतीय संस्कृति के प्रति घट्ट निष्पक्ष से प्रथमतः होने की सात्विक सामग्री प्राप्त होती है।

**कवासि—**कवि का चतुर्थ काव्य-संग्रह सितम्बर, १९५२ ई० में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में ‘नवीन’ की श्री अस्तित्व सार्वभौम भूमिका है जिसमें प्रगतिवाद, मार्क्सवादी दर्शन पराबन्धवादी समीक्षा साहित्य-जगत्ता एवं समीक्षा सम्बन्धी कवि की उपपत्तियाँ, भारतीय साहित्य की धारणा व उसका लक्ष्य तथा संस्कृति पर गम्भीरता-पूर्वक विचार किया गया है। प्रगतिवाद तथा मार्क्सवादी दर्शन से कवि ने अपना पूर्ण मतमेव प्रस्तुत किया और प्रगतिवादी प्रालोचनों की समीक्षा कर कर एवं सोचाहरण बिस्लेषण किया।<sup>१</sup> ‘अपलक’ की भूमिका के समान इस भूमिका ने भी प्रगतिवादी-दिग्दर्शक में हृदयस्थ मन्त्रा किया। प्रगतिवादिनों की समीक्षा तथा विरोध के फलस्वरूप ही ‘कवासि’ की सभी व लघुपूर्ण भूमिका और मध्यमार्थ किन्हीं साहित्य-सम्मेलन के पत्रिकापर प्रबिबेचन के प्रथमवीय अन्धकार ने जन्म दिया था। इन दोनों की प्रतिक्रिया एवं कटु-समीक्षा डॉ० रामबिन्दास शर्मा की ‘प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ’ के ‘साहित्य और पचास’ शीर्षक लम्बे निबन्ध में देखी जा सकती है।<sup>२</sup>

‘कवासि’ को कवि ने ‘तीसरा भीत संग्रह’ कहा है।<sup>३</sup> भीत-संकलन की दृष्टि से यह राष्ट्रीय कृति है, परन्तु काव्य-संग्रह के दृष्टिकोण से चतुर्थ। प्रस्तुत-संग्रह में ५३ रचनाएँ संकलित हैं। वस्तुतः इसमें ५३ कविताएँ ही हैं, क्योंकि ‘मेरे मधुमय स्वप्न रंभीने’ और ‘प्राणों के पाहुन’ शीर्षक दो कविताएँ, इस संग्रह में ही दो बार संकलित हो गई हैं।<sup>४</sup> समग्र कविताओं का रचनाकाल सन् १९३१-४९ ई० का है। प्रस्तुत संग्रह में सिर्फ चार कविताओं<sup>५</sup> के प्रतिरिक्त सभी विवि युक्त हैं। शर्मा जी के प्रकाशित चतुर्थ काव्य-संग्रह (श्रीका कलाक चतुर्थ) ‘प्रसंगिक’ (राष्ट्रीय कविताएँ) में, इन विवि-विहीन कविताओं में से एक रचना कमला नेहू की स्मृति में भी संकलित की गई है जिसके घट में १८ मार्च १९३६ की विवि तथा कीर्तिस श्रुतिर, अजमेर के स्थान पर सम्मेलन है।<sup>६</sup> अन्य तीन कविताओं की लेखन-विधि तथा स्थान प्रविष्टि है।

१ ‘कवासि’, ‘कवासि की यह डेर मेरी’ पृष्ठ १-२३।

२ डॉ० रामबिन्दास शर्मा—‘प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ’ चतुर्थ निबन्ध साहित्य और पचास’, पृष्ठ ६०-१०१।

३ ‘कवासि’ ‘कवासि की यह डेर मेरी’, पृष्ठ १।

४ ‘कवासि’ (क) ‘मेरे मधुमय स्वप्न रंभीने’, पृष्ठ १६ १७ और पृष्ठ ११० १११;

(ख) ‘प्राणों के पाहुन’ पृष्ठ २४ २५ और पृष्ठ ११४ ११५।

५ ‘कवासि’ (क) ‘सिद्ध बिरहु के गान’ पृष्ठ ३-५, (ख) ‘अभिप्रेक्षित’, पृष्ठ ४१

४४, (ग) ‘कमला नेहू की स्मृति में’ पृष्ठ ६८-६९, और (घ) ‘जड़ जला’ पृष्ठ १००-१०१।

६ प्रकाशित चतुर्थ काव्य-संग्रह ‘प्रसंगिक’, कमला नेहू की स्मृति में, ३६ की कविता।





प्रस्तुत-संग्रह की शीर्षकवाहिनी अन्तिम कविता 'व्याप्ति' संकलन की सूचनिका के द्वारा जोखती है।<sup>१</sup>

बिनोबा-स्तरजन—कवि का पञ्चम एवं अन्तिम प्रकाशित काव्य-संग्रह 'बिनोबा-स्तरजन' है जिसमें भूदान-यज्ञ के प्रखेता आचार्य बिनोबा भावे का व्यङ्गीयत्व प्रतिष्ठित की गई है। यह संग्रह 'बन्धुवर सिव्यारामधरण गुप्त' को अस्तीह समर्पित किया गया है। संग्रह का प्रकाशन-काल सं० २०२० ई। 'नवीन' की नौ पुस्तक की सूचिका 'सप्त बिनोबा' में बिनोबा के व्यक्तित्व, प्रतिभा उपलक्षण अन्विष्ट सूत्र्य जीवन, ज्ञान सम्येध और महत्त्व पर विस्तार से प्रकाश डाला है।<sup>२</sup> अपने जीवन के उत्तरकाश में 'नवीन' की बिनोबा से व्यक्तिक प्रभावित हो गये थे और उनके दर्शन का प्रभाव भी कवि की विचारधारा पर देखा जा सकता है। बिनोबा कवि के प्रेरणा-स्रोत रहे हैं। सन् १९५१ में वर्मा की अधिकतर आचार्य बिनोबा भावे के सम्बन्ध में प्रवचन करते थे और पत्र-पत्रिकाओं को परामर्श देते थे कि भावे की के सम्येध को प्रथम स्थान दें।<sup>३</sup> वे बिनोबा की नौ रचनाओं की कुछ साहित्य की परिधि में परिगणित करते थे।<sup>४</sup>

प्रस्तुत-संग्रह में बहो मन्त्रव्यय है अक्सर। 'उद्दान जग चुप्री है बलिष्ठा' अस्ति-वचन 'महाप्राण' के स्वतः 'ईशावास्योपनिषद् बाला' और इस धरती पर सामा है' शीर्षक साठ कविताएँ संकलित हैं। सब कविताओं के अन्त में कवि ने लेखकतिथि एवं स्थान का उल्लेख किया है। समग्र कविताओं का लेखन-स्थल नहीं मिलती है और मई १९५३ में लिखी गई। शिर्ष अन्तिम कविता जून १९५३ में लिखी गई।

बामन बिनोबा की सामता एवं मानस सेवा ही इस कृति की भावना है। उनके व्यक्तित्व सम्येध, गान्धी की नव उत्तराधिकार प्रभावोत्पादकता महापुरुषों की परम्परा, मानव मन का अज्ञेयता वाली की महत्ता और जन-नस्याय के पक्षों को 'नवीन' की नौ अग्रणी कविता माता में धुंसा है। समस्त साहित्यिक पुराणों से परिष्कारित यह स्वरजन संस्कृति तथा आस्था का अन्तिम स्मारक है।

'बिनोबा-स्तरजन' में कवि 'नवीन' ने किसी प्राकृत जन का पुराणान कर अपनी अस्वच्छी की अक्षयता नहीं की बरन् भारतीय संस्कृति की समग्र वैतना को अपनी साधना में समेट कर 'बहुजन हिताय' की प्राज्ञाशा से परिपूर्ण उस उपस्था की बन्धना की है, जिसके अन्तर्ग की अस्याली वाली दानवता की दुष्टाधिपति को पुनोपी देती हुई मानवता को जीवन का सम्पन्न प्रदान कर रही है। अस्तुत स्वर्गीय नयन' की सम्पूर्ण जीवन भी तो दुर्धर्य जीवन-संघर्षों को आत्मा में उपकर एकलित अविचल और एकरस साधना में रत होकर व्यक्ति की एक लेखनी महिमा को सूट कर सन्। किन्तु कवि-मनस्वी उपस्थी 'नवीन' के व्यक्तित्व के अन्ति

१ व्याप्ति, व्याप्ति ?, पृष्ठ ११८।

२ 'बिनोबा-स्तरजन', सप्त बिनोबा, पृष्ठ १११।

३ श्री रामानुजदास जीवास्तव—'सरस्वती', कुम्भकोटो हो हो तुम मिल नवीन, बुलाई १९६०, पृष्ठ १०।

४ श्री भारतमुखल अग्रवास—डॉ० नरेश के अन्त निबन्ध, बाबा स्वर्णेश्वर्ये • बालकृष्ण वर्मा 'नवीन', पृष्ठ १५३।

हृषीकेश स्वयं सत्र समन भद्रा से परिपूर्ण नाभोग्येन श्री चरमस्मिति में देखते हैं।<sup>१</sup> कवि ने विनोबा जी को मानवीय शक्ति के प्रबर्तक एवं राष्ट्रिय मानवताओं के बोधक प्रतीक के रूप में चित्रित किया है।

राष्ट्रसत्य विनोबा जी के व्यक्तिगत एवं सन्देश पर श्री पैपितीशरण पुत्र, श्री रामपारी सिंह 'विनकर,' डॉ० सुधीन्द्र, सोहनसाह द्विवेदी, श्री गीरीधर मिश्र, पारसनाथ शर्मा, धरमिन्द्र परमहंस सुमन, रघुनाथ सिंह, विनायक बाबपेयी काण्ठेय भादि महानुभावों ने रचनाएँ लिखी हैं। सर्वाधिक सुन्दर काव्य-भावन एवं लेखन स्वर्गोप कविवर श्री बाबूदण्ड रामा 'नवीन' श्री कृति विनोबा-स्तवण द्वारा सम्पादित हुआ है।<sup>२</sup> कवि ने पूर्ण तन्मयता, निष्ठा तथा शक्ति के रूप में इस कृति का सूत्रन किया है।<sup>३</sup>

उद्दिष्ट—'नवीन' जी का सृष्टी काव्य-ग्रन्थ 'उद्दिष्ट' है जो कि उत्कृष्ट कृति श्री प्रबन्ध कृति है। इसे पुन्य दत्ता श्री पैपितीशरण पुत्र को समर्पित किया गया है जिसके प्रति कवि के हृदय में भद्रा एवं ध्यात्वा श्री मानना रही है। यह ग्रन्थ सन् १९५७ में प्रकाशित हुआ।

प्रस्तुत ग्रन्थ श्री भूमिका श्री लखनऊ-बरेल्लो-पुस्तकालय से प्रस्तुत महानुभावों एवं सूचना-प्रद है। 'उद्दिष्ट' सम्बन्धी प्रत्यन्त बहुमूल्य तथा उपादेय सूचनाओं का स्रोत यह भूमिका ही है। 'नवीन' जी ने इसके लेखन-प्रकाशन का इतिहास पृष्ठभूमि, प्रेरणा तथा सत्य, काम्यकथा सम्बन्धी निजी आदर्श व मायगाएँ महाग्रन्थ श्री आचरकथा और सुवीन भाग, आदि बातों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है।<sup>४</sup>

'उद्दिष्ट' के लेखन एवं प्रकाशन का सम्पाद इतिहास है। इसके लेखन का भीपरोष सन् १९२२ के नवम्बर अथवा दिसम्बर मास से किया गया और सन् १९३४ के फरवरी मास में समाप्त हुआ।<sup>५</sup> इसके लेखन में सगमन तथा-कारण वर्ष लगे; यह ग्रन्थ २३ वर्ष (सन् १९३४-१९५७) तक अप्रकाशित ही पड़ा रहा। श्री नरेण मैहना ने लिखा है कि 'साहित्य में अष्टोमे मुकुन्द का आदर्श उपस्थित किया। कलस्वका सन् ३४ का प्रणीत उद्दिष्टा ब्रह्मसम्पत् सन् ५८-५९ में प्रकाशित होता है। और बाहिर का कि उस कृति में कृतिकर श्री को सामाजिक प्रतिष्ठा होती भी, वह नहीं हुई।'<sup>६</sup>

'सुत जी के 'साकेत' और 'उद्दिष्ट' के निर्माण-काल में एक-दो छान का ही अन्तर है। 'सकेत' समाप्त हुआ १९३२ में और 'उद्दिष्ट' १९३४ में। पर वह प्रकाशित हो नहीं

१ डॉ० विनायक सिन्हा द्वारा—'विगत' विनोबा-स्तवण एक स्वर्गोप 'नवीन' जी, 'नवीन' सन्नि-सं०, पृष्ठ २४।

२ लखनौ-बरेल्लो-पुस्तकालय द्वारा, 'साहित्य के चरक', महाशास्त्र विनोबा और हमारे कवि, पृष्ठ ४०।

३ 'विनोबा-स्तवण', इस बरती पर जाना है, पृष्ठ ३७।

४ 'उद्दिष्ट', श्री लखनऊ-बरेल्लो-पुस्तकालय।

५ वही, पृष्ठ (ख)।

६ 'उद्दिष्ट', श्री लखनऊ-बरेल्लो-पुस्तकालय, पृष्ठ ७।

७ 'कृति', सिन्हा, पैपितीशरण—'नवीन' श्री, प्रस्त, १९६०, पृष्ठ ६६।

१९५७ में। इस बेटी के लिये 'नवीन' की न बहूतरे कारण लिये हैं। बचार्थ में, यह उनका कवि आत्मप्रकाशन की दुर्बलता के प्रति विद्रोह ही था।<sup>१</sup> बिलम्बित प्रकाशन के कुछ परिणाम भी हुए हैं। डॉ० वैद्योत्तर भवस्त्री ने लिखा है कि 'इस दौरान में हिन्दी-कविता काशी आने लगी लुकी है, अतः इसकी प्रसिद्धिपूर्णा एक घोर बीसवीं शताब्दी के छठे दशक से पीछे की है, उसका इतिहास आर्य-समाजी एवं राष्ट्रीय संग्राम के आरम्भित काल का है, वहीं के इतनी पुरानी भी नहीं है कि अपेक्षित ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उन्हें तटस्थता-पूरक रखा जा सके। उसका लेखन आत्म भी क्रियाशील है। 'साकेत' जहाँ परम्परा की एक कड़ी बन गया वहीं 'उर्मिसा' बार से प्रसन्न हो गये जल की भक्ति प्रतिष्ठित होती है। परन्तु मेरा विश्वास है कि सम्भवतः कुछ घोर विंग बात जाने पर 'उर्मिसा' अधिक सक्षुब्धपूर्व स्थावक का प्रतिकारी प्रण होगा।<sup>२</sup>

'उर्मिसा' कव्य की कथावस्तु कः सयों में विभाजित तथा बहिष्ठ है। प्रस्तुत कव्य कथा में रचनाकार ने रामायणी कथा को नूतन इतिहास से देखने तथा प्रस्तुत करने का सज्ज प्रयत्न किया है। उर्मिसा के चरित्र को प्रभावता देते हुए आधुनिक युग की प्रसिद्धियों को भी प्रतिपादित किया गया है। आसौष्य-कव्य में विविध छंदों तथा वैशियों का प्रयोग किया गया है। कवि के यक्ष-गोरे को जीवित रखने और कवित्व के नवीन प्रतीक के हेतु उर्मिसा' कवि ही पर्वत है।

प्रस्तावना—स्वर्गीय हुठारना गणेशचंकर विद्याधी के निधन के पश्चात् (सन् १९११) इस लक्ष्य-कव्य की रचना हुई। प्रस्तुत पुस्तक के 'प्रस्तावना' का गीत भी तुम प्राणों के बलिदान,<sup>३</sup> सन् १९४२ में 'बीला' के मुद्रापुष्प पर, गणेशजी के चित्र सहित प्रकाशित हुआ था।<sup>४</sup> धार ही कविता के अन्त में यह टिप्पणी भी प्रकाशित हुई थी कि पुण्याई स्वर्गीय गणेशचंकर विद्याधी की बलिदान-स्मृति में लिखे गये 'प्रस्तावना' नामक कव्य-ग्रन्थ का आरम्भिक मोल। यह ग्रन्थ, लेखक ने अपनी गत जल-यात्रा की अवधि में लिखा है। यह अभी प्रकाशित है।<sup>५</sup> इससे यह प्रमाणित होता है कि अपनी अन्य कविताओं तथा प्रबन्धकृति के समान यह भी 'तपोभूमि' की तपस्या का पुण्य फल है।

'प्रस्तावना' के आरम्भ में प्रधान-मन्त्री श्री बहादुरशाह नेहरू की भूमिका है जो कि हुठारना गणेशजी तथा स्वर्गीय नवीन की के पुराने तथा बलिष्ठ मित्र रहे हैं। कव्य-विषय तथा कव्यकार दोनों की मनःस्थितियाँ तथा बटनाओं को भी नेहरू ने निकट से जाना पहचाना है। २१ जनवरी, १९६२ का तिथि इस भूमिका में बलिदान की महिमा भीषी गई है।

१ डॉ० वैद्योत्तर भवस्त्री—'सम्पन्न पत्रिका', कवि नवीन और उनकी 'उर्मिसा' विविध भाग ४६ संख्या, २ आश्विन—मार्गशीर्ष १९५२ तक पृष्ठ ११०।

२ 'कल्पना' उर्मिसा, जून १९६०, पृष्ठ ९१।

३ 'प्रस्तावना' प्रस्तावना।

४ 'बीला' जो तुम प्राणों के बलिदान सुभाई, १९४२, पृष्ठ ७७१-७४।

५ वहीं, पृष्ठ ७७४।

'मलेन्द्रकर विद्यापी' पुस्तक की 'प्रस्तावना' में भी नेहरू जी ने 'जार्ज बर्तारिशा' के प्रस्तुत स्वरूप को मलेन्द्रजी पर बरितार्थ किया है—

"This is the true joy in life the being used for a purpose recognised by yourself as a mighty one, the being thoroughly worn out before you are thrown on the Scrap heap, the being a force of nature, instead of a feverish, selfish little cold of ailments and grievances, complaining that the world will not devote itself to making you happy "

पर्याप्त "मानव जीवन का सच्चा सुख इसी में है कि जीवन का एक ऐसा उद्देश्य के लिए उपयोग किया जाय जिसका धाय महान् और उत्कृष्ट समझे हों। धाय मरने से पहले भी एक अर्बिष्ट हो कार्य पूर्व इसके कि कूड़े के ढेर में फेंक दिये जायें और धाय प्रकृति को एक व्यक्ति हों न कि श्लेष्म, छोड़ और उपायनों के स्वरूप और धुर मूर्खता हों जो सब यही विकल्प करता रहता है कि संसार मुझका सुखी बनाने की धाय ध्यान नहीं देता।" १

'सूक्तिका' के पर्याप्त 'काव्य-रूपा' में काव्यवस्तु का सुन्दर ढंग से निरूपण किया गया है। 'प्रस्तावना' में कवि ने वा नीत है— वा तुम प्राणों के बहिष्कारी और 'बहु भी एक मदनक हामी। इस नीतों में मलेन्द्र जी ने व्यक्तिगत तथा ज्ञानपुर की उत्कालीन स्थिति का निरूपण प्राप्य होता है।

मलेन्द्र जी के गहोर होने की घटना का काव्यात्मक वर्णन ही इस काव्यकाव्य की विषयवस्तु का सार है। वस्तुतः इसमें कथाभाव प्रत्यक्ष सूक्ष्म है। कथावस्तु को घटनात्मक न कह कर, भावात्मक कहना जा सकता है। सुख-काव्य में पाँच सर्ग प्रथमा प्राकृतियों की परन्तु प्रथमसर्ग प्रस्तावित प्रारूप में सिर्फ चार सर्ग ही प्राप्य होते हैं।

मलेन्द्र जी की पावन-वन्दना से इस काव्य का आरम्भ होता है। 'धम की प्रथम प्राकृति' १ वा प्रथम सर्ग में २५ छन्द है जिनमें धर्मसामयिक जन-जीवन का पर्याप्त चित्र प्राप्त होता है। 'द्वितीय प्राकृति' २ के २४ छन्दों में मार्च १९३१ के समय के ज्ञानपुर का चित्रण है। साम्प्रदायिक तत्त्वों का भी विवेकानु किया गया है। 'तृतीय प्राकृति' में मलेन्द्रजी की मानसिक तथा आध्यात्मिक स्थिति तथा धर्म की महान् प्रतिक्रिया का निरूपण किया गया है। इस सर्ग में ४६ छन्द है। 'चतुर्थ प्राकृति' में ६० छन्द हैं और यह सबसे बड़ा सर्ग है। इसमें मलेन्द्र जी के जीवन के अन्तिम क्षणों की गाथा तथा गहोर होने की परिभाषा प्रकृत है। यहाँ

१ 'मलेन्द्रकर विद्यापी', प्रस्तावना।

२ 'प्राणार्पण', धम की प्रथम प्राकृति, पृष्ठ ११।

३ यही द्वितीय प्राकृति, पृष्ठ २२-२८।

४ तृतीय प्राकृति, पृष्ठ २९-३१।

५ यही, चतुर्थ प्राकृति पृष्ठ ३२-५१।

काव्य समग्र हो जाता है। इस काव्य में अत्यन्तिसिद्ध 'पंचम प्राकृत' का नाम पीठ-माता है जिसमें १६ पीठ हैं। ये छोक-पीठ हैं। दार्शनिकता में रंगे-लिनस्टे इन गीतों का सम्बन्ध मृत्यु से है। प्रस्तुत 'प्राकृत' में इस सर्व को सम्मिलित इधरिए अन्तिसिद्ध नहीं किया गया कि इसको कथा-वस्तु के बटना बरु एवं प्रबन्धात्मकता से प्रत्यक्ष एवं पट्टर सम्बन्ध नहीं है।<sup>१</sup>

इस काव्य के नायक गणेश जी हैं और स्वातन्त्र्य है। अपने पाराधन एवं शीबन-निर्माता विद्याजी जी के प्रति कवि की मन्त्रि हो काव्य प्रवाह बन कर गतिघात हो पड़े है।

पूर्ण विश्वास है कि कवि की इस महान् एवं नवीनतम प्रकाशित कृति का द्वितीय संस्करण हार्दिक स्वागत करेगा। हमारी युगीन परिस्थितियों के लिए भी यह अनुकूल तथा नवीन बनी हुई है।

अप्रकाशित काव्य-संग्रह—'सिरजन की ललकारें या गुणुर के स्वन'—प्रथम अप्रकाशित काव्य-संग्रह को कवि ने दो शीर्षक 'सिरजन की ललकारें' या गुणुर के स्वन' प्रदान किये हैं। किसी एक शीर्षक के अन्तर्गत यह संकलन प्रकाशित होगा। पाण्डुलिपि में कुल १६३ पृष्ठ हैं और ४१ कविताओं को संश्लेषित किया गया है। इस संग्रह को दो कविताएँ यथा 'अज्ञयाम कल्पमान' और 'उड़ चला' <sup>२</sup> 'ब्यासि' <sup>३</sup> में संश्लेषित हो चुकी हैं।

संग्रह के शीर्षक संकलन को दो कविताओं—'सिरजन की ललकारें मेरो' तथा 'प्राये गुणुर के स्वन भन भन' <sup>४</sup> के आधार पर दिये गये हैं। 'सिरजन की ललकारें' काफ़ी लम्बी कविता है जो कि ३८ टंकित पृष्ठों में समाहित है। इसमें ७५ अक्षर तथा ६६० पंक्तियाँ हैं। इसमें महारमा मात्राओं उनके विचार तथा हिंसा व अहिंसा के इन्द्र आदि को प्रस्तुत किया गया है।

'सिरजन-कल्प सन् १९३४ १९५५ है। बार तिबिबिहीन एवं स्वानविहीन रचनाएँ हैं। सन् १९८३ ई. तथा बरेलो कल्पगुह की रचनाओं को इस संग्रह में प्राधान्य प्राप्त है। कवि ने ब्रह्म-तन्त्र निबिधत समय का भी उल्लेख किया है। विशेष परिस्थिति में 'प्रतिन दीक्षा काव्य' <sup>५</sup> का नामोस्मैय है। कवि को प्रख्यात अन्धकार-नरक रचनाएँ कस्तब कोम्ह? <sup>६</sup> तथा

१ 'प्राणार्पण' के पाँचवें सप में कुछ लुप्त कविताएँ थीं—इन दो सिरिज प्राण मृत्यु पीठ। घात में 'नवीन' जी ने ही यह उचित समझ कि वे १०-१२ अक्षर गीत ( जो ब्रह्मन्त्र ही थे ) अण्डरकाव्य से निकाल लिये जायें। ये गीत सामयिक की ही यथोपायणुलिपियों में हैं।

श्री दशनायकस्य अक्षर का सुधे सिद्धित (दिनांक—२ ८-१९६२ क) पत्र से उद्धृत।

२ 'सिरजन की ललकारें' या गुणुर के स्वन' ७ वीं कविता।

३ वही, ४० वीं कविता।

४ 'ब्यासि' 'अज्ञयाम कल्पमान' पृष्ठ ६६-६७; 'उड़ चला', पृष्ठ १००-०१।

५ १६ वीं कविता।

६ ४१ वीं कविता।

७ 'ब्यासि-तर्कें अर्थात् में', प्रथम कविता।

८ ३४ वीं कविता, 'विज्ञान भारत' अक्टूबर १९३७ पृष्ठ ३९३ ३९५।

यह रहस्य उद्घाटन रत मन<sup>१</sup> का इसी संदर्भ में स्थान प्राप्त हुआ है। कवि के वाक्यावस्था की तामा भरती के पृष्ठ<sup>२</sup> और बुदावस्था की कदाग कहानी या गीत मुखन यों प्रति प्रातिगित है बीबन<sup>३</sup> ने भी संग्रह की सारबुद्धि की है।

प्रस्तुत कृति में शारीरिक कविताओं का संकलित किया गया है। कवि कभी लौकिक उ वास्तविक की धार उग्रुत्र हुआ है और कभी अलौकिक स लौकिकता की धार धाया है। सांसारिक बीबन की अनुभूतियों को अध्यात्म के दिशा में मोड़ा गया है।

'नबीन-बोहाबली'—'नबीन' की के जीवन-कास में डूबी की समतारावण अग्रवाल ने लिखा या कि 'कवि 'नबीन' का एक धोर भी कन है, या धमी तब हिन्दी-जगत को पूरी तरह सात नहीं हो सका है। उनका यह कन उनक ब्रजभाषा काव्य में धमी ग्या का स्थों मुका-खिया है। ब्रजभाषा में सैकड़ों बोहे स्वास्त मुहाव भाष म 'नबीन' या न जेस की बहुरदीवायी में या धम्य अग्रवाल के ज्ञाणों में लिखकर एक माटो कामा कानी में इतने भीतर रख धोर हैं धानो के उनके अन्तस्तल में ही छिपे हा। बिना बिगेय प्रयत्न किये कोई उन्हें मुन पाता या बुर बवाकिदु छौह भी नहीं छू लकता। इतना ग्या कारण है यह उनम पुछने का हुमें कमी साहस नहीं हुआ परन्तु हम स्वयं इच्छा कारण यही समझते हैं कि अन्त में कहने या मुनने के लिए सम्भवतः उन्होंने अपने ब्रजभाषा के बाहे नहीं सिके। अन्त के लिए उनका या काव्य है; यह बड़ोबासी में झा रचा गया है। परन्तु ब्रजभाषा काव्य 'नबीन' या न उपाव्य मगवान् बीकृष्ण की भाषा या काव्य है या उनकी वैष्णवाय व्यदा नन कम्प-विन्दु है अत इत भाग में अधिवाच काव्य-रचना अर्हते बूतने के लिए नहीं स्वयं अपने लिय की है। अपने इस काव्य में धारम-बिस्तन और धारम-दार्शन 'नबीन' जी ने बिगेय कर से किया है।<sup>४</sup>

धारम-बिस्तन तथा धारम-अग्रन से मणित कवि की द्वितीय अग्रकाणित काव्य-कृति 'नबीन-बोहाबली' में भी प्रथम अग्रकाणित कृति के समान ही मन् १९८३ और बनेली-काणमह की रचनाओं की प्रभावता है। बीस दीर्घों के अन्तर्गत ६५६ बोहे हैं।

'नबीन-बोहाबली' का प्रथम बिषय गृवार है। इसके अतिरिक्त अध्यात्मिकता शारीरिकता तथा श्रयना का भी स्थान प्राप्त है। प्रथम रचना 'यह प्रथम धामास' के बीच बोहों में प्रथमी प्रेमी की मावनामों की अधिष्ठाक है। 'नबीन-बोहाबली' के १६ बोहों में प्रेम मावना की प्रभावता है। सप्त प्रवासी<sup>५</sup> के १० बोहों में प्रणय का स्वर प्रमुख है। तुम नि-सायन<sup>६</sup> के अन्त में अग्ररत की काण्टी मिली है। 'देना' १८ बोहों में लयन के विभिन्न रूप चिणित है। 'अनुराध' के १८ बोहों में अपने लिय से मार्मिक धामह है। 'अंगन देव' के १५ बोहों में विरागावादिता तथा अर्थ-बिन्दु की स्थिति को धार्यर प्राप्त हुआ है। 'घाव' में प्रेम

१ ६५ वीं कविता।

२ ३९ वीं कविता।

३ १४ वीं कविता 'आवकल' करवरे, १९५८।

४ सांसारिक 'विन्दुमान' की बालकृष्ण धर्म 'नबीन' या अग्रवाल काव्य २६ रिजम्बर १९५६।

५ सांसारिक 'प्रवास' लयन प्रभावता (२२ ? १९८६)।

तथा बेचना की प्रयुक्तता है। 'मेरे प्राणाधिक' के दो बोहो तथा आठ चौपाइयों में प्रार्थना का स्वर बिकीरुं है। अपनी-अपनी बाट के साथ दोहों में सांसारिकता अथवा नैतिकता की प्रधानता है। 'नैया' के द्वात्रय दोहों में प्रेम तथा भक्ति का समन्वित रूप है। 'पहेली मानव' के २७ दोहों में प्रेरक स्थिति तथा उद्बोधन को स्वर मिला है। 'मनबास के ९ दोहों में आत्मामिष्यक्ति है। 'राम-विराम' के १५ दोहों में प्रलय तथा विस्तार की गंगा-जमुना हिसार से रची है। 'हृदिनि उड़ी अकाश' के १९ दोहों में मृत्यु को विषय बनाया गया है। 'पिन्जर बद्ध मानव' के ६३ दोहों में बन्धी-बीबन की सारमया अभिम्यक्ति है। 'ये न टरे जनस्वाम' के ४ दोहों में उसाहता है। 'उपासम्म' के ३ दोहों में प्रेम मरत तथा रससिक्त उपासम्म पुंजात्म्यमान है। 'प्रतीक्षा' के १५ दोहों में व्यक्तित्वपरक तथा प्रेम की रचनाएँ हैं। अन्तिम रचना 'कितै विहारो वेध' के १० दोहों में शालिकता व प्रार्थना को स्वर मिला है।

इन दोहों का माध्यम ज्ञानमाया तथा कड़ीबोली दोनों हैं। बाह्य-रूप के अतिरिक्त, चौपाई और कुम्हलियों को भी स्थान मिला है। इन दोहों का हिन्दी के दोह्य-साहित्य में निश्चित महत्त्व है।

'दीबन-मदिरा' या 'पावस-पीड़ा' — 'नवीन' की के तृतीय अग्रकाशित काव्य-संग्रह का शीर्षक 'दीबन-मदिरा' या 'पावस पीड़ा' है। द्वितीय शीर्षक कवि को पसन्द था। 'दीबन मदिरा' शीर्षक कविता इस संग्रह में अपना स्थान रखती है। इस समी कविता में बाह्य रूप है और 'कुङ्कुम' में पहले ही संगृहीत हो चुकी है। रचना में प्रकृति तथा निवृत्ति का संघर्ष निरूपित है।<sup>१</sup>

प्रस्तुत संग्रह में २११ कविताएँ हैं। इनमें से २३ रचनाएँ पूर्व संगृहीत हैं तथा २९ रचनाएँ निराल तथा स्वान-विहीन हैं। 'परीला के प्रलयपत्र' 'सुखे धातु' 'स्वगत' 'तुम्हाए पनघट', 'बाह्यकी के प्रति' 'शौपमाता' दीबन-मदिरा 'जाने पर' और 'पान' शीर्षक कविताएँ 'कुङ्कुम' में सम्मिलित हैं। 'क्यूँ लेने रो', 'बहु सुख प्रभुए राम' 'बसंत बहार' 'मिल गये जीवन बगर में' 'तब मनु सुखकान प्राण' 'साकी' और 'कुछ भी बात' शीर्षक रचनाएँ 'रघिरेला' में संग्रहीत हैं। 'आन्त' 'मिहारो' व 'आब हुलसे प्राण' रचनाएँ 'धपलक' में संकलित हैं। 'अगुन' धो प्रवासी मान कैसा' कव्य मिसेये प्रभु चरण के सज्जन मेरे हो रहे हैं, और 'लिख निरख के गान' शीर्षक रचनाएँ 'वशासि' में सम्मिलित हैं।

प्रस्तुत संग्रह का रचना-काल १९३०-३६ ई० है। इसमें सन् १९३१ तथा नाथीपुर कारागृह की कविताओं में अपना बहुमत स्थापित किया है। कवि की प्रसिद्ध कविता 'विन्दिवा'<sup>२</sup> को इसी संग्रह में स्थान प्राप्त हुआ है जो कि श्रृंगारिक रचना है।

प्रस्तुत अग्रकाशित कृति में सद् प्रेम कविताओं को संकलित किया गया है। प्रेम में संयोज तथा वियोज दोनों के चित्र प्राप्त होते हैं परन्तु प्रधानता विप्रलम्भ श्रृंगार की है। प्रिय की स्मृतिव्यय बेचना ने मासिक सृष्टियाँ की हैं। प्रिय का रूप धर्म प्रसंग साज-बजा आदि के साथ उल्लाहने प्रतीक्षा तथा पीड़ा को भी स्वर प्रधान किया गया है।

१ २६ वीं कविता।

२ कुङ्कुम' १२ वीं अष्टक पृष्ठ १०२।

३, १०१ वीं कविता।

प्रत्यंकर — 'नवीन' की है 'अनुर' प्रकाशित कविता संरक्षण का नाम 'प्रत्यंकर' है जो अपना रूप तथा सामग्री स्वयं ही स्पष्ट करता है। संघ की कविता तु बिरोह रूप प्रत्यंकर के आधार पर इन पुस्तक का नामकरण 'प्रत्यंकर' दिया गया। पाँच छन्दों की इस प्रोजेक्सी रचना में, बिरोही धर्मका व्यक्तिकारी की ब्यक्तता करते हुए मूल को मूल समझने का प्राधान्य दिया गया है।

'प्रत्यंकर' में ६० कविताएँ संग्रहीत हैं जिनमें से इस पूर्व संकलित चार विधि बिहीन एवं तीन स्वान-बिहीन हैं। 'पराजयपीठ', 'चिखर पर' १ व 'बिम्बक गायन' २ रचनाएँ 'कुटुम्ब' में संकलित हैं। 'बसंत' ३ शीर्षक कविता 'मर-मर हम फिर उठ पाएँ' शीर्षक से प्रथम प्रकाशित काम्य-संग्रह में संकलित है। 'सतत प्रवाही' द्वितीय प्रकाशित काव्य-संग्रह में था चुकी है। 'परती के पूत' भी प्रथम प्रकाशित संरक्षण में ही जा चुकी है। 'वसन्त' ४ तथा 'घरी धपक उठ' ५ भी तृतीय प्रकाशित संग्रह में स्वान बना चुका है। 'कमला नेहरू की स्मृति में कविता 'बधाई' में संकलित है। 'हम संग्रह में तु बिरोह रूप प्रत्यंकर' तथा 'अमल गायन' शीर्षक दो कविताएँ संग्रहीत हैं जो कि वास्तव में एक ही हैं। '१०' 'तु बिरोह रूप प्रत्यंकर' कविता छायांकिक 'सैनिक' के 'बकाहूर विरोधांक' में प्रथम पापन नाम से प्रकाशित हुई थी। '११' 'तु प्रत्यंकर बिरोह रूप' स्वान विधि बिहीन कविता है परन्तु उसकी विधि तथा लेखन स्पष्ट ही 'मूकना' अमल वान में प्राप्त हो जाती है। 'अमल वान' प्रथम में ही प्रकाशित हुआ था।<sup>१२</sup>

'प्रत्यंकर' का संकलनकाल सन् १९३०-३५ ई० है। कवि की हस्तलिपि में ये कविताएँ

- १ १० की कविता, कुटुम्ब, पृष्ठ ३३-३७।
- २ १२ की कविता, वही, पृष्ठ ८०-८१।
- ३ १५ की कविता, वही, पृष्ठ ९१४।
- ४ ९ की कविता 'सिर जन की ललकारें या गुनुर के खन ३१ की कविता।
- ५ १३ की कविता, 'नवीन बाहाबनी, गुनीय रचना।
- ६ २० की कविता, 'रिजग की ललकारें या 'गुनुर के खन, १९ की कविता।
- ७ १६ की कविता, 'योवन-मरिच, या 'पाबल पोड़ा, ११ की कविता।
- ८ १८ की कविता, 'योवन-मरिच' या 'पाबल-पोड़ा, २७ की कविता।
- ९ १९ की कविता, 'बधाई' पृ० ९८-९९।
- १० बँचवों कविता, २० की कविता।

११ "अभी-अभी आगरा के राष्ट्रीय छोरे तैजसो सासात्रिक सैनिक' का 'बकाहूर विरोधांक' प्रामा है, जसमें हिन्दी के गुरुबोसे प्रत्य-गोन गायक की बा-हृष्ट्य की धर्म 'नवीन' की ये कविता 'अमल वान' शीर्षक से छपी हैं। बहूना नहीं होगा कि पं० बकाहूरनाम जी पर बहाई हुई यह पुस्तकालि 'सैनिक' का गोरख छोरे प्यारी बस्तु है।"—मन्नादेव, वर्मणीय, वास्तुलिपि में रसी मुद्रित प्रकाशित कविता के पृष्ठ पर लिखित लिप्यारी।

१२ सैनिक 'प्रवाण' 'अमल वान', धर्म, १९३६।



उपसम्बन्ध होती है— बह्मचरणात्मकता, 'नवीन' जीवन-पूलक वरत लब्ध के तुम हे बनमण्डल  
 व 'पराजयगीत'।<sup>४</sup> अपनी प्रकृति के अनुसार कवि ने कतिपय कविताओं के घन्ट में विशिष्ट  
 परिस्थितियों तथा घबराहट का भी उल्लेख किया है यथा 'वाम्बी भासमयज्ञ काव्य'।<sup>५</sup> 'श्री वाम्बी  
 महाप्रण घटाह' और 'य घण्टे का उपवास काव्य'।<sup>६</sup> बरेली कारागृह एवं सन् १९४१ की  
 रचनाओं का आधिक्य है।

'प्रसन्नकर' में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविताओं की धरोहर है। कवि का प्रेम-काव्य ठो  
 पूर्ण संकल्पों में बहुत सा चुपचा है, परन्तु, 'नवीन' की को व्यापित का मूलभार, राष्ट्रीय स्व  
 संघर्षों में अयोशाकल कम ही पाया है। इस संकलन के द्वारा उस प्रभाव की सुन्दर प्रति  
 होती है।

इस संग्रह की काव्य-रचनाओं में, पराधीन तथा स्वाधीन भारत की कवि की राष्ट्रीयता  
 के बरतन किम्वे का सकते हैं। महत्त्वा गान्धी के व्यक्तिव्य मार्गदर्शन तथा महान् ब्रत पर भी  
 'नवीन' की ने अनेक कविताएँ लिखी हैं जो यहाँ संग्रहीत हैं। गान्धीवादी विचारधारा का  
 प्रभाव भी कई कविताओं में देखा जा सकता है।

इस संग्रह की कविताओं में आलोचक मुँकार भोज तथा विप्लव को प्रमुख स्थान प्राप्त  
 हुआ है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रतिक्रिया तथा कवि के उज्ज्वल विचारों को भी धीर  
 का सकता है। व्यक्ति तथा विद्रोह की भाव से भी अपना पूरक कूल तैयार किया है। राष्ट्र  
 बन्धियों बलिबेदी के उपासको तथा कीटों पर चलने वाले बेजानकों का कवि ने घमिनपन  
 किया है और उनके पय का अनुसरण किया है। राष्ट्र की युगीन बेतमा को सर्वाधिक प्रकार  
 बागी इसी संग्रह की रचनाओं द्वारा प्राप्त हुई है। कवि का राजनैतिक जीवन भी इन  
 कविताओं में सुकर हो पड़ा है।

कवि के राष्ट्रीय-काव्य तथा सम-सांस्कृतिक राष्ट्र-बेतमा से पूर्णरूपेण प्रभाव होने  
 के लिए, इस अधिकाधिक संकलन का अग्रस्थान महत्त्व है।

स्मरण-वीथ—'नवीन' की अधिकाधिक संग्रह काव्य-संकलन 'स्मरण-वीथ' का  
 कवि के प्रेम-काव्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। संग्रह की द्वितीय कविता 'मेरे स्मरण वीथ की  
 बाती' के आधारे पर इस संकलन का धीर्यक रखा गया है। सन् १९४४ में लिखित अः

- १ प्रथम कविता।
- २ द्वितीय कविता।
- ३ तृतीय कविता।
- ४ १० वीं कविता।
- ५ २५ वीं कविता 'मो लरिकों में धाने वाले', लेखन तिथि, २ मार्च १९४१ ई०।
- ६ २६ वीं कविता 'हे भरतस्य भाग पचयामी', लेखन तिथि, २४ नितम्बर,
- १९३२ ई०।
- ७ ३३ वीं कविता, 'दिता क्या हनें अर्थकार', रचना तिथि १० जून, १९४१ ई०।
- ८ आठमिहक 'प्रभाव, मेरे स्मरण वीथ की बाती, २४ नितम्बर १९४५, मुम्बई।

धुनों की इस रचना में प्रेम का मूल स्वर है और प्रियतम के वियोग में वेदना की सहर्ष उठती है।<sup>१</sup>

स्मरण-श्रीप' में ४४ कविताएँ संग्रहीत हैं जिनमें से ७ पूर्व संकलित तथा दो कविताएँ मेखन-विधि एवं स्वान-विहीन हैं। इस संग्रह की 'ओ मेरे मधुरापर' 'विहंग इठो प्रियतम तुम', तथा 'प्रिय को दूब चुका है मुरज' 'कौन मा यह राम बाया?' और 'बनगर्जन क्षण' 'अपलक' में संग्रहित है। मेरे स्मरण-श्रीप की बानी \* और 'प्रिय मैं धाज भरो भारो सी 'कवासि' में संकलित हैं।

प्रस्तुत संकलन का रचना-काल सन् १९३८-३९ ई० है। इस संग्रह में जो सन् १९४३ तथा बरेली कारागृह में लिखित कविताओं का आश्रय है। संकलन की प्रथम कविता 'धायो धरदाई में धाज' कवि की हस्तलिपि में प्राप्य है। यह रचना सन् १९५८ में नई दिल्ली में लिखी गई। संग्रह को पाण्डुलिपि में एक इष्टकूप भी प्राप्त होता है जिनका शीर्षक है 'कवि की'। इस रचना पर कवि की यह टिप्पणी है कि 'जो महानुभाव बिना सम्पन्न देखे इस कविता का धर्म कर लेंगे उन्हें एक पैसा उपहार-रूप में दे दिया जावेगा' सन् १९५४ में बरेली कारावास में लिखित इस रचना में पाँच छन्द हैं और कठिन एवं धम्मबद्ध शब्दों का प्रयोग किया गया है।

'स्मरण श्रीप के नाम से ही सत्य है कि इस संकलन में वियोगावस्था से उद्भूत अनुभूतियों को प्रधानता है। संकलन में प्रेम कविताओं को रचान दिया गया है। यह पक्ष कवि का श्रिय तथा परिपुष्ट है। कारागृह की कल्प कोठरी में कवि ने अपने बिगड़ जीवन का स्मरण किया है और अपने प्रिय की धार में उसके विविध पक्षों को काव्य की बाण प्रदान की है। विग्रहमय शृंगार के सर्वनामुखी चित्र उतारे गये हैं। कल्पना-उत्पत्ति की प्रधानता है। कृति का उद्दीप्त रूप प्रस्तुत किया गया है। अनुहार तथा प्रतीला के उत्पन्न सर्वत्र विद्यमान है।

प्रस्तुत संकलन ने कवि के प्रेम-काव्य की भीवृद्धि की है। कारावास की एवाप्त तथा शौर्य कवियों में कवि के कोमल तथा स्नेहित-हृदय ने अशुद्धों ने अपनी गाथा को संजोया है।

अत्युपाम' या 'कुबन भाँड'—'नकीन' जी के छन्दों तथा अन्तिम अज्ञातित काव्य-संकलन 'मलु भाँड' का कुबन भाँड' में न केवल नवीन काव्यमय को प्रस्तुत शिष्टी काव्य-साहित्य को मुक्त भावधो एवं भूमि प्रदान की है। कवि का यह पक्ष असी तक पूर्णत घणन

१ द्वितीय कविता श्रव, बीबा।

२ धाटवों कविता, 'रहियरेया', पृष्ठ, १२-१३।

३ बीबी कविता 'रहियरेया', पृष्ठ १२०-१२१।

४ अठवीं कविता, 'रहियरेया' पृष्ठ ५५-५६।

५ ६ वीं कविता, 'अपलक', पृष्ठ ५०।

६ तृतीय कविता, 'श्री', पृष्ठ १०५-१०६।

७ द्वितीय कविता, 'कवासि', पृष्ठ ३६-४०।

८ ३ वीं कविता 'कवासि', पृष्ठ २६-२८।

तथा उल्लिखित रहा है। प्रस्तुत संग्रह की पुस्तक का कैसा है मुख्याम धोर 'मृजत श्रेय' शीर्षक कविताओं के भाषार पर ही, नामकरण किया गया है। कैसा है मूल्य धाम शीर्षक गीत पाँच छन्दों में ही धोर सन् १९४१ में लिखा गया।<sup>१</sup> चार छन्दों वाली रचना सूजन श्रेय का केवल ही सन् १९४१ में हुआ। इसमें नरवरटा भारतमावलोका तथा स्व-वर्धन को प्रमुजता प्राप्त हुई है।<sup>२</sup>

प्रस्तुत संग्रह में १९ रचनाएँ संकलित हैं जिनमें से एक पूर्ण संग्रहीत तथा चार लेखन तिथि एवं स्थानविहीन हैं। इस संग्रह की 'पहेली कविता' उत्तीय मप्रकाशित काव्य-संग्रह में संकलित की जा चुकी है।<sup>३</sup> कविताओं का रचना-काल सन् १९४१-४२ ई० है। प्रमुजतम है रचनाएँ नैनी-काठपुह में ही लिखी गयी।

संज्ञान में सन् १९४१ तथा नैनी-काठवास में लिखित रचनाओं का प्राभाव है। इस संग्रह की तिथि तथा स्थानविहीन रचनाओं के विषय में जो मह कथा जा सकता है कि वे अनुमानतः निचि सम्बन्धी बहुमत वाली श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

'मूल्य धाम' या सूजन श्रेय' में 'नरख शीतो' को संकलित किया गया है। वास्तव में यह संज्ञान कवि के प्रास्ताविक शीर्षक काएककाव्य की 'पंचम धारुति' के समग्र शीतो से सम्बन्ध रखता है, जिसे यहाँ प्रथम रूप में संग्रहाकार प्रकाशित किया जा रहा है। ये रूख परक शारीरिक गीत हैं जिनमें मूल्य का काव्य विषय बनाया गया है। ये गीत धर्मी तक प्रकाश में नहीं आये। इन गीतों में जीवन की निस्सारता, स्वयं धारनिश्चलन तथा धार्म्यात्मिक मूल्यों को प्रथम बिना गया है। शीति-विरुध की दृष्टि से भी इनका धर्मी महत्व है। कवि का माध्यम एक चिन्तन इन गीतों में धरणी पूर्ण निष्ठा के साथ प्रस्तुतित हो पड़ा है। प्रस्तुत पाधुतिवि के प्रकाशित होने पर, शिन्धो-संसार पर इसका पहल तथा व्यापक प्रभाव पड़ेगा धोर नवीन' के कवि व्यक्तित्व का एकदम नूतन पक्ष उद्घाटित होकर सबके समक्ष आयेगा। कवि की यह धनुष्य बटाहर है जिसकी ममकसता दुर्लभ प्रतीत होती है।

पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित काव्य— नवीन की की नई रचनाएँ विस्तृत प्रभाव में नहीं आईं धोर प्रबिबोध रचनाएँ पत्र पत्रिकाओं में यत्र-तत्र छपती रहीं। धनैक पत्रिकाओं की पुठानी शीचकाओं में उनकी बहुध-सी कविताएँ दबी पड़ी हैं। उम्होंने स्वयं म तो इनका कोई धर्मिलेखन सुचिखत रखा धोर न नन्वभिवन धंर की प्रविर्वा। परिणामतः उनकी धोर धर्मी किन्ही का ध्यान नहीं गया है।

पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाया में मे प्रबिबोध का उपर्युक्त दृष्टियों में संग्रहीत कर लिया गया है, परन्तु फिर भी, धर्मी ऐसी कविताएँ हैं जिन्में प्रकाशित प्रथम धप्रकाशित काव्य-संग्रहों में स्थान प्राप्त नहीं हुआ है। ये रचनाएँ धर्मी भी धाधुरी नहीं हुई हैं धोर कम से कम एक छोटा-मोटा संग्रह धोर भी तैयार किया जा सकता है। यद्यपि 'मूल्य' में कवि की प्रारम्भिक रचनाओं को संकलित किया गया है, परन्तु फिर भी उसे इस विज्ञा का पूर्ण

१ प्रथम कविता 'पावर्ता छन्द'  
 २ १८ की कविता, 'श्रीया छन्द'  
 ३ १६ की कविता, 'श्रीवम-वर्धित' या 'पावत-श्रीया' ६० की कविता।

संग्रह नहीं कहा जा सकता। उनके प्रारम्भिक कवि-जीवन को कई कविताएँ समी प्रथमश्रेणी की हैं जिनका उनही काव्य-दीप्ति तथा विचार-बारा के ऐतिहासिक विश्लेषण के मुस्कारण में महत्वपूर्ण स्थान है। विशेषकर सन् १९१८-१९१९ तथा १९२० के कई रचनाएँ संग्रहबद्ध नहीं हो पाई हैं।<sup>१</sup> इसी प्रकार श्री जी कठिनय कविताएँ निकल सकती हैं जिनके संग्रहण की आवश्यकता है, जिसमें कवि का समय-व्यक्तिगत तथा इतिहास-हिन्दी-संसार के समझ या सके। यह धारणाओं की बात है कि कवि के प्रकाशित प्रकाशित द्वारा काव्य-संग्रहों में उनकी प्रथम प्रथम कविता को समी तक स्थान प्राप्त नहीं हुआ है।<sup>२</sup>

फिर भी यह प्रसन्नता तथा गरिमा की बात है कि कवि के छ काव्य-संग्रह हीन ही प्रकाशित होकर या रहे हैं। 'हम धनिकेयन' तथा 'हम प्रत्यक्ष निर्जन के बंधन क मायक नवीन' जी की कविताओं को संकलित कर, पुस्तकालय बन देना स्तुत्य एवं ऐतिहासिक प्रयत्न है। यह यह कहा जा सकता है कि उनके कृतित्व का सम्पूर्ण नहीं तो लगभग सम्पूर्ण रूप हमारे समक्ष है।

'नवीन' जी का काव्य तथा गद्य-साहित्य 'प्रताप' में विद्यमान पड़ा है। 'प्रताप' कवि क कण-कण में परिष्कृत था। इस माते उनकी सर्वाधिक रचनाएँ 'प्रताप' में ही प्रकाशित हुईं। 'प्रताप' के तदनन्तर उनकी कविताएँ 'प्रभा' 'बाग्या' 'विद्युत' 'प्रतिभा' 'धामी' 'कन' और 'आरकत' पत्रिकाओं में प्रमुक्तया छी। वृं तो प्रत्येक पत्र-पत्रिका तथा साहित्यिक-प्रसाहित्यिक व्यक्तिके लिए उनका मायम तथा गृह-द्वार सदा-सर्वदा उपयुक्त रहता था फिर भी उनका जीवन के साथ सम्बन्ध रखने वाले स्थानों तथा मायमात्र का-गुर विद्या धारि की मायमाया तथा व्यक्तियों से विशेष प्रभुता या इरादित्, उपयुक्त पत्र-पत्रिकाया का सम्बन्ध इष्टो यथा के साथ होने के कारण उनमें रचनाएँ अधिक छी।

उपरिखिलित पत्र-पत्रिकाओं के धितिक कवि की रचनाएँ 'सम्बन्धी' 'श्री धारण' 'स्वाभावमि' 'मनबाबा' 'विरवन्ध' 'वर्तमान' 'सामगाय' 'विद्युत' 'मात' 'वैदिक' 'कर्मवीर', 'विरवन्ध', 'कनक' 'सुगणना' 'सम्बन्ध' तथा 'युवालय' 'वीरुती' 'धरमा' साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' धारि अनेक पत्रों में प्रकाशित हुईं।

निष्पत्त्य—'नवीन' जी के धरकाशित काव्य साहित्य की विमुक्त माया है उनके कवि व्यक्तित्व के सामोताय रूप की हिन्दी-संसार क समझ नहीं आने लिया। धरकाशित काव्य कृतियों के प्रकाशित प्रकाश से हिन्दी काव्यय की श्रीकृति हो रही है।

'नवीन' जी के धरकाशित रचनाओं की निधि तथा स्थान-बद्ध करके महान् कार्य सम्पन्न किया है। काम हा विविध परिस्थितियों तथा धरकाशितों के उन्मेष के कारण भी, इनके निर्माण तथा धरकाशितों को सम्पन्न की कामयो भी प्राप्त हो गयी है। न कृतिधरता में उनके साहित्य के लेखन धारि के विषय में कतिपय महत्वपूर्ण पत्र तथा कव्य भी प्रस्तुत किये या सकते हैं।

प्रकाशित काव्य-कृतियों के समान उनकी धरकाशित कृतियों में सुख गार्हीकता प्रेम मरुती तथा धरकाशितता की प्रकृति ही प्राप्त होती है। उनके धरकाशित महत्त्व इन्हीं

१ हेतिये कतिपय।

२ वही।

स्वप्नों पर आधारित है। उनका प्राथम्य 'काव्य कवि की प्रबन्ध-समता तथा भावबिम्बर का हमारे सामने प्रस्तुत करता है। सुन तथा कला दोनों ही दृष्टिकोणों से इस कृति की अपनो प्राप्ति है।

'नबीन' का प्रप्रकाशित साहित्य उनकी महिमा तथा मृत्यु को विद्विगुत करने में पूर्ण समर्थ तथा सक्षम है। दूतन उपलब्धियों को समाविष्ट करने का नबीन की काव्य का सेवा-बोधा और महत्वाकांक्षी उनके व्यक्तित्व के प्रकाश में मसीहीन किया जा सकता है। जब उनका काव्य-वीर्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। ज्ञानीत विज्ञान का यह कथन कवि 'नबीन' पर उम्मीद बरितार्थ होता है—

"Once I said to a poet We shall not know you worth until you die"  
And he answered saying, 'yes death is always a revealer  
And if indeed you would know any worth it is that I have more in my heart than in my hand

प्रतीति, एक बार मैंने एक कवि से कहा जब तक तुम दिवंगत नहीं होते हम तुम्हारा मृत्यु नहीं जान सकते।  
और उसने उत्तर दिया—'हो मृत्यु सबसे बड़ी रहस्योद्घाटक है और सबकुछ यदि तुम मरी उपलब्धि को अपेक्षा मेरे घल-करस में बहुत अधिक सार तत्व निहित है।'  
काव्य बर्गीकरण—विपुल काव्य-स्रष्टा जो 'नबीन' में विविध विषयक रचनाओं का निर्माण किया है। उनकी प्रथम कविता सन् १९१८ में लखी और प्रथिम कविता की रचना-तिथि सन् १५६ है जो कि उनकी मृत्यु के परभाव प्रकाशित हुई।<sup>१</sup> इस काव्य-विषय में वे अपने राष्ट्रीय तथा राजनैतिक कार्यकर्ता के शायिलों का पूर्ण निर्वाह करते हुए, साहित्य-सुख में भी संलग्न रहे।

जो गममय द्विबिही ने लिखा है कि 'नबीन' की जो हम साहित्य-प्रेमी उनके सक्षम काव्य के लिए स्मरण करते हैं। महाकवि बट्टे ने लिखा है कि कविता के सबसे तीन विषय हैं सफल है—प्रेम, प्रेम और सम्प्राप्त। नबीन की ने इन तीनों विषयों पर प्रचुर काव्य रचना की जा मानी प्रकृति और सहज भावपूर्ण के लिए प्रशिक्षीय है।<sup>४</sup>  
स्रष्ट है कि 'नबीन' काव्य की विपुली राष्ट्रीयता प्रेम तथा सम्प्राप्त पर उभय विभक्त है। काव्य विषय से परिचित हो लेने के उपरान्त उनके काव्य का विविध दृष्टिकोणों से विभाजन किया जा सकता है। हमारे काव्य-बर्गीकरण के ये आधार हो सकते हैं—(१) काव्य रूप (२) काव्य शैली (३) काव्य-प्रकृति और (४) समय-सापेक्ष काव्य-विभाजन। बर्गीकरण के प्रत्येक आधार का संक्षिप्त निरूपण निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत किया गया है।

- १ श्री प्रभावचन्द्र शर्मा की 'हृदय काकातावाली' बार्ता से बहूल, ( विभाक ५ १२-१९६० )।
- २ 'प्रतिभा' साप्ताहिक अगस्त १९१८।
- ३ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' बीकानेर कृति। १४ अगस्त १९६, पृष्ठ २१ प।
- ४ साप्ताहिक 'आज' पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नबीन' २४ अर्ग १९१०, पृष्ठ १।

काव्य-रूप—'नवीन' की क काव्य-साहित्य में विविध रूप की वृत्तियाँ उपलब्ध हैं वा कि उनके काव्याधिकार को परिचायिका हैं। इस दृष्टिकोण से उनके काव्य को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है —

(क) प्रबन्ध काव्य—(१) महाकाव्य—उम्मिता; (२) काव्यकाव्य—प्राणार्पण।

(ख) स्तुत काव्य—(१) कुङ्कुम (२) रविमरेखा (३) धनसक, (४) नवामि (५) विनाश-स्तवन (६) 'सिरजन की सप्तशतिका' या 'तुरुर के स्वन' (७) नवीन बोझबर्ती (८) 'नवीन-नविया' या 'पावस-नीड़ा', (९) प्रत्यङ्कर, (१०) स्मरण पोष और (११) 'मृग्य धाम' या 'सूजन-स्यम्'।

काव्य-शैली—कवि ने अपने काव्य-साहित्य में विविध शैलियों का प्रयोग किया है जिससे उनके कला-कुशलता का परिचय प्राप्त होता है। प्रमुखतया प्रभावशालित शैलियों का व्यवहार दिखाई देता है—

(क) प्रबन्धगत शैली—इस शैली का प्रयोग 'उम्मिता तथा 'प्राणार्पण में किया गया है। इन दोनों कृतियों में निरिचय कला का प्राण लेकर विभिन्न स्थानों में काव्य की वृत्ति की गई है। 'नवीन' काव्य में प्रबन्ध-शैली की प्रयोजिता शैली-शैली का व्यवहार, प्रबन्ध दृष्टिकोण से होता है।

(ख) शैली-शैली—इस शैली का प्रयोग कवि के प्रायः समस्त स्तुत-काव्य में प्राप्त होता है। यह कवि की प्रधान शैली है। 'रविमरेखा धनसक नवामि' स्मरणपोष तथा 'मृग्य धाम' या 'सूजन स्यम्' संकलन हैं। इस शैली से प्रतिमिति स्वल्प है।

(ग) मुक्तक-शैली—इस शैली के अन्तर्गत कवि की स्तुत रचनाएँ प्राप्त होती हैं। पर पत्रिकाओं में प्रकाशित कविताओं में भी इसी शैली के बर्तन होते हैं। इस शैली के अन्तर्गत कवि ने विविधप्रकारों की वृत्ति की है यथा—राष्ट्रीय मुक्तक दार्शनिक मुक्तक शृंगारिक मुक्तक आदि। 'कुङ्कुम इनका प्रतिमिति संकलन है और इसके अतिरिक्त प्रायः समस्त संकलनों में इसकी इन शैली-साहित्य कविताएँ प्राप्य हैं। इस शैली को मरुना भी कवि की प्रधान शैली में ही जा सकती है।

(घ) बोझ-शैली—यह भी 'मुक्तक-शैली' का एक घंघ है। हमारे पुष्पतन कवियों के समान नवीन भी ने पुष्पतन पद्यों का प्रयोग ही, बाहे, बोझाई तथा बुद्धिमत्ता भी विधी है। इस शैली में कवि के वैयक्तिक सङ्घर्षों की वृत्ति हुई है जिसके कारण सङ्घर्षों का एक ही माय प्रभाव का भी विषय प्रयास प्राप्त होता है। बाहों में कवि ने प्रणय भावना तथा धार्मिकभाव को स्वर प्रदान किया है। दोनों पर ऐतिहासिक प्रवृत्तियों की भी ध्यान दिखाई देता है।

इस शैली का परिचायक श्रेष्ठ शब्द नवीन वाचकता है जिसमें कवि का धार्मिकभाविक धारणा पूर्ण मानवार्थ का माय हुई है। माय ही वृत्तियों की यत्नपूर्व परम्परा के अन्तर्गत उम्मिता कुङ्कुम का भी धारणा प्रयुक्त स्वतः है। उम्मिता के ३०४ दोहे-श्लोकों में प्रत्येक वर्ण के अन्तर्गत उम्मिता का विहङ्ग-वर्णन बिना गया है।

काव्य प्रवृत्ति नवीन को क प्रकाशित एवं प्रकाशित काव्य-कृतियों में काव्य विषय से अनुकूल प्रवृत्ति प्राप्त होगी है। वे विवेकपूर्ण प्रमुखतया उच्च स्तुत काव्य-रचना की

रचनाओं में सहज इष्टम्ब है। इनमें प्रधानतया चार प्रकार की रचनाएँ सम्मिलित हैं—(क) राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य-भारा, (ख) प्रेममूलक काव्यभारा (ग) दार्शनिक काव्य-भारा और (घ) आत्मपरक काव्य-भारा।

कवि के एकाग्र काव्य-संकलन इन्हीं प्रवृत्तियों के अन्तर्गत परिगणित किये जा सकते हैं। प्रत्येक प्रवृत्ति या काव्यभारा का संक्षिप्त विवेचन अधोलिखित रूप में है—

(क) राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-भारा—यह कवि-व्यक्तित्व तथा कृतिव्यवस्था की प्रस्ताव प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति के सर्वत्र प्रायः सभी ग्रन्थों में होते हैं परन्तु 'कुमुद' 'अनन्तर' तथा 'विनोबा-स्तवन' इसके प्रमुख विप्लवक हैं। 'प्राणार्थ' के मुसाबार का विषय भी यही प्रवृत्ति करती है। 'अम्मिता' पर भी सम-सामयिक राष्ट्रीयता तथा आन्दोलन का प्रभाव देखा जा सकता है।

इस प्रवृत्ति का भारतीय संस्कृति भारतीय भावों को राष्ट्रीय सत्याग्रह संग्राम तथा बहिष्कारों में विद्येपरकेण प्रभावित किया है। लोकमान्यतिलक लक्ष्मणकर विद्यार्थी महात्मा गान्धी अबाहरनाथ नेहरू अग्रदोषर प्रभाव सरदार भद्रसिंह विनोबा भावे आदि भारत के कर्णधारों तथा महापुरुषों ने इस प्रवृत्ति के निर्माण कोषण तथा विकास में महत्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहण किया है। पठनीय भारत की स्वाधीनता तथा अन्धकार की ह्तिकार ही इस भारा का मुख्योद्देश्य रहा है। इस प्रवृत्ति के क्षेत्र में कवि की स्वातन्त्र्यपूर्ण तथा स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीयता के विभिन्न आयाम देखे जा सकते हैं। अन्तिम तथा विप्लव की लहरों में भी इस प्रवृत्ति के आकार को उज्ज्वल बनाने में योगदान दिया है असाह्य की धुरी पर आधुन सत्य श्रेष्ठ शक्ति के गीतों ने शिन्धी काव्य के क्षेत्र का परिपूरित किया है।

गान्धी तथा विनोबा विप्लव तथा अन्त में गीतों ने इस भारा को नूतन परिधान प्रदान किये हैं।

(ख) प्रेममूलक काव्य-भारा प्रेम ही जीवन-अमृत सभी प्रेरित एवं प्रभावित होते हैं। इस प्रवृत्ति के अन्तर्गत कवि ने प्रेम के प्रणव रूप को ही प्रमुखता प्रदान की है। यह प्रवृत्ति कवि में प्राधान्य बनी रही।

प्रकाशित काव्य-संग्रहों की प्रायः सभी कृतियों में इस प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। अग्रप्रकाश में 'वीरन-मरिच' वा 'पावस-वीर' तथा 'स्मरण-वीर' इसी प्रवृत्ति के ही आह्वान-पत्र हैं।

संयोग वियोग प्यार-कुमार धनुष्य स्मृति प्रतीक्षा आदि के बीतियों आदि विन सम्बन्धित रचनाओं में अन्तःप्रणव प्रमुखता लोभ रहे हैं।

कवि के काव्य-मुख्य का अहाँ एक पत्र राष्ट्रीयता है वहाँ हृदय पत्र है प्रणव। उसके काव्य में अन्तर्गत के तात्काल-मुख्य के साथ ही साथ गुण के स्वयं मुक्त अन्त का आत्मन्य भी प्राप्त होता है।

(ग) दार्शनिक काव्य-भारा—अन्तःप्रणव अन्तःप्रणवानी होने तथा शक्ति व अन्तःप्रणव के संस्कार प्रारम्भ न ही अन्तःप्रणव अन्तःप्रणवानी से प्राप्त करने के कारण यह प्रवृत्ति अन्तःप्रणव के अन्तःप्रणव रही और संस्कृति-प्रणव अन्तःप्रणव व धनुष्य के कारण अन्तःप्रणव पुणित-अन्तःप्रणव हो गई।

इस काव्यपाठ को कवि के कृतित्व स्वी सागर में 'व्याप्ति' 'विरजन की लक्षणाओं' या 'गुण के स्वतः और 'मूलुबाम' या 'सुवन' अर्थात् कृति स्वी तीन देखीयमान् द्वीप प्राप्त हुए। इन संकलनों के प्रतिरिक्त, इस प्रकृति को निर्देशक रचनाएँ प्रायः समस्त संघर्षों में हैं।

कवि का रहस्यवाद गूढ़ न होकर सरल तथा आस्वामय है। इसमें बुद्धि की अपेक्षा भावना को अधिक पुष्टि प्राप्त हुई है। कवि पूर्ण आस्तिक है। जीवन ब्रह्म के चिरन्तन प्रसनों की विज्ञासा तथा निधान में ही रहस्यपरक रचनाओं की गर्भीर अभिव्यक्ति की है।

(घ) आत्मपरक काव्य-पाठ—इस प्रकृति के परिचायक दृष्टान्त सभी स्फुट संघर्षों में मिल जाते हैं। ये व्यक्तिपरक आत्मनिर्भरक रचनाएँ हैं। इनमें कवि का सहज, प्रसन्न तथा फलसुख व्यक्तित्व निरक्षर कर धारा है। 'नवीन' क कवि ने इन कविताओं की सङ्ग्रहानुसृष्टि तथा मायिकता को सुन्दर रूप से निभाया है। इन रचनाओं को, अपनी प्रकृत तथा सरस पेशी और मनोहारिता के कारण, विपुल प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

आत्मपरक रचनाओं में कवि के सुख-दुःख आशा-निराशा और राग-विराग को वाणी मिली है। जीवन की भाभाविष परिस्थितियों आरोग्यरोग संघर्ष दयनीय स्थिति सांसारिकता भवन्त आदि की प्रतिक्रियाएँ तथा भावमय प्रभावोत्पादन को इनमें देखा जा सकता है।

(ङ) अन्य शैली प्रकृतियाँ—इस प्रकार हम देखते हैं कि इन चार प्रकृतियों में काव्य ने मूल गुणों को अभिव्यक्त करने में प्रबल कल्प सम्पन्न किया है। इन प्रमुख प्रकृतियों के प्रतिरिक्त कतिपय अन्य शैली प्रकृतियों क भी वर्णन किये जा सकते हैं यथा (क) मानवतावादी (ख) सौन्दर्यपरक, (ग) प्रकृतिपरक, आदि। परन्तु, इनका विधिष्ट महत्त्व नहीं है। इनके भी दृष्टान्त पत्र-पत्र प्राप्त हैं। शीघ्र प्रकृतियों से कवि का आनुवंशिक रूप समस्त था है।

काव्य-गुण—घपनी ३३ वर्ष की अवस्था में प्राप्ति तथा ४२ वर्ष के कवि-जीवन (सन् १९१५-६० ई०) में 'नवीन' की ने कई उत्तर-अज्ञान जैसे संघर्ष किये और भारत माता तथा भारतवर्षी की प्रारण से जनामता तथा विज्ञान कल्पना की। इन सब तत्वों का उनके कृतित्व के साथ सम्बन्धविरिक्त सम्बन्ध है।

'नवीन' की काव्य-साधना का विभाजन कवी भाषन द्वारा तीन गुणों के पदों के माध्यम से किया जा सकता है। ये गुण कालावधि में पत्र-पत्र-पत्र-पत्रों के निर्धारित किये जा सकते हैं। इनकी स्पष्ट कारणता निम्नलिखित ढंग से बताई जा सकती है—

(क) निर्माण-काल (सन् १९१५-१९३१ ई०),

(ख) उत्कर्ष-काल (सन् १९३१-१९४६ ई०),

(ग) प्रौढ़-काल (सन् १९४६-१९६० ई०)।

प्रत्येक गुण की सामान्य विवेचना नीचे प्रस्तुत की जाती है—

(क) निर्माण-काल—सन् १९१५ से १९३१ ई० की कालावधि को निर्माण-काल की संज्ञा से विभूषित करने के कई कारण हैं।

इस युग में कवि की काव्य प्रकृतियों में निर्दिष्ट स्वतन्त्र प्रयोग करने को बड़ा वा घोर घाने कार्य निर्धारित किये। काव्यकृतों में घाने कारण के निर्माण में सक्रियता दिखलाई। कवि का 'वशिष्ठा', 'भारतवर्षी' तथा 'इला' में प्रयोग आरम्भिक काव्य शैली गुण की रूप रचना को सूचना देता है।



उन्मत्त के अपने ध्यानकाल में काव्यप्रतिमा ने अपने पंख खोलने शुरू कर दिये थे। उन्मत्त का यह मेधावी बिधावी जब कानपुर की साहित्यिक-मण्डली में आयी, तो उसके पंच पङ्क्तिकाएँ लगे। कविताओं का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया और अपनी स्वच्छन्द तथा राष्ट्रीय शक्तियों को सामग्री प्राप्त होने लगी। सन् १९१८ से १९२२ तक काव्य रचनाओं के अनुपात तथा गुण में विकास की स्थिति दृष्टिगोचर होती है। सन् १९२२-२३ में 'नवीन' की नये अपनी प्रबन्ध कृति 'उन्मत्ता' का प्रथम सर्ग लिखा; जिससे प्रतीत होता है कि कवि अपने निर्मासु-युग की उर्ध्वारोही तरफ हुतगति से अग्रसर हो रहा है। इसी युग में कवि को तीन बार कारागृह याचार्थ करनी पड़ी जिनमें सबसे अपनी प्रबन्ध कृति के धीमलौके के प्रतिरिक्त प्रेम तथा राष्ट्रपुरुष रचनाओं के सूजन में पूर्ण सक्रियता दिखाई। कारावास में अथकास तथा एकान्तवास के कारण उन्मत्त विमुक्त काव्य का सूजन क्रिया। इस युग के अन्त में सन् १९१०-११ में इस काल की सर्वाधिक रचनाएँ लिखी गईं। परिमाण के दृष्टिकोण से, इतनी रचनाएँ बिगत बरों में नहीं लिखी गईं।

सन् १९१०-११ में 'नवीन' की गाजीपुर कारागृह में रहे और उनकी इस काल काव्य तथा स्वान की रचनाएँ 'रविमोक्षा', 'क्यासि', 'नवीन बोहाबली', 'बौवन-मरिच' या 'पावस पीड़ा' में संयुद्ध हैं। कतिपय कविताएँ 'अन्तर्मकर' में सम्मिलित हैं। रचनाओं में सूंमार का प्राधान्य प्राप्त हुआ है।

राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रवृत्तता तथा उन्मत्त की प्रवृत्तता के कारण प्रतिक्रिया स्वयं लिखे गये 'विप्लव-नामन तथा 'पराभव गीत' भी इसी युग की सृष्टियाँ हैं। इन गीतों ने जनबोधन को स्फुरित करने में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

इस युग में कवि की काव्य-शैलियाँ निरूपण कर भाग्य और 'नवीन' की भी स्वादि कवि के अन्त में सर्वत्र परिष्कार होयई। निर्मासुकाल में उनका साहित्यिक-सम-सम विचार पड़ा रहा और उसका कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ। अपने प्रथम काव्य संग्रह में उन्होंने इस युग की अनेक रचनाओं को स्थान प्रदान किया।

यैसी तथा काव्य के उत्तरोत्तर विकास को अनागत देखते हुए, हम यह पाते हैं कि कवि की प्रबन्ध-शैली तथा गीतशैली ने अपने चरमों की पुष्टि करता प्रारम्भ कर दिया था।

(क) उत्कर्ष-नामन - सन् १९११ से १९४६ ई० तक का काल कवि-जीवन के इतिहास में सर्वोत्तम महत्त्व रखता है। इस युग की प्रारम्भ तथा अन्त की विशेषता का ही प्रथम महत्त्व है जो कि एक नये युग के सूत्रपात की बड़ी सूचना प्रदान करती है, वही उत्कर्ष-काल की समाप्ति की ओर भी संकेत करती है।

द्वितीय युग प्रथम उत्कर्ष-काल का प्रारम्भ लग समय से मानना चाहिये जब कवि ने अपने प्रबन्धकाव्य के अतिरिक्त अथकास धर्म की रचना प्रारम्भ कर ही और परिष्कारनात्मक की ओर अग्रसर होने लगे। सन् १९११ तथा १९१४ ई० के मध्य कवि ने अपनी महती सृष्टि की पूर्ति की। इसी प्रकार सन् १९४६ की शिवि एक युग की समाप्ति तथा नूतन युग के प्रारम्भ का अथकास उपस्थित करती है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की इति-शी हो रही थी। सन् १९४२ के आन्दोलन के स्वाधीनता तथा प्रभावपूर्ण पूर्णावृत्ति थी। वेप मजदूरी की कारागृहों में सुन्नि हो गई थी और पराधीनता की सूंभकार्य दूरती दिखाई देने लगी थी। सन् १९४७ में भारतीय स्वतन्त्रता के महान् तथा निर-अधीनता का अथकास हुआ।

कवि की राष्ट्रपरक रचनाएँ इनमें होने लगी थीं और काव्यशास्त्र बुझी विद्या में उन्मुख होने लगी। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में ही नहीं, अपितु 'नवीन' की क कवि-जीवन के इतिहास में भी सन् १९४६-४७ की युगसम्मिलि का गहन तथा समिर स्थापन है। अतएव, इन्हीं घाघाघों पर उत्कर्ष-काल की त्रिविधा निर्धारित की गई है।

सभी दृष्टियों से उत्कर्ष काल में कवि ने प्रगति की। उसकी साम्य-सैनियों ने अपना प्रभाव तथा स्वायत्तत्व प्रकट कर दिया। परन्तु हा गये और घाघाघें निर्धारित लक्ष्य का पारानामा करने लगे। काव्यका मानस होकर, गदरा उठे।

इस युग में सबसे प्रभावपूर्ण तथा महत्वपूर्ण कार्य कवि ने 'उम्मिता' की रचना तथा 'प्राणार्णव' के लेखन द्वारा सम्पन्न किये। इस काल में उम्मिता का अधिकांश भाग लिखा गया, रचना को पूर्णता प्राप्त हुई। प्रबन्ध कृति के चार सप्त इसी काल की हैं। युग का प्रारम्भ जहाँ प्रबन्ध शैली के व्यक्तत्व से हुआ, वहाँ अन्त का मार्ग भी इसी शैली के अनुभव से प्रकट हुआ। सन् १९४१ में 'प्राणार्णव' लम्ब-काव्य लिखा गया जिसने प्रबन्ध कवि के रूप का अधिक ज्ञास्वर बनाया। इसी युग में ही कवि का राष्ट्रीयचेतनासम्बन्ध रूप उभर कर भाया। धान्योन्नत तथा अस्मित के दृष्टिकोण से भी यह युग भारतीय स्वातन्त्रता संग्राम के इतिहास में सर्वाधिक लक्षित तथा गतिशील रहा। इसी के अनुकूल कवि का काव्य भी रहा।

इस युग में, कवि का अधिकांश जीवन बांग्लादेश में ही व्यतीत हुआ जिसके परिणामस्वरूप साहित्य-सर्चना में भी समय तथा प्रतिभा का अधिक प्रयोग हुआ। अपने समय कवि-काल में 'नवीन' की परिमाण तथा परिणाम के दृष्टिकोण से सर्वाधिक रचनाएँ इसी युग में लिखीं। इस युग में ही नहीं अपितु समय जीवन में कवि ने सर्वाधिक रचनाएँ सन् १९४३-४४ के वर्षों में कीं। इस काम-अन्त की रचनाओं में राष्ट्रिय दर्प तथा प्रखरता की दृश्य है।

'नवीन' की सन् १९३०-३१ क माओपुर काठपुड-निवास के परभाव अपनी तपोभूमि की शान्ति की भागीनी कड़ी के रूप में सन् १९३२-३३ में फैजाबाद काठपुड में रहे। इस अवधि में वे बरेली काठपुड में भी रहे। इस कालखण्ड तथा काठपुडों की रचनाएँ उनकी 'जीवन-महिरा' या 'आवत-नीडा' में संयोजित हैं। इन वर्षों के अतिरिक्त 'प्रसन्नकर', 'स्मिरेखा' तथा 'पानक' में भी कतिपय रचनाएँ संकलित हैं।

कवि के सन् १९३४ के कतिपय काठ, धर्मगढ़ काठपुड में भी व्यतीत हुए। इस स्थान पर लुप्त रचनाओं का अन्त कम हुआ और यहाँ की स्वल्प कविताएँ 'जीवन-महिरा' या 'आवत-नीडा' 'प्रसन्नकर', 'स्मिरेखा की लक्ष्मण' या 'दुरुर के स्वन' और 'पानक' में स्थान पा लीं। सन् १९३५ में १९३६ ई० की रचनाएँ काठपुड के बाहर लिखी गईं और वे 'जीवन-महिरा' या 'आवत-नीडा', 'प्रसन्नकर' 'स्मिरेखा की लक्ष्मण' या 'दुरुर के स्वन' 'पानक', 'स्मिरेखा' अथवा 'नवीन शारदाती तथा 'स्मरण टीन' में संकलित की गईं।

सन् १९३६ में ही काठपुड जीवन का युग-उत्थम प्रारम्भ का जाता है जो कि अन्तिम सन् १९४५ तक चलता है। सन् १९३६ में कवि कुछ समय तक बरेली काठपुड में रहा जहाँ कि रचनाएँ 'प्रसन्नकर' में सम्मिलित हैं। सन् १९४० में कवि ने अपना सामान्य अन्तिम जीवन व्यतीत किया। इस वर्ष की रचनाओं में कवि संकलित तथा—'स्मिरेखा

उन्मैत्र के अपने साधकास में काव्यप्रतिभा ने अपने पक्ष खोलने शुरू कर दिये थे। उन्मैत्र का यह मेधावी विद्यार्थी जब कानपुर की साहित्यिक-सम्मेली में भाषा, तो उसके पक्ष पकड़वाने लगे। कविताओं का प्रकाशन आरम्भ हो गया और अपनी स्वच्छन्द तथा राष्ट्रीय वृत्तियों को सामग्री प्राप्त होने लगी। सन् १९२५ से १९२९ तक काव्य रचनाओं के अनुपात तथा गुण में विक्रम की स्थिति इतिहासकार होती है। सन् १९२९-३१ में 'नवीन' की ने अपनी प्रबन्ध कृति 'उन्मिता' का प्रथम सर्ग लिखा, जिससे प्रतीत होता है कि कवि अपने निर्माण-युग की ऊँचाई की तरफ दृढ़गति से अग्रसर हो रहा है। इसी युग में कवि को तीन बार कारागृह यात्राएँ करनी पड़ीं जिनमें उसने अपनी प्रबन्ध कृति के बीजगोत्र के अतिरिक्त, प्रेम तथा राष्ट्रपरक रचनाओं के सूत्रन में पूर्ण सक्रियता विकसलाई। कारावास में अग्रक्रम तथा एकान्तवास के कारण उसने विपुल काव्य का सूत्रन किया। इस युग के अन्त में सन् १९३०-३१ में इस काल की सर्वाधिक रचनाएँ लिखी गईं। परिमाण के इतिहास से, अपनी रचनाएँ विगत वर्षों में नहीं लिखी गईं।

सन् १९३०-३१ में 'नवीन' की याजीपुर कारागृह में रहे और उसी इस काल काव्य तथा स्यास की रचनाएँ 'रश्मिरेखा', 'स्वासि', 'नवीन बोधावली', 'वीरन-भरिता' या 'पावत पीड़ा' में सम्पृष्ट है। कतिपय कविताएँ 'प्रलयकर' में सम्मिलित हैं। रचनाओं में शृंगार को शाशान्य प्राप्त हुआ है।

राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रचरता तथा उन्मैत्र की अग्रगण्य के कारण प्रतिष्ठिता स्वयं लिखे गये 'विप्लव-नायक' तथा 'पराजय पीठ' की इसी युग की वृत्तियाँ हैं। इन पीठों ने जनजागृति को स्फुटित करने में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

इस युग में कवि की काव्य-वैश्लिष्यी निरुद्ध कर घातई और 'नवीन' की की स्वाति कवि के रूप में सर्वत्र परिष्काप्त हो गई। निर्माणकाल में उनका साहित्य बच-सब विकसत पड़ा रहा और अक्षय कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ। अपने प्रथम काव्य संग्रह में उन्होंने इस युग की धार्मिक रचनाओं को स्यास प्रदान किया।

तीसरी तथा काव्य के उत्तरोत्तर विकास को क्रमागत देखते हुए, हम यह पाते हैं कि कवि की प्रबन्ध-शैली तथा वीतिशैली ने अपने धर्मों की पुष्टि करना आरम्भ कर दिया था।

(क) उत्कर्ष-काल— सन् १९३१ से १९४६ ई० तक का काल अत्यन्त कवि-बीमन के इतिहास में सर्वोपरि महत्त्व रखता है। इस युग की आरम्भ तथा अन्त की विधियों का ही अपना महत्त्व है जो कि एक नये युग के सूत्रपात की जहाँ सूचना बराब करती है, वहाँ उत्कर्ष-अस की समाप्ति की ओर भी संकेत करती हैं।

द्वितीय युग अपना उत्कर्ष-काल का आरम्भ इस समय से मानना चाहिये जब कवि ने अपने प्रबन्धकाव्य के अतिशय अग्रगण्य धर्म की रचना आरम्भ कर दी और परिणामावस्था की ओर अग्रगण्य होने लया। सन् १९३१ तथा १९३४ ई० के मध्य कवि ने अपनी महती वृत्ति की पूर्ति की। इसी प्रकार सन् १९४६ की लिखि एक युग की समाप्ति तथा नूतन युग के आरम्भ का उपक्रम उपस्थित करती है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की इति-श्री ही रही थी। सन् १९४२ के आन्दोलन के स्वामी, सम्पी तथा प्रभावपूर्ण व्युत्पत्ति थी। देश बचों की कारागृहों के मुक्ति हो गई थी और पराधीनता की शृङ्खलाएँ टूटती दिखाई देने लगी थी। सन् १९४७ में भारतीय स्वतन्त्रता के महान् तथा चिर असीमित विज्ञान का अस्तित्व हुआ।

कवि की राष्ट्रवन्दन रचनाएँ पलक होने समी धीर नाम्मबाप दूसरी दिशा में उभरने लगे। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में ही नहीं, अपितु 'नवीन' भी के कवि-जीवन के इतिहास में भी सन् १९४६-४७ की घुमसंग्रह का महान तथा समित स्थान है। पठएव इन्हीं आधारों पर उत्कर्ष-काल की विविधा निर्धारित की गई है।

सभी दृष्टियों से उत्कर्ष काल में कवि ने प्रगति की। उसकी काव्य-शैलियों ने अपना शोचन तथा स्वाधोक्त प्रकृत कर लिया। परन्तु हा गवे धीर बापों निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करना करने समी। काव्यकर मांसल होकर, गदर उठे।

इस युग में सबसे प्रभावपूर्ण तथा महत्वपूर्ण कार्य कवि ने 'उम्मिता' की रचना तथा 'प्राक्षापेक्ष' के लेखन द्वारा सम्पन्न किये। इस काल में 'उम्मिता' का अधिकार नाम लिखा गया, रचना को पूर्णता प्राप्त हुई। प्रबन्ध कृति के चार सर्ग इनो कास की है। युग का प्रारम्भ वही प्रबन्ध शैली के प्रथम ल से हुआ, वही अन्त का मार्ग भी इसी शैली के अनुगमन से प्रकृत हुआ। सन् १९४६ में 'प्राक्षापेक्ष' अष्ट-काव्य लिखा गया जिसने प्रबन्ध कवि के रूप का अधिक मान्य बनाया। इसी युग में ही कवि का राष्ट्रीयकेतनात्मक रूप उभर कर आया। आत्मोक्त तथा अन्ति के दृष्टिकोण से भी यह युग भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में सर्वाधिक सक्रिय तथा गतिशील रहा। इसी के अनुगम कवि का काव्य भी रहा।

इस युग में कवि का अधिकार जीवन कारागहों में ही व्यतीत हुआ जिसके परिणामस्वरूप साहित्य-सर्जना में भी समय तथा प्रतिभा का अधिक प्रयोग हुआ। अपने समय कवि-काल में 'नवीन' भी ने परिणाम तथा परिणाम के दृष्टिकोण से सर्वाधिक रचनाएँ इसी युग में लिखी। इस युग में ही नहीं, अपितु समय जीवन में कवि ने सर्वाधिक रचनाएँ सन् १९४६-४७ के वर्षों में की। इस काल-काल की रचनाओं में राष्ट्रीय रूप तथा प्रकृतता भी उभरने लगी।

'नवीन' भी सन् १९३०-३१ के नाबीपुर कारागृह-निवास के परभाव अपनी तथासुमि की आशाओं की आशाओं की कवि के रूप में सन् १९३२-३३ में केन्द्रबाप कारागृह में रहे। इस अवधि में वे बरेली कारागृह में भी रहे। इस नाशकाल तथा कारागृहों की रचनाएँ उनकी 'जीवन-मदिरा' या 'आत्म-मोक्षा' में संग्रहित हैं। इस संग्रह के अतिरिक्त प्रत्येक 'परिमरेका' तथा 'अपलक' में भी अतिरिक्त रचनाएँ संकलित हैं।

कवि के सन् १९३४ के अतिरिक्त मास अलीगढ़ कारागृह में भी व्यतीत हुए। इस स्थान पर कुछ रचनाओं का मुद्रण कम हुआ धीर वहाँ की स्वतन्त्र कविताएँ 'जीवन-मदिरा' या 'आत्म-मोक्षा', 'प्रत्येक', 'सिरजन की लसकारों' या 'गुरुर के स्वत' धीर 'अपलक' में स्थान पा लीं। सन् १९३४ से १९३६ ई० की रचनाएँ कारागृह के बाहर लिखी गई धीर वे 'जीवन-मदिरा' या 'आत्म-मोक्षा', 'प्रत्येक', 'सिरजन की लसकारों' या 'गुरुर के स्वत', 'अपलक', 'परिमरेका', अन्ति 'नवीन' मोक्षा तथा 'अपलक' में संकलित की गईं।

सन् १९३६ में ही कारागृह जीवन का युग अन्त्य प्रारम्भ हो आता है जो कि अन्तिरिक्त सन् १९४६ तक चलता है। सन् १९३६ में कवि कुछ समय तक बरेली कारागृह में रहे वहाँ कि रचनाएँ 'प्रत्येक' में सम्मिलित हैं। सन् १९४० में कवि ने अपना आत्म-मोक्षा जीवन व्यतीत किया। इस वर्ष की रचनाओं में भी सर्वाधिक रचनाएँ सम्मिलित हैं।

उन्नीस के अपने छात्रकाल में काव्यप्रतिभा ने अपने पंख खोलने शुरू कर दिये थे। उन्नीस का यह मेवाभी विद्यापीठ जब कागपुर की साहित्यिक-मण्डली में था, तो उसके पंख फड़फड़ाते सते। कविताओं का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया और अपनी स्वच्छन्द तथा राष्ट्रीय वृत्तियों को सामग्री प्राप्त होने लगी। सन् १९१८ से १९२२ तक काव्य रचनाओं के अनुपात तथा गुण में विकास की स्थिति इष्टितोत्तर होती है। सन् १९२२-२९ में 'नवीन' की न अपनी प्रबन्ध कृति 'उम्मिसा' का प्रथम सर्ग लिखा, जिससे प्रतीत होता है कि कवि अपने निर्मातृ-गुण की ऊँचाई की तरफ झुक्तमति से घबहरा हो रहा है। इसी युग में कवि को तीन बार कारागृह यात्राएँ करनी पड़ीं जिनमें उठने अपनी प्रबन्ध कृति के वीरप्रेम के प्रतिरिक्त प्रेम तथा राष्ट्रप्रेम रचनाओं के सूत्र में पूर्ण सक्रियता दिखाई। कारावास में प्रथम तथा एकलव्यवास के कारण, उठने विपुल काव्य का सूत्र किया। इस युग के अन्त में, सन् १९३०-३१ में इस काम की सर्वाधिक रचनाएँ सिद्धी गईं। परिमार्ग के इष्टितोत्तर से, इतनी रचनाएँ विगत वर्षों में नहीं लिखी गईं।

सन् १९३०-३१ में 'नवीन' की पाबीपुर कारागृह में रहे और उनकी इस काल काल तथा स्वान की रचनाएँ 'रविमरका', 'कवासि', 'नवीन बोझवली', 'बीबन-मदिरा' वा 'बाबू पीड़ा' में संकृष्ट हैं। कविपत्र कविताएँ 'प्रसन्नकर' में सम्मिलित हैं। रचनाओं में अनुसार की प्राधान्य प्राप्त हुआ है।

राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रबलता तथा उन्नीस की प्रवृत्तियों के कारण प्रतिक्रिया स्वयं लिखे गये 'विप्लव-नायक' तथा 'पराजय योत' भी इसी युग की सृष्टियाँ हैं। इन गीतों ने जनजागृति को स्फुरित करने में महत्वपूर्ण कार्य किया है।

इस युग में कवि की काव्य-संवेदनिका निरंतर कर यात्राएँ और 'नवीन' की की क्रांति कवि के रूप में सर्वत्र परिभाषित हो गई। निर्मलकाल में उनका साहित्यिक-मन-तन विहारा बढ़ा रहा और उसका कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ। अपने प्रथम काव्य संग्रह में उन्होंने इस युग की अनेक रचनाओं को स्वान प्रकाश किया।

दूसरी तथा काव्य के बचोत्तर विकास को अन्ततः देखते हुए, हम यह बातें हैं कि कवि की प्रबन्ध-सौखी तथा पीठि-सौखी ने अपने अर्थों की पुष्टि करती प्रारम्भ कर दिया था।

(क) उत्कर्ष-काल— सन् १९३१ से १९४६ ई० तक का काल अत्यन्त कवि-जीवन के इतिहास में सर्वोपरि महत्त्व रखता है। इस युग की प्रारम्भ तथा अन्त की तिथियों का भी अपना महत्त्व है जो कि एक नये युग के सूत्रवाच की बड़ी सूचना प्रदान करती है, बड़ी उत्कर्ष-काल की समाप्ति की ओर भी संकेत करती है।

द्वितीय युग प्रथम उत्कर्ष-काल का प्रारम्भ जब समय से मानता था तबिने जब कवि ने अपने प्रबन्धकाव्य के अधिवाय अधिपिष्ट अंग की रचना प्रारम्भ कर दी और परिवर्तनरथा की ओर रुम्बुद्ध होने लगा। सन् १९३१ तथा १९३४ ई० के मध्य कवि ने अपनी महती सृष्टि की प्रति की। इसी प्रकार सन् १९४६ की तिथि एक युग की समाप्ति तथा नूतन युग के प्रारम्भ का उपक्रम उपस्थित करती है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की इति-भी हो रही थी। सन् १९४२ के आन्दोलन के स्वामी अम्बी तथा प्रभाकरपूर्ण पूर्णसृष्टि थे। देव अर्थों की कारागृहों से मुक्ति हो गई थी और पराधीनता की अंधकाराएँ टूटती दिखाई देने लगी थी। सन् १९४७ में भारतीय स्वतन्त्रता के महान् तथा चिर प्रदीक्षित विज्ञान का प्रस्तोत्र हुआ।

कवि की राष्ट्रपरक रचनाएँ रच्य होने लगी थीं। काव्यशास्त्र ब्रह्मचरि विद्या में उन्मुख होने लगी। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में ही नहीं, अपितु 'नवीन' जो के कवि-जीवन के इतिहास में भी सन् १९१६-४७ की युगसम्मि का गहन तथा घमिष्ठ स्थान है। अतएव इन्हीं भाषाओं पर अल्प-आस की विविधा निर्धारित की गई है।

सभी दृष्टियों से अल्प-आस में कवि ने प्रगति की। उसकी काव्य-संनिधियों ने अपना प्रायस तथा स्वाध्याय प्रकृत कर लिया। परन्तु हा गये और बाघाएँ निर्धारित सत्य की पारखना करने लगी। काव्यरूप मर्मिष्ठ होकर, गहरा बटे।

इस युग में सबसे प्रभावशाली तथा महत्त्वपूर्ण कार्य कवि ने 'उम्मिता' की रचना तथा 'प्राणार्पण' के लेखन द्वारा सम्पन्न किये। इस काल में उम्मिता का अधिकार प्रायः लिखा गया, रचना को पूर्णता प्राप्त हुई। प्रथम कृति के बार लगे इसी काल की है। युग का प्रारम्भ वहीं प्रथम लेखी के अन्ततः से हुआ वही अन्त का मार्ग भी इसी रास्ते के अनुपमन से प्रकृत हुआ। सन् १९४९ में 'प्राणार्पण' अन्त-काव्य लिखा तथा जिसने प्रथम कवि के रूप का अधिकार बनाया। इसी युग में ही कवि का राष्ट्रीय-संवेतनासम्पन्न रूप उभर कर प्राया। आन्दोलन तथा अन्ति के दृष्टिकोण ने भी यह युग भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में सर्वाधिक महत्त्व तथा गतिशील रहा। इसी के अनुकूल कवि का काव्य को रहा।

इस युग में, कवि का अधिकार जीवन कायमूह में ही स्थीत हुआ जिसके परिणामस्वरूप साहित्य-संरचना में भी समय तथा प्रतिभा का अधिक प्रयोग हुआ। अपने समय कवि-काल में 'नवीन' जो ने परिमाण तथा परिणाम के दृष्टिकोण से सर्वाधिक रचनाएँ इसी युग में कियीं। इस युग में ही नहीं अपितु समय जीवन में कवि ने सर्वाधिक रचनाएँ सन् १९४१-४४ के वर्षों में कीं। इस काल-अन्त की रचनाओं में राष्ट्रीय रूप तथा प्रखरता भी उच्च है।

'नवीन' की सन् १९३०-३१ के याजीपुर कारागृह-निवास के परभाव अपनी उपोद्यमि की भाषाओं की भाषाओं की के रूप में सन् १९३२-३३ में कैलाशार कारागृह में रहे। इस अवधि में ही बरेली कारागृह में भी रहे। इस काल-अन्त तथा कायमूहों की रचनाएँ उनकी 'जीवन-मरिचा' या 'आरत-वीड़ा' में संकलित हैं। इस संकलन के अतिरिक्त 'अन्त-कार', 'रिमिरेका' तथा अन्त-कार' में भी कविताएँ संकलित हैं।

कवि के सन् १९३४ के कविता संग्रह अन्त-कार कायमूह में भी स्थीत हुए। इस स्थान पर सन् १९३४ रचनाओं का अन्त कम हुआ और वही की स्वयं कविताएँ 'जीवन-मरिचा' या 'आरत-वीड़ा' 'अन्त-कार', 'विराट की ललकारें' या 'जुर के स्वन और अन्त-कार' में स्थान का कवि। सन् १९३४ व १९३९ ई० की रचनाएँ कारागृह के बाहर कियी गईं और वे 'जीवन-मरिचा' या 'आरत-वीड़ा', 'अन्त-कार' 'विराट की ललकारें' या 'जुर के स्वन' 'अन्त-कार', 'रिमिरेका' 'नवीन बाहाबती' तथा 'स्मरण दीन' में संकलित की गईं।

सन् १९३९ में ही कायमूह जीवन का युग उन्मुख आरम्भ हो जाता है जो कि कविता सन् १९४४ तक चलता है। सन् १९३९ में कवि कुछ समय तक बरेली कारागृह में रहे कि रचनाएँ 'अन्त-कार' में सम्मिलित हैं। सन् १९४० में कवि ने अपना आत्म-साक्षात्कार जीवन स्थीत किया। इन वर्षों की रचनाओं में पाँच संकलन तथा—'रिमिरेका

'अपसक' 'नवाशि' 'विरजन की लसकरें' या 'गुरुर के स्वन' और 'स्मरल शीप' में अपना स्थान पाया।

सन् १९४१ में १९४५ तक 'नवीन' जी नैनी उद्यान तथा बरेली के कारागारों में रहे। सन् १९४१ में नैनी कारागार की कठिनों में मरण मीठों की प्रकाशता रही। सन् १९४२ के विना बेल उद्यान की रचनाओं को 'रविमरेखा' 'नवाशि' 'अपसक' 'नवीन बोझबनी' 'स्मरल शीप' तथा 'प्रसवकर' में अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ। सन् १९४३ की बरेली तथा उद्यान कारागारों की रचनाओं को 'रविमरेखा' 'अपसक' 'नवाशि', 'विरजन की लसकरें' या 'गुरुर के स्वन', 'नवीन बोझबनी', 'प्रसवकर' तथा 'स्मरल शीप' में संकलित किया गया। सन् १९४४ के प्रायः समूचे वर्ष कवि, बरेली के केन्द्रीय कारागार में रहा। इस कारागार में अत्यधिक स्फुट-आव्य मूकन हुआ। इस समय तथा स्थान की रचनाओं में 'रविमरेखा' 'अपसक' 'नवाशि' 'विरजन की लसकरें' या 'गुरुर के स्वन', 'नवीन बोझबनी', 'प्रसवकर' और 'स्मरल शीप' में अपना स्नेह उड़बा। सन् १९४५ तथा ४६ की रचनाएँ भी उपर्युक्त संग्रहों में स्थान प्राप्त कर चुकी हैं।

कवि की सर्वाधिक उपलब्धि तथा प्रकर्ष का युग 'उत्कर्ष-काल' है। इस युग के कवि व्यक्तित्व तथा कृतित्व ने ही, उद्यम-उत्प्रेरक आन्दोलन के इतिहास तथा साहित्य में अपना निष्पिष्ट तथा महिमामय स्थान बना दिया। गीत, मुक्तक, बोध तथा प्रबन्ध, चारों प्रकार की लेखियों में अपने अरमोत्कर्ष को व्यक्त कर, अपने को कृतार्थ एवं पावन कर लिया।

(ग) प्रौढ़ काल—सन् १९४६ से १९६० ई तक की कालखण्ड में काव्य ने प्रौढ़ता तथा अधिष्ठातृ-श्रेष्ठता प्राप्त किया। कविता में तीव्रता तथा शिथिलता का गर्ह। ऐसी गम्भीर संघर्ष तथा साधु हो गई। भाषा में पूर्ण निहार का गया। कवि ने अपने निर्माण-काल में उर्ध्व की प्रथम प्रकाश किया था। यह प्रकृति धीरे-धीरे कम होने लगी। 'उत्कर्ष-काल' में इसका आधिक्य प्रभाव रहा। प्रौढ़काल में आकर इस कृति से पूर्व मुक्ति प्राप्त हो गई। कवि के संस्कृतनिष्ठ भाषा के लंकार प्रौढ़ काल में आकर अठरत की कृति निहार तथा विहार पड़े। इस युग में कवि अर्ध-अरती के चरों के प्रयोग का कट्टर विरोधी हो गया और संस्कृतमयी भाषा का पूर्ण समर्पण तथा संवर्धन। इस प्रकृति के विकास तथा अन्तर की कक्षा की 'कुंठन' की भूमिका का 'नवाशि' या 'उन्मिता' को भूमिका के पारलौकिक तुलनात्मक सम्बन्ध से देखा व चरखा का उज्जा है। भाषा सम्बन्धी अन्तर प्रौढ़काल की प्रतिनिधि निष्पिष्टता है।

इस युग में दार्शनिक अर्थ-बोध में अपना प्रमुख कार्य-निर्वाह किया। कवि रहस्यवादी तथा चिन्तन परक रचनाओं के सिद्धांतों में अधिक संलग्न हो गया। डॉ० रामप्रकाश त्रिबेदी ने लिखा है कि 'नवीन' को के अर्थ की परिगति उनकी साम्प्रतिक रचनाओं में हुई है। अपनी जीवन के प्रायः अन्तिम १५ वर्षों में कवि का मन पारलौकिक तत्वों की ओर अग्रगण्य हुआ और उतने गम्भीर आस्था तथा रहस्य भावना से प्रेरित मधुर गान गाये। 'इन सम्प्रदायपरक रचनाओं में कवि ने रहस्य के साधना पक्ष की अनेक साधना तथा विज्ञाना पक्ष अधिक संवर्धन

किया। इस युग के काव्य में निराशा का स्वर भी बढ़ गया। इस काल के काव्य की पृष्ठभूमि में, सांसारिक व्यवसाय नैतिक दुःख, सामाजिक क्लेश कम-बहुत पारिवारिक संस्कार तथा युग के समाज के प्रति निराशामूलक मास के ध्वनय सहज ही परिलक्षित हो जाते हैं।

धम्मपत्त के प्रतिरिक्त, राष्ट्रीय तथा धार्मिक रचनाओं का भी मुनन हुआ। 'बिनाबा-स्तवण' में राष्ट्रीय काव्यपाठ के सांस्कृतिक पार्श्व को अभिव्यक्ति प्राप्त हुई। निर्मित तथा उरु-कास की प्रवेष्टा, इस युग में कविनाओं का मुनन कम हुआ। कवि की बराबरी-सुखा शैतिक संकट एवं पारिपरिक दुःखता ने प्रमुख कारण एकत्रित किये। सन् १९५९ के पश्चात् 'नवीन' जो काव्य-मुनन प्राप्त बन्द हो गया। बार बरों तक पलायन तथा क्लेश के कारण कवि की बाणी भी प्रायः विमुक्त रही। बाणी के उपासक पर इस प्राधात ने अभिव्यक्ति तथा लेखन के स्रोत को ही बहमूल से बिनष्ट कर दिया। सन् १९५६ में कवि-जीवन की समाप्ति के उपरान्त सन् १९६० में उनके पारिपरिक जीवन की भी इति-शी हो गई और 'मात्रम तुम हो गए पद्य।

प्रोफ़ेसर को रचनाओं का प्रथम 'सिखन की सलकारों' या 'गुपूर के स्वन' 'कविति', 'स्मरण वीप तथा प्रत्येक में संकलित किया गया है। इसी कालावधि में भारत के स्वतन्त्र होने पर रचित तथा कवि की बहुकृत एवं प्रसिद्ध रचना 'मह हिन्दुस्तान हमारा है मह भारतवर्ष हमारा है' धमी भी किसी संग्रह में सम्मिलित नहीं की गई है। कवि की स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीय बारा की मह प्रतिनिधि रचना है।

उपमहा—'नवीन' जो काव्य भूमि का 'निर्मास-कास' ने विचिन किया उसकी उर्वर शक्ति बड़ाई और बीजों ने संकलित हाकर राने-राने वीपे का रूप धारण कर लिया। 'कल्प-धन' में, समय पाकर, बड़ी पीसा विद्याल बट-बुव में बरिण्ट हो गया और 'प्रोफ़ेसर' में कलावित तथा गर्वोपवी होकर, इतिहास का प्रहरी बन गया।

'नवीन' जो के उपर्युक्त युवावट कम तथा स्वान क्रमागत काव्य का मुन्यकन करने पर, एक रिवा के हो कतिपय निरुप प्राप्त होते हैं। कवि की प्रकाशित कृतियों विशेषत 'उमिरीया, धवलर' तथा 'कविति'—(स्वीकि इनमें विविध प्राप्त हातो हैं और ध्विक काव्य संकलित हुआ है) के आधार पर—उपासक विवि विहीन (रचनाओं सहित) सन् १९५४ में श्री इयाम परमार ने लिखा या कि "सन् १९६० और १९६१ के काल के बीच लिखता ही एक विद्या बन्धन, बैठका और नर्मदा में बह गया पर नवीन की दोसो में नवीनता नहीं आई।"

रचना-बहुमता के इतिहास से सन् १९६० ३१ तथा १९५३ ११ ई० के नाम-रानों को सर्वाधिक महत्ता प्राप्त की जा सकती है। इन बरों में कवि ने बहुत लिखा। सृष्ट काव्य रचना का बाह्य ही, इन बरों की उपमिषयी है। प्राप्ति में कवि ने बय विद्या परन्तु बा में अनुगत विचिन होना क्या मया। उपर्युक्त बरों में लिखने की ध्विकता का कारण धार्मिकता की वीपना पाठक धावात तथा प्रबन्ध-नार्द-विहीनता ही प्रतीत होता है। स्वतन्त्र

१ श्री इयाम परमार—'बोला' 'नवीन' और उनकी कविनाएँ सन् १९५४ पृष्ठ ४२।



भारत की अपेक्षा पचासोन भारत में कवि ने बहुत अधिक लिखा। कवि की स्फुट रचनाएँ उन वर्षों में स्वल्प मात्रा में उपलब्ध होती हैं जब कि वह किसी प्रबन्धरूपि के लेखन में व्यस्त रहा है। ज्यादातर शर्मा, सन् १९२९-३१ तथा सन् १९३२-३४ के वर्षों में 'उमिष्ठा' लेखन प्रारम्भ कर १९४१ के वर्ष में 'प्रासादार्थ' लेखन के कारण। सन् १९३० से १९४४ ई० के मध्य कवि ने बहुत लिखा। यही कवि का 'नवीन काव्य' भी रहा है। सन् १९४० के बाद तो कवि सोच सूझता एवं रचनाएँ निरस्त होती दिखाई देती हैं। इस कथन का धारण रचनाओं की संख्या मात्र ही है।

'नवीन' भी ने काव्यमूर्तों में बहुत लिखा और सामान्य नागरिक जीवन में अपनी व्यस्तता तथा राजनैतिक कार्यकलापों के कारण वे बहुत कम लिख पाते थे। सन् १९२५ से १९२९ ई. की कालावधि में कवि ने सबसे कम लिखा। काव्य रचना के अनुपात के दृष्टिकोण से यह सुष्कम्भ प्रमाणित होता है। इस काव्य की धम्य रचनाएँ ही प्राप्य हैं। काव्यमूर्तों में उनको दो प्रबन्ध-कृतियों के प्रतिरिक्त स्फुटकाव्य का लगभग २० प्रतिशत लिखा गया। इसीलिए श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने यह प्रस्तावित किया था कि अगर वर्तमान भारत सरकार में कुछ भी साहित्यिक कल्याण-शक्ति होती तो वह नवीन की को बेस में बन्ध कर देती और यह कहती 'जब प्राप्त गणेश का के साथ पन्द्रह वर्ष लिखकर हमें देवे और सो-सो मिष्टि जेनों की तरह की बद्धिया कविताएँ, उन प्राप्त का सुनकार होना।' 'यदि काव्यमूर्तों में उनको सर्वाधिक रचनाओं के सुजन का श्रेय केंद्रीय काव्यकार, बरेली को प्राप्त होता है जिसमें काव्यमूर्त साहित्य का धारास लिखा गया। इसका कारण यह था कि कवि को यह काव्यमूर्त में तीन बार ( सन् १९३१ १९३९ तथा सन् १९४३-४५ ई. ) जाने का अवसर प्राप्त और बीच कास तक रहना पड़ा। अनुपात के दृष्टिकोण से बरेली के परचात् माजीपुर, उषाच केरावार मैत्री सलतउ पत्नीवत् तथा कानपुर की उपोभूमियों के कर्नाक पाते हैं। इन सब वर्षों में समग्र प्रबन्ध लेखन को अनुपात में सम्मिलित नहीं किया गया है स्फुट रचनाओं को ही धारण बताया गया है।

सामान्य नागरिक-जीवन में सर्वाधिक रचनाएँ भी मण्डल कुटीर, प्रताप प्रेस कानपुर में लिखी गईं। इसके परचात् गई दिल्ली का कर्नाक पाता है। रेल-यत्र में भी काफी रचनाएँ (दिल्ली कर्माक के धनतर) लिखी गईं, जिससे भी सूचित होता है कि कवि व्यस्तता के कारण अधिक काव्य-सुजन नहीं कर पाता था और प्रकाश के जालों में चाहे वे काव्यमूर्त के हों या रेल-यत्र के धरने हुए कवि काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त करने लगता था। कवि की कतिपय रचनाएँ, रचना-विधि एवं लेखन-स्थान से विहीन हैं जिनका काल-स्थान निर्धारण अनुमान तथा सम्भर्ष से किया जा सकता है। विपुल रचनाओं की विधि तथा स्थानबद्धता को देखते हुए, इन रचनाओं की विधि विहीनता प्राप्ति का विषय नहीं बन सकती।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'नवीन' के काव्य का धारण तथा धम्य एक ही रूप को समाहित करने हुए है। 'जीव ईश्वर वासिष्ठा' विषय पर लेखनी बसाने वाला किशोर बालक कवि, धम्य में प्रौढ़-साधनिक बनकर 'जीवन-मूर्ति' का विस्तारण का धारण सत्य को विरगित कर अपने कवि-जीवन से विभा लेता है। धारण तथा धम्य, दोनों ही

एक सूत्र में सुवि कवि-जीवन-मासा की सीमाएँ निर्धारित कर रहे हैं। इनके मध्य में प्रेमकाम्य का दीर्घ मोती प्रवृत्त है और इन सबको उपदीपता का सम्बन्ध अपने सूत्र स्वी मुहुर्य मालिपन में मान्य किया है।

काव्य-संशोधन एवं परिवर्द्धन—'नवीन' की भी किसी भी प्रकाशित कृति को निरीक्षण का सीमायुक्त प्राप्त नहीं हुआ न तो उनके जीवन-मास में और न उनके मरणापरान्त यही तक। एतदर्थं लगभग परिवर्द्धन का व्यवहार उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। उनमें संशोधन तथा परिवर्द्धन का यह रूप प्राप्त न होकर, दुसरा ही प्रकार उपलब्ध होता है। उन्होंने अपनी पूर्ण विद्वित्त प्रयत्न विषय पत्रपत्रिका में मुद्रित प्रकाशित रचनाओं को संपादन करने की प्रवृत्ति में संशुद्धन पूर्ण कहीं-कहीं परिलक्षित किया था। इस प्रकार के संशुद्धन मासा में प्राप्त नहीं होते। इस प्रणाली-संग्रहण के दृष्टान्त कवि की प्रकाशित काव्य-कृतियों के पाठ्यविधियों में सुदृष्टित हैं जहाँ कवि ने स्वतः प्रयत्न विद्वित्त को निर्देशित करके रचना में संशुद्धन प्रस्तुत किया है। इस प्रकार के दृष्टान्त 'सिखन की समझें' या 'नूर के स्वन' ' 'मौल-मरिच' या 'पावस-गीता' ' और 'प्रसवकर' ' की रचनाओं में उपलब्ध है।

प्रकाशित कृतियों में भी संशुद्धन रूप हुआ जा सकता है। पूर्ण प्रकाशित कविता तथा उसके संशुद्धन रूप के सुपनात्मक प्रयत्न से यह स्थिति स्पष्ट ही सकती है। प्रकाश कृतियों 'उम्मित' ' तथा 'प्राणार्ण' ' में भी कवि ने संशुद्धन किये हैं।

सामान्यतया 'नवीन' को द्वारा किये गये संशुद्धन-परिवर्द्धन के निम्नलिखित प्राकार बताये जा सकते हैं—( क ) भाव-परिवर्द्धन ( ख ) भाषा-परिवर्द्धन ( ग ) शब्द-परिवर्द्धन ( घ ) अर्थ-परिवर्द्धन ( ङ ) अर्थ परिवर्द्धन।

उपर्युक्त परिवर्द्धन प्रयत्न परिवर्द्धन के दृष्टान्त कवि की प्रकाशित तथा प्रकाशित कृतियों के आधार पर, यहाँ विचारणीय है।

(क) भाव-परिवर्द्धन—अपने भावों तथा कथन को प्रभावपूर्ण समाधान तथा मर्मस्पर्शी बनाने के लिए कवि ने भावों में आंगिक परिवर्द्धन या संशुद्धन किये हैं। उदाहरणार्थ—

(१) नून कथ—“नून बरल, धारें व्याकुस, तिय बिदिपत, मुघ दम्मान।”<sup>१</sup>

<sup>१</sup> १। कविता श्लोक १ 'अपानोसने बर'स्त में २। ३३ की कविता, 'नून मुर्तिया' ३। १५ की कविता, 'कसल ? कोशुम् ?'।

२ १। ३५ की कविता 'रिचरिरी' २। ६० की कविता 'मिलन साध यह हनकी कनी ?' ३। ६३ की कविता 'बग्न ज्योति', ४। ६५ की कविता 'पावस-गीता', १। ७२ की कविता 'रिचरि बीचिय', ६। ७६ की कविता 'मौल', ७। ७७ की कविता, 'पत्रियाल बजाने बाने' ८। १०५ की कविता, 'निरीक्षित मेह'।

३ १। १८ की कविता, 'नरक-विधान'।

४ देविण, अन्वय रररर।

५ देविण, अन्वय लज्ज।

६ 'बोला' अन्वय बोली, मार्च, १९३३ मुद्रण।

संशोधित रूप— 'तम करसु, पाँचों प्राकृत, हिय विहात् सुख प्रमान ।' १

(२) मूल रूप— 'भो लजबन्ती, सो भाये हैं हम वेने हिय बाल ।' २

संशोधित रूप— 'भो लजबन्ती, से सो भाए वेने हम हिय बाल ।' ३

पाँचों को सटीक तथा स्पष्ट बनाने के लिए, ये परिवर्तन इष्टव्य हैं ।

(घ) माया-परिष्कार— 'नबीन' की ये माया का परिष्कार प्रमुख तथा प्रविष्ट रूप में किया है । संशोधन एवं परिवर्तन का यह मुताबिक है । उर्दू के शब्दों के स्थान पर हिन्दी प्रथम संस्कृत के शब्दों की स्थापना की गई है । इसके अनेक उदाहरण इष्टव्य हैं—

(१) मूल रूप— 'बर भरोखे से फुल भाँको, हुलसा हो ये प्राण ।' ४

संशोधित रूप— 'वनिक भरोखे से फुल भाँको हुलसा हो ये प्राण ।' ५

(२) मूल रूप— 'बर कहने के पहले गर तुम  
हिम्मत करके वहाँ प्यारो,  
उनमें मेहनतकश के बच्चों,  
को पढ़ता है बिन भर रहना ।' ६

संशोधित रूप— 'बर कहने के पहले यदि तुम,  
साहस करके वहाँ प्यारो ।  
उनमें धमिकों के बच्चों,  
को पढ़ता है बिन भर रहना ।' ७

(३) मूल रूप— 'है दुनिया बहुत पुरानी यह  
रच डालो दुनियाँ एक मर्द,  
जिसमें सर ऊँचा कर बिचरे,  
इस दुनिया के बेताज कई ।' ८

संशोधित रूप— 'यह सृष्टि पुरानी पड़ी वन्दु,  
प्रथम तुम रच डालो सृष्टि मर्द ।  
जिसमें उन्नताशि रहे बिचरे,  
ये मुकुट हीन मठ माय कई ॥' ९

१ 'रसिमरेजा' भागी, पृष्ठ ४७ ।

२ 'बीला', वही ।

३ 'रसिमरेजा', वही ।

४ 'बीला' मार्ग, १९१४, पृष्ठ ३२१ ।

५ 'रसिमरेजा', पृष्ठ ४७ ।

६ 'प्रतयंकर', २९ वीं कविता, 'अरक विधान' ।

७ वही, संशोधन ।

८ वही, पृष्ठ ३६५ ।

९. पाण्डुलिपि में संशोधन ।

कवि के काव्य में, माया सम्बन्धी परिवर्तन ही सर्वाधिक रूप में पाये जाते हैं। इसका मुख कारण यह है कि कवि के माया सम्बन्धी दृष्टिकोण में धाम्नुष परिवर्तन भाषा या और संशोधन परिवर्तार के माध्यम से, दृष्टिगोचर होती है।

(ग) ध्वज-परिष्कार—कवि ने कतिपय स्थानों पर, शब्दों को घटा-बढ़ाकर ध्वज को भाषाओं में परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। इस क्रिया के द्वारा उसका अभिप्रेत, धर्म की सम्बन्धिता तथा स्थिति का स्पष्टीकरण प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ—

मूल रूप—“उत्कण्ठित मायना का कता यह धनुषित विकृत प्रपल ।”

संशोधित रूप—“उत्कण्ठिता मायना का घट,

केता धनुषित विकृत प्रपल ।”<sup>१</sup>

उपर्युक्त पदांशों में शब्दों के कम तथा विन्यास में भी परिवर्तन उपस्थित किया गया है।

(घ) अतिरिक्त-परिष्कार—कवि ने अपनी अभिव्यक्ति को उपर्युक्त एवं प्रभावोत्पादक बनाने के लिए, शब्दों को बदल कर अथवा अन्य विधियों से, अतिरिक्त-परिष्कार उपस्थित किया है। उदाहरणार्थ—

(१) मूल रूप—“यह कठोरता इतर हृदय में बेठी हुई पत्तोत्र रही ।”<sup>२</sup>

संशोधित रूप—“यौ कठोरता इतर हृदय में,

बेठी हुई पत्तोत्र रही ।”<sup>३</sup>

(२) मूल रूप—“खड़े हैं फिर भी हम धनवान ।”<sup>४</sup>

संशोधित रूप—“खड़े हैं हम कब से धनवान ।”<sup>५</sup>

(३) मूल रूप—“खड़े हैं हम इसीलिए धनवान ।”<sup>६</sup>

संशोधित रूप—“खड़े हम इसीलिए धनवान ।”<sup>७</sup>

(४) मूल रूप—“घात्र बने हैं मेरे पयो, मुझ बेबन के सफल उपकरण ।”<sup>८</sup>

संशोधित रूप—“घात्र बने मेरे परिपन्थी, मुझ बेबन के सफल उपकरण ।”<sup>९</sup>

(ङ) अन्य परिवर्तार—उपर्युक्त परिवर्तारों के अतिरिक्त कवि ने अन्य कई छोटे-मोटे परिवर्तन उपस्थित किये हैं जिनपर विवेक महत्त्व नहीं है। कहीं-कहीं विराम-चिह्नों का उचित प्रयोग अभाव है, उदाहरणार्थ—

१ ‘हुंहुं’, पृष्ठ ८ ।

२ ‘बना’, सुताई १९२४, पृष्ठ २९ ।

३ ‘हुंहुं’, पृष्ठ ८ ।

४ ‘धीला’, मार्च १९३५, पृष्ठ ३२३ ।

५ ‘परिपरेका’, पृष्ठ ४८ ।

६ ‘धीला’, मार्च, १९३६, पृष्ठ ३२३ ।

७ ‘परिपरेका’, पृष्ठ ४८ ।

८ ‘घात्राभो कब’, कीर्ण, मार्च, १९४६, मुद्रापृष्ठ ।

९ ‘घनक’, ‘आल. तावते बने कबक’ ...

मूल कर — "दृग-गत स्मृति ता यी ही पर भव जाय उठे ये बबल संस्मरल,  
धो ये स्वर्ग नासिका रसना समी, कर उठे स्मरल अनुकरल।"<sup>१</sup>

संक्षोभित रूप — "दृग-गत स्मृति ता यी ही, पर, भव जाय उठे ये बबल-संस्मरल,  
धो यह स्वर्ग नासिका रसना, समी कर उठे स्मरल-अनुकरल।"<sup>२</sup>

निष्कर्ष — संघोवन-परिवर्तन के द्वारा कवि के काव्य-विकास, यैसी तथा विचार-वाराधों के क्रमिक साधनों का परिचय प्राप्त होता है। 'नवीन' भी के परिवर्तनों में मूलतः माया-परिष्कार की चेष्टा ही सर्वत्र ध्यातव्य है। यह उनका सुदृढबल रूप है। उनके 'प्रौढ़-प्रकृत' का यह कथित कथन है। यह प्रश्न भी विचारणीय है कि क्या सभी रचनाओं में परिष्कार करना उचित तथा वांछनीय प्रतीत होता है? कई कविताएँ ऐसी होती हैं जिनका क्यापि तथा काव्य इतिहास में स्थान बन चुका होता है और ऐसी रचनाओं के माध्य परिवर्तन या अन्य परिष्कार से एक-दूसरी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कवि की 'कस्तूर? को-श्रुत्य? कविता का यही स्थान है जिसका उठने मायागत परिष्कार कर जाता है। छात्र ही कठिणय सख्य अपने प्रकृत तथा प्रकृत रूप में ही मध्ये समते हैं और उनके परिष्कार से, काव्य की सहजता तथा हृदयसहिता पर भी भावात सगता है। कवि ने 'बायें करमों के साय बसो में 'करमों' के स्थान पर बरणों का जो प्रयोग कर दिया है, यह कुछ उचित प्रतीत नहीं होता। यह कृति कवि के प्रतिष्ठय साग्रह मोह तथा भाव-प्रबलता की परिचायिका है।

'नवीन' भी के काव्य में परिष्कार की पर्याप्त आवश्यकता की परन्तु वे अपने मन-मौखीयन प्रतिष्ठय व्यस्तता तथा अन्य दायित्वों के कारण, ऐसा न कर सके। उनके व्यक्तित्व तथा कार्य-बहुपता को देखते हुए, इस आवश्यकता की माधेय में परिणित नहीं किया जा सकता। यह कवि की उच्च नैर्घमिक तथा सुवीन परिस्थितियों की जिनको, इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करते समय, हम अपने प्रबलान से घोसल नहीं कर सकते। कवि का समग्र काव्य अपने प्राकृतिकरूप में बन की विस्तृत कहीं मधुर तथा कहीं विकरल कहीं उबड़-काबड़ तो कहीं सीम्य सिष्ट और कम-कममयी छटाएँ तथा हृदय-हृत्प्राबलियाँ उपस्थित करता है, जिसे नासिका के कृत्रिम तथा सीमित रूप में धांसिधित करके वाली की कठरती की आवश्यकता अनुमृत नहीं हुई। कई वस्तुएँ अपने मौखिक तथा प्राकृतिक रूप में ही मनी प्रतीत होती हैं और 'नवीन' का काव्य उतका येष्ठ निवर्तन है।

प्रारम्भिक काव्य : पूर्वाभास — कविबर की बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' के प्रारम्भिक काव्य के प्रस्तुत हम उस काव्य-साहित्य को समाविष्ट कर सकते हैं जो कि उनके 'निर्मास-कास' ( सन् १९१५-१९१९ ) के पूर्वार्द्ध, के कठिणय वर्षों ( १९१५-१९२९ ) की सीमामों में था सकता है।

कवि 'नवीन' ने 'प्रतिमा' में प्रकाशित 'वीन-ईस्वर बार्तासाय' विषय पर प्राधृत रचना को अपनी प्रथम रचना माना है।<sup>३</sup> यह भाषाहिन शीर्षक से प्रकाशित हुई थी।<sup>४</sup> प्रकाशन के

१ 'साधानी कल', मार्च, १९५६, पृष्ठ ५८।

२ 'विमान भारत', अक्टूबर, १९३७ पृष्ठ ५८६, पृष्ठ ३६४, कवि द्वारा संशोधन।

३ 'मैं इनसे मिल', दूसरी किस्त, पृष्ठ ४८-४९।

४ 'प्रतिमा', अगस्त, १९१८, पृष्ठ ५८।

दृष्टि होगी से अनेक १९१२ में 'साबाहन' शीर्षक से प्रकाशित हुई, वहाँ 'नबीन' की की 'दादा' शीर्षक कविता भी इसी विधि में प्रकाशित हुई थी । 'सम्भव' कवि ने 'साबाहन' कविता पहले लिखी हो और इस दृष्टिकोण से, यह प्रथम कविता मानो जा सकती है ।<sup>१</sup>

१९१८ ई० में कानपुर में प्रथम 'प्रथम' कविता लिखने के पूर्व भी 'नबीन' की सम्पादन करने लगे थे । यद्यपि ये रचनाएँ कहीं प्रकाशित नहीं हुई और कवि की दृष्टि में

१ 'सरस्वती', अनेक १९१८, मुद्रण, पृष्ठ १६६ ।

२ 'प्रतिभा', मासिक, के मन्मथ, १९१७ भाग १, अंक ८, पृष्ठ २४८ के अन्त में श्री बालकृष्ण शर्मा के नाम से 'दे वह पर' शीर्षक का छन्दों वाली कविता प्रकाशित हुई थी । यह कविता 'नबीन' की की वही है ।—क्योंकि कवि की प्रथम प्रारम्भिक मुद्रित प्रकाशित रचनाओं में सिर्फ 'नबीन' नाम ही मिलता है, इसकी शैली भी 'नबीन' शैली के सादृश्यपूर्ण नहीं है और कवि द्वारा प्रथम सूचना के प्रकाश में, यह कविता प्रारम्भिक भी नहीं कह सकती । उक्त पुग में 'श्री बालकृष्ण शर्मा' नामक एक प्रथम लेखक को ये कविता रचनाएँ पुरा करती थीं ।—देखिये, 'प्रतिभा', अक्टूबर विद्यार्थी स्मृति अंक श्री बालकृष्ण शर्मा का लेख 'आत्मिकारी नेता के साथ एक दिन', पृष्ठ ४१-४२ । इस कविता को इसकी प्रोफ़ता भी उक्त दिनों कवि में नहीं था पाई । मुक्तार्थ यह कविता उद्धृत है । दे अन्तः ।

१

गोरों को प्राप्त अर्पण जिये  
मग्न रस से मत हो तुने प्रति,  
किन्तु अद्विज प्रेम की पादा कभी-  
क्या भरे ? तब हृदय पर है वही ?

२

रसमयित नदकेन्द्र के उर बीच ही,  
पैठकर निज मयुर स्वर आनाम से,  
हृदय सम्पीलय सम्मिश्रित धान की ।  
भूककर तु जा रहा या एक दिन ।

३

धार्मिक रसपूर्ण का जब तक समान,  
ये उते तब प्रेम दर्शन तब सुन्दर,  
किन्तु जब अद्विज गुणधानन हुआ,  
बस, तभी तै नू चिन्ताय कम क्या ।

४

क्यों न हो, स्वार्थीय कर भी क्या कर्मा—  
रिप्य प्रेमालोक को है वेधने ?  
घट अन्तुष्ट प्रेमोद्योग में,  
अमर विहरता क्या छोटी दुन्दर नहीं ?

इतना कोई महत्व भी नहीं था, इसीलिए उसने इन कविताओं के प्रथम सूत्रन की रचना होने का इस्तेफा नहीं किया। कवि ने उस रचना को ही 'प्रथम' कविता की संज्ञा प्रदान की जो प्रकाशित भी हुई। परन्तु 'नवीन' काव्य के खोज तथा समीक्षा में इस कविता के पूर्व की रचनाओं का भी बड़ा महत्व है।

उन्मत्त के अपने विद्यार्थी-काल में कवि की यह प्रतिभा अंकुरित होने लगी थी। 'नवीन' की ही सर्वप्रथम उपलब्ध कविता यह है जो कि उन्होंने सन् १९१५ में, माधव कासेब उन्मत्त के उच्च माध्यमिक छात्रा विनाय की अपनी एक हस्तलिखित पत्रिका 'विद्यार्थी' में लिखी थी। यह कविता दिनांक २०-८ १९१५ को 'विद्यार्थी' पत्रिका में 'सूर्य के प्रति' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी—

हे सारकराज तुम्हें धतवार प्रलाम हमार,  
करते हो तुम दूर रात का दीपियारा।  
जर बेते हो सुप्रकाश से जग सार,  
है कितना विश्व पर उपकार तुम्हारा।  
पुन बेते हो उपवेश शीघ्र बलने का,  
कर्तव्य भाव से प्रालस्य दूर करने का।  
ज्ञान की प्रज्ञा से प्रज्ञान-तम हरने का  
सकार्य-सेव से जीवन को मरने का ॥'

ऐतिहासिक दृष्टि में 'नवीन' की ही यह सर्वप्रथम कविता बोधित की जा सकती है। काव्य-सैली के विकास को निरूपित करने के लिए, भावि भवत्वा के काव्य की भवक प्राप्त करने और समुचित सुझावों के लिए कानपुर जाने के पूर्व लिखी गई कविताओं का अपना स्वान है।

इस प्रकार सन् १९१५ से कवि काव्य का प्रारम्भ मानने में कोई आपत्ति प्रतीत नहीं होती। सन् १९१५ १९१६ ई० की मध्याह्निक का काव्य अभी तक अप्रकाशित, प्रकाश तथा उपेक्षित ही रहा है। इन हस्तलिखित रचनाओं की अपनी पृथक महत्ता है।

वर्गीकरण—'नवीन' के प्रारम्भिक काव्य (सन् १९१५ १९२१) में निम्नलिखित प्रकार की रचनाएँ प्राप्त होती हैं—(क) मध्याह्निक-नरक रचनाएँ, (ख) रात्रि-नरक रचनाएँ और (ग) प्रकृति-नरक रचनाएँ। इत्येक काव्य प्रकृति का संतुष्ट विवेचन निम्नरूपेण है।

(क) प्रेम-अहितपरक रचना—कवि की प्रेममस्तिपरक रचनाओं में अपने प्रारम्भिक दर्शनशास्त्र के अध्ययन, पारिवारिक वैयक्तिक संस्कार, विस्तृत भावि का प्रभाव दृष्टिबोधर होता है। इन रचनाओं में मध्याह्निक की महनता या दुःखता प्राप्त नहीं होती बल्कि यह प्रकृति वर्म के आच्छादन को लेकर हमारे समक्ष धाती है। इस प्रकार की रचनाओं में भी, कवि ने भावना को ही अधिक प्रभव प्रदान किया है।

१ कवि के बाह्य तथा एवं सहवासी की काशीनाथ बलचन्द्र माधवे धर सराय, एतनाम प० प्र० के (दिनांक २०-८-१९१९) पत्र के द्वारा, लाभार प्राप्त।

प्रेम क कई रूप होते हैं—पदा राष्ट्रप्रेम, प्रकृति-प्रेम वास्तव्य आदि । कवि ने वास्तव्य का भी चित्रात्म किया है ।<sup>१</sup> इस प्रकार हम देखते हैं कि इस कवि की रचनाओं में प्रेम भक्ति धारमहर्षण, वास्तव्य आदि के रूप इष्टिगोचर होते हैं । कवि की इन घेणी की रचनाओं ने ही धावे बाकर दम्याय का रूप पहलु कर लिया । इन रचनाओं में भावप्रबणुता की प्रधानता है । इन संकृतों ने ही स्वल्प विकास प्राप्त किया ।

(ख) राष्ट्रपरक रचनाएँ—'नवीन' की क काव्य में राष्ट्रीयता के बीज प्रारम्भ से ही प्राप्त होते हैं । ये बीज कवि को अपने अद्वैत बातावरण तथा उष प्रकृतियों के द्वाय स्वत प्राप्त हो गये । कानपुर में आकर कवि को सम्भू बातावरण प्राप्त हुआ जिसका उनके तक्षण मानस पर गहल प्रभाव परिकल्पित हुआ । कवि के तक्षण मन में विगत भाव के पौरव के साथ ही साथ, वर्तमान भाव के दुर्बला के घोर भी निहारा । कवि ने अपने काव्य के माध्यम से भाव-भावा के चरणों में अपना उपहार धरित किया है—

माह कर के दिन बुद्धित हो बेध से हो क्षीय ।  
सोम मन्दिर समित इस दुःखितगु से वो हीन—  
सुगन्धमुखा नयन-ध्वजति में लिये मोनार,  
हे रहा है मरत भू के चरण में उपहार ।<sup>२</sup>

कवि ने विगत गरिमा के साथ ही साथ, वर्तमान क्षीनता का भी चित्रण किया है—

यह कुतुब मोनार नीरव चिह्न य सामान,  
कर रहे हैं बस हमारी पत-भी का गान  
किन्तु हम हैं हय कर रहे हैं हंगम बल में स्तान ॥<sup>३</sup>

कुतुब मोनार के माध्यम से कवि, प्राचीन एव नवीन भाव की तुलना उपस्थित करता है—

माह कुतुबक्षीन की गौरव बटा की मूर्ति ।  
कर रही है धाव क्या उत विषय को सम्पुति ।  
बुध नहीं ! पर ही विद्यातो है मलक प्राचीन ।  
देख तुलना बुद्धि रहती—'धाव हम घों डीन ?'<sup>४</sup>

कवि की प्रारम्भिक रचनाओं में राष्ट्रीयता के साम्प्रतिक बल का ही बहुमता है । एतन्निष्ठ का ने धयो धाने पक्ष नहीं पसाते थे । प्रारम्भिक रचनाओं में प्राप्त राष्ट्रीयता के स्वरूप में धनी-धनी प्रमुख तथा विद्यात रूप धारण कर लिया ।

(ग) प्रकृति-परक रचना—'नवीन' की ने धानी धारम्भिक रचनाओं में प्रकृति क

१ 'मिना' सुरती की लान, धागत १९९९, पृष्ठ ११४ ।

२ वही कुतुब मोनार कुन, १९२०, पृष्ठ १०५ ।

३ वही, पृष्ठ १०४ ।

४ वही, कुन १९२०, पृष्ठ १०५ ।



सुष्ठु एवं सरस रूप प्रस्तुत किये हैं। कवि ने प्रकृति को घालमाल एव उद्दीपन के ही रूप में ग्रहण किया है।

निष्कर्ष—'नवीन' की के प्रारम्भिक काव्य का विविधत्व अध्ययन करने पर विद्यित होता है कि महाकवि निराशा के समान, उन्होंने भी प्रारम्भ से ही व्यक्तिवादी वैधपूर्ण तथा सरस रचनाएँ लिखीं। द्वितीय-युग में अपने काव्य के समारम्भ करने के बावजूद भी, उनके काव्य पर सुगीन प्रवृत्तियों के विशेष चिह्न दृष्टिगोचर नहीं होते।

कवि की रचनाओं का भाव-यत्न मत्ति तथा राष्ट्रीयता से घोट-घोट है। प्रकृति सम्बन्धी रचनाओं ने साक्ष्य की सरिता प्रवाहित की है। कला-यत्न ने भी अपने विकास के चिह्नों को यथास्थान प्रकट किया है। कवि को संवीत का प्रारम्भ से ही ज्ञान वा हसतिप उलने शास्त्रीय ढाँचों का भी प्रभय ग्रहण किया। जवकी 'कुतुब मीनार' रचना 'राग सोरठ' में लिखी गई।<sup>१</sup>

उनके प्रारम्भिक काव्य में नीति-श्लोकों को ही प्राधान्य मिला है। डॉ० सुधीर ने उनकी 'तारा' रचना को 'पर गीत'<sup>२</sup> की संज्ञा से विमुद्रित किया है।<sup>३</sup> उनकी कविताएँ प्रारम्भ से ही महान की प्रतिकारिणी हो गईं थीं। उनकी अनेक प्रारम्भिक रचनाएँ यत्र-यत्रिकर में सुलभपुष्पों पर प्रकाशित हुईं यथा—'आवाहन' तारा 'बसंत' 'संयोग' 'मुरली की राग', 'मिलन', 'बूँदें धाँसू' आदि। कवि में रचनादिशि तथा स्वान प्रकृत करने के सङ्घर्ष ही, कल्पित कविताओं में घामे विद्रिष्ट, कठिन वा सांकेतिक दृष्टियों के धर्म पाठ टिप्पणी में देने की प्रकृति घातक रही। उपर्युक्त कविता 'तारा' में लेकर का धर्म 'किरण' दिया है। 'संयोग' कविता में 'बासावण' के धर्म रवि तथा 'बीबन' के धर्म को जल तथा 'बीबन' के रूप में स्पष्ट किया है।<sup>४</sup>

कवि अपने धारकी मूकत्व पीतकार ही निरूपित करता था।<sup>५</sup> कहना न होगा कि उतका कवन अपनी प्रारम्भिक काव्य-रचना से ही अरिवाच होने लगता है। 'नवीन' की के प्रारम्भिक काव्य में उनके काव्य विषय, विषय-साधना तथा धर्मियों के उद्बोधन के श्रोतों को सरलतापूर्वक रूँझ वा सजता है। कवि के ससक्त तथा प्रसविष्णु काव्य की मूलभूति भी अपनी अक्षतानुसार, प्रसर तथा हृदयस्पर्श प्रमाणित होती है।

'प्रमा' तथा 'प्रताप' में प्रकारित रचनाएँ—'प्रमा' तथा 'प्रताप' का कवि के व्यक्तित्व तथा काव्य-निर्माण में अनुपमेय स्थान रहा है। जहाँ 'प्रमा' ने 'नवीन' की के

१ 'प्रतिभा', कुतुब मीनार, द्वितीय छन्द, जून, १९२०, पृष्ठ १०३।

२ डॉ० सुधीर, हिन्दी कविता में सुमास्तर, कला समीक्षा पीठ विद्यालय, पृष्ठ ३२१।

३ 'सरस्वती', तारा, अंक १९१८, सुलभपुष्प, पृष्ठ १९९।

४ 'प्रतिभा' संयोग, तृतीय छन्द, जून, १९१९, पृष्ठ ६५।

५ श्री प्रयागनाथमल त्रिपाठी, नई दिल्ली से हुई प्रत्यक्ष भेंट, (दिनांक २१-५-१९६१) में ज्ञात।

साहित्यिक जीवन का निर्माण किया वहाँ 'प्रताप' को धर्म की के राजनैतिक जीवन का स्वल्प महने का समय भोग प्राप्त है। इन वर्षों के सम्भारक के साथ ही साथ 'नवीन' की के काव्य की धार्मिक तथा प्रकाशन के क्षेत्र में भी उपर्युक्त वर्षों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 'प्रताप' में कवि के विपुल साहित्य ने स्थान प्राप्त किया है, इसलिए यहाँ सिर्फ धार्मिक रचनाओं का ही विवेचन किया गया है। 'प्रभा' में 'अस्मिता के कतिपय अंश भी प्रकटित हुए थे जिनका बिलुप्त विवेचन 'महाकाव्य' सम्बन्धी अध्याय में किया गया है।'

'प्रारम्भिक काव्य' के वर्गीकरण के समान 'प्रभा' तथा 'प्रताप' के काव्य-साहित्य का भी, निम्नलिखित वर्गों में विभाजन किया जा सकता है—(क) प्रेम तथा भक्तिपरक रचनाएँ, (ख) उपद्रुपरक रचनाएँ, और (ग) प्रकृतिपरक रचनाएँ।

धार्मिक-काव्य-साहित्य में भक्ति तथा उपद्रुवता का प्राधान्य दृष्टिगोचर होता है, जब कि प्रारम्भिक काव्य में प्रकृति-चित्रण को भी महत्व प्राप्त हुआ। प्रस्तुत काव्य-साहित्य में उपद्रुपरक रचनाओं में सांस्कृतिक पक्ष के साथ ही साथ, राजनैतिक तथा सामाजिक कारणों को भी लक्ष्य किया गया है, जब कि प्रारम्भिक काव्य की सीमाएँ संकीर्ण थीं। इस प्रकार, प्रस्तुत काव्य में सीमाओं का विस्तार तथा विकास होता दिखाई पड़ता है।

(क) प्रेम तथा भक्तिपरक रचनाएँ—मूत्रतः कवि पर वैष्णव सम्प्रदाय के प्रभाव प्रकट हैं। कृष्णभक्ति की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है। श्रीकृष्ण से कवि ने सबसंगर संतरण की प्राप्ति की है।<sup>१</sup>

प्रेम में आत्मस्य का अथवा मधुर चित्तार्पण एवं अनुभूति स्थान है। इस प्रकार कवि भी काव्य में नहीं-नहीं प्राप्त हो जाते हैं। अपनी वैष्णव-संस्कार से उद्भूत यह चित्र मन-मुग्ध कर लेता है—

वशुमति का अंजल पकड़े मञ्जनाला जो छोटा सा स्थान,  
लीक-लीक कर लम्बरानो को सुगम किया जिसने प्रियमाण,  
बड़ी लतौने लोने लोचन बाला लोलुप लोनी का,  
बवों बुतियों से देन लेलना है यह धौंख मिथौनी का।<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि के प्रेम भक्ति काव्य में अन्त-भूतप की सामग्री तथा धारम उद्धार के साथ उगाधिकार प्रकृतियों का सम्प्राप्त निष्पन्न है। प्रारम्भिक काव्य में यहाँ इस प्रकार की रचनाओं पर धार्मिक-साया भी दिखाई पड़ती थी, बड़ी, प्रस्तुत-काव्य में, भक्ति का विपुल तथा लतौने रूप ही दृष्टिगोचर होता है। प्रेम के क्षेत्र में प्रणय का पक्ष अधिकांश उन्नत-सा दिखाई बहने लगा है।

(ल) राष्ट्रपरक रचनाएँ—'नवीन' की की 'प्रताप' के राजनैतिक तथा उच्च वातावरण ने उद्यम तथा प्रबल बनाने में पूर्ण योगदान प्रदान किया। कवि की दृष्टि का व्यापक प्रसार हुआ और वह राजनीति तथा समाज का गठ-बन्धन करने लगा।

१ इसलिए, अध्याय अन्त में।

२ 'प्रभा', बरला बोर की प्रीत, प्रवृत्त, १९३२, पृष्ठ ६४५।

३ 'प्रभा' बरला बोर की प्रीत, प्रथम अंक, प्रवृत्त, १९३२, पृष्ठ २४५।

'स्वराज्य माम्ब ब्रह्मसिद्ध भविकार पाहे के उद्बोधक महात्मना तिसक बी की मुख पर, कवि के धनुसिक उद्धार प्रस्तुटित हो पड़े—

मेरा छोटा सा छोना पा, मेरी घोड़ी का गोपाल ।  
मेरे माझन का सोनी पा, मेरे वंशी बट का प्याल ॥  
कटी पुरानो माझो से मैने पोंछे ये उसके गाल ।  
कहाँ गया मिट्टी से लपपब मेरा नटखट प्यारा वाल ?<sup>१</sup>

तिसक बी के विषय में कवि ने धाक-पीठि लिखी जिसमें धनुसिक धावनाओं की प्रमिष्पलि की गई थी ।<sup>२</sup>

राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक पत्र के साथ ही साथ, कवि की दृष्टि सामाजिक विषयों की ओर भी उन्मुख हुई । कवि ने समाज के दीन-हीन तथा प्रसन्न व्यक्तियों की परचना की और उनही बेचना को अपनी काव्य-बाणी से सस्वर बनाया । 'कुसी के घरलों में मैं कवि का कण-निवेदन इस विद्या का भेठ संकेत है—

न हो विकस दे कुसी,  
फिकट मारीघस का हम से बेंगे ।  
घपवा किसी कर जेल की,  
टुक बछाने भेजेंगे ।<sup>३</sup>

प्रस्तुत-काव्य में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धेतना व्यापक होती प्रतीत हो रही है और उसके विषय भी विविधमुखी हो गये हैं ।

(ग) प्रकृतिपरक रचनाएँ — प्रारम्भिक काव्य के समान ही प्रकृति का धाम्बन तथा उद्बोधन रूप प्राप्त होता है । कहीं प्रकृति प्रणय भावना के मावना की पीठिका के रूप में आई है और कहीं वह धपना मुक्त तथा स्वच्छन्द-सोप्य की धलके विबोध रही है । प्रकृति में रूपक तथा मानवीकरण धसंकारों की प्रकृष्ट करक कवि ने एक सुन्दर हस्य प्रस्तुत किया है—

बिस्तृत धंजस छैलाये परिधम विद्या—  
बिनकी बाट जोहने में तस्तीन की  
वे ही उसकी धोर मुके ये प्यार से  
उस प्रमी की तरह मोत बिसका हटा ।<sup>४</sup>

कवि के प्रकृति-चित्रण में नाभालिकता का तत्व निबधकर आने लगा था । ऐसी ही तयानुसूल हो गई ।

१ साप्ताहिक 'प्रताप', मेरा—कहाँ ? प्रथम द्ध, भादस द्वितीय, कृष्ण १०, संवत् १९७७ ६ प्रयस, १९२० भाग ७ संख्या ३९ तिसक स्मृति-धंक ।

२ कहीं, बीप निर्बाल, प्रथम द्ध, भादप १ कृष्ण ८ सं० १९७७ ६ तित० १९२०, भाग ७ संख्या ४३, पृष्ठ ८ ।

३ साप्ताहिक प्रताप कुसी के घरलों में घगहन कृष्णस ३, सं० १९८०, २३ नवम्बर, १९२३, भाग २१ संख्या ४, पृष्ठ ८ ।

४ प्रमा, संख्या के प्रकाश में, धनुर्ष द्ध १ बिसम्बर १९२१ ।

निरूपण—'प्रभा' तथा 'प्रथा' ( चारुमिठ ) के काव्य ने कवि जीवन के परिष्कार तथा संदर्शन में नये आवागम उपस्थित किये हैं। विविध विषयों की रेखाओं में रंग भरने लगा या घोर उत्कर्ष का प्रकृत्य दृष्टिवाचक होन लगा था। काव्य-शैली में सादासुखता ने अपने चमत्कार बिखलाने शुरू कर दिये थे। आत्मोपमा-काव्य में छायावादी काव्यपाठ के अनेक चिह्न प्राप्त होते हैं। कवि की अतिव्यंजना शक्ति तथा कलासौन्दर्य में परिपुष्टता तथा प्राञ्जलता के अवन रिखाई देने लगे। बिजोपमता तथा विस्तार के अपने पस्तक पिरकने लगे थे। बहुमुखी मार्गों की कल्पना तथा प्रोग्रेसस प्रवृत्तियों के प्रसून अपने मुवाच बिछीएँ करने लगे।

प्रस्तुत-काव्य में भी प्रगीत उपादानों का प्राचुर्य प्राप्त होता है। इस युग में लोक शक्तिर्मा भी बेध कम में लिखी गई। 'बिठा के पून घाँसू' में कवि की सुन्दर कला-शक्ति का निर्दोषन प्राप्त होता है।<sup>१</sup>

परिचित मन्त्र द्विदेशी 'गजपुरी' की मूल्य पर भी कवि ने लिखा था—

मित्र बगोँ ने जो दिया—दुलारा एक  
होन बुझिया है जो कुके—सहारा एक  
हास्य के भाव लो कुके है—प्यारा एक,  
हमने भी घोया—गजपुरी, हमारा एर।<sup>२</sup>

काव्य तथा पत्रकारिता, दोनों ही के दृष्टिकोण से इस युग की कविताओं को गरिमा प्राप्त हुई। उनकी कई कविताओं ने मुक्तपुष्ट की घोना-शुद्धि की तथा — आन्तरिक तन्वी 'शीप निर्वाण', 'सम्झा के प्रकाश में, कसला कोर की मोख' तुम्हारे सामने धारि। उनकी कविताएँ अचिन्तनी प्रकाशित हुई, यथा— 'शीप निर्वाण' और 'धाममन की चाह।'

आत्मोपमा-काव्य में कवि के साहित्यिक एवं राजनीतिक अणु के सिद्धि में मूठन धासोक उपलब्ध किया। कवि-मार्ग प्रशस्त तथा धासोत बन गया। काव्य पुरापादिता के बाह्य पर धासक हो गया। भावी निकय अस्मिन्त दृष्टिमोचक होने लगे।

१ 'प्रभा' बिठा के पून घाँसू लीन एर, २ परबरो १९२०, पृष्ठ १३।

२ बही, स्वर्गीय बं० मन्मन् द्विदेशी 'गजपुरी' की भाष्य पर, २ रिमम्बर १९२१, पृष्ठ ३०६।



पंचम अध्याय  
राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य



## राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य

विषय-प्रवेश—श्री बाबूदास शर्मा 'नवीन' के जीवन तथा काम्य का हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की शताब्दियों से प्रारम्भ एवं अद्भुत सम्बन्ध रहा है। 'नवीन' जी ने स्वयं, राष्ट्रीयतावाद के प्रत्यक्ष उदयान के समय, अपना कोई न कोई विचित्र कार्य, पद्य ही सम्पन्न किया है। जिसकी की के आह्वान पर वे लखनऊ-काँग्रेस में गये और गांधी जी के उद्बोधन के समय, अपने विद्यालय की अद्भुत छात्र धारणात्मक में हुए गये। सन् १९२१-२२ -१३ तथा २२-२४ के राष्ट्रीयतावादी उदयानों के समय वे छ की आर की स्थिति के अद्भुत उनके काम्य प्रकृत तथा अनुगत में भी जीवन थाया। राष्ट्रीय कार्यों में काव्यमूर्त-आधारों में उन्होंने अपनी प्रतिभा तथा स्वाभ्यास की पुष्टि की। उन्होंने अपने युग तथा राष्ट्र की उन्नति तथा सेवनी दोनों ही हो, सेवा की। मुझ 'नवीन' की परम-व्यक्ति से परम्परा महात्मा गांधी का अन्वय मन्त्र बने रहे। गांधीवाद की स्पष्ट छाप उनके हृदय पर घाँसी जा सकती है। सांस्कृतिक-पुनरुत्थान के प्रेमी वे और अपने अन्वयन तथा मन्त्र से, उन्होंने राष्ट्रीयतावाद के सांस्कृतिक पत्र का परिपक्व बनाया।

हमारी राष्ट्रीयता में देने देने करने कर का निष्कार है। गांधी जी द्वारा आध्यात्मिक स्वयं प्रदान करने का कारण इसका उद्भव तथा निर्माण का ही हमारे समझ थाया। भारत का स्वतन्त्रता इतिहास की गांधी चिन्तन के इतिहास में अपना अद्भुत महत्त्व रखता है। अहिंसा, अर्थ तथा आत्मा के बस पर प्राप्त विषय में एक नूतन आशाकरण की सृष्टि की। डॉ० मुर्शीदा के शब्दों में इसके विषय में यह कहा जा सकता है कि 'मुक्तमानो काय में भारतीय राष्ट्र मुक्त ( कवि ) है, १८५७ से लेकर १८५९ तक धर्मदाई सेवा हुआ ( द्वार ) है, १८५९ से १९०५ तक बीड़ी की सेवा करता हुआ ( सेवा ) है और १९०५ में प्रायः बतता हुआ हठ ( हठ ) है —

कवि' शायरी प्रवृत्ति संश्लिष्टानसु द्वारः ।

उत्तिर्धरत्रेता यवति ह्य तं कथने चरन् ॥

—देवरेय बाबूदास 'चरैवेनि'

काम्य-प्रकार—'नवीन' जी के आरम्भ की का प्रमुख मूत्र उनके राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काम्य में प्राप्त होता है। उन्होंने एक काम्य-काव्य के अन्वयन, पराप्त्य एवं स्थापित भारत के दोनों ही युवों में रचनाएँ किया। उनके राष्ट्रीय काम्य के दो धेर हैं—(क) सुन्दर इति (ख) प्रवृत्त इति ।

युग के आधार पर, इसकी सुन्दर तथा प्रवृत्त रचनाएँ दो बलों में अद्भुत ही बँट जाती हैं—(क) स्वातन्त्र्य पूर्व राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काम्य (ख) स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काम्य ।



उपर्युक्त दोनों युगों में कवि के काव्य की मूल प्रवृत्तियों में सादृश्य मात्र दृष्टिगोचर होता है; सिर्फ विषय तथा उपादान में अन्तर उपस्थित हो गया है। राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक काव्य-शास्त्र की रचनाओं के प्रतिरिक्त, कवि ने प्रबन्ध कृति के रूप में, प्राणार्णव नामक अष्ट-काव्य की सृष्टि की। सर्वप्रथम परतन्त्र एवं स्वतन्त्र भारत की स्पष्ट रचनाओं का विविध वर्णन एवं विभाजन के आधार पर विवेचन करने के पश्चात्, इस प्रबन्ध-कृति की समीक्षा करना उचित प्रतीत होता है।

'हिन्दी-साहित्य में राष्ट्रीय-काव्य का विकास'—शोध प्रबन्ध के लेखक डॉ॰ अन्तिकुमार शर्मा ने राष्ट्रीय-काव्य को निम्नलिखित बाधों में विभाजित किया है—(१) अन्धभूमि के प्रति प्रेम (२) स्वर्णिम भरीत का चित्रण (३) प्रकृति प्रेम (४) विदेशी शासन की निन्दा, (५) जातीयता के उद्धार, (६) वर्तमान दशा-शोक (७) सामाजिक सुधार—अविश्य निर्मूल्य; (८) गौर-गुणों की स्तुति (९) पीड़ित जनता और दुर्मर्षों का चित्रण और (१०) माया-प्रेम।<sup>१</sup>

उपर्युक्त कारणों से समन्वित एवं अन्वित्यत रूप में रचकर, 'नवीन' के राष्ट्रीय काव्य के विवेचनार्थ उनका उपयोग किया जा सकता है।

स्पष्ट-कृति—स्वातन्त्र्य-पूर्व राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य—'नवीन' की न खिली या न्दि मात्र प्रायकी इस बृद्धा जननी-अन्धभूमि के प्रांगण में नई बाँटें नई समस्याएँ, नई भावनाएँ, नई धारणाएँ, खिल रही हैं—नाहीं, ऊपम मन्वा रही हैं। ऐसे समय बरि हृदय में प्राफुल्लता उभरे ता क्या भावधर्म ? राष्ट्रीय-आन्दोलन के युग में कवि के हृदय में जो प्रतिष्ठियाएँ, प्राक्षेप, प्राचार्य एवं मन्वन हुआ—उसी का ही प्रतिरूप राष्ट्रीय-काव्य के रूप में प्राप्त होता है।

'नवीन' की न्द राष्ट्रीय काव्य परिमाण तथा परिणाम, दोनों ही रूपों में स्वातन्त्र्य पूर्व युग की हैं। इसी युग के ही काव्य का, कला तथा प्रभाव, दोनों ही दृष्टिकोणों से सर्वोपरि महत्त्व है। कवि ने संकल्पित-काल में अन्ध भूमि का इतिहास उनके ही महागुठार संकल्पित-काल के साहित्य में तो प्रायको कक्षा की मिलेगी और पराक्रमवाद भी मिलेगा। संकल्पित में प्रायकी ही प्राप्ति तो होती महीं—यदि बहु हो काव्य तो संकल्पित काल अन्ध-युग में ही परिणत न हो प्राय ? संकल्पित के काल में तो प्रायकी प्राप्ति के प्रयत्न होते हैं और

१ डॉ॰ अन्तिकुमार शर्मा—हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय-काव्य का विकास, प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच॰ डी॰ उपाधि हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध।

२ डॉ॰ अन्तिकुमार शर्मा—'नई भूमि का बीजावली-विशेषांक' राष्ट्रीय काव्य के विविध स्वरूप, सं॰ २०१८ पृष्ठ ५८।

३ 'कुटुम्ब', दुस्र बाँटे, पृष्ठ १२।

४ "संकल्पित-काल क्या और है ? अ्योतिव-साध में संकल्पित-काल उस काल को कहते हैं, जब सूर्य एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता होता है और पूर्वतः बहु न इत और ही और न अन्ध और ही रहता है। इसी एक अवस्था से दूसरी अवस्था में अन्ध करने के काल को हम संकल्पित-काल कहते हैं। सामाजिक संकल्पित-काल भी दुस्र ऐसी ही ती बीज है।"—'कुटुम्ब', दुस्र बाँटे, पृष्ठ ११।

उन प्रयत्नों की असफलताओं को एक सच्ची सी कड़ी रहती है। सांस्कृतिक सफलता और पुनः असफलताओं के कारण हृदय तड़पता है। आदर्श-निर्माण की साहसा हृदय-नाशन करती है और संप्रति हृदय का निराशा भी कटती है। अतः इस युग की अभिव्यक्ति में नवीनता की अत्यन्त निराशा बेचना और पराजयवाद की छाया सभी रहती है। इसलिए ध्यान यदि हमारे साहित्य के पराजयवाद या बेचना की भाषा है तो यह न केवल स्वाभाविक बल्कि आवश्यक एवं उत्पन्न भी है।<sup>१</sup> इसी परिणाम-स्वरूप 'नवीन' की नै घनै धानका संक्रान्ति-काल क प्राणी' कहा है जिन्हें सुखोपभोग प्राप्त नहीं है—

हम संक्रान्ति-काल क प्राणी,  
बना नहीं सुख भोग।  
घर उखाड़कर जेल बसाने  
का-है हमको रोग।<sup>२</sup>

'नवीन' की का स्वातन्त्र्य-युद्ध राष्ट्रीय-नाम्य प्रत्यक्ष विचार एवं भाविक है। उसे वा प्रथम आदर्शों एवं अन्य उपभारणों में सहज ही विभाजित किया जा सकता है—

(१) स्पष्ट रचनाएँ—मया कुटुम्ब 'प्रत्यक्ष' आदि में संयुक्त राष्ट्रीय कविताएँ।

(२) प्रबन्ध रचना—'प्राणार्थ'।

प्रवृत्त्यात्मक विस्फेपण प्रबोधितचित्त रूप में है—

(१) सांस्कृतिक राष्ट्रवाद—(क) कन्दना तथा प्रगति गीत (ख) जापरण तथा धर्मियान पीठ; (ग) घटीत गोरक (घ) बलमाल दुर्दशा (ङ) बीर-युवा (च) भविष्य-संकेत।

(२) राजनीतिक राष्ट्रवाद—(क) राष्ट्रीय जीवन का सम्यक एवं प्रतिबिम्बार्थ, (ख) अहितक राष्ट्रवाद (ग) बल और बलि (घ) धर्मिकारिता तथा विप्लव-पारा।

सर्वप्रथम, स्पष्ट रचनाओं का, उपयुक्त बनने के आधार पर अध्ययन करना, उचित मतीत होता है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद—राष्ट्रवाद का सांस्कृतिक पार्श्व धारण एवं स्पष्ट इच्छा है। यहाँ धामयिकता का धार्मिक स्थान प्राप्त नहीं होता और स्वायत्तता भाषि के लिए कवि, इसी पक्ष का धार्मिक अवसम्भन प्रकृत करता है। यद्यपि राष्ट्र के सांस्कृतिक धार्मिक तथा ऐतिहासिक तत्त्वों तथा विभूति का विगर्जन करना प्रत्येक राष्ट्रीय कवि अपना ध्येय मानता है।

कन्दना तथा प्रगति मोल—'नवीन' की के कन्दना-ग्रन्थ में राष्ट्र भक्ति तथा धार्मिक प्रीति को साबना परिकल्पित थी। उन्होंने धरती भारत-भूमि को कन्दना तथा प्रगति स्वरूप कविय्य रचनाओं की ही मूर्ति की। इन रचनाओं की धार्मिक संख्या उपलब्ध नहीं होती। कन्दना की प्रवेता कवि का ध्यान प्रगति की ओर धार्मिक गया है। भारत-भूमि की महत्ता, ज्ञान परम्पराएँ आदि का कवि ने सुन्दर रूप में वर्णन किया है। कवि के ये शीत स्पुष्ट

१ कही, पृष्ठ १४-१५।

२ 'प्रत्यक्ष', रातो की सुप १४ की कविता, पृष्ठ ५।

होने की अपेक्षा सुदम अधिक प्रतीत होते हैं। 'नवीन' की नै भौतिक या प्राकृतिक रूप-बन्धना की अपेक्षा उसके धार्मिक या सांस्कृतिक मूर्त्यों को कहीं अधिक महत्त्व प्रदान किया है और उन्हें धार्मिक भी है।<sup>१</sup>

'प्रसाद' की के 'स्फुट' माटक के पात्र मात्सुत के समान 'नवीन' की भी मारुत-भूमि को आनन्द की प्रथम बाह्यिक मानते हैं। नवीन की नै अपनी मात्सुमि का मरुत तथा भाव-प्रबलणमय कई बिन्न कीये है।<sup>२</sup>

आपरुत तथा प्रमियात गीत—राष्ट्रीय आरा के प्रमुख कवि<sup>३</sup> 'नवीन' की नै प्रसङ्गोप घान्दोसन के समय अनेकानेक आगररुत तथा प्रमियात गीतों की सृष्टि की है। उनकी बेसमक्ति में नै सौन्दर्य की धनुभूति है।<sup>४</sup> बेधमक्तिपरक इन गीतों में घान्दोसन की सङ्कत तथा सफल प्रतिष्ठियाएँ प्रमिभ्यक्त हुई हैं।

'नवीन' की नै प्रमियात की अपेक्षा आपररुत के गीत अधिक लिखे हैं। घान्दोसन के उत्थान प्रथवा प्रखर वर्षों में कवि-कल्ल पूट पङ्क है और उसने नाना रूपों से भारतीय जनता को सचेत एवं आगृत किया है। इन गीतों में युग का प्रतिबिम्ब दर्शाहित है। 'नवीन' की के प्रमियात गीतों में 'बसो नीर पटुभावासी' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह वाल्मी-युग के धार्मिक-काल की श्रेष्ठ कृति है। इस कविता की पटुभावासी सत्याग्रह ने जन्म दिया। वे साम्प्रदायिकता का बाढ़ के दिन थे। १९२० के खिताफत प्रसङ्गोप घान्दोसन में हिन्दू-मुस्लिम एकता का जो हार्दिक प्रदर्शन हुआ था अंग्रेज धन उसका पूरा बरसा से रहे थे। पात्र की काई हिन्दू-मुसलमानों के बीच में जो ही धन मस्जिदों के सामने बाजा न बजाये जाने की एक ऊँची शीवार भी खड़ी कर दी गई थी और इस शीवार का पोषण अंग्रेज राजगीत ने इस दिन से किया था कि मुसलमान शीवार हो उठे थे और हिन्दू प्रसङ्गाय। इस प्रसङ्गाय पर पड़ती श्रेष्ठ बंशास के पटुभावासी नगर में हुई। वहाँ सत्याग्रह में एक दिन निश्चित किया गया कि उस दिन कुछ लोग बाजा बजाने हुए मस्जिद के सामने से निकलने वाले ही मुसलमान उन्हें मार डालें और बने ही पुनिस उन्हें गिरफ्तार कर ले। इस सत्याग्रह को इस मर के हिन्दुओं का समर्पण मिला और कुछ दिन बाद बंशास से बाहर के लोगों से भी सत्याग्रही स्वयं-सेवकों की माँग की गई।<sup>५</sup> इन्हीं परिस्थितियों में इस कविता ने जन्म लिया और यह सम्यो

१ 'राजराज', १ जून, १९४३, पृष्ठ ९, पृष्ठ ५।

२ 'बिहल', वितम्बर, १९४४, पृष्ठ ४, पृष्ठ २।

३ की हृतपत्र प्रबन्ध—हिन्दी साहित्य की परम्परा पृष्ठ १००।

४ डॉ० बीरेन्द्र वर्मा और डॉ० रामकुमार वर्मा—शांति सम्पादित, 'धार्मिक हिन्दी काव्य' पृष्ठ १९२।

५ की काव्यशास्त्र निम्न 'प्रसाद'—दैनिक 'नवभारत टाइम्स', 'नवीन' की प्रकाशक वेत में, २६ जून, १९६०, पृष्ठ ६।



धीम्य बन जाता है,  
परिचय की चक्ति नहीं,  
गीता है, पीता है,  
स्मरण करो बार-बार—जागो फिर एक बार ।<sup>१</sup>

अभित के संविदनसीध भागों में कवि ने जागृति के भेरव स्वर सुनाये। शोषण की चढ़े टोड़ने की बात कही। अज्ञानताएँ टोड़ने को अघट किया और जनता-जनार्दन को मुफुटावस्था से जागृतावस्था में ला लड़ा कर दिया।<sup>२</sup>

कवि ने युवकों के मोहन कर्षे ललकाय। उन्हें संघर्ष में कुम्भने के लिए प्रेरित किया।<sup>३</sup> कवि की बाणी संवीचनी बूटी के समान कार्य करती है। वह प्रमत्त का संघार करती है। गठ-भाह होने की आवश्यकता नहीं है। अक्षिणाली तथा सक्रिय बनने की आवश्यकता है—

बब करीने झोब तुम सब घायवा नूबोल,  
कौय उठेये सभी मुबोल और खपोल ।<sup>४</sup>

श्री माखनलाल खट्टेजी ने भी अपनी 'जबानी' शीर्षक कविता में नूबोल तथा मुबोल की अन्वेषक वृत्तियाँ प्रतिबिम्ब की हैं—

टूटा-सुड़ता समय 'नूबोल' घाया,  
घोर में मरिणियाँ लमेट, खपोल घाया  
बया जले बाक्य ? हिम के प्राण पाये !  
क्या बिला ? जो प्रलय के सपने न घाये ।<sup>५</sup>

हमारे राष्ट्रीय संघाम के सैनिकों तथा अक्रान्तिपरियों को भी कवि ने अपनी बन्धना धरिपि की है। सैनिक ही भेरव, युद्धों का गायक होता है और बेघ में लव-ज्वार का धादि-स्रोत।<sup>६</sup>

उनके नीतों में भोज की प्रधानता है और सहाय भाषानिष्पत्ति को अपनी प्रथम-स्वकी मिली है। श्री सुबाकर पाण्डेय ने लिखा है कि उन्होंने अपने मन की अनुभूतियों को उसी रूप में बिभित किया है जिस रूप में अनुभूतियाँ उत्पन्न हुई हैं। वह अपने कवि के प्रति ईमानदार रहे हैं। उनकी रचनाओं में एक प्रकार का घाब्रेय केम पति भंवर है किन्तु साथ ही टूटे हृदय के तार बीजल की पस्त-व्यस्तता सभी कुछ एक स्वान पर एकज ही मय है।<sup>७</sup>

समसाधमिकता अक्रान्तिपुस्तक भाषणाएँ तथा प्रखरता के आकार पर ही नहीं प्रत्यु

१ 'अपरा', 'जागो फिर एक बार', पृष्ठ १० ।

२ 'प्रलयकर' सुनो सुनो दो सोने बालो, ४२ वीं कविता, पृष्ठ ८ ।

३ वही, श्री तुम मेरे प्यारे जबान, ४७ वीं कविता, पृष्ठ १ ।

४ 'प्रलयकर' धरे तुम हो काल के भी काल, ४८ वीं कविता ।

५ 'हिमकिरीटिनी', जबानी, पृष्ठ ११५ ।

६ 'प्रलयकर', सैनिक बोस । ५१ वीं कविता, पृष्ठ ६ ।

७ श्री सुबाकर पाण्डेय— हिन्दी साहित्य और साहित्यकार', पृष्ठ १०६ ।

विषय भारत के वैभव तथा विविधताओं का प्रताडरण करते भी कवि ने आभरण का विहास लिखा है—<sup>१</sup>

घनीत घोरक—प्राचीन गौरव तथा संस्कृति, चिर प्रेरणास्वर तथा स्मरणीय होती है।<sup>२</sup> घनीत समेध प्रशास है।<sup>३</sup> हमारे हृदयों को उग्मन बनाता है।<sup>४</sup> हमारे विभिन्न सांस्कृतिक प्राचीनताओं का काव्य के इस पक्ष को उत्तेजना तथा ध्यानभी प्रदान की। 'नवीन' की ने भी प्राचीन साहित्य तथा संस्कृति का पक्षधर अभ्ययन किया था। याता ता उनके विज्ञान पर ही की। यीता ने उनके कर्मयोगी रूप का बनाने में पर्याप्त साधन-दान दिया। 'नवीन' के पारमैतिक पुनर्दिशक ने भी प्रत्येक कव्यन को छोड़कर, यीनद्वनगबङ्गीता का अनुसरण का निर्देश दिया था।<sup>५</sup> ऐसे उग्मन घनीत का विस्मरण 'नवीन' का नहीं कर सकते थे—हमारी वृद्ध भारत-याता के महान् पुत्रों की भा वाद करता व पुन नहीं गये है।

वर्तमान दुर्बला—घनीत गौरव' के साथ ही साथ नवान जी ने वर्तमान रथा का भी प्रताडरण किया। घनीत बहूँ मार्प-शरीर तथा ज्योति लहर प्रथम करता है बहूँ वर्तमान विज्ञा, धाद्योष तथा निदान की घोर उम्मुक्त करता है।

कवि की वर्तमान रथा सम्बन्धी रचनाओं में वेग तथा तेजस्विता के बयन होते हैं। उसका ध्यान, हमारी राजनीतिक स्थिति के साथ-साथ सामाजिक तथा धार्मिक परिस्थितियों की घोर भी गया। वैभव तथा कर्तुर्गुण विषय भारत की वर्तमान दुर्गति ने कवि के मानस को प्रभावित एवं उत्तेजित कर दिया। इन कविताओं ने छायाकार के पुत्र में नूतन भाव-जात का प्रणमन किया। डॉ० विरबन्धनायक उपाध्याय ने लिखा है कि 'श्याम नारायण पान्थेय धान्य निय दिनकर प्रोर 'नवीन जी ने बहूँ बोधो के कामल-कामल' पुत्र में उप भावनाओं का वर्णन करते काव्य के वैचिष्य को मुरजित रखा है। यह कुछ न होने का कारण प्रोर

१ 'प्रत्येक' मेरे घनीत की ज्योति लहर, ५६वीं कविता पृष्ठ १।

२ 'जिन प्राचीन संस्कृतियों के बुझने हुए अंगारों से हमारे नवीन प्रकाश की ली उषे है, उन्हें हमें सम्मान की दृष्टि से देखना चाहिये। नहीं तो हम जीवन से अज्ञानमयी कथ को नहीं समझ सकेंगे।' —श्री सुमित्रानन्दन पन्थ, 'श्यामना', पृष्ठ ७१।

३ 'अथैसा प्राड लाया घनीत, विस्मृत जीवन का विषय-वीड'

—श्री धारतीप्रयास सिंह 'संक्षिप्त', पृष्ठ ६०

४ मेरे भारतम् के इतिहास, अथन विद्युत रेड अनुकरण।

रिखा गौरव प्राचीन अनुप, हृदय नव उग्मन करे सहास।

—श्री रामकुमार वर्मा, 'चितौड़ की चिता', प्रस्तावना पृष्ठ १

५ "अपने को कुं के मेड़क को मीनि कमी न बना दो। प्रत्येक कथ छोड़कर यीनद्वनगबङ्गीता का अनुसरण करो। जिबाकी ने अकर्मण्य की को धारकर कोई पाप नहीं किया। वे अगनी मृषि ने हाथों को निदान देना चाहते थे। —(विषय)।—Contemporary thought of India, page 137

६ 'शमराज्य', मेरे घनीत की ज्योति लहर, पत्रकार-श्रीक, पृष्ठ २।

'महामातल', 'भारता' पत्रकार जस्ताइ प्रहण करने वाली सामान्य जनता में ही नहीं विद्यित जनता में भी प्रचलित हुआ। इस काव्य से बिदेसी साम्राज्यवाद से लड़ने में भी मदद मिली।<sup>१</sup>

सर्वप्रथम हमारे कवि का ध्यान भारतीय पराधीनता पर गया। उसको विनष्ट करने की प्रवृत्त मावता, उसके मातल तथा काव्य में हुंकार भरने लगी। उसने नौकरशाही को भ्रमकारण हुए नहीं कबिताएँ लिखीं।<sup>२</sup>

राजनीति के अतिरिक्त नवीन की ने अपनी धनुमनी धौंके भारतीय जन-समाज की ओर उन्मुख थी। कृष्णक भनिक जिष्णुक, लारी प्रादि सामाजिक सरस्यों को कवि ने अपने प्रखर स्वर में आसिधित किया। कवि की दृष्टि समाज के भ्रत एवं परवसित धर्मों की ओर भी पर्ये और उसने अपने सहज स्नेह तथा उदार मन से उन्हें धर्महीन किया।

कवि ने हमारे समाज के प्रमुख किष्णु उपेक्षित धर्म—कृष्णक एवं धर्मजीवी—में बाणुति की शैतना करने का प्रयास किया।<sup>३</sup>

कवि ने अपने व्यक्तिगत-सामाजिक धनुमनों से ही वर्तमान दुर्बला के मुख एकजित किष्णे ओर उन्हें काव्य में उद्देन किया। पत्रकार 'नवीन' के तीन धर्मधौं ने कृष्णों पर हुए धत्याचारों के सम्बन्ध में उच्छरभेस में धाम लगा दी थी। उसका कवि भी बरि कृष्णक तथा भनिक कां के द्विधाम विननन के पीठ याने तो इसमें धारधर्य की बाध ही क्या है?

डॉ० बाणुरेवधरण धपबाब ने लिखा है कि 'इनकी सुजमला सुहृदयता और भीरुता के साथ कवि की भावसंबाधिता और माणुकता का बोधकक मेरु बैठ गया और एक विविध व्यक्तिगत जनर भावा। यह काव्यधरणा हृदय की विभ्य-भावा की यह धमव की मेरुला थी। मर्ये सपर पुर्षों का उखार करने वाला स्वर्णधर प्रवाह था। बुद्धि का उखार कौमुदल 'नवीन' की के काव्य का विषय न था। उखल-धुपल या अरुणित के तीर्थों से जनका काव्य जन्मा और उठी मार्ग पर यह बढा।<sup>४</sup>

सामाजिक नैतृत्व एवं मेरुला ने ही 'नवीन' की से 'नरी-धुर्षों का यह धाना' धीरक धमजीवी विषयक रचना की सर्वता कपारै।<sup>५</sup> कवि ने मानव पक्ष को प्रयागता धैते हुए लिखा—

१ डॉ० विरधभरलाभ जपाम्याव—'धाधुनिक द्विधी कबिता सिद्धांत और लमोजा', पृष्ठ ३३५।

२ 'कुष्णक', साधबाज पृष्ठ ३-४।

३ 'प्रलयंकर', धो मरुदुट, विज्ञान उठो, ३१ की कबिता, धर्य ६।

४ 'विज्ञान भारत', धून, १९६०, पृष्ठ ४०९।

५ 'जैसे मेरी कबिता 'नरी धुर्षों का यह धाना' है। १९३६-३० में धुनीनिल के ३० हजार मरुदुटों ने ३२ दिन की हड़ताल की थी। मैं उसका नेता था। उर समय २५ ३० हजार व्यक्तिों को कानपुर को जनता से नौकरर धाना जिनया। उर उवाताप्रताव धीवालय ने धुर्यधरताव धधरवी को हर्षे कुषल धैने की धमकी दी थी। लेकिन धुम जसमें विजयी हुए। विजयी होने पर जन-जन का गुणधाम करने वाली एक धावना बाणुत हुई और उत्ते कनतधरण जल कबिता लिखी गई।'<sup>५</sup>—('नवीन')—मैं इनते लिखा दुलरी विस्त, पृष्ठ ३४।

तुम लो गर तुममें हिम्मत है,  
मने मूर्खों का यह गाना,  
घब तक क रोने बातों का  
यह विषट्ट ठराना मस्ताना ।  
त्रिनकी तुम ऋीड़ा तपडे ये  
के लो गारों, निरुले नागब,  
को रेंगा कएते ये घब तक  
के घाम कर जडे हूँ ठाण्डब ।<sup>१</sup>

हमारे वास्तविक बन-प्रदाता ही निर्धन हाकर येन-येन प्रकरोणु जीवन ब्यापीत कर रहे हैं—

त्रिनके हाथों में हल बल्लार,  
त्रिनके हाथों में धन है ।  
त्रिनके हाथों में हंमिया है,  
के मुझे हूँ नियत हूँ ।<sup>२</sup>

मेक्सिम गोर्की के मशानुकार लकक सर्वप्रथम बनने युग श्री उदर उमकी बटनाझी-बुर्दनाथों का प्रत्यक्ष रूप प्रपवा उनमें सखिय माप लेनेबासा हूँ ।<sup>३</sup> 'नबीम' जो का काव्य भी, युग को बङ्कन है । अपनी पूर्ववर्ती रचना के सदृश्य 'बूडे पत्ते' शीर्षक अपनी प्रख्यात कविता की रचना भी सामाजिक परिस्थि में हुई ।<sup>४</sup> प्रत्यक्ष अनुभूति में कवि का मङ्कमोर किया । समाज के नस्त-नाश मिशुक्त में कवि-हृदय में काव्य-रस उत्पन्न कर दिया जो हि हिन्दुत्व के माध्यम से गङ्गमड़ा उदर—

बना बैठा हूँ तुमने नर को नर के घाले हाप पतारे ?  
बना देखे हूँ तुमने उमकी घाँकों में कारे प्रप्यारे ?  
देखे हूँ ? फिर भी कही हो कि तुम नहीं हो चित्तबलाटी ?  
घब लो तुम पत्पर हो, या हो, मशामदकर प्रप्याबारी ॥<sup>५</sup>

पी 'हुरम' ने इस कविता का उठर बैठ हुए लिखा था—

पडे हो पानी हो, पर हो, स्वल्प पवन, निर्मल प्रसात हो ।  
नर के साधारण स्वार्थों पर लो नर का निर्मय निकस हो,

१ 'सापुनिक हिन्दी काव्य', पृष्ठ १६८ ।

२. 'विद्याल भारत', नस्तर्ब कोङ्कम', अणुबुद्ध, १९३० ।

३. Edith Bone—"Literature and Life" A selection from the writings of Maxim Gorky, page 99

४ "इसी प्रकार 'बूडे पत्ते' शीर्षक कविता है । हज लखनऊ किसी काय से पये से । बहूँ हजने प्रमीनावार में जाना करीबा । बहूँ एट प्रादवी जाना का रहा का । उनमें कालर बतान पेंकी ही को हि एट नर नामपाटी कंकातबन् पुण्य में जमे उठाकर काटा । इन 'बूडे पत्ते' कविता निकल पड़ी ।"—(नबीम)—"मैं इनमें लिना", कृतटी चित्त, पृष्ठ १४ ।

५ 'चिन्तन' अर्पित १९४३, अणु १, पृष्ठ १० ।



इसके लिए लड़ो तुम, निरुत्सव बनकर न पतल बाटो,  
प्रलय मचा बी तुम जब तक इन झुर्र प्रमाओं का न नाश हो।<sup>१</sup>  
बूझती घोर, 'मिरासा' का मिथुन शान्त तथा संयत चित्र प्रस्तुत करता है—

घूस से मुझ घोंट जब काते,

बाता—भाम्य बिधाता से क्या पाते ?

घूँट घाँसुघों के बीकर रह जाते ।

बाट रहे हैं बूझी पतल कमी सड़क पर कड़े हुए,

धीर म्पट लेने को उनसे कुसे भी हैं धड़े हुए।<sup>२</sup>

'नवीन' बी बी कविता के वेग तथा प्रखरता को देखकर ही, आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने लिखा था कि "बासकृष्ण शर्मा 'नवीन' मान-कवि हैं। बरखाती नवी की बेबबती धारा के समान सर्वत्र प्रसाधारण गति से ही बूझों-करोरा को बहाते हुए चले जाते हैं, बिबर प्रवाह ले गया उबर ही बल विपै। इनकी कविता प्रलय मौनता है, वह एक मस्तक प्राचीन बासिक्य की भाँति इत्साती सुवसाती धर्मों को वाङ् मरोड़कर मनमाने ढंग पर उच्चारण करती बेझती घोर सुने-सुनाए विदेशी धर्मों को भी कमी-कमी गुनगुनाती मौन-मौन छोट-छोट समयत घोर उजड़-बाजड़ बन-मर्बत नवी-नालों को पार करती सुमती फिप्यी है। बहुधा उर्ध्व म्पल स्पिरिट उसमें प्रकट हा जाती है, भावों के संघर्ष में वह धाम ही अपने से उत्तमती हुई अपने से ही म्पजड़ती हुई कर्तव्य घोर विल से सम्मान के म्पेटों में धटकती बेय घोर प्रेम की उत्तमनों में उत्तमती हृदय की भासकित के कारण हृष्य ही को छोटी लरी सुनाती म्बर पड़ती है।"<sup>३</sup>

कवि की छिटि भारत के भावी नागरिक बासकों की घोर भी मई। इन समीने नागरिकों की भारतीय-दुनिया के भी चित्र कवि ने हमें प्रवात किसे—

झिनने जग को रस-बात दिया, बे नारी के लोचन कस है,

को कावर नारी को कोसे, बे पामर है, दुर्बल मन है!<sup>४</sup>

बीर-मूजा—'नवीन' बी के कृत्तित्व तथा व्यक्तित्व का एक मानिक धंग म्पडा भी रहा है। कवि ने इस पावन भावना का पर्याप्त विस्तार किमा घोर म्पय राष्ट्रीय कवियों के सहस्य अपनी बीर-मूजा की कृति का प्रस्तुत किया। 'नवीन' बी बी बीर प्रवृत्तियों में सामाजिक सांस्कृतिक एवं राजनैतिक तीनों ही क्षेत्र के व्यक्ति समाविष्ट हो जाते हैं। कवि क बीबल के निर्माण में इन तत्त्वों का भी प्रमुख हात रहा है।

'नवीन' बी प्रारम्भ में धार्य-समाज से भी प्रभावित थे। इसके लक्षण उनके काव्य में भी देखे जा सकते हैं। धार्य-समाज के महान् प्रवर्धक ऋषि हयानन्द सरस्वती को अपनी म्पदांजलि म्पित की।<sup>५</sup>

१ बही, धर्मिकरण म्प्रेस, १९४२, धम्ब १२, पृष्ठ २१।

२ 'धररा', मिथुन, पृष्ठ ५०।

३ आचार्य चतुरसेन शास्त्री—'हिन्दी भाषा घोर साहित्य का इतिहास' पृष्ठ ११८।

४ 'प्रलयकर', मरक के बोड़े ११ बी कविता धम्ब ८।

५ 'कुबुम' ऋषि हयानन्द को पुष्प-स्मृति में, धम्ब २, पृष्ठ ४१।

'बड़े शायर' परम पूजाहें महर्षि श्री विवेकानंद ठाकुर की विरासत प्राप्त के समय' कवि ने अपनी भावार्थिता प्रस्तुत की थी ।<sup>१</sup>

गणेश जी के प्रति अपनी श्रद्धा तथा 'बीर-पूजा की भावना' कवि के 'प्राणार्पण काव्य में पनीभूत हो उठी है ।

श्री माधनसाह चतुर्वेदी ने लिखा है कि युग का गायक युग के परिवर्तनों से धीरे-धीरे अलग हो जाता है।<sup>२</sup> तिसक युग की उन्नता तथा दर्प को अपने रक्त में सम्मिश्रित कर 'नवीन' की नै गान्धी-युग क सार को अपने हृदय में स्थान दिया । 'नवीन' की गान्धी तथा गान्धी-युग को भावमय प्रतिमूर्ति है । उन्होंने तिसक की ऐक्यता तथा बापू की विद्वत्ता दोनों को ही अपने में धारणसाग किया था और कभी एक पक्ष प्रबल हो पड़ता था और कभी दूसरा । डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान ने लिखा है कि 'नई कविता पर महात्मा गान्धी और क्रांति के धारणों का गहरा प्रभाव पड़ा है । इस प्रकार की कविता अपने-आप में ही माधनसाह चतुर्वेदी की वासकम्य 'नवीन' की रामनरेश बिप्रायी की भी छोड़नासाह विवेकी धारि है ।'<sup>३</sup> 'नवीन' को ने अपने यौवन के प्रारम्भ में लोकमाध्य तिसक को अपनी अर्द्धातिथि पर्यंत की' और उन्मेष तथा बरनात्कर्म की स्थिति में बापू को अपनी भावार्थिता समर्पित की । कवि ने गान्धी जी तथा उनकी विचारधारा से प्रभुत धनेक कविताओं का सुजन किया । श्री सिंह ने लिखा है कि 'सन् १९५०-१९६० के आन्दोलन काल में बित स्फूर्ति के साथ उन्होंने गान्धीवाद के प्रति अपनी विश्वास धार उभेरी कहु धाय भी रोमांचित कर बेठी है । उन्हें बेचकर ही यह विश्वास करना पड़ता है कि मनुष्य की बेह मने ही पाँच तर्कों से बनी हो लेकिन मनुष्य को निर्मित करने वाले तत्व कुछ और ही होते हैं । 'नवीन' की नै यह 'कुछ और' सम्भवत' सर्वप्रमुख तत्व था जो उन्हें बलिदान के लिये पावन बनाता था और सब कुछ सौंप देने को धारणा उमाराता था ।'<sup>४</sup>

श्री गान्धीजी का जण स्वीकार करते हुए, नवीन की ने स्वत लिखा है कि 'मे उन कसातिथि धारी-नरों में एक है जिनका जीवन गान्धी की धारणा से तले पनपा गान्धी की सूर्य के ताप से उड़पीकी हुया गान्धी की धारि के ऊपर टिका और गान्धी की मेधधारा से तरल हुया ।' गान्धीजी का महात्माकन करते हुए, उन्होंने लिखा है कि 'गान्धी निरक्षर ही

१ 'कुहुन' कवि ध्यानध को पुण्य स्मृति में कन २ पृष्ठ ५६ ।

२ 'बीरता', श्री तुल प्रार्थी के बलिधानी, सुभाई १९५२ कन १, पृष्ठ ७७३ ।

३ श्री माधनसाह चतुर्वेदी—'हिम किरीटिनी', आत्म-निर्देशन पृष्ठ २ ।

४ डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान-द्वारा सम्पादित, 'साधनसरोवर', सांस्कृतिक काव्य (समालोचना), पृष्ठ ६ ।

१. (क) 'बीरता कहु', सांस्कृतिक 'प्रताप', तिसक स्थिति-धनेक, ६ आस्त, १९२० पृष्ठ ७ (ख) 'बीर निर्वास', सांस्कृतिक 'प्रताप', ६ तिसक, १९२०, पृष्ठ ८ ।

६ श्री ठाकुरप्रसाद सिंह—सांस्कृतिक 'प्राग्धा', क्योंकि तुम जो कहु नये हो, तुम हरीमे रात का नय, २५ सुभाई १९६०, पृष्ठ ३ ।

७ 'महात्मा गान्धी, गान्धी-दर्शन (धुपिका), आस्त ३, पृष्ठ ३ ।

मगबद् प्रभावधार वा । इहलौकिक जीवन वर्षा को पारलौकिक कस्याण की साधना बनाना उसका पुरुषार्थ वा धीर परम कस्यास साधना का धर्म ही गान्धी के लिए छद्म जीवन को उच्चतर, सुसंस्कृत निर्बैर पर बुद्ध काठर कस्या धीर स्नेहमय बनाना वा ।<sup>१</sup>

चिन्तक 'नवीन' के साथ ही साथ, कवि 'नवीन' ने गान्धी जी को कई दृष्टिकोण से देखा और अपनी प्रतिक्रिया तथा भावना को सरस प्रतियुक्ति प्रदान की । काव्य-विषय के अनुसूक्त, कवि ने बम्बीर भद्रांजलि धरित करते हुए, लिखा वा—

अनय विषय हे अनय-मित्तय हे, सबन हूबय पाप जय हे ।

हे कृतांत ही कालकूट तुम जीवन वायक-मनुषय हे ।<sup>२</sup>

तिसक गान्धी तथा गैहक—इन तीनों के प्रति 'नवीन' जी के हृदय में भद्रा भाव थे । इन तीनों के युगों में कवि ने अपना राजनैतिक तथा साहित्यिक जीवन व्यतीत किया । कवि के राजनैतिक जीवन को धीरे-धीरे तिसक युग में बुझी गान्धी-युग में उसमें योजन तथा प्रगल्भता ने अपनी झंझो दिखाई तथा गैहक-युग में उसमें अपने धीरे-धीरे बन्ध कर ली । तिसक तथा गान्धी के समान 'नवीन' जी ने गैहक जी तथा उनके परिवार के प्रति भी अपनी सहृदयता की प्रतियुक्ति की है । बीर प्रवृत्ति में गैहक जी भी छवि या किराजी है । कवि ने अपनी पूर्ण भासा तथा धीरे-धीरे के साथ ही जवाहरलास गैहक पर अपनी पुष्पांजलि धरित की थी—

सोतीं के फूलों से सज्जित तुझ-सरया हो जाने दे  
जर से प्रंपारे करवट में हूक-मुक उठ जाने दे-  
धरे, प्रकर्मव्ययता तिमिलता मम्मसाद ही जाने दे-  
प्रतिभिला में विजित भाव का तू प्रव तो हो जाने दे ।<sup>३</sup>

'नवीन' जी को प्रोत्साहितता तथा स्वच्छन्दता को देखते हुए, श्री रामबहोरी सुक्त ब डॉ० भयोरब मिश्र ने लिखा है कि 'काव्य के क्षेत्र में 'नवीन' जी स्वच्छन्दतावादी हैं—भाषा एक भाष-साध में ही स्वच्छन्दता के प्रेमी हैं । इनकी रचनाओं में एक प्रकृत माधुर्य विद्यमान रहता है । रचनाएँ इनकी अनुवार हैं चाहे वे दार्शनिक हों चाहे राष्ट्रीय धीरे चाहे गृहकारिक । इनके मीठ बड़े ललित होते हैं । कुछ राष्ट्रीय मीठ तो इनके धनत-मान हैं ।<sup>४</sup> कहना नहीं होवा कि श्री जवाहरलास जी पर बड़ाई कवि को पुष्पांजलि बस्तुतः अनत-भास ही है । यह सोतीं तथा भाकोहीप्ति से धान्ताचित है ।

अपने 'जवाहर भाई' को धर्मा जी ने मुक्तक का विषय न मानकर, प्रबन्ध-काव्य व उपसुक्त विषय माना है ।<sup>५</sup> गैहक जी की पत्नी तथा 'नवीन' जी की कमला माती का भी काव्य

१ 'महाराषा गान्धी', गान्धी-बर्दान (जूमिका), कालम १ ब २, पृष्ठ १ ।

२ 'गान्धी-प्रतिनन्दन-प्रबन्ध', हे स रस्य धारा पब गामो, एक ३, पृष्ठ २१ ।

३ 'प्रत्यर्कर', सु विद्रोह कप, प्रत्यर्कर, ५ वीं कविता, एक १ ।

४ श्री रामबहोरी लास सुक्त ब डॉ० भयोरब मिश्र—हिन्दी साहित्य का अनुभव धीरे विकास, द्वितीय अण्ड धायावादी युग, पृष्ठ २२० ।

५ 'नेस्तिन जवाहरलास जी मुक्तक-काव्य के विषय हैं वा नहीं, इन प्रस का निरिचन उत्तर में धनी तक नहीं दे सबा है । जवाहरलास एव प्रबन्ध-काव्य के मापक के

भंडावति का विषय बनाया गया है। अपनी कमला मामी' के विषय में पद्यकार 'नवीन ने अपनी काव्यारम्भ शैली में लिखा था कि तुमने हमारे प्रांत को धीरे धादस सेबा का जो बरदान दिया है वह तुम्हारे ही अनुकूल है। मोदीवास नैहक की पुन-बधु धीरे बवाहरलास की सहायिणी है देखि ! तुम महान् हो। स्वाम में तुम्हारा समकक्ष तो हमें नजर नहीं आता। तुम बेवनामसे सेवामयी तपमयी कर्मयोगमयी सृष्टिमयी मुखरुता हो। हमारे सूत्रों को तुम पर नाह है। तुम बवाहरलास का उचित हा। 'कविबर नबोन' जी ने भी कमला नैहक की स्मृति में अपनी अधु-संज्ञि समर्पित की है—

प्रात्म-प्राप्ति के अर्जनित ये खेल तुमने कुछ खेले,  
हृत् १ हाथि धारध के हित कोन कुछ तुमने न खेले ? १

कान्ति-अन में कवि ने जिस प्रकार भी नैहक तथा भीमती कमला नैहक को अपनी भंडावति समर्पित की थी उसी प्रसंग में भी रणवीर सीठाराम पण्डित के महाप्रमाण का समाचार पाकर, ३ अक्टूबर १९४४ में जो पण्डित को भी अपनी भंडावति समर्पित की थी। ४

धीरे-धीरे तथा प्रसंग में कवि ने अपने भौतिक तथा वैचारिक-जीवन के सूत्रों से सम्बन्ध व्यक्तियों को अपनी सहायता प्रदान की है। इन व्यक्तियों के प्रतिरिक्त 'नबोन' की के पक्ष के साथी प्रहात नाम सही-सही अन्तिकारियों धीरे राष्ट्र-सूत्रों के बरखों में भी उम्होंने प्रणतिपूर्वक अपना अभिवादन प्रस्तुत किया है—

ये तुम्हो न, जिनने सर्वप्रथम, बिरोहों का लक्ष्य बना,  
ये तुम्हो न, जिनने जीवन में कटिबद्ध मार्ग बन बनेंगे तुम। १

'नवीन' जी की धीरे-प्रसंग से प्रतीत होता है कि कवि को राष्ट्रीयता तथा व्यक्तित्व में बिनय उन्नतता आभार-भक्ति तथा सांस्कृतिक मूर्तियों का उत्कर्ष समझना था।

भविष्य-संवेदन—'नवीन' जी में भविष्य विषयक उचित भी अन्तिक-अन के काव्य में, प्राप्त होते हैं। वे भविष्य के प्रति सज्ज एवं सचेत थे। आशावादा होने के कारण, भविष्य में उनकी उड़ भास्वा को धीरे यह विद्वान विषयास था कि हमारे सामूहिक प्रयत्नों से हमारा देश स्वतन्त्र होना।

'नवीन' जी धीरे की अपेक्षा कर्म में अधिक विश्वास करते थे। बिनय-बरण करने के पूर्व हमें साहसी होना चाहिये। जीवन की बलिबेरी पर बड़ाने पर ही धीरे प्राप्त होता है। काव्यका को हमारे राष्ट्रीय-अन में स्वान नहीं निधना चाहिये।

अन में कविता का विषय हो सकते हैं, परन्तु वे बोहे ऐसे के विषय नहीं हो सकते।'  
(नवीन)—डॉ इयामसुन्दर लाल भीमल की पुस्तक 'धी बवाहर बोहावली' की भूमिका, पृष्ठ ११।

१ 'पण्डित नैहक' कमला मामी, पृष्ठ १०।

२ 'कविति', कमला नैहक की स्मृति में, अंश २, पृष्ठ १८।

३ 'अपनक', पृष्ठ १५।

४ 'अपनक' उड़ गए तुम निमित्त जर में, अंश २, पृष्ठ १४।

५ 'प्रसंगकर', धीरे सौंपी अन्नल भोज ५२ की कविता अंश ३।

बासकृष्ण वर्मा 'नवीन' का सिद्धान्त ही भविष्य की लक्ष्य-साधक को अपनी ओर आकृष्ट करने में, सामर्थ्य तथा साहस उत्पन्न करता है—

भास, बर्ष की गिनती क्या ही बहूँ, जहाँ सम्बन्ध बूझें ?  
सुम-परिचलन करने वाले जोवन-बनों को क्यों बूझें ?  
हम बिड़ोही !! कबो हूँ क्यों अपने नय के कण्ठक सूझें ?<sup>१</sup>

श्रीर कवि के सांस्कृतिक सुमधार विनोबा जी के प्रिय गीत की पंक्ति के अनुसार, 'बलता छिरता मुसाफिर ही पाता है सुकम रे । क्रियाघोसता गतिधीलता तथा उप से 'नवीन' का 'पराधीन भारत' स्थायी भारत' में परिवर्तित हो गया । डॉ लक्ष्मीसामर बाण्येय ने लिखा है कि 'बासकृष्ण वर्मा 'नवीन' का सम्बन्ध देश के असहयोग आन्दोलन से रहने के कारण उनकी कविताओं में जीवन की सफलताओं और विफलताओं का बोर झन्डल और विप्लव है ।<sup>२</sup>

राजनैतिक राष्ट्रवाद—राजनैतिक राष्ट्रवाद में समसामयिक तथा तात्कालिक वृत्तियों बटमाओं समस्याओं एवं प्रश्नों का ही प्रभाव रहता है । राजनति की उन्नत पुनस हो मानस का उद्विग्न एवं भाग्योलित करती है । युग का इतिवृत्त राजनैतिक राष्ट्रवाद सम्बन्धी रचनाओं में सहज ही प्राप्त होता है ।

राजनैतिक राष्ट्रवाद में राष्ट्रीय जीवन का स्पन्दन एवं प्रतिक्रियाएँ, अहिसक राष्ट्रवाद बस तथा वनि अन्विचारिता विप्लव धारि के पक्षों पर विचार करना समीचीन प्रतीत होता है । राष्ट्रीय-जीवन का स्पन्दन एवं प्रतिक्रियाएँ—अर्थवित्ताओं में राष्ट्रीय-जीवन का स्पन्दन अपने स्पष्टतम रूप में सुनाई पड़ता है । इसक पीछे उनकी प्रत्यक्ष पथार्थ एवं व्यक्तिगत अनुभूतियाँ कार्यशील थी । राष्ट्रीय-आन्दोलन के सम्बन्ध युग की कवि की बाणी से निःसृत हैजा जा सप्टा है । डॉ रवीन्द्रसहाय वर्मा ने इस पर आन्धीसी अन्वि के प्रभाव को निरूपित किया है ।<sup>३</sup>

पराधीनता एवं हमन के विरुद्ध संघर्ष में कवि की बाणी का स्वर अत्यन्त प्रबल है । उस युग में भारतमाता की दासत्व की शृङ्खलाओं को तोड़ना ही एक मात्र लक्ष्य था । बरतम भारत को निम्नतर बड़ सिद्ध के रूप में प्रस्तुत करके 'नवीन' जी ने प्राचीन औरव एवं वर्तमान बुद्धि दोनों ही विनों को एक स्थान पर एकत्रित कर दिया है—

१ 'रत्नमेरु' द्वि में लक्ष्मीसामर बाण्येय, पृष्ठ १६ ।

२ 'डॉ० लक्ष्मीसामर बाण्येय—'हिन्दी साहित्य का इतिहास', धातुनिक कथ्य, पृष्ठ २०८ ।

३ 'इस प्रकार हम देखते हैं कि आन्धीसी अन्वि के धारियों का ही सुझों के बीच की हिन्दी कविता बर घबेष्ट प्रभाव बड़ा है । यह प्रभाव अर्थवित्ता के रोमांटिक काव्य और विरोधकर दोनों के काव्य के माध्यम से आया है । सब तो यह है कि हम आन्धीसी में अपने स्वयंभवा के युद्ध में आन्धीसी अन्वि के मूलभूत धारियों से निरन्तर प्रेरणा ली है । हमारे राष्ट्रीय कवियों उदाहरणार्थ—भासकृष्ण वर्मा 'नवीन', सुमबाण्येय जीशान धारि पर भी कितो न कितो रूप में आन्धीसी अन्वि का प्रभाव बड़ा है । —डॉ० रवीन्द्र सहाय वर्मा, 'हिन्दी काव्य बर अन्वि प्रभाव', धातुबाध-युग पृष्ठ १७६ ।

मुझे याद है, वे दिन, जब मैं बना बालबर्षी या  
 बिल कपिते से सब ऐसा बना एक झरो या  
 एक पिन्डू में ध्यान रखा है, ऐसा दिन का केर,  
 कम के लीडे सुह बाए कहते हैं—'ये डेड रोरा'  
 कबी कबी घाता है भी मैं एक बहाड़ लगा हू ।

डॉ० तयेन्द्र ने लिखा है कि 'उनका उत्पाद घोर उनकी उत्कृष्टि सहज अनुसुत घोर  
 बीभत्त थी । भारत के युव-बीभन में प्रभावित विद्युत्कारा का उनको स्वसंगत अनुभव था ।  
 घटा जाहे वे मान्सी का प्रचलित-नायन करें या उनकी पणजय-नीति के विरुद्ध भास्त्रोष की  
 धर्मिध्वजि या उद्दाम शृंगार का उदुमीष, उनकी बाणी धर्मिबायेंत प्राण-रस से धर्मिध्वजि  
 रहती थी । इस प्रकार उनका काव्य सहज रसमय काव्य था—'कोप सिद्धान्तबाय नहीं ।'<sup>१</sup>

राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रथम उत्पाद धर्मिध्वजि के बर्षों में 'नबीन' का  
 कवि बड़े पौरुष के साथ हुमक उठा है । सन् १९३० का बर्ष राष्ट्रीय प्रचलित-नायन के  
 लिए धर्मिध्वजि सहजपुत्री घटक रखा है । इस बर्ष की समाप्ति पर ३१ डिसेम्बर की मध्य रात्रि  
 को, 'नबीन' भी ने पाबीपुर बम्बीमुह में स्वतन्त्रता के लिए की बई रात्री उठ की पुनीत  
 प्रकिष्ठा, का स्मरण किया है । इस 'युवर्ष' ने भारतीय स्वतन्त्रता के पुनीत-यज्ञ में प्रथम  
 भाङ्गति बाठी थी —

मुझे याद है वह दिन जब तुम आए थे हँसते झिलते  
 उस निमोष के अन्तरकाल में बेका का तुमको झिलते  
 धर्मिध्वजि रात्री के तट थे, छटा तुम्हारी देखी थी ।<sup>२</sup>

स्वतन्त्रता के इस उद्दाम की मूलक कवि की क्राप्ति<sup>३</sup> एवं विषयान<sup>४</sup> रचनाओं  
 में मिलती है । हमारा राष्ट्रीय रज संघर्ष के मार्ग पर अन्तर ही गया । बहूँ घोर जन बाङ्गति  
 पणिष्ठा थी । ऐसे अन्तरकाल बर्षों में १९३१ में कवि ने क्राप्ति का भाङ्गान किया —

प्राप्ति क्राप्ति बसाएँ ने हूँ,  
 धर्मिध्वजि धर्मिध्वजि धर्मिध्वजि  
 बाठ करो मेरे तर-धर्मिध्वजि,  
 धर्मिध्वजि मेरी बली-धर्मिध्वजि  
 लकी धर्मिध्वजि परिपाटी मेरी,  
 इसी लक्ष्य तुम कर बाणी ।<sup>५</sup>

१ डॉ० तयेन्द्र के लेख निबन्ध, बाबा स्वर्गीय डॉ० बलकृष्ण धर्मि 'नबीन',  
 पृष्ठ १४६ ।

२ 'प्रसर्पकर', १९३० में बर्ष की समाप्ति पर १४ वीं कविता अन्ध ३ ।

३ बहूँ, विषयान, क्राप्ति २२ वीं कविता ।

४ बहूँ, विषयान, २८ वीं कविता ।

५ 'प्रसर्पकर', क्राप्ति २२ वीं कविता, अन्ध ३ ।

श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त ने लिखा है कि "नवीन श्री श्री कविता में राष्ट्रवाद का अन्तर्गत हो गया है और नवराज के शासन का प्राथमिक हिन्दी कव्य भी हमें इन्हीं श्री रचना में मिलता है।"

'नवीन' श्री श्री विस्वात रचना पराजय गीत<sup>१</sup> के रचना-कास एवं मूल ध्येय के विषय में मतैक्य नहीं है। यद्यपि यह रचना कवि श्री इस्तिलिपि में श्री उपलब्ध है, परन्तु उस पर विधि अंकित नहीं है।<sup>२</sup> श्री बीबीधरराय रस्तोगी<sup>३</sup> श्री अमिका प्रसाद दीक्षित 'कुमुदाकर'<sup>४</sup> श्री सूर्यनारायण व्यास<sup>५</sup> डॉ० भगवत्सकल मिश्र<sup>६</sup>, श्री धाम्निप्रिय द्विवेदी<sup>७</sup> श्री कन्हैयालाल उहल<sup>८</sup> आदि ने इस गीत को सन् १९२० के सरबापह के स्वर्गित किये जाने की प्रतिक्रिया ही माना है। श्री छनारामराय सुभक्त ने इसे अनुमानतः सन् १९११-१२ की रचना माना है।<sup>९</sup> डॉ० सुमन ने इसे 'गान्धी इतिहास एनट (१९३०) के बाप सरबापह भगतसिंह तथा धाम्नीलाल श्री धाम्नी पराजयों से समाहित नवीन' की सचस यहूद्वय धर्मिभ्यक्ति माना है।<sup>१०</sup> श्री बिनकर ने लिखा है कि 'सतही दृष्टि से साहित्य को देखने वाले लोग यह कथ्य देते हैं

१ श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त—'हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा' प्रायाचार, पृष्ठ १२५।

२ 'कुमुदा', पृष्ठ ६३-६७।

३ 'प्रसवकर', पराजय-धर्म, १० की कविता।

४ 'सन् १९२० के सरबापह के अस्तित्व हो जाने पर जो बेवना विप्लव प्रसन्नोत्सव जन-जन पर का पया का उत्तका प्रतिनिधित्व उनकी 'पराजय-गीत' नामक रचना करती है।'—'हिन्दी साहित्य का विवेचनक्रमक इतिहास', प्राधुनिक काल पृष्ठ ३२३।

५ "जिस समय श्री-श्री-श्री-श्री के पश्चात् महारना गान्धी ने स्थापित धाम्नीलाल स्वयंसेवक कर दिया उस समय नवीन' श्री के मातृक हृदय को अत्यन्त घबरा सगा और आपका कवि हृदय भर उठा।"—साप्ताहिक 'घाज' पृष्ठ ५६, १९६० पृष्ठ ६।

६ "जिस समय राष्ट्रीयता की लहर में एक प्रतिरोध की परिस्थिति का पक्षतर प्राया का, तब (कानपुर कांग्रेस के समय) उनकी एक कविता (घाज कथ्य की धार दुष्टिता)" ने जो बेवना व्यक्त की है, वह अनेक हृदयों को जाला की सकलता से व्यक्त करती है।"—दैनिक 'नई दुनिया', १६ मई १९६० पृष्ठ ३।

७ "बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' विस्तार और विवेक का कवि है। कवि कुय्य ऐसी ताल सुनायो जिससे उबल-पुलक पथ जाये—यह विस्तार गायन इनकी कविताओं में सबसे अधिक प्रसिद्ध हुआ। १९२० के धाम्नीलाल की प्रगल्भता पर कवि का हृदय कितना अचसाव से मरा है।"—'संज्ञित', बीकानेर-विश्वकोश, ७ नवम्बर, १९६१ 'प्राधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना' पृष्ठ ५३।

८ 'अल्पना', हुतात्मन, सितम्बर, १९६०, पृष्ठ २६।

९ 'हृदीरिया अहाबिद्यालय पत्रिका', सन् १९६०, पृष्ठ २४।

१० श्री कन्हैयालाल शकल का सुधे लिखित (दिनांक ६-२-१९६२ का) पत्र।

११ डॉ० निरमल सिंह 'सुमन'—साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' पृष्ठ ५० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', २० मई १९६१ पृष्ठ ६।

कि यह प्रथम विश्व युद्ध से जन्मी हुई निराशा का परिणाम था यद्यपि यह कि प्रसङ्गयोग धान्दोलन के विफल होने से देश में जो निराशा उत्पन्न हुई उसकी प्रथिव्यक्ति अज्ञात के अन्त-गता में हुई। ये दोनों यत्न इसलिए अक्षिप्त हो जाते हैं कि विश्व-युद्ध से जन्मी हुई निराशा का ज्ञान भारत को तकल्लव नहीं, प्रत्युत् बहुत बाध को हुआ और वह भी मुख्यतः इतिहास की कविताओं के द्वारा तथा प्रसङ्गयोग धान्दोलन की विफलता से देश में पस्ती नहीं आई जो घोर घबर घानी भी थी वा उसकी प्रथिव्यक्ति 'नबीम भी की उस कविता में हुई जिसकी पहली पंक्ति थी, बिजय पताका लुकी हुई है सत्य अष्ट यह हीर हुआ। इस काल की राष्ट्रीय कविताओं में उर्ध्व ही उर्ध्व है, मस्ती या सिधिसता के भाव नहीं है।' डॉ० बीर भारती सिंह के मतानुसार 'पराजय गीत' सन् १९२३ में मान्धी की द्वारा बताने धान्दोलन की सफलता पर लिखा गया था।<sup>१</sup> डॉ० सुन्दराम शर्मा के मतानुसार 'पराजय गीत' कविता को किरी कुनाब में पराजय का सूचक है। नबीम भी ने उस कुनाब में बड़ा कार्य किया था—द्विं रात एक कर दिया था। जिस दिन कविता की पराजय घोषित हुई, उसी दिन अर्द्धरात्रि में यह गीत लिखा गया था—सन् सम्मत्त १९२६ था।<sup>२</sup> 'प्रताप के विरोधात् सम्मत्त १९२६ में यह कविता निकली होगी।<sup>३</sup> डॉ० केशरीनारायण शुक्ल ने लिखा है कि "सत्याग्रह संसाम में इतनी धीम सफलता नहीं मिलने वाली थी। कदाचित् स्वतन्त्रता की बेबी इतने बलिदानों से सपुष्ट नहीं हुई थी। देश के नेताओं को अपनी योजना बदलनी पड़ी और कविता ने सत्याग्रह धान्दोलन को बन्द कर दिया। धान्दोलन के बन्द होने से देश में निराशा छ गई। बहुतों ने इसे अपनी पराजय माना। वे अपने को साम्राज्यवादी शासकों द्वारा पराजित समझने लगे। बहुत से कवि इससे मर्माहत हो गये। उनके मनोभाव प्रथिव्यक्ति की हीमा के बाहर से घोर से मोक्ष होकर बैठ गये। 'नबीम' के पराजय-गीत की। × × × × पंक्तियों में उस समय की भावना का कुछ-कुछ संकेत मिल सकता है। × × × × कविता के मर्मत्व स्वीकार कर लेते से देश की निराशा बहुत कुछ इत पर्य। कविता के इस निर्णय से देश को कुछ क्षमि मिली। जनता के हृदय से पराजय का भाव दूर होने लगा। कवियों को देश के धाधापुर्ण कविभ्य पर विश्वास होने लगा। कविता के रचनात्मक कार्यक्रम से प्रोत्साहित हो प्रेरणा थी।"<sup>४</sup> डॉ० शुक्ल के इस विवरण तथा राजनैतिक संकेत और तृतीय अरण्य के कवियों की देश-भक्ति की भावना का चित्रण<sup>५</sup> होने के कारण यह प्रतीत होता है कि इत रचना ने सन् १९३० के प्रसङ्गयोग धान्दोलन के स्वनिष्ठ क्रिये जाने की प्रतिक्रिया में बन्ध किया। श्री 'दिनकर' ने भी इसे 'सत्याग्रह के विफल हो जाने पर कीम्, निराशा,

१ श्री रामशारी सिंह 'दिनकर'—'सांस्कृतिक के चार धारणा', तीसरा अध्याय हिन्दी साहित्य पर इस्लाम का प्रभाव, पृष्ठ ३० ।

२ डॉ० बीरभारतीसिंह का मुझे लिखित (दिनांक २६-८-१९६२ का) पत्र ।

३ डॉ० सुन्दराम शर्मा का मुझे लिखित (दिनांक ६-६-१९६२ का) पत्र ।

४ डॉ० सुन्दराम शर्मा का मुझे लिखित (दिनांक २२-८-१९६२ का) पत्र ।

५ डॉ० केशरीनारायण शुक्ल—'सांस्कृतिक काव्य-धारा', वर्तमान युग, पृष्ठ २१६ ।



घोर शैली' की प्रतिष्ठा माना है।<sup>१</sup> श्री प्रतापचन्द्र गुप्त ने लिखा है कि "सन् १९२० के संघाम में भारतीय जन शक्ति ने विदेशी पूर्वाधिकार से टकरा कर ही घोर राष्ट्रीय नेतृत्व की नीति के कारण शिकस्त खाई सन् १९२० से १९२३ तक हमारे राष्ट्रवाद में पराजय के स्वर भा बाते हैं। भारतीय पूर्वाधिकार को इस सङ्घर्ष में घायल या जनता की शक्तियों से घायलित हो उठना या घोर जनता से अलग होकर उग्रश्री सङ्घर्ष निर्बल हो गई थी। प्रत्यक्ष, एक घोर निराशा बातावरण में छा जाती है। इस निराशा की सम्मीर प्रतिष्ठा को 'नवीन' की एक कविता में हुई है।<sup>२</sup> गुप्त ने अन्त्यम उक्त कविता को 'चौरी-चौरा काव्य' की पराजय की प्रतिष्ठा माना<sup>३</sup> परन्तु बासुहृदय में डॉ० रामप्रकाश द्विवेदी का यह मत संगत है कि स्वातन्त्र्य संघाम के इस बीर सेनानी के 'पराजय-माल' से भी शक्ति घोर पराक्रम का ही पता चलता है। कवि ने एक ऐसी सेना की हार का चित्र खींचा है जिसने डटकर बैरी का सामना किया है।<sup>४</sup> साब ही श्री गुप्त जी के प्रतिपाद में सांसादिक 'हिन्दुस्तान की सम्प्रादकीय' में क्या या कि लेखक (श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त) का यह कहना कि 'श्री बासुहृदय शर्मा 'नवीन' ने चौरी-चौरा के बाद सत्याग्रह आन्दोलन के स्वमित किए जाने को एक राजनीतिक हार मानकर अपनी 'पराजय गीत' कविता में इस हार पर सविनू बहावे है 'निताप्त समुद्र है। निराश्रय ही 'नवीन' की भी यह रचना चौरी-चौरा की दुर्घटना के अनेक वर्षों बाद की भी घोर सतना चौरी चौरा की दुर्घटना से कोई सम्बन्ध नहीं है।<sup>५</sup> श्री जयवीरप्रसाद श्रीवास्तव ने भी अपने संस्मरण के आधार पर लिखा है कि 'मेरे स्वयं इस समस्या को जब 'नवीन' की के समस्त प्रस्तुत किया तो उनका स्पष्ट कहना था कि इस घटना के पीछे किसी राजनैतिक हार की कोई गूढभूमि नहीं है घोर न यह चौरी चौरा काव्य से अथवा २ के सत्याग्रह आन्दोलन से सम्बन्ध रखता है।<sup>६</sup>

स्पष्ट है कि 'पराजय गीत' को राजनैतिक पराजयजय प्रतिष्ठा नहीं माना जा सकता। जसमें स्वयं प्रज्ञा<sup>७</sup> के भी दर्शन किये जा सकते हैं।

उनके प्रखर रचनाओं को देखते हुए श्री हरिप्रदीप<sup>८</sup> भी ने लिखा है कि 'यं बासुहृदय शर्मा 'नवीन' आयावाची कविता करने में कुशल है। वे अपनी रचनाओं के सिरे बहुत कुछ प्रशंसा प्राप्त कर चुके हैं। उनका मानसिक उद्वार आश्रय होता है। इसलिये उनकी रचनाओं में भी यह धोत्र पाया जाता है। वे कभी ऐसी रचनाएँ करते हैं। जिनसे जिनगाणियाँ कड़वी

१ 'बहु पीपल' पृष्ठ ३५।

२ 'हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा', छायावाद, पृष्ठ १२६।

३ श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त—'Hindi Review, The Impact of Gandhi on Hindi Literature, June, 1958

४ साप्ताहिक 'आश्र', २९ मई, १९६०, पृष्ठ ९।

५ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' सम्प्रादकीय ६ सितम्बर १९५९।

६ 'राजकीय हमीशिया महाविद्यालय, भोपाल 'सुख पत्रिका, राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविताओं का अमर पायक 'नवीन', सन् १९६०, हिन्दी विभाग, पृष्ठ २५।

७ श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी — 'अस्पता', सितम्बर, १९६०, पृष्ठ २९।

दृष्टिपात्र होती है। परन्तु जब आत्म विन से कविता करते हैं तो उनमें सगमता और मधुरता भा पायी जाती है। उनकी कविता माधवयी क माध प्रवाहमयी होती है। उनमें देव प्रेम भी है। 'पराक्रम तथा नैराश्य के प्राचीनो का कवि ने उत्तर दिया है—

मत्त कहो कि है निपट पराक्रमवादी मम मित्रबात  
मत्त कहो कि पराक्रमवादमय है मेरे मित्रबात।  
तुम प्राचीनक-मत्त, क्या जानो विजय पराक्रमवाद,  
मैं पयामंदाबी कर्मठ। हूँ फिर जो प्राज उदात्त।<sup>१</sup>

कवि का काव्य राष्ट्रीय उत्तेजना का अधिकाधिक ग्रहण करता गया। सन् १९२२ में श्री गान्धी महापठ-संस्था के समय कवि ने 'हे क्षुरस्य चारा पचगामा'<sup>२</sup> के रूप में पुग निर्मिता गान्धी जी के मयमी प्राचाञ्चलि धर्मिण की।

गान्धी जी के प्रभाव तथा नेतृत्व में कवि श्री आस्था एवं भक्ति विन-प्रतिविम बढ़ती ही गई। सन् १९३४ में कवि ने उक्त 'नैराज मटनागर' श्री अम्दना की—

हृद कहूँ भी तन्नि बलिन हो मत्त, उस सेरे तन्निवय मत्तन से  
मत्तन हुना तब तापत्रय-मति से मत्तन राष्ट्र निडा-गिरि-मन्वर,  
धरे मयंकर, धो छिबंकर  
धो म्गली की पुण्य मत्त नू, धा गान्धी जीमन मय हर, हर<sup>३</sup>

सन् १९३६ में कवि ने राष्ट्रीय मयम की महान् पुण्य-बोधी की म्गाहरवाल नेहक<sup>४</sup> तथा श्रीमती कमला नेहक<sup>५</sup> का धर्मिकत्व दिया और उन्हें यदाञ्चलि धर्मिण की। सन् १९३७ में कवि श्री अम्दना आता 'मरक-विद्याम'<sup>६</sup> तथा 'ब्रूटे पत्ते'<sup>७</sup> सहस्य रचनाओं में मयमा विस्फोट करने लगी।

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की अन्तिम मयममेरी हुंकार सन् १९४५ की महान् अम्दना है। कवि श्री राष्ट्रीय-नेतृता की बीरे बीरे विकसित हाठ इस अम्दना के समय कालानुसार, मयने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई। डॉ० मयेन्द्र ने इस 'नवीन की कविता का पुनर्जीवन-काम

१ श्री मयोप्यासिह उपाध्याय 'हरिमोघ'—'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास', वर्तमान काल पृष्ठ ४६६।

२ 'मिरजान की ललकारें' या 'कुपूट के स्वम' पयार्चबाही २७ की कविता, धनु ४।

३ साप्ताहिक 'त्रयाप', ३१ दिसम्बर, १९३५, भाग २१, संख्या ७, मुद्रापृष्ठ।

४ 'मत्तंकर', नैराज मटनागर ७ की कविता।

५ 'मत्तंकर', मत्तन-मत्त।

६ 'मत्तलि', कमला नेहक की मयति में पृष्ठ २७-२८।

७ 'मत्तंकर', मरक विद्याम २६ की कविता।

८ बही, ब्रूटे पत्ते, ४४ की कविता।

कहा है।<sup>१</sup> सन् १९४२ की श्रान्ति के घबराहट पर कवि ने 'बरत-मान' को ही पुनर्-जन्म माना।<sup>२</sup>

सन् १९४२ की भीषण श्रान्ति तथा घोर चेतना का बहाना कवि ने निम्नपद्यों में किया है—

प्रवाप्तव्य धनवाप्त ध्येय के इस धरातल धरातल का सम्बन्ध  
तुमने किया, किन्तु केसाया बय में कैसा भीषण क्रन्दन,  
हाहाकार भरा विधि-विधि में, नम रखाक धध रोता है,  
सोहित सब बिक्रम हृषा है, रस-बन्धी नर्तन होता है।<sup>३</sup>

श्रान्ति का चेतन-काल सन् १९४२ से १९४५ तक रहा। सन् ४२ की श्रान्ति छोले जयज रही थी। 'नवीन' की कविता के भी प्रचारे टपक रहे थे। काव्य की गर्जना पर्वत तथा सागर को प्रकम्पित करने लगी—

'दुर्बल रस-बन्धी चेत उठे  
कर महा-प्रलय सजित उठे  
सर्वस्व-नाश का रस क्य  
नव-नव निर्वाण समेत उठे।'<sup>४</sup>

कवि की पद्य कविताओं के प्रचार पर ही प्राचार्य कतुरखेन शास्त्री ने 'तुम्हाइतिफला' तथा भी लक्ष्मीकान्त शर्मा ने 'अतिसाइडिफला' के विक्षेपण तथा बर्त की सीमा में उनकी कतिपय रचनाएँ रची हैं।

१ "हिन्दी कविता के इतिहास में यह बहु समय का जब सायाबाब का क्वार घनर लुका था और उसके प्रति एक प्रकार का मुजर विद्रोह बल पकड़ रहा था। जीवन घोर साहित्य के सूक्ष्म अचिमानसिक धृष्टियों के बिल्ड बहिर्मुख राष्ट्रीय सामाजिक प्रवृत्तियों जन्म कर लामने था रही थीं। इस प्राचीनतम के पीछे यद्यपि कामपत्नी विचारवारा की प्रेरणा लम्बुत थी, किन्तु राष्ट्रीय-सांस्कृतिक प्रवृत्तियों को भी अग्रतयल क्य में इतने बल मिला। 'नवीन' जैसे पद्य राष्ट्रवादी कवि की श्रान्तिमय वाली, जो सायाबाब के सौरज-स्तव रेसमी परिवेश में बुध अनामयिक ती प्रनेत होने लगी थी इस अजेजित असावरल में फिर से हुकार उठी। इस प्रकार पद्य 'नवीन' की कविता का पुनर्जीवन-काल था' — डॉ० गणेश के येण्ड निबन्ध, पृष्ठ १४८-१४९।

२ साप्ताहिक 'प्रनाथ', ६ नवम्बर, १९४५, पृष्ठ ११।

३ 'प्रलयकर', परम विद्यो तुम ! बरत विद्यो तुम !! ६ की कविता, पद्य ९।

४ कही, गरजे मेरे सागर पहाड़ चौकी कविता, पद्य ९।

५ प्राचार्य अतरसेन शास्त्री—'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास', पृष्ठ ६९८।

६ 'अनिमाहासिकताबाब के अन्तर्गत बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', इनेही और माजमलाल कतुरखेनी को राष्ट्रीय प्राचनार्थ इस काल में विकल्पित हुई और उन्होंने एक घोर तो राष्ट्रीय लंघाम में भाग लेने की तापव ती और इतरी घोर समाज के बिक्रम क्य के बिरल संघर्ष की प्राचना की अथिक बल दिया। जहाँ प्राचना ने साहन, हर्न, प्राघा का उद्रेक किया; वहीं

भावुकता विप्लव एवं राष्ट्रीय परिस्थितियों के प्रतिरिक्त, कवि ने अपने दृष्टिकोण को व्यापक भी बनाया है। उसमें अन्तराष्ट्रीय परिस्थितियों एवं चिन्तन के पक्षों को भी सम्मिलित किया है। द्रिष्टा के सम ४२ के फसिल्लो व्याक्रमण पर सोचियत क्व के प्रति सिद्धो नई धास्त्र कविताएँ हिन्दी साहित्य को एक भयंर देन है।<sup>१</sup> कवी कान्ति एवं जोषण क विनाश के प्रति कवि अपनी बन्वना प्रस्तुत करता है—

तू ने बन्वन के खड्डन का, मार्ग जनों की विखलाया,  
तू ने सन्त महाकान्ति का पाठ सभी को सिखाया।<sup>२</sup>

कवि ने राष्ट्रीय संश्रम को भावना के दृष्टिकोण से ही नहीं प्रस्तुत चिन्तापरक रूप में भी परखा है। सम-सामयिक स्थिति की विपमताएँ, अनिश्चित बाधाबरण धाया-मिराशा के प्रति इन्ध धारि की धमिम्यकि जनकी 'भाभी की चिन्ताएँ'<sup>३</sup> चिन्ता \* 'गङ्गझाहट गमन मर में'<sup>४</sup> दम्ब हो रहे हैं मेरे जन'<sup>५</sup> धारि रचनाओं में हुई है। कवि सिखाता है—

प्राय बना है मानव निरबलम्ब, धमिकेतन

धात्र निराधित-न हैं सब जग-जन-गण के मन।<sup>६</sup>

डॉ० इन्द्रपाल सिंह ने सिखा है कि 'उसमें (राष्ट्रीय-काव्य) हृदय की सच्ची अनुभूतियों का धमिम्यजन है तथा दृढ़ता एवं साहस का पुर्ब विकास है।'<sup>७</sup>

अहिंसक राष्ट्रवाद—'नवीन' की ने सिखा है कि "विश्व के धात्र तक के जितने भी धवतारी पुस्य हुए हैं, उनमें नान्धी का बड़ा प्रहसुत एवं धखितीय स्वात है। नान्धी से पुर्ब किठी ने भी धखिसा, सत्य धस्तेय धपरिग्रह धारि नैतिक सिद्धातों को साधुहिक-सामाधिक व्यवहार में प्रयुक्त करने की बात नहीं कही थी; धपरि नान्धी के किठी ने पुर्बपामी मानवता के सिक्क ने इन सिद्धातों का साधुहिक प्रयोग नहीं करवाया था। यह महान् कार्य नान्धी के मान में धाया कि बह लसाविधि जनों से धखिसा धौर सत्य का प्रयोग कर सका।'<sup>८</sup>

इसने कुछ ऐसी कथावली धौर धखेय सांस्कृतिक नान्धताएँ नी बो जिवमें केवल लकुने धौर संघर्ष करने का बाताबरस ही रहु गया। लख्य, समय, स्वात, इसका भेवनाय चित्तुन लूट ही क्या।'—भी लखमोकात धर्म, 'नयी हिन्दी कविता क प्रतिमान' प्रथम खण्ड, ऐतिहासिक पृष्ठानुमि, पृष्ठ १५।

१ भी कल्पनात्त डुबे—'बीडा', नान्धा के प्रवासी साहित्यकार—बासकृष्ण धार्मा 'नवीन' नम्यमास्य साहित्यिक, अग्रस-मई, १९५२, पृष्ठ ३५०।

२ 'अल्पकद', दम्ब सभी कवी जन गण, ४३ बी कविता, स्रव ३।

३ 'नवासि', नान्धी की चिन्ताएँ, पृष्ठ ५३-५५।

४ 'अल्पकद' चिन्ता, ५५ बी कविता।

५ यही 'गङ्गझाहट गमन मर में', ५५ बी कविता।

६ यही, 'दम्ब हो रहे हैं मेरे जन', ३६ बी कविता।

७ 'नवासि', नान्धी की चिन्ताएँ पृष्ठ ५३ ५५, स्रव ३।

८ डॉ० इन्द्रपालसिंह—'हिन्दी साहित्य चिन्तन', पृष्ठ १००-११८।

९ 'नहुप्रना नान्धी', नान्धी धर्जव, पृष्ठ ० कासम २।

गांधी जी के व्यक्तित्व तथा सिद्धान्तों ने 'नवीन' जी को काफी प्रभावित किया है। यह कहना ठा ठुकर है कि वे सिद्धान्तों के विषय में बापू के सम्पूर्ण रूप से अनुगत थे। अपने युग की विभूति की प्रभा से वे भी पर्याप्त प्रभावित हुए। सत्याग्रह आन्दोलन के दिनों में 'नवीन' जी ने गान्धी-बाणी को ही अपने काव्य का सूत्रार बनाया। सन् १९४२ के आन्दोलन में 'भारत छोड़ो' घोर करो या मरो के उद्घोष ने भारत में घुमास ना दिया था। कवि ने भी अपने 'बन-नायक श्री बाणी' में अपनी प्रतिव्यक्ति को दर्शकृत किया था—

मानव हो तो फिर उप मानव, शानव, क्या बनते जाते हा ?

अपनी ही कृति के बल-बल में, क्यों बँतते, सगते जाते हो ?<sup>१</sup>

दरी पथक उठ' धीरक प्रतिबारी कविता में भी 'धी रिकर' क महासुधार,<sup>२</sup> कवि ने जो लोहू का वर्जन किया है, वह उनका प्रहिसक रूप ही है—

भर, इसके रबर को भर

लोहू से नहीं लपट से घा री।

बल उठ लल उठ दरी पथक उठ,

महानाश की मही प्यारी।<sup>३</sup>

प्रहिसक राष्ट्रवार के बलक महारमा गान्धी को कवि ने युग-सुधार के पश्चात् अपने बानी विभूति क रूप में प्रकृत किया है। सन् १९४३ में लिखित दो सत्रियों में 'घाने वाले' कविता में गान्धी जी का तेजस्वी स्फाकन किया गया है<sup>४</sup>।

वास्तव में 'नवीन' के काव्य में तिसक तथा गान्धी गरम दस एवं मरम दस हिंसा एवं प्रहिसा के बात-प्रतिबात एवं धनार्थक ऐसे वा मकते हैं। 'स्वराज्य मेरा बरम सिद्ध अधिकार है घोर ने उसे लेकर ही रहूँगा' के उद्घोषक तिसक की तथा 'करो या मरो' क प्रयोटा गान्धी जी—'बोनों श्री ही प्रबल तथा निर्मल धाराएँ कवि के व्यक्तित्व में घा विराजी है। वे विरोधी युगों के बीबल समुच्चय थे। डॉ० इन्द्रपालसिंह ने ठीक ही लिखा है कि 'कुछ कवि ऐसे भी थे जो गान्धी जी से प्रभावित होत हुए भी अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व रखते थे। उनके काव्य में प्रतिबि का संलग्न है जो प्रहिसात्मक हान की अपेक्षा विराह की घोर प्रथिक उगुल है। रिकर घोर 'नवीन' का नाम हम ऐसे ही कविया में ले सकते हैं।'<sup>५</sup>

१ 'महानाश गान्धी' पृष्ठ ११, पृष्ठ ११।

२ 'निराशा की व्याकुलता में ही प्रापक प्यान प्रहिसा के उल विरुध की घोर तथा होमा जो प्रतिबारीयों का प्र्ये वा। मन की इती व्याकुल स्थिति में अपने उल प्रचण, निरपीटक प्रतिब-गान की रचना की जिनका घेरी अपने घनोरघा के निर्माण में बहुत बड़ा हाव था। प्राग क पाम पट्टेकर प्राप की सता से घाँसे केर सेना यह उम युग क घर्म बन गया था। प्रापने भी लोहू का वर्जन यहाँ इललिए किया कि प्रहिसक घोटा के रूप में प्राप घारे देश में प्रतिबि थे, प्रथया, तिसक प्रतिबि का विरुध देता नहीं वा जितसे प्रापकी पुराा रही हो।'—बट-पीपल, पृष्ठ ३६।

३ 'प्रलयर' 'दरी पथक उठ', ५० वीं कविता।

४ 'प्रलयर' 'दो सत्रियों में घानेवाले', २३ वीं कविता, पृष्ठ १४।

५ डॉ० इन्द्रपालसिंह—हिन्दी साहित्य विमलन पृष्ठ १२२।

बल और बलि—अपने सुय के समानधर्मों कवियों के समान, 'नवीन की का भी यही विश्वास था कि बलिदान क बल से ही हमें हमारी स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकेगी है। अर्थात् जब विश्वास में आस्था रखने के कारण उनकी यह बलि काफी मुठक रूप में हमारे समक्ष आती है। बल तथा बलि की कवि ने रखे हैं बर्बाद है—

विजय और वसुधा से दोनों  
बड़े बाप की बेटी हैं,  
कायुक्तों की नहीं मना ये—  
बलवानों की बेटी हैं।<sup>१</sup>

यहाँ कवि 'बलिदान के विकासवाद' से प्रभावित होकर, 'समर्थ व्यक्ति के लिए ही जीवन सम्भव के सिद्धांत की पुनरावृत्ति करता प्रतीत होता है। अन्य कवियों में भी सामर्थ्य सम्बन्धी बलें कहीं हैं।<sup>२</sup>

मातृभूमि के शरणों में सर्वस्व स्वीकार करना ही बेधमकों का कार्य है। स्वतन्त्रता की देवा रक्त की व्याप्त है। दिना लक्ष्म-दान के फल की प्राप्ति सम्भव नहीं। जीवन के ईश्वर देने की मन्त्र बड़ी आश्चर्यचकित है 'कायमूह सम्बन्धी पीडा में प्रकृति का भी विस्मरण नहीं है—

कीभू में जीवन के कल-कल,  
तेल तैल हो जाते लल-लल !  
प्रतिरिक्त चक्री के चर्मर में—  
दिल जाना पावन या निश्चल  
फाम सुराय भरी जेती का यहाँ कहीं रक्त राज ?  
धरे धरे, मुस्करित पद्मगुन मान !<sup>३</sup>

<sup>१</sup> 'शोला' कवने काव्यो कृष्ण सन् १९३७, अंक १, पृष्ठ १।

<sup>२</sup> (क) और यह क्या तुम सुनते नहीं बिबाता का मंगल बरवान,  
'शक्तिवाली हो बिजयी बनो, बिद्व में पूजा रहा यह मान !

प्रसाद—(अज्ञा) 'कामाफनी', पृष्ठ ५७

स्वर्दा में उत्तम उड़रें से रह जायें  
ससुनि का कन्याए करे शुभ मार्ग दिखायें !

बहू, (इफ़ा) 'कामाफनी', पृष्ठ १२९

(क) जो है मन्त्र जो शक्तिवान है जीने का अधिकार उसे  
उसकी आटी का बल बिद्व प्रकृता सम्ब संसार पते ।

की माञ्जतलान् बसुवैदी को भी काफिरता की पथम तान कारागृह में ब्रिजोह की बोख बाती प्रताप होती है— हैसलको का सबसे बड़ा त्योहार तो राष्ट्र मुक्ति है, उसके पूर्व सभी पर्व उनके लिए निरपयोगी हैं।  
कर्म-मय रूपी बाण्डे की धार पर चलने वाले राष्ट्र-मुक्त राय-रंग के प्रति मोह उत्पन्न नहीं करते—

उनकी क्या होती-बीबाली ? उनके क्या त्योहार ?  
जिनसे निज मालक पर प्रोभा बल-विप्लव का भार !!  
कर्म पक्ष है बाण्डे की धार !!<sup>२</sup>

डॉ० केसरीनारायण पुस्तक ने लिखा है कि देशभक्ति की भावना जागृत करने के लिए इन सत्याग्रहियों के बन्धी जीवन का बड़ा मार्मिक विवरण कई कवियों की रचना में निजता है। इस जीवन का सामानुसृष्टिपूर्ण चित्रण हमारी भावना को उद्दीप्त करता है।<sup>३</sup>

इन्द्रिणी तथा विप्लव-गायन—इन्द्रिणी कविता देश-भक्ति की धार से पुष्कल बल रही है, क्योंकि इन्द्रिणी कवि का भावपूर्ण देशभक्त कवि से कुछ अधिक व्यापक है। देशभक्त कवि अपने देश की स्वतन्त्रता और उन्नति का इच्छुक होता है, परन्तु इन्द्रिणी कवि सारे संसार में इन्द्रिणी का प्राबल्य करता है और किसी देश-विशेष की राजनीतिक उन्नति तथा स्वतन्त्रता की कामना न कर सारे राजनीतिक धार्मिक और सामाजिक प्रत्याभारों से मुक्ति चाहता है। इन्द्रिणी कवि ऐसे सम्मता का विकास और नई व्यवस्था का जन्म देना चाहता है जिसमें सारी मानवता, दासता हरिता और सम्बन्धिता के पाठ से मुक्त होकर मान्य और समता का अनुभव कर सके।<sup>४</sup>

'नवीन' की के व्यक्तिव में देशभक्त तथा इन्द्रिणी, दोनों के उत्कृष्ट सम्मिलित थे। उनका इन्द्रिणी निरवयवी राजनीतिक सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में देखा न परखा जा सकता है।

राजनैतिक इन्द्रिणी—'नवीन' की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध रचना 'विप्लव-गायन' ने इन्द्रिणी का संस्कार किया था। कवि की यह रचना बहु-उद्देश्य एवं बहु-वचिit रही है। यद्यपि यह रचना 'कुसुम'<sup>५</sup> एवं 'प्रलयकर'<sup>६</sup> दोनों ही संग्रहों में संकलित है, परन्तु

१. ब्रिजोह वर संग्रहियों ने लिखे मान,  
कोल्हू का चरक-बूँ बीबन की तान।

हूँ मोट बीबना लगा नेट पर नुभा,  
जाली करता है ब्रिटिश प्रकट का नुभा।

'करी और कोकिला', 'विद्याल भारत', कुलाई १९३२।

२. 'रत्नरेखा', धार है होली का त्योहार, पृष्ठ ८, पृष्ठ २०।

३. डॉ० केसरीनारायण धारन—'सामुनिक काव्य-धारा', पृष्ठ २०४।

४. 'कुसुम' विप्लव-गायन पृष्ठ ९४।

५. 'प्रलयकर', विप्लव-गायन, १५ वीं कविता।

विधि का प्रथम अनुपलब्ध है। श्री राजाधिराज शुक्ल ने सन् १९५०-५१ के लेख में, इस रचना का लेखन-काल सन् १९२४-२५ में माना है<sup>१</sup> परन्तु धरने महीनराम पत्र में उन्होंने इसे सन् १९३० के अन्त या १९३१ के आरम्भ की रचना माना है।<sup>२</sup> 'प्रताप'-मण्डल के पुण्ड्रे सबस्य एवं कवि श्री वैश्वरथ मिश्र ने इसे सन् १९३० की ही रचना माना है और चौहाने-शासन सरकार मण्डलसिंह के प्राण-रज्ज की भोपला से उत्पन्न भारतव्यापी हड़कम्प का जीवित प्रतिष्ठापन माना है।<sup>३</sup> डॉ० 'मुमन ने इस रचना को संक्रमण युग का जीवन

१ "नवीन की ओगिरी और देशभक्ति के रंग में डूबी हुई रचनाओं की युग का जमाना प्रकृत हो चुका था और 'विलास-नायक' जैसी उग्र, सशक्त और प्रभावशाली पनैक कविकाएँ 'नवीन' की लेखनी से सन् २४-२५ में निकली गईं।"—श्री राजाधिराज शुक्ल वैदिक 'नवीन'क, पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', (३०-११ १९५१) पृष्ठ ५।

२ श्री राजाधिराज शुक्ल का मुझे लिखित (दिनांक ३-२ १९६१ का) पत्र।

३ 'कवि कुछ पैली राज सुनाओ'—उनका बीत कहीं तक मुझे स्मरण है, 'प्रताप' में सन् १९३० में सरकार मण्डलसिंह की फौजी की लडा सुनाये जाने के कुछ ही दिनों पहले प्रकाशित हुआ था। सरकार मण्डलसिंह द्वारा दिल्ली के केन्द्रीय कांग्रेसवादी बदन में बैठक के बीच, विविध सरकार को बेठावनी के रूप में उठा हुआ बच और लाहौर पञ्चमन्त्र केस घाबि-कायद ईश के ऊपर-ऊपर सुपुत्र परन्तु अन्तर में सुनपती हुई राजनीतिक बेतना को देश व्यापी ईश पर एक बहुत बड़का घटना देने वाले प्रभावित हुए थे। इस-बाद घटना के सीधे बाद ही महात्मा की द्वारा संचालित सन् १९३० का आन्दोलन जारी हुआ था। यद्यपि आन्दोलन देश-व्यापी और प्रवृत्तात्मक था परन्तु सरकार मण्डलसिंह का नाम आन्दोलन कर में लिख-बाँध, छहूर-साहूर और घर-घर, एक बर्बरता नारे का रूप ग्रहण कर चुका था। समाजों में, कुमुलों में, प्रदर्शनों में, सर्वत्र 'मण्डलसिंह बिम्बाबाद' का नारा गगनचुम्बी स्वरों से 'महात्मा चान्डी को बाप' और 'बन्दी मातरम्' के बाप लपाया जाता था। यहाँ तक उबका नाम देशव्यापी जाबना का प्रतीक बन गया था कि विविध सरकार से समझौते की बात के समय पं० बहादुरनाथ नेहू के को यह कहना पड़ा था कि 'सरकार मण्डलसिंह का सूत-बीह भारत और ब्रिटेन के बीच किसी भी सपनीता-भारत के दक्षिणान मौजूद रहेगा'। सरकार मण्डलसिंह को फौजी की लडा सन् १९३० में भाष्य प्रप्रेत महीने या इसी के आगे-पीछे महीने में हुई थी। फौजी का फैसला सुनाये जाने पर स्वभावतः देश भर में अशांतिपूर्ण रोव की शुरु शैल गई थी। सर्वत्र रोव और उत्तेजनापूर्ण समर्थ विरोध में हुई, छाक-छाक बरिध द्वारा कोरिण पुर्न इङ्गामें हुई। यह एक प्राप्यत अल्पकालीन कागत्परण का अन्तर था। कागपुर में भी एक विशाल सम्रा फौजी की लडा के विरोध में हुई था। ठा० २०, २१ अगस्त २२ को। पं० बालकृष्ण शर्मा का अत्यन्त धोखेसी भाषण उस लडा में सरकार के विरोध में और फौजी को लडा सुनाये जाने के विरुध में हुआ था। उस भाषण का अन्तर्ह्वार पं० बालकृष्ण शर्मा ने उमो बीन को अपनी गमन-गमनीर विरा से वापन करके किया था। मैं भी उपस्थित था। जोध के उस प्रवाह का आधर को रोव बाध ही विविध सरकार से कागपुर के सन् १९३० के अन्तक हिन्दू-मुस्लिम ईश के रूप में मोड़ दिया था, जिन्होंने



कहा है।<sup>१</sup> डॉ० बीरभारती सिंह के मतानुसार 'विष्णु-गायन' अन् १८२१ के धान्नीजन के समय लिखा गया था।<sup>२</sup> डॉ० मुंशीराम शर्मा ने लिखा है कि 'विष्णु-गायन (रचना) १६५ ई० विस्म्बर की है।<sup>३</sup> यह १६२५ के प्रताप के विद्यवाक (जानपुर काँग्रेस-शक) में प्रकाशित हुआ था। वे दिन शंभेजों के बिछड़ संघर्ष में व्यतीत हो रहे थे।<sup>४</sup>

वास्तव में इस रचना में व्यक्तिकाशी मून तथा महात्मा गान्धी की प्रेरणा एकत्रित हो गई है। 'नवीन' की नै स्वतः बतलाया है कि 'गान्धी जी की प्रेरणा से ही यह 'विष्णु-गायन' धार्या है। उसका रहस्य यह है कि पारम्भिक श्रान्ति करने की भावना सर्वप्रामो होती है। उस समय नई भावना के धारोस में विचारो पर नियन्त्रणा नहीं रहता। निबन्धन होना ना 'माता की छाती का मधु रसमय पत्र बालकूट हा जाये—जैसी पंक्ति त्रिपका मीषा धर्म नहीं निकलता केस धाती। उस समय तो केसस यही भावना थी कि 'महा धारास नई पुत्री धीर गया मानव निरुसे। इसीनिण गान्धीवाशी परम्परा के बिछड़ यह उद्भवोप हुआ—यद्यपि प्रेरणा गान्धी जी की हो।<sup>५</sup>

डॉ० सुबस न मिखा है कि श्रान्तिकाशी कवि स्वतन्त्रता का मन्देश सुनाते हैं। वे स्वतन्त्रता धीर श्रान्ति का धार्याहन जावन के प्रत्येक क्षेप में करते हैं। श्रान्ति के साधन-माय वे कवि नास का नी स्वागत करत हैं, क्योंकि यह नी इनके बर्यव्यम का एर धारष्यक धंग है। धान की बरबसा को बिना मिटाये श्रान्ति धीर समता की स्वापना इन कवियों को धसम्भब प्रतीत होती है। इसनिण इनके श्रान्ति प्रेम की कोई सीमा नहीं है धीर इनको नास तथा प्रसप की कोई बिन्ता नहीं। उद्भवयुग्ण नास की भावना धनुचित नहीं कभी ना सफती परन्तु श्रान्ति का बाना बारण किये बहुत सी ऐसी रचनाएँ सो देखने में आती हैं जिनमें महागाध की होनी के धान कुछ नहीं है। कुछ कवियों को उद्भवयुग्ण नास की सीसा में बड़ा धानव्य मिलता है। इन कवियों की रचनाएँ 'नवीन' की निम्न-लिखित पंक्तियों में मिलती नुसती हैं -

प्राखीं के माने पड़ गए प्राहि-भ्राहि रब नु में छाप।

नास धीर लखानारों का पु बानार जग में छा जाण ॥

निघम धीर उरनिघमों के ये बगम दूक-दूक हो जाण।<sup>६</sup>

कवियों के ऐसे उद्भवार श्रान्तिकाशी कविता की पम्पबस्वित दगा की गूचना देते हैं।

गलेगांठर बिछारों का धनुतपूर्व पल्लिरान हुआ था। उपरोक्त बिचरण एक पृष्ठधूमि के रूप में, मेरे लामने इस गीत के सम्बन्ध में, जामपुन ही धार्या है।<sup>७</sup>—वी देवीदत्त विष का मुझे लिखित (दिनांक १२ १६६२ के) पत्र में उद्भवत।

१ डॉ० शारवमल विर मुमन—सतनाहिक शिबुदान' पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', २० मई, १६६२ पृष्ठ ८०।

२ डॉ० बीरभारती सिंह का मुझे लिखित (दिनांक ०६-०८-१६६२ का) पत्र।

३ डॉ० मुंशीराम शर्मा का मुझे लिखित (दिनांक २-०८-१६६२ का) पत्र।

४ डॉ० मुंशीराम शर्मा का मुझे लिखित (दिनांक ६-०८-१६६२ का) पत्र।

५ 'वी देवीदत्त विष' दूनरी लिख, पृष्ठ ३१।

६ 'दु बुन' पृष्ठ ११।

इसका कारण धारम्भ में ही बताया जा चुका है कि शक्तिवादी कविता का प्रभो प्रोपोज़्ड हुआ है और प्रभो यह प्रपनी पूर्णब्रह्मा को नहीं पहुँची है। कवि और पाठक दोनों के सामने इसका स्पष्ट और सुलभ रूप स्वरूप नहीं है। इसी कारण शक्तिवादी कविता के क्षेत्र में प्रायः सेलने वालों की शक्तिता है और सुस्पष्ट कवियों की कमी है।<sup>१</sup>

इस कविता में विप्लव के किसी पराजयतामय शक्ति की ओर संकेत न होकर मानवोचित गुणों की प्राप्ति को ओर संकेत है। कवि सत्त्वो को बर्बरता को कायरतापूर्ण विधि से सहन नहीं कर सकता। वह सगातन परम्परा के नाम पर शक्तिवादी हो समाज का नाश नहीं होने देना। यद्यपि यह कहता है—

एक ओर कायरता कवि, तानाशक्ति विप्लवित हो जाये  
प्रत्य मुझ विचारों को वह प्रथम शिक्षा विप्लवित हो जाये,  
ओर दूसरी ओर कैंपा देने वाला तर्जन उठ जाये,  
धत्तरिक्ष में एक उठी नाशक तर्जन की शक्ति मझराये।<sup>२</sup>

और यदि यह सब न हो सके—तो जैसी विप्लवित प्रत्य विचारों की संस्कृत-विज्ञोड़ी गतिविधि बस रही है, उससे तो बड़ी शक्ति है कि—

नियम और उपनियमों के ये शक्ति टूट-टूट हो जायें,  
विद्वेषर की योग्य बीजा के सब तार मुझ ही जायें।<sup>३</sup>

ऐसी स्थिति में यही उचित होगा कि 'शक्ति शब्द टूटै उस महाशक्ति का धारण करायें' और 'नाश नाश ! हाँ महाशक्ति !!! की प्रसवकारी शक्ति पुनः जाये'।<sup>४</sup> कवि यदि यह कविता उसके प्रीति योजनकाल में लिखी गई थी और धार से बहुत पहले किन्तु विचारों में योजन नाम्नीय और भाषा की 'साधनी' शक्ति मुगल का सम्मिलन उपस्थित करती है।<sup>५</sup>

प्रपनी युग में यह रचना बल-बल के मानसरोवर की लहरों पर बिरक उठी थी। उत्तरकाल में ही नहीं, प्रत्युत दक्षिण-भारत में ही यह कविता कच्छर बल गई थी। श्री मोहनदास मद्र ने लिखा है कि 'उस समय हम दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार समाज महास के कार्यक्षेत्र में बापू की धार से हिन्दी के प्रचार कार्य में जुटे हुए थे। सचमुच दक्षिण में सैकड़ों लिखित तैम्नु शक्ति, महाशक्ति भाषा-भाषी युवक नवीन' की इस शक्तिमयी कविता को कविता कच्छर कर दई जोय के साथ हमारे सामने पाठ करते थे। हम उस पौठ में पूने

१ डॉ० केसरीनारायण शुक्ल—'सांस्कृतिक काव्य धारा' कर्मानुगत युग, शक्तिवादी कविता, पृष्ठ २८४-८५।

२ 'कु कुम्भ', पृष्ठ १०।

३ वही, पृष्ठ ११।

४ वही।

५ श्री पञ्जासाल विपादी—'विप्लव', धत्तरिक्षनामय काव्य के शायक महाशक्ति 'नवीन', युग १९६० पृष्ठ १४।

नहीं समाप्त थे। एक दार्ष्टान्तात्म हिन्दी विद्यार्थी ने तो गरीबालकर विद्यार्थी के सिव्य बालकृष्ण शर्मा की वही श्रष्टिकारिणी भारी कविता क्यू सुनाई।<sup>१</sup>

डा० प्रभाकर माधवे ने लिखा है कि "उपनी रचनाओं में एक विशेषपूर्ण ध्यानकता का निबन्ध स्वर मरा है (बिसे प्रपठिबाधी मित्रों ने मन्ती से प्रपठिबाधी सेव समझ पा)। राष्ट्रीय धान्दोसन क प्रारम्भिक दिनों में यह अंसबादी, धराबकटाबाधी स्वर प्रायः सभी प्रापाओं के कविओं मिलता है। जैसे ने उरी स्वर में एशिया का पीठ लिखा था (कंसो में)। उरी स्वर से अनुप्रेरित होकर केपब सुत (मराठी कवि) ने 'बाधी ना मेनेल्याने छाभी त्या दिव बानाबि माणार बध्बवासे ते (अंका) जैसे स्वर उठाने धीर उरी से प्रेरित हाकर बोध मसीहाबाधी ने 'इमानियत का कोरस' लिखा। उरी से प्रेरित होकर काबी नबकल इन्साम की 'धन्निबोला' भी। उरी अंसबाधी धराबकटाबाधी कृति के स्वर मयबतीबरण बर्मा दिनकर धीर नापाबुत तक में मिलते हैं। उन्हीं में से जैसे बचते गिरिजा कुपार माबुर ने धपने सप्रह का नाम नाध धीर निर्माण या धिबमंगलसिंह सुमन ने 'प्रथम सुमन' रखा। इस सर्वनाधबाधी स्वर का सर्वोत्तम उदाहरण उनकी धारम्भिक काल की रचना 'विप्लव मायन' धीर इबर उनके पद्य में 'मपसक' धादि संबद्धों की सूचिकाएँ हैं।<sup>२</sup> इस रचना का कवि के पद्य के साधियों पर भी गहन प्रभाव पड़ा। जो 'दिनकर' ने इस लक्ष्य को स्वीकार भी किया है।<sup>३</sup>

वास्तव में इस रचना में हिंसा तथा धिंसा श्रष्टिकारियों तथा बापु के उत्त के समन्वित रूप के बर्धन किये जा सकते हैं। श्री 'दिनकर' ने लिखा है कि 'गान्धी-युग में भी महात्मा के ऐसे धनैक अनुयायी थे, जो धनवाने ही परमुद्रम के भी सिव्य थे जो मन ही मन 'आपादधि धरादधि' के दोनों विषयों में बिस्वास करते थे। क्या मेरा यह अनुमान गलत है कि प्राय भी धाय धीर धार दोनों की उपसोपिता में बिस्वास करते थे ? " डा० सुमन' ने भी लिखा है कि 'धौराणिक समुद्र-मन्थन के बाद भी भारत में कई समुद्र मन्थन हुए। इमार युग में बीसवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में भी यह कथन बतित हुआ जो धनवरत पन्चीस-वीस बयों तक बसता रहा। सदियों के दुर्बलनीय धमन से हीनबीर्य परबलता का विषय जब केनिंस धाबेस के साथ उमड़ा तो नबीन नीमरुष्ट का धनवरत हुआ गान्धी के रूप में। इस नीमरुष्ट के मर्गी क दिग्ने में जो हुताहुन की कुछ बुद्धि पड़ी, जिन्हें वे प्रसाद मममरत पी मप, जिसके भावा पोद्धियों के लिए सुभा सुखित रह सके। १० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' उन दुर्बल नीमरुष्ट का प्रमुक्त विपपायी यहाँ में से एक थे।<sup>४</sup>

१ 'राष्ट्रमार्ती, सम्पादकीय, परिश्रित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', जून १९६०  
पृष्ठ ३४३।

२ डा० प्रभाकर माधवे— 'व्यक्ति धीर बाटु मय', पृष्ठ १०३।

३ 'बट पोपल' पृष्ठ ३५।

४ बही, पृष्ठ ३६।

५ डा० निबमंगलसिंह 'सुमन' - साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' २० मई १९६२,

डॉ० टीलकुमारी ने 'मनसपान' रचना के विषय में लिखा है कि उसको प्रतिष्पन्नि युग के चरित्रकार कवियों के स्वप्नों में पाई जाती है। तब निर्माण धीरे-धीरे-धीरे से पूर्व इस युग का कवि कालिन्धे संसमय परिवर्तन का अनिर्वास्य समझता है और प्रवर्धित व्यवस्थाओं, कठिनायियों, व्यापारों के विरुद्ध प्रत्येक प्राणी-विज्ञान मजदूर, पुत्र्य मार्ग का उद्विग्न करता है।<sup>१</sup>

कवि महाभाग की नद्वी के संसारों की उद्वेगता फिरता दृष्टिपात्र होता है—

जगत्तल शून्याकार धूमिल का कुण्ड बने विकारास मर्मकर,  
बनुल महाधूमि कसा यह, जने जसो को परिधि निरन्तर,  
महाभाग निज माता नेत्र फिर पोले धात्र लपे प्रलयकर,  
सर्वजसिन्धी लपटे उठे यपके मामक का धाम्यन्तर।<sup>२</sup>

'नवीन' की जीवन का का उल्लास लेकर भाप है उसमें विरागात्मकता नियम-अपनियम जगत्तल-विचार, सोनोरचार शान-विवेक सब लुठे बहुत बिसाई देते हैं।<sup>३</sup> डॉ० विद्योत्तम स्नातक ने लिखा है कि 'हमारे जीवन में जो बेचम्य है पापाय और असफलताओं का का अन्त्य है, संघर्ष से उभरने वाला या विद्रोह है, वह सब 'नवीन' की की कविताओं में आकाशगोली के समान फूट पड़ा है। प्रायश्ची कविताएँ राष्ट्र को जगाने वाली होती हैं। उनमें निष्पक्ष का आदेश भरपूर पाया जाता है। स्वाभाविकता सरलता रम तथा प्रवाह मिलकर इनकी कविताओं में एक विशिष्ट शोध उत्पन्न कर देते हैं।<sup>४</sup>

कवि की 'विप्लव मानस' एवं 'मनस गावन धमि-बहाइ परम्परा की चरमस्थिति प्रकटगत रूप में यहाँ उपस्थित होती है—

बपक रहा है सब भुमकल मुरर खोल रहे निजि बाहर  
सखे, धात्र पोले को बारिदा गम से होनी है मर मर कर,  
मन धर्मन से भी प्रबण्डतर शक्तिधियों का धर्मन नीपल  
धर्मण करता है मानव-हित्य जग में यथा घोर लंपर्ण।<sup>५</sup>

डॉ० शोरेय कर्मा एवं डॉ० रामकुमार कर्मा ने लिखा है कि 'साध-विचरण में 'एक बाण्ड्यी वाता' सिद्धहस्त है। इसी वादों का पावन 'नवीन' ने भी किया है किन्तु इनमें उद्वेगता की अपेक्षा भावबोध का प्राधान्य है। साधारण उद्वेगों में जैसे आकाशगोली का धमि प्रवाह है और वह बेच-भेज की विद्या में प्रवाहित है। 'नवीन' कहीं-कहीं मौन्य की

१ डॉ० टीलकुमारी—'सांस्कृतिक हिन्दी काव्य में नारी भावना, प्रमति युग की समाजवादी तथा कालिन्धी नारी-भावनाएँ, पृष्ठ २१६।

२ 'मनसपान', सरो यपक उठ, २७ की कविता, पृष्ठ १४।

३ डॉ० हरिबंशदास बरकत—'मधु-पुराणे मरमे' कविधर 'नवीन' को, पृष्ठ १६ २७।

४ डॉ० विद्योत्तम स्नातक तथा श्री शोबनदास 'सुपन'—हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमति, मद्रासवा युग पृष्ठ १६१।

५ 'कवियों की कविता' बगल जवारी, पृष्ठ १५६।

भावना में कीमत्त है। शायद यह नीर की तरह जो कुछ भीरु अन्त-पुर दोनों स्तरों में उस्ताह से पूर्ण है और नीरग के पङ्क्तियों का काव्य है।<sup>१</sup>

सामाजिक द्रव्य—राजनैतिक क्षेत्र के साथ ही साथ नवीन की नै व्यक्ति एवं विप्लव की धारा को सामाजिक क्षेत्र में भी प्रबलमान किया है। डॉ० रबीन्द्र सहाय वर्मा ने उन्हें 'घड़ के उपासक' बताया है, कृषि और परम्परा का विरोधी बताया है।<sup>२</sup> मानव की वर्तमान स्थिति और उस पर डाले जाने वाले प्रभावों का चित्रण कवि की चौह-सेकनी से प्रसूत हुआ है—

परामूल, पदबलिष्ठ प्रताड़ित, भीषण प्रत्याहार विमर्षित,  
बहिष्ठ, बृष्ट मण्डित कण्डित तन, निरालम्ब पद-पद पर बलित,  
मानव को मैं देख रहा हूँ घाब उल्लसत झुकराए जाते,  
देख रहा हूँ टूट रहे हैं मानव मन के सारे भाते।<sup>३</sup>

मानव ही मानव के माया पर उछाह हो गया है—

पर मानव ने लकी विवशाता, उसने देखे बन्धन धरने  
घोर लया बहु बलि पीसने उसके समे घोंक भी कपने।<sup>४</sup>

कवि का मत है कि उसे पुरानी शैली की विविधता त्यागकर, सामूहिक कृषि को अपनाया जायिये। निम्न पंक्तियों में कवि, सामूहिक कृषि को ही अटल ध्येय बताया है—

बौध्दो सीधो, और निराधो  
पर, जब बीधे, कीर उड़ाओ—  
तब तुम प्रपत्ति-पीत मिल पाओ;  
सामूहिक कृषि ध्येय अटल !  
हल ! हल ! हल ! बलाधो हल !!!<sup>५</sup>

भी प्रकाशकत्र गुप्त के मतानुसार, 'नवीन' अपनी प्रकृति में तो प्रवर्तनीय है किन्तु सिद्धान्त में नहीं।<sup>६</sup>

धार्मिक द्रव्य—धार्मिक क्षेत्र में 'नवीन' की नै चूचाल ला दिया है। उनका रोच तथा प्रबल वैय अपनी पूरी यहूदाई के साथ फूट पड़ा है। इस क्षेत्र की समग्र विरोधी कविताओं की प्रेरणा उन्हें समाज से ही प्राप्त हुई है।<sup>७</sup> प्रो० 'अनन्त' ने लिखा है कि 'नवीन की नै कविताओं में एक और जहाँ राष्ट्रीय धार्योत्सव और देश प्रेम से प्रभावित विविध सामाजिक भावनाएँ हैं वहीं दूसरी ओर रोमांचिक भावनाएँ भी हैं। किन्तु नवीन की नै

१ 'साहित्यिक हिन्दी काव्य', निवेदन पृष्ठ १०-११।

२ 'हिन्दी काव्य पर धार्मिक प्रभाव' छायावाद-मुग पृष्ठ १०५।

३ 'प्रसवकर', पूट हुमाहल, १२ वीं कविता, अंश १।

४ वही, क्या परबल, उग मन पब मल्ल १, ५१ वीं कविता अंश ८।

५ 'बलाति', अंश ६-७ पृष्ठ १५।

६ भी प्रकाशकत्र गुप्त—'नया हिन्दी साहित्य', पृष्ठ १५।

७ 'मैं इनसे मिलता' बुतरी क्लिप्त, पृष्ठ ५५।

स्वाति उन कविताओं के कारण प्रसिद्ध है, जिनमें कवि ने देश की गरीबी, परतन्त्रता तथा वर्ग-संघर्ष से उत्पन्न भ्रूलुप्त सम्पत्ता का पक्ष घोर लक्ष-निर्माण की कामना की है।<sup>१</sup> कवि ने समाज की धार्मिक दुरावस्था एवं बहिष्ता के मयाबह रूप का नमन विना प्रस्तुत पंक्तियों में उल्लिखित किया है—

तड़े भात के लिये दधान को श्री मानव को लड़ते देखा,  
पति-मल्ली को इक रोटी के, हेतु नितान्त मगाइते देखा,  
मानव ने कुत्ते को जारा कुत्ते ने मानव को काटा  
पत्नी ने पति को नौका श्री पति ने एक जमाया बाँटा।<sup>२</sup>

'नबीन' की जो 'बूटे पत्ते' छापक रचना भी प्रसिद्ध लोकप्रिय हुई।<sup>३</sup> इसे कई पत्र पत्रिकाओं ने उद्धृत किया। इसमें भी प्रथमपदा तथा भोज का बड़का हुमा छोटा है। इस प्रकार की रचनाओं का देखते हुए ही श्री ठाकुरप्रसाद सिंह ने लिखा है कि 'जिस पीढ़ी में जीवित थे उसकी रसों में बून की जगह पिबसा हुआ रोप प्रकाशित होता या साँसों की जगह उद्वेग तथा वा, भाँसों में पुतलियों की जगह सपने सपे हुए थे। इस पीढ़ी के सच्चे प्रतिनिधि 'नबीन' की थे। यदि 'नबीन' की का देखा है ता ग्राम्योत्सवों के उस युग को न देखने को कोई विवशत नहीं। १९२१ के ग्राम्योत्सव के बार 'नबीन' की प्र प्रमुख आन्वितकारी ग्राम्योत्सव की तरफ हुआ और प्रोड्डा के साथ उनके गीतों में बार की बड़ी।<sup>४</sup>

इस कविता में, 'बिसुबिसु' आत्मामुखी पर्वत विस्फोटित हो गया या जिसने हिन्दी संसार में इङ्कम्य मचा दिया या। कवि का आशय तथा भाषिण सीमास्तंभन कर देता है—

भूका बेघ तुम्हे गर उमड़े धातु लवनों में जय-जन के !  
तो तु कह दे, 'नहीं चाहिए हमको रोने वाले जनके !'  
तेरी भूक, बिह्वलत तेरी, यदि न उमाइ सके शोधानन  
तो फिर समझुंगा कि हो गई सारी बुनिया कायर, निर्बल।<sup>५</sup>

कवि का भोज बड़का ही जसा जाता है—

प्रासों को लड़वानेवासी तु कपट से जल-यत्न कर है।  
धनाधार के धमकारों में धपका ज्वलित फलीतापर दे।<sup>६</sup>

डॉ. नरेश ने लिखा है कि 'यह देश क उदीच्य जीवन की पुहार है। इन स्वर्णों में देश का प्राकृत-व्यभिचार कैरे बोधसा उदा है। 'नबीन' की स्वतन्त्रता-संघाम के कर्मठ सेनिक रहे हैं, उनका व्यक्तित्व निर्भीक होम का प्रतीक है। उनको वाली तेज के स्फुरितिय उगमशी

१ श्री 'दलगत'—'हिन्दी साहित्य के लक्ष्य वच, स्वतन्त्रताकारी पाठ पुस्त १००।

२. 'प्रत्यर्कर' शब्द हो रहे हैं तेरे जन, ५६ की कविता, पृष्ठ २।

३ डॉ० सुजन—साप्ताहिक 'हिन्नुस्तान २० मई, १९६२।

४ 'ग्राम्या', २४ जुलाई १९६०।

५ 'भूक', बूटे पत्ते, कविताक प्रसूकर, १९४९, पृष्ठ ६।

६ 'प्रत्यर्कर', बूटे पत्ते, ४४ की कविता पृष्ठ ५।

है। धारणा की बाणी होने के कारण इन कवियों की वैयक्तिक की कविताओं में अपूर्ण प्रभाव-श्रमण है। शैव का मुक्क समान इतको सुतकर हुयेसी पर प्राण है पर से निकल पड़ा था।<sup>१</sup>

कवि ईश्वर पर भी धरणी रोप-वृष्टि करने पर उताव हो जाता है—

बगपति कहीं ? धरे सबियों से बहता हुआ राख को डेरी  
बरन समता लंसापन में लय आती क्यों इतनी बेरी ?  
छोड़ धारणा धरतल व्यक्ति का । रे नर स्वयं बगपति तु है,  
तू मर जूठे पत्ते चाट तो तुम्ह पर जानत है—तू है।<sup>२</sup>

डॉ० मुमन<sup>३</sup> ने लिखा है कि यह किसी नास्तिक की वैज्ञानिक बौद्धिकता नहीं बरन् परम नास्तिक का प्लानिपूर्ण उपासक था।<sup>४</sup> यी 'राकेय' के मतानुसार यह पीड़ित मानवता के प्रति उनकी धरतलबला का दर्शन व्यक्तित्व है।<sup>५</sup>

इस कविता की व्यापकता प्रभाव एवं प्रतिबिम्ब का प्रमाण यह है कि श्री 'हृदय'<sup>६</sup> ने इसका विपरीत स्वर में उत्तर दिया था।<sup>७</sup>

कवि की मानव-जागृति में पूर्ण धारणा है। वह बाह्य परिस्थितियों एवं धरतल पर धरणा धारिपरव स्थापित करने में विश्वास करता है। मनुष्य को इस प्रकार आवृत्त होना

१ धार्मिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ पृष्ठ २४।

२ 'प्रलयकर', जूठे पत्ते, ४४ की कविता छन्द २-१।

३ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', २० मई, १९६२, पृष्ठ ८।

४ श्री रामहरनाथ सिंह 'राकेय'—'बिनाम भारत' महाकवि 'नबीन' की की ज्योतिर्वीची-स्मृति बनवरी, १९६२ पृष्ठ ३३।

५ (क) 'बिनाम' धर्मिक, धर्म, १९४२, दुस छन्द ८०, पृष्ठ १८-२२।

(ख) 'बिनाम', धर्मिक,—पर भावता स्वाहा, मई, १९४२ दुस छन्द ५०, पृष्ठ १७-१९।

६ 'बनाना हुआ हमारे भालबा के गौरवहीन धीरकवि पण्डित बासकृष्ण धर्म 'नबीन' ने 'जूठे पत्ते' धीरक एक कविता मिली को। उस कविता में कवि का वृष्टिकेय बहुत कुछ धार्मिक पुरोगामी मित्रों से मिलता है; याने उसमें ईश्वर हीन विवश हीन होकर मनुष्य धरने सहज स्निग्ध स्वल्प को को बैठा है धीर कठोर किरकिर क्सी आन्तिकारी को शरल में प्रपट है, जिसे धार स्वयं भीये बड़कर देखें। 'नबीन' की की उस कविता प्रकाशित होने के बाद ही जिस बह को गुजरे जकर पकि-सात लाल हुए हिंगे 'हृदय' की ने कोई सी-बहाली धरत की वो कविताओं में ईश्वरबाध धीर धातपविवासी के धारण से 'नबीन' की को को बहाव विधा था; वह हमारी नजर में हिन्दी-साहित्य की एकान्त मोलिक है। उस रचना में 'हृदय' को का हृदय सहज-रत-ऊमल की तरफ परिवल बराय मय प्रस्तुति है। हम फिर कहने हैं कि 'नबीन' जो की निम्नलिखित कविता के बहाव में 'हृदय' की की कविता हमारे साहित्य में बिलगुम डेकोड़ बस्तु है।"—श्री नूर्वनादायल प्याल, लम्बाक नातिक 'बिनाम', धर्म, १९४२, पृष्ठ १०।

चाहिये कि पुनः कुछ स्वल्प जीवन में घपने भरौं न बना सके। बहु समाज के धार्मिक दोषण का कटु-विरोधी है और अपनी महज प्रबन्ध-बाणा में धापाग की बीम उखाड़ देने की बात करता है—

जागो एक क्षणर बना सो, जीम लौक लो इस दोषण की  
तोड़ो हाड़ें, करो इनिमी, गुम बिलकर निज उचटोक्यम की,  
करो सूत्रन घनिमव जगती का गव-गव मामाजिन महुतिहा।<sup>१</sup>

सन् १९४४ में लिखित प्रस्तुत-कविता में धार्मिक धापाग के विरोध के साथ ही साथ व्यक्तिकारियों का भी उल्लेख किया गया है और हमारे भारतीय समाज के विविध पक्षों की ओर उनको कर्तव्योन्मुख किया गया है। कविता की घोषस्थिता को 'सारथी के इस कथन की प्रुष्टियुक्त मित्र करती है कि उनकी कविताओं में 'ग' तरह की भावनाओं की जाहूबी प्रकाशित होती है। एक तरह की जाहूबी में स्वतन्त्रता व मावकों बलिपन्थियों की मस्ती और धाबाबी के बीबाओं की धारमा की सिंह-भार्यता है गरिष्ठ हुआ है। सामूम तो ऐसा पड़ता है कि उनकी कविताओं में औरकर भगत भद्रफरक उरुता की रामप्रमाद विस्मित मुखरेव और सुयोग्य धाम की धारमा गरव रही है—हाँ परव रही है परवद भारत की स्वाधीनता एवं धामापी के लिए, कोटि-कोटि सुकजड़ों, दरिद्रा की रोटी के लिए।<sup>२</sup> 'नवीन' की सुधारवादी और साम्यवादी से और सर्वोपर्य क धापाग पर नूतन मष्टि की कल्पना करते थे।

सून्यांकन—'नवीन' जा ने मन्त्रि-काल<sup>३</sup> में जम लिया था और उनका प्रतिकारण एवं प्रमावपूर्ण इतिवत् भा इमी युग की ही उत्पत्ति बना। मन्त्रि-काल के समय तक यथा धाधा निराशा हिंसा-अहिंसा स्नेह-रोष ममि-ममि और गुपूर-भगव के उनके अर्थित्व तथा काव्य में प्रचुरता के साथ उपलब्ध है।

संक्रान्ति-काल की इस वेष्ट मष्टि और राष्ट्रीय-स्वाधीनता संघाम के झूठे बनराव ने 'राष्ट्रीयता' का भी घपने ही रंग में सगाबोर कर लिया। 'नवीन' की ही 'राष्ट्रीयता' का इम 'भाबुकतामयो राष्ट्रीयता' के नाम से सम्बोधित कर सध्य है। इस भावनात्मक राष्ट्रीयता का संगठन सङ्घरमता, धावेध धावेध गव-श्रितता तथा प्रपल्यता के मुहड़ धावकों हाए हुआ है। 'नवीन' की ही 'राष्ट्रीयता' या 'राष्ट्रीय-श्रितता' का 'राजनीतिपरक' धावका 'तय्यारक' के रूप में न प्रकृत कर उसे भावना या रागात्मक रूप में लिया है। इसलिये, हम कहते हैं कि कवि के राष्ट्रीय-काव्य में इतिहास की बटपायों या राजनीति के यथावर्ध धायेहाबरोह का बलुगत धंक्रम न हाकर, धावपरक धंक्रम ही हा पमा है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय धावेधकेन के व्यक्तिक मोरगनों की मानसिक प्रतिक्रिया एवं मावरात्मक

१ 'प्रत्येकर', प्राज व्यक्तिक का संज्ञक वरु, ३३ की कविता, पृष्ठ २५।

२ श्री रामचरण सिंह 'सारथी'—रेतिव 'नवराष्ट्र', व्यक्तिकवर्ती कवि 'नवीन' को पं० बालकृष्ण धामा 'नवीन' परिशिष्ट, २४ जुलाई, १९६०, पृष्ठ ३।

३ यह व्यक्तिक काल संक्रान्ति-काल, यह तन्त्रिय काल युग पक्षियों का, हाँ! हयो करौं गव-भयन, सुव-भंबोरों की कक्षियों का!

—'प्रत्येकर', चिरोही, ३५ की कविता, पृष्ठ २३



व्याख्या के लिए उनका 'राष्ट्रीय-काव्य' चिर-स्मारक है। युग की भावना तथा प्रवृत्तियों के तरल तथा सशैल प्रवाह ने उनके काव्य-सागर में अपना विभाय-स्वस पाया है।

इन सब तत्वों के होते हुए, उनके काव्य में निराशा या पलायनवाद के चिह्नों का अन्वेषण करना बुद्धकर्म होगा। आनेसबन्ध उद्वेग तथा प्रबन्धता के कारण, वे मने ही सीमा का अतिक्रमण कर जायें, पराजयवाद या अनिश्चिन्ता की अभिव्यक्ति करने लगे और नूतन-नवस-सोक की रचना की कल्पना कर लें लगे परन्तु इन सब उपादानों में भी उनका पराक्रम शौर्य सर्वोदय-मूर्ति सर्वजन सुखाय-सर्वजन हिताय' और जीवन की उत्कृष्टता व विन्यासिलो की अन्त-धर्मिता ही प्रबलमान होती दृष्टियोजर होती है। कम से कम 'नवीन' की जो तो निराशावादी या पलायनवादी कहना उनके व्यक्तित्व जीवन ग्राह्य और अपनी निर्णयारिमक्य विवेक-बुद्धि के साथ न्याय नहीं करता है।<sup>१</sup> उनका काव्य-व्यक्तित्व ही इस बात का बीजक प्रतीक है कि वे आपत्कालीन स्थिति दुर्लभ प्रसंगों तथा संघर्ष-मरस के क्षणों को 'जीवन-पथ' मानकर, वो पग धीरे धीरे बढ़कर तथा सतकार कर, जूझते और बलव्युह से संस्लाघ वङ्गीमित होते दृष्टिगापर होते हैं।

'नवीन' की का राष्ट्रवादकयी 'दीर्घराज' ऐसी विवेकी पर धनस्वत है जिसमें अन्तिकारियों बहिष्कारियों साह-बाह-पाह तथा काँसे की बापपन्धी भाग निरव बंध बापु को निर्य्य घडिहा तथा तग्यमता धीरे कोटि कोटि बन की बैरना यकार्म स्थिति तथा जावरण की तीन प्रबल बाधाएँ अपना गठ-बन्धन स्थापित करती प्रतीत हो रही हैं। राष्ट्रीय-योद्धा एवं राष्ट्रवाद के वैतालिक होने के नाते उन्होंने निर्य्य और अन्ति भाषा तथा भासा विप और समूत के पीठ माये। अन्ति के दिनों में अत्याचारों घातक-बमन तथा विपरीत परिस्थितियों के बीबित गरल को वे नीसकण्ठेश्वर बनकर पान कर मये। वे तो अन्त ही विपयायी थे।<sup>२</sup> उनके काव्य में जीवन तथा लयी प्रेरणाओं और अनुभूतियों ने ही अपनी मण्डप बनाये हैं।

१ 'हमें तो हिन्दी अर्थात् हिन्दी की जन-जन व्यापिनी भावा में विमित सारे साहित्य में अन्वेषणार्थ से लेकर दिनकर तक राष्ट्रीयता के दर्शन होते हैं। कुछ छोड़े से ऐतिहासिक नृबारी कवियों की राष्ट्रीयता कुछ इस पर्य है, पर उनमें क्या राष्ट्रीयता थी, इतका विचार किए कभी किया जायगा। सर्वथी हिन्दी की, बालमुकुन्द गुप्त, प्रेमचन्द, हरिद्वीप धीवर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मेघिनीशरण गुप्त, माधननाल अतुर्वेदी 'नवीन' प्रसाद, निराला, बल, रामचन्द्र शुक्ल, नन्ददुतारे बालदेयी, दिनकर, जेनेन्द्र, अहूरबन्ध मन्वर प्रादि क्या पलायनवादी हैं? यदि नहीं, तब फिर हम साहित्यिक पलायनवादी क्यों?'—  
 आचार्य विरचनाय प्रसाद मिश्र, 'हिन्दी का सामयिक साहित्य, साहित्यिक पलायनवादी क्यों?', पृष्ठ २२६।

२ हम विपयायी जनम हैं, सहे अमोल बुबोल,  
 मानन मैकु न धनन हम, आगत अपने मोल।—'नवीन दोहावली'



को का घरीर था, उनका मस्तिष्क भी ही सफ़ा है, पर उनके हृदय की सरसतम भावना उनकी कविता में भी उनकी कविता के लिए ही सुरक्षित थी। उनकी प्रकाशित रचनाओं को देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि भाकण्ड राजनीति में डूबे रहने पर भी राजनीति-सम्बन्धी कविताएँ उनकी बहुत कम हैं। वे राजनीतिक कारणों से धेस भेजे गए थे। वहाँ बनकी जलाते मूँच बटते हुए उनका खून खोसता यदि वे वहाँ बैठकर ब्रिटिश सरकार पर अपना क्रोध-विरोध उगलते तब को उत्साहित और उत्तेजित करने के लिए प्राबोधमयी रचनाएँ करते तो इसमें कुछ भी अस्वाभाविक न होता। पर वे वहाँ ऊँची दीवारों के बीच अपने 'प्राखण्डसुख' अपने 'मनमाबन' अपने 'प्रीतम', अपनी मैना को याद करते हैं। समय की कैसी बबरबस्त माँस थी कि इतना भावुक इतना कोमल हृदय इतना रससिक्त कवि अपने को राजनीति की कवित्वहीन परिस्थितियों में भोंक देने को विवश हो गया था।<sup>१</sup>

यद्यपि अप्रकाशित साहित्य (विशेषकर 'प्रलयकर' काव्य-संग्रह) क सम्पन्न करने से कवि के राष्ट्रीय-काव्य-व्यक्तित्व को अधिक स्पष्ट मुखर व प्रखर रूप में माने में सहायता प्राप्त होती है और तद्बहिष्पयक स्थिति कुछ मुखरती भी है, परन्तु प्रेम-काव्य भी उसमें ही प्रचुर मात्रा में धामा है जितना वह पूर्ण अवस्था में था। इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि के प्रेम-काव्य की प्रधानता पर कोई शंका नहीं पाई। वास्तव में, श्री शांतिप्रिय त्रिवेदी ने ठीक कहा है कि 'नबीन' शृंगार और राष्ट्रीयता के दो विरोधी रस लेकर बने हैं किन्तु बाहर से दो विरोधी होते हुए भी दोनों बस्तुतः एक ही घाटीरिक्ता की अभिव्यक्ति हैं। शीर-भावा काल के कवि जिस प्रकार एक ओर रण-संभ्राम करते थे, दूसरी ओर गृहकार की अन्वेषणा भी उसी प्रकार अपनी घाटीरिक्त अभिव्यक्ति में 'नबीन' की कृतियाँ हैं।<sup>२</sup>

स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-स्वाधीन-भारत में पाकर कवि की राष्ट्रीय-भावना सांस्कृतिक क्षेत्रों में अपना प्रसार पा गई। इस क्षेत्र में प्रमुखतया चार उपादान प्राप्त होते हैं—(क) भारत-प्रेम (ख) विश्व-प्रेम (ग) शीर-स्वजन और (घ) विनोदा स्वजन। अर्थात् अक्षयों ने ही कवि के स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रवाद की प्रतिमा का गठन किया है।

भारत-प्रेम—अप्य कवियों के सदस्य 'नबीन' को ने भी अपनी मातृ-भूमि की चम्पता की तथा उसकी प्रशंसा के वीथ गाये। इन पीठों में भारत की महिमा और गरिमा का मुखर रूप से आकलन किया गया है।

भारत के स्वाधीन होने पर, हमारे कवियों ने मुखर राष्ट्र-गीतों का मुखर किया। इनमें 'नबीन' की के प्रस्तुत गीत ने बड़ा क्याति प्राप्त की—

कोटि-कोटि कर्णों ने तिलसी  
धाम यही स्वरपारा है  
भारतवर्ष हमारा है, यह  
हिन्दुस्तान हमारा है।<sup>३</sup>

१ 'अप पुराने भरौने, कवियर 'नबीन' की पृष्ठ ३३-३४।

२ 'शे बारिली दामाबाव का उत्सर्ग' पृष्ठ २२४।

३ 'धामवर्ष', हिन्दुस्तान हमारा है, नितम्बर-अप्रैल, १९४०।

इस कविता में बन्दना पनस्ति और पुत्रा तथा प्रसीत और ब-यापन प्रायि समग्र सांस्कृतिक धारण एकमित हो गये हैं। इस रचना में हमारे स्वर्णिम युवकाल के कपाट खोले गये हैं और प्राचीन संस्कृति का तिहाससौक्य प्रस्तुत किया गया है। यह राष्ट्रीय-वीर 'बन्धेमातरम' को कोटि का है और यह 'प्रसाद' के प्रकाश यह मधुमय शेष इनाम' तथा 'निराला' के 'भारतों सब विजय करे का महिमा मण्डित प्रघस्त पंक्ति की घोषा को बहुत कर सकता है। डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है कि 'या नवीन को प्रसिद्ध कविता 'हिन्दुस्तान इनाम है और स्वयंसेवक गायक में प्रसाद का इमिड प्राज्ञान-नीत 'हिमाक्षय के जीवन में बिसे प्रथम किरणों का रे उपहार' प्रायि में, भारतीय संस्कृति का विकास का सुन्दर पुनरावसोक्त है। ये दोनों कविताएँ विषय के समुच्चय ही हैं।<sup>१</sup>

कवि की वाली महिमा के पस्तबा का प्रस्तुत करती है—

हृदये बहुत बार लिखी है  
कई क्षमितायाँ बड़ी बड़ी,  
इतिहासों में लिखा सदा ही  
पतिभय पाव हूँपारा है।<sup>२</sup>

भारत-माता के साथ ही साथ, कवि ने अपनी एक साथ कविता में भारतवासियों को बन्दना करते हुए, उनका प्रघस्ति पायन किया है—

भरत-क्षण्ड के तुम हे जन पाल,  
बम्बक रहे हैं तब घोषित में इस भारत-माता के रज कल  
पहूँकार, मस्तिष्क, बुद्धि, मन, यह सब क्या और चर्च्यता  
कला काव्य, इतिहास पुण्यतम, ललित कलित कोमल मयन-स्वर,  
लक्ष-लक्ष्य एकान्त साधना, दर्शन, चिन्तन, मनन निरन्तर।<sup>३</sup>

विश्व-प्रेम—हमारी अन्तराष्ट्रीय राजनीति विश्व-प्रेमी, पंचशील और इनसे अधिक महत्त्वपूर्ण हमारी भारतीय संस्कृति की परम्पराएँ, हमारे दार्शनिक एवं पुनीत धर्मों के प्रभाव के कारण, हमारे कवियों की भावना विश्व-प्रेम की ओर उन्मुख हो गईं। डॉ० नगेन्द्र ने लिखा है कि हिन्दी में इस विषय (भारतवर्ष को विश्व-प्रेमी मोति) पर अनेक कवियों ने अनेक रचनाएँ की और उनमें से अधिकतर का काव्य-गुण नयम्य नहीं है। फिर भी इनमें कम्पे प्रबल स्वर पन्थ सियाराजधरण गुठ नवीन' और दिनकर का ही रहा। पन्थ और सियाराजधरण में जहाँ शेष की मुक्त धारणा का पवित्र उन्मास है, वहाँ 'नवीन' और 'दिनकर' में उसका सांख्यिक धोख है।<sup>४</sup>

स्वाधीनता प्राप्ति की पुनीत बेला में कवि ने सर्वप्रथम भारतमाता से ही प्रार्थना की है कि वह हमें बल प्रदान कर नूतन तथा निष्कण्ट मानव बना दें। मानव की पुष्टि ही

१ 'सांख्यिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ, पृष्ठ ३१।

२ 'आधुनि', अतिम्बर ११६१, पृष्ठ २८।

३ 'प्रलयकर', भरत-क्षण्ड के तुम हे जन-पाल, तीसरी कविता, पृष्ठ १।

४ डॉ० नगेन्द्र के श्रेष्ठ निबन्ध, स्वतन्त्रता के परवान् हिन्दी साहित्य, पृष्ठ ८६।





शाश्वर्य विनोबा भावे ने कहा है कि जीवन-निष्ठा धीरे साहित्य दोनों एक रूप होने चाहिए।<sup>१</sup> कवि 'नवीन' ने अपनी निष्ठा को पूर्ण ईमानदारी के साथ प्रस्तुत कृति में प्रतिबिम्बित किया है। शाश्वर्य विनोबा भावे ने सामाजिक अज्ञानि एवं नूतन धर्म व्यवस्था के आचार पर एक अभिनव परिपाटी का धीमे-धीमे प्रस्तुत किया है। 'नवीन' भी की भासा प्रारम्भ से ही मानवी-भाव एवं सर्वोद्यम में रही है, अतएव उन्हें यहाँ अपनी सामाजिक कृति का सुन्दर मीढ़ प्राप्त हो गया। कवि ने बन्धनापरक शैली में इस विषय को प्रस्तुत किया है। कवि की अन्धकारपरक चिन्तन तथा सांस्कृतिक रूप अपने प्रकृत्य के साथ यहाँ उपस्थित हुआ है।

विनोबा स्तवन' और भूमिभाव'—श्री वैजिलीसरण गुप्त धीरे 'नवीन' भी दोनों ने ही इस विषय पर अपनी-अपनी शैली में कहा है। गुप्त जी के 'भूमिभाग' नामक कृतिपुस्तिका में भूदान सम्बन्धी २१ प्रगीत संकलित हैं। दोनों कवियों की मूल प्रेरणा तथा विचारधारा में भी साम्य है। यहाँ नवीन भी ने विनोबा के व्यक्तिगत को प्रमुख व प्रखर रूप में उपस्थित किया है। वहाँ गुप्त भी ने भूदान के विभिन्न पक्षों को सरल व भावधानपरक रूप में प्रस्तुत किया है। 'नवीन' भी ने भूदान के वैचारिक पक्ष तथा भारतीय संस्कृति के परम्परागत सूत्रों को अधिक उल्लेख किया है। गुप्त जी ने उसके व्यावहारिक पक्षों को स्पष्ट किया है। 'भूमिभाग' में बन्धनात्मक आर्थिक-आत्मिक व्यथात्मक तथा भावधानपरक शैली में अपने विषय को रोचकता तथा जन-सम्यता के साथ प्रस्तुत किया है, जबकि 'नवीन' जी का विनोबा-स्तवन बन्धनात्मक, गाम्भीर्य तथा शैलीपरक कृतियों को प्रथम प्रकाश करता है। गुप्त जी की भासा इस अज्ञानि को अत्यावश्यक मानती है—

ऐसे भूमि समस्या तुलझे, गर जाल में बेरा न उलझे,  
इसके समाधान करने में रलित रण निज रूप-बेस।<sup>२</sup>

'नवीन' जी के लानान गुप्त जी भी कहते हैं—

प्रभु ने जिस दिन दिया धारीर,

दिये उसी दिन हूँ बयाकर भू, नम, पाबल मोर, समीर।<sup>३</sup>

कवि के प्रति कही गई व्यंग्योक्ति या यहाँ 'भूमिभाग' में सरलता के पन्थन बिरकाती है, यहाँ यह उक्त 'विनोबा-स्तवन' में अनुभव्य है। भूमिभाग का व्यंग्य उल्लेख है—

कल्पित प्रिया बिरह की भाषा,

सहते हा तुम धाप दगापा।

किन्तु यथार्थ समाजों का हृदय सर पर बोध लिया करते हैं।<sup>४</sup>

दोनों कवियों की स्वातन्त्र्योत्तर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक अवधारणा की ये प्रतिनिधि रचनाएँ, अपने-अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती हैं। 'नवीन' ने अपनी ध्यान लक्ष्य विनोबा के

१ शाश्वर्य विनोबा भावे—'साहित्यिकों से आशीर्वाद बरवान दे, पृष्ठ १।

२ श्री वैजिलीसरण गुप्त—'भूमिभाग' उत्तरप्रदेश के प्रति, पृष्ठ ११।

३ 'भूमिभाग', भूमिहीन पृष्ठ ६।

४ यहाँ, पृष्ठ १४।

सांस्कृतिक एवं सन्देशमय व्यक्तित्व पर ही केन्द्रित किया और पुष्ट भी नै कलाके द्वारा प्रदर्शित आन्दोलन के सामाजिक धार्मिक पहलुओं को उभारा। स्रष्टा तथा सृष्टि को अपने विषय बनाने वाले वे दोनों कवि एक ही ब्रह्म की ही वाचार्थ हैं। 'बिगोरा' भी तथा उनके मूल्यान पर हिन्दी में विपुल कविताएँ लिखी गईं, परन्तु उपर्युक्त दो कवियों में ही उद्यम चिरन्तन यम्भीर तथा सर्वत रूप धा पाया है।

उपसंहार—स्वतन्त्र भारत में नवीन जी की राष्ट्रीयता ने सांस्कृतिक तत्वों को अपनी सीमाओं में समिद्धादि संभेट दिया। राष्ट्रभाव के राजनैतिक रूप की प्रपेक्षा उसका सांस्कृतिक पक्ष ही अधिक पुष्ट स्थायी तथा प्रेरणास्वरु होता है। डॉ० नरेन्द्र ने लिखा है कि "सामयिक प्रमाण का दूसरा नाम केन्द्र है और साहित्य भी केन्द्र से बन नहीं सकता। हिन्दी में न जाने कितने कवियों ने राष्ट्रीयता की चुनबारा में व्यवसाहन किये बिना प्राणों के स्फुरित्य की बयह मुंह के म्भय जगने और जिह्वसे दिग्घोर विमान के लोगों ने मूम-मूम कर उनकी वाह से। परन्तु यम्भीर कवियों और पाठकों को इनमें धात्मानिम्बधि नहीं बिबी। इसीप्रिये भारत-भाषी के कवि को सकेत और यशोधरा में धात्मानिम्बधन खोजना पड़ा रेखुका के कवि का कुष्ठेय में भाकर धमन-साक्षात्कार हुआ नवीन का सांस्कृतिक कविताओं में अपनी धारमा का रस उभेतना पड़ा और जो ऐसा नहीं कर सके वे काव्य-इतिहास के पुष्ट से मुक्त हो गये।"

धात्मान्ध मुय में कवि के राष्ट्रभाव ने मानवता विषय-मैत्री तथा उच्चतर जीवन-मूर्त्तों की ओर अपनी धाय को मोड़ दिया। सांस्कृतिक पारब की सचनता के साथ ही साध, धात्मानिम्बधता की पुष्टि भी निरसित हो गई। कवि अपने जीवन के सन्निधियों में राष्ट्रीयक रचनाओं की ओर उन्मुख होने के कारण ही राष्ट्रीय-काव्य की ओर प्रायः नीतराय रूढ़ि बना। इसका कारण कवि की निजी मनोरथा तथा रूप वृष्टि दो की ही परन्तु साध ही धम पठनीन माण्ड के लक्षय राजनैतिक उद्देश्य भी उतने स्पष्ट न धात्मान्ध नहीं रह गये थे।

वर्तमान-मुय में 'नवीन' की की राष्ट्रवाधिता की बारा बरहू म्भु के मन्ध तथा यम्भीर प्रबाह में परिचित हो गई। इन युग के राष्ट्र-परक काव्य में प्रौढ़ता तथा सचनता के दर्शन होते हैं। काव्य की इस परिस्वावस्था में संहित का धा आना भी स्वाभाविक ही था। माया तथा निम्न-पक्ष की प्रबल और मुचड़ विचारों देने तथा।

पराधीन माण्ड की तुलना में स्वाधीन भारत का राष्ट्रपरक काव्य-साहित्य धमन्ध स्वल्प है परन्तु बितना भी है वह अमरथा के तत्वों से समिधित है। सुस्वित्वा प्रौढ़ता न बित्तन ने मिलकर धात्मान्ध-मुय के राष्ट्रपरक काव्य को अपना धनूय स्वाध प्रदान किया है।

'नवीन' की की क्याति तथा साहित्यिक प्रविष्टर का मुलाधार कलाका लक्ष राष्ट्रपेय सांस्कृतिक काव्य-व्यक्तित्व है। इसी ने ही जहाँ उन्हें भारतमाया का 'रख-बीकुरा' बमत्वा नहीं भारत भाषी का मन्ध मक भी लोगों की सेवा में रह कवि का व्यक्तित्व, धमना धप्रतिम इतिहास खेड़ रहा है।





भाषा-सौजन्य—

(१) मूल रूप—मानव बीड़ा लिए पसीता, हहर-हहर बल उट्टी होतो ।<sup>१</sup>

संशोधित रूप—मानव बीड़ा लिये धरेपारे, हहर-हहर बल उट्टी होती ।<sup>२</sup>

(२) मूल रूप—धार्य्य, कई धरसें दीती हूँ, हम न कर सके तब मुख पायन ।

ध्रव भी क्या मासूम कि कैसे होगा मुक्त काल वातापन ।<sup>३</sup>

संशोधित रूप—देव ! कई धरसर बीठे हूँ, हम न कर सके तब मुख-पायन,

सात नहीं ध्रव भी कि कौन-बिधि होगा मुक्त काल-वातापन ।<sup>४</sup>

भाषा-सौजन्य के द्वारा कवि ने अपने संस्कृत-निष्ठ इच्छा का परिचय दिया है और धर्मसंज्ञक-कौशल की वीरुद्धि की है। भाषा में माधुर्य कुछ की वृद्धि भी हो गई है और काव्यानुसूचता भी प्रमत्त दिखाई पड़ती है। इन परिवर्तनों से सिकंद्र प्रभाव-वृद्धि में ही सहायता मिली है काव्य के धर्म्य धर्म्यों पर इनका कोई विधिष्ठ प्रभाव नहीं पड़ा है।

नामकरण—'मनोत' भी ने इस कृति का नामकरण हुतात्मा मत्सेध भी के धर्म्य धर्मोत्सर्ग के आधार पर किया है। इसमें कोई मनोचित्य दृष्टिकोण नहीं होता। हमारे भाषार्थों में यद्यपि अर्थ-काव्य के नामकरण के लिए कोई पृथक् तथा विधिष्ठ निर्देश नहीं दिये हैं, फिर भी भाषार्थ विरचनाय में महाकाव्य के लक्षणों का बर्तन करते हुए महाकाव्य के नाम के सम्बन्ध में लिखा है कि महाकाव्य का नामकरण कवि के नाम पर यथा कथावस्तु, नामक या धर्म्य पात्र के नाम के आधार पर आधारित हो, पर प्रत्येक सर्व का नाम उसके धर्म्य-विषय के आधार पर रखा जाय ।<sup>५</sup> इस आधार पर, प्रस्तुत-काव्य मत्सेध भी के बलिदान को कथा-वस्तु को प्रस्तुत करता है, एतदर्थ उसका प्राणार्पण नामकरण युक्तिसंगत है। धाम ही, दश सेनी के नामकरण हिमालय में प्रचुरमात्रा में प्रचलित भी है यथा, भी सिमारामधरस्य पुत्र ने पण्डित भी के प्राणार्पण पर लिखित काव्य का नामकरण 'भारतोत्सर्ग' किया ।<sup>६</sup>

इसके प्रतिरिक्त, इस कृति का नामकरण यदि कवि मत्सेध भी के नाम पर करता तो उसे उनके जीवन-वृत्त को भी समाहित करना पड़ता जिसके फलस्वरूप यह कृति अर्थ-काव्य को सीमाशेष का प्रतिफल कर जाती और कवि के धर्मोत्सर्ग की सटीक वृत्ति भी नहीं हो पाती। कवि मत्सेध भी के जीवन के सर्वाधिक प्रभावपूर्ण तथा प्रोत्सवक रूप को ही चिन्तित करना चाहता या जिसके लिए प्रस्तुत विधि के प्रतिरिक्त धर्म्य कोई घेष्ठ युक्ति नहीं थी। कवि ने जनसत्त्व की भाँति समग्र विद्विमा को लक्ष्य न बनाकर उसकी एकमात्र को ही अपने धर्म-सन्धान का केन्द्र बनाया है। इस प्रकार, सर्व दृष्टिकोण से रचना का नामकरण उपयुक्त तथा सारगम्य है।

१ 'बीसा', कुतार्, १९४२, पृष्ठ ७३।

२ 'प्रस्तार्पण', पृष्ठ १।

३ 'बीसा', कुतार्, १९४२, पृष्ठ ७७४।

४ 'प्रस्तार्पण' पृष्ठ २।

५. 'साहित्य धर्म्य', कथ परिचयेन इतोत् ३२१।

६ भी सिमारामधरस्य पुत्र— 'भारतोत्सर्ग'।

वस्तु-योजना—गणेश जी का बलिदान राष्ट्रीय संघाम के इतिहास की चिरस्मरणीय घटना है। इस घटना में ऐसा स्वतन्त्र धारणा उपस्थित किया जा कि वह अपनी सानी नहीं रखता। सत्याग्रहियों राक्षसीतियों तथा राष्ट्रमर्त्यों को मही प्रत्युत् 'कविर्ननीपियों' को भी इस घटना में भङ्गघोर दिया जा। उनका मानस प्रान्दोलित हो उठता था। उसी मन्त्रन का समूह मही हमें, 'नवीन' जी की इस कृति के रूप में, प्राप्त होता है।

गणेश जी 'नवीन' जी के निर्माता तथा पत्र-प्रवर्धक रहे हैं। उन्होंने ही 'नवीन' को कला, छात्रा-संघार और राष्ट्रीय आन्दोलन में अपनी प्रतिभुति बनाकर गतिशील कर दिया। इस कृति से ही मही अपितु पूर्वस्व से ही 'नवीन' जी ने अपने 'अपन', 'रक्तक', 'बलिहारी' तथा आराध्य' को भाव-सुमन प्रमित करने प्रारम्भ कर दिये थे। प्रया' में प्रकाशित कवि की गणेश जी विषयक रचनाओं में इस प्रौढ़ तथा सुपठित काव्य-कृति की भूमिका बताना शुरू कर दिया जा। कालान्तर में कवि के भाव प्रसून भद्रा तथा मक्ति के रसाक्ष में परिवर्तित हो गये जिनके काव्य-रस का आस्वाद इस रचना से लिया जा सकता है।

आलोच्य-कृति की कथा-वस्तु का धारण न तो कोई क्लेश-रूपमा ही है अथवा निर्भीक स्वप्न। इसमें तो कवि की वीर्यत अनुसूतिवा ही अपनी यथार्थवादिता तथा निष्पक्ष के साथ मन्त्रन कर, लिखी है। 'कवि के इस काव्य-भद्रा तथा भाव-दर्पण में ही, प्रस्तुत बाह्य-काव्य का प्रबन्धिनु आकार धारण कर लिया है।

वस्तु-विरसेपण—'अनात' जी ने अपने एक निबन्ध में 'पुष्पलोक गणेश जी के बलिदान की घटना के घणान को प्रस्तुत किया जा; अतएव, उनके ही धर्मों को, हम काव्य के कथानक के विरसेपण में उल्लेख किया जा सकता है—

- १ तेरा अनुभव क्या है कछे  
तुम्हें सिखाये यों 'सतमा' ?—'कु कुम', पृष्ठ २।
- २ तेरे बदनहस्त छाप है,  
अब भी तेरे मस्तक पर।—'कु कुम', पृष्ठ २।
- ३ बलिहारी, बलिदान प्रया'  
सिद्धताई तमको क्यों कर ?—'कु कुम' पृष्ठ २।
- ४ धर्मियों को कठिनाता से रोकी—  
जप रहे जो नाम तेरा ही तथा—  
वे जाने उन्मत्त से जो फिर रहे—  
प्रिल उठेगे देख अपने हीठ को।—'प्रया', अग्रैल, १९२३ पृष्ठ ३१९।
५. (क) 'प्रया', आगमन की बाहु, अग्रैल १९२३, पृष्ठ ३१९। (ख) 'प्रया', बाने  
पर, अग्रैल, १९२३, पृष्ठ ३२९।
६. 'प्रयागर्षल', अब भी प्रथम प्रकृति पत्र १।
७. श्री बाह्यकृत्य धर्मा 'नवीन'—'आजकल', पुष्पलोक गणेश जी, मार्च, १९५५,  
वर्ष १० अंक ११, पृष्ठ १४१०।

“१०३२ का कानपुर का हिन्दू-मुसलमान तुमुस मुठ विभीषिका पूर्ण था। तत्कालीन पासल उस तुमुसता को बढ़ाने में सहायक ही नहीं उसका भेदक भी था। बुसे का में, चित खड़े मार-काट, कुट-काटोड, मुह-बाह, बलात्कार, बालहत्या, सब कुछ होता रहा। धक्कापी मण्ड हँडते-मुसकपते रहे। वे हाव पर हाव धरे बैठे रहे। रजा का कोई प्रबन्ध नहीं किया। गणेशधर ने वह सब देखा धीर उनका हृदय विलोम, कन्धरा धीर कुछ करने की भावना से भर गया।

धक्कापी-मण्ड दानव हो गये। कानपुर बासी बानव हो गये। मानवता का प्रबोधेय कुछ हो गया। तो क्या? एक मानव कानपुर में बच रहा था। क्यों न वह अपने सामर्थ्य भर नस्त, मोतिपस्त मस्तु-मुष में पड़े हुये हिन्दू-मुसलमानों की उबारने का भार अपने ऊपर ले ले। कानपुर के बंपासी मोहम्मद नामक धेन में प्रायः दो-ती मुस्लिम नर-नारी बिरे पड़े थे। रात में कुछ मार खाते गये थे। मैं बने हुए बेड़-नो-सी लोग उठ उठ को मारे जाने जाने थे। गणेशधर बिना जाये-गिये प्रातः बर के निकल गये। बंगासी मोहम्मद पहुँचे। वहाँ के धाकनक हिन्दू गणेशधर को देखकर सहम गये। गणेशधर ने वहाँ के बिरे हुये मुसलमान नारी-नर बालबालों का निकाला धीर उन्हें मुसलमान मोहम्मदों में पहुँचाया। गणेशधर को हृदय से भरिये बैठे हुए मे कमयस्त सोन मूर्च्छित स्थान पर पहुँच गये।

इतने में गणेश भी को समाचार मिला कि कोई दो-ती हिन्दू कानपुर के बाँडे मोसा नामक मुस्लिम मोहम्मदों में मोव की बाट बोह रहे हैं। बंधासी मोहम्मद से सीमे ने बाँडे मोसा बल दिये। बाँडे मोसा तथा उसके भास-भास के क्षेत्र मुस्लिम क्षेत्र थे। वहाँ किसी हिन्दू के जाने का साहस नहीं पड़ सकता था। हिन्दू को देखते ही धुरियाँ बमक उठती धीर बड़ डेर कर दिया जाता। यह स्थिति की पर गणेशधर बल पड़े।

वहाँ जाने का मार्ग चौकबजाने से होकर था। यह हिन्दू-क्षेत्र था। जब गणेश भी चौक पहुँचे तो हिन्दुओं ने उन्हें बर लिया। ‘नहीं जाने दोगे धाकपी, गणेश भी। गणेश भी बोले, ‘जाइयो वहाँ प्रायः दो-ती हिन्दू धी-बन्धे बिरे पड़े हैं। रात होते हो ने समाप्त कर गिये जायेंगे। मैं उन्हें निकालने का रहा हूँ। लोग बीने, ‘नहीं गणेश भी, हम वहाँ जाने देंगे।’ पर, ने भ्रमककर धागे बड़े। लोग चिल्लाये ‘क्यों का रहे हो, गणेश भी? गणेश भी ने उत्तर दिया परने के लिये, तुम मी बलोगे? धीर यों बहते हुए ने धाने बड़ गये। हाँ, इतने धाने बड़ गये कि उत्तरप्रदेस मात्र तक धनके धाने की बाट बोह रहा है।

चौक से कानवर ने उस मुस्लिम क्षेत्र में पहुँचे। उनके साथ एक हिन्दू धीर मुसलमान स्वयंसेवक था। वे एक-दो मीटर सारियाँ बिरे हुओं को लिबा जाने के लिए गिरे गए थे। वहाँ को पहुँचे तो वहाँ के बड़े-बूढ़ों (मुसलमान) ने उनके भाव भूमे। बंपासी मोहम्मदों को उन्मुनि किया था उसका समाचार वहाँ फैल चुका था। लोग बोले—‘गणेश भी, धाक हज्जत नहीं, धाक फरिखे है। गणेश भी ने हिन्दू धी-बन्धों धीर पुर्यों को निकाला। सारियाँ मर गई। इतने में पाठ के एक धम्ब मुस्लिम मोहम्मदों से ‘दस्ताही धक्कर’ के नारे लगाया हुमा धीर ‘भाये-भाये का गेप कट्या हुमा एक जगमग दल बाता रिबाई दिया। गणेश भी बोले, ‘तुम सारियाँ ने बाधो मैं दूँ रोचना हूँ।

सारियाँ बल दी। इतने में एक मुस्लिम मुकक सोड़ा धावा। बर खीला धी के क्षेत्र

'विद्याधीनी' की भाव भागिनी । वे लोग अपनी कुछ दूर ही भाव अपनी जान बचाएँ । वे लोग पापक हैं, भावको मार देंगे । यों कहकर वह मरीच भी को खींचकर भागते सपा । बरौच भी ने हाथ छुड़ा किन्ना और अत्यन्त घान्त स्वर में बोले, 'मैंने भीतर में कमी पीठ नहीं दिखाई है । भावकर मैं अपनी जान नहीं बचाना चाहता । मुझे यदि मारकर भी इन लोगों की सून की पाप मुझे छोड़ी थी है ।'

उत्तम समूह ने उन्हें घेर लिया । जिन लोगों ने मरीच भी के बंधासी मोहाल के कार्यों का समाचार जान लिया था वे विस्मयित रहे कि ये फिरसे हैं इन्हें म मारो । पर, कौन सुनता ? एक ने एक माला पोछे से उनकी कमर में भोंक दिया । भासे की मोक भाये अन्ध-कोप तक निकल आई थी । वे लड़े लड़े । इतने में एक-दूसरे ने हक कर उनके सिर पर लाठी का प्रहार किया । धीरे धीरे मानवता का धन्य पुनारी होत रहा ।<sup>१</sup>

प्रदन्व-सित्य—प्रस्तुत-वृत्ति को बार सगों में विभावित किया गया है । प्रत्येक सगों को कवि ने 'प्राकृति' के नाम से सम्बोधित किया है । यह धर्मगत भी नहीं है । हिन्दू-सुस्तिम एकता की बलिबेटी पर मरीच भी ने अपने प्राणों की प्राकृति बड़ा दी थी । अथि भी, इसीलिए, प्राणों के बलिबानी के जीवनान्त की कथा का आकलन करते समय अपनी काव्य यमी प्राकृतियों का मता बसा बाठा है ।

'प्रस्तावना' में, कवि ने मरीच भी की मरणा की है । काव्य के प्रारम्भ में अपने इष्ट की स्तुति करना हमारे काव्य तथा शास्त्र की परम्परा रही है । मरीच भी का नाम भी 'करिबर बहन' मणुपति की का स्मरण दिखाता है, एतदर्थ इस दृष्टिकोण से भी मरणा सार्थक ही सिद्ध होती है । 'प्रस्तावना' के द्वितीय पीठ में अत्यन्त साम्प्रदायिक विज्ञेय तथा उद्येय की धयावह स्थिति की तीक्ष्ण भ्रमक प्रदान की गई है । श्रीमद्भयवद् गीता की वाली यथा-यथा हि जन्मस्य धीर लोका-नाथक सुतसी के कवन 'बन मत्र हाम भव की हानि' का यही चित्र उपस्थित किया गया है ।

संस्कृत के आचार्यों ने महाकाव्य की भाँति अन्ध-काव्य को जहाँ में सगंठता का नियम अनिवार्य नहीं बताया । महाकाव्य के लिये सगं-अन्ध होना अनिवार्य तत्व है । कारण यह है कि उनमें मानव-जीवन की बहुमुखी परिस्थितियों का समावेश होता है और कवि अनेक प्राथमिक कथाओं को भी अपने साथ लेता बनता है । फलतः कवि सम्पूर्ण कथा को इस प्रकार धनीक सगों में बिभक्त करके बनता है जिससे प्राथमिक कथाओं के सुन आधिपतिक कथा की बनाने में सहायक हो सकें । अतः महाकाव्य में कथा के अधिच्छिन्न प्रवाह के लिये सगों का बन्धान मितान्त आवश्यक हो जाता है । किन्तु अन्ध-काव्य के लिये यह नियम अनिवार्य नहीं । उसकी कथा सगों में होकर भी गूँधी जा सकती है और उसके बिना भी उसका प्रणयन हो सकता है क्योंकि जीवन के जिस विच्छिन्न धंश को धनवा घटना को लेकर कवि बनता है उनमें विस्तार का क्षेत्र बहुत छोटा होता है । फलतः अन्ध-काव्य में कथा की बाण प्राकृत एक रत्न भी बन सकती है और सगों में बँपकर भी ।<sup>२</sup>

१ 'प्राकृत', मार्च, १९५५, पृष्ठ १६ १७ ।

२ डॉ० मकुलता कुबे,—'वाच्यरत्नों के सुन तीन धीरे उनका विकास', अन्ध काव्य का स्वरूप, पृष्ठ १४३ १४७ ।

'गर्जन' की ये कविधा तथा उचित प्रस्तुतीकरण के दृष्टिकोण से 'प्राणार्पण' का सर्वो में विभाजन किया है। प्रस्तावना तथा प्रथम सर्ग में काव्य की पृष्ठभूमि प्रकृत है। द्वितीय सर्ग के प्रारम्भ में तत्कालीन राजनैतिक तथा सामाजिक स्थिति राष्ट्रीय भावना महात्मा गान्धी के उत्साहक भावोंसे का उत्कर्ष स्वाधीनता का प्रतिज्ञा-पत्र गान्धी-इतिवृत्त समझौदा, महासंविद को प्राणदण्ड पृथ-मुड जन-जागृति, साम्प्रदायिक झगड़ों का धीमण्डल आदि चित्रण किया गया है। इस प्रकार प्रथम का सर्ग भूमिका-निर्माण में जुटाये गये हैं। बहूँ प्रथम सर्ग में तत्कालीन परिस्थितियों का भावपरक एवं उत्तेजना प्रदान बर्णन है वहीं द्वितीय सर्ग में उसका वस्तुपरक एवं राजनैतिक राष्ट्रवाय विषयक चित्रण है।

काव्य-रचा का सांस्कृतिक संस दिनांक २४ तथा २५ मार्च १९२१ से सम्बन्ध रखता है और यह तृतीय सर्ग से प्रारम्भ होता है। तृतीय सर्ग में गणेश जी के २४ मार्च की स्मृति का बर्णन है। वे उत्सव तथा चिन्तित हैं। 'एहि भर के निवार-विमर्श करते हैं। कबि ने इसी निवार-बोधिका में हिंसा-ग्रहिता धर्म-वासन की उदासीनता विवेधियों के प्रति अपना धाकोष धादि के हथपावन किये हैं। गणेश जी हृदप्रतिज्ञ हो जाते हैं। जन-जन की पीडा-मुक्ति के सिद् के दृष्टि-बद्ध हो जाते हैं। राति उपा में परिलक्ष हो जाती है। अतुर्व सर्ग में गणेश जी की जन-सेवा कीर-भाजना तथा आत्मोत्सर्ग का चित्रण है।

प्रबन्धात्मकता तथा कथा प्रवाह के दृष्टिकोण से इस कृति का अतुर्व सर्ग ही महत्वपूर्ण है जो सबसे अधिक सक्रिय तथा शीर्ष है। प्रथम तथा द्वितीय सर्ग में कथा का प्रायः प्रभाव ही है और तृतीय सर्ग में कथानक की भीषण-वेलाएँ ही घा पामी हैं। अतुर्व सर्ग में कथानक का उत्कर्ष सचनता चिन्तापोषता तथा समाप्ति सभी कुछ, धाकर एकत्रित हो जाते हैं।

कबि की गीतात्मिका वृत्ति तथा उससे बढ़कर निवार-मन्थन के उपकरणों से प्रबन्धात्मकता पर धापाठ पहुँचा है। कबि का दृष्टिकोण भी, इसे बटनापरक काव्य बनाने का नहीं प्रयत्न होता। कबि की श्रदा का निर्भर होने के कारण बहूँ इसमें भावना की प्रबानता है, बहूँ प्रथम का अर्पण इसी क नाठ करित तथा मगन चिन्तन के छरों का प्राधान्य है।

परिच-चित्रण—बसुत 'प्राणार्पण' करित प्रथम काव्य है। कबि ने प्रारम्भ में ही इस बात का स्पष्ट संकेत कर दिया है। 'रचनाकार ने गणेश जी के उद्गम तथा महत्त्व का प्रतीक रिष्या प्रदान की है।'

२५ मार्च १९२१ के सुबह ही यह ग्रहिता का पुनारी बसिदान के मार्ग पर चल पड़ा। लोगों के धनर्शन बचने पर भी, उसकी ठनिक चिन्ता न कर, वे अपने प्रति-नय पर धरिण रहे। उन्होंने हिन्दू बस्ती से मुसलमान घर-नारी और बालकों की उचार। बोपहर हो

१ मेरे गणेश जी यह बाबा, मेरे प्रथम का है अर्पण  
है कोई काव्य नहीं यह तो है केवल मम श्रद्धा-तर्पण ॥

—'प्राणार्पण', प्रथम सर्ग, सूत्र २ पृष्ठ २

२. 'प्राणार्पण', प्रस्तावना, प्रथम गीत, पृष्ठ २।

मई। मण्डेय जी का मुख झुम्झसा गया। एक बूढ़ा ने बल पीने का आग्रह किया, सो उन्होंने मना कर दिया।<sup>१</sup>

मण्डेय जी के बलहितकारी तथा निर्भय कार्यों ने उनको सर्वप्रिय मानव बना दिया। लोगों की सहभाषनाएँ इस धाम्नि-भूत के प्रति बरबस ही प्रकट हो गईं।<sup>२</sup> हिन्दू बस्ती से जब वे मुस्लिम बस्ती की ओर हिन्दू नर-नारियों के उद्धारार्थ गये तो वहाँ भी स्नेह की दृष्टि होने लगी।<sup>३</sup> वहाँ उन्होंने अपने कर्त्तव्य को पूरा किया। विपत्तिग्रस्त हिन्दू-नर नारियों को प्राण-दान दिया और उन्हें उस स्वल्प से विशा करवाया। वे छक्केठा और बीर पुरुष थे। कापुष्पता को उन्होंने गंभी नहीं समया था। एक शोध-मद-मत्त, हृत्पा-रक्त-चित्त और रक्तपायी मुस्लिम बस को देखकर अपने सहयोगी मुस्लिम स्वय-सेवक के धनुरोच तथा बीचने पर भी, उन्होंने खेत छोड़कर भागना कायरता तथा पाप समझा। हृत्पाओं ने वहाँ अपना काम तमाम कर दिया।<sup>४</sup>

इस प्रकार मण्डेय जी ने प्राणोत्सर्ग का समुत्पुर्ण दृष्टान्त प्रस्तुत किया। दुनिया के इतिहास में यह घटना विरल है।<sup>५</sup> मण्डेय जी के बलिदान का महत्व विशिष्ट एवं मजूठा है। कवि ने इस धातोत्सर्ग को ईसा और रफीचि के धारम-स्पाग से भी एक दृष्टि से श्रेयस्कर बतसाया है —

ईसा धी' रफीचि तु ग पिरि सिद्धरीं वे बङ्ग  
 देते हैं सम्येद्य नये जग-जग-गण को,  
 इन श्रमिकस्य श्रेयस्कर्य धार्यमुनिनीं ने,  
 उर्ध्व बाहु होके सतकारा है मरस को  
 पर ये ये बाधारण जनगण से बहुत निष्ठ,  
 इनने तो सिद्ध किया ईसावतरण को।  
 किन्तु धीमण्डेय जी जन-यंकि में प्रतिष्ठित हो,  
 करते चले हैं सिद्ध मानवाचरण को।<sup>६</sup>

इस प्रकार 'नवीन' जी के शरित्त-नायक में महिमामय बलिदान, कर्त्तव्यपरायणता महान् संकल्पवृत्ति, धार्मिकता सात्त्विकता मानवता के प्रति निष्पन्न आहिंसा-श्रेय सत्यवादिता तथा समन्वयवादिता के बन्दनीय गुण प्राप्त होते हैं।

गुण-श्रेयसना सामुहिक युव की राष्ट्रीय एवं सामाजिक चेतना की इस काव्य में सुन्दर प्रतिबिम्बित हुई है। इस दृष्टिकोण से, इस काव्य का नवीन साहित्य में सर्वथा पृथक एवं अनुपमेय स्थान है।

१ 'प्राणार्पण' पृष्ठ १६, पृष्ठ ३८।

२ वही पृष्ठ २२ पृष्ठ ३६।

३ वही, पृष्ठ ४६ पृष्ठ ४८।

४ वही' पृष्ठ ५६, पृष्ठ ५१।

५ वही, पृष्ठ ३८, पृष्ठ ४४।

६ वही' पृष्ठ ३०, पृष्ठ ४४।

इसका अर्थ काव्य-रचना का सम्बन्ध ही धार्मिक युग से है। मण्डय भी का व्यक्तिगत राष्ट्रीय-धार्मिक के इतिहास में प्रतिष्ठित तथा स्थापित प्राप्त रहा है। वे उत्तरप्रदेश के पण्डित नेताओं में से थे।

'नवीन भी ने सन् १९१०-११ की राष्ट्रीय-संवेतना को इस काव्य में काफी प्रथम भी है। इस कामाक्षि की पद्यार्थों के लिये जो द्वितीय युग का निर्माण किया गया है। स्वयं रचनाकार तथा उसका चरित्रनायक, दोनों ही, इस युग से अभिप्रेत रूप में सम्बद्ध हैं। पद्यरचना कवि की प्रत्यक्ष धनुर्मूर्तियों को ही यहाँ स्थापित प्राप्त हुआ है।

कवि ने युग-संवेतना के अन्तर्गत, उत्तरसीमा राष्ट्रीय धार्मिक प्रतिकारियों के कार्य, गान्धी जी तथा उनका उत्साह धार्मिक, जनजागृति विविध सरकार की पूर की नीति और साम्प्रदायिकता के विषय को फेराने की चालों पर प्रकाश डाला है। सन् १९११ की दो प्रमुख रचनाएँ—गान्धी जी का नामक उत्साह तथा गान्धी इरविन समझौता है—

यस अखण्ड-धोर की लोत्तार्पण धनता दुध-मुद्य संय सापी भी  
गान्धी इरविन समझौते ने छातन को कजर लभायी भी।

इस युग के कविता पर तीन भटना कपी गझनों का उदय हुआ था जिन्होंने उत्कृष्टतम भारत को एक ढाँचा था—(क) कान्तिकारियों को प्राणव्यव (ख) गान्धी जी के उत्साह धार्मिकता का मुदम उत्थान, (ग) साम्प्रदायिक-विषय-वृद्धि।

वेच क हेतु, धनता सर्वस्व-स्वीकार करने वाले कविपय कान्तिकारी माहौर काउगुह में बैठे, धनता बसिदेवी की धातुरतागुरुक प्रतीला कर रहे थे और उबर समय भारत में खोम की बहुरें परिष्ठात थीं —

माहौर बिलबाने में से से सरपरोस कुय नीजबान,  
जिनने एक धनता देखा था, जिनने पी पीन को पडान,  
न्यायालय का हुनम से भूनेमे धनर हिरोने पर,  
भातावाही से धनय मीर से विचलित धनके अन्तर तर।<sup>१</sup>

गान्धी-इरविन समझौते के कारण राष्ट्रीय-धार्मिक स्वगित कर दिया गया—

राष्ट्रीय मुद डिरे हुआ स्वगित, गान्धी इरविन का मेल हुआ,  
पर लोकरशाहो के लेखे यह सब डिगुल का खेल हुआ।<sup>२</sup>

सरकार ने समग्र रोप तथा उत्साह को साम्प्रदायिकता की धोर उन्मुख कर दिया।<sup>३</sup>

१ 'प्राणार्पण' धन्य २, पृष्ठ २२।

२ वही, धन्य ३।

३ वही, धन्य २१, पृष्ठ १७।

× "इस वर्ष एक भटना धोर पटी। कर्नाली-अपेध अधिवेशन के लिए जो प्रतिनिधियों का चुनाव हुआ, बसने लक्षण कपी स्वयंसेवक धोर कार्यकर्ता हो चुके गये। इससे नेताओं में खोम हीना स्वामाधिक था। किन्तु विद्यार्थी भी ने उस उत्साह के प्रस्ताव में इस चुनाव को जीका कट्ये हुए युवकों का समर्पण किया धोर रुके हुए नेताओं को एक लीको लिङ्गी की थी। उनके यहाँ सब मुद युवकों को मीहू सेले थे। अन्त में २३ मार्च काया धोर हम लोग कर्नाली के लिये रवाना हो गये। उसी दिन सरकार भगतसिंह धोर



पूरे के बीच की रिये। कृष्णमूर्ति श्री परीक्षित विधि अपना भी गई। 'नवीन' की ये सिखा है—

ये साहजिक्य के गुलने, जिनका है सब दिन यही काम,  
सङ्घाते हैं इंसानों को लेकर मजहब का पाक नाम;  
कारिगरेज्राही ने सोचा है यही धारम-रसा का पय,  
धार्मिक भ्रष्टे होते जायें, श्री' बलता जाये जीवन-रथ।<sup>१</sup>

कवि का यह मत है कि जब-जब भी इसी प्रकार राष्ट्रीय भावना बसती है, साम्प्रदायिक विषय ने भी अपने पंजे बड़भू है।<sup>२</sup>

साम्प्रदायिक गरल के उखलने पर, मस्तिष्क तथा बार्जों में झनझा हो पड़ा। शास्त्रिणी और पीपल धापस में इन्द्र मुझ करने लगे। धर्मिधाय नान रूप धारण कर आया। विषमता तथा विकार कुलकर बेस बेसने लगे। समझ-सत्याग्रह के पुनीत बाधुमन्त्रण के किन्तु-सुस्मिन्म इन्द्र की विपरीती श्रीश्री ने प्रष्ट तथा बिनष्ट कर दिया।<sup>३</sup> इस प्रकार 'नवीन' की ये अपने युग की नब्ब को इस कृति में मामिष्टता तथा प्रभावोत्पादकता के साथ प्रस्तुत किया है।

खण्डकाव्यत्व—हमारे भाषायों में खण्ड-काव्य को प्रबन्ध-काव्य का एक सेर माना है।<sup>४</sup> धार्मिक विश्वनाथ के धनुसार, महाकाव्य क एक सेर या प्रंच का धनुसरण करने वाला काव्य खण्डकाव्य कहसता है—

खण्डकाव्यं मध्येकाव्यस्यैकवेसानुसारि च।<sup>५</sup>

खण्डकाव्य में जीवन का एक पत्र या प्रंच धपवा चरित्र का एक पार्श्व धर्मिष्पत होता है। उसमें मानव-जीवन की सामान्य धकवा घसामान्य धधुमूर्ति का सुन्दर रूप से प्रस्तुत होता है। डॉ० गुलाबराय के 'मसानुसार खण्डकाव्य में प्रबन्धकाव्य हानि के कारण कवा का साध्यम तो रूठा है, किन्तु महाकाव्य की धपेजा उसका सेज सीमित हुेता है। उसमें जीवन की बहु धनेकमता नहीं रहती, जो महाकाव्य में होती है। उसमें कहानी और एकांकी की कृति एक ही प्रमान बटना क लिए सामरी जुटाई जाती है।<sup>६</sup>

उनके साथी राजगुरु और सुबदेव की को फाँसी हुई। क्रांतिकारियों का मङ्ग होने के नाने उसकी बिरोध प्रतिधिया कानपुर में हुई। सुबहों के बल के बल धर्मेजों के बिरुद्ध बिद्रोह करने के लिए निकल पड़े। किन्तु धातकों ने इस बिप्लव को साम्प्रदायिक धंगे के रूप में बबल दिया और करीबी में २५ मार्च को हमें यह हृदय-बिदारक समाचार सुनने को मिला कि बिधार्थी की एक स्वयंसेवक ने साथ साम्प्रदायिकता की बलिबेरी पर धुक हो मये—गलेगा स्मृति धन्व, पृष्ठ १५५।

१ 'भ्राणार्पण', धम्ब ७, पृष्ठ १३।

२ वही, धम्ब ६, पृष्ठ १४।

३ वही, धम्ब १५, पृष्ठ १५।

४ श्री रामदहिम मिश्र—'काव्य-बपण', पृष्ठ २४६।

५ 'साहित्य धर्षण', पृष्ठ परिच्छेद, इतोब ३२६।

६ डॉ० गुलाबराय—'लिङ्गात और धधपधन', भाग २, पृष्ठ १०४।

उपयुक्त कवनों के आधार पर, प्रस्तार्पण में गणेश जी का समग्र जीवन-वृत्त न मूँसित कर, उसके एक पक्ष या घटना को ही लिया गया है जिसमें गान्धी जी को भी ईर्ष्यासु बना दिया। गणेशजी का धार्योत्सव ही कथावस्तु की पुरी है और गणेश जी काव्य के प्रतिष्ठित-नायक। इस रचना का स्वाधीनता कक्षण है और संगीत कक्षण है। प्रयुक्त रस के साथ, सहायक के रूप में वीर, वीर और दान्त रस भी पाये हैं। कवि ने घटना को उत्त्परक रूप में न देखकर, भाव तथा विचारोद्दीप्त के रूप में प्रहाण किया है। घटना की अपेक्षा चरित्र को प्राधान्य मिला है। प्रबन्धभासकता के दृष्टिकोण से इस कृति को सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

चरित्र, रस-सृष्टि तथा प्रौढ़ काव्यात्मियकृति के आधार पर, इसे सफल साहित्य-काव्य माना जा सकता है।

गणेश जी विषयक अन्य काव्य—हुतात्मा गणेश जी ने अपने युग में कवियों तथा मनीषियों को प्रभावित किया था। उनका एक 'वैचारिक सम्प्रदाय' ही बन गया था जिसे 'गणेश-स्कूल' या 'प्रताप परिवार' के नाम से सम्बोधित किया जाता था। इस सम्प्रदाय के कवियों ने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-शास्त्र को नूतन भूमि प्रदान की है। गणेश जी स्वयं कवियों तथा लेखकों को प्रेरित करते, प्रोत्साहन देते और मार्ग-दर्शन प्रदान किया करते थे। कवियों ने उनको अपने काव्य का विषय बनाकर अपने काली को उपकृत किया।

गणेश जी को महात्मा गान्धी ने मुँसित संस्था कहा है।<sup>१</sup> श्री मैथिलीशरण गुप्त ने भी उन्हें निरुपरी कहा है।<sup>२</sup> गुप्त जी के सीसापचनाद्य मतक 'काबा और कर्बता' 'मनित', 'भरनों के नाम तरक से एक बर (कविता)'<sup>३</sup> 'उमा बाता है' (कविता),<sup>४</sup> 'बन वेमक' 'स्वदेह संगीत' तथा 'साकेत' आदि पर गणेश जी की राजनीतिक वैचारिक तथा परामर्शदाता का प्रभावकाल किया जा सकता है।<sup>५</sup> 'मनय' का पद्य गणेश जी की ही जीवित प्रतिष्ठति है।<sup>६</sup>

गणेश जी को हमारे कवियों ने सुगु एवं प्रबन्ध दोनों ही प्रकार के काव्यों का नायक बनाया है। श्री मैथिलीशरण गुप्त ने 'विष्णु-विदेहा-गुणी गणेश कृत्कर, उनको अपनी कल्पनाम्बुधि धरित की है।<sup>७</sup> श्री माखनदास चतुर्वेदी ने गणेश जी की प्रथम गिरफ्तारी को 'बन्धनसुख' (सम् १९१७), 'बेत-मनन को सन्तोष' (सम् १९१८) और फतहपुर के सुकरमे की सजा काटकर, 'नाता बेल छ छुने को सीटे' (सम् १९२४) धीरेक कविताओं का प्रतिपाद

१ 'प्रसंगोत्सव', पृष्ठ ३।

२ श्री मैथिलीशरण गुप्त—'सुबा', गलैसा जी, नवम्बर, १९११, पृष्ठ ४१८-४१९।

३ साप्ताहिक 'नविष्णु', सम् १९२०।

४ 'जया समाज', बनारस, १९५२, पृष्ठ १४।

५ 'सुबा', नवम्बर, १९११, पृष्ठ ४४०-४४०।

६ वही, पृष्ठ ४४०।

७ 'नर्मदा', सप्तम्बर, १९११, सुत्रपृष्ठ।

८ 'हिमकिरीटिनी', पृष्ठ २१।

९. 'जाता', पृष्ठ १२७।

१० वही, पृष्ठ १२८।

विषय बनाया। कबिबन्धु श्री ययाप्रसाद शुक्ल 'निम्न' में अमर सङ्गीत कलेख की<sup>१</sup> शीर्षक कविता में अपनी भावार्थकति व्यक्त की। सन् १९२४ में गणेश जी के केन्द्रीय कार्यागृह मैत्री से मुक्त होने पर, उनके स्वागतार्थ श्री ध्यामनाथ गुप्त 'पार्वर' में घाट सड़कों की एक लम्बी रचना की सृष्टि की।<sup>२</sup> 'पार्वर' की ही कलेख की श्री मृत्यु पर भी कविता लिखी थी।<sup>३</sup> मुन्शी प्रबन्धेरी ने विविध बलिदान,<sup>४</sup> श्री 'हिम्य' में 'तेरी उमाधि पर घटा के कुछ फूल बड़ाये जाये है'<sup>५</sup> श्री रामनाथ गुप्त ने 'पुण्य-स्मृति',<sup>६</sup> श्री मुरखन 'बाल' में युग देवता गणेश<sup>७</sup> और श्री हरमोचिन्द्र गुप्त ने 'हम प्रताप है क्योंकि कर सके कोई भी वो काम न उतका'<sup>८</sup> में हठारना की विविध प्रकार से बन्धना की है। श्री हरमोचिन्द्र गुप्त ने 'गणेश जी का बलिदान शीर्षक कठिपव स्फुट पद्यों की भी रचना की।<sup>९</sup> श्री कल्याणकर शुक्ल 'कलेख' में भी गणेश जी के निधन पर घाटोद्धार प्रकट किये।<sup>१०</sup>

इन समय रचनाओं में गणेश जी विषयक काव्य-साहित्य में 'नवीन' जी के प्राणार्पण और श्री सिमारामदरण्य गुप्त के धारमोत्सर्ग शीर्षक प्रबन्धकृतियों का ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। गणेश जी विषयक स्फुट रचनाओं में अमर सङ्गीत के व्यक्तित्व तथा बलिदान के विविध पक्षों का बन्धना एवं प्रकृतिपरक षोडशों में प्रस्तुत किया गया है।

प्राणार्पण तथा धारमोत्सर्ग—प्राणार्पण तथा धारमोत्सर्ग काव्य के दोनों रचयिता ही गणेश जी के अनुगत तथा 'प्रताप'-परिवार के सदस्य रहे हैं। दोनों की इन कृतियों के श्रोत एक ही हैं। बड़ा नवीन जी की अनुमति प्रत्यक्ष एवं अत्यन्त है, बड़ा गुप्त जी की अनुमति परोक्ष एवं शोभ्य है।<sup>११</sup> गुप्त जी ने इस रचना को सन् १९३१-३२ (पुष्करिणीमा

१ 'नर्मदा', अमृतबर, १९६१, पृष्ठ २२।

२ 'पुण्य-स्मृति प्रबन्ध', पृष्ठ १००-१०१।

३ श्री ध्यामनाथ गुप्त 'पार्वर' वर्षक से हुई प्रायश भेंट (दिनांक १७-६-१९६१)

में प्राप्त।

४ 'नर्मदा', अमृतबर, १९६१, पृष्ठ ११५-११६।

५ वही, पृष्ठ ६३।

६ वही, पृष्ठ १२५-१२६।

७ वैदिक 'प्रताप', ३१ मार्च, १९५४।

८ 'नर्मदा', पृष्ठ ७५।

९ वही, पृष्ठ १५१।

१० हिन्दी साहित्य का विद्यास और कानपुर, पृष्ठ ३३१।

११ 'एक दिन एकाएक समाचार-पत्र में पढ़ा कि कानपुर के साम्प्रदायिक उपद्रव में विद्यार्थी भी लापता हो गये हैं। बृहत्तर कठोरतर घाघात हुआ, परन्तु अतः समय घाघात में साथ दिया। इस बात पर विश्वास करने की भी न बाधा कि विद्यार्थी भी को दुर्बल घाघातक इस प्रकार हम लीनों से बिलय कर सकता है। बहु दिन तो किसी तरह भीत गया, परन्तु रात को नींद न आई। उसी प्रतिज्ञा में मुझे विद्यार्थी भी के अनेक संस्मरणों के साथ उस कथानक की भी याद आ गई। उसी समय मन में आया कि विद्यार्थी भी अति घायल हो

राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काय

सं० १९५८ वि०) में ही निम्न शाला या 'बहौ नबीन' की अपनी कृति को दस वर्ष परचाय सन् १९४१ में लिख सके। इसका कारण कवि की व्यस्तता समयमात्र एवं संघर्षमय जीवन था। बहौ 'मात्सोत्सर्ग' की अनुप्रासित हो चुकी है। बहौ 'मात्सोत्सर्ग' कवि के जीवन-काल की तो बात ही छोड़िये जब सन् १९६२ में प्रकाशित हुआ है।

दोनों काव्यों की कला-वस्तु में सादृश्य है। २४ मार्च और २५ मार्च १९३१ ई० को, दोनों ने ही अपने कथानक का मुकामार बनाया है। गुप्त की या कथानक अधिक विस्तृत तथा प्रयत्न है। बहौ 'मात्सोत्सर्ग' मण्डेय की की मृत्यु के परचाय समाप्त हो जाता है बहौ 'मात्सोत्सर्ग' में उसके परचाय की भटनाएँ मया-घब का अभ्येयण जन प्रतिष्ठितार्थ, बाहु-संस्कार प्रादि के भी बिबरण उपस्थित किये गये हैं। 'मात्सोत्सर्ग' में बार सर्ग हैं जबकि 'मात्सोत्सर्ग' तीन सर्गों में विभाजित है।

कला-वस्तु की पृष्ठभूमि का बितना मध्य प्रयत्न तथा विस्तृत संकन 'मात्सोत्सर्ग' में हुआ है, उतना 'मात्सोत्सर्ग' में नहीं। 'नबीन' की ने तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों तथा राष्ट्रीय चेतना का उदात्त तथा प्रखर रूप प्रस्तुत किया है। गुप्त की ने इसके संकेत मात्र ही दिये हैं। साम्प्रदायिकता तथा हिन्दू-मुस्लिम द्वन्द्व को सांस्कृतिक तथा चिन्तन की मूर्तिका पर, 'मात्सोत्सर्ग' में अधिक उठाया गया है। 'मात्सोत्सर्ग' की ध्वनि में मोक्ष प्राप्तेय तथा गाम्भीर्य है, जबकि 'मात्सोत्सर्ग' में सौम्यता तथा सुष्ठुता को प्राभास्य निजा है। इसके लिए दो इत्यान्त पर्याप्त हैं-

(१) ओ निरहुर नीररसाही, जगतसिंह को काँधी देकर,  
 कर लो तुझे मनचाही ?  
 प्राजीवन बन्दी एक त्रिसको, कुछ है सखी की दूने,  
 फिर बिसुल कर घर-घर उसको, स्वयं बिठात दिया तुने।  
 —'मात्सोत्सर्ग', पृष्ठ १६

फाँसी पर झूले जगतसिंह, उनके साथी भी झूम गये,  
 भारतवासी हो उठे झूठ, ने अपनी सुन-सुन मूल गये  
 मड़की पलायि, उमड़ी बबाला, घाबाज लगी, हनुताल हुई,  
 बिद्रोह बना, उठ पड़ा रथेय, जगता को फाँसें माल हुई;  
 जमलत बिजासियों के प्रति उठ मड़का कोपालत प्रचार,  
 भारत का धाम्त महासागर उज्जना, उसमें धा गया नबार।  
 —'मात्सोत्सर्ग', पृष्ठ १६

(२) कहा एक अधिकारी ने है—'जाओ गांधी जी के पास।  
 ×  
 बकित हो गये जिहासों जी, तुम प्रागमुरु की बातें;  
 गांधी जी के पास-घाहूँ। ×  
 बे, निपट निपट, सोखी घालें,  
 ×

हुन्दाने के लिए अपना जीवन होम सखी है, उसे हुन्दाने के लिए तुझे अपनी जगज्य त्यागी का भी कुछ न कुछ उपयोग प्रशय करना चाहिये। बनी निरहय ने सुन्ती यह झूठ कविता लिखना जाती है।'—नियाराजसदरण गुप्त, 'मात्सोत्सर्ग', निबंदन, पृष्ठ ११-१२।  
 १ 'मात्सोत्सर्ग', पृष्ठ ८४।

हँसोकर रहा बुलियों से तु, जो निष्ठुर कर्तव्य ब्रष्ट;  
हँसी साब हो आयेगी, तो हो आयेगी मुझ विनष्ट ।

— 'भारतोत्सर्ग', पृष्ठ २८

देख हमारी बानस लीला वे तो करते हैं उग्रहास,  
तुन कातर पुकार वे कहते, 'दुम आघो गेम्ही के पास ।  
गान्धी के ही बाल बायीं, मत धराराघो तानेकड ।  
गान्धी से हम धमी दूर हैं, इसीलिए हैं तेरे बन्ध-  
ठेरी उकठ कठ की हाड़ी, बड़ न लकेगी बारम्बार,  
बूब पका ले अपनी सिखड़ी, कर ले बी भर बचन प्रहार ।

— 'प्राणार्पण' गणेशजी का चिन्तन, पृष्ठ २६

भारतोत्सर्ग में सम्वाद-रत्न की बहुलता है । 'प्राणार्पण' में अशौचिक कर्तव्यों को भी स्थान मिला है परन्तु भारतोत्सर्ग में इसका सर्वथा अभाव है । दोनों में ही चरित्र तथा उद्देश्य की प्राण-व्यक्तिपर मुखर तथा प्रमत्तियुक्त रूप से की है । मछेस जी का व्यक्तित्व 'प्राणार्पण' में जितना उचात प्रभावोत्पाक तथा धामा-मण्डित है उतने अंशों में बड़ 'भारतोत्सर्ग' में, प्राप्त नहीं होता । अष्ट-काव्य तथा प्रबन्धात्मकता के दृष्टिकोण से भारतोत्सर्ग अधिक सफल रचना है, परन्तु काव्य-साधीनता प्रोत्सवता चिन्तन-प्रचुरता तथा विषय-प्रस्तुतीकरण के दृष्टिकोण से 'प्राणार्पण' कहीं अधिक उभर कर आई है । गणेश जी के बलिदान को जो प्रभा तथा गरिमा 'नवीन' जी की सैकनी में प्रदान की है वह गुण जी से सम्भव नहीं हो सका है । गणेश जी के बलिदान पर 'भारतोत्सर्ग' का कवि कहता है—

पुर्णवृत्ति हो गई तुलसमा, तत्काल बोक बड़ा भू पर,  
उत धरीर के बन्धीगृह से, धारमा बह उब्डीन हुई,  
धमर ज्योति बह धमर ज्योति में तबाकार, तरलीन हुई ।  
बीन हुई विनकर की धामा, साम्प-गगन में होकर बीन  
हेतु बिना जाने ही सहता सुहृदों के मन हुए मलीन !<sup>१</sup>

'प्राणार्पण' का कवि इसी बात को प्रस्तुत रूप में उपस्थित करता है—

बया बाया रोयी, लोठ रजन विनक उठा,  
बब परासायी हुमा बह बिर धीर खेठ-  
धम्बर वा छोर कंवा; बरिभो तिहर फठी,  
बब धरती पर गिरा बह धीर खेठ  
भारतोत्सर्ग बेरी को प्रपूर्ण इष्य-आम मिला,  
यत्र भावना को हुई प्राप्त साहृति पखेष्ट  
सैचिन कर्तविकी तबा को हुई भागवना,  
बब भी गलेता का शरीर हो मया पखेष्ट ।<sup>२</sup>

१ 'भारतोत्सर्ग', पृष्ठ ७५ ।

२ 'प्राणार्पण', पृष्ठ ५१ ।

पुस जो गलेघ भी का महत्वात्मक करते हुए कहते हैं—

भारमोत्सर्ग छोसता, शुचिता, दृढ़ता प्रपरिमिता तेरो !  
निबिल बिषय में परिध्याप्त हो, प्रति बहु सर्बहिता तेरो;  
घर घर हाथ प्रवीण जाता वे मरलोहीपत बिता तेरो ।<sup>१</sup>

'नवीन' भी ने इस बिषय में लिखा है—

घोर प्रथकार में जमायी आत्मवीर्य जाती,  
विस्तार सजोबी, किमा आलोक्षित आसमान,  
बिस्मृत, बिह्वत अप-मग अप मग हुपा,  
स्रवित समाज को मिला उदकान्त-वीर्य दान ।<sup>२</sup>

काव्याभिव्यक्ति की संरुति, वीरी का प्रबाह तथा भावा की प्रीष्टता के इन्द्रिकोल से 'भ्राणार्पण' श्रेष्ठतर कृति है । इसका कारण यह है कि 'भारमोत्सर्ग' जहाँ पुस भी के काव्य जीवन के पूर्वार्ध की कृति है वहीं 'भ्राणार्पण' कवि के जीवन की अठठारकी रचना है । 'भ्राणार्पण' में वीर तथा मुक्तक दोनों को ही स्थान प्राप्त हुए हैं परन्तु 'भारमोत्सर्ग' में मुक्तक का ही आचार है । भारत के घमर दाहीर के बरखों में बढ़ाई गई वे दोनों अद्यावसियां, माण्ड-भायी के मन्दिर के दो महान् क्योतिर्मय वीर-स्वप्न हैं ।

निष्कर्ष—'नवीन' भी के 'भ्राणार्पण' का घनेक इन्द्रियों से विरिष्ट महत्त्व है । कवि के नवी जीवन से प्रसूत काव्य-साहित्य में प्रेम-काव्य को ही वीर्य तथा प्रमुख पर प्राप्त हुपा है ; परन्तु इस रचना में कवि पुरैत राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-आरा के सचन पक्ष को ही अपना बर्नस्क प्रबाम करता है । प्रायः कवि अपने कारावास के जीवन में राजनैतिक कारखों के प्रति उद्यसीन तथा बहिष्कृत रहा है, परन्तु इस कृति में विपरीत स्थिति ही इन्द्रियोचर होती है ।

आलोच्य रचना में अपनी मुग-बेतता राष्ट्रीय आन्दोलन तथा समासामयिक राजनीति के प्रति कवि ने जितनी मुखरता तथा प्रमबुता के हाप अपनी बाखी की भासा उड़ेकी है, वैसी कवि की किसी भी रचना में दुर्लभ है । यद्यपि इस कारण से कवि को ज्ञानि भी उखनी पड़ी है और बहु अपनी कृति के प्रबन्ध-रिक्तन को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत नहीं कर सका है ।

वहीं कवि के राष्ट्रवाद ने बस्तु एवं चिन्तनपरक रूप ग्रहण कर लिया है । कवि ने लक्ष्मीन राजनीयता के विभिन्न घबदबों, उसके विकास अघरोध तथा निराकरण पर भी मग्मीरतापूर्वक मनन किया है । गलेघ भी के बलिदान की कथा को प्रस्तुत करने न केवल उसने अपनी भक्ति की अग्निर्बजना ही की है, प्रस्तुत भारतीय इतिहास के धाधुनिक युग के आग्रवाभिकता रनी बिप को कुरेद कर हमारे सबल प्रस्तुत किया है जिससे विह्वत होकर कई तदुबिषकक बटनाएँ पठित हो चुकी हैं और यह बिप बार-बार पैदा होकर, हमारे भारतीय समाज की निधियों को क्षिमा दिया करता है । इस बिप के उग्मजन के व्यावहारिक तथा आरवत आदर्श के रूप में, वी गलेघसंकर बिद्यार्थी का मध्य व्यक्तित्व हमारे समक्ष आता है ।

१ 'भारमोत्सर्ग', पृष्ठ ८५ ।

२ 'भ्राणार्पण', पृष्ठ ४२, ४६ ।

काव्य-कला के रूप में यह कवि की प्रौढ़तम कृति है। इस रचना की प्रीति गाम्भीर्य तथा ऋजुता ही इसे 'नवीन' के काव्य-साहित्य में पूरक स्थान प्रदान करती है। इसके रचना प्रवाह तथा प्रभावित्युत्ता को देखकर, 'मिरासा' के 'तुससीबास' या 'राम की कविता पूजा' का स्मरण हो जाता है। प्राक्लेश्य-कृति की भाषा 'उम्भिता' से अधिक सघन तथा परिपक्व है। काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से 'प्राणार्पण' का मूल्य अत्यधिक है।

इस काव्य का एक दूसरे दृष्टिकोण से भी मूल्यांकन अपेक्षित है। प्राक्लेश्य द्विती साहित्य में हमारे वर्तमान युग के कर्णधारों तथा—महात्मा गान्धी<sup>१</sup> प्रेमचन्द<sup>२</sup> आदि के व्यक्तित्व तथा जीवन-चारित्र्यों को लेकर, जो काव्य या महाकाव्य लिखे जा रहे हैं और उनकी परिपाटी द्रुतगति से चल निकली है उससे कालक्रम से इस कृति का महत्त्व, गरिमा तथा मूल्य घटने लगे हैं। इस स्वस्व-वरम्भण के मूल में 'नवीन' की भी इस कृति को रखकर, परिपाटी का अध्ययन करना समीचीन तथा सार्थक प्रतीत हो सकता है।

'प्राणार्पण' का मूल्य तथा महत्ता के मूल सामयिकता से ही बने नहीं हैं। यद्यपि उनमें स्वायत्त के उपादान भी प्राप्त होते हैं। साम्प्रदायिक तत्व बार-बार अपनी जाड़े पैनी करते हैं। 'नवीन' की ने भी लिखा है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व और परचायु काल में हमने वे सब विभीषिकाएँ देखी हैं।<sup>३</sup> इतना सब होते हुए भी हम भी महारामा गान्धी के चरणों में पड़े ही रहते हैं कि इस देश में बुरात गलेघसंकर क्यों नहीं पैदा होता है ?<sup>४</sup> साहित्यिकों के दृष्टिकोण से, इस कृति का महत्त्व तथा महिमा उसके काव्य-प्रकार के कारण है परन्तु इस के क्या भी महत्ता के विषय में हम भी नवीन की के साथ हैं—

मानव के हिय में रहेगा द्वेष जब तक,  
जब तक रक्त की सिपाखा रही जायेगी  
जब तक अन्तर में दुःखका रहेगा पशु,  
जब तक झोलिया की धार बही जायेगी  
जब तक मानव न होगा निज गुण्ड कण,  
जब तक भावना निर्दोष नहीं जायेगी  
तब तक गलेघसंकर की अतीत याथा,  
जब तक हित्याप सतत कही जायेगी।<sup>५</sup>

१ (क) श्री छत्रप्रसाद सिंह—'महामानव' (सन् १९४६); (घ) श्री रघुवीरारण्य मिश्र—'जननायक' (सन् १९४९); (ग) छत्र प्रोबालप्ररण सिंह—'जयशालीक' (सन् १९५९)।

२ श्री बरसेनर द्विरेड—'सुवर्णपत्र—प्रेमचन्द', (सन् १९५९)।

३ 'प्राक्लेश्य' मार्च, १९५३, पृष्ठ १६।

४ 'गलेघसंकर विचारों', महात्मा गान्धी और गलेघसंकर विचारों।

५ 'प्राणार्पण', चतुर्थ आहुति, अंश ४, पृष्ठ ३३।

षष्ठ अध्याय

प्रेम एवं दार्शनिक काव्य



काव्य-कला के रूप में यह कवि की प्रौढ़तम कृति है। इस रचना की प्रीति गाम्भीर्य तथा शून्यता ही, इसे 'नवीन' के काव्य-साहित्य में पूरक स्थान प्रदान करती है। इसके रचना प्रवाह तथा प्रसवियुता को देखकर, 'निराला' के तुलसीदास या 'राम की सन्निपुत्रा का स्मरण हो जाता है। आलोच्य-कृति की भाषा 'उन्मिच्छा से अधिक सघन तथा परिपक्व है। काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से 'प्राणार्पण' का मुख्य अत्यधिक है।

इस काव्य का एक दूसरे दृष्टिकोण से भी मूल्यांकन प्रयोजित है। आनन्द हिन्दी साहित्य में हमारे वर्तमान युग के कर्णधारों तथा—महात्मा गांधी<sup>१</sup> प्रेमचन्द<sup>२</sup> भारि के व्यक्तित्व तथा जीवन-चारित्र्यों को लेकर, या काव्य या महाकाव्य लिखे जा रहे हैं और उनकी परिपाटी व्रतगति से बल निकली है उसमें काव्यकर्म से इस कृति का महत्त्व, गरिमा तथा मुख्य धाँकने योग्य है। इस स्वल्प-परम्परा के मूल में 'नवीन' की भी इस कृति को रखकर, परिपाटी का अध्ययन करना समीचीन तथा शार्क प्रतीत हो सकता है।

'प्राणार्पण' का मुख्य तथा महत्ता के सूत्र सामयिकता से ही बंधे नहीं हैं, अपितु उनमें स्पष्टिक के उपादान भी प्राप्त होते हैं। साम्प्रदायिक तत्व बार-बार अपनी शक्ति देती करते हैं। 'नवीन' जी ने भी लिखा है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व और परचाय काल में हमने वे सब निमीषिकार्थ देखी है।<sup>३</sup> इतना सब होते हुए भी हम भी महारमा गांधी के सन्तों में पड़ने ही रहते हैं कि इस देश में दूसरा नये-संस्कार क्यों नहीं पैदा होता है? साहित्यिकों के दृष्टिकोण से, इस कृति का महत्त्व तथा महिमा उसके काव्य-शरणा के कारण है परन्तु इस के कथा की महत्ता के विषय में, हम भी 'नवीन' जी के साथ हैं—

मानव के श्रिय में रहेगा हेतु जब तक,  
जब तक रक्त की स्निग्धा रही चायेगी,  
जब तक अन्तर में बुझका रहेगा पशु,  
जब तक सोरिल्ल को बार बही चायेगी  
जब तक मालव न होगा निज गुड कप,  
जब तक भावना निर्बल नहीं चायेगी  
तब तक नले-संस्कार की प्रतीत गाबा,  
जब गए श्रिताप सतत बही चायेगी।<sup>४</sup>

१ (क) श्री ठाकुरदास सिंह—'महामानव' (सन् १९४६) (ख) श्री वसुधैराराण विजय—'जन्मदायक' (सन् १९४९) (ग) ठाकुर गोपालचरण सिंह—'जगदालोक' (सन् १९५२)।

२ श्री बरमेचर द्विवेक—'सुमनस्य—प्रेमचन्द', (सन् १९५९)।

३. 'आनन्द' मार्च, १९३३, पृष्ठ २६।

४. नले-संस्कार विद्यार्थी, महारमा गांधी और नले-संस्कार विद्यार्थी।

५. 'प्राणार्पण', अतुर्थ प्रकृति, अंक ४, पृष्ठ ३३।

पष्ठ अध्याय

प्रेम एवं दार्शनिक काव्य



## प्रेम-काव्य

पीठिका—प्रेम एक असीम आत्मिक शक्ति है। उसे अनेक सूक्ष्म भावनाओं का बाहुक बताया गया है।<sup>१</sup> उसका स्वर उदात्त तथा पवित्र होता है। कबोर में प्रेमविहीन घरीर को मृग-सुष्य माना है। उसके सभी कवियों तथा मनीषियों ने सुण-पाग पाये हैं।

डॉ० रामेश्वरनाथ काव्येतावत 'तद्वय' ने प्रेम के द्वायघर्य बताया है—मक्ति प्रणय अथवा आत्म्य, आराम्य, प्रकृति-मम, ईश-प्रेम विरह-मैत्री या मानव प्रेम, कुतुम्ब प्रेम अथा, सेव्य सेवक प्रेम सूक्ष्म के प्रति प्रेम और सूक्ष्म के प्रति प्रेम।<sup>२</sup> 'नबीन' जी के काव्य में, प्रेम के ये विविध रूप प्राप्य हैं और उनका यथास्वाम विवेचन भी किया गया है। यहाँ पर प्रणय या रति अथवा शृंगार के ही रूप का अनुशीलन किया जा रहा है।

शृंगार रस में रसियों की आनन्दता ही उसे काव्य की आनन्दता का सून प्रदान करती है। उसका मुख्य एवं विद्यात रूप देव की इन पंक्तियों में अपनी महिमा की कड़ी खोजा है—

भाव संहित बिहार में नव रस अलक अरल ।

इसों कजक-मरिण कजक की ताही में नव रस ॥<sup>३</sup>

'नबीन' जी के काव्य में भी शृंगार को रस-रजस प्राप्त हुआ है। वह कवि के काव्य की प्रमुख एवं सुखरतिनी धारा है। 'नबीन' के काव्य में रस-भोगना को बीजन का आचार प्राप्त हुआ है। डॉ० नयेन्द्र ने ठीक लिखा है कि "रस का सहाय्य एक संयुक्त अथवा आनन्दित प्रकृत नहीं है, वह व्यक्ति का आत्म-साक्षात्कार है, आत्मनिर्वाण है।"<sup>४</sup>

अनुशात एवं प्रभाव में, 'नबीन' जी के काव्य में प्रेम-काव्य अथवा अद्वितीय स्थान रकता है। प्रेम ही दिव्य रूप कारण कर लेता है और वही बीरल को भी स्फुरित करता है। कविताओं तथा संकसनों में भी उसी का ही बहुमत है। कवि के काव्य में उसका महत्व भी कम नहीं है। डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी के मतानुसार, नबीन जी की शृंगारिक कविताओं का भी उसका ही महत्व है किन्तु उनमें देव प्रेम विषयक रचनाओं का। उनमें भी बड़ी मस्ती का स्वर मिलता है।<sup>५</sup>

१ Love, affection, favour, kindness kind or tender regard, sport, pastime, Joy, delight, gladness"—Shri Aptey—Sanskrit English Dictionary, 1922, p. 380

२ 'आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सीन्दर्य', पृष्ठ १११-११६ ।

३ डॉ० नयेन्द्र—'भारतीय काव्यशास्त्र की आरम्भ', पृष्ठ ४१३ ।

४ डॉ० नयेन्द्र—'बिहार और विश्वेयल', पृष्ठ १०४ ।

५ डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी—साप्ताहिक 'मात्र', २६ मई, १९६०, पृष्ठ ६,

काव्य २ ।

'नबीन' की खरी तथा यथार्थ अनुभूतियों के कवि रहे हैं। उनकी शृंगारिक रचनाओं के पीछे भी वास्तविक अनुभूति रही है। अन्य कवियों के सहस्य उनके प्रेम-काव्य के उत्तर में, बीबन का अनुरूप प्रेम-स्वप्न रहा है। 'प्रसाद' भी ने भी तो अपने काव्य के प्रेम तथा बीबन पर के उद्भव-उपकरण की ओर, महीन संकेत किया है—

मिला कहीं बहु सुख विताका मैं स्वप्न बेराकर जाय गया,  
घालियन में घाले-घाले सुस्वप्ना कर जो जाय गया।<sup>१</sup>

'नबीन' जो ने भी सिखा है कि "भाव, यदि सामाजिक बन्धनों के कारण एक नौजवान या मधुपुत्रकी अपने स्नेह-पात्र को प्राप्त नहीं कर सकते और यदि वे विधोय और विधोह के हृदयपाही गीत या उठते हैं तो यह न समझिये कि यह केवल उन्हीं की बेदना है, जो यों कैम पड़ी है—यह बेदना तो समूचे संस्कृत हृदयों की भीतर है।" वास्तव में कल्पवृक्ष भावना को व्यक्त करने वाले यीत ही सर्वाधिक मजबूत होते हैं।<sup>२</sup>

डॉ० नगेन्द्र के मतानुसार, "शृंगार का अर्थ है अमोदक। उसके भाग्यमय अर्थोत्पत्ति का कारण ही शृंगार कहलाता है।" प्रेम और बीबन काव्य के मेकअप हैं।<sup>३</sup> 'नबीन' की काव्य-शृंगार, प्रेम एवं बीबन से परिष्कृत है। उनके प्रलय-भीत तीव्र अनुभूति से मरे हैं और उनमें यम-रस रहस्यात्मक संकेत भी मिलते हैं।<sup>४</sup>

'नबीन' की के काव्य में प्रेम तथा शृंगार के विविध रूप प्राप्त होते हैं। उन्होंने शृंगार के संयोग तथा विधोय दोनों ही अर्थों को समेटा है, परन्तु विधोय पर अधिक प्रवृत्त एवं मुक्त बन गया है। संयोग के चित्र, कम मात्रा में ही प्राप्त होते हैं। इस तथ्य के पृष्ठ में भी, कवि के बीबन की मर्मस्पर्शी अनुभूति रही है। 'नबीन' की ने प्रेम के स्थूल तथा मांसल रूप के साथ ही साथ उच्चता सूक्ष्म रूप भी प्रस्तुत किया है।

विषय विभाजन—'नबीन' की की शृंगारिक रचनाओं यथा प्रेम-काव्य को उसके विषयानुरूप एवं प्रवृत्तानुसार, अक्षोभित अर्थों में विभाजित किया जा सकता है—(१) प्रेम का आत्मधन (२) रूप वर्णन, (३) प्रेमामिष्यक्ति (४) प्रकृति का उद्दीपक रूप (५) प्रिय-वर्णन एवं मिलन-खण (६) मान-बर्हान (७) स्मृति-वर्णन; (८) विधोय-विभण और (९) मांसल तथा उग्रवादक प्रेम।

उपर्युक्त अर्थों का विरलेपण एवं अनुशीलन ही प्रेम-काव्य के सांयोगिक चित्र को प्रस्तुत कर सकता है।

१ श्री जयदाकर प्रसाद—'जहूर', पृष्ठ ११।

२. 'कु सुम, दुस्र बालें, पृष्ठ १२ १३।

३ *Our sweetest songs are those,*

*that tell of saddest thought—Shelley, The complete poetical works of Percy Bysshe Shelley p 603*

४ डॉ० नगेन्द्र—'विचार और विवेचन', पृष्ठ १७।

५ डॉ० राधेय राय—'साधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और शृंगार' काव्य—पारी, पृष्ठ ५२।

६ डॉ० रामचन्द्र टिड्डी—'हिन्दी साहित्य के विचार की बरीचा', पृष्ठ १८६।

प्रेम का ध्यात्मत्व— नबीन बी का समय प्रेम-काव्य, अपने ध्यात्मत्व के सम्बोधन, स्मरण एवं विरह से धारण है। कवि ने पय-पय पर प्रेम के ध्यात्मत्व के प्रति अपनी सरस निष्कण्ट मासिक धोर काव्यिक प्रत्युत्पत्ति को है। जान पड़ता है कि कवि के जीवन में कोई है जिसका भ्रामास शय-शय रहना में भ्रोकता है, जिसे कवि ने अपने प्राणा में पहिचाना है धोर जिसे जाने की बेचैनी उसक संय-संग में भर गई है।<sup>१</sup> कवि ने अपने ध्यात्मत्व को बहुमुखी श्रोकिया प्रदान को है। अपनी प्रेयसी के लिये कवि का स्नेहित साइता तथा ध्यात्मिक मय सम्बोधन 'रसज्ञान' है—

प्रिय, तुम क्यों हो इतनी सज्जी, सुपङ्क, लोम्य, रस-जानी ?<sup>२</sup>

कवि ने अपने काव्य का मुताबार् ही अपनी प्रेयसी को माना है। वह उनकी प्रेरणा-धक्ति एवं बेचना-दायिका है। वह अपनी प्रियतमा से सनेह अनुनय करता है—

बज उठे मीठी-मीठी पावनियाँ,  
खनका हो कविता की कड़ियाँ,  
शानी, मज-हित-सांगनियाँ<sup>३</sup>

डॉ० पुस्तक के अनुसार, 'नबीन बीवन की सन्धकारपयी रजनी में मटक रहे हैं। उनकी धारणा है कि प्रेरिका बीवन-मय को अपनी शक्ति से बाधोचित कर दे।'<sup>४</sup>

बीप-रहित बीवन-रजनी में  
मटक रहा कज से सजनी में ?  
मूल गया है अपनी गयी,  
हुह प्यास है सारी डपटी।  
अपनी शोष-सिखा की किरलें,  
जाने ही उत पय की धोर।<sup>५</sup>

अपनी सतानी के प्रति यह कवि की प्रीतिमयी धारणा है—

मत हुकराओ सुने, सतानी में हूँ प्रथम प्यार का हुम्न।

सुने न हूँ-हूँस टालो, मैं हूँ मधुर-सुनियों का ध्यात्मत्व।<sup>६</sup>

क्य-बल्लन—नबीन' बी ने अपनी प्रियतमा के रूप तथा जीवन के अनेकों चित्र खींचे हैं। इनमें गरी जीवन के शीशर्म-नक्ष के हाव-भाव तथा विसास प्रस्तुति ही पड़े हैं। कवि के प्रेम-काव्य में गरी-बिनों की ही सर्वप्रधानता है पुस्तक के रूप के चित्र गण्य है।

१ डॉ० राजेश्वर गुह—सांसाहित्य 'जबरापु', कोमल धनिर्गन्धगा के कवि 'नबीन', शोराधनी विद्येपीक, सन् १९३०।

२ 'रसिपरेखा', स्मरण-कण्टक, पृष्ठ २१, धन्व ३।

३ 'बीवन-मरिच' या 'पावन-मीठा', सिपाह, १०१ की कविता, धन्व ५।

४ डॉ० केतरीनाचमल शुक्ल—'ध्यात्मिक काव्य धारा' वर्तमान युग, प्रेम की कविता, पृष्ठ २९३।

५ 'कु कुन', पृष्ठ ३२।

६ 'रसिपरेखा', प्रथम प्यार का हुम्न, पृष्ठ ४९।

श्री सूर्यनाटापण्ड व्यास ने लिखा है— नवीन जी को कविता-भासा पूर्ण पौढ्यी है। पद्यगुच्छन से बाहर अपनी सद्बल-सुखम काटापि को बिखेरती हुई, पाँचाल सुन्दरियों की तरह मस्ती में फूलती हुई, पौवन-भविष्य के छत्रकटे हुए प्याले से मधुर मद्यसाव करती हुई, नवीन-कविता-भासा पर जिनका दृष्टि एक बार पयो हो, वे भयभर ही तन्मयता में इस कामरूप देव की कामिनी के माह-भास में उलझे रहेंगे।<sup>१</sup> कवि के हृदय में अपनी प्रेयसी के रूप का स्मरण, सुषम पैदा कर रहा है—

बहु गुणाल मंडित तब सुल छवि, वे रतनारे नेत्र—  
स्मृति में ध्राए, मानीं ध्राया एक सुकाल विद्याल-  
स्मरण कर बन ध्राए हूँ बाल !<sup>२</sup>

कवि ने अपनी त्रियता का धार्मिक विषय भी किया है। 'नवीन' ने अपनी त्रियता की बिन्दिया के बूँद में बिय देखा है। श्री नवीन के श्री 'नारी' के धारों में सुधा है, धाँसल में पयस्विनी तथा नेत्रों में बिय—

सुधा धार में बिय धाँसों में धाँसल में पयस्विनी धार,  
देखा इस छोटे से तन में, जय के मुक्कन और संहार !<sup>३</sup>

'मान' केषों में शोभायमान है और केषों से धानुष 'कुण्डल' की कम धाकपक नहीं है—

केशावत सुग कणों में,  
क्या छटा क्यहरी छिन्की ?  
इस कब निधीय में ध्राके—  
क्यों प्रधर हुपहरी छिटकी !<sup>४</sup>

धारीक धनयनों के साथ ही, कवि ने उनके मादक प्रभाव की भी बर्णना की है। कुण्डल के पारबंबर्दी कपोलों की साली, सहज ही मत्तबाली-वृत्ति उत्पन्न कर देती है—

सत्रनि ! तुम्हारे सुग कपोल को सहज साज की साली-  
धपना रम पड़ा बैती है सब पर बहु मत्तबाली।<sup>५</sup>

धन-धरयनों के साथ ही, कवि ने परिधान का भी विस्मरण नहीं किया है—

पहने बहु इयामल साड़ी पाटल कुतुबों की कुली-  
रंजिता गन्ध माला की, धाँसो मग मुली-मुली।<sup>६</sup>

कवि अपनी प्रेयसी से संस्मृतिपूर्ति सहस्य पधारने की बिनती करता है। यहाँ पद्यमें 'बीबी-आँसी' देखने योग्य है। कवि के प्रेम की प्रकृता यह पटना न केवल प्रेम की

१ 'बीला', कविबर 'नवीन' की कविता, मार्च १९३४, पृष्ठ ४०९।

२ 'रविमरेजा', स्मरण-कंटक, ध्य ४, पृष्ठ २१।

३ श्री नवीन—'बनबाला', नारी पृष्ठ २२।

४ 'पौवन-भविष्य' या 'पावल-योड़ा', कुण्डल, ७४ की कविता, ध्य १।

५ 'पौवन-भविष्य' या 'पावल-योड़ा', उत दिन, ११३ की कविता, ध्य ५।

६ 'बीला' निगमण, ध्य ७-१०, पृष्ठ ६४।

सहित मीठी ही प्रस्तुत करती है, प्रत्युत कम तथा दीर्घत्व का धारण विष भी हिन्दी-काव्य को प्रदान करती है—

बसन्तोरस के विन तुमने, निज विद्यालय में, रागी,  
बातकृत्य सीता खेती थी, निपट नबल रस में तानी,  
तन्ही समय हुस्तलों का सखि तुमने बाँपा या बुझा,  
कोमल पारिपु सुगत में ली थी, स्वमिग सुरनिका रस-भुझा ।

तुम्हारा बुझिया तुम्हारी, कर-कर्मण बन प्रापी थी ।<sup>१</sup>

इस प्रकार कवि ने अपने प्रिय के रूप, जीवन एवं दीर्घत्व के रससिक्त एक चिन्ताकरोक विष प्रदान किये हैं। इन बिंदों में कवि की बेचना एवं प्रेमाभिन्नता का सुबह कम भाव होता है।

प्रेमाभिन्नता—डॉ० हजायीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि “इन कविताओं में सुबह रोमाञ्चिक कवि की भाँति के कल्पना के एक कैलाकर माद के प्राकाश में उद्गम होते हैं।” प्रस्तुत ‘नर्तन’ की के काव्य में रोमाञ्चिक-शक्ति की प्रधानता है। उनकी प्रेमाभिन्नता सरल तथा भावपूर्ण है।

कवि के प्रणय-सागर में नागा प्रकार की तरंगें उठती हैं और उनका पर्यवसान भी हो जाता है। प्रिय के प्रति, कवि ने धरेक प्रकार की कल्पनाएँ की हैं। उसके पद्यों ही जाने पर, कवि की यह बहुनाचना स्पष्ट है—

तुम हो गये बराये, साजन, तुम हो गये बरापे,  
पाकर सपाबार, घाँकों में सुख-कृत्य बरताये,  
साजन तुम हो गये बराये ।

जिसके पद हो गये, उसी के बने उहो मन मोहन,  
होने हो गये इबालों का धारोदृण-अबरोहण ।<sup>२</sup>

कवि अपनी निमति को ही बोली उठता है—

माल में मेरे लिखा है निपट सुनावन सनावन,  
तब पखब गया, जो हुमा, तब हुबय में गह्र समनावन ?  
बाँसते निज शीघ में बसा तुम पुपतन प्रत्यि-भाता ?<sup>३</sup>

कवि का प्रेम स्वप्न रूप का। उसके कल्पना का संसार बड़ गया।<sup>४</sup> कवि का जीवन अपना पूर्ण नहीं हो पाया। उसने, उसकी स्मृति को ही, अपना चिरंतनी तथा जीवन मृगार बना लिया। श्री ‘प्रसाद’ को ने भी कहा था कि प्रेम का प्रकट कर देने से, उसका मूल्य समाप्त हो जाता है। हाँ, मेरे जीवन में एक मधुर स्वप्न और मनाहर कल्पना

१ ‘बीजा’, गह्र ‘बाँकी घाँकी’, धर्म, १९३६, पृष्ठ ३२७ ।

२ डॉ० हजायीप्रसाद द्विवेदी—‘हिन्दी साहित्य’, छायाबाह, पृष्ठ ४०६ ।

३ ‘स्मरण-बोध’, तुम हो गए बराये, ४१ वीं कविता, पृष्ठ १ ।

४ वही, विवक्ति विश्वास, ४२ वीं कविता पृष्ठ ८ ।

५ ‘जीवन-विराट’ या ‘बाबल-पीड़ा’, बड़े बसो, २१ वीं कविता ।



रही है, जिसे मैंने आजीवन सजाने का प्रयत्न किया है। उस प्रीति को पवित्रता को मैंने जीवन का सर्वोच्च धर्मार्थ कर भी प्रीणित रखा है।<sup>१</sup> परन्तु 'प्रसाद' की प्रथम-गीतन की कथा में जितने पदु थे<sup>२</sup> उतने 'नवीन' की नहीं। 'नवीन' कहते हैं—

जहाँ तुलसती बर घाती हो, हिरदै की मनुहार—सखी,  
बसो, चमो बत बेस, जहाँ हो छिटका मज्जुत प्यार लखी।<sup>३</sup>

प्रसाद भी भी कहते हैं—

ले कम सुभे सुसाबा देकर मेरे बाबिक धीरे-धीरे  
जिस निर्जन में लागर लहरी, प्रम्बर के कागों में चहरी,  
निश्चय प्रेम कथा कहूनी हो, तब कोलाहल की प्रथमी रे।<sup>४</sup>

अन्ततः कवि श्री बह दड़ कामना हो जाती है—

बिबरु पिय को उररिया, बसतु पिया के पाँव;  
पिया की शूरीही बैठि के, छटतु पिया को नाँव।<sup>५</sup>

कवि का 'उपाधम्य इष्टम्य' है—

सोच नमो हिय, बेसि के भयनी जीवन-नाँक,  
सिन को धड़ियाँ रहि गई, हाय, बाँक को बाँक।  
मैरु दिवो निष्ठा सहित बाई धृष्ट प्रपाद,  
सैवा को सेवा सिखी यह कृतान्त प्रबहार।<sup>६</sup>

अन्त में कवि इस निष्कर्ष पर आ जाता है—

मौन रहतु, बनि लुप्त कहतु, तहतु जगत भवबाद,  
गूँसे ही तुम हूँ रह्यो, है 'नवीन' सविबाद।<sup>७</sup>

प्रकृति का प्रहोचक कव्य—'नवीन' की के प्रेम-काव्य में प्रकृति ने भी महत्वपूर्ण तथा प्रभावपूर्ण योगदान दिया है। यह भावोन्मेषकारिणी है और कवि की विधोप-ध्याना को डिप्लुहित करती है। प्रकृति प्रकृत है परन्तु कवि उदात्त—

नव तुनाद बैसा, जय्यक,  
हंसते हैं तब मैं रोता हूँ,—  
कर न सह या धर्यल, यही  
लोककर बिह्वल होता हूँ।<sup>८</sup>

१ 'प्रसाद का काव्य', पृष्ठ १०।

२ 'प्रारम्भ-गीतन की दुर्लभ कलात्मक लक्षणा रखनेवाला यह विलसत कलाकार आत्म-नोवन की कला में भी पूर्ण बद्ध है।'—'आवरण', ११ अक्टूबर, १९३२।

३ 'जीवन-सखिया' या 'पावन-श्रीङ्गा', उस बाद, ९३ वीं कविता, अन्व ३।

४ 'कहर', पृष्ठ १४।

५ 'नवीन-श्रीङ्गावली' यह प्रवाल प्रापात, बहती रहता, अन्व ५।

६ जहाँ, उपाधम्य, १९ वीं रचना, अन्व ४५।

७ जहाँ प्रनीला २० वीं रचना अन्व १४।

८ 'कुतुब', बैकली, पृष्ठ ४९।

प्रकृति ही उत्प्रेयना प्रधान करती है—

लोप कहे महुषा पहराने,  
हिय के घाब पके हम जानै,  
घरी, कोयल, बोल बोलियो ना ।<sup>१</sup>

धन-गर्जन के धारों में कबि की मन स्थिति दर्शनीय है—

धन गरजे या कुहिया बरसे,  
तेरा नही बसैगा कुछ बस ।

तब कहते हो, सजन रिखता हो है मेरे भाजन में,  
तुम क्यों बेने लये धमी रस इस धन धर्जन के बाण में,<sup>२</sup>  
कबि को प्रकृति में अपनी प्रियतमा का ही रूप दृष्टिगोचर होता है—  
मम मन सर में बिकसित है तब सुम गहन-कमल,  
परिमल निस घाई तब तन-सुवास तिहुर तिहुर ।  
घो मेरे महुषाघर ।<sup>३</sup>

कबि की प्रकृति माबोहीति का सरल परिवेद्य सूजन करती है और कबि को प्रिय दर्शन के लिए साक्षात्पिठ करती है ।

प्रिय दर्शन एवं निजन-सण—डॉ० रामकुमार बर्मा ने लिखा है कि "नबीन की श्री सफलता उनके देश-प्रेम की काव्यात्मक अनुभूति के साथ-साथ हृदय तरंग की भ्रमिक्यों को निसा देने में रही कारण प्रयत्नपुत्र उनमें बहुत है ।" कबि की प्रिय दर्शन को सासदा में हृदय की तरंगें धा बिटाबी हैं । इन पंक्तियों में कबि की मनोकामना अपनी पक्ष प्रसार रही है—

मेरे प्रिय, अब कब तक होंगे उन नयनों के मगल दर्शन,  
हुसल कराने कब, निज जन पर, उन नयनों से भङ्ग-रस बर्षण ?  
कब फिर उन्हें निरख कर होया मेरे रोम-रोम का हर्षण ?<sup>४</sup>

कबि की प्रणयानुभूति में अनुभव-विनय का प्राचाग्य है । प्रिय-दर्शन के लिए साक्षात्पिठ कबि की प्रार्थना अक्षणीय है—

आकर इस सन्ध्या को कर हो सिम्भूर बान  
मम रंजल-भोट बीप बन बिहूँसी, प्यो प्राण,  
प्रहृण करो सुय-सुय वा मेरा यह हिय-सम तुम,  
मेरे सन्ध्या पय में बिहूस जठो, प्रियतम तुम ।<sup>५</sup>

१ 'कुहुष', पीत, पृष्ठ ८३ ।

२ 'स्मरण बीप', धन गर्जन बाण, तीसरी कविता, पृष्ठ ४ ।

३ बहो घो मेरे महुषाघर, आठवीं कविता पृष्ठ ४ ।

४ डॉ० रामकुमार बर्मा—'प्राचिनिक-काव्य संग्रह', पृष्ठ ६५ ।

५ 'रविश्रीका' क्या है तब नयनों के पुट में पृष्ठ ४, पृष्ठ ६५ ।

६ 'स्मरण-बीप', बिहूस जठो प्रियतम तुम, बीबी कविता, पृष्ठ २ ।

बातकृत्युल धर्मा 'नबीन' : अथकि एवं क

कवि की अपनी निरतन-स्वत की स्तुति हो जाती है—

जहाँ सपन तु जो में हमको प्रियतम मे रसवान दिया था,  
जहाँ सपन तु जो में जगने हमको अपना मान दिया था,  
एक के जगड़ी हैं जिनमें हमने मसुर रस पान किया था।<sup>१</sup>

कवि के हृदय में होने वाले बहिर्जगत् एवं अर्धजगत् के संघर्ष के भी धीरे धीरे चित्रित हुए हैं—  
स्वहृती कलियों से, कुछ लाल, सब गई पुनर्जित पीपल डाल।  
घोर बहु पिठ की धर्म पुकार प्रिये, भरभर पकती छायाए,  
लाभ से गड़ी न जाओ, प्राण, सुतपुरा ही क्या प्राण बिहान।<sup>२</sup>

पद्य की के सदृश 'नबीन' की भी अपनी प्रिया की एक पुनर्जित को धारणिक  
मसुर प्रदान करते हैं और उसके कृपाकर्मि हैं। कवि की यह उत्कट सावता है—  
एक सुखपात्र, एक क्षिण का एग को बान,  
मेह की बिभ्रति, सींहि देहु करि कृपा की कोर।  
कीमलता, संकुलता बारि बारि बिबना मे,  
मेरे छिठ निहुराई राखी यह क्यों बटोर ?<sup>३</sup>

कवि की नायिका उसे पान प्रदान करती है और वह तन्मय हो जाता है—  
धीरे धीरे धाकर इन हाथों  
पर रख देती हो—

जिन कर निमित्त पान,—देवि !

बहसे में क्या सेती हो ?

कुछ जाती से कलहें, यों ही

बिनिमय हो जाता है

लिए पान प्राता है,—मन

कराओं में खो जाता है।<sup>४</sup>

डॉ० बल्लभ के मठानुसार, उनकी कविताओं में प्रेम का जो पद प्राया है, उसका  
रूप भी मध्ययुगीन का प्रतीक होता है।<sup>५</sup> कवि के निरतन-विशेषों में कहीं-कहीं मातृता भी  
पा गई है। वह कट्या है—

पीकि कट्टी पुन एक दिन कि हम बड़े बेचाम,  
ठीक हमारी काम है किकि बबो बेचाम।<sup>६</sup>

×

×

×

१ 'नमरए-बीप', क्या बतलाई रोने वाले, १३ वीं कविता पद्य ४।

२ की सुनिवाजमन वस्त—'पु बत', २१ वीं शीत।

३ 'पु पुम' धांवाभोपा, पृष्ठ ६०।

४ वही पान पृष्ठ १६।

५ डॉ० बल्लभ से हुई प्रायत भेंट के धापार पर।

६ 'नबीन-बोहावती' राय-बिराम, १२ वीं कविता, पद्य ६।

कब हम माँगन बखर रच, तब हो तुम सुसज्जत ।  
 फिर, माहीं करि रैत ही, कहहु कोन बह बात ?<sup>१</sup>

प्राप्ति भी देखिये—

मान ! तहों कम ? नहीं कब है,  
 सहज रसीली 'नहीं-नहीं' ।  
 मन्वस्मित है कहीं प्रतीक  
 सु भगवाहृद है कहीं कहीं ।<sup>२</sup>

ये ही मित्त के कवियन शाल बिबोग की बोध प्रबन्धि में कवि को सामने रहे । कवि की यथनीय ठडकन ही उसके वियोग-यातों का भाकर धारण कर लेती है ।

मान-वर्णन—कवि ने अपनी काव्य-भाविका के मान का भी मित्त भाकलन प्रस्तुत किया है । इस शेष में कवि की रागात्मिका-वृत्ति धाम्यत हृदयम्पर्धी हो गई है । कवि का वित्तव शब्दम् है—

मान मत ठालो न तालो भूट्टियों की बाप, बल्लम,  
 पहुँचने को बरख-तस तक ये प्रपर मम शुक्क निष्प्रम ।<sup>३</sup>

कवि मान तोड़ने के लिए, प्रियतमा से बारम्बार प्रार्थना करता है—

ओ सल्लोने, हो गया है कोम सा प्रपराय मारी,  
 को बरख प्राराधना यों लड़पती है यह बिबारी  
 हो गया है बिबब भूना, देखकर यह हृद तुम्हारो ।<sup>४</sup>

प्रिया के बरख-स्पर्ध से कवि के गीठ सिम उठे हैं । कवि का भाव है—

बरखते हो क्यों हगों से बरख-यन प्राराधना को ?  
 कमकठी होने न बोने क्या निरस्त साधना को ।  
 निटुर, हुकरामो न मैरी इस प्रवीना साधना को,  
 बर-परत से किस उठेये निपट मुरने धान मैरे  
 काज केसा ? प्राल मैरे ।<sup>५</sup>

स्मृति-तत्व—डॉ० रामप्रबध द्विवेदी ने लिखा है कि "पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की प्रबिन्नक कविताएँ कारावास में लिखी गई थीं । मिथी और नज्जनों से दूर, कारावार की झोठरी में कवि के मन में ठडक-ठडक के भाव उठे हैं और उसकी सबस कल्पना मुक्त शृंगार के प्रबेक बिब खींचती है ।<sup>६</sup> काव्यगार प्रसूता होने के कारण उनके प्रेम-काव्य में स्मृति-तत्व

१ कहीं, शब्द १५ ।

२ 'बीबन-मबिरा या 'बाबत-बीबा', कहीं-कहीं, १५ वीं कविता, शब्द १ ।

३ 'बवासि, मान केसा, शब्द १, पृष्ठ ५१ ।

४ कहीं शब्द २ ।

५ कहीं, शब्द ४, पृष्ठ १० ।

६ साप्ताहिक 'प्राब' ११ नई ११५०, कालन १, पृष्ठ ६ ।

में मूल-धनु का कार्य किया है। कवि ने स्मृति का सुस्थापन इन पद्यों में किया है—

स्मृति क्या है ? प्रिय स्मृति ही तो है केवल यहाँ हमारी जाती !<sup>१</sup>

घरने प्रिय की नाता हियाघों की कवि स्मृति किया करता है—

कभी लम्हारी स्मिति की सुधि, कभी लीला की कभी निम्नक की

कभी पपाटी विह्वल सुनि तब लमपण मय लोचन-टक की।<sup>२</sup>

'नवीन' की आकृष्ट लक्षणाई के धौवन के कवि हैं। उनकी धनुभूति का यह विरलान उभार उनकी समुची काव्याभिव्यक्ति में स्वस-स्वस पर परिललित चरित घोर भुंजरित होता है। विप्रसम्म घोर विषम भाव कवि के स्थायी सहचर हैं। घरीत के स्मरण-चित्र ही वर्तमान का सुखोस्तास हो प्रथवा भविष्य की प्राकृत म्याकुल भाइ हर स्थिति में 'नवीन' प्रसुपारण वैप्युव जीवन की मनोप्राप्तकारी भौकी संवारता ही है।<sup>३</sup>

श्री आश्विप्रिय द्विवेदी ने लिखा है कि 'नवीन' शुरू से ही घरीत-ममान कवि रहे हैं। कहीं-कहीं यह अभिव्यक्ति ( धारीरिठ अभिव्यक्ति ) प्रानरपकता से अधिक उरकट हो गई है। कबीर ने बिच प्रकड़ता को सांघारिक जीवन के प्रति विरक्ति प्रकट की है, उसी प्रकड़ता से 'नवीन' ने घारीरिठ जीवन के प्रति आसक्ति। मनुष्यजनों में बहु समाकट-सी हो जाती है।<sup>४</sup> कवि के स्मृति-उत्प में घारीरिठता का अर्थ आ गया है—

मेरा स्वदान स्मरण कर रहा—प्राण तुम्हारा मनु आसिगन,

मेरी यह रमना रस मीनो स्मरण कर रही प्रपरासत कर।

नाता को है स्मरण घनी तक प्रिय अंगराग के स्मरण-लण,

धी मीडरना ही रहता है यह निमि स्मरणमल मम यह जन।<sup>५</sup>

'मूलक' का कथन, कि भुज-बन्धन में बंधने पर ही बसनाघों के कमी फूटते हैं।<sup>६</sup> 'नवीन' की के प्रेम-काव्य पर करिदार्य होता है।

'नवीन' की के सहस्य 'निराशा' जो भी अपनी स्मृति में यह अनुभव करते हैं कि मिसन के ही दिवत उनकी कल्पना ने उभाएला प्राप्त भी थी—

आज बहु पार है बसत, जब प्रथम विगत-की

सुरभि घरा के आकांक्षित हृदय की

बाग प्रथम हृदय को या पहल किया हृदय ने

घातत आबना, सुद विर मिसन का,

१ 'अपसक', ध्यान तुम्हारा घरा करे है, पद्य ५ पृष्ठ १३।

२. वही, पद्य ३, पृष्ठ १२-१३।

३ जो प्रभावकण्ड घनी—प्रेम घीर भेद का कवि 'नवीन', आकाशवाणी वाला इन्दौर, प्रसारण निधि ५ १९-१९६०।

४ 'संघारिणी', आभावाव का चरन्य पृष्ठ ११४।

५. 'आगामी बल घीर, बर्ष ३, अंक ३, मार्च, १९४९, सुतपुस्तक पद्य ३४।

६ 'आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रेम घीर लीख्य', पृष्ठ ५६ से ५७पत।

हल किये प्रथम जत्र पञ्च एतत्त्र का प्रायविद्ध प्रह्वनि मे  
उत्तो दिन कल्पना मे पायी सजीवना ।<sup>१</sup>

यह स्मृति-व्यय केना ही वियोग का रूप धारण कर, 'नवीन भी के प्रेम-काम्य में  
धीर्य-स्वत प्राप्त कर लैठी है ।

वियोग-चित्रण—महाकवि कविदास के मतानुसार, वास्तविक प्रेम वियोग में ही  
प्यता है—

एतस्माग्मा कुसस्तिनमभिज्ञानवानाद्विदित्वा  
मा कोतोनाकचक्रितनयने मध्यविश्रवासिनी मू-  
स्नेहानाहुः किमपि विरहे च्चंसितस्ते स्वनीया  
विष्टे बहनुप्यु पक्षितरसा प्रेमदासौमभन्ति ।<sup>२</sup>

पल भी ने वियोग से ही कविता का जन्म माना है—

वियोगी होया पहला कवि, भाहू से जपजा होया पान ।  
धमककर धाँधों से सुवचान, बही हूयी कविता धनजान ।<sup>३</sup>

पल भी के, विरह धम्य के सेहन में धपुषों की ही प्रमुखता पाई है ।<sup>४</sup> कवि का  
वियोग भी धम्य-विधाप तथा द्विपक्षियों के विरह-राग को ध्वनित कर रहा है—

हमजनों के बीच भी बाणी रहे मेरी धम्यधित,  
धीर विप्लव भी न कर पाए सुधम्यधित, जगित—  
साध भी यह, किन्तु हैजा कण्ठ है धाओश-मण्डित,  
धीर मैं बस रो रहा हूँ द्विपक्षियों के राग धागा,  
कौन सा यह राग जाया ?<sup>५</sup>

कवि ने गहन बेरना का धामास इन पंक्तियों में दिया है—

तुम बिन इतनी पहन बेरना होयी, इसका मान न जा,  
मेरे पास ध्यया महुराई मुझक मान न जा,  
तुम परकुर कर बिर बिरोह का धरदरदर बज कसे पाए,  
तब बहू बत हृदय ने जानी जिसका सुम्भो शान न जा ॥<sup>६</sup>

१ भी सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—'धनामिका', पृष्ठ ७७ ।

२ 'मेघदूत' उत्तर मेघ, ५१ ।

३ 'पल्लव', पृष्ठ १२ ।

४ शून्य जीवन के धम्ये पृष्ठ ५८, विरह धम्य कटाहने इस शब्द को ।

किन्तु कृतित की तीव्रता सुमनी मोरु से, निरुर विधि ने धम्यों से है विज्ञा ॥

५ 'धुमागतर', कौन सा यह राग जाया ? २० नवम्बर, १९५२, पृष्ठ २ ।

६ 'स्मरण-जीव' कितनी दूर प्यारे हो, २६ भी कविता, धम्य ५ ।

कसकती बेदना की बात पन्थ जो मे भी अपने पीठ में, लिखी है—

बिरह है प्रपञ्च यह बरदान ।

कल्पना में है कसकती बेदना, प्रपञ्च में खीना तितकता पाप है,

शून्य प्राणों में सुरोसे छन्द हैं समुद्र भय का क्या वहीं प्रपञ्चान है।<sup>१</sup>

'नवीन' की तो इसे अपने जीवन का अभिप्राय प्रपञ्च पाप ही मानते हैं कि वे किसी के न हो सके—

क्या जानू क्या अभिप्राय लगा जीवन में ?

यह कैसा पाप प्रपाप जगा जीवन में ?<sup>२</sup>

कवि ने बेदना का आकस्मिक स्वानुभूतिमय क्रिया है। इस रूप में वह अपने युग की काव्य-भारत छायावाद से काफी प्रभावित है। छायावाद के विपक्ष में श्री जयशंकरप्रसाद ने लिखा है कि "कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी जगता प्रपञ्च बेद-विदेह की सुन्दरी क बाह्यवर्णन से भिन्न जब बेदना क आकार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उसे छायावाद क नाम से अभिहित किया गया।"<sup>३</sup> कवि ने बेदना को सम्भावित करते हुए लिखा है—

बदनै, तुमो मेरी बाली

हृत्सयक जताप्रो कस्याली ।

तुम जिस प्रवेश की हो रानी,

कर वो बहु मम्म न हो पानी,

तब निकसे दोसे तीन बार ।<sup>४</sup>

बिवाह का जीवन-दर्शन इन पंक्तियों में है—

हाय हाय करिसे ब्ये हमने जबहुँ न सीसा बान

बिवा हूँतो हू में, सुनि लेते जो तुम दैते फान ।<sup>५</sup>

'नवीन' जो ने विवाह-विषय में, बिरहमत कविताओं को भी प्रथम प्रदान किया है।

कवि का मस्तीमूत व्यक्तित्व दर्शनीय है—

कबलिन जस्ताबात है माँ,

घात घो' प्रनिघात है माँ

कबल मलिनत व्योम मेरा—

घनत की बरहात है माँ,

बन रहा है एक मुट्ठी क्षार यह व्यक्तित्व मेरा,

भरम है अस्तित्व मेरा ।<sup>६</sup>

१ 'वस्तव', पृष्ठ १२ ।

२ 'भरत-वीर', मेरे सम्बर में निरट संघेरा छाया, ३० वीं कविता, पृष्ठ ८ ।

३ श्री जयशंकरप्रसाद—काव्यकला तथा अन्य निबन्ध पृष्ठ १२६ ।

४ 'घोषन-महिरा' या 'पावग-बीड़ा' प्रथमलिपि कविता खोचो रचना, पृष्ठ १३ ।

५ 'रमिनरेरा' तुम नहि जानत हो, पृष्ठ २, पृष्ठ ६५ ।

६ 'घोषन-महिरा' या 'पावग-बीड़ा', अस्तित्व मेरा, ५४ वीं कविता ।

यही स्थिति इस काव्यांश में भी है—

बीचि का बित्पास कैसा ? कहां का तरंग-रास ?  
भरो है धाकड़ धाय मेरे मन-सर में ।  
मेरी बसों धंगुस्तिर्या बनी हैं लुकाठी धौर  
ज्वलित हुई है मेरे दोनों रूप कर में ॥<sup>१</sup>

बिरह-मग्नि में प्रज्वलित कवि की स्थिति की परिणति इन पंक्तियों में होती है—

तड़पन धानुरता, पस्तुकता, कुम्भ भी न धाम धरयेय रही,  
मिल तिम, बल बल, सब साक हुई, हो गई जेतना पराजिता,  
खोलों की लोबी में छोपा जेतनाहीन यह बिर प्रेमी,  
मरघट के पीपल की हर-हर पत्ती भी सिहर उठी बुझिता ॥<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि ने बिरह का भावपरक चित्रण किया है। उसमें कवि के हृदय में विचारों तथा प्रवृत्तियों की सरस अभिव्यक्ति हुई है। कवि ने बर्ब पीड़ा, बेचना व्यथा तथा विपत्तियों का बरस का, अपने जीवन में पान किया था। उनके अन्तस्तर में दर्द धारणित बसा रहा। वास्तव में श्री बचनन' की ये पंक्तियाँ कवि नबीन के प्रेमा व्यक्तित्व पर सटीक बैठती हैं—

बड़ धामी हैं बर्ब बलाए रह सकता है जिसका अस्तर,  
जो इससे बंझिन है उनको फुको फुस बिता पर कर कर ॥<sup>३</sup>

मांसल तथा उन्मादक प्रेम—डॉ० देवराज के मतानुसार छायाबाब की काव्य-शैली के आचरण में साधनात्मक ठगुगारों को भी प्रथम मिला है।<sup>४</sup> नबीन' की के काव्य में भी अपने समकालीन पद्य के साधियों के समान प्रणय के मांसल तथा उन्मादक चित्र प्राप्त होते हैं। इस बाव के मूल में कवि की साक्ष्यमयी प्रेम-बटना मस्ती भरा व्यक्तित्व तथा स्वच्छन्दतावाची वृत्तियाँ कार्यशील रही हैं। कवि अपनी उन्मादिनी बासना की धोर संकेत भी करता है—

उस तब मुझल चरण लीकी पर  
बासे । कैसे जानू फूल ?  
उन्मादिनी बासना की यह  
मेरे हिय में धाई फूल ॥<sup>५</sup>

जो बिबेग्य स्नातक ने सिखा है कि शृंगार रस से भी आपको प्रेम है और उस रस की अभिव्यक्ति बिना कविताओं में हुई है, वहाँ मासकता उन्माद और सङ्ग मस्ती बिचर पड़ी है ॥<sup>६</sup>

१ 'भरत-वीथ', ज्वाल पीन हज्जारादर, १६ वीं कविता पृष्ठ २ ।

२ 'दीवान-बिरा' या पाकस-पीड़ा' सुम्भ बनी, ५७ वीं कविता ।

३ 'प्रणय-बत्रिका' पृष्ठ ४८ ।

४ डॉ० देवराज—'छायाबाब का पतन', पृष्ठ ६६ ।

५ 'कुहूम', इन्द्रपुत्र पृष्ठ ८ ।

६ डॉ० बिबेग्य स्नातक—'हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, छायाबाब हृदय पृष्ठ २७० ।



बासुदेव्युष्य चिरन्तन तस्मिन् कवि है। उनकी तवणार्थी को तरनाई के लक्षण-कस्य में हेतु का परिष्कृत मुक्तकता है। उनका चिरन्तन भाव 'रति' है परन्तु युवावस्था की ध्वन्याङ्गियों में प्रथम की पकावट का विमूर्तगण नहीं है बल्कि अपूर्व जीवन के ध्वन्याङ्ग के निस्काय है। कबानी का रस सफ़र ही है। प्रिय की स्मृति को मारकता प्रकृति के सुझाने नयी से मिथकर मन को नया देती है और सुम्प कर देती है। कवि के मानसिक चित्रों में धार्मिकता के दर्शन किये जा सकते हैं।

कवि ने प्रेम के क्षेत्र में उम्माद के चित्रों के द्वारा रस-स्वाधन की सरिता ही बहा दी। उसके कविपत्र मधुवारी पीठों में उम्मादी वृत्तियों का स्फूर्ति किया गया है। डॉ० नयेन्द्र के मतानुसार, राजनीतिक और धार्मिक परामर्श के कारण जब समय के बातावरण में महान ध्वन्याङ्ग छाया हुआ था जिसके परिणाम स्वरूप तत्कालीन समाज सुस्थितः मध्यमर्ग की रचना एक विशेष मानसिक आध्यात्मिक क्लेशों से ग्रसित हो गई।<sup>१</sup> इसी क्लेशों को दूर करने के लिए ही हाता का प्राज्ञान किया गया था। डॉ० नयेन्द्र ने इसे 'आध्यात्मिक विद्रोह से प्रेरित मोपवाद की' हाता कहा है।<sup>२</sup> कवि के प्रेमाभिपय ध्वन्या उम्मादावस्था को इन वृत्तियों ने साधन दिया है—

कूजे-बो कूजे में हुम्मीबानी भिरी प्यास नहीं,  
बार-बार सा ! सा ! कूजे का समय नहीं सम्प्राप्त नहीं !  
धरे बहा दे धबिरस पाया,  
बुद-बुद का कौन सहाय ?  
मन भर जाय, जिया पतारवी  
कूजे जग सारा का सारा-  
ऐसी गहरी ऐसी सहृदयी इतना है गुस्तासा ।  
साधी, सब कैसा बितम्ब ? डरका है तन्मयता-हाता ।<sup>३</sup>

धारा इम कस्मीरी द्वारा लिखित 'सितवर किय' नामक नाटक के कविपत्र पात्र की मावक पीठ पाठे हैं—

दे है धासा, भर भर प्यासा पीने वाला हो मतवाला,  
बाबल करते कामा-कासा, फुला धाँधों में गुस्तासा ।  
कौसा छाया है हरियाला  
हूँ, एकता नन्दर बन (Xra one) का बहा है नासा,  
न रचना बाकी साधी तेरा बोसवासा ॥<sup>४</sup>

१ की सङ्गुच्छरण ध्वन्याङ्गी— साहित्य तरंग, पृष्ठ १४१ ।

२ डॉ० नयेन्द्र—'आध्यात्मिक विद्रोह कविता की मुख्य प्रकृतियाँ', 'ध्वन्याङ्गी कविता', पृष्ठ ८३ ।

३ कही ।

४ 'रमिनेजा' सारी पृष्ठ ६, पृष्ठ ७५ ।

५ डॉ० लीमनाथ गुप्त—'हिन्दी भाषा साहित्य का इतिहास' रंगमंच और रंगमंचीय नाटक, पृष्ठ १४८ ।

कवि का साक्षी से प्राग्रह है—

तू पीता है मादक परिमल,  
 कथ में उठे मखिर रस धन-धन  
 अताल-वितल-कल-अबक-जयन में—  
 मखिरा मलक उठे मून-मून-मून ।<sup>१</sup>

यह प्रकृति उस युग के अन्य कवियों में भी प्राप्य है। प्रसाय भी लिखते हैं—

यलबही है हाप बझासो, कहु सो व्यासा भर दे ना ।

× × ×  
 बाहूना पीना में प्रियतम,<sup>२</sup> तसा बिसका जवरे ही नहीं ।<sup>३</sup>  
 × × ×

महूरों में व्यास मरी है, है मबर पात्र भी कामी,  
 मानस का सब रस पोकर, कुड़का बी तुमने प्यासी ।<sup>४</sup>

भी मयबतीबरलु बर्मा भी लिखते हैं—

पीने है, पीने दे यो पीबन-मखिरा का व्यासा  
 मल पाद रिसाता कल बी, बहू कल है धाने बासा ।  
 है धाक उर्मबों का सुग, तेरी म्पादक मसुआला  
 पीने दे बी मर कपति, धपने पराप की हाता ।<sup>५</sup>

भी 'बन्धन' में इस विधा में 'मधुशाबा' 'मधुशला घोर' 'मधुकलस' नामक कृतियों की रचना की। उन्होंने इस बाध की मांसलता प्रदान की। इनकी मधुशापी कृति की भी एक मलक दर्शनीय है—

हाला में धाने से बहूमे नाक विखाएधा प्याला,  
 मबरों पर धाने से बहूमे ट्वा बिपाएधी हाता,  
 बहुतेरे इन्कार करेते साकी, होमे से पहले  
 पबिक न, मबर धाता पहले मान करेगी मसुआला ।<sup>६</sup>

महारीबी भी भी कहती है—

तेरा मबर बिभुम्बित प्याला, तेरो ही मित मिपित हाता,  
 तेरा हो मानस मसुआला, फिर पूजू बया मेरे साकी ।  
 देते हो मधुमय बियमय बया ।<sup>७</sup>

'बन्धन' के समान 'तबीन' पर भी 'अमर खम्माम' का प्रभावपूर्ण बिबा का शकटा

१ 'रबिबरेका', काकी, धन्व ३ पृष्ठ ७५ ।

२ भी मयबतीबरलु बर्मा—'मरणा' ।

३ बही, 'मानु', पृष्ठ २८ ।

४ भी मयबतीबरलु बर्मा—'मधुकलु', पृष्ठ ४२ ।

५ 'मसुआला', धन्व ११ ।

६ 'धामा', पृष्ठ १४३ ।

७ 'प्राकृतिक शिखी कविता की सुक्य प्रकृतियाँ', पृष्ठ ८३ ।

है। 'क्याम्पान उमर सम्पाम के सुष्ठ जो द्वारा अनुदित बंध मी 'प्रभा' में ही प्रचुर मात्रा में, प्रकाशित हुए थे। इस भोवबाध एवं मधुवाद का प्रभाव 'उम्मिता' के सम्मल पर भी देखा जा सकता है।'

इस प्रकार नवीन जी ने प्रेम के भोग पर का भी चिन्तन करके, उद्ये जीवन की जिम्दारिगी से घात प्रोठ कर दिया है। वे जीवन के प्रवृत्ति-मार्ग के ही अनुयायी रहे। उन्हें सांसारिक वैराग्य या पलायन में कभी भी निष्ठा नहीं रही। वे प्रासक्ति-प्रधान कवि रहे हैं। उन्होंने अपनी प्रेमपरक रचनाओं में मोहबत्ता की मात्रा के प्राधिक्य को स्वीकृत भी किया था। 'उन्होंने लिखा है — 'यह मी सम्भव है कि मेरे पीतों तथा मेरी कविताओं में वासना की गन्ध मिले। पर मैं इतना निरन्तर कर देना चाहता हूँ कि मेरी कृतियों की 'अमित्य इच्छता' के पीछे 'नित्यता को छाया रखी है।'<sup>१</sup> उन्होंने बताया है कि प्रेम सम्बन्धी मधिकोश रचनाओं का जन्म स्मृति से हुआ है। प्रिय का ध्यान चाहे ही बात की प्रवच रचित हुए परी है और मात्र बनता बना गया है।' कवि ने अत्युक्त काव्य शायदों का उपसर्ग करते हुए कहा भी था कि वे चापके कवियण कितना मसौठ पुराने दौर नको ने लखनोबासी इलाहा-म्याताबारी रहस्यकारी छपाबाटी एवं धर्महीन व्यर्थकबासी कह कर उड़ाया है चापके साहित्य के मुख्य है।'<sup>२</sup>

इस प्रकार 'नवीन' जी के काव्य में रति तथा उत्साह दोनों ने अपने सुगम-रूप को प्रतिष्ठित किया है। जो प्रवासी ने लिखा है कि 'नवीन जी की कविताओं में जहाँ एक ओर जीवन के संघर्षों का चिराट आह्वान है, वहाँ प्रेम साधना को तीव्र अनुभूति भी है। जनकी कविताओं में जहाँ अस्मित और विम्वेध के आह्वान में 'नज का बलरूपत पठ जाये' तारे टुक टुक हो जाये' के चिराट आह्वान का स्वप्न है, वहाँ 'बैप यह भुजबन्धनों में बन्धनों की स्वामिनी तुम' के रूप में जीवन के किसी धम्रात कोने में प्रेम-साधना के प्राधिक और लूकम लकेतो का प्रदर्शन भी है।'<sup>३</sup>

मूल्यांकन—'नवीन' जी का प्रेम-काव्य उनके हृदय का स्वच्छ दर्पण है। अमल अनुभूतियों का साधारण है। उनमें प्रलय, स्वसौन्दर्य, मोहन, मादकता और एवं समन्वय के सूत्र अपनी संयुक्त जलनिधि में काव्य-मी जो स्नात कर रहे हैं।

जी सङ्ग्रहकारण प्रवचनी ने लिखा है कि 'बालकृष्ण के पीतों में मोहल आमुफ्ता है, अमित्यबन्धा की त्रिमिसाइट है प्रिय का चिरन्तन आसम्भन है। अतोठ के सम्पत्ते स्मृति

१ 'उम्मिता', तृतीय सर्ग पृष्ठ ११, पृष्ठ २११।

२ 'मैं इनमें लिता' पृष्ठ ५२।

३ 'रतिमरेता' पृष्ठ ३।

४ 'मैं इनमें लिता, पृष्ठ ५३।

५ 'हु दुब', पृष्ठ ११।

६ 'विश्वमित्र', राजन-अव्ययि विद्योपाध, दिल्ली के विद्वाने पणकोल बर्ष विज्ञान और प्रवृत्ति की कवरेता, पृष्ठ २३०।

प्रेम एवं दार्शनिक-काव्य

संघर्ष का काम देते हैं। रघुराज शृंगार उनके गीतों का मर्म है। संयोग और वियोग दोनों पक्षों के दर्शन होते हैं। संयोग बहुत कम और अशिक्षित मानसिक और कहीं-कहीं कुछ अनुकूल घबघरों के रतिपूर्ण क्षणों की श्राव जिसमें वियोग भी मिता है। निमग्नता ही वास्तव में उनका प्रधान भाव है। बालकृष्ण धर्मा के प्रेम में भी नारतीयता के लक्षण मिलेंगे। हाँ प्रिय का रूप उमय धिया में बैसना यहाँ की परिपाटी नहीं है। यह कदाचिद् उर्लू का उत्तराधिकार हो। मल्ल कवि भगवान की प्रवचनारणा कीलिंग में कर ही करते सकते थे परन्तु बालकृष्ण ने कदाचिद् अपने 'सरकार को उर्लू के सम्बोधन के अनुसार संघारा है। बालकृष्ण के वियोग चित्रों में घटीत के रमण स्वरूपों का बस भी रहता है और सविष्य की रमण भूमि की धनैकाकी कामता भी काम करती है।'

'नवीन' की के प्रेम-काव्य पर कबीर की बिरहाकुल मस्ती वैपुल्य कवियों की उत्सोतता तथा उर्लू कविता की रंगीनी रूपा का प्रभाव भी धाँका जा सकता है। कबीरदास कहते हैं—

बीमझियाँ खास्वा पड्या नाम पुकारि पुकारि ।  
धँडझियाँ भझई पकी पम्प निहारि निहारि ॥

'नवीन भी बिद्वानस्वा में कहते हैं—

उपलोकक डार-डार लूक बने हय बंचल,  
पयराये हैं मन हय पन्व ओछते पल-पल ।'

वैपुल्य कवियों का गीति-तत्त्व एवं तन्मयता का प्रभावानुस यहाँ किना जा सकता है -  
ललकि रड्यो हिय बरत-बरत को मन है प्रस्त-प्रस्त,  
प्रपनेई तैं में बिन्तापुर में निन्न हूँ लंबस्त ।'

उर्लू-धरसी कविता का प्रभाव भी धा गया है—  
बरबि रमे हो मन सोरिण के कल-कल में तुम, प्राण  
किर नी ब्याकुल हूँ करने को मैं तब सासप्रकार,

कहाँ ही तुम भेरे सरकार ?  
क्यायमी' में भी उमयलियी सम्बोधन प्राप्त होते हैं।

'नवीन की के वियोग-चित्रण में भाषा-निष्ठा तथा धावोक-धाम्यकार का इन्द्र छटियोर होता है। कवि बिरहाकुल होता है। उसका हृदय नारन्वार मन्त्रावा है और वह अपने बोधन का बिरलैपण एवं सिद्धान्तोक्त करता है। इन समस्त श्रिया प्रतिश्रियाधों में प्रकृत भाषा उरकृता बीबन-कर्म तथा समन्वय की भूमिका ही भरितार्क होती है। कवि रस को धारता धन बना लेता है और उसका धानीवन पोषण करता है। इस प्रणयानुभूति ने

१ 'तद्विषय तरंग', पीतकाव्य और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', बालकृष्ण के पीत,  
पृष्ठ १३५, १३६ ।

२ 'रविमरेखा' भेरे परिपन्थी, छन्द, ९, पृष्ठ ११५ ।

३ बड़ी बिना या हिय की बरनि न जात, छन्द ५, पृष्ठ १०० ।

४ बड़ी धाव है हीनी का लीहार, छन्द ४-५, पृष्ठ २६ ।

ही, कवि के काव्य के काव्य क्षेत्रों में भी प्रविष्ट होकर अपने धारणों तथा प्रभावों में परिवर्तन उत्पन्न किया है।

कवि ने प्रेम तथा वियोग-जन्म बेरता को भी अपने साहसी व्यक्तित्व तथा पौरुष के अनुसार ही ग्रहण किया है और उसे वैसा ही बात लिया है। उनके निरास-प्रेम से भी उदास-तब ही टपकत दृष्टिमोक्ष होते हैं।

'नबीन' की का प्रेम-काव्य अपनी निष्कण्ठ धर्मव्यक्ति तथा अनुभूतियों की ईमानदारी में अपनी कानो नहीं रखता। वे जीवन के गायक से और जीवन से ही उन्होंने अपनी काव्य-प्रेरणा, सामग्री तथा प्रगति की निधियाँ प्राप्त की हैं। उनका साहित्य-जोष कभी भी धरत वा इतर माध्यम से संश्लेषित या पाणित नहीं हुआ। प्रेम भी इनको जीवन की उपज वा धोर इसे कवि ने अपने काव्य में सहस्रहाती कला के दम में परिष्कृत कर दिया। उनकी प्रेमाभिध्वजि में किसी भी प्रकार का बुराब दिग्गम या संकोच नहीं है।<sup>१</sup> इन सब के होते हुए भी उन्होंने सांस्कृतिक दृष्टि का काशी दूर तक पावन भी किया है। उनके काव्य का आधार ही हमारी सांस्कृतिक परिपाटी, धरोहर तथा पोटिका रही है। उनके प्रेम तथा वियोग-दर्शन मूल के मूल उत्स को भी हम विद्यापति तथा सूर<sup>२</sup> और कबार व जाबसी क इतिव में कुछ लकटे हैं। हम यह लकटे हैं कि 'नबीन' ने अपने साधना-मूल्य जीवन से भी वेरता के अमर पीठ की स्वर-माधुरी मरने का<sup>३</sup> अविस्मरणीय कार्य किया है।

कवि ने अपने प्रेम अथवा विरह को स्मृत से मूढम की धोर उद्गुल करके लौकिक से अलौकिक की धोर संकित करके अपने काव्य में स्वाधीनाम एवं विश्वतरक तर्कों का समावेश कर दिया है। कवि की धारणा की हूक<sup>४</sup> उसके प्रेम-काव्य में भी पश-तब कल्यैत होती है और अमरतोपावा उसे अपने ही रंज में लरबोर कर लेती है।

१ "यदि हूक निरास प्रेम का बिजल करें तो पढ़ने वालों को यह अनुभव होगा चाहिए कि यह लबा-हाक का कलेजा है जो लड़प रहा है। यह क्या कि गोपा लड़पन है ही नहीं?"—'कु बुम', पृष्ठ, १८।

२ "हमारे वर्तमान बुद्धि-श्री लग्न कवियों में यह शेष का गया है कि वे कल्पमार्गी और रंजानेद्विती के घटाटोप में अलसी बल दिया जाते हैं।"—'कु बुम', पृष्ठ १८।

३ "साधारण, किन्तु अत्यन्त आकर्षण विनीत या संवीम का भाव विद्यापति की वा सूर की अलतना के साथ भी तो बिचित्र दिया जा सकता है?"—'कु बुम', पृष्ठ १८।

४ "इन विरह-मीमांसा को इस कस्तुर-तरु को घाब यदि चाहें तो वे कौड़ी का लालोमेन बहु कर दान दें, या, घाब चाहें तो इसे लामना-शून्य ध्यायाबाध कर-कर इसका अनाक उड़ा लें, पर, इसका तो अमरल रजिमे कि घाव हिन्दी साहित्य-क्षेत्र में कुछ लोभ ऐसे अरु है जो अपने लामना-शून्य जीवन में भी वेरता के अमर-पीठ की स्वर-माधुरी को अपने का प्रपल धरत करत है।"—'कु बुम', पृष्ठ २७।

५ "हमारे लाल में अरुता की प्रधातना वा इसका वारल है भाव स्वभाव की एक अनुभूति। इनके लक्षण में एक बार मैंने लिखा था कि बिना लजब अनुभूति ने कहा वा 'एकीरत' अरुलनेक' उत लजब बहु रो ही रहा हो और बिना की धुन में अने यह लिखना

'नवीन' का प्रेम उत्सर्जन निराशा वा असफलता के आरोहों से न भ्रूँककर, भाषा साहस, शक्ति एवं भासा के स्वयं के बाठावन से अपनी ध्वनि बिखेरता है। वे प्रेम से भेद की ओर झुका होते हैं। सफलता प्राप्त होने पर परिपालना के तार्कारिक एवं व्यावहारिक कुनिवाचारी को तिलांजलि देते दृष्टिकोण होते हैं।

प्रेम-काव्य पर ही कवि का काव्य प्राणाघ प्राप्त है। उसमें काव्य प्रकल्प भी अपने महत्तम सिद्धियों को स्वयं करता है। योति-कथा का सर्वाधिक सुन्दर प्रस्तुतन और मार्ब, इसी क्षेत्र में हो, वितास कर रहा है। कवि मुनड एवं प्रबानड पीठिकर ही वा विचका प्रमास यथा यही प्रेम काव्य है। इस काव्य में स्वच्छन्दतावासी प्रकृतियों में भी अपना स्वयंकोप विवेक है और समावाद का क्षेत्र भी यथा-यथा फहराता दृष्टिकोण होता है।

नवीन जो वे अपने प्रेम-काव्य के माध्यम से द्विती में यथुवासी कृतियों तथा उन्मेषों को पुरस्तर किया। यह प्रकृति उनके फहरा तवा धार्यात्मिक रूप को निरन कइनी कइती है। विरोधी तवा प्रत्ययों का वे भी आकर यहाँ अपना सङ्घोम प्रबान किया है। द्विती में इस धारा के पुरस्कर्ता होने के नाते उनका महत्त्व कम नहीं है।

श्री आग्निषत्र सोनरेखा में कवि के प्रेम काव्य का सुस्पष्टन करते हुये लिखा है कि, " 'नवीन' जो के धर्मिकास पीठों का विषय प्रेम हो है और निपट यानवोम प्रेम भी सक्ता होने पर किसी विषय अध्वयन मोप से कम नहीं होता। ऐसा प्रेम व्यक्ति से लपाव रखते हुए भी निष्कंठि हा बाता है और इस निष्कंठि-कण्ठ की मकिया में प्रेम अवश्य ही 'सर्वसुतद्वि-रति' और स्वार्थ-समर्पण की भावना जागृत करता है। किन्तु 'नवीन' जो भी प्रेम-यावना नवत दिनहो भी पाति सदा उदाह रही है। द्विन्दो के प्रत्य किसी कवि में ऐसी सूराम यदि मीने नहीं देखो है। श्री मयवतीचरण बर्ती के 'प्रेम-संगीत' में इसका धामास अवश्य मिलता है पर वह देविस्वामी नहीं बनकर कइ गया।"<sup>१</sup>

प्रतिपादित कर दिया हो तो बात नहीं। सबकृत के कथन के पीछे निहित जीवन का एक तरह, एक रहस्य दिया है। हमारे, आपके, सबके अनुभवों में हमें यह स्पष्ट रूप से बता दिया है कि जीवन में एक अक्षरल यत्नशील, एक मरिच बहू, एक धर्मिठ व्यास, एक कियारमयो स्तुत, एक धर्मिठ बनी हो रहती है। सुख और धान्य के बीच एक हूक ही कठ घाती है यानो सासुरय संयोग के अर्थों में भी धिययोम की बासुरो की एक हूक तुगाई दे जाती है। एवि डानुर कइते हैं—*"Oh the Keen call of thy flute say !* ऐरी स्वमित सुरमिका का वह धमुर आह्वान किस देश से, जिसके बवालोधुवास से स्वमित वह धमुर आह्वान हमारी प्राणबन्धों के रगों से प्रबाहित हो उठता है ? कइ है वह ? साजन कीन देश में थाए ?" 'कु कुम', पृष्ठ १५।

(ब) "यह दो देरी का यानक-नामपायी जानु तो धरत प्रवाती है, यह न जाने किस कथास-प्रास की, किस पति की, टोह में धात्र धुव-धुव से मार्ग-क्रमल करता वा रहा है और धरती तक यत्नका हृदय जाती है, उसकी धर्मि विरकारित, रिक्त और ध्याती है। इस विवना के धर्म को यदि धात्र का कवि-समाज व्यक्त करता है तो हम कृतप्रतापूर्वक उसे स्वीचर क्यों न करें ?" —'कु कुम', पृष्ठ १२।

१ 'बीला', प्रपस-नितम्बर, १९३०, पृष्ठ २२४।

बालकृत्य धर्मा 'नवीन' व्यक्ति एवं काव्य

वास्तव में कवि का जीवन समर्पण का जीवन रहा है। जहाँ महादेवी जी ने धपने को दुःख को बरसी कड़ा है—

मैं तोर परी दुःख की बरसी ।  
स्वप्न में बिर निर्यत्र बला, अश्वन में धाहुत विजय हूँघा,  
मयनों में बीपक से बलते, पलकों में निर्भरिणी मचली ।  
मेरा पय-पय संयोज मरा स्वातो से स्वप्न पराय मरा  
मम के लव रंग हुनते इदुन, धाया में मलय बहुर पतो ।<sup>१</sup>  
वहाँ 'नवीन' को कहते हैं—

मिय, मैं धाज मरी म्पारी सो  
लनक हुनु गी भीबरलों में, निज तन-मन-बारी-सी  
साजन धाज मरी म्पारी-सी ।<sup>२</sup>

यही समर्पण की वृत्ति वहाँ उन्हें 'उष्ट' का सांस्कृतिक गायक बनाती है, परमसत्ता की धनुस्तित का साजन बनाती है, वहाँ धपनी प्रेक्षणी को प्रणयानुवृत्ति तथा वियोग-विदग्धता का मनीं उदुकाटक मी । डॉ० लक्ष्मीतावर बाप्यौय ने ठीक ही लिखा है कि "उनकी शृंवार परक रचनाओं में एक सच्चे रोमांटिक कवि के वर्णन होते हैं ।"

### दार्शनिक-काव्य

पृष्ठसूचि— नवीन जी के काव्य की परिणति उनकी धार्म्यात्मिक रचनाओं में हुई है । धपने जीवन क प्राय मल्लिम १५ बपों में कवि का मन पारमोत्तिक तलों की धोर उन्मुन हुआ धीर उचने मग्नीर धास्या तथा रक्ष्य धावना से प्रेरित मधुर-पान गाये ।<sup>३</sup> इस प्रकार उनकी परबती रचनाओं में, रहस्यवादी तथा धार्म्यात्मिक तलों की बहुसता दृष्टिगोचर होती है ।

इसके मूल में कृतिपय कारणों का धनुजीमन किया जा सकता है । कवि के जीवन के विफाउ के साज ही साज उधरी कविताओं का प्रेय स्वर धपने धस्तित्व को 'दार्शनिक काव्य' में विलय करता सधित होने मया । इसके धतिरिक्त, कवि के काव्य-संस्कारों में भी धपने तन्मयों को परिपक्व बनाया । ये संस्कार ही प्रायः बाहर धपनी धवि बिसेरने लये । कवि के पिता के बल्लभसग्गदायानुधामी होने के कारण उन्होंने धपने जीवन को प्रमबदु-भाउपना में ही निमग्न कर दिया । साज ही कवि-मात्राओं धास्यस्य सात्तिक एवं धास्तिक मारी थी । उनके कण-कण में हरि मक्ति तथा धास्या के तत्व मरे पड़े थे । इस प्रकार, दोनों से कवि को

१ 'धामा', पृष्ठ २२० ।  
२ 'जबालि' मिय मैं धाज मरी म्पारी-सी, पृष्ठ ६ ।  
३ डॉ० लक्ष्मीतावर बाप्यौय—'हिन्दी साहित्य का इतिहास' धाधुनिक काल, पृष्ठ १०८ ।  
४ डॉ० रामधरव जिसेरी—'बैजिठ नवरत्न', २४ सुलाई, १९६०, पृष्ठ ५, कालक १-४ ।

धार्मिकता की पैदा-उत्पत्ति प्राप्त हुई जो कि कवि के मन्थ-करण में सतत क्रियाशील तथा उद्बुद्धाविका शक्ति सम्पन्ना बनी रही। इन्हीं वैप्लवी संशयों ने कवि को भक्ति तथा दर्शन के क्षेत्र में प्रतिष्ठित कर दिया। डॉ० मटमागर ने लिखा है कि "भारतीय धारणा (माकतमान कबुली) और नबीन के काव्य में यह वैप्लव सम्बन्ध आयावादी कवियों की ध्येसा कहीं अधिक सुस्पष्ट है, क्योंकि वे जग-जीवन से संपृक्त रहे हैं और उन्हीने पूर्व-परम्परा से भगता गाथा एकत्र नही तोड़ा है।"<sup>१</sup>

'नबीन' का दार्शनिक-काव्य उनके जीवन तथा अध्ययन की उपज है। उनकी आरम्भ बरोहर में, स्वाध्याय तथा चिन्तन ने मिलकर, उसे धार्मिकता के रंग में सराबोर कर दिया। डॉ० विद्वनाय चौड़ के मतानुसार 'नबीन' की की इस धार्मिक प्रवृत्ति का कारण उनका दार्शनिक अध्ययन है।<sup>२</sup>

'नबीन' की के दार्शनिक काव्य में गाता प्रकार के तर्कों का संघनन है और इन सब पर उनका भावुक कवि आच्छादित है। मनुष्य विचारशील प्राणी है। कवि 'नबीन' ने कहा है कि "मानव स्वभाव में एक प्रवृत्ति का सम्मिश्रण है और इस कारण हम क्या क्वासि ? क्वासि ? की चीत्कार किया करते हैं।"<sup>३</sup>

इस प्रकार कवि ने 'क्वासि ?' के साथ ही कस्त्वं ? कोझें ? के प्रश्न भी पूछे हैं। इन प्रश्नों के उद्भव तथा निदान में ही उनके हृदय से रहस्यवादी प्रवृत्तियों को जन्म देने की प्रेरणा प्रदान की है। इस प्रेरणा की पीठिका में अनेक अवयव कार्यशील हैं।

दर्शन-सूत्र और उनका विश्लेषण भारतीय चिन्ता-धारा—कवि के रहस्यवाद पर अनेकों तर्कों का बहन प्रभाव डाला जा सकता है। वेद उपनिषद्, श्रीमद्भगवद्गीता आदि में उनके रहस्यवाद के स्वप्न गढ़ने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कवि उपनिषद् तथा गीता के मन्त्रों में से था। सबसे मुख्य बात यह है कि कवि ने भारतीय भूमि से ही पंचतन्त्र ग्रहण कर, अपने दार्शनिक-काव्य के पीछे को चोपित किया था। उसने अपने भाषकों भारत को समृद्ध तथा पुष्टतन परम्परा की शृङ्खला से ही आबद्ध किया। इसके लिए यह पत्र-पत्र भटका नहीं और न उसने पाश्चात्य तर्कों को प्रधानता प्रदान की। धारम्य रूप में उसके काव्य पर पाश्चात्य-दर्शन के झट्टे वेले जा सकते हैं। इस प्रकार कवि का दर्शन अपनी संस्कृति तथा साधना का ही सुवासित पुष्प है।

उपनिषदों ने कवि के दर्शन की आत्मा का निर्माण किया है। कवि अपने उस का विश्लेषण करते हुए लिखता है कि 'यदि हम इस वर विचार करें तो ऐसा प्रतीत होगा कि इस क्षेत्र को धार्मिकता प्रदान करनेवासी यह प्रयोजना है जिससे प्रेरित होकर भारतीय सूक्त के श्रुति की बाणी सुकर हो उठे की—कुत धारता इयम् विसृष्टि—? यह धारत होह-माह, यह पुकार, यह टेर—क्वासि—की यह टेर मेरी—यह कपटा यह जग, यह जगन-आकाश—

१ डॉ० रामचरण लटनायर—'अध्ययन सन्देश', धार्मिक हिन्दी कविता वर वेल्स-आचार, ४ अणत, १९६२, पृष्ठ ५।

२ डॉ० विद्वनाय चौड़—'धार्मिक हिन्दी काव्य में रहस्यवाद', पृष्ठ २२१।

३ 'हृदय', कुछ वार्ते, पृष्ठ १३।



यही है जो भारत की भाषा को अनुभवान-रत ब्रिमे हुए है। इसी प्रेरणा से ही हमारे देश के वाङ्मय को पुनार दिला है। धारम-दर्शन सत्वरण बन्धन-मोक्ष—यही इस देश की विशेषता है।<sup>१</sup>

'नवीन' का दार्शनिक व्यक्तित्व कठोपनिषद्कार के नबिकेता के समान, जिज्ञासाकुल तथा धारमा के अस्तित्व की पुत्वी सुलभने के लिए प्रयत्नयोग्य है। 'नवीन' ने 'नवास्ति' की नूतिका में, इस प्रसंग का विचार विवेचन किया है। प्रकाशन्तर से, इसे हम उनके दार्शनिक-काव्य की पृष्ठभूमि समझने के लिए और उसके संयोगक-तत्त्वों की प्रतीति के हेतु, प्रामाणिक तथा उपयुक्त श्रोत के रूप में ग्रहण कर सकते हैं।

कठोपनिषद्कार का नबिकेता इसी धारमोपबन्धि धारमा के अस्तित्व की पुत्वी, सुलभता चाहता है। वह अपने मुख धम से वृत्तग है—

येयं प्रेते विबिक्किस्ता मनुष्ये  
अस्तीत्येके नायमस्तीति चेदे  
एतद्बिद्यामनुशिष्टस्त्वयार्हं  
धारणामेव धरस्वृवीय।<sup>२</sup>

यमराज उसे बहलाना तथा फुसलाना चाहते हैं—

धन्यं वरं नबिकेतो वृणीष्व,  
धामोपरोत्सीरति मा नुबैनेम्।<sup>३</sup>

यमराज नबनुबक नबिकेता को मनमोहक वरदान देने की बात कहते हैं—

ये ये कामा दुर्लभा मर्त्यलोके,  
तर्बान् कामावद्व्यक्तं प्रार्थयस्व,  
इमा रामा तरणा सतुर्वा-  
नहोहसा सम्मनीया मनुष्ये।  
धामिर्मप्रतामि परिधारयस्व  
नबिकेतो धरणं जानुप्राणी।<sup>४</sup>

परन्तु नबिकेता हड़ है। मनुष्य बित से वृत्त नहीं होता—

न बितेन तर्पणीयो मनुष्य  
नान्यं तस्माच्चबिकेता वृणीते।<sup>५</sup>

'नवीन' ने इस प्रसंग की चर्चा का ध्यान में उसका निष्कर्ष भी प्रस्तुत किया है। इस निष्कर्ष में ही उनके दार्शनिक-काव्य की मूल-मिति का सबसुष्ठुत सुलता हुआ विचार पढ़ता है। वे स्वयं प्रन करते हैं—इस मध्य, धरात हृदय-अन्धनकाटी सम्भावण का क्या धर्म

१ 'नवास्ति', 'नवास्ति' की यह टेर मैरी, पृष्ठ २१।

२ वही, पृष्ठ २१।

३ वही, पृष्ठ २२।

४ वही।

५ वही।

है ? इसका उत्तर है — प्रथम केवल यह है कि अन्तर-गट के पार शक्ति की प्रेरणा धनमुष्ण को आतने की प्रणयना भारतीय भास्य-धनुसम्बान के रूप में सहजाविद्यों से हमारे देश के भीमन में मञ्जरी, खेसरी, दीङ्गी ठहरती, किहुँसरी रोती और स्ताती रही है ।<sup>१</sup>

इसी प्रकार 'नबीन' की नै अस्थ्य भी लिखा है कि 'यम के सन्धों में दि अनित्य इत्य ही नित्य की प्राप्ति कर देते हैं । यम ने तो यम के साथ मञ्जरीया से कहा—अनित्ये इव्ये-प्राप्तवानसि नित्यम्—मैंने अनित्य इव्यों से ही नित्य को प्राप्त किया है ? इसमें आश्चर्य ही क्या ? यदि अनुचित रखने से ये अनित्य इतिहास मानवता को गान्धीत्व और बुद्धत्व प्रदान कर सकती है तो मेरे पीठ को धातोचक की दृष्टि में मूर्तिका की धूर्तों के लिये गावे गये गीत हैं, क्यों न कहना, प्रेम, सर्वमृत हित रति और स्वार्थ समर्पण की जावना जागृत कर सकें ।<sup>२</sup> कवि का विश्वास ही तो उपनिषद् के ऋषि के इस कथन में समाहित है—

मायमात्मा प्रवचनेन मन्त्र  
न मेषया न बहुनाभुतेन,  
ममैवेय वृणुते, तेन तस्य ।<sup>३</sup>

'नबीन' की उपनिषद्-धर्म<sup>४</sup> एवं कठोपनिषद्<sup>५</sup> से प्रत्यक्ष प्रभावित है । उनकी वास्या का सूत्र, इस पंक्ति में है—

ईशावास्यमिदं सर्वं यद्विदुष्व जगत्सो जगत् ।<sup>६</sup>

ईशावास्योपनिषद्<sup>७</sup> है भी कवि विशेष प्रभावित हुआ । ईशावास्योपनिषद् का ऋषि कवि की वासी में कहता है—

हम से ऋषि बोला 'शावदान  
तुम कर्म पन्थ के पबिन्द, धरे,  
तब सहज स्वभाव न अचौगमन,  
तुम वाचिभता से सदा बरे' ।<sup>८</sup>

उपनिषदों ने 'नबीन' की के काव्य को प्रमूढ सामग्री प्रदान की । इनका प्रिय तथा अनन्त प्रसंग, मन्त्र-मञ्जरीया संवाद, उनके एक मृत्यु-गीत का विषय बना है—

मञ्जरीया बोला तुम जम से 'मार्च ईश है सखी,  
मैं सुसुप्त हूँ अस्तु तत्त्व का, मुझे न हो जीलासी,

१ 'व्याप्ति', पृष्ठ २३ ।

२ 'रश्मिरेखा' पराब' कामानुषन्ति बाला', पृष्ठ ३ ।

३ 'व्याप्ति', पृष्ठ २१ ।

४ 'विमोवा-स्तवन', पृष्ठ २१ ।

५ 'रश्मिरेखा', पृष्ठ २ ।

६ 'विमोवा-स्तवन', पृष्ठ २२ ।

७ वही, ईशावास्योपनिषद् बोला, पृष्ठ २३ ।

८ वही, पृष्ठ २४ ।

प्रसन्नक यम बोले 'नचिकेता, मररौ मातृप्राप्ती'  
 टिप्पु पंता बब बहु माया में जिसे मरल सुम भाई ?  
 भाई धात्र बनी धाहनाई ?'

कवि के प्रिय वाचनिक-पात्र नचिकेता की सुयस पताका इस मरण-भीत में भी फहरा रही है—

बागो नीसठष्ठ जीवन में, कर विषयान प्रमर बन पाय,  
 जायी प्रकृि द्दिन्न मस्ता बहु, त्रिसको निब छोणित कण माये  
 जायो वे बलिबानी जिनने भित प्राणार्पण मायन पाये,  
 गिबि, इपीबि, नचिकेता बागो जिनको सुयस पताका फहरी  
 क्या तुम जाय रहे हो प्रहरी ?'

इस प्रकार, कवि के मरण-भीतों का मुक्त-उत्त कठोपनिषद् के यम-नचिकेता संवाद में डूँझ जा सकता है।

नवीन की नै स्वासि की टैर, ज्ञानैच्छा की हूक तथा रहस्योद्घाटन की वृत्ति को उपनिषद् काव्य में ही नहीं प्रत्युत् भारिकप्रभ-नास महाकाव्य-कास पुराण-कास सन्त-कास तथा वर्तमान-कास—सब कासों के बाहुमय में पाई है।<sup>१</sup> उनके मत्तानुसार, रामरवार में मनोरंजन के लिये सिधे गये साहित्य में भी यह हूक बराबर उठ-उठ घाती रही है। राम के 'बेहिनो विबसागता' धीर कासिशास के 'बर्षा सोके भवसि मुखिनामप्यन्यबावृति भेत' में बही हूक है, बही पर पीर की सुभगाने की धातुरवामपी भसन्तुष्टि है।<sup>२</sup> कवि का यह मुदुद मत है कि भारत की स्वप्नोत्थित आपरुद्र-मात्मा ने पुर्णों क प्रबाह में हूब उतर कर भी अपने स्वबर्ष को स्वभाव की, स्व-सक्य को ठिरोहित नहीं होगे रिया।<sup>३</sup>

धीमदुमयबहु मीठा ने भी कवि की प्राध्यारिक वृत्ति के स्वल्प-निर्माण में पर्वाल सामग्री प्रदान की है। कवि को ज्ञानैच्छा को इस महती कृति ने प्रभावित किया है। 'नवीन' को के मत्तानुसार, ज्ञान की व्याख्या है—ज्ञान है उस बिद्विगम चिये हुये ठव को हृदयमम एवं धारमसात् कर सेना।<sup>४</sup> मीठा के साधार पर ही उरहोने धमानिल धदमित्त्व पहिता, धान्ति धार्मिक प्रापावोसासन, घोष स्वैर्ष धारम-विनिबहु इन्त्रिवाची क प्रति बैराव्य धार्हधर, धारम-मुख धार-ध्याबि-बुध-दोणनुरांन धासक्ति पुत्र-वार बूह धारि में धनमिध्वंग नित्य समचित्तव बाहे इष्ट बाहे धनिष् कुध भी धा पड़े धनन्य धाग-धूर्षक भगवान के प्रति धम्मनिचारी भक्ति विबिकि बेउ सेवित्व जन-कोसाहस के प्रति धरति, धम्पाव ज्ञान की नित्यता ठवज्ञान धर्ष दर्शन—ये बीस सहाण ज्ञान के बढाये हैं।<sup>५</sup>—

१ मृत्यु-धाम वा 'बुजन धार्म भाई धात्र बनी धाहनाई, धात्र की कविता, पृष्ठ ७।

२. बही, सात की कविता, पृष्ठ ५।

३. 'बर्षा', पृष्ठ २१।

४. बही पृष्ठ २१।

५. बही।

६. 'विनोबा-वनवन', पृष्ठ ८।

७. बही।

अमानिप्रथमवस्मिन्नवर्माहसाभान्तिरार्जवम् ।  
 आचाप्योपासर्गं शौचं स्वैर्यमात्मबिनिग्रहः ॥  
 इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनर्हकार एव च ।  
 अन्ममृतपुत्रराध्यापिदुःखदोषानुवर्त्तनम् ॥  
 अतस्त्रिजनिष्वंशं पुत्रवारगृहादिषु ।  
 निरयं च समचित्तस्वमिष्टामिष्टोपपत्तिषु ॥  
 मयि आनन्दयोगेन मत्त्रिरभ्यामिचारिणी ।  
 विविक्त वैश्वसेचित्तपरितिरिर्जनसंसदि ॥  
 अघ्नात्मज्ञानमित्यर्थं तत्त्वज्ञानायवर्त्तनम् ।  
 एतन्मत्तनमिति प्रोक्तमज्ञानं परतोऽप्यथा ॥<sup>१</sup>

'नवीन' भी का रज्जुस्वभाव विद्यापति सन्तवाणी<sup>१</sup> गोरखवाणी<sup>२</sup> कबीर बाबु  
 सिद्धों ज्ञानिकों कावची निर्मुक्तिमें सूर, तुमसी मीरा, अष्टछाप के कवि आदि वैष्णव  
 कवियों द्वारा भी प्रभावित हुआ है। डॉ० बच्चन ने उन पर, विद्यापति का प्रभाव निरूपित  
 करते हुए, लिखा है कि "ऐसा नहीं कि 'नवीन' काव्याचार रज्जुस्वभाव अथवा अघ्नात्मवाद से  
 प्रभावित रहे हैं। पर 'नवीन' का अघ्नात्मवाद उसको पारिव्रता का ही संशोधित परिष्कृत  
 विवरण, धर्मियुत रूप है। पारिव्र प्रियतम का देवता बना देते हैं देवता का पारिव्र प्रियतम  
 के समान साक्षात्कार करते हैं। 'नवीन' का रज्जुस्वभाव उस परम्परा से धारा है जिसके आदि  
 कवि विद्यापति कहे जा सकते हैं—पारम्य को पति रूप में देवता।"<sup>३</sup>

सन्त सिद्ध आदि की भाँति 'नवीन' भी भी ब्रह्माण्ड के अणु-अणु में अमल धर्मि की  
 शक्ति देखते हैं—

नया जवाई है तुम्हों में,  
 सबन | भिन्नमिल हीपमाता ।  
 इस महत् ब्रह्मण्ड भर में,  
 कुछ कैला है जवाला ।  
 परम अणु-अणु में रमे हो,  
 बीसि की सुवचा जपाते।"<sup>४</sup>

डॉ० 'सुमन' ने लिखा है कि "इस दर-दर प्रबल जयाने वाले रमते राम धोनी की  
 बानी का सीधा सम्बन्ध सन्तों की उस प्राणवत्त धारणा से था जिसमें कपनी-करनी में कोई  
 पत्तर नहीं होता अणुमद-साँचा पन्ना।"<sup>५</sup>

१ श्रीमद्भक्तवत्सला', अध्याय १३, ७-११।

२ 'विनोबा-स्तव', पृष्ठ ६।

३ वही पृष्ठ ६।

४ डॉ० हरिबंसाराय 'बच्चन'—'नए पुराने भरोसे', कविदर नवीन भी, पृष्ठ ३७।

५ 'बवासि', अग्रलिखित तब हीपमाता, पृष्ठ ४१।

६ डॉ० शिवरामलालसिंह 'सुमन'—साक्षात्क 'हिन्दुस्तान', २० मई, १९६२, पृष्ठ ९।

कबीर का 'नबीन' पर बहुत प्रभाव पड़ा। कवि का रहस्यवाद, इस सग्त कवि के अणु से सम्भूत नहीं हो सकता। महादेवी धर्मा के मतानुसार कबीर के रहस्य भरे पर हमारे हृदय को स्पर्श कर सीधे बुद्धि से टकराते हैं।<sup>१</sup> धार्याव हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "कबीर मस्तमौला थे। जो कुछ कहते थे, साफ़ कहते थे। जब मौज में आकर क्लृप्त और धम्मोक्तियों पर उतर आते थे तब जो कुछ कहते थे वह सनातन कबित्व का श्रृंगार होता था। उनकी कविता से कभी सनातन सत्य खचित नहीं हुआ। वे जो कुछ कहते थे, अनुभव के आधार पर कहते थे। इसीलिए सभी क्लृप्त मुक्तके हुए और उक्तियाँ बोलने वाली होती थीं। उनके राम जब उनके प्रिय होते हैं तो भी उनकी प्रसीम सत्ता भुला नहीं बी जाती। नौ खुले दरवाजों के घर में बाह्य दुःखित के विषय की तड़प एक रहस्यमय प्रेम-सीमा की ओर संकित करती है जहाँ सीमा, प्रसीम से मिलने को व्याकुल है और प्रसीम सीमा को पाने के लिए बचस। इसलिए इस सारे बिन्दु का प्रकाश है। अगर यह सीमा न होती तो संसार में कोई वस्तु ही न होती। हम अपने मुक्त-मान्य धारि के बन्धन में प्रसीम स्वर सन्तान को बाँधने की पैन्टा करके एक तरह का धानस्य पाते हैं और इस कब से ही प्रसीम-स्वर-सन्तान बनाहट भाव का प्रामाण्य पाते हैं। जैसे ही सीमा के धम्माम्य उपकरणों से हम प्रसीमता का धम्माम्य समारंभ करते हैं और प्रिय भी अपने इन्हीं मोमामय विष्करों में हमारे धानस्य का अनुभव करता है। कबीर के क्लृप्तों में सदा इस महासत्य की ओर संकेत होता रहता है।<sup>२</sup> 'नबीन' की भी यही स्थिति है।

कबीर कहते हैं—'साईं मेरे साबि बई एक डालो। नबीन' की भी इसी स्वर को इस भाँति प्रस्तुत करते हैं—

डोसा तिये बसो तुम भटपट, छोड़ो भटपट जास रे,  
सजस भवन पहुँचा वो हमको, मन का हाथ-बिहाल रे।<sup>३</sup>

कबीर कहते हैं—'कहे कबीर हम ब्याति बसे है पुष्य एक भविनासी।

'नबीन' कहते हैं—

साजन के जब मेह-बनित में है भइत बिहार, रे,  
हृदय हृदय से, प्राण-प्राण से, धाज मिले परपूर रे,  
प्रिय-अप्य प्रिय, प्रिय-अप्य प्रिय हों जब, तब हों संभ्रम बुर रे।<sup>४</sup>

'नबीन' की नायिका बोले बाँधों को प्रेरित करती है। वह धाम से पूर्व ही प्रियतम के गुरु पहुँच जाना चाहती है। जायसी की पद्यावली तथा उलकी सखियों की भी भय रहता है कि—

सात ननर कोलिन्ह बिद सँहो, बानक सपुरन नितैर बैही।

१ धीमती महादेवी धर्मा—'दासा', भूमिका पृष्ठ ७।

२ धार्याव हजारीप्रसाद द्विवेदी—'हिन्दी साहित्य की भूमिका', बलिहाल के प्रस्तुत कवियों का व्यक्तित्व, पृष्ठ २७।

३ 'ब्याति' पृष्ठ ४७।

४ यही पृष्ठ ४८।

म एवं शार्दूल-काम्य

'नवीन' की की नायिका की भी मय है कि—

हम कह आई हैं इन्बर से रात पड़ेया मेह दे,  
यन गरजेंगे रस बरसेगा, होयो सृष्टि निहान रे।<sup>१</sup>

'नवीन' के बोले वालों को पुमना, 'तुलसी के क्यारों से भी की जा सकती है जिनके  
विषय में महाकवि ने 'विनय-पत्रिका में लिखा है—

विजय कहार भार मरमाते बलहि न पाई बटोरा दे,  
मख-बिलख प्रमेरा दलकन पाइय बुल मरमोरा रे ।  
काट, कुपाय लपेटन, लोटन छाँबहि ठाई बम्यार रे ।  
बस-बस बलिय दूरि तस-तस निज बात न भेंट लपार रे।<sup>२</sup>

मीरा ने भी कहा है—

पिय के संय परसंगा पोड़ गी,  
मीरा हरि रंम राबूँती ।

'नवीन' को नायिका भी कहती है—

उनके बिन बरसाती रातें कैते कटें मचुक रे,  
पिय की बाँह जहोस न हो तो निदे न मन की हूक रे।<sup>३</sup>

कबीर लिखते हैं—

धूमक के पद बोत री  
तोहे पिया मिलेगे ।

'नवीन' की अपनी धारणा को उल्लेखित करते हैं—

बल जतार संय बस्तर धाली,  
तू सल मर में होयो पियमय ।  
मख कैसा कुटाब साजन से,  
पूर्ण हुमा तेरा ज्य-बिज्य।<sup>४</sup>

कबीर का 'मनहूब' 'नवीन' की कविता में नूतन रूप प्राप्त करता है—

मबलों में, मयनों में, माल-मयन में, मन में,  
मंजिल है ममर धाय रोम-रोम करु-करु में,  
तू जा मनहूब निनाब तब ककरु-मन-मन में,  
म्योम-मान-मान उठी, मेरे प्रिय, तब स्वन में।<sup>५</sup>

१ 'बहासि' पृष्ठ ४० ।

२. पौलवानो तुलसीदास—विनयपत्रिका ।

३ 'बहासि', पृष्ठ ४० ।

४ बही, बिरोह, पृष्ठ ८ ।

५. बही नैशायक कल्प-मान, पृष्ठ ६७ ।

कबीर तथा अन्य सप्त कवियों के समान 'नवीन' भी कहते हैं —

देव, मैं स्रष्टीमनुष्य प्रलिनसत में ब्रह्माण्ड केक,  
नाम-मासा बाप में तब सौर-नवदल-बल केक,  
गोर में वृ खींच तुमको यदि तड़पकर घाब टेक ।<sup>१</sup>

विद्यापति, कबीर बाहू धारि कवियों की बनने इष्ट को पति कम में निरूपित करने के अनेक उदाहरणों परमपत्र 'नवीन' के काव्य में यत्र-तत्र उपलब्ध हैं। यथा—

घाब सुना है, सखी हमारे साजन लेंगे, जोय को,  
हमें दान में है बायेंगे वे विकराल बियोग, की।<sup>२</sup>

विद्यापति ने भी ठो कहा है —

सखि है बालम जितव बिदेस ।

हम कुस कामिनि कहरत प्रनुचित

तोहूँ है हुनि उपवेश।<sup>३</sup>

कबीर की 'सुरति' तथा 'रंगमहल' का कम भी यहाँ उल्लेख है—

क्या बताऊँ कम सुने थे तब सुरति-ब्राह्मण के बदन ?  
पुप अनेकों हो चुके हैं कब सुना का यह निमग्नण।<sup>४</sup>

मेरे साजन के दे भीलित सोचन-पुट कनि खोल, रे,  
हमारे रंगमहल में छई है विद्यापति घरार रे।<sup>५</sup>

'नवाति' की 'बिदेह' तथा 'गुम सत्-बिद-मवतार, रे' कविताओं में यहाँ कबीर तथा मीरा जैसी तमयता प्राप्त होती है, यहाँ 'कुंज' की मिगोड़ी इबा' पर मूर तथा मीरा का प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है।

'नवीन, की के कल्याणुक्त एवं वैष्णव संस्कारों द्वारा मैं बनने पूर्ववर्ती हिन्दी गुरुकुल एवं निर्वृण कवियों के ज्ञान को स्वीकार किया है। वे परम्परा का ही अनुवर्तन करते हैं। उन्होंने लिखा है कि "धारा यदि सामाजिक बन्धनों के कारण एक नीचबाल या नवयुवती अपने स्नेह-भाव को प्राप्त नहीं कर सके और यदि वे बियोग और विछोह के हृदयघाही पीठ गा उठते हैं, तो यह न समझिये कि यह केवल उन्हीं की बेरना है जो यों कैसा पड़ा है— यह बेरना तो समूचे संस्कृत हृदयों की आत्मर है, यह बेरना संक्रान्ति-काल के जन समूह की विवासाधि है और इस बेरना का सीमा सम्बन्ध अयतन्त्रा बिरहिणी तथा और मानर कृष्ण

१ 'नवाति', पृष्ठ ११८।

२ 'रतिमरेखा, साजन लेंगे लोग रे' पृष्ठ ५६।

३ श्री रामकृष्ण वैनीपुत्रे— 'विद्यापति की पदावली', पृष्ठ २४३।

४ 'नवाति', पृष्ठ ८४।

५ वही, पृष्ठ ८१।

६ वही, पृष्ठ ८६।

७ वही पृष्ठ ८२-८३।

८ 'कुंज', पृष्ठ ७१-७३।

की हृदय-वेदना से है। प्रायः के कवियों का, प्रत्यक्ष में केवल प्राविनीतिक सिद्धाई देने वाला बुद्धिवाद वास्तव में प्राथमिक है। प्रायः के कविगण उसी रेखा को धीरे धीरे छोड़ रहे हैं जिसे सूर, कबीर मीरा, विद्यापति ज्योतिबास लखनबास प्रादि छोड़ गये हैं।<sup>१</sup>

'नवीन बी के रहस्यवाद के हृदय का निर्माण मूल कवियों के द्वारा किया गया। 'बस-बस, प्रबल न मरु यह बीबन',<sup>२</sup> 'क्या न सुनोगे बिनय हमारी'<sup>३</sup> 'प्रिय बीबन-नव अपार'<sup>४</sup> 'मिखा'<sup>५</sup> प्रादि रचनाओं में मूल तथा प्राचीन का रूप परिवर्तित है।

श्री कान्तिचन्द्र सौन्दर्य ने लिखा है कि 'नवीन बी के आत्मदर्शी धीरे धीरे परम मूल के रूप में कम होम जाते हैं। उनका नितांत फलकड़ हँसोड़ व्यक्तित्व अपने इस आध्यात्म रूप को धारण में भी भी तरह छिपाए रखता था। अपने कवि कृतित्व से वह कदाचित् कभी सन्तुष्ट नहीं हुए। कभी उन्होंने अपने काव्य की शीम नहीं हाँकी। काव्य के रूप में उनकी प्राथमिक लक्षणा अपार थी।'<sup>६</sup> डॉ० मटनाबर ने लिखा है—“परन्तु यह नहीं कहा जा सकता है कि हिन्दी कविता की अपनी स्वतन्त्र-परम्परा प्राथमिक युग में भी ही नहीं—क्योंकि वैष्णव-काव्य मुख्यतः धीरे धीरे अपना कविता की अपनी विशिष्ट वस्तु है और इसके कैबोलिक धीरे प्रोटेस्टेटे दोनों रूप हिन्दी काव्य में समुदाय धीरे निर्धुल काव्यधारा के रूप में विकसित हुए हैं। यह स्वतन्त्र परम्परा हमें 'भारतीय धारणा' धीरे 'नवीन' में बड़ी स्पष्टता से मिलती है। ये दोनों वैष्णव मूल-मात्र के रस में आकृष्ट हुए हैं और इनके काव्य में राष्ट्रीयता प्रकृति धीरे प्रेम सभी वैष्णव रस में रंग गये हैं। रवीन्द्रनाथ के काव्य का कोई स्पष्ट प्रमाण इन कवियों पर नहीं है। उन्हें हिन्दी की अपनी परम्परा कहा जा सकता है। इसीलिए प्रसिद्ध आधाबाही कवियों से उनका स्वर प्रकट रहा है। भारतीय धारणा की प्रेरणा 'नवीन' में वैष्णव-परम्परा का शीम प्रकृत स्पष्ट धीरे तीव्र रहा है।<sup>७</sup> इसका कारण है 'नवीन बी के समान एक भारतीय धारणा' का वैष्णव वातावरण तथा मुस्कार प्रबल तथा प्रचुर नहीं रहे हैं। 'नवीन बी के वैष्णववाद को मूल तथा भावुकता के रूप में प्रकृत किया है, जबकि एक भारतीय धारणा' के सारे विरोध के साथ प्राचीन के रूप में प्रकृत किया।<sup>८</sup> श्री 'बबघा' के मतानुसार २ बी सदी के प्रारम्भिक कवियों में साहित्य काव्य राजनीति धीरे अन्य आत्मपरक मन्त्रोत्थान वैष्णव परम्परा की जमीन पर अपने पैर इसीलिए टिक सका क्योंकि वही एक ऐसी जमीन थी, जिस पर उनके झोक देण ने जनबोध काश्चिमा के दिनों में अनाकृत प्राधिकाओं के मार्ग में मिरने से नाक पाया था। यह जमीन २ सदी के सर्वांग नये प्रकाश में भी अपनी चित्त-मोम कृति को

१ 'कृष्ण', कृष्ण बाते, पृष्ठ १२-१३।

२ 'अपलक', पृष्ठ ३४-३५।

३ वही, पृष्ठ ३२-३३।

४ 'विधाति' पृष्ठ ३-४।

५ वही, पृष्ठ ५-६।

६ 'श्रीसा', अग्रस्त-सितम्बर, १९६०, पृष्ठ २२२।

७ डॉ० रामरत्न मटनाबर—'मध्यप्रदेश लखनबास', ४ अग्रस्त १९६२ पृष्ठ ६।

८ 'साहित्यमाला अनुसंधान बीबनी', पृष्ठ ३११-३१४।



नवीन से नवीन रूप में हार्बो-हाप समूचे देश को दिये जा रही थी। इसी कमीन पर खड़े होकर देश की नई सामाजिकता और नई राजनीति अपने उज्ज्वल भविष्य के सुरखित मार्गों की योजना बनाने में कुछ पैर पा सघी। तिलक, पान्शी और मोक्षने और एक हाथ में पीठा लेकर दूसरे हाथ में विस्तोम बामनेबाके श्रान्तिवादी भी और धर्मो सिद्धि और प्रभावित मये कवियण भी इसी बेपुण्यबादिता को धरना कठोर कवच बनाकर जन-जीवन में लोक-माध्यता पाने में सफलता ग्रहण कर रहे थे।<sup>१</sup>

कवियों के घटिरिक्त 'नवीन' की का रक्षस्मवार कतिपय विविष्ट वर्णों से भी प्रभावित हुआ है जिसमें बेरान्त घड़ेतवार धार्यसमाज पान्शी-रघन रवीन्द्र-वर्सन एवं विनोबा-वर्सन के नाम दिये जा सकते हैं।

बेरान्त में कवि की मनोवृत्ति काशी रमती थी। 'नवीन' की के मतानुसार, बन्धन मिथ्या है, धारता तो पुढ-मुढ है। इसके बन्धन को मानव ही अपने प्रयासों से काट सकता है, किसी देवता पर धबलम्बित होने की आवश्यकता क्या है? कवि कहता है—

अज्ञातमय निर्वृति में यति केतन-मर्तन की—

निहित परिग्रह में है भावना समपण की—

सर्जन के तर्जन में धर्मना विवर्जन की,—

तो एकाकार जगत् यहाँ कहाँ द्विधा-ग्रह ?<sup>२</sup>

डॉ० देवराज के मतानुसार उपर्युक्त पद्य में बेरान्त का स्वर मुखर है।<sup>३</sup> घड़ेत का कवि के दार्शनिक काव्य में काशी बोधदासा है। कवि ने धारता के परमात्मा में लय होने में ही सार्यक स्थिति मानी है। उसरी धारता की नामिका कहती है—

बाहुल धर में गैह मरा है, पर बाँ इत विचार रे

धारन के मब गैह नलित में है घड़ेत-विहार रे।<sup>४</sup>

धार्यसमाज ने कवि के दार्शनिक काव्य को सांस्कृतिक एवं पुढ बरातल पर उभय-स्थित किया। उसके परिणाम तबक्य कवि ने धार्यधर्म एवं धार्यसंस्कृति के घटकों को भी अपने काव्य में जमाहित किया धर्म के पुढ तथा पवित्र रूप को ग्रहण किया।

पान्शी-रघन पर भी कवि ने जम्बोदरानुबंध मनन किया है। पान्शी के सुनो का विरसेपण करते हुए, 'नवीन' जा ने उनका समझने की एक कुंभी प्रदान की है। व लिखते हैं कि पान्शी ने बेरान्त के इस घड़ेत का जीवन में इतना धारमसात् कर लिया था कि वह कठोर की प्रेम गली का प्रेमी बन गया था—'प्रेम गली घटि खीरुणै ठा में बुह न समारि, ये देवू तो पिठ नहो पिठ देवू में नाहि।' इसीतिमे मेने पान्शी का घड़ेत का उपासक कहा है। पर येने यह भी कहा है कि वह बेरान्त के घड़ेत का विमसक भी था। इसका क्या धर्म ? क्या पान्शी ने बेरान्त के घट त के विचार में कुछ ऐसा विचार किया जो पहले दंकर, रामानुज,

१ 'मापनमाल अनुबंधी जीवन', पृष्ठ ११०-१११।

२ 'सुत-वेनता', मानव तर बरल-गप ?, जनवरी १९५५, पृष्ठ १०।

३ डॉ० देवराज—'सुत-वेनता', जनवरी १९५५, पृष्ठ ७०।

४ 'वर्जाति', पृष्ठ ४०-४१।

बसतम, भाष्य ज्ञानदेव भादि प्राचायों और ऋषियों के द्वारा नहीं हुआ था ? मेरा निवेदन है—हाँ, वेदान्त में ब्रह्म के परमेश के लक्षण सत्, चिद् और आनन्द माने हैं । परन्तु साधना निरत गान्धी ने स्वानुभव से यह बोधया भी कि सत्, प्रमाद्य सत्य ही ईश्वर है । सत् प्रमाद्य वह जो 'है' जो कि दिग्द कालधन विशिष्य है, जो मरुपु न विनश्यति—जो सदा है, ऐसा सत् ही ईश्वर है । गान्धी सत् को ईश्वर का लक्षण मात्र नहीं मानता । वह सत्—जो है उसको ही ईश्वर मानता है । क्या इसे प्राय वेदान्त के ब्रह्मवाद का विकास नहीं मानते ? विचार कीजिये । प्रायको मानता पड़ेगा कि इस प्रकार कवित सञ्चल को लक्ष्य मानकर बसता वेदान्त के ब्रह्म को अधिक व्यवहार गम्य, अधिक सामूहिक साम्य-सम्पन्न और अधिक दैनंदिन योग्य बनाना है । और गान्धी को यह सुदृढ़ सबन इतिवैविच्यारत्मक प्रबधाराणा कि सत् ही ब्रह्म है, सत् ही ईश्वर है, गान्धी के समग्र जीवन-कर्मों की प्रेरणा है । गान्धी यदि कहीं कुछ लोगों को प्राय गान्धी के इस सूत्र को ध्यान में रखें और प्रायको गान्धी के समझने की कुंजी प्राप्त करायी । 'नवीन' भी के इस गान्धी-दर्शन विवेचन के सुत्रों में उनके काव्य के सम्बन्ध पर का भी जाना-बाना गुंथा है ।

गान्धी-दर्शन की लम्बी एवं गूढ़-विवेचना के सहस्र हो कवि ने 'सिखन की सतकारों मेरी' शीर्षक लम्बी कविता में जो महारमा गान्धी व उनके विचार हिंसा तथा अहिंसा का इन्द्र प्रादि का सरस प्रतिपादन किया है । हिंसा तथा अहिंसा की तुलना करते हुए कवि अहिंसा के सूत्र से उर्ध्वगति को श्रेयस्कर मानता है ।

कवि गान्धी-दर्शन एवं विनोबा-दर्शन से विचना प्रभावित हुआ है, उतना रवीन्द्र-दर्शन से नहीं । पुस्तक रवीन्द्रनाथ का उस पर अत्यन्त प्रभाव ही देखा जा सकता है । 'नवीन' भी के मृत्यु-गीतों पर रवीन्द्र रवीन्द्र का धार्मिक प्रभाव इष्टभ्य है । जो प्रमाणपर घना ने लिखा है कि 'नवीन' भी ने दर्शन के काण्ड में शौकिक-प्रसौकिकता के पुन खिलाने और अपने जीवन-कास में ही सगमग जालीस मृत्यु-गीत की रचना की । मृत्यु-गीतों पुस्तक कवि रवि ठकुर के बाद प्रास्थापूर्वक रूप से पीठा की बाणों में 'नवीन' को ने ही लिखे हैं जो प्रमी प्रप्रप्रवित है ।<sup>१</sup> डॉ० नवीन्द्र ने जो 'नवीन' पर रवीन्द्र के सीधे प्रभाव पड़ने की बात स्वीकार नहीं की है ।<sup>२</sup> पुस्तक में जन्म दिन एवं मृत्युदिन दोनों को एक ही माना है—

प्राय प्राप्तिपाद्ये जाये

जन्म दिन मृत्यु दिन; एकाधने बोहे बसियाये,  
 इह प्राणी मुझोमुझि मिलिसे जीवन प्राप्ति सम,  
 रजनीर बाण धार प्ररुपेर मुक तारा सम—  
 एक मग्न बोहे सम्पर्वना ॥<sup>४</sup>

१ 'महाराजा गान्धी', गान्धी दर्शन पृष्ठ ३ काव्य १ ।

२ 'श्रीला', लम्बावकीय प्रगत्त सितम्बर, १९६०, पृष्ठ ४६१ ।

३ 'डॉ० नवीन्द्र के लेख विज्ञान', भारतीय साहित्य पर रवीन्द्रनाथ का प्रभाव, पृष्ठ ८० ।

४ 'एकोत्तर पत्ती', जन्म दिन, पृष्ठ ३५६ ।

उसे छोड़ जाती है। उस धार्मिक काल से मनुष्य यह विचार करने पर बाध्य हो गए हैं कि इस आत्मा और बाह्य जगत् के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध है। इस प्रकार विचार और अस्तित्व के पारस्परिक सम्बन्ध के प्रश्न और प्रकृति के सम्बन्ध के प्रश्न—सम्पूर्ण दर्शन के इस महत्त्वम प्रश्न और इसी प्रकार सम्पूर्ण धर्म की जड़ें जमी हुई दिखाई देती हैं—आदि बर्बरता के संकुचित और अज्ञान विमिश्रित संश्रयों में।<sup>१</sup> इस सम्बन्ध में 'नवीन' भी की यह प्रतिक्रिया है कि पदार्थवादा दार्शनिकों को यह मान्यता निरन्तर अतीतिहासिक, बोधो नि सार और मानव-समाज के संचित अनुभव के विपरीत है। आत्मा के विचार के आधिपत्य को स्वप्नों के उत्तेजन का परिणाम कहना बढ़ावाधिका की सीमा है। कौन-सा इतिहास देखकर यह परिणाम निकलता गया ?<sup>२</sup>

प्रयत्न के ज्योतिर्विद्येय से भी कवि ने अपनी अनास्था प्रकट की।<sup>३</sup> यह विज्ञानवाद

१ 'The great basic question of all Philosophy especially of more recent philosophy is that concerning the relation of thinking and being. From the very early times when men, still completely ignorant of the structure of their bodies, under the stimulus of dream apparitions, came to believe that their thinking and sensations were not activities of their bodies but of an distinct soul which inhabits the body and leaves it at death—from this time men have been driven to Settled—about the relation between this soul and the outside world.

Thus the question of relation of thinking and being the relation of spirit to nature—the paramount question of the whole of philosophy—has no less than all religion, its roots in the narrow minded and ignorant nations of savagery"—Feuerbach and end of Classical German Philosophy Fredric Engels Marx Engels Selected Works Vol. II, page 334 Foreign Language Publishing House Moscow, 1951

२. 'इच्छाति, बुद्धिका, पृष्ठ १२।

३ 'युग काल तक इस सिद्धांत की जो पुन रहो कि मानव-कर्म केवल धीन-भावना से प्रेरित होते हैं। कला, कौशल साहित्य, मन-नैवा सब की प्रेरणा धीन-भावना से नि सुन लभ्यो गई। सुकरात का विनयान, सिद्धार्थ का गुरु-स्वाय, ईशु ख्रिस्ट का मूलो पर बढ़ना—सब के बीचे धीन आधर्म्यए रहा—इस प्रकार की उपहासस्वर बात कहनेवाले भी हुए और कहाचिन्त हैं। धाम मानव विचार इस आधुनिक आधावाद की सीमाओं को लम्बक चुका है और उनके जोकरेण भी भी हैंत हुआ है।' —'प्रवचक', बुद्धिका पृष्ठ ४।

के भी विरुद्ध है।<sup>१</sup> इस सम्बन्ध में कवि ने भौतिक विज्ञान पर भी अपने विचार प्रकट किये हैं।<sup>२</sup>

'नबोल' की नै, ईश्वर के प्रति पाश्चिमायी-युद्धिमायी दृष्टिकोण को निकसित कर, अपनी घास्या की भी अविश्वंजना की है—

सिफटा है अस्तित्व तुम्हारा सकार्यों के अंचल में,  
छटा तुम्हारी कहीं बिनाई देतो नियति हर्षचल में ?

'कार्यकारण शून्यता'<sup>३</sup> के समान कवि ने 'यह रहस्य उद्घाटन रत मन'<sup>४</sup> में भी आइंस्टीन की विचार-सरणि पर चिन्तन किया है। कवि के मतानुसार, यह दर्शन भी अपूर्ण है और हमारी जिज्ञासियों की सन्तुष्टि करने में असमर्थ है<sup>५</sup>। कवि की प्रकृतवाचक कृति, यहाँ भी विचार करती है—

अंशु-स्फुरणकारी परार्थ कुछ अग में अगत वे देखा है,  
जिसे 'बीसि सक्रिय तत्वों' की ओली में उतारे लेखा है।  
होटा रहता इन तत्वों के अणुओं का गित संतुष्टि-अेवन,  
जिसे निहार पूछ उठता है 'क्यों ? क्यों ?' इस अग का उभय मन।<sup>६</sup>

(बीसि सक्रिय तत्व = Radio Active substance, जैसे रेडियम इत्यादि।  
संतुष्टि-अेवन = Disintegration of atoms, अणु-स्फोट।) इस प्रसंग में कवि का मत है—

क्या विज्ञान का बाता है, केवल इन्द्रिय संवेदन ?<sup>७</sup>

पाश्चात्य-शारीरिकों में 'नबान' का दर्शन से प्रभावित वे इसे उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है।<sup>८</sup> यह प्रमाण उनकी कविता 'कस्तबू' कोऽहम्<sup>९</sup> पर देखा जा सकता है। अंग्रेजी दर्शन के अध्ययन के अन्तर्ग में, कवि ने इन्सैच्य के प्रसिद्ध शारीरिक बर्णाचार्य 'डीन इमे' के प्रन

१ 'अपलक' मूमिका, पृष्ठ—ब।

२ "घोर, विचार अणु में यह हम देख ही चुके हैं कि भौतिक-विज्ञान (Physics) विषयक इति नैतिकरूपमय यान्त्रिक सिद्धान्त (Mechanistic Principle) आज हवा में बढ़ गया। आज का भौतिक-विज्ञान अनैतिकरूपवाच (Theory of Indeterminacy) का सिद्धान्त मान चुका है। जो भौतिक इति-नैतिकरूपवाच जल्मीसरी सती के विज्ञान का एक प्रकार से स्वयंतिह अंश का वह आज सिध्दा हो गया है।"<sup>१०</sup>—अपलक, मूमिका, पृष्ठ—ब।

३ कहीं, कार्य-कारण शून्यता, ३५ की कविता अंश ३।

४ कहीं, यह रहस्य उद्घाटन रत मन, २३ की कविता।

५ 'काव्य घाटा' रहस्य उद्घाटन, अंश १६ पृष्ठ ७३।

६ कहीं, अंश १८।

७ 'काव्यघाटा' रहस्य उद्घाटन, अंश २८, पृष्ठ ७५।

८ जो अणुसंशुद्धि, कागजुर से हुई प्रत्यक्ष भेंट (दिनांक १६-५ १९६१) में बात।

९ 'विज्ञान घाटा', अणुसंशुद्धि १९६०, पृष्ठ ३५६ ३५५।

'पर्यन्त रितीजन एव साहस्य भास्य विबोधन'¹ से भी कतिपय सूत्र ग्रहण किये। 'नवीन' जो ने पराङ्मूर जी के विपुल हो जाने पर, उन्हें सम्त्वना प्रदान करते हुए दिनांक १ मार्च, १९२६ ई० के² अपने पत्र में उक्त दार्शनिक श्री यह मादिक पंक्ति उद्धृत की थी कि 'वास्तव में विरविभाग मानव-जीवन के रहस्यों की बड़ी पहलु दीक्षा है।'³

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'नवीन' जी के दर्शन-सूत्र सूत्र एवं प्रभावित भारतीय चिन्तापारा से ही प्रेरित हैं। पाश्चात्य-दर्शन उन्हें अत्यन्त ही प्रभावित कर पाया। 'नवीन' जी का दार्शनिक काव्य एक अत्यन्त प्रशस्त तथा परिपक्व चिन्तापारा एवं पीठिका पर आधारित है। उनके दर्शन-सूत्र उपनिषद् से प्रारम्भ होते हैं जो कि रहस्यवाद के गाथा-सामार हैं।⁴ उपनिषद् से वेदांत घटित सत्त-बाणी सूत्री मठ वेदपुर मन्त्रि, वाल्मी-दर्शन विनोदा आदि के ज्योतिषिण्यों में से गुजरता हुआ उनका दर्शन वर्तमान रूप धारण करता है। उनके दर्शन के चार स्तम्भ कहे जा सकते हैं—मन्त्रिकेता और कबीर तथा वेदांत और वेदपुर-मर्म। मन्त्रिकेता तथा कबीर ने उनके 'अध्यात्म' के मस्तिष्क-मय को पुष्ट किया और वेदांत तथा वेदपुरवाद ने हृदय-मय को। उनका वेदपुरी व्यक्तित्व उनके काव्य तथा दर्शन पर स्पष्टा हुआ है।

धीनगी महादेवी वर्मा ने लिखा है कि "उसने (रहस्यवाद में) पराविद्या की अनाविष्टता को, वेदांत के धर्म की छाया मात्र ग्रहण की। लौकिक प्रेम से तीव्रता उपाय की और इन सब का कबीर के सांकेतिक दाम्भ्य भाव-सूत्र में बांधकर एक निराले स्नेह-सम्बन्ध की सृष्टि कर डाली।"⁵ डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी लिखा है कि 'रहस्यवाद बीबारमा श्री उस अन्तर्हित प्रवृत्ति का प्रकाशन है जिसमें वह दिव्य और धार्मिक शक्ति से अपना दास्य और निरक्षर सम्बन्ध जोड़ना चाहती है।'⁶ इसी बुद्ध तथा उदात्त पृष्ठभूमि और दर्शन-सूत्रों के आधार पर, उनके दार्शनिक काव्य का अनुशीलन करना उचित प्रतीत होता है।

विषय-विभाजन—इस धारमानीय जीवन-मर्म-बोधक एवं मृत्यु के रहस्य से परिचित

१ 'पराङ्मूर जी और पत्रकारिता' पृष्ठ ८६।

२. वही, जीवन-प्रणव पृष्ठ ८५-८७।

३ 'Bereavement is the deepest initiation into the mysteries of human life'—Dean Inge., Personal Religion and Life of Devotion.'

४ 'The Upanishads contain already essentially the whole story of the mystic Path'—World and the Individual page 156

५. " 'नवीन' जी में वेदपुर भावना, प्रवृत्ति व चरित्र टूट टूट कर भरा था। उनके सच अविद्य तथा काव्य में वेदपुरी भावना व तत्त्वज्ञान ही मिलती है।"—श्री नरेन्द्र वर्मा, नई दिल्ली से हुई प्रथम भेंट (दिनांक २०-११-१९६१) में बात।

६ 'महादेवी का विवेचना मय', पृष्ठ १०६।

७ डॉ० रामकुमार वर्मा—'कबीर का रहस्यवाद', पृष्ठ ७।

होने के लिए परमबिद्यासाधक नचिकेता कवि के दार्शनिक-काव्य में, अनेक विषयों का प्रतिपादन प्राप्त होता है। काव्य-विषय तथा उद्भव्य प्रकृति के आधार पर, उनके दार्शनिक कृतिस्थ को, प्रधानतया, तीन बयों में विभाजित किया जा सकता है—(क) आत्मपरक रचनाएँ, (ख) रहस्यपरक रचनाएँ; और (ग) सत्यपरक रचनाएँ। उपर्युक्त बयों के विवेचन में ही उनके दार्शनिक-काव्य का प्रतिपाद्य विषय अन्तर्हित है।

आत्मपरक रचनाएँ—वैयक्तिक रचनाओं में कवि का निजी जीवन-दर्शन प्रस्तुत होता है। इनमें वैयक्तिक सुख-दुःख धामा-निराशा, प्रणय-विरहक धादि के भीत ही प्रमुखतया आ पाये हैं। आत्मपरक रचनाओं में जीवन के हृदय-विषाद, राग-विराग, शान्ति-संघर्ष आदि अनेक विषयों का प्रबल प्रयोग है। ये कवि के निजी जीवन की कथा हैं। इनमें विभिन्न परिस्थितियों, घटकों अथवा शक्तियों का स्थान प्राप्त होता है।

डॉ० नरेन्द्र ने वैयक्तिक कविता की चिन्ताधारा का विवेचन संक्षेप में इस प्रकार किया है—

१—इसका आधारभूत दर्शन व्यक्तिवाद है।

२—इस व्यक्तिवाद का आधार अज्ञेयवाद या निरालम्बवाद का सूक्ष्म धार्मिक चिन्तन नहीं है।

३—इसका आधार मानव के मौलिक अस्तित्व की स्वीकृति है, अतएव मानव के ऐहिक संघर्ष की अन्तर्गत से ही इसकी उत्पत्ति हुई है।

४—इसमें एक समग्रवाद और साम्यवाद जैसे नकारात्मक जीवन दर्शनों के और दूसरे ओर मानववाद के अन्तर्गत वर्तमान हैं। नकारात्मक जीवन-दर्शनों की बुनोटी और अप्रयोग कृति, और मानववाद की मानव-सहानुभूति तथा मानव-मुक्ति के तत्त्वों से इनके कसेबरे का निर्माण होता है।

५—इसका विकास अभाव-अन्यथा से आधारभूतता की ओर होता गया है।

६—जीवन के सहज संघर्ष से उत्पन्न होने के कारण इस जीवन-दर्शन का विकास अत्यन्त स्वाभाविक रीति से, सिद्धान्तों की रम्य से न होकर जीवन की रम्य से हुआ है, अतएव अधिक स्वतन्त्र और व्यवस्थित न होते हुए भी इसमें एक सहज आकर्षण रहा है।<sup>१</sup>

'नवीन' की भी आत्मपरक कृतियों में वैयक्तिक-काव्य को उपर्युक्त चिन्ताधारा का स्वल्प प्राप्त होता है। कवि ने व्यक्तिवाद, मौलिक संघर्ष तथा स्वाभाविक जीवन-दर्शन की बड़ी मात्रिक व्यक्तता की है। डॉ० प्रभाकर भाषणे ने लिखा है कि 'भी बालकृत्य अर्थात् 'नवीन' एक मूल्य मीठा मास-मुक्त है। उन्होंने अथवा पृथक्-पृथक् के लिए लघुतर प्रयोगों का स्थापन किया है। इसी में उनके कवि व्यक्तित्व की परम साधकता है।' उन्होंने अपने आपको कुरेद-कुरेद

१ डॉ० नरेन्द्र—'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रकृतियाँ', वैयक्तिक कविता, पृष्ठ ७४।

२ डॉ० प्रभाकर भाषणे—'हिन्दी साहित्य की कहानी', राष्ट्रीयता को आरंभ पृष्ठ १०१।

कर बोसा है, बुरा-भला कहा है, स्वयं का मूल्यांकन निर्मम भाव से किया है। उनकी कविता का एक प्रधान स्वर इस आत्म-मुग्धता की स्वीकृति और आत्म-बीरव के धारक के बीच के द्वन्द्व से उपजा है।<sup>१</sup>

आत्मपरक रचनाओं की सबसे बड़ी विशेषता है—कवि-व्यक्तित्व का सांगोपांग उद्घाटन। कवि के प्रकृत तथा प्रमत्तित्वु शक्तों को इनमें सुन्दर प्रतिव्यक्ति मिली है। प्रकृतता, मस्ती, फलकूपन आदि के ताने-बाने से कवि-व्यक्तित्व की आदर बुनी गई है। डॉ० हुमायी प्रसाद द्विवेदी ने भी उन्हें 'फलकूप कवि' बताते हुए, लिखा है कि 'सब कुछ को छोड़कर आये जाने की धर फूँक मस्ती से उनकी रचनाएं धारक्य मरी हुई हैं।'<sup>२</sup>

श्री 'दिनकर' ने 'नवीन' की को सम्बोधित करते हुए लिखा है कि "धरनी निर्भन्ता अपने फलकूपन पर आपको नाक भी कितना था। निर्भन्ता का प्रथमान कोई आपसे सीछ से। अनिकेतन होने का गौरवमय आनन्द कोई आप में देख ले। आपके निर्माण में हरिश्चन्द्र की प्रथममस्ती का ही नहीं, कबीर के फलकूपन का भी पाड़ा पुट पड़ा था।"<sup>३</sup>

श्री सद्गुरुद्वाराण धरस्त्री के मतानुसार, "बबाली का कैवल्य तुफान कविता नहीं है और न केवल बुझाये की पककट ही कविता है। धरस्त्री पर बबनेबाली सङ्घर्ष जीवन की कृतियों का सामंजस्यपूर्ण अन्वलीकरण कविता है। इसीलिए उँचे कमाकार सर्वप्रथम और सर्वद्वितीय भावों की पककटे है और बिरस्त्रन पककन को मुनते-मुनाते है। परन्तु भावों की कसमसाकट का भी अपना मूष्य है। अनिमित्त बिल्घोट की भी एक भमक होती है। गहरी से गहरी भाबुकटा में ईवानदाते हो सकती है। बाह्यापों और माभा-स्वजों में तपनधीनता हो सकती है। लोक-साधनाविघ्न समान के बुरे, बैसीक बबने बाले कबीर में भी सीस्त्र्य होता है।"<sup>४</sup>

कवि के जीवन को कहल गहानी इस मीठ ने बबानी है—

प्रथम तक इतनी भी हो काटी,  
 प्रथम क्या सीछें नब बरिपाटी ?  
 कौन बनाए आन परीवा  
 हाथों बून-बन कंकड़, भाटी  
 टाट कशोराना है अपना, बाघम्बर सीछे अपने तन,  
 हम अनिकेतन, हम अनिकेतन।"<sup>५</sup>

इस प्रकार कवि की आत्मपरक रचनाओं में, व्यक्तित्व की बर्तन को सुन्दरता मिली है। मातृका की मस्ती काव्यावस्था की बरिठता, जीवन का प्रतिबंध भाव एकानी ही व्यतीत

१ डॉ० प्रभाकर माधव—'हिन्दी साहित्य की गहानी राष्ट्रीयता की धारा' पृष्ठ १०२।

२ डॉ० हुमायी प्रसाद द्विवेदी—'हिन्दी साहित्य', छायाबाह पृष्ठ ४०६।

३ श्री रामपारी सिंह 'दिनकर'—'बट-मीलन', पं० बालकृष्ण धर्मा 'नवीन', पृष्ठ ३७।

४ श्री सद्गुरुद्वाराण धरस्त्री—'साहित्य सर्वण', पीठि काव्य और बालकृष्ण धर्मा 'नवीन', पृष्ठ १४३।

५ 'रतिमरेणा', पृष्ठ १, पृष्ठ १२८।

करना स्वभाव की फलकड़ता, जीवन की मजुर तथा कठु परिस्थितियों धारि ने, कवि के इस वर्तन के निर्वास में महत्वपूर्ण कार्य-श्रुतिका का निर्वाह किया है।

रुस्सपरक रचनाएँ—शाश्वत मन्दकुतारे बाजपेयी ने लिखा है कि 'निर्मूल-निराकार ही धार्मिकता का दर्शनिका की चरम कोटि है। एक धर्मग्रन्थ, धर्मग्रन्थ-उत्पत्ति जिसमें त्रिकाल में ही कोई मंद किसी प्रकार सम्भव नहीं जिस बिस्वियर भारतवर्ष के धर्मिकत गौरव में संसार की उच्चतम प्रशुतियों की मरीचिका-ही प्रतीति होती है, वह परिपूर्ण भाङ्गात्र जिसमें स्थित-वर्तनों के लिए कोई धर्मग्रन्थ नहीं रुस्सवाद का सर्वोच्च निबन्ध है। इसके धर्मिकता निरूपण उपनिषदों के जैसे सीर नहीं नहीं मिलते।' 'नबीन' के रुस्सवाद का मुक्त उत्तर की उपनिषदों में ही मिलता है।

कवि ने अपने प्रेम के धारमन्त्र को कहीं पाविष रूप प्रदान किया है और कहीं विष्य रूप। उसमें प्रकृति तथा निवृत्ति का धारमन्त्र दिखाई पड़ता है। यहीं से ही वह अपने प्रिय धारमन्त्र विष्य की धोर उन्मुख होता है। वह कहता है—

धर्मन से प्रसन्न, जीवन-पत्र कीन कर सका है, प्यारे ?

धारता के ही धर्मिकमन्त्र से होने हैं धारे-धारे !<sup>२</sup>

प्रकृति से निवृत्ति की धोर उन्मुख होकर, वह रहस्याकृत हो जाता है। प्रकृति के रूख को कीन मुक्तता पावेगा ?

डॉ० नयेन्द्र ने लिखा है कि 'बहिरंग बावन से धिमटकर नव कवि की चेतना ने धर्मिकता में प्रवेश किया तो कुछ धार्मिक जिज्ञासाएँ जीवन धोर नरख सम्बन्धी-धाम्य में धा बाता सम्भव ही धा धोर वे धार हैं। कुछ धार्मिकताका लल तो प्रत्येक मनुष्य के जीवन में धाते ही हैं धर्मिक धारबाध की रुस्साधिकाएँ एक प्रकार से जिज्ञासाएँ ही हैं। वे धार्मिक धारता पर धारित म होकर कहीं भावना, कहीं धिन्तन धोर कहीं वेचन मन की धलना पर ही धारित हैं।'<sup>३</sup> 'नबीन' की ही रुस्सपरक रचनाओं में ही जिज्ञासा का स्वरूप काट्टी धमर कर धाया है।<sup>४</sup>

कवि ने धारन को जिज्ञासा तथा रुस्स-धेद की भावना को प्रमुख महत्व प्रदान किया है—

रिचय, धमाध, धनधर, नरूर ने कमी न पुष्पा 'धोशुम्-धोशुम्'

धारन है जिसने धीं पुष्पा धीं' धर कोला 'धोशुम्' । धोशुम् ।

धारन के ही धिय में धामी, धाह धनध के धारामन की,

धारन के ही धिय में धामी, धाह ननना धारधारन की ।

१ धारार्थ मन्दकुतारे बाजपेयी— 'धिमिी धारिधय कीतधीं धनधरी' मधुधेवी धर्मा, धृष्ट १६६ ।

२. 'धु धुम', धीचन-धरिध, धम् ४ धृष्ट ६८ ।

३ डॉ० नयेन्द्र के धेष्ट धिधम्, धारधार की धरिधाय, धृष्ट ६६ ।

४ 'धधधि', धिय धम धध धाध धाध, धम् ८, धृष्ट ६३ ।



निर्मित सृष्टि जल रही विषमभर, जापक में लोभा बारम्बार,  
जय तम मनुष्य पुकार हठा यों, 'पपकी छपको छो बैरवानर'।<sup>१</sup>

'नवीन' जी की रूढ़िवादी पंक्तियों को इस बार बगों में विपादित कर सकते हैं—(क)  
बीर-दल- (ख) बग-दल (घ साधन-दल; घोर (च) परमदल ।

बीर-दल—'नवीन' जी के मठानुसार धाया परमात्मा का विच्छिद्य ग्रंथ है जो कि  
तम सत्ता से घसमूक हो गई है। वह संसार के मायाजाल में जँट जाती है।<sup>२</sup> कवि ने  
परमात्मा से विपुल धाया की विरहावस्था का भी सरस चित्रण किया है।<sup>३</sup>

इस प्रकार कवि ने बीर को संसार की माया से रीबर की घोर उन्मुखावस्था में चित्रित  
किया है। बीर में टोह तथा जिज्ञासा की प्रबल जड़ों में परिभाषा है।

बग-दल—'नवीन' जी ने अपद का चित्रण भी विविध रूप में प्रस्तुत किया है।<sup>४</sup>  
सौंसारिक सिद्धा में लिख बीर, मरुत के मूय के सदस्य, घटक रहा है—

अन्विल तरल तरंगित-जल-दल भ्रमल रहा है बिधि विधि धारा,  
क्यों क्यों उस विधि दाया क्यों क्यों बुर हटा जल-मूल विनाश,  
निद्र मरोबरा के भ्रम में ये बीर रहा है मारा-भारा,  
घपने लिए न जाने क्या है? पर है बग के लिए लतासा!  
में तो है मरुत का मूय प्रिय, है न जाने कितना प्यासा।<sup>५</sup>

संसार में परमात्मा से विलय होकर, धाया की परिचर स्थिति हो जाती है।<sup>६</sup> कवि  
ने सौंसारिक स्थिति का विरलेपण इन पंक्तियों में किया है—

घपरो है कम-दाग, घपरो है झोपाल  
घपटि रही है डेव-बन्ध रात पन पन;  
कूपो जगसासुको घेरो, घपरो है घरासन  
घेरे घर घेवि रहे घेरे रिपु घलि-घाप!  
बाई घेरे जोल लगी घनुस प्रघरघ घाम।<sup>७</sup>

संसार की घावर से घरने के लिये जीवन की नीहा को बड़ी शक्तिशालि स्थिति है।<sup>८</sup>

१ 'निरजन को लजहारें या 'कुतूह के स्यन', अपक उठी घब छो बैरवानर,  
३८ भी बचिना, दल ६।

२ 'बजाति', कब जितने स्यन बरल है? दल ४, पृष्ठ २।

३ कही निज विरह के पान, दल १, पृष्ठ ३।

४ कही, प्रिय जीवन मर घारा, दल २ पृष्ठ ६।

५ कही जलपन का मूय, दल १, पृष्ठ २०६।

६ 'घातक' किन्तु किन्तु तोड़ कभी, दल ३ पृष्ठ १०२।

७ 'घपक' घेरे जीवन लगी घाप, दल २, पृष्ठ ८२।

८ कही, अलिख-नाथ, दल १, पृष्ठ ६८।

भारतीय दर्शन में अणु को नैतिक रूप में ग्रहण किया गया है।<sup>१</sup> 'नबीन' जी के दार्शनिक-भाव में भी अणु के प्रति विरक्ति या विष्यायुक्त विचार नहीं है। वे कहते हैं—

ब्रह्म उठे जब कौतूहल, तब और क्यों हो स्वर लहर से ?  
उपकरण-परिधान पहना तब विरक्ति क्यों घर घर से ?<sup>२</sup>

कवि ने विज्ञान के जन्म के सूत्र को भी जन-गम्य बनाया है।<sup>३</sup> कवि ने अपनी सभी कविता 'निब ललाट की रेखा' में अणु के वैज्ञानिक आधार पर गहनतापूर्वक विचार किया है। कवि ने अपनी एक श्रेष्ठ कविता में भी भौतिक विज्ञान के सिद्धान्त को निरूपित किया है—

देख है यह निरन्तर चिन्तनमय, काल है संतत कलन मय,  
अस्मिन् बहु ब्रह्माण्ड संतत, और चेतन भी कलन मय,  
तब क्यों क्यों मनुज हिय में, साधना यह पय-स्खलन-मय ?  
नित्य यात्रा, पर्यटन नित, है यही जीवन विसर्गाण।<sup>४</sup>

[निरन्तर चिन्तनमय = वर्तमान भौतिक विज्ञान का यह सिद्धान्त है कि देख घीर काल अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड संतत प्रसरणीय है।]

अणु में मानव भी समाहित है। 'नबीन' जी ने मानव पर विस्तारपूर्वक विचार किया है। मानव के मानव का दानव बनते देख कवि ज्योतिर्मय से प्रार्थना करता है। 'नबीन' जी ने मानव को अत्यन्त परिमाणय एवं सांस्कृतिक रूप प्रदान किया है।<sup>५</sup>

इस प्रकार 'नबीन' जी ने संसार तथा मानव पर गहराई के साथ चिन्तन किया है। उनके चिन्तन में पुरातन एवं अनुनाशन, दोनों ही छवि छविगोचर होती हैं। इस चिन्तन में उनकी भाषा भासना तथा रास-कृति को ही सन्धिमा मिली है। वे निराशावादी नहीं और न अणु को निष्ठा मानने वाले। इसीलिए, उनके चिन्तन में विरक्ति के तलों की समझना है। उनका दर्शन ही मनुष्यत्व को वैश्व के प्रति सम्मुख करने के बटुक पर, प्रबलम्बित है।

साधन-तरङ्ग—कवि ने मन्त्रापर के सन्तरण हेतु तथा मोक्ष प्राप्ति हेतु, परम-तत्व की कृपा तथा ज्ञान-किरणों को ही महत्व प्रदान किया है। इस दिशा में उनका स्वर प्रार्थना तथा यक्ति से ही युक्त है। कवि ने अग्निपुत्र तथा प्रकाशपुत्र के लिए भी प्रार्थनाएँ की।<sup>६</sup>

१ "Indian Philosophy believes that the world about us is a moral world and that by following a moral life both objectively and subjectively we are bound to attain perfection at some time or other"—Dr S N Das Gupta, 'The Cultural Heritage of India, Vol III, page 24

२ 'क्याति', यह विराप-विचार क्यों ? छन्द २, पृष्ठ २२।

३ 'संकेत', छन्द १२, पृष्ठ २३६।

४ 'विरजन की लहरों' या 'सुपूर के स्वन, क्यों बके लन ? क्यों बके मन ?', बीबी कविता, छन्द ३।

५ साप्ताहिक 'रासराग', यौ शून्य युक्त, यौ अहि-भक्तिमय है जीवन ! १५ अक्टूबर, १९६०, छन्द २४, पृष्ठ ३।

६ 'क्याति', प्रिय, जीवन-वद अपार, छन्द ४, पृष्ठ ७।



श्रीमती महादेवी बर्मा ने लिखा है कि 'इस (प्रकृति की) धनीकल्पता के कारण पर एक मनुष्यमय व्यक्तित्व का आरोपण कर, उसके निकट धारम निवेदन कर देना इस काव्य का वृत्त घोषण बना जिसे रहस्यमय रूप के कारण ही रहस्यवाद का नाम दिया गया।'<sup>१</sup>

प्रसार' की भी प्रकृति के रहस्य ढूँढ़ने के लिए ब्याकुल है—

महानीत इस परम व्योम में, धातरिस में ज्योतिर्माल,  
ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण कितका करते थे संधान ?  
धिप जाते हैं और निकलने धार्कर्यण में जिबे हुए,  
एक कोल्य महानहे हो रहे किसके रस से जिबे हुए ?<sup>२</sup>

'नवीन' की 'कल्पम् ? कोऽहम् ?' में यही पूछते हैं—

किसके धंगुलि-परिचासन में रमते हैं उन्मथ, नाथ सवा ?  
किसकी ध्रु-संघी का नाटक है प्रलय, सष्टि की यह विषया ?  
कोई इत्यथ कर्ता भी है ? या स्वयम्भूत है जगत बाल ?  
इसका निर्लभ्य करते-करते बक पयी तर्क की सीध बाल ?<sup>३</sup>

टोह तथा ध्वनेयण की वृत्ति को कवि ने पुरस्कृत किया है। जिज्ञासा को धारणा का कवि अनुमोदन करता है—

यद्यपि सतत रमे हुए हो, तुम मेरी धारित बारा में  
ध्रुप्याम ही तुम रहते हो मेरे संग-संग काप में,  
किर भी धकतावा रहता है मेरा हृदय धीर मेरा मन,  
में है सगुण उपासक, मुझको, कौये धोरक से निगुण मन।<sup>४</sup>

इस प्रकार कवि ने परम-शक्त को निर्गुण निराकार के रूप में न देखकर सगुण-साकार रूप में ग्रहण किया है। उससे बेगुण संस्कार ही यहाँ प्रबल दिखलाई पड़ते हैं।

मृत्युपरक रचनाएँ—साध्वीय संस्कार में मृत्यु को महान् माना गया है। गीता में मृत्यु का धर्म बताया है परिवर्तन। पुराने सप्त कवियों ने इसे 'चार कहारों के कन्धे पर बंधकर बाहुल के बर जाना कहा है। यह बन् का फूटना ऐसा माना गया है जैसे साधारण बटना हा। यह महामस्वान यह महापाना, यह महानिद्रा यह धनन्त में स्नान यह धिक्करोहण यह धिक्कन विस्मरण, यह ध्राखों मृत्युः, यह मी की कोष में ( मुँह ) धिया लेना। इस काव्य के मङ्गल श्लोक सूची बलानुदीन कमी ने इन धर्मों में व्यक्त किया वा—

With thy sweet soul this soul of mine,  
Hath mixed as water does with wine  
Who can the wine and water part  
Or me and thee when we combine ?

१ 'साध्य-गीत' ध्वनी बाह, पृष्ठ ६।

२ 'कामायनी' धाषा धर्ग, २६।

३. 'धुक्करोहण', पृष्ठ ३०३।

४ 'धिरजन की सतकरों' या 'धुपुर क रचन', एकाकीयन, तीसरी कविता, धाख ५।

Thou art become my greater self,  
 Small fluids no more can we combine  
 Thus has my being taken on,  
 And shall not I now take on thine ?  
 Thy love has pierced me through and through  
 Its thrill with bore and nerve and wine  
 I rest a Flute laid on thy lips,  
 A lute, I on thy breast recline,  
 Breathe deep in me that I may sigh,  
 Yet strike my strings and fears shall shine '

इस कविता का भावार्थ है—सद्योम का अद्योम में एकाकार होना । एकीकरण में इसी 'मृत' में जीवांतर्जि में कहा था—

मरण के बिना प्राण के तोमार बुपारे,  
 को बीब छोड़ारे !!<sup>१</sup>

पौरुष-साहित्य के सदस्य पारंपार्य-साहित्य में भी मृत्यु को काव्य का विषय बनाया गया । शैलियर ने हेमलेट (Hamlet) में उसे अज्ञात देश बताया है।<sup>२</sup> योसे ने भी 'मृत्यु' Death घोषक कविता में उसे सर्वत्र विद्यमान बताया है।<sup>३</sup>

सांस्कृतिक 'नवीन' ने भारतीय संस्कृति के जगजगत्तों तथा निम्नो चिन्तना के आधार पर मृत्यु को घटने काव्य भासा में निरोपा । जो 'रिग्वेद' ने सिखा है कि "साहित्य, राजनीति मित्रता घोर कबिर तथा गोच्छिओं घोर तपाम हाहा-छिच्छियों के आधारण में घातके ( नवीन' की) मन का एक भाग बहुर उह रहस्य की घार उन्मुक्त रहता था जो जीवन का परम रहस्य है । हम नहीं से घाते हैं घोर नहीं पावेंगे ये घरा निरन्तर भारकी घारना के अन्तराल में पूँजो रहते थे घोर कविता की कवम उद्वेते ही घाय घाय इसी रहस्य की घोष में तस्तीन हा पाते थे । मृत्यु का जो एक प्रिय पद है वह घातकी बरता में घनेक बार उमरा था ।"<sup>४</sup> कवि ने मृत्यु का बर्तन निम्न पद्यों में किया है—

१ शो० प्रभाकर भाषणे—'व्यक्ति घोर बाह्मण', पृष्ठ १०८ ।

२. "The undiscovered country from whose sojourn no traveller returns" —The Pocket Book of Quotations' page 58

३. Death is here and death is there,

Death is busy everywhere,

Around, within, beneath,

Above is death—and we are death"—The Pocket

Book of Quotations page 59

४. 'नवीन', पृष्ठ ११ ।

हाल इवामल केस मुझ पर, घोर बाहर धोने कासी,  
यह प्यारी मृत्यु राती दस भूवा-बेध बासी ।<sup>१</sup>

रवि बाहु मे मृत्यु को बह-परिवर्तन के करक में देखा है—

यह मलिन बह व्यापना होगा  
होगा रै इसी बार  
मेरा यह मलिन गर्हकार ।  
रेनिक धर्मों का मल फेला  
इसके ऊपर नीचे फेला  
इतना तप्त हो गया है रे  
छाया है कुम्हार  
मेरा यह मलिन गर्हकार ।<sup>२</sup>

वे यह भी कहते हैं—

आमत्युर कु-छेर तपस्या ए बीबन —  
सत्येर बाक्य मृत्यु नाम करिबारे,  
मरुते लकल देना सोम क रे बिते ।<sup>३</sup>

कवि ने मृत्यु के साथ ही साथ मृत्यु-नाम का भी वर्णन किया है—

कातामल उस गृह में बीव बरा करता है  
कातामिन, ब्यजन हुला, उस गृह को भरता है,  
काल मेव जल निर उस प्राणरु में भरता है,  
काल-भनल धनिल लमिन-उत गृह के सर्वनाम  
देना है मरु धाम ।<sup>४</sup>

कवि, मृत्यु को बिर-निद्रा नहीं मानता । उसके मरानुसार, वह जागरण-व्यवस्था है ।<sup>५</sup>  
'ममोम' की ने मृत्यु का मृतन रूप ही प्रदान किया है । उसके मरणाखण में बिर जीवन्तरस  
बुज-मिबा है । मृत्यु परमउत्स को पहिभागने का खोपान है ।<sup>६</sup> इस पात्र का धामा पात्र  
परोक्षित है । कवि ने मृत्यु को ईश्वर की रहस्यवाहिका या दूरी के रूप में चित्रित किया है ।<sup>७</sup>

मृत्यु-नाम में पहुँचकर कवि भविष्यता बन जाता है । उसको जिज्ञासा तथा ज्ञान-निपासा  
विभुषित हो जाती है । उसकी टोह की गूँथ, कूट उठती है—

१ 'बहाति', बज उज धतय सय का, धम् २, पृष्ठ २० ।

२ की रसुबंधमान गुस—'रवि बाहु के कुम्हार पोट', 'बुद्धिघ पोट', पृष्ठ १८ ।

३ 'एकीतरी धती', रूप-नारायण कृते, पृष्ठ १७७ ।

४ 'मृत्यु धाम' या 'सुजन-मर्म' पहली कविता, धम् ५ ।

५ कही, मरुपट धाट, ११ की कविता, धम् ६ ।

६ 'मृत्युधाम' या 'सुजन मर्म', यह प्याता में पी न सङ्घा, बीरहरी कविता,  
धम् १ ।

७ कही, हमारे धामन की धम्बर धरा, १६ की कविता, धम् १ ।

किर भी है जीवन में एक टोह हूक भरी,  
 किमि क्या ? की बैर-बेर टैर उठी बूक भरी,  
 बरखे के पार गई सब न हृष्टि बूक भरी,  
 हुई धीर भी प्रचण्ड सब 'कोशुम्' की पुकार ।  
 किमि भक्ति धार-धार ?<sup>१</sup>

कवि रहस्य का घनाबल्ल करना चाहता है—

साध धर्मों से बरे हो पर, बात की बिर विपत्ता  
 कीन में जवता रहा है साज पृथट में टिपा-सा ?  
 बम्म की धी, मृत्यु की कौंसी पते से जीव धाया,  
 हर्ष धीर बिबाह का उद्गीय स्वर बग धीव छाया ।<sup>२</sup>

'नवीन' की न मृत्यु-तत्व के बिस्तेषण का सार इन पंक्तियों में प्रस्तुत कर दिया है। हमने मृत्यु के रहस्य को ठो टाटाभियों पूर्व ही समझ लिया था। उसका निबोड़ ही हमें यह प्राप्त हुआ है कि मरण-भिति से हम क्यों सहमें ?

धरे साहस्यों बगो पहले मृत्यु-तरब हम समझे,  
 किहू हमको धरि भरल भीति यह धाकर धाब सताए,  
 हम, मर-भर किर-किर उठ धाए ।<sup>३</sup>

इस प्रकार कवि ने मृत्यु के विभिन्न पार्यों पर मस्मीरता तथा उगासता के साथ, घटना बिबेचन प्रस्तुत किया है। उसमें दर्शन, संस्कृति एवं काव्य के तत्वों को त्रिपुरी प्रतिष्ठित है। कवि का मृत्यु-तरब घनोपल जहाँ एक धीर रहस्य को माँठें सासता है, वहाँ हमसे धार मौनिक संसर्गों को भी बाणी प्रदान करना है।

निष्कर्ष—'नवीन' के मरानुसार "कोई भी व्यक्ति सत्य शार्सनिक हुए बिना कवि नहीं हो सकता। 'व्योने ने दर्शन को उच्चतम संगीत माना है।" 'नवीन' भी का शार्सनिक व्यक्तित्व तथा रहस्योन्मुख इतिव धनेक रूपकरणों को धाने प्रक में धर्मीष्ठित किये है।

'नवीन' भी की अध्यात्मपरक रचनाओं के मूल में बस्तुम् कोशुम् ? , द्विविधम् में 'बसाकि' तथा 'माधस्य' के धार मूठ स्तम्भ प्राप्त होते हैं। इनका काव्य विभासा से गुण होता है धीर उगुलोगतना एवं भक्ति में धाने धरम धरिणुति पाठा है।

नवीन के शार्सनिक-काव्य में धरना जीवन-रत भारतीय संस्कृति, दर्शन तथा काव्य

१ 'मृत्यु-तत्व' या 'मृत्यु-धर्म', श्रीक सते धारधार, १० वीं बरिना, धार ५ ।

२ वही, धारोतर, ११ वीं बरिना धार १० ।

३ 'बनधर', धार, ६ वीं बरिना ।

४ "No man was ever yet a great Poet without being at the same time a profound philosopher"—The Oxford Dictionary of Quotations, page 152.

५ "Philosophy is the highest music"—The Pocket book of Quotations, Page 278

ये ही प्राप्त किया है। वे हमारी सांस्कृतिक परिपाटी की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। उनका अध्यात्म एवं रहस्यवाद मध्य तथा प्रोग्रेसिव पीठिका पर सुहृद् रूप में भाष्य है।

उनका रहस्यवाद न तो साधनापरक है और न बुद्धिपरक, वह भावना पर ही धार्मिक धर्मित है। उन्होंने धर्म के दर्शन को प्रज्ञा-प्रसूता होमि की प्रवेक्षा भाव प्रचल के मुमुक्षु तथा परिवर्तनीय तन्त्रुओं से ही निमित्त किया है। बुद्धि तथा भावना की संतिका रहती है।<sup>१</sup>

'नवीन' की का अध्यात्मवाद अत्यन्त ही गूढ़ अध्यात्मवाद नहीं है। उन्हें धार्मिक रूप से ही रहस्यवादी कहा जा सकता है। उनके हिय की 'बुट-बुट' तथा मालस की 'बवालि' ही बह-उब उनकी रचनाओं को रहस्यवादी सीसि प्रहात कर देती है। उनके रहस्यवाद में दार्शनिक उद्घापोह, विस्तृता व दुहृता का प्रभाव है। कवि-व्यक्तिरूप के समान ही उनमें जो रससिक्त एवं सहजगम्य रूप ही कारण किया है। इनके दार्शनिक काव्य में चिन्तन एवं काव्यवास्तव का स्वर्णिम धर्मनस्य है।

'नवीन' की प्रकृति-मार्ग के अन्तग्य अनुवादी हैं। वे निवृत्तिमार्गी कभी नहीं रहे। माटी का पुनरुत्था ही बुद्धत्व एवं गान्धीत्व प्राप्त कर सकता है। राम से उनको विराम नहीं है, परन्तु अर्द्धगामिता को वे सर्वाधिक श्रेय प्रदान करते हैं। उनके इस काव्य में न तो पलायन ही है और न निराशा। उनके दार्शनिक काव्य का अनुधार जीवन तथा उन्नती सात्विक शैलता एवं महिमा है। वे लम्बे ईस्वरवाचो हैं और सपुत्रोपासना को ही धर्मो अध्यात्म-परक रचनाओं का श्रेय-विन्दु बनाये हुए हैं। उनके वैयक्तिक भक्ति का हृदय भी उनके दार्शनिक के साथ लिगटा हुआ है जिसके कारण भक्ति एवं प्रसार-गुण का परिवेश बना रहता है।

कवि के संस्कारों अध्यात्म, मनन जीवन के सच्यों तथा अक्षरवा की परिपक्वावस्था के उन्हें और उनके काव्य को अध्यात्म की ओर मोड़ दिया। उनके जीवन तथा काव्य का पर्यवहार ही इस पुनीत तथा प्रीड़-क्षेत्र में होता है। उनके व्यक्तित्व तथा जीवन को प्रत्यक्ष अनुभूतियों को प्रत्यक्षपरक रचनाओं में सर्वाधिक उन्मुख तथा उन्नित अभिव्यञ्जना-क्षेत्र मिला। कवि के प्रेम तत्व दर्शन तत्व में और दर्शन-तत्व, प्रेम तत्व में पुनः मिले हैं। उन्होंने नई स्थानों पर श्रृंखार का ही अध्यात्मोपरक किया है। उसका अध्यात्म सजन<sup>२</sup> है जो कभी लौकिक और कभी धार्मिक हो जाता है। समीप से गिस्सीम की ओर उन्नते उन्नित न मिसों जितना समीप का विस्तार करके गिस्सीम के बराबर पहुँचाया गया है।<sup>३</sup> की सचपुष्करत्तु अक्षरवा ने लिखा है कि 'यह अक्षरवाधु धार्मिक सत्य न होया कि वास्तव्य के सारे पावित्र अन्वेष अध्यात्मिक उद्धान है, जिस प्रकार भौतिक दार्शनिकों की यह बात धार्मिकतर सत्य नहीं है कि विश्व के सारे अध्यात्मिक उद्धान उन्नती पावित्रता की प्रतिक्रिया है, उसके विफल प्रेम की यावा है। हमें तो वास्तव्य का मुख्य उन्नती अभिव्यञ्जना की सत्यता से धार्मिकता है। अध्यात्म काया

१ 'In literature there is no such thing as pure thought, in literature thought is always the hand maid of emotion'—J Middleton Murry 'The Problem of Style,' Page. 78

२ 'साहित्य तरंग' पृष्ठ १४४।



बहाने से कलाकार के व्यक्तित्व का मुख्य धारा भारतवर्ष जैसा झींझने लगे, परन्तु कला के सुस्थापन में इसके कोई घन्टा नहीं घाटा।"१

'नबीन' जी के दार्शनिक काव्य की सर्वमहान् तथा महिमा मन्वित उपलब्धि है—परम गीत । ये गीत हिन्दी की लाकड़ी सम्पत्ति तथा धनुड़ी धरोहर है । इन गीतों में उपनिषद् का ज्ञान एवं गीता की धारणा और जीवन की प्रामुखि विवेकी विरलत रूप में, नितादित है । कवि ने मृत्यु एवं जीवन की धर्मिका से विभित किया है । उसमें कल्पित नबल रंग मरे हैं । विनाय से मुक्त परम से ब्रह्म तथा वेदना मृत्युता से जीवन-आवरण के तत्त्वों को लेकर, कवि प्राण तथा निष्ठा के संमत्त घट की सन्तुष्टि करता है । इन गीतों में स्वाध्याय एवं स्कारस्य का धर्म गठ-बन्धन हुआ है । ऐसे गीत, हिन्दी के बादमय में अत्यन्त विरल ही क्या प्रायः मध्य है । इसीसे काव्य-संस्था, जो एवं प्रोत्साही की धर्मिकता में कवि का यह धर्मिकता एवं धर्मिकता योमदान है । 'नबीन' जी के परवर्ती कवियों एवं नई पीढ़ी के गायकों ने जो कठिन मृत्यु-गीतों की सृष्टि की उसकी परिपाटी के मूल में इन गीतों को रखकर परवर्ती-जीवन का सुस्थापन किया जा सकता है । कवि के ये गीत अग्रजान के सचन धर्मिकता में पड़े हैं, परन्तु हीम हो प्रदासन की जीवन की ज्योति इनको भी प्रामुखि तथा कीर्ति के छन्दों में प्रकाश कर लेगी ।

काव्य-कला के दृष्टिकोण से, नबीन का दार्शनिक-काव्य प्रोढ़ तथा सम्पाहार के गुणों से धर्मिक है । यह धार्मिक प्रमदिक्यु तथा परिष्कृत है । उसमें काव्य की मर्यादा प्रचुरता तथा धार्मिकता की स्थिति विद्यमान है । यह काव्य-सुधमा की सृष्टि से मर्मिकृत है ।

इस प्रकार 'नबीन' जी का दार्शनिक-काव्य उनके जीवन संसृष्टि तथा साधना का परिष्कृत फल है । उसमें उनके पुन तथा बाठावरण का संस्था-प्रबन्ध, निष्ठा तथा विवेक की बाणी मुखर है । उनके व्यक्तित्व का संघटित तथा धनीयुक्त रूप यही उत्कृष्ट है । दर्शन की दृष्टा में भी उनका मस्त मन तथा कवि-व्यक्तित्व का मनु धार प्रबहमान रहता है । कवि को दार्शनिक-काव्य-बाध से हृदय तथा धारणा, शान्ति की परिष्कृष्टि होती है जो कि कवि का निष्प्रेषण ही वा ।

सप्तम अध्याय

महाकाव्य : उर्मिला



## महाकाव्य : उर्मिजा

परम काव्य—नवीन जो 'उर्मिसा' को अपना परम-काव्य मानते हैं। अपनी जीवन के जीवन-काल में लिखित परन्तु सन्ध्या-काल में अपनी इच्छाबन्धा में पुस्तक रूप में मुद्रित इस काव्य-कृति को प्रकाशित देखकर कवि ने बड़ी हर्ष तथा धारणमुष्टि प्रकट की थी; जो 'कामायनी' के पुस्तककार प्रकाशित रूप को देखकर, स्वयं 'प्रसाद' को ही समिप्यति को ही।

पुस्तकी-साहित्य में 'उर्मिजा' नामक 'हरिश्चन्द्र', काव्य में 'दिव्य प्रवास' 'गुप्त'-साहित्य में 'साकेत' तथा 'प्रसाद' काव्य में जो स्थान 'कामायनी' का है, वही स्थान 'नवीन'-साहित्य में प्रायः 'उर्मिसा' का है। यह काव्य उनकी प्यारी अनुभूति नवन कथा-योजना मौलिक कल्पना-सृष्टि और तीव्र मनोवृत्तियों की छायावत निधि है।

कवि की श्रेष्ठ काव्य-शक्ति, उर्मि-विचारणा, गुणन दृष्टिकोण समित्त सांस्कृतिक परिवर्तन, उच्चतम जीवनार्थ और मानवतावादी धारणा के इसी कृति में ही अपने पक्कन प्रस्तुतित किये हैं। कथा-विषय की नवतता तात्कालिक प्रवृत्त राष्ट्रीय चेतना युवीन सौन्दर्यता और नायके के महिमामय तथा कर्तव्यरत स्वच्छिन्न की सर्वोत्कृष्ट श्रद्धा यही देखने को मिलती है।

इस कृति में उल्लेखित उर्मिसा की निवारणा उसके चरित्र का विवरण तथा प्रपत्त रूप और विरह-वर्णन को उद्यत तथा प्रायाचायी सुनिका द्वितीय में अपनी समकक्षता को दुर्लभ ही पायी है। विरह-वर्णन को कवि ने अपने काव्य की चार-वस्तु माना है। इसे वे 'विरह-रत्न' या काव्य का 'हृदय' मानते हैं।<sup>१</sup> वास्तव में वे 'उर्मिसा' की विशेष-मोमांसा गीतों में ही करना चाहते हैं और इस हेतु कतिपय गीतों को रचना भी ही थी, परन्तु 'साकेत' के प्रकाशन के कारण और उन्होंने गीतों के माध्यम से विरह-वर्णन पाकर, उन्होंने यह विचार त्याग दिया और फिर दोहों में ही विरह-वर्णन प्रस्तुत किया।<sup>२</sup>

'उर्मिसा', 'नवीन' की के काव्यमय में धीरस्वान की अविचारितही मात्र ही नहीं है, प्रत्युत वह कवि की प्रतिनिधि तथा प्रयात रचना है। 'परम-काव्य' होने के नाते वह, एक ओर यही उनके काव्य का नवनोत है; यही दूसरी ओर वह उनके कवि-जीवन का सर्वाधिक तथा सर्वोत्कृष्ट महत्व-पुर्ण कार्य भी है। उमरका को परम्परा को इस कृति में नूतन प्रायाम प्रयात किये हैं।

१. श्री प्रयातारायण विद्यापी, नई दिल्ली से हुई प्रथम मेट (दिनांक २३-४-१९९१) में बात।

२. यही।

३. यही।

४. यही।

प्रेरणा-स्रोत—कवि रवीन्द्र ने अपने प्रेरणामय निबन्ध 'क्याम्पेर उपेक्षिता' में सर्व प्रथम हमारे कवियों का ध्यान उपेक्षिता तथा विस्मृता उर्मिता के प्रति आकृष्ट किया। 'पुस्तक' में पचासम सर्ग लिखा था—“कवियों ने अपनी कल्पना में समस्त कल्पना जल को बेबस जलक तन्मया के सुसुप्तमिवेक में ही निःशेष किया। किन्तु एक सम्पत्तान-मुक्ती सर्व ऐहिक सुख बंदिता राजबन्धु सोताबेदी को छाया तने दबगुलितता हुई खड़ी थी। कवि कमलधर से एक बृहत् समिवेक जल भी उसके चिर बुझानिगन्त मज्ज ललाट को क्यों न विचित्र कर पाया ?” भारतीय साहित्य के इस 'बट-बुल' से ही हमारे कवियों ने परोक्ष प्रेरणा ग्रहण की। 'नवीन' जी ने भी इसी धामक को जीवन कृति के रूप में पात्र किया।<sup>१</sup> महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, काव्योक्ति धीर मन्वृति की उर्मिता के प्रति आसिदास की प्रियंवदा धीर धनुमुया के प्रति धीर बाण की पत्नीका के प्रति की गई उपेक्षा पर स्या तथा खेद समिव्यक्ति ने सुम-प्रवर्तक आचार्य महाबोरप्रसाद द्विवेदी तथा हमारे कवियों के मानस को कदणार्थ बना दिया।

रवीन्द्र रवीन्द्र के उपर्युक्त लेख से प्रभावित होकर आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने धीमुर्जयमुपण आचार्य के छप नाम से 'तरस्वती' में 'कवियों की उर्मिता-विषयक उपासीनता'<sup>२</sup> शीर्षक-प्रेरणास्पद निबन्ध लिखा। द्विवेदी जी ने निबन्ध के अन्त में लिखा था— 'बैसे खेद की बात है कि उर्मिता का उज्ज्वल चरित-चित्र कवियों के द्वारा भी धाम तक इसी तरह हफटा गया।’<sup>३</sup> 'उर्मिता' की सुलवर्ती काव्य प्रेरणा का यही प्रोज्ज्वल तन्पु है।

आचार्य द्विवेदी जी के निबन्ध में हिन्दो के अनेक कवियों ने प्रत्यक्ष तथा अतिवित-प्रेरणा प्राप्त की। इसी के फलस्वरूप 'हरिदोष' भी ने 'उर्मिता' नामक ननु प्रबन्ध लिखा।<sup>४</sup> सुप्त जी ने सन् १९०६-१० में प्रथमतः 'उर्मिता' शीर्षक से केवल साईं सर्व का एक आरम्भिक प्रमुद्रित तथा अत्रकावित काव्य लिखा<sup>५</sup> धीर तन्मन्तर 'ठाकेत' महाकाव्य की रचना की।

१ श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, 'प्राचीन साहित्य', काव्येर उपेक्षिता, पृष्ठ १६।

२ आचार्य महाबुलारे बाबुदेवी, अन्वययोग सन्धेय, रवीन्द्र धीर द्विवेदी साहित्य, रवीन्द्रनाथ बलिहत सोनीनात नेहक काम-पत्रावली अंक, ३ मार्च १९६१, पृष्ठ १६।

३ डॉ० देवेन्द्रनाथ तल्लुआहिक 'द्विगुस्तान', नवीन को वनचों में उर्मिता के धाम', १० अगस्त, १९११, पृष्ठ २१।

४ 'तरस्वती' कवियों की उर्मिता विषयक उपासीनता कुताई १९०८, भाग ६ संख्या ७, पृष्ठ ११२-११४।

५ वही पृष्ठ ११४।

६ वही, हीरक अमली विदेशीक, १९१०, पृष्ठ ४१-४४।

७ डॉ० कमलधर बाडक—'वैचित्रीयारण गुप्त : व्यक्ति धीर बाण', मद्रास-काव्य साकेत साकेत रचना की बुनिया, पृष्ठ १९४।

की राममान पाण्डेय नास<sup>१</sup> ने भी उर्मिला पर काव्य लिखा, जो बरौनी तथा कानपुर की मासिक पत्रिका 'भावा' में, धनेवाँज में छपा।<sup>२</sup>

इस प्रकार 'नवीन' की भी काव्य की उपेक्षिता उर्मिला<sup>३</sup> के चित्र के घनावरण हेतु, अपनी 'दूरी कसम' को गतिहीन बना दिया।<sup>४</sup>

काश्मेर उपेक्षिता उर्मिला—काव्य द्वारा विस्मृत एवं उपेक्षित बन गयी, उर्मिला को महाकाव्यों की नायिका के प्रतिष्ठित पद पर प्रतिष्ठित किया। 'नवीन' की ने भी अपनी काव्य-कवि में उर्मिला की उपेक्षा के यत्न-श्रम संकेत किये हैं और ज्यों के विचारणार्थ उनकी बेवकूती करिबद्ध हुई। समय संसृष्ट-काव्य एवं द्वितीय-काव्य के अवसाकन के पश्चात्, यह उपेक्षा भाव सङ्ग ही प्रमाणित हो जाता है।

आदि कवि शास्त्री ने अपनी 'रामायण' में उर्मिला की एक अनक मात्र ही हमारे समक्ष प्रस्तुत की है। शास्त्री के उल्लेख एक बार ही सर्वसम्मुख सामने हैं। यह अपने पिता जनक के प्राण में वधु के परिधान में घाली है। विवाह कार्य के समय, राजपि जनक यही प्रसन्नता के साथ अपनी दो पुत्रियों में से बीर्यगुल्फा तथा इदकम्पा महस्य सुन्दरी सीता राम की, और दूसरी कन्या उर्मिला सखण को देते हैं।<sup>५</sup> जनक देखते रसुहुस के मुनिसेष्ठ शिष्य को सम्बोधित करते हुए यह निबद्धन किया।

महापि शास्त्री ने लक्ष्मण-उर्मिला तथा राम-सीता की पुगम बोड़ी को समझते बर-बधु के कान में निरुचित किया है।<sup>६</sup> उन्होंने सीता उर्मिला आदि कन्याओं को समोर्ध्व यत्न-नेत्री की धर्म-शिखा के समान, भावन तथा प्रसन्नता का भावय,

१ 'भावा'—(क) कुम १९२७, वर्ष १, संख्या ५, (२) सुनाई, १९२७, वर्ष १, संख्या ६ उर्मिला का शीर्षक, पृष्ठ १०६ १०, अक्षर १-८ (३) प्रसन्न, १९२७, वर्ष १, संख्या ७, (४) सितम्बर १९२७, वर्ष १, संख्या ८, (५) फरवरी १९२८, वर्ष २, संख्या १, 'उर्मिला से लक्ष्मण की विवाह' पृष्ठ १२ १४, अक्षर १४ १६, (६) कुम, १९२८, वर्ष २ संख्या ५ 'उर्मिला से लक्ष्मण की विवाह' पृष्ठ २१६ २२१, अक्षर १७-४०, (७) सितम्बर, १९२८, वर्ष २, संख्या ८, 'उर्मिला से लक्ष्मण की विवाह' पृष्ठ ३६२-३७७, अक्षर, ४१-५०, (८) सितम्बर १९२८, वर्ष २ संख्या ११, 'लक्ष्मण की उर्मिला से विवाह' पृष्ठ ४६५ ४६७ अक्षर ५१-६०।

२ पाण्डेय की के इस उर्मिला विवदक कृतिश्व की ओर अपनी किसी का ध्यान नहीं गया है।

३ 'उर्मिला-काव्य का प्रणयन एवम महावीरप्रसाद द्विवेदी की के एक सौध तरारवती में प्रकाशित उर्मिला की उपेक्षा का परिणाम है। —डी० सुश्रीराम जी का सुके निबन्ध (विनांक १-८ १९६२ के) पत्र से उद्धृत।

४ 'उर्मिला', प्रसाहृत, पृष्ठ १।

५ 'रामायण' अनुबावठ की अनुबेरी द्वारकाप्रसाद शर्मा, ११७ ए०१२२।

६ वही, ११७१। ३।

बनाना है।<sup>१</sup> इस प्रकार धार्मिक उन्नति का अर्थ ही करते पते गये हैं। विद्यापीठसभ महाराजा अनक महाराजा हरद्वय के पुत्रों को विदेह जननायक समर्पित करते हैं। इस कुशाग्र में सीता धारि के साथ उन्नति का भी उन्मेष प्राप्त होता है।<sup>२</sup>

प्रयाणा-पामना पर दशरथ को उन्नियाँ सीता उन्नति माण्डवी एवं धुतिवैदि का राज्याधार में से मागे हैं धार उन्नति शृंगार-विन्यामादि कथाओं है।<sup>३</sup> इस प्रकार महाकवि काव्यिक में उन्नति का कई महान प्रगण नहीं किया। इसीप्रिये धार्मिक महावीर प्रहार निवेश से जोर सत्त होकर इस विषय में लिखा था।<sup>४</sup>

'नवीन' को भी काव्यिक द्वारा उपेक्षित इस विषय परित को रसविक रूप में प्रस्तुत करने के लिए, धरती सेधनो को प्रात्याहित किया था।<sup>५</sup>

महाकवि मनुष्य के काम्य में भी यही उन्नति प्राप्त होती है। 'उत्तररामचरित' में चित्रकटक पर धार्मिक उन्नति के धर पर मगवती सीता की यत्निक तथा विद्याधायुषी संगुसा पहुँचती है परन्तु उन्नति ही सभनण सभित होकर उसे करार्यदित कर देते हैं।<sup>६</sup>

संशुभ काम्य के समान द्विगो काव्य को रामकथा रमरा में उन्नति विस्मृति के धर में पगे रही। गोस्वामी तुलसीदास ने धरने युगकाम्य रामचरित-मानस में नामोस्मिध से ही काम चला लिया है।<sup>७</sup>

धार्मिक महावीरप्रहार द्विगो में लिखा है कि "तुलसीदास ने भी उन्नति पर धर्याय किया है। धरने इस विषय में धार्मिक का ही धनुतरण किया है। धरने कमण्डलु के बरलाधारि का एक भी धुँड धरने उन्नति के लिए न रखा। सारा का सारा कमण्डलु सीता का समपल कर दिया। 'नवीन' को भी तुलसीदास ने मन्दिमाहा में इस छोटे मन के धरगेधर धरने पर धरना हरद्व को धरुनता को धरिभक्त किया।<sup>८</sup>

जो धरगेधरिध उन्नत्याय 'हरिधोष' से भी 'नापोन्नेध' करने का धरि कविनी की पक्ति में देही धरनाम में धरना नाम लिखा है। येही पनकष की सीता ने उन्नति को धरना का है। धर- धर क पुत्र धरना धरनी बहिना का धरना प्रगत करती है।<sup>९</sup> मीठा धरने उन्नति में धरुनति क सभन उन्नति के धर क धरुनका प्रस्तुत करती है।<sup>१०</sup>

१. वासुदेवप्रियाधायण, ११३। १५।

२. काँ, ११३। ११।

३. काँ, ११३। ११।

४. मरुतना, पुनई, १९००, पृष्ठ ३१३।

५. 'उन्नति', प्रथम भाग, प्रागान, पृष्ठ २, पृष्ठ ३।

६. उत्तररामचरित, भा० ती० विद्या द्वारा सभित, प्रथम धनु, पृष्ठ ५१।

७. 'रामचरित मानस, धनु मग, प्रथम, ११३-५, पृष्ठ ३३।

८. 'मरुतनी, पुनई, १९००, पृष्ठ ३१५।

९. 'उन्नति', प्रथम भाग, पृष्ठ ३, पृष्ठ ५।

१०. श्री धरगेधरिध उन्नत्याय 'हरिधोष', बरुनी-धरनाम पृष्ठ ३-३९।

११. काँ, पृष्ठ ३१।

'हरिप्रीथ भी ने अपनी इस कृति में उमिता का एक बार ही घनावरण किया है। इस स्वयं पर भी कवि ही अधिक बाधात है, उमिता मूक है। सीता के बनमन से पोकित उमिता का बेरना भरा चित्त, हमारे सामने धाया है।'

'बैदेही बनवास' के सत्स्य सर्ग में कवि ने भीराम के मुख से उमिता की विस्तृत बेरना का एक सामान्य उचित प्रदान किया है। बैदेही बनवास के तदनन्तर, एक बार भीराम पंचवटी जाते हैं और वहाँ प्रगीत के स्मृति-दार बरबस ही मंत्र्य हो पड़ते हैं। उमिता की विस्तृत बेरना की स्मृति धाते ही उनका प्रभूपात घबाधित रूप धारण कर लेता है।<sup>१</sup>

'साकेत' तथा 'उमिता' में लक्ष्मण-उमिता की प्राण प्रतिष्ठ के समान डॉ० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'साकेत-संग्रह' में भरत माण्डवी की प्रतिमाएँ स्थापित की हैं। कवि ने राम-बन-मन के तदनन्तर उमिता को हृदय प्रावरण पीड़ा को एक हल्की सी सूचना माय ही दी है। भरत माण्डवी को यह आदेश प्रदान करते हैं कि वह विरह-विधुरा उमिता को पक्षीमति सम्झामे।<sup>२</sup> 'साकेत संग्रह' में एक अन्य स्वयं पर भी उमिता का उल्लेख धाया है—

उमिता का क्या बोध महाध,  
कहाँ भी धाख न जियको खान ॥<sup>३</sup>

इस प्रकार हम देखते हैं कि सम्पूर्ण संस्कृत एवं हिन्दी के राम-काव्य परम्परा में उमिता को उपेक्षित हो रखा गया है। उसके नामोन्मेष धनका परोक्ष-वर्णन से ही कवियों ने अपने कर्तव्य की इति-भी समझ ली। धाधुनिक हिन्दी-काव्य में इस कृति का परिहार उपेक्षा का निराकरण तथा उमिता के चरित्र का उररूप रूप में मायन 'साकेत' एवं 'उमिता' में ही हुआ है। 'साकेत' की उपेक्षा उमिता में उमिता के चरित्र की अधिक विस्तार एवं प्रसार प्राप्त हुआ है। कवि ने उमिता के इस उपेक्षित रूप को धनकाल में ही रचकर, उसकी कथा को 'मन्त्रित' ही बताया है।<sup>४</sup>

इस प्रकार बाह्य प्रेरणा धाधुनिक माधना तथा बलवर्धन सुधा के कारण ही, कवि के दिव्य माधन-मदल<sup>५</sup> को उमिता का चरित्र मयने लगा और कवि की उपेक्षा चित्रण उचित के धाधार पर वह हिन्दी-काव्य की धनुडी त्रिधि बन गया। महाकाव्य की उपेक्षा कवि की चरित्र-धनना धोर उसकी चित्रण-शक्ति पर निर्भर करती है।<sup>६</sup> कवि का लक्ष्य सिर्फ उमिता

१ 'हरिप्रीथ'—बैदेही बनवास, पृष्ठ १४ ।

२ वही, पृष्ठ २११ ।

३ डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र—'साकेत-संग्रह' अनुप सर्ग, पृष्ठ ५५ ।

४ वही, पृष्ठ ५१ ।

५ 'उमिता', पृष्ठ ५ ।

६ 'कवि' कविता विधि उपमासूत्रम्—प्रकाश, १०१२४१० ।

७ "The success of Epic Poetry depends on the author's Power of imagining and representing characters."—W P Ker, 'Epic and Romance', page 17



के बिना का प्रकाशन करना ही नहीं था; परन्तु उसने रामकृष्ण को पुनश्चयातवादी चेतना तथा सांस्कृतिक सम्प्रभ में भी निरखाने-भरखा है। इस प्रकार उर्मिता तथा सांस्कृतिक मूर्तों की महती मूर्ति को अपने परिवर्धन मात में समाहित रिधे 'उर्मिता'-साम्य अपने निर्माण के इतिहास की भी समुद्धी गायन गाता है।

'उर्मिता' की रचना—चिर बेधिता एवं विस्मृता उर्मिता के इतिहास के समान नवीन की की इस साम्यमूर्ति के लेखन एवं प्रकाशन का भी प्रथम इतिहास है। कवि ने इस साम्य को प्राय ( सन् १९५७ ) से १७ वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया था। अपनी साम्य कृतियों के समान यह भी कवि के बन्धी जीवन की समुद्धी मूर्ति है। सन् १९२१-२३ के देह-वर्ष के वागदास शाल में कवि ने इसे लिखना प्रारम्भ किया।<sup>१</sup>

लखनऊ-वागदास में ही कवि के हृदय में यह विचार धामा कि उर्मिता पर कुछ लिखना चाहिये। अत उन्हीने सन् १९२१ ई० के नवम्बर के अन्त में या दिसम्बर के प्रारम्भ में, 'उर्मिता' लिखनी प्रारम्भ की। प्रथम सर्ग लखनऊ वागदास में प्राय एक-अधमा मास में लिखा गया। जनवरी, १९२३ ई० में कवि, वागदास से मुक्त हो गया।

अपने साम्यिक-जीवन में कवि पुन इस साम्य को नहीं लिख सका। सन् १९३० के दो बार के बन्धी जीवन में भी यह संपर्कमयी स्थिति के कारण अपनी कृति को धार्य नहीं बढ़ा सका।

दिसम्बर, सन् १९३१ में 'नवीन' की की पुनः वागदास-सम्य लिखा। इस बार का यह सर्ग-वर्ष का था। इस बार कवि ने निरवध करके व्यापारों तथा धर्म विषयों की भेदति हुए इस साम्य को समुद्धी कर लिया। फरवरी सन् १९३४ में जब कवि की बन्धीमूर्ति से मुक्ति हुई तो यह अपनी 'उर्मिता' की समाप्त कर चुका था।<sup>२</sup> उर्मिता के प्रथम सर्ग की परवर्ती सर्गों के लेखन-काल में वागदास सर्गों का प्रकाश हो गया। प्रथमसर्ग तथा परवर्ती सर्गों की प्राण तथा प्रसिद्धि पर भी यह अन्तर् परिलिखित है। उर्मिता के प्रथम सर्ग का लेखन बन्धी लखनऊ जिला वागदास में हुआ, वहीं उसके परवर्ती सर्गों की रचना गंगापिठ बन्धीमूर्ति में हुई। वागदास-सम्य की इस प्रकाश में कवि ने प्रसिद्धिगत समय जिला वागदास कैलाशार में धनीय किया घोर कुछ समय कैलाश वागदास बरेली तथा जिला वागदास धनीमूर्ति में लिखा। कवि को इस समय से मुक्ति धनीमूर्ति जिला वागदास से हो प्राप्त हुई। इस प्रकाश में लखनऊ कैलाशार बरेली तथा धनीमूर्ति के वागदासों ने इस साम्य-कृति के निर्माण का

१ 'उर्मिता' की लखनऊ-वागदास-सम्य, पृष्ठ ४।

२ वही।

३ वही मुक्ति का नाम।

४ कवि के वागदास-सम्य—'प्रकाश', 'रिश्तेदार', 'प्रकाश' 'प्रकाश' की लखनऊ या 'मुक्ति के रचना', और 'जीवन-विरास' या 'वागदास-सम्य' की कविताओं में ही हुई निधि एवं रचना के प्रकाश कर।

सम्बन्ध विच्छाई पड़ता है। वास्तव में यह कृति केजाबाब जेल में ही पूर्ण हुआ थी।<sup>१</sup> कवि ने इस ग्रन्थ के लेखन में समयक्रम में सवाभार छाड़ेभार मास से अधिक समय नहीं लिया।<sup>२</sup>

इस प्रकार इस ग्रन्थ का रचना काल सन् १९२२-१९३४ ई० है। इसके कर्षों तक कवि का सुभन यनासमयानुसार मतिधील रहा। सन् १९३४ में लिखा यह ग्रन्थ जयोद्यध कर्ष पश्चात्, सन् १९५७ में प्रकाशित हुआ। कवि ने लिखा है— प्रमसा कीजिये—मठ है मेरा योग कर्मसु शौचसम्।<sup>३</sup> कवि ने इस प्रकाशन के बिसम्ब तथा प्रमात्र का समस्त उत्तरदायित्व अपने ऊपर ही ले लिया है।<sup>४</sup> यवार्थ में, यह उनका कवि का भारतप्रकाशन की दुर्बलता के प्रति बिरोह ही था।<sup>५</sup>

सन् १९५७ में पुस्तकभार प्रकाशित होने के पूर्व इस ग्रन्थ के कविय अंध पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुके थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि श्री नवीन ने 'उमिषा' के सम्बन्ध में एक काव्य लिखा है जिसका कुछ अंश अस्तगत प्रमा पत्रिका में प्रकाशित हुआ।<sup>६</sup> इस प्रकार सर्वप्रथम बार इसके कविय अंध सन् १९४६ की 'प्रमा के अंकों में धामे। इसमें प्रथम अर्ध के काव्यांशों को स्थान प्राप्त हुआ। इसके पश्चात्, अत्रमर से श्री हरिमाऊ जपाम्याय के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'व्याममूमि' में स० १९८५-८६ के इस अंकों में उमिषा का सम्पूर्ण प्रथम अर्ध 'विसृता उमिषा' शीर्षक से प्रकाशित हुआ।<sup>७</sup>

१ श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रमाकर'—इतिहास 'नवभारत टाइम्स', 'नवीन की केजाबाब जेल में २६ जून, १९६०' पृष्ठ ६ कालम २।

२ 'उमिषा' मूमिका, पृष्ठ—ग।

३ कही, मूमिका—ग।

४ कही, पृष्ठ—क।

५ 'सम्प्रेतन-पत्रिका', डॉ० देवेन्द्रकुमार जैन, कवि 'नवीन कीर उनकी उमिषा' प्राविबन-मार्गशीर्ष, १८८२ एक मास ४६, संख्या ४, पृष्ठ १३।

६ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, नई धारा स्वच्छन्द धारा, पृष्ठ ७२१।

७ 'व्याममूमि' (१) प्राविबन स० १९८५, प्रथम लग, प्रोस्ताहून प्रार्थना प्याल तथा पुर-प्रबलिया, पृष्ठ १६-१९ (२) आठिक, स १९८५, गतांक से आगे बनकपुर प्रवेध, पृष्ठ १६२-१६३ (३) मार्गशीर्ष स० १९८५, गतांक से आगे प्रार्थना स० १९८५, सन् ६९-१०८, पृष्ठ १५०-१५३ (४) जैन स० १९८५, सन् १०९-१११, पृष्ठ १६-१८ (५) जैसाय, संवत् १९८६, सन् ११२-११२ पृष्ठ १३९-१४१ (६) प्राक्क, स० १९८६, सन् १६३-१८८, पृष्ठ १९०-१९१ (७) धाकल, स० १९८६, सन् २२६ पृष्ठ ४९८-५०० (८) माहपत्र स० १९८६, सन् २२७-२४०, पृष्ठ १७७-१८८।



'नवीन' की थी, किसी भा कृति के समान 'उत्पत्ति' का द्वितीय संस्करण प्रकाशित नहीं हुआ। अतएव, कुछ जो एवं प्रकार की के सहस्र 'उत्पत्ति' के संस्करणों में संशोधन करने का प्रयत्न ही नहीं उठाया। इसके बावजूद भी 'नवीन' को ने पूर्व रूप में ही परिशोधन किया। कवि ने सन् १९३३-३४ से ही, काव्य की परिष्कार के प्रयास ही, परिष्कार करना प्रारम्भ कर दिया था। कैलाश काठगढ़ के उनके सहपाठी श्री 'प्रभाकर' ने उन्हें 'उत्पत्ति' का मार्जन करते हुए देखा था।<sup>१</sup> इसके बाद, पत्रिकाओं में प्रकाशित 'उत्पत्ति' के कथाओं तथा पुस्तककार कृति में भी अन्तर दृष्टिविचार होता है जिससे स्पष्ट मासूम पड़ता है कि कवि ने परिशोधन-परिवर्तन किया है। साथ ही 'उत्पत्ति' की पाण्डुलिपि को प्रकाशन के पूर्व भी कवि ने काष्ठे परिष्कार किया था।<sup>२</sup> इस प्रकार कवि का परिशोधन कार्य, कृति के प्रकाशन के पूर्व तक, सतत रूप से, अपारंपरिकतागुणों पर चलता रहा।

'नवीन' की के परिशोधन का मूलाधार भाषा सम्बन्धी परिष्कार रहा है या कि उनकी बुद्धवस्था में बड़ा प्रयत्न ही पड़ा था। भाषाशोधन के अतिरिक्त उन्होंने काव्य परिवर्तन भी किया। 'उत्पत्ति' में समग्र रूप में निम्नलिखित परिवर्तन किये गये— (१) अस्मिन्वचना-परिशोधन, (२) भाषा-परिशोधन, (३) अर्थ-परिशोधन (४) शब्द-परिशोधन, और (५) अन्त परिशोधन। इन परिवर्तनों का सोदाहरण विवरण अन्तर्लिखित रूप में है—

(१) अस्मिन्वचना-परिशोधन—कवि ने अपनी काव्यात्मिक को अधिक सघट्ट प्रभावपूर्वक, उपयुक्त एवं सटीक बनाने के लिए 'उत्पत्ति' में अनेक परिवर्तन उपस्थित किये। इन परिवर्तनों से शैलिक्य का निराकरण हुआ और काव्य में नूतन सुति धा गई—

- |             |   |
|-------------|---|
| १—मूलरूप    | 'उत्पत्ति के पुनीत चरलों की रत्न,<br>पुण्ड्रादेवी उस वार।' <sup>३</sup> |
| संशोधित रूप | 'उत्पत्ति पर-पुनीत की बुलि<br>गुह्ये पुण्ड्रादेवी उस वार।' <sup>४</sup> |
| २—मूलरूप    | 'सरल कमल' नैत्र विस्मरण बस यह तो मेरा है।' <sup>५</sup>                 |
| संशोधित रूप | 'बोला कमल', नैत्र विस्मरण, क्या यह भी मेरा है।' <sup>६</sup>            |

इस प्रकार अर्थों को बटा-बट्टकर, उपयुक्त शब्द की स्वामापत्ति कर, शैली के रूप में परिवर्तन आकर और शक्यकरण में स्पष्टता तथा सुबोधता के लक्ष्यों को संलग्न कर, कवि ने अस्मिन्वक्ति सम्बन्धी परिशोधन उपस्थित किया है। 'सरल कमल' नैत्र विस्मरण बस यह तो मेरा है' के स्थान पर, 'बोला कमल नैत्र विस्मरण क्या यह भी मेरा है?' परिवर्तन करने

१ 'शैलिक्य' 'नवीन' पृष्ठ १६, १९३०, पृष्ठ ९, कालम १।  
 २ श्री प्रकाशकाराबल त्रिपाठी द्वारा सात।  
 ३ 'उत्पत्ति', पृष्ठ ४, अन्त ७।  
 ४ 'उत्पत्ति', पृष्ठ ४, अन्त ७।  
 ५ 'उत्पत्ति' मार्गशीर्ष, सं० १९८३, पृष्ठ १९६।  
 ६ 'उत्पत्ति', पृष्ठ ३०, अन्त ३३।

में बड़ी धमिधमिकी होउन ही भावुद्धि हुई है, वही कवन में लाक्षणिकता भी धा गई है । इत प्रका संघाशन रूप में काव्य धमिक ध्वंजक बन गया है ।

भाषा-परिणोपन—नवीन जी ने सर्वत्र, मूलतः तथा प्रधानतया भाषा-सौधन ही किया है । भाषा परिष्कार से वही एक धार शिथिलता तथा धनुवपुत्रता को निराजन प्रदान की गई है । वही काव्य में निष्कार एवं उभार धाया है ।

मूलरूप 'धनुर्वज्र का बर्णन कर तु धामायेगी तब क्या ?'

संशोधित 'धनुर्वज्र का बखान कर तु सकुचायगी तब क्या ?'<sup>१</sup>

भाषा परिवर्तन के मूत्र में उरू धर्मों के स्वान पर संस्कृत धर्मों का प्रयोग है । भाषा में माधुर्य साहित्य तथा धोचित्य की धमिधमिकी के लिए परिवर्तन उपस्थित किये गये हैं । साथ ही धमिधमिकी में संश्लिष्टता धरबा लाबध प्रस्तुत करके भाषा की सारधमिता तथा ध्वंजकता को धामा बझने का भी प्रयास किया गया है ।

ध्वंज-परिणोपन—कवि ने ध्वंज-रूप धर्मों का भी परिवर्तन किया है । इसके द्वारा वह धरने काव्य में भावानुभवता तथा सौधर्य की धुद्धि करना चाहता है—

१—मूलरूप 'धोलो धालें धुधित धन हो, धुधय धोधा धनैरी ।'<sup>२</sup>

संशोधित 'धोलो धालें, धुधित धन हो, धेध धोधा धनैरी ।'<sup>३</sup>

२—मूलरूप 'धनैहाधुधन धिमल नधल धीध में सौधुनी सी ।'<sup>४</sup>

संशोधित 'धनैहाधुधन धिमल नधल धीध में सौधुनी सी ।'<sup>५</sup>

३—मूलरूप 'सोधा धोर धधिता धे, धीधुध तरत के धणु हैं ।'<sup>६</sup>

संशोधित 'सोधा धोर धधिता धानो धरत धधत के धणु हैं ।'<sup>७</sup>

ध्वंज-परिणोपन में कवि ने धरने धर्मों की ध्वंजता में संश्लिष्टता तथा धुधरता लाने का धरुधन प्रयास किया है । ध्वंज-परिष्कार ने कजागत धारधंजता भी उधध की है । ध्वंज धीधिय धा धोन का निराधरण भी किया था सक्र है ।

धधध-परिणोपन—नवीन जी ने धधधों के परिवर्तन में, उधधे धधध धधध तथा धधध-धुधध धधधों को धधधधधध प्रदान की है—

१—मूलरूप 'धन हो धा, धे धधधध धधध, उधधे धधु धुध धधधों में'<sup>८</sup>

संशोधित : 'धन हो धा, धे धधधध धधध, उधधे धुध धी धधधों में'<sup>९</sup>

१ 'धधधधधध' धधधध, सं० ११८१, धुध ११० ।

२ 'धधधध', धुध ११, धधध १२० ।

३ 'धधधधधध', धधधध, सं० ११८५, धुध १११ ।

४ 'धधधध', धुध ११, धधध २ ।

५ 'धधधधधध', धधधध सं०, ११८५, धुध १११ ।

६ 'धधधध', धुध ११, धधध १० ।

७ 'धधधधधध' धधधधधध, सं० ११८५, धुध २११ ।

८ 'धधधध', धुध १५ धधध २ ।

९ 'धधधधधध धधधधधध सं० ११८५, धुध १८ ।

१० 'धधधध धुध ३ ।

२—मूलकथ 'तेरा एक-एक डाली का कून किये वा धर्पण मग को'<sup>१</sup>

संक्षोभन प्रति डाली का कून किये वा धर्पण धरने मग को ।<sup>२</sup>

धर्म-परिष्कार के माध्यम से, शास्त्र भी की धर्मबुद्धि हुई है। कई स्थानों पर श्रुति-श्रुत्य धोष का निवारण किया गया है। 'शुभता तथा सुधर्मत्व के स्थान पर 'धर्मता' तथा 'मधुरता' धर्मों की स्थापना कर, कवि ने श्रुति-प्रियता की बुद्धि ही की है। धर्म की सुशोभता तथा सुधर्मता के साधारण पर भी ये परिवर्तन समीक्ष्य प्रतीत होते हैं। धर्मों के परिवर्तन में शास्त्र-विन्यास को भी व्यवस्थित किया गया है।

कर्म-परिष्कार—ठमिलकाकार के महाकाव्य धर्म के कर्म में भी परिवर्तन उपस्थित किये हैं। इन परिवर्तनों से काव्योचित्य की प्राप्ति का भी मार्ग है—

१—मूलकथ 'दोनों पक्षों पर बैठ गई इस श्रुति उपवन में ।'<sup>३</sup>

संक्षोभित 'धर्मों पर बैठ गई वे दोनों इस उपवन में ।'<sup>४</sup>

२—मूलकथ 'सुझे बना दे, हे मेरी कल्पने करेयो अब क्या ?'<sup>५</sup>

संक्षोभित 'हे मेरी कल्पने बना है सुझे करेयी अब क्या ?'<sup>६</sup>

कर्म-परिवर्तन के द्वारा कवि ने बहो वाक्य-प्रियता को दूर किया है, बहो धर्म को व्यवहार-उत्तम भी बनाया है। ये कवि के साधु प्रयत्न हैं।

इस प्रकार 'उर्मिसा' भी 'उर्मिसा' में जगत प्रकार के परिवर्तन उपस्थित किये हैं। कवि ने कहीं कहीं पद्यों को घटा भी दिया है। मूल में, प्रथम धर्म में यह पद्यों का प्रादुर्भाव है जिसे प्रकाशित पुस्तक में स्थान प्राप्त नहीं हुआ है—

बर्षा हो दूका है तेरा ये, इस विल को तुला डाले,

मेरी फीकी सिपाही को जरा फिर से बिना डाले ।\*

उपर्युक्त पद्यों का काव्य के मास्मीय की छति करता या भीर कवि की संस्कृतनिष्ठ भाषा के प्रति मोह का भी विरोधी वा धरत्य हटा दिया गया।

कवि द्वारा प्रस्तुत परिष्कार-परिष्कार से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि 'उर्मिसा' में जो परिवर्तन उपस्थित किया गया है वह अत्यन्त है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप, इस कृति को कथावस्तु, शक्ति शक्ति तथा माधुर्य-रसमा में कोई प्रकार उपस्थित नहीं हुआ है। धर्म-वैक्य भाष्य-वैक्य, धर्म को दूर करते हुए, सिर्फ काव्य को समाज-संवारने का प्रयत्न किया गया है। ये परिवर्तन प्रभावबुद्धि में सहायक-वाच ही हुए हैं।

१ 'व्यापमूनि', मार्गशीर्ष, संवत् १९८३, पृष्ठ २९३।

२ 'उर्मिसा', पृष्ठ ३०, अध्या ३८।

३ 'व्यापमूनि' मार्गशीर्ष, सं० १९८३, पृष्ठ २९३।

४ 'उर्मिसा' पृष्ठ ३२, अध्या ४०।

५ 'व्यापमूनि' भाद्रपद सं० १९८३, पृष्ठ ३१७।

६ 'उर्मिसा', पृष्ठ ३९, अध्या २२०।

\* 'व्यापमूनि', धारिजन सं० १९८३ वर्ष २, अध्या १ अध्या १, पृष्ठ १३, पृष्ठ १०।

आधार-ग्रन्थ—रामकथा की मूलीय परम्परा तथा काव्य-क्षेत्र में 'उर्मिता' में अभिन्नब  
युगान्तर स्थापित किया है। उसके रचनाकार ने राम-कथा को मूलतः परिवर्द्ध एवं चारण्य  
से दैनन्ते और उस ठान्नुका उत्पन्न करने का उत्कृष्ट प्रयत्न किया है। आधुनिक युग की  
भाव-वेदना और मूलतत्ता को कवि ने यत्न-यत्न प्रस्तुतित किया है। इस प्रकार राम-कथा के  
निर्धारित स्वरूप और दृष्टिकोण से उर्मिता में कन्नड़े धन्तर दृष्टिमोचर होता है। कवि ने राम  
कथा के प्राकृत्य में परिवर्तन उत्पन्न नहीं किया बल्कि उसके प्रति धर्म दृष्टिकोण तथा लक्ष्यस्वरूप  
को गई व्याख्या में धन्तर उत्पन्न किया है। इस सम्बन्ध में, 'नवीन' भी मैं लिखा है—

मेरी इस उर्मिता' में पाठकों को रामायणी-कथा नहीं मिलेगी। रामायणी कथा से  
मया धर्म है कथ में राम-लक्ष्मण-जन्म से समाकर लक्ष्मण-विजय और फिर शत्रुघ्ना-आधमन तक  
की घटनाओं का वर्णन। ये घटनाएँ आठवर्ष में इतनी अधिक सुपरिचित हैं कि इनका वर्णन  
करना मैंने उचित नहीं समझा। इस ग्रन्थ को मैंने विशेषकर मनःस्तर पर होने वाली क्रियाओं  
और प्रतिक्रियाओं का वर्णन बनाने का ह्वास किया है। रामायणीय घटनाओं का राम, सीता  
मुनित्रा वीरय्या और विशेषकर लक्ष्मण पारि के मनो पर मया प्रभाव पड़ा है इन घटनाओं  
के प्रति विश्व प्रकार प्रतिक्रिया हुए, धर्म बन वर्णन ही इस ग्रन्थ का विषय बन गया है। इसमें  
को कुछ कथाभाग है, वह मूलीय है—वर्णनात्मक अर्थात् घटना विवरणालयक नहीं।

मैंने राम जनमन को एक विशेष रूप में देखने और उपस्थित करने का साहस  
रिया है। राम की जन यात्रा मेरी दृष्टि में एक महान् अर्थपूर्ण धर्म-संस्कृति-प्रसार यात्रा  
की। उर्मिता' में लक्ष्मण के मुक्त से जा पड़ बाध मैंने कहलवाई है वह कथाविद् युवावतन  
विचारकारियों को न कहे। पर विदना भी मैं इस राम जन-मन पर विचार करेता हूँ उतना  
ही मैं इस बाध पर हड़ होता आता हूँ कि राम की जन-यात्रा भारतीय संस्कृति-असाध्य  
एक महान् यज्ञ के रूप में थी। १

इस प्रकार कवि ने उर्मिता को सांस्कृतिक मनोवैज्ञानिक तथा मनोमैकादिलो रूप प्रदान  
रिया है और मैं वा-नीन उगादान प्राचीन रामकथा से उसका वैधिय उत्पन्न करते हैं।  
राम-कथा के आधार-ग्रन्थों से वह भी धन्तर रहा है कि 'उर्मिता' को पारिवारिक वातावरण भी  
ब्रह्मण किया गया है। उर्मिता की पुनाउ प्रतिमा संस्कारन के साथ ही साथ कवि ने राम-सीता  
के महान् को निर्धारित नहा प्रदान की है। राम का का धर्म्य तथा मानवीय ढंग से  
प्रस्तुत रिया गया है। धर्मने युग को विवर तथा सुदृष्टिपूर्ण दृष्टि से राम-कथा का मूल्यांकन  
रिया गया है।

उर्मिता' के आधार-ग्रन्थों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—प्रधान  
स्रोत तथा सौत-स्रोत। प्रधान-स्रोत के अन्तर्गत राम लक्ष्मण की कथावृत्त रिया जा सकता है  
द्वितीय कवि ने इस ग्रन्थ के कथा-स्रोतों को विभे है। सौत-स्रोत में उन मानवी का व्यपन  
रिया जा सकता है किन्तु कवि का ब्रह्मण रूप में प्रकाशित रिया और जीवनधर्म के निष्कारण  
में लक्ष्योप प्रदान रिया है।

(क) प्रधान-स्रोत—प्रधान-स्रोत अर्थात् इस दृष्टि के आधार-ग्रन्थों में वा-नीन तथा

—

१ 'उर्मिता' की रचना-वर्णनात्मकता, पृष्ठ ६।

रामायण, कालिदास और तुलसीदास द्वारा, कवि प्रभावित हुआ है। वात्सीकि तथा उनकी 'रामायण' का कवि ने यत्र-तत्र उल्लेख किया है। 'भूमिका' में 'उर्मिला' को जनकमण्डिनी सिद्ध करने के लिए वात्सीकिरामायण के उद्धरण दिये गये हैं।<sup>१</sup> कवि ने उर्मिला-चरित्र के वात्सीकि द्वारा त्यक्त होने पर भी कुछ प्रकट किया है।<sup>२</sup> कवि अपने कथा में धनुर्वज्र का वर्णन नहीं करता है क्योंकि पुरुबीय ऋषि वात्सीकि ने उसका अत्युच्छ्रित चित्रण करके, अपने कवि-जीवन को सार्थक कर लिया।<sup>३</sup> इस प्रसंग में यह धारि कवि का स्मरण करता है।<sup>४</sup>

धारि कवि के पश्चात् अलिदास का स्थान आता है जिनके प्रति कवि के हृदय में अपार भ्रष्टा भी। 'महीन' भी कालिदास के काम्य के बड़े प्रेमी थे। यद्यपि कवि ने कालिदास के किसी शब्द का उल्लेख अपनी इस कृति में स्पष्टतया नहीं किया है परन्तु प्रथमराष्टर से, अरुण तात्पर्य 'रघुवंश' से ही रहा है। अपने धर्मोपदेशार्थ की सम्युक्ति के हेतु, कवि स्व-कथाओं की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहता क्योंकि उसके मतानुसार चरित्र चर्चण में नूतन स्वर प्राप्त नहीं होता है। इसी प्रसंग में, कथा-रस के सम्बन्ध में कवि ने कालिदास का भी सादर स्मरण किया है।<sup>५</sup> 'रघुवंश' में लंका-विक्रम के पश्चात्, पुष्पक-विमान में राम सीता को अपने प्रसंग सुनाते हैं। इसी आधार पर 'महीन' की ने भी सीता-संक्रमण संवाद की परिचयना की है।<sup>६</sup> इसी प्रकार 'शत्रु-संहार' का प्रभाव उर्मिला बिरह बर्णन के पद-श्रुति परिवर्तन प्रसंग पर भी झीका जा सकता है।

संस्कृत में राम-कथा के दो महान् तथा प्रतिष्ठित मायको के अतिरिक्त, कवि ने द्वितीय में राम-कथा के सर्वश्रेष्ठ उदात्त एवं प्रतिपादक मास्वानी तुलसीदास के प्रति भी अपनी धार भावना अभिव्यक्त की है। तुलसी की उर्मिला के प्रति उपासना-वृत्ति के प्रति कवि ने अपना आधिक्य प्रकट किया है।<sup>७</sup> 'रामचरितमानस' के बाटिका प्रसंग धारि के माधुर्य तथा प्रभावोत्पादकता के समझ कवि अपनी कल्पना को हेय मानता है, यद्यपि वह उस प्रसंग को चित्रित करने में कोई शीघ्रता नहीं देखता।<sup>८</sup> कवि 'रामचरित मानस' के अमर-सप्त के चरणों में अत्युत्पूर्वक अभिवादन करता है।<sup>९</sup>

प्रधान स्रोत के अन्तर्गत, कवि ने अपने काव्य में कवियों का ही उल्लेख किया है, परन्तु उनके अर्थों का नहीं। यह उल्लेख भी शक्ति, सम्मान तथा काम्योत्कर्ष के आदर्श से

१. मैंने उर्मिला को 'जनकमण्डिनी' कहा है। कुछ निरर्थों ने सुझे बताया है कि उर्मिला जनकदेव के अनुमताकारणा के राजा कुशध्वज की पुत्री थी। इसके सम्बन्ध में मैंने वात्सीकि रामायण देखी। उससे सुझे ज्ञात हुआ कि सीता और उर्मिला, दोनों जनकदेव की ही पुत्री थीं।

२. 'उर्मिला प्रथम सर्ग, श्रोताहृत, पृष्ठ ९, अंश ३।

३. वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ ६६, अंश २२७।

४. वही, अंश २२६।

५. वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ ७०, अंश २३०।

६. वही, अष्ट सर्ग पृष्ठ २६३, अंश १५०।

७. वही, प्रथम सर्ग, श्रोताहृत, पृष्ठ ३, अंश ४।

८. वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ ७०, अंश २३२।

९. वही, अंश २३२।



निहित है। यह कहना कठिन है कि कवि ने उपर्युक्त महाकवियों के प्रभाव को किस धरा तक पहुंचा दिया है। इस सम्बन्ध में कवि ने भूमिका काव्य प्रवेश पत्र में कहीं भी विस्तार के साथ कुछ भी नहीं लिखा है। मेरा अनुमान है कि उमिमा में मोलिकता का अधिक स्थापना प्राप्त होने के कारण यह प्रभाव एक सीमा तक ही माना जा सकता है। बालगीक के राम की उदारता बालिदास का प्रेयोरुह्य तथा तुलसी की कवि में अवश्य ही कवि के मानस में रमण किया होगा।

(क) गोल-श्लोक—गोल-श्लोक के प्रयोगों में उन कवियों के प्रभावों को परिमणित कर सकते हैं जिन्होंने कवि की कथाकृति तथा जीवन दर्शन का प्रकारान्तर से प्रभावित किया हो। ऐसे ग्रन्थों में उत्तररामचरित कुर्यमासा सम्प्रदाय रामायण भी महत्वपूर्ण गीता और पुराणा का समाहित किया जा सकता है। गीता का छोड़कर इन ग्रन्थों का कवि ने कहीं भी उल्लेख नहीं किया है। राम-कथा के प्रभुते प्रथम होने के कारण सम्भवतः इनका भी किसी न किसी मात्रा में प्रभाव पड़ा हो।

नवभूति का कल्प-रस का महाकवि माना गया है। उत्तररामचरित में व्याप्त कल्प रस के सहस्र नवीन जो भी कल्प रस का महसूस प्रदान करते हुए उसमें व्यक्तिक व्यक्तित्व करते हैं।<sup>१</sup> उमिमा को भी कवि ने कल्प की मूल के रूप में पहुंचा दिया है।<sup>२</sup> उत्तररामचरित कवि के वैष्णव संस्कारों के निकट भी उभय स्थित होता है। इस दृष्टि से कवि स्वयं प्रभावित था।<sup>३</sup>

राम-कथा में प्रायः चित्रलेखन-परम्परा को भी कवि ने प्रथम प्रदान किया है। महाकवि नवभूति ने 'उत्तररामचरित' में चित्र प्रदर्शन द्वारा पूर्व रामचरित की घटनाओं का संकेत कराया है। कवि नवीन ने भी उमिमा से आलेखन के रूप में सफल को चित्रित कराकर उनके वियोग की भूमिका का निर्माण किया है। नवीन जो भी कवि प्रतिभा ने चित्रलेखन के माध्यम से व्यक्तिक कलात्मक तथा मूलन रूप उत्पन्न किया है।<sup>४</sup>

शाबाय दिव्याक-भूत 'कुन्त्यामा' का भी उमिमा पर प्रभाव बननाया गया है।<sup>५</sup> यद्यपि इन दोनों ग्रन्थों में कथा-साध्य नहीं है फिर भी गम्भीर है कवि की वैचारिकता पर एतदा प्रभाव पड़ा हो। कुर्यमासा नाटक में वैष्णवी बननाम का घातना है जो कि उमिमा की राम-कथा के सीमा से बाहर है।

सम्प्रदाय रामायण का 'रामचरितमानस' पर भी प्रभाव पड़ा था। इस रूप का रामायण पत्रावलिग्रन्थों में महाकवियों द्वारा है और हमें वैष्णवदर्शन के आधार पर राम चरित का प्रतिपादन किया गया है।<sup>६</sup> नवीन जो रामायणानुयायी न हो कर बल्लभानुयायी

१ 'उमिमा' अक्षय सर्मा, प्रोफेसर, पृष्ठ २, पृष्ठ ३।

२ कवी, प्रथम सर्मा, प्राचन, पृष्ठ ६ पृष्ठ ५।

३ था बालाचरण विद्यादी बालपुर से हुई प्रत्यय में (११९ १२९९) में जान।

४ 'उमिमा', दिव्याक पत्र पृष्ठ ६८, पृष्ठ ७८।

५ भी बल्लभानुयायी द्वारा जान।

६ भी बालिदास कुर्ये—'रामचरित', पृष्ठ २६४।

ये। उनकी बेरान्त-वर्धन में भी प्राप्ता थी। यह निश्चित नहीं कहा जा सकता कि कवि कहीं तक इस ग्रन्थ से उपबृत्त हुआ। सम्भवतः विधिष्ट प्रभाव नहीं धरित किया जा सकता।

‘श्रीमद्भगवद्गीता’ का कवि प्रत्यक्ष स्यासक था। उसका जीवन-वर्धन इस ग्रन्थ से काफी प्रभावित हुआ है। बतक के व्यक्तित्व में कवि ने गीता के पुरुषों को समाहित बताया है।<sup>१</sup> कवि ने ‘गीता’ की यह पंक्ति भी उद्धृत की है।<sup>२</sup>

कमलैव हि संसिद्धिमालिप्सता जनकाद्ययः।<sup>३</sup>

‘उर्मिता पर पुराणों का प्रभाव भी धाँसा जा सकता है। उसके कथा-वस्तु के कल्पित प्रसंग पौराणिक आख्यानों से गृहीत हैं यथा पान्धार राज की कथा।<sup>४</sup>

इस प्रकार ‘उर्मिता’ के आचार-ग्रन्थों की विवेचना करने पर, हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि कवि ने भले ही वस्तुगत प्रभावगति ग्रहण न की हो परन्तु भावगत प्रभाव वैचारिक सामान्यतः प्रबल ही प्राप्त थी। कवि ने अपनी कल्पना-शक्ति तथा आदर्श के प्रमि-प्रेत से, नूतन स्थितियों की उद्भावनाएँ अधिक की हैं और इसी कारण वह, रामायणी कथा के चरित चरण के प्रसंगों से अपने को पर्याप्त सुख रचता है।

नामकरण—सामान्यतया किसी कृति के नामकरण का आधार पात्र, बटना, मनोवृत्ति, समस्या प्रकृति स्थान होता है। आचार्य निम्बनाथ ने महाकाव्य के लक्षणों का निरूपण करते हुए, महाकाव्य के नामकरण के सम्बन्ध में निम्नलिखित निर्देश प्रदान किया है—

कथैवृत्तय वा नाम्ना नायकस्यैतरस्य वा।

नामास्य सर्वोपादेय कथया सर्ग नाम तु।<sup>५</sup>

एतदर्थं साहित्यवर्णकार के मतानुसार प्रस्तुत कृति के नामकरण में कोई नीकिय छुट्टिकोचर नहीं होता। कवि ने नायिका के नाम के आधार पर अपने ग्रन्थ का नामकरण किया है जो कि वास्तव-सम्मत है। हिन्दो में यह पद्धति प्रचलित भी है। ‘कामायनी’<sup>६</sup> ‘गुरबर्हा’<sup>७</sup> ‘पार्वती’<sup>८</sup> ‘मोघ’<sup>९</sup> आदि प्रबन्धकाव्यों के नामकरण इसी प्रणाली के पुरस्कर्ता हैं।

कवि ने अपने प्रबन्धकाव्य का नामकरण ‘उर्मिता’ करके, उर्मिता के चरित्र को सर्व-प्रधान महत्त्व प्रदान कर दिया है। कुछ जो ने भी अपने अपरिसमाप्त काव्यकाव्य का नामकरण ‘उर्मिता’ ही किया था और ‘हरिमोघ’ भी ने भी। संकेत के विषय में यह कहना मया है कि

१ ‘उर्मिता प्रथम सर्ग, पृष्ठ ६१, सूत्र १८३।

२ वही पृष्ठ ६१।

३ श्रीमद्भगवद् गीता, अध्याय १, श्लोक, २०।

४ ‘उर्मिता प्रथम सर्ग, पृष्ठ ११ ३४, सूत्र ४०,

५ ‘साहित्यवर्णन’ पृष्ठ परिच्छेद, श्लोक ३२१।

६ श्री जयसंकरप्रसाद-कृत।

७ श्री गुणकविह्व द्वारा रचित।

८ श्री रामानन्द तिलक-कृत।

९ श्री परमेश्वर द्विवेक द्वारा रचित।

वदि बह (साकेतकार) नवीनता ही बाह्य तो इस ग्रन्थ का नामकरण 'उर्मिता' करता । उर्मिता नाम देकर कवि अपना ध्येय छोटा बना लेता और तब यह एक सम्प्रदाय मात्र हो जाता ।<sup>१</sup> परन्तु 'नवीन' को मे इस कृति का 'उर्मिता' नामकरण कर, न तो अपने क्षेत्र को ही सीमित किया है और न राम-सीता का ही विस्मरण किया है । उर्मिताकार ने लिखा है कि इस व्यास से मेरी मारती सीता-राम और उर्मिता-सकल का गुण गा सको-इसो में मैं उसको सार्वभूता मानता हूँ ।<sup>२</sup> यह निदिबत है कि कवि ने राम-सीता की अपेक्षा सकल-उर्मिता को अधिक महत्व प्रदान किया है । डॉ० चक्रवर्तिका दुबे ने 'सावेत' के विषय में लिखा है कि राम क्या है उर्मिता का माय्य इस भाँति लिखा हुआ है कि उसे छोड़कर कवि भागे बह नहीं सकता । अस्तु उर्मिता प्रमुख पात्री बनकर भी प्रमुख नहीं बन पाती और कवि को बीच का मार्ग प्रहण करना पड़ता है । बह प्रकल्प काम्य को 'सावेत' कहकर समिहित करता है, जिससे न तो उर्मिता को प्रधानता मिस पाती है न राम-नया को बीच रूप ।<sup>३</sup> कम से कम उर्मिता को यह स्थिति नहीं हो पाई । इसका सुख बालेण कवि का स्पष्ट सहृदय तथा निदिबत मार्ग-धनुसरण रहा है ।

कवि ने 'उर्मिता' में उर्मिता की प्रमानता, परिमा एवं महत्ता क विषय में, प्रारम्भ से ही स्पष्ट संकेत देने प्रारम्भ कर दिये हैं । कवि उते ही अपनी मतिव समर्पित करता है ।<sup>४</sup>

इस प्रकार 'नवीन' को मे अपनी कृति के नामकरण के प्राचाम्य तथा महत्ता को प्रमाणित भी किया है । उन्होंने लिखा है कि 'माता उर्मिता के स्तवन भी साससा मेरी जीवन-सिन्धी रही है ।' इस प्रकल्प काम्य के द्वितीय सर्ग<sup>५</sup> 'चतुर्थ सर्ग'<sup>६</sup> 'पंचम सर्ग'<sup>७</sup> और षष्ठ सर्ग<sup>८</sup> भी बाहु-उर्मिताचरित्तमत्-पल्लवस्तु हैं । प्रथम की सुमित्रा<sup>९</sup> और प्रथम सर्ग<sup>१०</sup> तथा तृतीय सर्ग<sup>११</sup> उर्मिता के आराध्य देव 'भीतकमलुचरित्तार्यलमरते' हैं । एतदर्थ नामकरण की उद्युक्ता इस रूप से भी सङ्ग ही ब्रिड हो जाती है ।

डॉ० नयेन्द्र ने जो बात 'सावेत' के विषय में लिखी है, वह प्रामाण्य 'उर्मिता' पर

१ डॉ० कमताकान्त वाठर—वैदिकीकरण गुप्त अर्थ और काम्य, महाराष्ट्र, साकेत पृष्ठ ४१४ ।

२ 'उर्मिता' भीतकमलुचरित्तार्यलमस्तु, पृष्ठ ३ ।

३ वाठरद्वयी के पुन कोन और उनका विकास महाराष्ट्र का उदभव और विकास, साकेत पृष्ठ ७४ ।

४ 'उर्मिता' प्रथम सर्ग, प्रोक्ताहम, पृष्ठ ४, पंक्त ७ ।

५ सर्ग, पृष्ठ १६६ ।

६ सर्ग, पृष्ठ १६६ ।

७ सर्ग, पृष्ठ १६६ ।

८ सर्ग पृष्ठ ६१६ ।

९ सर्ग पृष्ठ ३ ।

१० सर्ग पृष्ठ ७२ ।

११ सर्ग, पृष्ठ १४१ ।

भी प्रयुक्त की जा सकती है कि साकेत में जाकर राम और सीता की कहानी प्रधानतः उर्मिता की कहानी बन जाती है और उसी रूप में उसका विकास और संवर्धन (राम कथा की पृष्ठ-भूमि पर) होता है।<sup>१</sup> सिर्फ़ अन्तर इतना ही है कि 'साकेत' में उर्मिता को राम-कथा के सम्बन्ध में देखा गया है जब कि 'उर्मिता' में उर्मिता के सम्बन्ध में राम कथा का प्राकृतन किया गया है। 'उर्मिता' नामकरण करने के कारण 'नवीन' जो जो अपने काव्य में कतिपय विशिष्टताएँ उत्पन्न करनी पड़ी है।

प्रस्तुत नामकरण के फलस्वरूप, कवि ने अपनी काव्य-कथा का समारम्भ धर्मोष्मा से न करके, जनक के जनपद से किया है। वह जनकपुर की मगर-गुपमा, नामिक जीवन, प्रासाद शिल्प तथा स्वस्थ एवं पुनोत् परिवेष्ट के गुण माता है न कि साकेत नगरी के। उसमें साकेत औरम श्रीराम के पिता महाराज बरहम की गरिमा का नहीं, प्रत्युत् बिदेह-नखला उर्मिता के पिता जनक की महिमा का प्रतिपादन है। राम-संभरण की छिपु-श्रीका के स्थान पर सीता उर्मिता की मनोहारिणी करलवाओं का भाव्यात है। राम-सीता के स्थान पर कवि की कल्पना 'प्राम' शकमल-उर्मिता या उर्मिता के साथ ही रखी है। कवि ने ऐसे प्रसंगों को ही लिया है जबवा ऐसी नवीन उद्भावनाएँ की हैं जिनका सम्बन्ध उर्मिता के साथ रहा है। परिणाम स्वरूप, कवि को रामायणी-कथा के अनेक प्रसंगों को परिव्यक्त भी करना पड़ा है। मित्रिता तथा प्रवच दोनों ही स्थानों पर, कवि को उर्मिता को ही प्रधानता देनी पड़ी है। उर्मिता के नामकृत प्रथमा प्राधान्य पर, सीता या प्रथम कोई पात्र ने प्राबाध नहीं पहुँचाया है। अभी तक उर्मिता के चरित्र को बिदेह-वेरना की पृष्ठभूमि में ही धाँका जाता रहा है, परन्तु यहाँ 'नवीन' भी ने उसके चरित्र का पूर्ण चित्र उपस्थित किया है और उसे जीवन की पीठिन में प्रकृत किया है। इसीलिए, समग्र कथाचक्र के केन्द्र में उर्मिता ही प्रतिष्ठित है। अभी तक की राम-कथा की नामिका समबन्धी सीता, के समानान्तर कवि ने उर्मिता को बाँड़ा किया है और उसे इसी कारण स्वयं प्रकृत प्रधान किया है। उर्मिता की उर्मिता में उसके जीवन की यात्रा के अनुभव का ही उद्घाटन मान नहीं है, प्रत्युत् जीवन का विसास तथा प्रखर पक्ष भी सुखर होकर हमारे समक्ष प्राया है।

प्रस्तुत नामकरण के कारण, कवि अपनी कृति के समग्र सर्गों में अपनी चरित्र नामिका के दो ध्यान रहगा है परन्तु अन्तिम सर्ग में धार्मिकता की धर्मव्यक्ति और श्रीराम के प्रथम स्वरूप के प्राकृतनार्थ अल्प काल के लिए वह उर्मिता और उसके वर्तमान प्राबाध धर्मोष्मा को छोड़कर, संका या पहुँचती है। संका में उर्मिता के न होने पर भी उर्मिता-प्राणपति<sup>२</sup> तो प्रथम ही है। साथ ही कवि प्रवचपुटी का भी बार-बार उल्लेख

१ डॉ० गोमन् 'साकेत : एक अध्ययन', पृष्ठ ६।

२ उड़ी बसो बल कोसलपुर तक बढ़ती ही चाणुपति से,  
सुन हँस कहती है कुछ, सीता भी उर्मिता प्राण-पति से।

—'उर्मिता' पृष्ठ सर्ग, पृष्ठ ५६२, पृष्ठ १५०।

करता है।<sup>१</sup> मयवान राम भी लंका की राजसभा में, अपने सभी वक्तव्य के प्रारम्भ में उमिषा का स्मरण करते हैं।

यह स्मरण सप्रयोजन तथा धर्मयुक्त है। लंका में भी राजसु-विजयोपरान्त उमिषा का स्मरण उल्लेख महान तथा बलिदान की परिभाषा का संकेत है। इसके प्रतिरिक्त लंका से धर्म की धोर प्रस्थित हो जाने पर, लजमण-सोता धर्मर का प्रमुख विषय भी उमिषा-स्मृति बनता है। इस प्रकार यद्यपि कथाकथ का रंग रंग वा धोड़े समय के लिए भले ही लंका हो जाता है धोर उमिषा का साकार स्पष्टित्व इस विजयोस्वाध, विहायसीकन, सन्देश तथा हाथ-पट्टिास पूरित विचार से तिरोहित हो जाता है, फिर भी उद्यम की महिमायम छाया तथा साध रूढ़ी है धोर कर्म की स्मरना, जो कि साधन तथा सुभाषी है, अपने साथ उमिषा के स्मरण-उत्सव की तथा-धर्मशा प्रकुम्भित रखती है। कवि यथाप्या को धोड़कर भी, उमिषा को नहीं छोड़ता है। 'नवीन' बाबूते तो इस कथा का मुख्य बना सकते थे परन्तु ऐसी स्थिति में राम की मयवता, उनके जीवन-वर्धन की नियोजना वर्तमान युग वेदना की श्रेष्ठ यद्विम्बित, रामरथा के उरसंहार तथा धर्म की सांस्कृतिक धूमिका धोर लजमण-मुख से उमिषा की धर्मरथ परिभाषाकन से ही बंधित हो जाते जिसके परिणाम स्वल्प काम्य का धर्मरथ प्रोम्बध पथ धनुसम्य ही रह जाता धोर काम्य की सीमाएँ भी संकीर्ण मयवा दुर्बल रह जातीं। साथ ही, कवि के मनो प्रसंगोद्भायता की मय भी बिलीर्ण नहीं हो पाती। परोप-नृतालों की पङ्कलता की कथा-काम्य के लिए धनुसयुक्त तथा धोरबाधकर्म होती है।

यदि 'उमिषा' नाम न रखा जाता तो रामायणी-कथा का धनुसर्जन करना पड़ता धोर धरने धाधार-धर्मों के धीर्धर्मों के धरव नामकरण करना धरवावस्यक हो जाता। इसके फलस्वरूप रामायणी-कथा धर्मरथी धरने धारण को कवि न तो क्रियान्वित ही कर पाता धोर न उमिषा की धरण-धरना ही कर पाता। धरने धरि-नायिका की धरण-धरिष्ठा करना ऐसी स्थिति में धरन्तु धुप्पर हो जाता। काम्य में इतनी धनुस मात्रा में धीर्धरता भी नहीं था जाती। इसलिए 'उमिषा' नाम देने के परिणाम स्वरूप वह नहीं एक धोर धरने धर्मरथ लजमण की धनुसि कर धरा है, बहाँ धर-कथा की सांस्कृतिक ध्यायना को भी धरुततापूर्वक धरनुन कर धरा है। उमिषा की काम्यपथ उल्लेख की धरवारणा तथा कथा के सांस्कृतिक एवं धर्मोद्देशान्तर का भी धरिधरना 'उमिषा' नामकरण से ही धरमध धी। धरनी धरिष्ठा तथा धुप-धरना का धरन्तुधरिष्ठा धरनी धाधार पर धरुधरिष्ठा होता धरिष्ठा होता है। कवि के धरिष्ठा

- १ (क) धरनुसयोरो से लंका तक जो,  
धनी एक पथ की रक्षा  
धरिष्ठा होकर धरिष्ठा-धरणा  
धरिष्ठा धरनुस रक्षा है।

—'उमिषा', धरनुस, पृष्ठ ५२०, धर १

- (ध) धीर्धर धरनी हो लंका है, लंका है धीर्धर धरनी,  
धरनुस धरणा धरिष्ठा-धरिष्ठा धरिष्ठा धरनी धरनी ?

—धरनी, पृष्ठ ५१३, धर २२।

तथा ककशा पुरित म्पिकित्त से" राम-कथा के इसी रूप की ही सम्भावना की जा सकती है, अन्य रूप को नहीं। जमिना के चरित्र-भाषन में वहाँ इस कृति की प्रथम पाँच सर्ग प्रदान किये, वही राम-यात्रा के सांस्कृतिक तथाम्बेप में अन्तिम सर्ग प्रदान किया।

'जमिना' नामकरण से, लक्ष्मण के नामरत्न की हालि हुई है। परन्तु कवि का लक्ष्य ही जमिना को प्रमाणता देना था और लक्ष्मण की काम्यगत उपेक्षा का निवारण उसका ज्ये नहीं था। उसने तो प्रपत्ता समग्र ध्यान तथा काम्य-कौशल, जमिना की उपेक्षा दूर करने तथा उसके बीबन-विद को उमराने में प्रयुक्त किया है। साथ ही, 'साकेत' में 'जमिना' नामकरण न करने पर या, साकेत नाम देने पर भी, लक्ष्मण के नामरत्न पर प्राथ पड़ोही है। एतदर्थ 'जमिना' नामकरण इस विद्या में बहुत दूर तक हानिप्रद दृष्टिगोचर नहीं होता। आचार्य नन्दबुडारे बाबुपेयी ने 'साकेत' के विषय में लिखा है कि 'साकेत' नामकरण के कारण अर्धे सर्वाष्टि सम्पूर्ण कथा बर्णन प्रदान हो गई है और घटनाएँ प्रत्यक्ष के स्वात पर परोक्ष बन गई हैं।<sup>१</sup> 'जमिना' में भी, स्वयं कवि के मतानुसार, जो कुछ कथा भाग है, वह सूचित है— बर्णनात्मक अर्धे घटना-विवरणरणात्मक नहीं।<sup>२</sup> जब कवि का राम-कथा के अनुवर्तन करने का सर्वथा ज्ये ही नहीं था, एतदर्थ, समग्र घटनाओं या विविध कथाओं के बर्णन प्राक्य का नहीं प्रक्य ही नहीं उठता।

इस प्रकार सर्वतोमुखी दृष्टिकोण तथा विचार-सरणियों के आकार पर नामकरण की सार्थकता सारणमिता, घोषित्य-तथा प्रासंगिकता, काम्यकृति तथा उसके ज्ये के सर्वथा अनुकूल प्रतीत होती है। कवि ने प्रपत्नी प्रबन्ध कृति में, नामकरण से अत्यन्त धार्मिकों तथा प्रवार्थों का समुचित रूप में, सफलतापूर्वक निर्वह किया है।

### प्रबन्ध-शिल्प

सर्व-त्रय—रम्पु एम० रिस्सन ने सभी देशों के महाकाव्यों को एक समान बताते हुए यह कहा है कि 'बाहे पूर्व हो या पश्चिम, उत्तर हो या दक्षिण किन्तु मानव भाव सर्वत्र एकज्ये होते हैं और यथा महाकाव्य वहाँ कहीं भी निर्मित होया, उसका स्वरूप सर्वत्र बर्णनात्मक एवं सुम्बरवित्त होया और उसके चरित्र एवं कर्ष्य महत् होये वही मय्य होती, उसके कर्ष एवं पात्रों के चरित्र भावों को और भावसर होने और उसका कथानक सर्वत्र मत्तर्षपाओं से संबोया हुआ होया।'<sup>३</sup>

१ आचार्य नन्दबुडारे बाबुपेयी— कृष्ण साहित्य : बीसवीं छात्रावली, पृष्ठ ४२।

२ 'जमिना', मूमिका।

३ "Yet heroic poetry is one, whether of East or West, the North or South, its blood and temper are the same, and the true epic, wherever created, will be a narrative Poem organic in structure, dealing with great actions and great characters, in a style commensurate with the lordliness of its theme, which tends to idealise these characters and actions and to sustain embellish its subject by means of episode and amplification." W. H. M. Dixon—English Epic and Heroic Poetry, chap I page-24

करता है।<sup>१</sup> नपवान् राम भी लंका की राजसभा में, अपने लम्बी बचपन के प्रारम्भ में उमिता का स्मरण करते हैं।

यह स्मरण सप्रयोजन तथा सर्वयुक्त है। लंका में भी, राजसभ-विनयोपपाद्य उमिता का स्मरण उसके महत्त्व तथा बलिदान की गरिमा का संकेत है। इसके प्रतिरिक्त लंका से प्रत्यक्ष की ओर प्रसिद्ध हो जाने पर, सभसभ-सीता सम्बाध का प्रमुख विषय भी उमिता-स्मृति बनता है। इस प्रकार यद्यपि कथावस्तु का रंग मंच वा बोर्डे समय के लिए मजबूत ही मंच हो जाता है। ओर उमिता का साक्षर व्यक्तित्व इस विनयोपपाद्य, विहायसोक्त सम्बन्ध तथा इस परिच्छाद्य पुरित विनयपद से सिरोद्धृत हो जाता है, फिर भी उसकी महत्त्वमय छाया सदा साक्षर रहती है। ओर कवि की कल्पना, जो कि प्रासंगिक कथा सुनाती है अपने साथ उमिता के स्मरण-उत्सव को सदा-सर्वदा प्रफुल्लित रखती है। कवि प्रयोभ्या को छोड़कर भी उमिता को नहीं छोड़ता है। 'नवीन' बाइते तो इस कथावस्तु को सुस्पष्ट बना सकते थे परन्तु ऐसी स्थिति में राम की प्रसन्नता उनके जीवन-वर्षन की निवोचना कर्तव्यता युग-वैतना की भेद्य प्रविश्याति, रामकथा के जनसंहार तथा उसकी सांस्कृतिक भूमिका ओर व्युत्पत्ति-सुख से उमिता की प्रसन्नता गरिमा साकल्य से ही वर्णित हो जाते जिसके परिणाम स्वरूप काव्य का प्रत्यक्ष प्रोत्साहन पद्य अनुपपन्न हो रह जाता ओर काव्य की सीमाएँ भी संकीर्ण बनना पुरस रह जातीं। साथ ही कवि के नवीन प्रसन्नता-वर्षन की प्रभा भी निरीक्षण नहीं हो पाती। परदेख-वृत्तान्तों की महत्त्वता भी कथा-काव्य के लिए अनुपयुक्त तथा औरबाधक्यक होती है।

यदि 'उमिता' नाम न रखा जाता तो रामायणी-कथा का अनुवर्तन करना पड़ता ओर अपने प्राधार-वर्षनों के शीर्षकों के सहस्रय नामकरण करना अत्यावश्यक हो जाता। इसके फलस्वरूप रामायणी-कथा सम्बन्धी अपने प्राधार को कवि न तो सिध्यान्वित ही कर पाता ओर न उमिता की बरस-वर्षना ही कर पाता। अपने बरिष्-नामिका की प्रास-प्रतिष्ठा करना, ऐसी स्थिति में प्रत्यक्ष दुष्कर हो जाता। काव्य में इतनी प्रचुर मात्रा में मौलिकता भी नहीं था पाती। इसलिए 'उमिता' नाम देने के परिणाम स्वरूप वह बड़ा एक ओर अपने प्रतीक्ष्य लक्ष्य की सम्मृति कर सका है, बड़ा राम-कथा की सांस्कृतिक व्याख्या को भी उपजतापूर्वक प्रस्तुत कर सका है। उमिता की काव्यपद ज्येष्ठा की निवारणा तथा कथा के सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक रूप की विवेचना 'उमिता' नामकरण से ही सम्भव की। अपनी मन्त्रि तथा युग-वैतना का समन्वय-विन्दु इसी प्राधार पर एकत्रित होता दिखाई देता है। कवि के विद्वेही

- १ (क) अथवापुरी से लंका तक जो, बनी एक पथ की रक्षा जिस्से होकर धर्म-सम्पत्ता में बलिष्ठ जन-पद देखा।

—'उमिता', पद्यतारा, पृष्ठ ५२०, पंख ६

- (ख) कोमल नगरी ही लंका है, लंका ही कोमल नगरी, जाहद हमा जल-राशि-निमग्नित, निज कहीं वाली, पथरी ?

—वही, पृष्ठ ५११, पंख २२।

तथा कव्या पुरित व्यक्तित्व से उम-कथा के इसी रूप की ही सम्मानना की जा सकती है, अन्य रूप को नहीं। उमिता के चरित्र-भाषन में वही इस कृति को प्रथम पाँच सर्ग प्रदान करने वाले बग-नामा के सांस्कृतिक तत्त्वान्वेष में घटित सर्ग प्रदान किया।

'उमिता' नामकरण से लक्ष्य है मायत्व की इति है। परन्तु कवि का उद्देश्य ही उमिता की प्रधानता देना था और लक्ष्य की साम्यवत् उपेक्षा का निवारण, उसका ध्येय नहीं था। उसने तो अपना समग्र ध्यान तथा काव्य-श्रेयस, उमिता की उपेक्षा दूर करने तथा उसके जीवन-विषय को उभारने में प्रयुक्त किया है। साब हो, 'साकेत' में 'उमिता' नामकरण न करने पर या 'साकेत' नाम देने पर भी, लक्ष्य के मायत्व पर भाव पहुँची है। एतदर्थ 'उमिता' नामकरण इस विद्या में बहुत दूर तक इतिप्रद इतिगोचर नहीं होता। आचार्य मन्मथसारे बाबुपेयी ने 'साकेत' के विषय में लिखा है कि 'साकेत' नामकरण के कारण प्रथम सर्गादिष्ट सम्पूर्ण कथा बर्णन-प्रधान ही गई है और बटनार्थ प्रत्यक्ष के स्वरूप पर परोक्ष ध्यान गई है।<sup>१</sup> 'उमिता' में भी, स्वयं कवि के मतानुसार, जो कुछ कथा-भाष है वह गृहीत है— बर्णनात्मक आदि बटन-विबरणप्रधान नहीं।<sup>२</sup> वह कवि का उम-कथा के अनुवर्तन करने का सर्वथा ध्येय ही नहीं था, एतदर्थ, समस्त बटनाद्यों या विविध कथाओं के बर्णन प्राक्म का यही प्रयत्न ही नहीं उठता।

इस प्रकार सर्वोत्तमी इतिगोचर तथा विचार-सरणियों के आधार पर, नामकरण की सार्थकता, सारसिद्धता, धौकिय तथा प्रार्थविकता, वाच्यकृति तथा उसके ध्येय के सर्वथा अनुकूल प्रतीत होती है। कवि ने अपनी प्रथम कृति में, नामकरण से उत्पन्न दामित्यों तथा प्रथाओं का समुचित रूप में सफ़सठापूर्वक निर्वाह किया है।

### प्रबन्ध-शिल्प

सर्ग-बन्ध—कव्यु एम० डिक्सन ने उद्यो देशों के महाकाव्यों को एक समान बताते हुए यह कहा है कि "बाह्य पूर्व ही या परिषद उत्तर हो या दक्षिण किन्तु मानव भाव सर्वत्र एकरूप होते हैं और उच्चता महाकाव्य जहाँ कहीं भी निमित्त होना, उसका स्वल्प सार्व बर्णनात्मक एवं सुम्बन्धित होना और उसके चरित्र एवं कर्षण महत् होवे, ऐसी शक्य होवे उसके कर्षण एवं पात्रों के चरित्र आदर्श की ओर अग्रसर होवे और उच्चता कथानक सर्वत्र समकथाओं से संज्ञोया हुआ होना।"<sup>३</sup>

१ आचार्य मन्मथसारे बाबुपेयी— हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी, पृष्ठ ४२।

२. 'उमिता', मूमिका।

३ "Yet heroic poetry is one, whether of East or West, the North or South, its blood and temper are the same, and the true epic, wherever created, will be a narrative Poem, organic in structure, dealing with great actions and great characters, in a style commensurate with the lordliness of its theme, which tends to idealise these characters and actions and to sustain embellish its subject by means of episode and amplifications." W. H. M. Dixon—English Epic and Heroic Poetry, chap. I page 24



सुखवस्तु एवं सुविन्यस्त कथानक प्रबन्धकाल्य की वृत्तमिति हुया करता है । महाकाव्य में सुसंबन्धित बीजन्त कथानक होना चाहिए । महाकाव्यों का सर्वबन्ध होना अत्यावश्यक बताया गया है । सबों की संख्या के सम्बन्ध में सब आचार्य एक मत नहीं हैं ।<sup>१</sup> आचार्य बाबपेयी जी के मतानुसार, प्रबन्धप्रकटा और सर्वबन्धता को पर्याप्त उच्च तक माना जाता है ।<sup>२</sup> आचार्य लक्ष्मी का भी निर्देश है—'सर्वबन्धो महाकाव्यमुच्यते तत्र लक्षणम् ।'<sup>३</sup>

'उमिता' कवि की सर्वबन्ध रचना है और इसमें प्रबन्धत्व दृष्टिगोचर होता है । इसका प्रबन्ध-प्रवाह सम्बन्धित या फट्ट नहीं है । कई स्थानों पर शैथिल्य पाया गया है । उसमें महाकाव्योचित विस्तार का अभाव है । महाकाव्य की कथा न केवल महान् ही होनी चाहिए, अपितु वह स्पष्ट भी होनी चाहिए ।

कवि ने 'उमिता' में रामायण-कथा के केवल उन्हीं पंखों का चयन किया है, जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उमिता तथा उनके प्राण-मति लक्ष्मण से है । 'उमिता की कथावस्तु सः' सर्पों में बलिष्ठ है । उमिता को प्रवान स्वान प्रवान करने के लिए कवि ने परम्परागत रामकथा से सम्बन्ध बटनाओं में नवीन उद्भावनाएँ की हैं ।

भारम्म—अपनी असीम लक्ष्मी की पूर्ति के लिए, कवि ने राम-कथा का पर्याप्त अक्षय किया है और इसका संक्षिप्तकरण कर दिया गया है । वह उमिता की कल्पनी बनकर हमारे समक्ष आती है । एतदर्थ, सत्कर्म भारम्म अयोध्या या राम-लक्ष्मण की वास्तविकता की अपेक्षाओं से न होकर, सीता तथा उमिता की अदृश्यता से होता है ।

'उमिता' के प्रथम तीन सर्ग भारम्म के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं । प्रथम दो सर्गों में उमिता की वास्तविकता से लेकर विवाह तक की घटनाओं को कथा-सूत्र में पिरोया गया है । तृतीय सर्ग में, राम के ब्रह्ममन की प्रतिक्रिया का विस्तार से वर्णन है । इसमें उमिता के मानसिक मन्त्र अन्तर्गत विरोध, अनुमन, अन्तर्निष्ठ भावि का अन्तिक विकास के रूप में चित्रण किया गया है । साथ ही उसे प्रियतमों की समवेचना अपेक्षा करायी गयी है ।

'नवीन' भी उमिता के जीवन का पूरा चित्र देना चाहते थे । इस हेतु, उनके पास दो विकल्प ही थे । रामायणी कथा का ग्रहण या त्याग । 'नवीन' भी ने इसके विकल्प को अंगीकार किया । प्रस्तुत-स्वरूप में रामायणी कथा न हो, परन्तु रामकथा तो ही हो । रचनाकार ने उसे उमिता के चरित्र की केन्द्र में रखकर नियोजित किया है । यहाँ तक उमिता के आस्वात का सम्बन्ध है, वह हृदयकार की अपनी उद्भावना है । रामकथा के प्रसंग प्रस्तुत-काल्य में वा

१ डॉ० सम्भूतानन्द, 'हिन्दी महाकाव्य का स्वल्प विकास', पृष्ठ ११० ।

२ डॉ० प्रतिपालसिंह—बीतवी अताही के महाकाव्य, पृष्ठ १६ ।

३ आचार्य लक्ष्मणसारे बाबपेयी आधुनिक साहित्य, पृष्ठ १६ ।

४ आचार्य लक्ष्मी—'काव्यावर्त', प्रथम परिच्छेद, श्लोक १२६ ।

५ "He takes some great story which has been absorbed into the prevailing consciousness of his people." L. Abercrombie 'The Epic', page 39

६ An epic must be a good story 'The Epic', page 49

तो निर्देय रूप में पाएँ हैं वा फिर प्रतिष्ठिया के रूप में। इस प्रकार उनमें कल्पना और मनोबिज्ञान का सर्वोत्तम समन्वय प्राप्त होता है।

रामायणी-कथा में बालकाण्ड की कथा को यहाँ सीता-उद्दिष्टा के सम्बन्धना स्थापन के रूप में परिचित्र कर दिया गया है। अनुपम, विवाह, राम्यामियेक की तैयारियाँ केकेपी मन्मथ सम्भार विचार भेद, दण्ड-मरण, चित्रकूटयमन, मरुत-विनाय, चित्रकूट-समा आदि कथाओं को कवि ने स्वाग दिया है।

मध्य—कथा के मध्यम भाग में कतुर्प एवं पंचम सर्ग परिचित्रित किये जा सकते हैं। इनमें विद्योप-उद्दिष्ट धाकृतता की सीमांसा है। चिरह सीमांसा विषयक पंचम सर्ग, कथा-उद्दिष्ट के इति-कोश से उपरु-सा प्रयोज्य होता है। 'साकेत' के सम्बन्ध में जो बात आचार्य मन्मथनारी बाबूजी ने लिखी है, वह 'उद्दिष्टा' के पंचम सर्ग पर भी चरितार्थ की जा सकती है कि मध्यम सर्ग में उद्दिष्टा के विनाय का बचन करत हुए कवि के काव्य के कथा-उद्दिष्ट को छोड़ बैठे हैं।<sup>१</sup>

दोनों सर्गों में चिरह पर चिन्तन तथा काव्य के इति-कोश से विचार किया गया है। महाकाव्य का सार-स्वरूप यहाँ पर ही प्राप्त होता है। काव्य के इति-कोश से, पंचम सर्ग सर्वोत्कृष्ट सर्ग है परन्तु कथा का विकास यहाँ उठता ही विविस हो गया है।

पर्यवसान—प्रस्तुत प्रबन्ध-कृति का अन्तिम धरबा पठ सर्ग बस्तु-बोधना का पर्यवसान का उदाहरण है। छठे सर्ग में रामण-विजय, विभीषण राम्यामियेक, लंका की राजसभा, अयोध्या प्रत्यावर्तन तथा उद्दिष्टा-साधन विज्ञान की घटनाओं को अंकित किया गया है। इस सर्ग में कवि ने राम के माध्यम से अपने धारकों तथा विश्वासों की अविश्वसना की है। इसी सर्ग में ही भाकर, उद्दिष्टा की कथा एवं राम कथा का अरसंहार भी इति-कोश होता है।

परन्तु के मतानुसार, महाकाव्य का विषय एक होता चाहिये। इसमें वैविध्य रह सकता है परन्तु इसके तल में एकता का सूत्र अनुस्यूत रहना चाहिये और कथा के धारि, मध्य और अन्त में स्पष्ट होने चाहिये।<sup>२</sup> इस आधार पर, उद्दिष्टा की कथा के धारि मध्य तथा अन्त में स्पष्ट है परन्तु कथानक में प्रबन्धानकता का वैविध्य प्राप्त होता है। कवि ने अपनी कथा की स्पष्ट रूप से विभाजित कर लिया है। यहाँ उठने प्रथम सर्ग में अपनी काव्य-नायिका के अन्तर्गत के अन्तर्गत जीवन का चित्रण किया है, यहाँ द्वितीय सर्ग में उसके अयोध्या के वैवाहिक जीवन की अन्तर्गत प्रथम की है। तृतीय सर्ग में अन्त-मन की घटना का मनोबिज्ञानिक रूप प्रस्तुत किया है जिसका उसकी काव्य-नायिका के आगामी चिरह-काल से परिणत सम्बन्ध है। वे समय सर्ग तथा अन्तर्गत निष्कर्ष, कथा तथा उद्दिष्टा के जीवन की सबसे बड़ी साधना के लोचन का केन्द्र-स्थल की ओर पहुँचते हैं। कतुर्प एवं पंचम सर्ग के केन्द्रीय भाग के अन्तर्गत पुनर्निर्माण की घटना ही काव्य-कथा तथा उद्दिष्टा के जीवन की सर्वोपरि उपस्थिति तथा अन्त प्राप्ति है।

१ आचार्य मन्मथनारी बाबूजी : आधुनिक साहित्य, पृष्ठ २१।

२ "It should have for its subject a single action whole and complete, with a beginning, a middle and an end"—'The Poetics of Aristotle edited with critical notes and a translation by S. H. Butcher, page 21 23

इन तीन स्तरों तथा संशुद्धित सोपानों से होकर उमिषा का धारकान प्रबहमान होता है। इस काव्य में कथा में सूक्ष्म रूप का रस कर लिया है और भीकनादसे, विधोप-वर्धन मत्-प्रतिपादन भावि में प्राकाम्य प्राप्त कर लिया है।

प्रासंगिक वस्तु—प्रत्येक महाकाव्य में आधिकारिक और प्रासंगिक वस्तु रखा करती है। उमिषा में मरुण उमिषा के वृत्त की आधिकारिक कथा-वस्तु का स्थान प्राप्त हुआ है। आश्वीय दृष्टिकोण से उमिषा की समस्त कथा-वस्तु उपाय कथा-वस्तु है।

'उमिषा' की प्रेम-कथा का स्वस्व प्राप्त हुआ है। उसमें सत्य-उमिषा' के संयोग वियोग की कथा का ही प्राधान्य है। प्रासंगिक कथा-वस्तु के रूप में राम-सीता की कथा घाटी है। इससे प्रासंगिक कथा-वस्तु की परम्परागत परिभाषा को कोई छति नहीं पहुँची है, क्योंकि कवि ने राम तथा सीता की सम्पत्ता का स्वस्व नहीं किया। साथ ही प्रासंगिक वस्तु में आधिकारिक कथा-वृत्त के मार्ग में अक्षरोंप उत्पन्न नहीं किये हैं। रामकथा की दो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना बन-गमन एवं संका-विजय की कवि ने अक्षरोंप नहीं की है। उसे अधिक नास्वर तथा प्रभावोत्साहक बनाने की चेष्टा की गई है।

कार्य और प्रभाव की अन्विति—आध्यात्मिकता रामायण की कथाओं का मुख्य कार्य राखण-रूप रखा है। परन्तु उमिषा के कथागत तथा 'नवीन' की दृष्टिकोण के अनुसार, इसे प्रमुख कार्य की संज्ञा से विमुक्ति नहीं किया जा सकता। 'उमिषा' की प्रेम-कथा में, मिलन वियोग तथा पुन-संयोग के तीन सोपान प्राप्त होते हैं। कथा में उमिषा के वियोग को सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त हुआ है जिसका निराम संयोग ही हो सकता है। अतएव 'उमिषा' का प्रधान-कार्य उमिषा-नरुण मिथन ही सिद्ध होता है। पठ सर्व की घटनाओं में इस कार्य-सिद्धि में सहायता प्रदान की है। संका-विजय और हर्ष के बनबास की परिसमाप्ति विभीषण का राजतिलक, अयोध्या-आमनस्य आदि की घटनाओं में इस प्रमुख कार्य को अक्षरोंप माने में सहायता घटकों के रूप में कार्य किया है। इसके अतिरिक्त 'उमिषा' के प्राय सभी पात्र उमिषा की ओर ही आकृष्ट हैं और उनके अतिरिक्त में सहायक बनकर आते हैं। सभी प्रसंगों में उमिषा का स्मरण किया जाता है और उसे प्रमुखता प्रदान की गई है। इस प्रकार 'उमिषा' में कार्य-सिद्धि की उत्तमिषि होती है।

प्रभाव की अन्विति के दृष्टिकोण से उमिषा की अतिरिक्त मूर्ति को ही प्रासंगिकता तथा दीर्घत्व प्रदान किया जा सकता है। कवि की समस्त भावनाएँ, अक्षरोंप तथा व्यक्तित्व उसी के ही रूप बनाने-सँवारने अतिरिक्त कराने और उसे दीर्घत्व पर आध्यात्मिक करने में जुटी है। उसने रामायणी कथा के परम्परागत सीता-विजय के अनुरूप ही अपनी नायिका के अतिरिक्तियों पुत्र के विविध-गण की पत्तन प्रकृतिक किये हैं। इसमें कवि को सर्वाधिक लक्ष्यता प्राप्त हुई है। इस प्रकार इस काव्य में सहायक व मनोविज्ञान के साथ ही साथ अतिरिक्त की भी प्राकाम्य प्राप्त हुआ है। कवि अपने अन्वित ध्येय के प्रभाव-अतिरिक्त में पूर्ण सफल हुआ है। उमिषा के अतिरिक्तों विविधमुखी संस्थापना तथा बन-यात्रा के सांस्कृतिक मूल्यांकन के आशावरण तथा प्रभाव को धारका को कवि ने सहायतापूर्वक स्थापित कर दिया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वस्तु-कृति अपने आन्वित कार्य की अन्विति तथा उत्तमिषि आन्विति से आगुल है।

कार्याविस्था— उमिता की रचना परिपाटी के मार्ग पर नहीं हुई और न यह 'नवीन' को जैसे विरोधी तथा अस्मितकारी कवि से अपेक्षित ही था। अतएव प्रस्तुत-काव्य में सन्धि तथा ध्वन्याधर्मों का अन्वेषण दुष्कर है। फिर भी तृतीय सर्ग में गर्म सन्धि देखी जा सकती है वही विज्ञाना अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचती दृष्टिगोचर होती है और कृति के प्रधान कार्य अन्वेषण-उमिता मित्रन में अक्षरोंप उत्पन्न होता प्रतीत होता है। अन्तिम सर्ग में रावण-विजय के पश्चात् फल प्राप्ति में पूर्णाशा अनुभव होने लगती है और अन्त में अन्वेषण एवं उमिता का अन्वेष हो जाता है।

सामान्यतया हम कह सकते हैं कि रावण विजयोपरान्त संका के उत्कृष्ट जीवन के चित्रण से ही प्राद्वशा का भीगण्य हो जाता है और विनीकण क राम्यारोहण से नियतासि समझी जा सकती है। रामरुपा के चित्रण प्रादि से मित्रन निश्चित रूप चारण कर जाता है। इस स्थिति में अयोध्या परावर्तन पुष्पक विमान में अन्वेषण सीता सम्वाद प्रादि भी सहायक होते हैं। तदनन्तर अय-सिद्ध हो जाता है। कार्यसिद्धि के रूप में ही इसी सर्ग का अन्त अन्वेषण उमिता पुनर्मित्रन के चित्रण द्वारा होता है। कार्यसिद्धि ही काव्य इति भी के सूत्रों को विखेरती है। सूत्र बिखरकर पुनः सिद्ध जात है। कवि यदि पुनर्मित्रन प्रसंग का विस्तार के साथ अखण्ड करने सम जाता तो काव्य को परिसमाप्ति कदापि प्रमत्तियु नहीं बन पाती। कवि की अकृतता तथा प्रभावोत्साहकता अस्मित भावजन तथा अन्तक प्रस्तुतीकरण में निहित है।

अन्वेषण की अन्वेषि के समग्र प्रदर्शनों तथा आख्यानों को अन्वेषण बना देने के कारण कार्याविस्था की अन्वेषाएँ सुस्पष्ट एवं स्वस्व रूप में नहीं जा सकती हैं। मात्र ही रामरुपा के विषय में, कवि ने पिष्टपेपित परिपाटी का अनुवर्तन नहीं किया। वह अन्वेषण चरम का हामी नहीं। इस नये साक्षीय स्थितियों को काव्य में प्रथम प्राप्त नहीं हुआ।

निष्कर्ष—निन्सी भी रचना का सुस्थांजन उसकी समसामयिक परिस्थितियाँ तथा प्रदर्शनों की पीठिका में करना समीचीन तथा युक्ति-युक्त प्रतीत होता है। 'नवीन भी की काव्य रचना के प्रधान अंगुर अस्मित कल्याण तथा अणुम है जिनसे प्रस्तुत कृति का प्रबन्ध निम्न उद्भूत हुआ है।

कमारक दृष्टिकोण से 'नवीन भी अनुसूति की स्वच्छ अस्मित के अनुगायक है। व स्वयं धारण को चित्रण की अन्वेषा स्पन्द का कवि अन्वेषण मानते हैं।' अनुसूति की यह अन्वेषण ही 'उमिता के प्रबन्ध-अन्वेषण की महत्वपूर्ण विधि है। वह इसीसिधे अपने काव्य को 'स्पन्द मात्र' हो मानता है।

उमिता की कथा को प्रबन्ध-अन्वेषण से अन्वेषित करने में 'नवीन भी के वा अन्वेषण है—(क) उमिता का अन्वेषण और सर्वांगीण अन्वेषण और (ख) राम-रुपा के अन्वेषणों की नवत सांस्कृतिक व्याख्या प्रस्तुत करना। राम-रुपा की प्रधान अन्वेषण है—(क) राम-अन्वेषण तथा (ख) राम द्वारा अन्वेषण का परिचय। प्रस्तुत काव्य-अन्वेषण की सीमाओं में द्वितीय अन्वेषण नहीं आती। उमिता के जीवन तथा अन्वेषण-अन्वेषण का अन्वेषण प्रथम अन्वेषण से है। इसीसिधे हम देखते हैं कि उमिता के सर्वांगीण अन्वेषण-अन्वेषण के लिए कवि ने

१ 'उमिता' अन्वेषण सर्ग ६१८।

२ वही प्रथम सर्ग, प्रोस्ताहन, अन्वेषण ४, अन्वेषण ६।

प्रथम पाँच सर्ग प्रदान किये और राम-कथा की सांस्कृतिक तथा सुदीन व्याख्या, अन्तिम सर्ग की निवाचना की गई। इस प्रकार कवि ने अपनी सर्वोपरि तथा सर्वप्रधान काव्य को ही काव्य के अविच्छेद्य भाग में प्रसार दिया है। इसमें प्रबन्ध तथा मीठ खेती का सुन्दर सम्मेलन प्राप्त होता है। प्रथम सर्ग से तृतीय सर्ग तक प्रबन्ध भास प्रबहुमान है। अतुल्य एवं वैचय सर्ग में पीठ-दीप्ती मुखर हा गङ्गी है और पष्ठ सर्ग में व्यथित विरहीक्षण ने अपना उपोवन बना दिया है।

इस प्रकार राम-कथा में से उमिता के चरित्र को ही लेकर कवि यतिहीन हुआ है। इस प्रकार, एक पारव को लेकर चरित्र से सामान्यतया काव्य में अष्टकाव्यत्व की प्रकृति उत्पन्न हो जाती है, परन्तु यहाँ हम देखते हैं कि 'नवीन' को ने उमिता के जन्म से लेकर विवाह संयोगवत्ता के प्रेम-विवाह पूर्ण वृत्त, पति-विभोग अथ्य चोख बर्णों की विरह-साधना पुनर्मिलन आदि विषयों को बृद्धि कर, काव्यी शीर्षावधि तथा लम्बी कथा को काव्य के आश्रितन में ले लिया है। इसलिये ऐसा मङ्गो हा पाया है।

डॉ० नोबिन्दराम दामा ने सिखा है कि यहाँ तक कथावस्तु के विकास का सम्बन्ध है 'उमिता' की कथावस्तु में प्रबन्धकाम्योचित घटना-विस्तार विविध प्रसंगों में सम्बन्ध निर्वाह और कथानक में आराधाहिकता नहीं पाई जाती। प्रथम तीन सर्गों में तो कथावस्तु का निर्वाह कुछ अल्प हुआ है किन्तु अन्तिम तीन सर्गों में कथावस्तु विकसित हो गया है। अतुल्य और वैचय सर्ग में कैवल्य विरह बर्णों को स्थान दिया गया है। उनमें घटनाओं का सर्वथा अभाव है। वैचय सर्ग में ब्रह्मपाया को अपनाते हुये कवि ने दोहा और सोरठा काव्य को स्थान दिया है। यहाँ तो प्रबन्धात्मकता सर्वथा नष्ट हो गई है। पष्ठ सर्ग पृथक ही प्रीति प्रदान करता है। डॉ० प्रबन्धी के मठानुसार, प्रबन्ध में जिस अर्थ की आवश्यकता होती है, घटनाओं परित्विचियों एवं मन-स्वियियों के जिस अर्थ अथवा मूल्या की आवश्यकता होती है उसका प्रस्तुत-अर्थ में प्रयोग कम से कम हुआ है।<sup>१</sup>

'उमिता' में प्रबन्धात्मक विषयक कतिपय कोषों के होते हुए भी अनेक गुण भी हैं। उसके कथानक के काव्य-मीठत्व को इनमें नव निर्माण के परिशेष में देखना चाहिये न कि कल्पितो पोषण की दिशा में। द्विती में प्रथम बार इतने विचर तथा भास्वर रूप में उमिता की प्राण वतिष्ठ तथा प्रपुष्ट आरिजिक विकास को शीर्षस्थान प्राप्त हुआ। इस कथावृत्त में कवि ने नवनवोपेवधारिणी प्रसंगोद्भावनताओं द्वारा अपनी उर्वरत नुम्ब नुम्ब का विवर्धन किया है। कई पुराने प्रसंगों को नूतन नूतिका से धरित किया है और नये रंग भरे गये हैं। मनोहारी कथोपक्रम उच्चारवर्तन प्रकृति विचरण मन संघर्ष काव्य कमनीयता आदि को देखते हुये, उमिता के प्रबन्ध-दिग्गज विषयक दोष अल्प है। यद्यपि प्रस्तुत कृति में रामकथा के विस्तृत, उपेक्षित तथा परिवर्तक प्रसंगों पात्रों तथा कतिविधियों पर ही अधिक प्रकाश डाला गया है, परन्तु फिर भी रामायणीय कथा के किसी भी प्रसंग की अवधानता या अवमुम्भन

१ डॉ० नोबिन्दराम दामा 'द्विती के आधुनिक महाकाव्य', एकारण अन्वय, काव्य महारण्य, उमिता, पृष्ठ ४२६।

२ डॉ० देवीचकर अरवली—'कल्पिता', उमिता, मुद्र, १९६०, पृष्ठ ६२।

दृष्टिगोचर नहीं होता। कैकेयी के महत्त्व की धाना त्रिगुणित लक्षित होती है। रामायण के राम तथा सीता की उत्कर्षबोधिता तथा पावनता में रचमान प्रस्तर नहीं था पाया है, बल्कि उनकी प्रभा और अधिक प्रभाबोत्सादक प्रतीत होती है। इसलिए, इस काव्य में रामायण के प्रमुख द्रव्यों का यौगल्य, बोध की सृष्टि न करके नूतन चरित्र-सृष्टि नबल उद्गमना सांस्कृतिक सर्वेक्षण तथा मर्मस्पर्शी काव्य-सूजन के षटकों का विधान तावता है।

'उर्मिला' के प्रबन्धविश्लेष की एक उत्कृष्ट विशेषता, यह भी परिस्फित होती है कि समग्र काव्य के प्रधान ध्वनयनों के राज-नय में प्रब्रवान षटको में प्रबरोध उत्पन्न करने प्रबवा काव्य-बन्ध को मंग करने की चेष्टा नहीं की। साकेत में यह बोध उभर कर आ गया है। प्राचार्य नन्ददुसारे बाबनेयी ने लिखा है कि "यदि मैमितीघरण को घनाकांक्षित प्रसंगों का विशेष न बालकर केवल लक्ष्मण-उर्मिला के चरित्र निर्माण में अपनी पूरी प्रतिभा सञ्चिहित करते तो साकेत की समीक्षा कुछ दूसरे ही दृष्टियों में की जाती परन्तु वैसा सम्भव नहीं हो सका।" नवीन की 'उर्मिला'-चरित्र की ओर एकोन्मुख तथा एकाग्र चित्त से गतिपोस है। 'साकेत' में राम की कथा उर्मिला की कथा का धमिसूत करती दृष्टिगोचर होती है। 'उर्मिला' के प्रबन्ध विश्लेष में और बाहे प्रनेकानेक बोध हों परन्तु इस बोध को कवि ने अपनी पास फटकने भी नहीं दिया है।

इस प्रकार 'उर्मिला' में प्रबन्ध-बारा के दृष्टिस्य शास्त्रोक्त स्थितियों की अनुपसर्ग्य या पस्यप्यता और मानवीय पक्ष की अपेक्षा वर्णनामास की अधिक सुन्दरता के होते हुए भी भाषा बपद की नूतन काव्य तथा धमिनय साहित्यिक प्रतिमान को श्रेष्ठ परिचर्या प्राप्त होती है।

वस्तु-विन्यास—प्रथम सर्ग—कवि की कल्पना राजप्रासाद में प्रविष्ट होती है जो कि सीता-उर्मिला की वैरिनीयों की अहति से गुंभायमान हो रहा है। प्रारम्भ में कवि ने उनके रूप, शीर्षक धमंकर धावि का हृद्यमहारी बर्णन किया है। राजा जनक के प्रांपण में दोनों बहिर्ने श्रेयारण रहती है। उर्मिला कनिष्ठ होने के कारण सदा विद्यासा करती है और सीता प्रब्रवा होने के कारण समाधान की चेष्टा करती है। सेस ही सेस में वे उपवन में बसी जाती है और वहाँ कवि ने प्रकृति का विदेह लसताओं के सापेक्ष में, बर्णन किया है। बाध ही बाध में परस्पर क्लान्ती रहने की हीड़ लय जाती है। उर्मिला के प्राप्रह तथा बड़ी होने के कारण सीता ही सर्वप्रथम इस प्रतिस्पर्धा का समारम्भ करती है।

सीता अपनी क्लान्ती में पान्धार जनपद के धाक्ष्माण का प्रस्तुत करती है। वह पान्धार रैय की साक्ष्यमयी प्रकृति का लक्षित चित्र बोजती है जिसे सुनकर उर्मिला भी विह्वल हो जाती है। कवि ने बन्ध-जीवन के चित्रों के माध्यम से मावी जन-यात्रा की धूमिका बना की है जिसमें सीता की मूर्ति प्रतिस्कारित होती है और उर्मिला कात्कामित ही रह जाती है।

गान्धार नरय के एक पुत्र तथा पुत्री रहती है। पुत्री धरयन्त सुन्दरी थी। पड़ोस के धनार्थ राजा ने उसे पुत्र-बन्ध बनाने के लिए, गान्धार पर धाक्ष्मण कर दिया। राजा तथा राजकुमार रणाण में लसबस से बन्धी कर लिये गये। राजकुमारी ने स्वर्ण बीर्यपना का

क्य बारगुजर अपने देश को जापुठ किया। प्रार्थ-बालाएँ तथा सैनिक-गण युद्ध में वृद्ध पड़े अन्तर्ग राजा का परास्त होता पड़ा और यान्धार मरेज तथा राजकुमारी को मुक्ति प्राप्त हो गई। इस प्रकार सीता की कहानी में प्रकृति-विचलन के साथ ही साथ बीरत्व तथा शौर्य के गुण भी सम्मिलित हैं।

प्रथम उर्मिला की बारी आई। वह भी बन्धु-शत्रु के एक पाशवान को प्रस्तुत करती है जिसमें कपोत-कपोती की पाशा निहित रहती है। वह भी बन्धु-प्रवेश के मनोरम विचित्र चित्रित करती है जिन्हें सुनकर सीता, उर्मिला को 'जन देवी कम्बारखी' की ध्यावि से व्यंजित करती है। यह ता समय का ही व्यंग्य रहा कि बन्धु-द्वेषों की मधुर बायिका और साक्षात्कृत उर्मिला प्रवृत्त होने पर जन देवी बनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं कर सकी और अपनी पाशवायिका को कपोती का प्रतिरूप मान बतकर ही रह गई।

कपोत अपनी प्राण-प्रिया कपोती के समक्ष कुछ काल के लिए, स्वयं आत्म-चिन्तन हेतु, निर्जन वन में जाने की बात करता है। कपोती बुझी होकर स्वयं साथ जाने की बात का आग्रह करती है, परन्तु कबूतर इसे प्रस्वीकार कर जाता जाता है। अन्ततः विन-राज प्रतीक्षा करते-करते वह कबूतर की बियोप-बद्धि में सम्मीलित हो गई और उसने हहसोक्-सीता पूरी कर दी। सीता अधिकार रक्षा तथा कर्तव्य पालन में पूर्ण विश्वास रखती है।<sup>१</sup>

सीता तथा उर्मिला का चरित्र दो विन्दुओं पर समानान्तर विकसित होता दृष्टिगोचर होता है। प्रस्तुत कथा सम्बन्ध कवि के प्रबन्ध-शिल्प का उत्कृष्ट दृष्टान्त है। इसमें माती बटनाओं का पूर्ण संकेत दोनों के चरित्र की तुलना एक साथ भक्षित है। कवि ने चरित्रों के विकास की बारीक रेखाएँ प्रस्तुत कर दी हैं। सीता गम्भीर है, उर्मिला चंचल है। एक छद्म है परन्तु दूसरी प्रतिधाम कोमल। कपोत-कपोती की कथा का 'नाटकीय व्यंग्य'—(Dramatic Irony) प्राये बसकर चरित्रार्थ होता है।

प्राये बसकर यही प्रसंग दोनों के विवाह का कारण-सूत्र बनता दिखाई देता है। जब वे दोनों उपवन से पुन्य चयन के कार्य को समाप्त करके जनकाश्रम में माँ के पास पहुँचती हैं तो दोनों में विवाह उत्पन्न हो जाता है। सीता जीवन में शौर्य, कर्तव्य तथा धारता को महत्ता प्रदान करती है, परन्तु उर्मिला निष्ठा करुणा तथा सहिष्णुता को।

इसके परचात् की बटनाएँ, माँ के प्रस्तुत उपदेश को उर्मिला के जीवन में चरित्रार्थ करती बहिर्गीत होती है। उर्मिला नाना प्रकार की जिज्ञासाएँ करती है। वह अपनी माँ से पूछती है कि तुम पिता के धामे पर मुन्कराती क्यों हो और लोभलास उनके गले में माता क्यों पहनाती हो? प्राये वह पति तथा विवाह के प्रति भी अपनी अस्तुष्ट्या प्रकट करती है। माँ समाधान का प्रयत्न करती है कि जनकदेश जा जाते हैं। बात ही बात में राजा-रानी अपने दोनों पुत्रियों के विवाह की बात तय कर लेते हैं और विवाह हो भी जाता है। विवाह सम्बन्धी बटनाओं का संकेत मर ही कवि देता है।<sup>२</sup>

इसके परचात्, कवि की कल्पना तीव्र गति से साकेत के उल्लसित बातावरण में बिहार

१ 'उर्मिला', प्रथम सर्ग, पृष्ठ ५, छन्द ११८-१२।

२ 'उर्मिला', प्रथम सर्ग, पृष्ठ ६२, छन्द १२६।

करने लगती है। वहाँ पहुँचने के पूर्व वह बिबा-समारोह की एक हल्की झलक प्रकट ही हो जाती है। पट-परिर्बतन की प्रथम सूचना देकर कवि पूर्व पीठिका का निर्माण कर देता है।<sup>१</sup>

इस प्रकार प्रथम सर्ग रोचकता मर्मस्पर्शता कथा-कमनीयता तथा चिन्प-उत्कर्ष से सम्पन्न है। अठारह एक के बाद एक, क्रमागत सर्गों से निकलती जाती जाती है। कहीं मो प्रस्वामिकता नहीं आ पाई है। प्रकाश-आरा अपने पूर्ण सौरभ्य के साथ भागती दिखाई पड़ती है। धानत हृद्यों के सुख भी विगत प्रतनाशों में से कभी-कभी अपना प्रचगुच्छन खोल देते हैं। कवि की सफ़लता यहीं अपना बिज्ञात करती है।

द्वितीय सर्ग—बारों बधुओं के स्वागतार्थ मारी प्रयोध्या का प्रकुम्भ वातावरण बिरक उठता है। सभी दूर उत्सव मनाये जा रहे हैं। कीर्तसेन्द्र बरारण की राजधमा में गणिकाएँ मन्दर नृत्य करती हैं। इस प्रकार राज तथा जन-समाज धानश्रोत्साह से भूम उठता है। सरजू के घट पर एक बिज्ञात जनसमारोह का आयोजन होता है। इस समारोह में नगर भर की नारिणी प्रति-प्रति से उर्मिता के सौन्दर्य बाक-बातुम्प्य प्राधि पर टिप्पणियाँ करती हैं। वहाँ से कवि की कल्पना बरारण के बीनबपूर्ण भव्य प्रासाद में प्रविष्ट होती है, वहाँ बारों बधुओं की धामा फैली पड़ी है। प्रासाद में प्रवेश प्राप्त करने के पूर्व कवि सरजू को भी यहाँबलि प्रपित करता है।

राज-प्रासाद में अपनी प्यारी बहू उर्मिता को प्राप्त कर, सुमिषा जूती नहीं समा रही है। उर्मिता में 'नखमुपमा प्रेमी शीर्षक बिन्न का निर्माण किया है। उसका प्रथम देवर बधुपन के लिए प्रयत्न रहता है। दोनों में कला के प्रसंग पर बिबाद उठ खड़ा होता है। कला तथा कविता कला के स्वरूप तथा धाबिर्भाव पर उर्मिता अपने बिद्वल बिचार प्रकट करती है। प्रक्रमण्टर से कवि ने कला बिपयक अपने बिचारों की प्रविष्ठा की है। बिन्न के स्पष्टीकरण करते हुए उर्मिता बताती है कि धाबेटक और कोई नहीं स्वयं सफल है।<sup>२</sup>

यहाँ पर भी नाटकीय व्यंग्य (Dramatic Irony), का बारीक तन्तु सज्जिम है। यह एक प्रकार से नाबी बियोग के प्रति कवि का एक कलागत संकित है। नाबी गिरबयारिम्बिका प्रति के भी इसमें बर्धन प्राप्त होते हैं।<sup>३</sup>

इसके पश्चात् देवर, नन्द तथा मामी के हास-परिहासमय-संवाद की सृष्टि की गई है। इन लोक-श्लोकों में कथा प्रसर होती रहती है।

बिन्ध्य-जनपाशा के सौन्दर्य में कवि प्रकृति का प्रत्यक्ष मर्मस्पर्शी तथा जहीपक रूप प्रस्तुत करता है। बसन्त का वातावरण जीवन तथा धारकता की सृष्टि करता है। बन्ध प्रवेश में बनी उदक में बिज्ञात का वातावरण उत्पन्न हो जाता है।<sup>४</sup> लक्ष्मण को नाबीजीवन में चौध वर्ष तक निद्रा से ही पुत्र करना पड़ता है।

१ 'उर्मिता', प्रथम सर्ग पृष्ठ ७, पृष्ठ २३३।

२ वही द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १०४, पृष्ठ १०६।

३ वही पृष्ठ १०४, पृष्ठ १०७।

४ वही, पृष्ठ १२९, पृष्ठ १३१।



इसी जिलासमय बाताबरण में, दोनों में प्रेम की मांससता और धाम्धारिकता पर विचार उठ खड़ा होता है।<sup>१</sup> अन्त में दोनों एक समान विन्दु पर एकत्रित हो जाते हैं कि एक-दूसरे के लिए धारम-विसर्जन में ही साम्यत्व-जीवन का सार निहित है।<sup>२</sup> इस प्रकार मिलन और धारम-विसर्जन की पूर्ण-सीद्धिका पर ही कवि मायी विरह का विवेचन करता है। इसके बाद वे एक-दूसरे में पुनः-मिल जाते हैं।

प्रस्तुत वन-यात्रा विशिष्ट अभिप्राय से प्रकृत की गई है। प्रथम बात तो बड़ी है कि इससे सक्रमण की वन-यात्रा का पूर्वमास प्राप्त हो जाता है। द्वितीय बात सान्त्वना की है। इस वन-असंग-भोजना से कम से कम उर्मिला में यह श्रेय एवं सन्तोष विद्यमान रहेगा कि उसने भी कभी अपने प्रियतम के साथ वन-विहार किया था। द्वितीय सर्ग के अन्त में कवि धामायी बटनाधो की सुचना देकर, कथा-तारत्व्य को विकसित कर देता है।<sup>३</sup>

प्रस्तुत सर्ग में भी प्रबन्ध कथा का उत्कृष्ट परिचय प्राप्त होता है। मायी बटनाधो का कवि, कथानुसंग संक्षिप्त देता जाता जाता है। हास-परिहास तथा साम्यत्व-जीवन के मधुर बिजों की सन्निव-सीद्धिका पर धामायी सर्ग के वन-भ्रमण की सेवारी का कथा-वृत्त, निवृत्ति के निर्मम धर्म्य ही प्रतीत होने लगती है।

तृतीय सर्ग—तृतीय सर्ग वेवना कथना, अन्तु तथा अन्तर्द्वन्द्व से प्रारम्भ होता है। कवि ने रामवनगमन की पुच्छर घटना को पुच्छसुमि का निर्माण किया है। फिर भी यह शोक, उर्मिला का अपना शोक है, वहाँ सर्वसाधारण का हृद्यकार नहीं है।

'नवीन' की ने राम-कथा का प्राकसन सांस्कृतिक बरातस पर किया है, पुनः भी की मति पारिवारिक संस्थाओं में नहीं। राम का वनवास बखिल में धर्म-संस्कृति के प्रचारार्थ था, एतदर्थ इस कृति में धर्मोष्मा के विधाप का हृद्य अनुपलब्ध है। सक्रमण दुष्ठी उर्मिला को विस्तार से समझते हैं और अपने वन-भ्रमण के समग्र ध्येय तथा तत्त्वों का विरतेवण करते हैं।

उर्मिला विद्रोह की बह्वि से प्रबन्धित हो जाती है। वह फिर परीक्षिता तथा फिर प्रतीक्षिका होते हुए भी कैकेयी के धर्म्य को पुनःचाप नहीं सहन कर सकती। वह अपने गृह के धर्म्य से संबंध करने को अधिक महत्त्व प्रदान करती है, अपनेआपत्त बाहर धर्म-संस्कृति के प्रचार से। उसके इस तेजोहीन विप्लव में, भारतीय संस्कृति की बयोसिप्ता तथा दुर्बलता मानो साकार रूप धारण कर बैठे हैं। वह विद्रोह तथा विद्रोही को धार्ष्ट्या करती है।<sup>४</sup> इस प्रकार उर्मिला मायावेद्य में अपने विचारों का प्रकल करती है और अन्त में अपने विद्योव के मर्म पक्ष का भी उद्घाटन करती है।

सक्रमण अपने प्रस्तुतर में उर्मिला के विद्रोही स्वर की पुष्टि करते हैं, परन्तु कैकेयी

१ उर्मिला, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १३१ अन्व ६४।

२ वही, पृष्ठ १४३, अन्व ६४।

३ वही पृष्ठ १६५ अन्व २।

४ वही, तृतीय सर्ग पृष्ठ १५२, अन्व १६३।

के प्रति उसके आशय तथा शोषारोपण का अनुमोदन नहीं करते। उक्त मतानुसार विवेकहीनता केभी के इस बतवाच सम्बन्धी प्रस्ताव में सांस्कृतिक उद्देश्य निहित है। तन्मूल्य पुनः-वापित्व का विवेकपण करते हैं और उक्ति के समस्त अपने अनेक उक्त प्रस्तुत करते हैं। उक्ति का सर्व स्वीकार कर लेती है और महत् सत्य की सिद्धि हेतु, विमोघ-साधना में अपने के लिए पूर्ण उत्साह हो जाती है। तन्मूल्य भी यह अनुमति प्राप्त कर तन्मूल्य-स्युक्ति महत्सुख करने लगते हैं।

इसके पश्चात् सीता-उक्ति संवाच में इसी विषय की बातें बतानी हैं और सीता उक्ति के महत्त्व तथा सहायता करती है। कश्चित्कालीन वातावरण में राम का आत्मगत नूतन विचार-नीतिका का निर्माण करता है। सीताम आत्मगत-बन्ध की सेवा में नामना से कर्तव्य को अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं। उक्ति अपने व्योम के प्रति अपनी समस्त आस्था को समर्पित करती है।

परिवार की इस विच्छिन्न मन्धली में सुमित्रा भी आ सम्मिलित होती है। राम उनकी स्तुति करते हुए, अपनी भक्ति को उनके चरणों में समर्पित कर देते हैं। सुमित्रा-राम-सीता कश्चित् संवाद में निम्न संवाच प्रसिद्धा कर्तव्य संकल्प भावि की वृत्तियों में अपने पस्तक करते हैं। सुमित्रा के प्रति अपनी अनन्य भक्ति-प्रदर्शित कर और अपने महत्त्व लक्ष्य को हृदय में दृढ़तापूर्वक धारण कर राम-सीता-तन्मूल्य की मन्धली बन के लिए प्रसिद्ध हो जाती है।

इस सर्ग में कथा में मनोविज्ञान का मांसस पक्ष उभर कर हमारे समक्ष आया है। कवि ने मन-नामन की घटना के प्रति प्रमुख पात्रों की प्रतिबिम्बों का विचार विवेचन किया है। इनके कई प्रयोजन सिद्ध होते हैं। एक ओर जहाँ सभी पात्रों में उक्ति के प्रति सहानुभूति प्रकट की है और उसके महत्त्व बसिदास की सुकृष्ट से स्तुति गयी है, वहाँ मन-नामन के नूतन कारण भी आशोक में आये हैं और कथा को मनोवैज्ञानिक रूप भी प्राप्त हो गया है। आर्ष-संस्कृति के प्रसार के नूतन-तत्त्व ने मन-नामन की साहकता को स्पष्ट कर दिया है और वातावरण भावना की अनेका कर्तव्य रूपी सूत्रधार के हाथों आता दृष्टियोजक होता है। वस्तुतः सर्ग में प्रबन्ध-विषय का उभार बर्तनीय है।

चतुर्थ सर्ग—चतुर्थ सर्ग में कथा का अन्त है। कवि ने विरह-मीमांसा को सर्व आशान्वय रूप प्रदान किया है। भावना विविधमुपरी होकर उरसामित हो उठी है। उपासना, धर्म, धर्मव्यवस्था प्रभृति अनेक आशान्वय वेदना के सागर में डूबती-उठती दृष्टियोजक होती है। उभय प्रकृति व्यथा से आशुता है।<sup>१</sup>

अन्त में आकर निराकार वातावरण कुछ सागर होता है। कथा के पात्र उभरते हैं। आस-बूझ का अलिखित दर्शन देकर कवि की कल्पना पुनः वेदना के सागर की ओर उन्मुक्त हो पड़ती है।<sup>२</sup>

प्रस्तुत सर्ग में प्रबन्धात्मकता समाप्त हो गई है और कथानक अत्यन्त विरल हो गया है। इसमें प्रबन्धविषय का अत्यन्त अभाव है।

१. 'उक्ति', चतुर्थ सर्ग, पृष्ठ १५२, पं. १९।

२. वही, पृष्ठ १६३, पं. १०३।

काव्य में कबानक का तत्व अत्यन्त सूक्ष्म है जिसके कारण उसके प्रथम शब्दों पर धारण किया जा सकता है। परन्तु ध्यान के बुद्धिवादी युग में प्रबन्ध-शब्दों में घटना की अपेक्षा विचारों को प्रमुखता देना उचित प्रतीत होता है। इसीलिए कवि ने मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक बराबर पर ध्यान-रक्षा की निरन्तर-परवाह है। घटना की अपेक्षा इस कृति में प्रेम-रक्षा तथा चरित्र-शब्दों को अधिक बाणी मिली है। पारिवारिक चित्रों के उद्देश्य रूप भी सांस्कृतिक सुनिका का अधिक निर्वाह किया गया है। वास्तव में इस काव्य की परिभाषा क्लृप्ति मौलिकता में है, जिसके उत्स से नूतन प्रसंगोद्भावनाओं में अपनी प्राकृतियों निर्मित की हैं।

नवीन प्रसंगोद्भावनाएँ एवं विविधता—'नवीन' की नै उर्मिसा की प्राण-मतिष्ठत करने और रामरक्षा को सांस्कृतिक बराबर पर देखने के उद्देश्य से प्रस्तुत शब्दों में मौलिकता का अधिक प्रथम किया है। वास्तव में नवीन-प्रसंगोद्भावनाओं को बितना प्रथम और बितना अधिक स्थान इस प्रबन्ध-काव्य में प्राप्त हुआ है, यह शब्दों पुर्वम है। ये उद्भावनाएँ कवि की मन्वीर शब्दों तथा शीघ्र कल्पना-शक्ति की परिचायिका हैं।

पाचार्य शम्भुदत्तारे बाबनेयी ने 'साकेत' के विषय में लिखा है कि 'ये शास्त्रीय और ऐतिहासिक परम्परा-पासन साकेत' के लिये हानिकर ही हो गये। बीजा हम धारण में यह चुके हैं कि साकेत' का कवि, चित्र के दूसरे पक्षों को बिताने का उपक्रम करता है। पर चित्र के दूसरे पक्षों के लिए उद्ये प्राचीन प्रवचन ईदने की अधिक धारण्यकता नहीं थी। मेघनाद-शब्द के कवि ने जो ऐसा ही किया है। मैत्रिलीशरण की को इतिहास-पुराण शक्ति की अपेक्षा इस प्रवचन पर अपनी कल्पना-शक्ति की ज्योति जगानी थी। पर यहाँ भी उन्होंने सृष्टि की श्रुतताएँ नहीं छोड़ी। 'कहना न होगा कि 'नवीन' की नै धरने काव्य में रामायणी कथा को न धारण-कर यहाँ इतिहास-पुराण का अधिक प्रथम नहीं सिमा यहाँ कवि की श्रुतताएँ को भी छोड़ने का प्रवचन किया। कल्पना-शक्ति से काव्य-रक्षा की ज्योति जगानी पड़ी।

नूतन दृष्टि तथा कल्पना-शक्ति की उद्भावना के कारण उर्मिसा' की तुलना माइकेल मधुसूदन राय की मेघनाद-शब्द से की जा सकती है। यद्यपि दोनों कवियों के इतिहास-प्रवचन गुह्यन समाग में कोई साध्य नहीं दिखाई देता परन्तु जिस प्रकार बास्मीकि ने और बास्मीकि से भी अधिक तुलसीदास ने रामचरित का जलप दिखाते हुए राजसराय रायण को अंधेरे में जाल दिया तब माइकेल मधुसूदन राय न चित्र के दूसरे पक्षों को बर्धित किया। जब समाज में धारण्य की कल्पना बँध जाती है और तब एक निर्बीज और निष्क्रिय धर्मप्राप्त के घेरे में बिरकर धर्मप्राप्त धारण्य करता है तब मतिष्ठत को सँभल करने के लिए कमी-कमी उसे बल देते धरना थोड़ पहुँचाने का धारण्यकता पड़ती है। माइकेल मधुसूदन ने मेघनाद-शब्द द्वारा यहाँ थोड़ पहुँचाने और यहाँ धरना उत्पन्न की। कवि का यह स्वाभाविक धर्म है, काव्य की यह भी एक प्रक्रिया है 'उसी प्रकार उर्मिसा' में भी रामायण के बिसुन शब्द धरना विरल्लत धरने में धरने पर बराबर धरना। तब भी मेघनाद-शब्द के दूसरे पक्ष को बितने लक्षणा-उर्मिसा का

\* पाचार्य शम्भुदत्तारे बाबनेयी—हिन्दी साहित्य की लकी जलाम्बी, साधन, पृष्ठ ५१।  
२ यही, पृष्ठ ४०।

चरित्र बाता है, विस्तार से संकित करता है। 'मिथानाद-वच' ने मिथानात्मक पक्ष (negative side) के उभारने को प्रीर प्थान दिया है, परन्तु 'नवीन' को ने मिथानात्मक पक्ष (Positive side) के उभारों को मूलतः रेखाओं से पुनर्निर्मित किया है। दोनों कवियों ने अपने क्षेत्र में उभर मौलिकता प्रमितन दृष्टिकोण तथा बौद्धिक पहुँच को अपने काम्य-कौशल के मूल-उत्पन्न बनाये है।

'उर्मिसा' में ऐसे कथोपों की प्रवृत्तारणा की गई है जो अनुपूर्व हैं और राम-कथा को पुष्ट बनाती है। इन समग्र उद्भावनाओं में प्राबुलिक युग के प्रभावों को भी बेसा-भरखा जा सकता है। धार्मिक-समाज राष्ट्रीय उत्थान सत्याग्रह-संग्राम बुद्धिपरक दृष्टिकोण सांस्कृतिक पुनर्जागृति मानवजातवादी आचार तथा महिला उत्थान आदि के अनेक बटक मिलकर काम्य की मौलिकता के खेत को ध्वजि प्रयाग करते है।

'कवि नवीन' द्वारा 'उर्मिसा' में उत्पादित मौलिकता विप्यक संश्लों की विवेचना पक्षोन्मुखित रूप में प्रस्तुत की भी सकती है—

(१) राम कथा के अनुगायकों ने जनकपुर का प्राब-उत्थान ही बर्णन काम्य के उपयुक्त समग्र जितनी बेर उनके धाराभ्यदेव राम जनकपुर में रहे। जनकपुर के राज-प्रासादों अन्त-पुरों एवं उसके निवासियों से बेसे उनकी कोई प्रीति ही नहीं थी। जनकपुर के निवासियों में एक नाम सीता ही ऐसी सौभाग्य-सम्पन्न थी परन्तु उनके सौभाग्य-सूर्य का उदय तो तभी हुभा जब श्रीराम का भावमम जनकपुर में हुभा। उर्मिसाकार ने इस दोष का निवारण किया है। उन्होंने जनकपुर के निवासियों, ममन बीबन, बाठावरख आदि का विस्तार से बर्णन किया है।

(२) प्रथम सर्ग में, जनक के प्रसाद-प्रीतण तथा उपजन में बालकेसि-निरत सीता तथा उर्मिसा के काम्य-काल का बर्णन कवि की अपनी शुरु है। यह शेषक तथा महत्वपूर्ण संस राम-कथा के किसी आचार-वच्य में तो क्या 'साकेत' में भी अनुपलभ्य है जिसका उद्देश्य 'उर्मिसा' से साम्य रखता है।

(३) मातृकीय ध्यंय चरित्र की रेखाओं में अन्तर का प्रदर्शन और सीता व उर्मिसा हाउ कइसाई गई प्रायः कल्पित वाचाओं के द्वारा माती घटनाओं के प्रति कलात्मक संकेत प्रदान करना कवि की अपनी उद्भावना है।

(४) जनक और विदेकर जनक-माली के व्यक्तित्व तथा पारिवारिक बाठावरण की लुटि प्रपना अनुपम महत्व रखती है।

(५) कवि ने अमूर्त के महत्व को मूलतः प्रकाश में प्रबसोका है। महाराजा जनक इस बज के बहाने धार्मिक सिद्धियों के खेतों को देखना तथा परखना चाहते है।

(६) द्वितीय सर्ग में सरयू के तट पर प्रबसपुरी की स्नातार्थ एकत्रित नारियों की विविधमुखी उर्मिसा के आनुर्य तथा सौन्दर्य विप्यक टीका-टिप्पणियाँ तथा सरस बार्तासाप हास परिहास को कवि की कल्पनाशक्ति ने ही जगम दिया है। यहाँ साकेतवासियों की प्रतिधियाओं को प्रकट किया गया है। इससे साकेतवासियों की सक्रियता तथा प्रस्तुत कथा में उनकी उपेसा-निवारणा भी सिद्ध हो जाती है।

(७) पशोप्या के राज-प्रासाद में बेबर त्रिपुबन और नगद छात्रा के साथ उर्मिसा का

बासुदेव और लक्ष्मण-उमिता के हाथ परिहास एवं प्रेमाभास से सम्पन्न वाग्मय-जीवन का चित्रण भी मौलिकता की सुधा को धरने छोड़ में छिपाये हुए है।

(८) कवि द्वारा उमिता-लक्ष्मण के विन्यासल पर्यटन की योजना को अर्थ देना और उसे राम-सीता-लक्ष्मण की भाषी बन-बाधा की सामिप्राय पीठिका के रूप में रखना उलकी नूतन उद्भवावता का प्रतीक है।

(९) 'कमा' की लेकर उमिता-लक्ष्मण और 'प्रेम' को लेकर उमिता-लक्ष्मण के मध्य उठ खड़े विचार के द्वारा बेचारिकता के पल को पुष्ट करता कवि की अपनी सूझ-बूझ है।

(१०) महापि बासुकीर्ति गोस्वामी तुलसीदास तथा अन्य अनेक रामकथाकारों ने बनबाध का कारण, कौशलेन्द्र बधरप को मध्य भरणकृमार के अन्धे माता-पिता से मिले धर्मिण्य कैकयी की विपरीत बुद्धि और मन्थरा की जिह्वा पर साक्षात् सरस्वती के धा विराजते को, निरूपित किया है। इन कवियों ने जनबाध का समग्र बासिख तथा प्रपंच देवों के माथे उतार दिया है। साकेतकार ने कैकयी-मन्थरा सम्वाद को कुछ मनोबैज्ञानिक मिति प्रदान करने की चेष्टा की है, परन्तु इस प्रसंग में भी बरबाध एवं धर्मिण्य प्राचात्य में कोई अन्तर दृष्टिकोण नहीं होता। उमिताकार ने धर्मिण्य की बात का कोई अन्वेष भी नहीं किया और बरबाध तथा माहा को धीपचारिकता तथा सांसारिकता मात्र बना दिया है।

(११) 'नवीन' की ये राम-बन-बधन की बटना को जो कि राम-कथा तथा रामकाव्य की महान् एवं महत्वपूर्ण बटनाओं में से एक है, नूतन नुसिक्र से चिह्नित किया है। प्रस्तुत अर्थ में राम-बनगमन सम्बन्धी बटना की धार्य-संस्कृति के प्रसार के लिये एक महान् सांस्कृतिक-भाषा के रूप में विद्यार व्याख्या की गई है।

(१२) इसी अन्तर्ग में उमिता तथा लक्ष्मण का बन-बधन-विषयक बाधाभास और उमिता की अनुमति से लक्ष्मण का बनबधन-निवृत्त कवि की प्रौढ़ कल्पना और नूतन सूझ का परिचय देता है।

(१३) महापि कैकयी रंगमंच पर नहीं आई है परन्तु फिर भी कवि ने उसके चरित्र का परिष्कार कर, उसे परिमाणय रूप प्रदान किया है। धार्वाय बासुदेवी की के मत्तानुसार काव्य के लिए प्रत्यक्ष वर्णन से अधिक परीक्षा अभ्याहार की महिमा कही गई है।<sup>१</sup> इसका एकदृष्ट दृष्टान्त प्रस्तुत-कृति का कैकयी चरित्र है। 'रामचरित मानस' की कैकयी गुणवाप धारमन्थानि अनुभव करती है।<sup>२</sup> 'साकेत' में बधरप ही कैकयी के चरित्र को महिमा प्राप्त हुई है परन्तु 'साकेत' के लक्ष्मण-कैकयी के प्रति अत्यधिक अत्यावसी का प्रयोग कर देते हैं।<sup>३</sup> इसके विपरीत, 'उमिता' के लक्ष्मण कैकयी के कारण से नहीं धनितु धार्य-संस्कृति के विस्तार के लिये ही कैकयी ने यह नूतनीतिक खेल खेला है। वह पंचाध की को, जो धार्य-संस्कृति का प्रमुख केन्द्र रहा है। पश्चिम से पूर्व तक यह धार्य-सम्पदा को पुनित-प्रफुल्लित होये देख चुकी

<sup>१</sup> 'द्विती साहित्य ओतवी दातायी, पृष्ठ ५३।

<sup>२</sup> 'गरह यतानि बुद्धि कलाई। काहि नही केहि दुखन हैई ॥

—'रामचरित मानस' धयोध्याकाव्य, बोधा २७२

<sup>३</sup> 'साकेत', मृतीय तर्क, ५६।

को घोर एवं बहु विन्ध्याचल के धलंध्य रूप को संघ में परिणत कर, जब पार भी संस्कृति का प्रचार फैलना चाहती है। मन-मग्न को इस व्याख्या से बहाँ एक घोर रामरुपा की कठोरता कुछ न्यून हो गई बहाँ दूसरी घोर केकरी के पुण-नाशित चरित्र का उदात्तीकरण भी कवि ने कर दिया।

(१४) 'जमिना' में जमिना को बिलना गोरव प्राप्त हुआ है; वह प्रथम राम-काव्यों में कम मिला है।

(१५) 'जमिना' के सम्पूर्ण बृत् तथा चरित्र की सृष्टि कवि की अपनी श्रुत है। जगुमें तथा पंचम सर्ग में उसका विस्तृत चित्रण बरौन कवि की मौलिकता का परिचायक है।

(१६) धार्मिक काव्यकृतियों में बिरह-वर्धन इन्द्रयागा के बोहे-सोठे की शैली में करने की पद्धति का प्रमाण है, परन्तु प्रस्तुत-काव्य कृति की यही विशेषता है।

(१७) परिपाटीयत लक्षण के चरित्र में कवि ने समुचित परिष्कार कर, उसमें नूतन रंगों को भर दिया है।

(१८) षष्ठ सर्ग में धर्मपुरी से लेकर संकपुरी तक धर्म-संस्कृति के प्रचार के लिए को कवि की मौलिकता ने ही श्रम दिया है।

(१९) धार्मिक वास्तविक ने राम-राज्य के युद्ध को नर और राजस का युद्ध माना है, बोस्वामी तुलसीदास ने उसे देव तथा धान्य का परन्तु युद्ध भी ने नर से नर के युद्ध के रूप में उसे विकल्पित किया है। 'नवीन' की ने अपनी मौलिक कल्पना के अनुसार, धर्म-धर्मार्थ संघर्ष के रूप में, मान्यता प्रदान की है। यद्यपि साकेतधर्म एवं जमिनाकार की श्रुत में कश्चित् सादृश्य है, परन्तु प्रतिकूलता भी इच्छ्य है। साकेतकार ने राम-राज्य युद्ध में सीता-हरण की घटना को प्रमुखता प्रदान की है; जमिनाकार ने इस प्रसंग का संस्पर्ष भी नहीं किया किन्तु इतना-सा संकेत मात्र ही दिया है। उसने धर्म-धर्मार्थ एवं धर्म-व्यस्य जातियों के प्रश्न को ही मुख्य प्रदान किया है।

(२०) विभीषण की राजसभा का इच्छ विचारण तथा उसकी लंका के सिंहासन पर प्रतिष्ठा कवि की अपनी कल्पना-शक्ति की उत्पत्ति है।

(२१) विभीषण की राजसभा में भीरुम का बलज्व तथा भीरुम-वर्धन का विचार उद्घाटन, कवि की मौलिकता के मन्व्य का गवनीय है।

(२२) राम के चरित्र की सहृदयता मानवीय-भूमि और उगका मानवीय रूप, कवि की प्रतिभा की उपज है।

(२३) धर्मोपमा प्रत्यावर्तन में, पुष्पक विमान में लक्ष्मण-सीता सम्भाव तथा हाथ परिहास घोर धर्म में जमिना-सहमण-मिशन पर्याप्त मौलिकता बिन्दे हुए है।

(२४) जमिनाकार ने जमिना-लक्षण का गुणनाम ठीक रंगे ही किया है, जैसे मान्य कर ने सीता-राम का।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वास्तविक तथा तुलसी ने जिन प्रसंगों तथा चरित्रों की उपाधा की है, 'नवीन' की ने उन्हें 'जमिना' में मौलिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इन मौलिक उद्घाटनों में कवि की नूतन विचारशीलता प्रामाण्य रूप विस्तेरण, मानवतावर्ष, मनोवैज्ञानिक अध्ययन धारि चटक प्राप्त होते हैं। कवि की सर्वोपरि महत्ता तो

इस काल में निहित है कि उसने अपनी नूतनता प्रिय प्रकृति के कारण, प्राचीनता को न तो तिरस्कर ही किया और न मन्त्रेयता। प्रमुख रामायित बटनाओं तथा पात्रों की धामा-प्रभाषी उतनी ही प्रकार तथा प्रोन्नत है मितनी कवि की कल्पना-सृष्टि।

## चरित्र-चित्रण

चरित्र-प्रधान काव्य—'साकेत' के सङ्घस्य 'उमिष्ठा' को भी चरित्रप्रधान-काव्य माना जा सकता है। प्रस्तुत-काव्य में बटना-क्रम का आधिक्य नहीं है। इसमें चरित्र तथा विचारों की बहुलता है। कवि का स्वयं भी इसे चरित्र-प्रधान काव्य के रूप में देखने का ही प्रतीत होता है। उसकी भारतीय सीता राम तथा उमिष्ठा-सङ्घस्य के गुण-भाजन में ही अपनी सार्थकता मानती है।<sup>१</sup> साध ही वह पात्रों को मन स्थितियों के बिस्सेयण को भी प्रमुखता प्रदान करता है। राम जन-मन की प्रतिष्ठिता का व्यापक रूप उमिष्ठा तथा सङ्घस्य में प्रदर्शित कर,<sup>२</sup> उसने चरित्र की रक्षाओं को ही मध्य-रूप प्रदान किया है। इसके प्रतिरिक्त उसने चरित्र की सञ्चारणा मानवीय भूमि पर ही की है। सोकोत्तरबाह की ओर यविक उन्मुख होता वह दृष्टिचोचर नहीं होता है।

चरित्र-कल्पना का स्वरूप—'नवीन' की ने अपनी चरित्रांकन-प्रकृति को मौलिकता से अभिविधित किया है। कई पात्र कवि के मनोव्यंग्य हैं। इनमें उमिष्ठा का शीर्ष-स्थान है। इसके प्रतिरिक्त उसने परिपाटीगत चरित्र कल्पना के स्वरूप के नूतन रक्षाओं को भी उभारने का सफल प्रयास किया है। वे सब कार्य कवि को अपनी मूल कष्ट सिद्धि के हेतु करने पड़े। कवि ने कई पात्रों की प्राचीन रक्षाओं को ही स्वीकार किया और उनमें नूतन मानवतावर्ध का नमस्कार स्थापित किया। यह स्वाभाविक ही है कि कवि ने अपने पात्रों को अपने युग के दृष्टिकोण से भी देखने की चेष्टा की है। इसलिये कई पात्र एक प्रकार से उसकी युग-वेतना के उद्घोषक बन जाते हैं। कवि ने मनोवैज्ञानिक संस्पर्ध प्रदान करने का भी प्रयत्न किया है। मन के अन्तराल में जमने वाली भावना-बारा को भी अन्त-मसिमा से बहुस्वसिद्धि के रूप में परिणत किया है। उसका समग्र पात्र जीवन की संजीवनी तथा धारण प्रति के विचार से अभियुक्त है। वे मानव हैं और मानवत्व से ही ईश्वरत्व की ओर उन्मुख होते हैं। उनकी सञ्चारणा ईश्वरत्व से अनुप्यत्व की ओर नहीं होती। सांस्कृतिक मध्यता से प्रत्येक पात्र अभियुक्त दृष्टिचोचर होता है।

प्रमुख पात्र—'नवीन' की ने रामायणी कथा की बटनाओं में जिस प्रकार व्यक्त किया है, उसी प्रकार पात्रों में भी। उनके काव्य में पात्रों की पौत्र दृष्टिचोचर नहीं होती। कवि ने अपने मनोवर्धित व्येय की सम्पूर्ण के हेतु, धारक्य पात्रों को ही स्वागत किया है। प्रमुख पात्रों में उमिष्ठा सङ्घस्य भूमिष्ठा सीता तथा राम की परिवर्तना की जा सकती है। सीता पात्रों में जनक जनकपत्नी रामुष्ठा धान्ता बहुरय विभीषण तथा सुपीन पाठे हैं। कैकेयी कोषस्या, रावण अन्त माणवी धृतिकीर्ति धारि पात्र यद्यपि रमर्षण पर नहीं पाठे हैं परन्तु

१ 'साकेत एक अत्यन्त' पृष्ठ १५।

२ 'उमिष्ठा भूमिका पृष्ठ—४।

३ 'वही, पृष्ठ—४।

किर भी जनके महत्व का परोक्ष रूप से प्रतिपादित किया गया है। पात्रों के उद्दिष्टीकरण में, कवि की उमिमा-विषय प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक-ध्यास्या की प्रमुख कथानक-स्थापना की माय्यता निहित थी।

डॉ० नरैन्द्र के मतानुसार, चरित्र प्रवाण काव्य की सफलता के लिए यह आवश्यक माना गया है कि उसके सभी पात्र मुख्य पात्र के चरित्र पर बात-प्रतिबात के द्वारा प्रभाव डालें तथा कभी परिस्थिति और कभी पृष्ठभूमि के रूप में उपस्थित होकर उसको प्रकाश में लायें।<sup>१</sup> जनक बनक-पत्नी, सीता आदि उमिमा के चरित्र के विकास में सहायक होते हैं। लक्ष्मण का प्रत्यक्ष योगदान है। राम सीता, सुमित्रा आदि भी उसको प्रभावित करते हैं। ये सभी पात्र उसकी परिस्थितियों के संभटन तथा बिभटन में सहयोग प्रदान करते हैं।

'साकेत के समान 'उमिमा' में उमिमा को प्रमुखता तो अक्षय्य मिली है परन्तु प्रमुखता के बोधे उस उचित से अधिक मुक्त नहीं बना दिया गया है। प्रमुखता तथा मुक्तता में भेद है।<sup>२</sup> उमिमा के चरित्र के विकास के लिए जितनी भी प्रसंगों की उपमावनाएँ की गई हैं वे सब स्वामाबिक हैं और उनमें कहीं भी कृत्रिमता के बिह्व उत्पन्न नहीं हो पाये हैं। साज ही कवि ने उनको प्रबन्धारम्भता तथा कथानक के सूत्र में पिरोकर उनका सार्वक मासंगिक कलात्मक एवं आकर्षक बना दिया है।

नायकत्व— उमिमा' नायिका प्रवाण काव्य है। इसमें काव्य की नायिका पत्र पर उभेगिता तथा बिस्मृता उमिमा को ही अविच्छिन्न किया गया है। आद्यस्त कवि उमिमा का ही प्रमुखता देता है और उसका स्मरण बनाये रखता है। कवि ने अपनी भक्ति-भावना भी सर्व प्रथम उसी के ही चरणों में अर्पित की है। इस काव्य में कवि एक मात्र उमिमा का ही भक्त रहा है। इस एकान्तुह दृष्टिकोण से कवि का काव्य कई दृष्टियों से लाभान्वित हुआ है। 'साकेत के समान उसमें नायक के प्रथम का विवाद उत्पन्न नहीं हुआ है।

उमिमा के समान इस काव्य का नायक लक्ष्मण का स्पष्ट रूप से अर्पित किया जा सकता है। 'साकेत' में लक्ष्मण के अतिरिक्त,<sup>३</sup> भरत<sup>४</sup> तथा राम<sup>५</sup> के नायकत्व के पक्ष भी प्रथम दिखाई पड़ते हैं। यह स्थिति उमिमा में अक्षिप्राप्ती नहीं हो सकी और इसकी सफलता का सम्पूर्ण श्रेय कवि के दृष्टिकोण को है।

उमिमा' में कवि का ध्यान नायिका उमिमा तथा नायक लक्ष्मण की धार अधिक रहा है। इस हेतु राम और सीता के चरित्र का क्रमिक विकास इस दृष्टि में नहीं दिखाया जा सकता। उमिमा के चरित्र की महानताओं समझ राम तथा सीता, दोनों नर-मस्त्वक होते दृष्टिकोण हीत हैं। इस काव्य के नायक लक्ष्मण काही सज्जिव है। वे राम जन-गमन के कारणों

१ 'साकेत एक अक्षय्यवन', पृष्ठ १५२।

२ आचार्य नन्दबुलारे बाजपेयी—हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी, पृष्ठ ५३।

३ डॉ० कनताकाल पाठक—मैजिस्ट्रीकरण गुप्त—ध्यायिक और काव्य, पृष्ठ ४४५।

४ आचार्य नन्दबुलारे बाजपेयी—आधुनिक साहित्य, पृष्ठ ४६।

५ (क) डॉ० प्रतिपाल सिंह—बीसवीं शताब्दी के महाकाव्य पृष्ठ १३२।

(ख) श्री त्रिलोचन पाण्डेय—'साकेत दर्शन', पृष्ठ २४।



की विषय व्याख्या करते हैं। केकेवी के चरित्र को उत्कृष्ट प्रदान करते हैं, उसकी कृत्नीति का सराहनात्मक विश्लेषण करते हैं। उमिता के विद्रोही मठ का शमन कर उसे अपना महाबलम्बी बना लेते हैं। वे राम-सीता का पुण्यगान करते हैं। अपनी माता के दूष की लज्जा की रक्षा की प्रतिज्ञा करते हैं। जनक तथा भरत के व्यक्तित्व की महिमा को धारित हैं। इस प्रकार वे घटनाओं के सुनकार बने दृष्टिगोचर होते हैं। उनमें वीरत्व तथा विवेकसौमता मर्त्या तथा विद्याचार, धर्म तथा मति दोनों के ही सुल दृष्टिगोचर होते हैं। यद्यपि लक्ष्मण से राम कथा का उपसंहार ता नहीं किया, परन्तु कवि ने इस काव्य में उनके पुनर्मिलन को ही महत्व प्रदान किया है।

इस प्रकार चरित्र बटना, काव्य प्रकृति धारि सभी दृष्टिकोणों से नायकत्व का सेहवा उमिता को ही प्राप्त होता है। इसके परबन्ध लक्ष्मण का स्थान प्राप्त है। कवि का यह धर्मीष्ट भी वा।

चरित्रों के प्रकार— उमिता में कई प्रकार के चरित्रों की सृष्टि की गई है— राम का आदर्श रूप व्यक्तित्व हुआ है तो सधर्म का प्रेमी रूप। जो राम के गौरव महत्ता तथा उपासना में किसी भी प्रकार की स्पृणता नहीं धा पाई है। वे सम-रस रहते हैं और प्रत्येक स्थान पर धारण की प्रतिस्थापना करते दृष्टिगोचर होते हैं।

जनक-पत्नी सुमित्रा, बधरथ, धनु, धान्ता धारि पात्रों के संस्कार का महत्व धारिक दिखाई पड़ता है। जनक-पत्नी तथा सुमित्रा में मातृत्व स्नेह तथा शिक्षा की भावनाएँ धारिक प्रमुख हैं।

कवि ने लक्ष्मण उमिता धारि पात्रों को नूतन रैखाएँ प्रदान की हैं। धनेक बार कवि राम विभीषण, सुभीष धारि के माध्यम से बोधा है। उसने चरित्रों का यत्र-तत्र परिमार्जन भी किया है।

कवि की भक्ति राम और सीता की तरफ भी मुझी है। पश्चिम धर्ब में उसने सीता के महत्वाकन का धन्य प्रसार दिखाया है।

इस प्रकार कवि ने विविधमुझी चरित्र-सृष्टि की है। उसने धनेको मानवीय बरतस पर धिहित किया है। धानुपाठिक स्थिति का भी उसने बराबर ध्यास रखा है। इस विधा में उसने सभी प्रकार के कार्य कीये हैं।

विश्रण-पद्धति—कवि ने धने चरित्रों के चित्रांकन में धनेक प्रणालियों को धनत्व प्रदान किया है। सबसे पहूने उसने धनुभन की स्थापित किया है। जो पात्र उपैमित रहे हैं उनको धमुधा बड़ा तथा रंम धरा है यथा—उमिता। पुराने पात्रों के नूतन पात्रों को उभारा यथा लक्ष्मण एवं सुमित्रा। कई पात्रों में जिनके रंम बहूरे वे धधिक रंम बड़ाया जैसे राम तथा सीता। कई पात्रों को धने प्रकृत रूप में ही रहूने दिधा यथा—जनक। इस प्रकार धनुभन तथा धनुगत की जिति पर, उसने धन-विश्रण पद्धति को धिकसित किया।

उमिता के पात्र धने व्यक्तित्व के बल से ही धपना प्रभाव उत्पन्न करते हैं। उनका व्यक्तित्व पराधुञी नहीं। बास्तव में धाचार्य हुजारोप्रधाद हिनेरी ने जो भाव 'ठाकेव' के

पाशों के प्रति कही है, वही बात 'उर्मिला' पर भी कटित होती है कि उसके पाश 'द्विचक्र' है।<sup>१</sup>

कवि ने 'उर्मिला' के चरित्रों का उद्घाटन कई विधियों से किया है यथा—विबरण, कथोपकथन आदि। संवाद, कार्य, वक्तव्य आदि से चरित्रों के घनेक तुलों पर प्रकट पश्य है। कवि ने स्वयं भी पाशों के प्रति अपनी सम्मतियाँ प्रकट की हैं। नाटकीय पद्धति के प्रयोग से काव्य को कतारमकता बड़ पाई है।

पाश—'उर्मिला' के पाशों को सुविधा के दृष्टिकोण से, दो विभागों में बाँटा जा सकता है—(क) नापी-पाश, (ख) पुष्प-पाश।

इन दोनों के प्रत्येक पाश के चरित्र की रेखाओं का स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

नापी-पाश उर्मिला—कवि को सर्वाधिक सफलता उर्मिला के चरित्रांकन में मिली है। वह उसकी मूलन सृष्टि तथा महत् उपलब्धि है। हम देखते हैं कि उसके चरित्र का विकास नैसर्गिक सोपानों से होता है।

उर्मिला कहानी कहने की प्रविष्टियों में कपोल-कपोली की कहानी सुनाती है, जिसमें कुछ विधेय आदि के तत्व प्रबल रहते हैं। बतक-पत्नी अपनी प्यारी बिरिया को 'उरन की मूर्ति कटकर' विनोद करती है।<sup>२</sup> अपनी नास्मावस्था में ही उर्मिला माता के स्नेहित-धंस में अपने ल्याममय जीवन के अनुकूल घिजा प्राप्त करती है।<sup>३</sup>

बहु प्रारम्भ से ही बन्धोर विषयों के प्रति कौतूहल-वृत्ति को विकसित कर लेती है। इस विषय में वह सीता तथा माता से कई प्रश्न पूछती है। वास्तव में उर्मिला के चरित्र निर्माण में माता-पिता का विशेष योगदान दृष्टिकोण होता है।

निवाहोत्सव, धनकपुरी के राजमहल के उसके व्यक्तित्व के कई पक्षों का उद्घाटन होता है। उसके रूप सौन्दर्य तथा वाक्-बालुर्ब ने सबको मोह लिया। उसका अद्वितीय सौन्दर्य, उसे निजिता की बाबुवरती की उपाधि प्रदान कर देता है।<sup>४</sup> वह तत्काल उत्तर देने तथा विनोद-वृत्ति उत्पन्न करने में बड़ी पटु है।<sup>५</sup>

अयोध्या के राजमहल में वह देवर रिपुसुदन और मन्त्र घान्टा के साथ मञ्जु परिहास में योगदान देती हुई अपने हृदय की मुमुक्षुता, ज्ञान-मनणता तथा बतुर्ब का परिष्कृत देती है। यद्युक्त के साथ विनोद करती, वह उसको अपने वाक्-बालुर्ब से बरस्त कर देती है।

हास-परीहास तथा वाक्-बालुर्ब में प्रवीण होने के अतिरिक्त, वह पर्यन्त विनम्र, विनीत तथा लज्जाशीला है। मर्त्या तथा विप्याचार का वह बहुत स्वाग करती है। धाँसेटक लदनय के बिना ही वह, सुमित्रा के माँवने पर, लज्जित होकर देती है।<sup>६</sup>

१ मैत्रिणीकरण मुह—व्यक्ति और काव्य, पृष्ठ ४४७ से उद्धृत।

२ उर्मिला, पृष्ठ ६२।

३ वही, पृष्ठ ६२।

४ वही, पृष्ठ ८५।

५ वही, पृष्ठ ८८।

६ वही, पृष्ठ ९९।

बहु बहुत्र तथा घांता बीबी के प्रति बिगोह करती हुई भी प्रसिद्ध नहीं होती। अयोध्या के राज-महल में बहु एक भावसँ बभू के रूप में केवल अपने धाराध्य लक्ष्मण के ही नहीं, प्रसुप्त सुमित्रा और नौचम्या धारि माताओं के हृदय में भी धारदारस्वर स्थान ग्रहण कर लेती है। उसके स्वभाव की मिलनसारिता कोमलता तथा भाईभूष्यता उसे राजमहल से निकलकर, भवन के पृष्ठ-मुहुरा प्रिय भावन बना देती है।<sup>१</sup> बहु अपने को अपनी माता का ही प्रतिबिम्ब मानती है। बिचकता में भी बहु निपुणा है।<sup>२</sup>

बहु बिचारशील नाटी है। भावना के साथ ही साथ बहु, चिन्तन तथा मनन को भी संवीहृत करती है। अपने हाथ निमित्त 'नव युगा' बिच का, बहु लौकिक के साथ ही धार्मिक भाव-निस्तेपण भी करती है।<sup>३</sup>

उसका बिभक्त स्वरूप कला के बन्म स्वरूप तथा श्येन की भी सुस्पष्ट व्याख्या करता है।<sup>४</sup> उसका बिचारशील ब्यक्तित्व अपने कर्तव्यों के प्रति भी सजग है।<sup>५</sup>

इसी प्रकार बहु प्रेम के स्वरूप के बिषय में लक्ष्मण से प्रश्न पूछती है। कहना न होया कि बालिका उर्मिता का बिब्रासु रूप ही बाद में पुणती उर्मिता के बिचारशील-पक्ष के रूप में विकसित हो जाता है।

उर्मिता-लक्ष्मण का सुखी मधुर तथा कठ-किचोसमय बीबन शीघ्र ही बियोग तथा बेवता में परिवर्तित हो जाता है। सीता-राज के साथ लक्ष्मण का बन-मनन प्रस्ताव को सुनकर उर्मिता की प्रभीरता बढ़ जाती है।<sup>६</sup>

बहु सात्विक हृदया, मातृक प्रबला तथा मुमुन नाटी होते हुए भी बीरत्व बर्त तथा बिद्रोह स मण्डित है। बहु बहरण की राम-बन-नामन बिषयक नीति, कैनेयी का योगदान कर तथा दाप लक्ष्मण का कर्तव्य धारि बिषयों पर तर्कसम्मत समीक्षा करती है और इस प्रकार अपनी बिबेक-बुद्धि का ब्यक्तित्व परिचय देती है।

उर्मिता प्रबर्न धर्म्या तथा धनीति के बिच्छ बिद्रोह करने का परामर्श देती है। उसकी रीयानि में ब्यक्तित्व इत्य का स्थान नहीं है। अफिनु बहु बिबेक के धारार पर बस्तुबिबिति का बिस्लेषण करती है और टीका करती है। दुस की के लक्ष्मण में बिन माओं की प्रतिसकता हृष्टियोचर होती है, उसी का ही प्रतिबिम्ब 'नवीन' भी की उर्मिता में बिबार्ह पढ़ता है—

बसा बि कीन है जो राज्य लेबें ?

बिता भी श्येन है जो राज्य देबें ?

प्रजा के धर्म है साध्याय धारा।<sup>७</sup>

१ उर्मिता, पृष्ठ १०७।

२ बही, पृष्ठ २२।

३ बही, पृष्ठ १०५।

४ बही, पृष्ठ १०४।

५ बही, पृष्ठ १०६।

६ बही, पृष्ठ १०६।

७ 'साध्याय', तृतीय सर्ग, पृष्ठ ३६।

'उर्मिला' की उर्मिला भी कहती है—

कह दो धाम पिता बदरम से  
कि, यह धर्म नहीं होता,  
कह दो, लक्ष्मण के रहते यह  
यह घोर कुर्म नहीं होगा ।<sup>१</sup>

यह हृदयैता तथा विवेकवती गाये है । यह हठवादिता को प्रथम प्रदान नहीं करती घोर लक्ष्मण के समाधान करने पर, वह उनको बन जाने की अनुमति प्रदान कर देती है । इस प्रकार उर्मिला का चरित्र पूरा मावनामों, धारमोत्सर्ग तथा बलिदान की महती प्रवृत्ति के घासोक के मन्दिठ है । उसके महत्व के पीछ प्रायः सभी पात्रों ने गाने हैं । सीता, उर्मिला के बलिदान की प्रशंसा करती है ।<sup>२</sup>

उर्मिला की ऊँचाई को राम भी, किसी के भी पहुँच के बाहर, निरूपित करते हैं ।<sup>३</sup> लक्ष्मण भी अपनी माता की कश्य तथा मुकु-भ्यबा को उर्मिला में प्रतिरूपित पाते हैं ।<sup>४</sup> बन्दास कास से लौटते समय, सिद्ध लक्ष्मण भी उर्मिला की महिमा की किरणें बिखेरते हैं ।<sup>५</sup>

इस प्रकार उर्मिला को कवि ने बालिक्य मुक्त-भृगु, प्रेयसी सर्व प्रिया विप्रोद्गी धात्मत्यागो विरहिणी तथा धारमोत्सर्ग गायी के रूप में चित्रित किया है । वह कवि की कल्पना-प्रसूता है । उस पर 'साकेत' की उर्मिला का भी आधिक प्रमाण परिलक्षित होता है । वह 'उर्मिला' में चतुर्थ, एवं पंचम सर्ग में लसी धाँति निताप करती है, जैसे साकेत के नवम सर्ग में । इस रूप के धारितिक, कवि ने जिस उर्मिला का सृजन किया है, वह उसकी मौखिक कल्पना धाँकि की रेखाओं से धापूर्ण है ।

सुमित्रा—'नवीन' की सुमित्रा मातृ-धर्म तथा ममता की बोधक प्रतिमा है ।<sup>६</sup> 'नवीन' की ने न केवल सुमित्रा को प्रसन्नता ही प्रदान की अपितु उनके चरित्रवतत पुत्रों को भी बहुमुखी रूप में प्रसन्न किया । पुत्र की की सुमित्रा तथा 'नवीन' की की सुमित्रा में वहाँ ममता मरा व्यक्तित्व तथा उत्सर्ग धार की बहुसता का साम्य है, वहाँ वैषम्य धाँकि है । 'साकेत' को सुमित्रा में सन्नता तथा क्षान-सैज का धाधिक्य है जब कि 'उर्मिला' की सुमित्रा मध्य, मयत्तमय, विरट भ्रुम स्नेहिस बयाहु तथा धीम्य रूप में हमारे समक्ष धाती है । दोनों चरित्रों में बड़ा अन्तर है । सुमित्रा को जो गरिमानय तथा उपास रूप 'नवीन' की ने प्रदान किया है, वह पुत्र की प्रदान नहीं कर सक है ।

सीता—सीता प्रारम्भ से ही मन्मीर है । बनकपुरी के प्राकार प्रायण में के धरने व्यक्तित्व तथा स्वभाव के अनुकूल गान्धर्व देण की राजकुमारी के पराक्रम की गाना सुनाती है । के बीजन में साहस धारिकता तथा धीर्य को स्थान देती है ।

१ उर्मिला, पृष्ठ १४४ ।

२ वही, पृष्ठ २७८ ।

३ वही, पृष्ठ ११३ ।

४ वही, पृष्ठ २२६ ।

५ वही, पृष्ठ ४२८ ।

६ वही, पृष्ठ ११८ ।

'नवीन' की नै सीता को भी मूलतः दृष्टि प्रदान की है। उन्होंने इस आत्मयज्ञ में अपना ही आत्माहुति दे डाली। वे नारी-धर्म की आदर्श परिचायिका हैं। विभीषण के मुख से कवि ने सीता का महत्त्वार्कण किया है।<sup>१</sup>

इस प्रकार सीता में याम्भीर्य, सिद्धता, मर्यादा-पालन सेवाश्रयी रूप सहस्रभिरीति वाक्स्वयंभु मातृत्व उत्कृष्टपुण्यसम्पन्ना आदि रेशाधर्मों को कवि ने खींचा है। 'साकेत'। सीता की वात्स्यायना का चित्र प्राप्त नहीं होता, परन्तु पुत्र भी नै सीता को बितने विस्तार तथा मुखों से देखा है, उतना नवीन' भी नहीं देख सके हैं। उमिता के समस्त सीता का चरित्र कुल देव गया है। परन्तु चरित्रा तथा मन्वता में वैश्वमान भी प्रकट नहीं आया है। 'उमिता की सीता सात्विकता तथा ममता की सम्पत्ता के रूप में, हमारे समस्त उमय-रिखा होती है।

सुनयना—बनकपत्नी सुनयना को भी कवि ने अपनी भौतिकता के साथ प्रस्तुत किया है। वे पति-भक्त सती साक्षी तथा धर्मपरायण-महिमा हैं। वे अपनी दोनों वास्तविकताओं के धर्मिक धार करती हैं और उन्हें समय-समय पर उचित शिक्षा भी प्रदान किया करती हैं। उनकी स्त्रीकी बोझे समय के लिए केवल प्रथम सर्ग में ही प्राप्त होती है। यहाँ पर उनके साम्य-जीवन के ही मञ्जुर तथा सिद्ध चित्र प्रदान किया गया है। काव्य-नायिका उमिता ने निर्वास में सुनयना का बड़ा भारी हाथ है।<sup>२</sup> उमिता' की सुनयना की एक भक्त से स्नेह मुखता तथा पवित्रता की विशेषी नितामित है।

धर्म पात्र—इसके अतिरिक्त नवीन' की नै उमिता' में कैकेयी,<sup>३</sup> कोचला<sup>४</sup> आरुची,<sup>५</sup> सुतिकीरि<sup>६</sup> पूर्णखणा<sup>७</sup> मन्तोरी<sup>८</sup> आदि का उल्लेख किया है, परन्तु वे प्रत्यक्षत प्राप्त नहीं कर सके हैं। कवि ने इनमें से अधिकतर की परीक्षा महत्ता प्रमाणित कर दी है।

१ उमिता पृष्ठ १०७।

२ वही, पृष्ठ १०९।

३ (क) वही, तृतीय सर्ग पृष्ठ २३७, धर्म १३५।

(ख) वही, पृष्ठ २४०, धर्म १४१।

(ग) वही, पृष्ठ २६१, धर्म, १८४।

४ (क) वही द्वितीय सर्ग पृष्ठ १०१, धर्म ८९।

(ख) तृतीय सर्ग, पृष्ठ २४२ धर्म १४६।

(ग) वही, पृष्ठ २७६, धर्म २१४।

(घ) वही पृष्ठ ३१७ धर्म २६५।

५ (क) वही, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ ८८, धर्म ३८।

(ख) पृष्ठ १०७, धर्म १०९।

६ वही, द्वितीय सर्ग पृष्ठ १०७, धर्म ११९।

७ वही अष्ट सर्ग, पृष्ठ ५२४, धर्म १५४।

८ वही, अष्ट सर्ग, ६३०।

पुत्र्य पात्र सखमणु—सखमणु के चरित्र-चित्रण में पर्याप्त मौलिकता को स्थान प्राप्त हुआ है। 'उर्मिसा' में सखमणु एक कठोर सामन्त-निरत माफ्त-मक्त वीर के रूप में ही नहीं, प्रसूत उर्मिसा के आदर्श पति के रूप में भी आते हैं।

सखमणु हमारे समस्त प्रेमी, चिन्तक आदर्श पति राम-नक्षत्र तथा उपरसी के रूप में आते हैं। द्वितीय सर्ग में उनका जो सौन्दर्य प्रेमी रूप में चित्रित किया है उसमें योरोपीय प्रभाव का धन्वेषण किया जा सकता है। यह रूप रोमांसवादी साधनाओं के कारण उत्पन्न हुआ है, जिन्होंने द्वितीय में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के काव्य में उन्नयन करने में विशेष योष-दान किया है। इसी प्रकार देवर-भामो का मधुर हास-परिहास और पति-मत्नी का हृदयस्पर्शी विनोद एवं श्लोकियों पर भी स्वच्छन्दतावाद का प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है।

'रामचरित मानस' तथा 'साकेत' में सखमणु के चरित्र में मातृ-प्रेम और वीरत्व को ही प्राधान्य मिला है, परन्तु 'उर्मिसा' में, सखमणु की अग्रज भक्ति के साथ ही साथ अपनी अद्वैतबिनी उर्मिसा के प्रति उनके प्रेम तथा कर्तव्य की अमिथ्यबला अधिक सुन्दर बन पड़ी है। 'रामायण तथा 'मानस के सखमणु उठते हुए भी मर्यादा का धीमेस्पर्शन नहीं करते। हम देखते हैं कि 'साकेत' में उनका चरित्र कुछ पतित हो गया है। कैकयी के प्रति, इन शब्दों में अपनी छद्मता तथा आलोच्य प्रकट करना, समुचित प्रतीत नहीं होता—

उसक किसको, भरत को है बताती  
 भरत को मार जानु और तुम्हो  
 मरत में भी न रक्खू ठौर तुम्हो।<sup>१</sup>

अपनी शोचामि की लपट में 'साकेत' के सखमणु कैकयी के साम, बरारण को भी लपेट लेते हैं—

अड़ी है मां बनी जो मापिनी यह !  
 अनाया की अनो हतमापिनी यह !  
 अमी बिय-बन्त हमके लोड़ू बूया !  
 न रोको तुम लमी लपी में साम्त हूया !  
 बने इस बसुजा के बाब हूँ जो,  
 पिता हूँ बे हमारे—या कहूँ क्या ?  
 कही हे आर्य, फिर भी तुम रहूँ क्या ?<sup>२</sup>

इसके विपरीत 'उर्मिसा' के सखमणु अत्यन्त हृदय सम्मीर तथा विवेकशील हैं। वे कैकयी के चरित्र को उत्कर्ष प्रदान करते हैं और उसके व्यक्तित्व को महिमा मण्डित—

कैकयी मां दूर बेग की हूँ  
 बे हूँ अनुभव सीमा,  
 सुख सन्धि में प्रकट कर चुकी—  
 हूँ बि निज निपुला लोला,

१ 'साकेत', द्वितीय सर्ग, पृष्ठ ३६।

२. वही पृष्ठ ६१।

उत्तर परिवर्तन से प्राची तब—  
विस्तृत है उबला अनुभव,  
इसीलिए उनके द्विप से है  
आया एक मात्र अद्वितीय  
है बोरन कीद्वितीय बड़ी माँ—

राम—की राम को मौलिक संसार प्राप्त हुए है। कवि ने राम को निम्न रूप में देखा-परखा है—

राम, नहीं नर, एक विरक्त  
मन पुत्र हिन्दू-धर्म का,  
राम, एक उत्कर्ष-कल्पना,  
एक आदर्श धर्म-धर्म का  
राम, सत्य, सिद्ध, सुन्दर भावों—  
की कल्पनामयी कवि।<sup>१</sup>

'उमिता' में राम उही मध्य रूप के साथ चित्रित किये गये हैं जैसा कि 'मानस' में उनका रूप प्राप्त होता है। पहलाई के साथ देखा जाय तो वे यहाँ कुछ उदात्त रूप ही प्राप्त कर पये हैं। 'साकेत' के राम का अद्वितीयपक्ष यहाँ नहीं था पाना है। इसमें दोनों कविताओं के लक्ष्यों में अन्तर था। राम के चरित्र की सांस्कृतिक तथा समग्र भारतीय विचारणा की भूमिका पर रबकर ध्यान करने के कारण 'नवीन' की वे अपनी कला-सुन्दरता का ही परिचय प्रदान किया है।

जनक—कवि ने जनक का परम्परागत रूप ही ग्रहण किया है। उसमें पार्श्व-धीन विषय प्रसंग को अधिक उद्घाटित किया है। उनके मजुर सांसारिक जीवन की स्थिति, लीला तथा अविद्या के कारण विविध रूप से सरल है।<sup>२</sup> जनक साम्प्रत्य-धीन सुन्दर तथा सरल है। 'उमिता' के जनक, कल्याण तथा चिन्तन के रंगों से चित्रित हैं।<sup>३</sup>

धर्म पात्र—बिभीषण सुग्रीव तथा बरहम के चरित्र भी अल्प-काल के लिये सुन्दरित हुए हैं। इन पात्रों के प्रतिरिक्त भय अनुभव, अनुमान, सुन्दर धारि पात्रों का भी नामोल्लेख है।

निष्कर्ष—'उमिता' पद्य की प्रधानता होने के कारण जनक सुन्दरता, लक्ष्य सुन्दर धारि की प्रधानता मिली है। बरहम की अपेक्षा जनक व श्रीधर की अपेक्षा सुन्दरता की अधिक रेखाएँ मिली हैं।

कवि ने विज्ञान भी पात्र प्रस्तुत किये हैं उनमें अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व तथा आत्मा चित्रित है। साथ ही पात्र, परस्पर एक दूसरे की टीका-टिप्पणी करके अपनी मनोवाक्यानों को भी अभिव्यक्त करते हैं। कवि ने प्रधानतया अपने पात्रों को सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से निरखा-परखा है।

१ साकेत दुर्गाय शर्मा पृष्ठ २६२।

२ उमिता, पृष्ठ २४।

३ वही, पृष्ठ २३।

## सम्वाद

डॉ० नगेन्द्र के मतानुसार, 'सम्वाद के गुणों की विवेचना करते हुए प्राचाओं ने स्वामाबिकता अर्थात् परिस्थिति और पात्र की अनुकूलता समीक्षा अथवा उद्दीप्ति, गतिशीलता एवं रसायकता पर जोर दिया है।'<sup>१</sup> इन बटकों के आधार पर, उमिषा के कथोपकथनात्मक अंशों का अनुशीलन करना, समुचित प्रतीत होता है।

'उमिषा' में सम्वाद की सर्वप्रधानता है। समुच्चो कथा तथा काव्य परिसम्भार के धामय को ग्रहण कर ही, विकसित होता है। सम्वाद की अनेक दृष्टियों से अपादेयता प्रतीत होती है। वहाँ सबसे कथा अग्रसर होती है, आगत गाथा की सूचना या संकेत प्राप्त होता है, कथ्य-विषय का विषयेषण होता है, प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति होती है, रोचकता तथा सरसता के विधान करते हैं, वहाँ चरित्रों की सूक्ष्म-रेखाएँ उभर कर हमारे समक्ष आती हैं।

गल्परत्ना—सम्वाद सीधेसिधे तथा सारपरिमित होने चाहिए। उनमें दृष्टिमता तथा कार्य अक्षरों का प्रभाव अपेक्षित है।

'उमिषा' में अनेक प्रकार के सम्वादों की परियोजना की गई है। इनमें विविधमुष्ठी पत्ररत्ना प्राप्त होती है। वहाँ अनेक उमिषा-सम्वाद कार्य को प्रेरित तथा प्रवृत्त करता है, वहाँ इस सम्वाद के प्रतिरिक्त उमिषा-सीता सम्वाद, राम-उमिषा-सम्वाद राम-सुमित्रा सम्वाद सुमित्रा सीता सम्वाद, लक्ष्मण सुमित्रा सम्वाद भावि जनयमन की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करते हैं। इन सम्वादों का महत्त्व चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी अप्रतिम है। तृतीय सर्ग के इन कथोपकथनों के प्रतिरिक्त अन्तिम सर्ग के राम, विभीषण तथा सुग्रीव के कथन तथा द्वितीय सर्ग के दशरथ तथा प्रतिनिधि के माथण भी चरित्र एवं सांस्कृतिक-सामाजिक स्थिति की विवेचना करते हैं।

रोचक तथा सरस सम्वादों के अत्यंत द्वितीय सर्ग की अक्षर-सतनाओं का पारस्परिक वार्तालाप, उमिषा-अनुष्ण-सम्वाद उमिषा-श्यामा सम्वाद उमिषा-लक्ष्मण सम्वाद और अन्तिम सर्ग का लक्ष्मण-सीता सम्वाद विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इस प्रकार कवि ने उत्कृष्ट सम्वाद के गुणों तथा बटकों को नियोजित कर, अपने सम्वादों की रचना की है।

पात्रानुसूचिता—जबकि बी ने 'उमिषा' में अपने चरित्रों के अनुकूल सम्वादों की सृष्टि की है। पात्रों के प्रधान गुणों का अनुपादन उन सम्वादों के माध्यम से होता है। वे स्वामाबिक भी हैं।

प्रथम सर्ग में सीता तथा उमिषा के कथनों में बाल्य-सुलभ भावनाओं की अभिव्यक्ति मिली है। सीता के कथन वहाँ गम्भीर होते हैं वहाँ उमिषा के भोसे, चरत तथा जिज्ञासाकुस। अनेक ही उमिषियों में गाम्भीर्य तथा अनुयना के कथनों में वासुदेव स्नेह तथा शिला के भाव प्रतिफलित होते हैं। द्वितीय सर्ग में अक्षर की लक्ष्मणों की बाल्यभित में सुन्दरता, प्रसंगा तथा लक्ष्मण की सरस प्रवाहित है। अनुष्ण की बातों में अज्ञानजन्य मोहावन, जिज्ञासा तथा किशोरावस्था के विद्व दृष्टिकोण होते हैं। लक्ष्मण अपने स्वभाव के अनुकूल प्रेम, किञ्चन



तथा विरोध की बातें करते हैं। उमिता के स्वर में विरोध के साथ कससा धीर शीनता के साथ भक्ति के बटक भी मिलते हैं। सीता की बाणी में शत्रुता धीर राम के बार्तासाप में उत्तरदायित्व साम्बोध एवं बस्तु-विस्मेषण प्राप्त होता है। सुमित्रा के बार्तासाप में मातृत्व तथा समता तथा प्रेरणा की भावनाएँ प्राप्य हैं।

साथ ही पात्रानुक्रमता भी परिस्थिति के साथ परिवर्तित होती है। उमिता बहाँ एक धीर विप्लव-गायन करती दृष्टियोग्यर होती है, वहाँ दूसरी धीर विनीत भयविहित तथा वेदना मन्थित उद्गार भी प्रकट करती है। सुमित्रा-राम सम्बन्ध में वहाँ राम के स्वर में भक्ति ध्यात्म सद्गुता तथा स्नेह परिष्कारित है, वहाँ राजसमा के उनके बचस्य में शोक तथा प्रमथिष्कुटा के भी वर्णन होते हैं। इस प्रकार सम्बन्धों की मृष्टि के मूस में नैसर्गिकता तथा उपयुक्तता का ध्यान रखा गया है।

सुश्रीवता—'नवीन' की न सुश्रीवता का उद्भव कई विचित्रों से किया है। उनके प्रायः प्रत्येक सम्बन्ध सुश्रीवता तथा मर्मपूर्वता की ओती-बापती प्रतिमूर्ति है। छोटे-छोटे प्रश्नोत्तर में बड़ी सरसता उत्पन्न की है, यथा—

सीता—पर साजन, एकाधिकता तो  
है रसुन्न की रीति, ध्यो।  
नरमण—यदि भाभी को सीत चाहिए,  
तो प्रपञ्च से कहूँ, कहो ?  
सीता—प्रपञ्च चिन्ता करो, स्तन दे।  
नरमण—पर, पञ्च-वर्षक तो हैं वे।  
सीता—पर उस शूर्पणखा के मन के  
बिच प्रार्थक्य तो हैं वे।  
नरमण—होगे को भी सीत तुम्हारी।  
सीता—बहु दे रानी बन न लकी।  
नरमण—कैसे बनती ? उस विचार  
को जब खेठानी सह न लकी।<sup>१</sup>

इस प्रकार चमत्कार भाव-श्रवणता संक्षिप्तता धारि के गुणों से कवि ने अपने सम्बन्धों को परिष्कृत किया है।

भावमयता—कवि ने अपने सम्बन्धों में विविध भावों की रचना की है। उमिता के विरोध का स्वर, राम के साथ बार्तासाप में, ध्यात्महर्मण के रूप में परिलुप्त हो जाता है—

पर, हे धर्म, ध्यात्म ध्याति की  
यह घटिका यहि आई है,  
तो मैं बापा नहीं बनूँ गो,  
धी रसुबीर दुहाई है।<sup>२</sup>

१ 'उमिता', बचत सर्ग पृष्ठ २८४-२८५।

२ वही पृष्ठ ३१।

इसी प्रकार कवि हास-परिहास के भावों को यत्नपूर्वक सृष्टि करता है। इससे विषय की यत्नीरता में सरसता तथा स्वाभाविकता के उत्कृष्ट समाविष्ट हो जाते हैं और गल्फरता बढ़ती है।

वचन-चातुरी—‘उर्मिता’ के सम्बन्धों में वचन-चातुरी या वाक-चातुर्य की सुविधा भी उसी प्रकार मीक रही है जिस प्रकार मोठी में से उसकी आभा। इससे बड़ी रोचकता तथा भावमयता की भीकृति होती है, बड़ी भावमय की प्राप्ति भी होती है। उर्मिता, प्रकृत-संगणक शान्ता, यमुष्म, सीता, सहमण आदि के कथनों में वाक-चातुर्य का बेमिसाल उदाहरण है। भावविह्वलता तथा वचन चातुरी का एक दृष्टान्त पर्याप्त है—

सीता—बया हिय में ब्या बँठी कोई  
सुमह नीर की छुरामी ?  
बया लंका के कितो भररोके  
मयन रह पर्यै करुणामी ?  
प्रयबा बया कोई बनबासा  
कुछ टोना कर पर्यै, बहो ?  
कितकी यह संस्मृति नैनों में  
प्रलस बाह मर पर्यै बहो ?<sup>१</sup>

सहमण—भात्री, यदि ऐसी हो मौली  
होती ये बिदेह ललियाँ  
यदि, यों सहज छोड़ बँती ये  
रसुन्दरों का हिय-सासन,  
तो क्यों छात्र लंक में होता  
बन्धु विनीषण का घासन ?  
बाँप बाघरवियों को रकती  
हैं बिदेह की ललिवियाँ,  
बड़ी चतुर हो तुम मैलियाँ,  
हो तुम सब मायाबिनियाँ।<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि के सम्बन्धों का वाक-चातुर्य, शब्द-बनस्यार, भावमयी व्यक्तित्व आदि चरकों पर प्रकटमिष्ठ है।

व्यक्तित्व—‘उर्मिता’ में अनेक व्यक्तियों की संयोजना भी की गई है। यह कई रूपों में उपलब्ध है। लम्बे सम्भाषण के रूप में सुठीय सर्प के उर्मिता तथा सहमण के कथन आते हैं। यह काव्य का सूत्राण है, क्योंकि कथा के दो प्रधान पात्र बड़ी एक ओर अपनी भावनाओं तथा चारछाओं की परिमिश्रित करते हैं बड़ी मन-मन की मानसिक प्रतिक्रियाओं को भी निरूपित किया गया है। इसी प्रकार उर्मिता का कथा विषयक सम्भाषण तथा सहमण का प्रेम

१ ‘उर्मिता’, लघु सर्ग, पृष्ठ ५६३।

२ वही, पृष्ठ ५६४।

तथा विवेक की बातें करते हैं। उमिता के स्वर में विद्रोह के साथ कसूया और शीमता के साथ बन्धु के बटुक भी मिलते हैं। सीता की बाखी में लज्जुता और राम के बार्तासाप में उत्तरदायित्व याम्मौर्य एवं बस्तु-विरसेपण प्राप्त होता है। सुमिषा के बार्तासाप में मादुर्य तथा समता तथा प्रेरणा की भावनाएँ प्राप्य हैं।

साथ ही पात्रानुकमता भी परिस्थिति के साथ परिवर्तित होती है। उमिता जहाँ एक ओर विप्लव-भाषन करती दृष्टिगोचर होती है, वहाँ दूसरी ओर विनीत मर्बाधित तथा वेदना-मन्धित उद्गार भी प्रकट करती है। सुमिषा-राम सम्बन्ध में जहाँ राम के स्वर में भक्ति धारण लज्जुता तथा स्नेह परिष्पावित है, वहाँ राजसभा के उनके बचऽश्व में धोक तथा प्रभविष्णुता के भी बर्णन होते हैं। इस प्रकार सम्बन्धों की मृत्ति के मूल में वैचरिक्ता तथा उपयुक्तता का ध्यान रखा गया है।

सजीवता—'नवीन' की भी सजीवता का उद्गम कई विधियों से किया है। उनके प्रायः प्रत्येक सम्बन्ध सजीवता तथा मर्मपूरुता की बोटी-बागती प्रतिमूर्ति हैं। छोटे-छोटे प्रश्नोत्तर में बड़ी सरसता उत्पन्न की है, यथा—

सीता—पर लालन, एकापिकता तो

है रसुक्त की रीति, प्रहो।

लक्ष्मण—यदि भानी को सीत चाहिये,

तो प्रपन्न से कहूँ, कहो ?

सीता—अपनी चिन्ता करी लालन है।

लक्ष्मण—वर, पच-वर्षक तो हैं वे।

सीता—पर अतः शूर्पणखा के मन के

बिच धार्क्यक तो हैं वे।

लक्ष्मण—होने को भी सीत तुम्हारी।

सीता—बहु है पानी बन न सकी।

लक्ष्मण—ऐसे बनती ? अतः बिचार

को, अब बैठानी सह न सकी।<sup>१</sup>

इस प्रकार बमत्कार भाव प्रबलता, संक्षिप्तता आदि के गुणों से कवि ने अपने सम्बन्धों को परिष्कृत किया है।

भाबमयता—कवि ने अपने सम्बन्धों में विविध भावों की रचना की है। उमिता के विद्रोह का स्वर, राम के साथ बार्तासाप में धारमसमर्पण के रूप में परिष्कृत ही जाता है—

वर, है धार्य, धार्य धारुति की

यह धटिना परि धाई है,

तो मैं बाबा नहीं बनूँ धी,

धी रसुवीर दुहाई है।<sup>२</sup>

१ 'उमिता', बचत सर्ग, पृष्ठ ५०४-५२५।

२. वही पृष्ठ ३०१।

इसी प्रकार कवि हास-परिहास के भावों को प्रकथन सृष्टि करता है। इससे विषय की पम्प्रीरता में सरसता तथा स्वाभाविकता के तत्त्व समाविष्ट हो जाते हैं और गल्बरता बहती है।

वचन-चातुरी—‘उर्मिला’ के सम्बन्धों में वचन-चातुरी या वाक-चातुर्य की श्रुति भी उसी प्रकार मूर्क रही है जिस प्रकार मोती में से उभरती धामा। इससे वहाँ रोचकता तथा भावमयता की वीर्यवृद्धि होती है, वहाँ धारण्य की प्राप्ति भी होती है। उर्मिला, प्रथम-सप्तम धाम्ना, सप्तम सीता, सप्तम धारि के कथनों में वाक-चातुर्य का वैभव सिमटा रहा है। भावविदग्धता तथा वचन-चातुरी का एक दृष्टान्त पदांश है—

सीता—क्या हिय में या बड़ी कोई  
सुपङ्गु नीब को ठगुरानी ?  
क्या लंका के किसी भरोखे  
जयन रह गई धरमदानी ?  
प्रयत्न क्या कोई बनबाला  
कुछ टोला कर यह, कहो ?  
किसकी यह संस्मृति नेनों में  
धलत चाह भर गई, कहो ?<sup>१</sup>

सप्तम—भाभी, यदि ऐसी ही मोली  
होती ये बिदेह जलियाँ  
यदि, यों सङ्ग छोड़ बँती ये  
रघुपुत्रों का हिय-धास्य,  
तो क्यों धाव लंका में होता  
बन्धु विभीषण का शासन ?  
कौन बाधरवियों को रक्षती  
हैं बिदेह की मण्डलियाँ,  
बड़ी चतुर ही तुम मैथलियाँ,  
हो तुम सब मायाबिनियाँ।<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि के सम्बन्धों का वाक-चातुर्य, शब्द-चमत्कार, भावमयी चमत्कृति धारि कथनों पर प्रकटमिष्ठ है।

वक्त्ररत्न—‘उर्मिला’ में धार्मिक वक्त्ररत्नों की संयोजना भी की गई है। यह कई कथनों में प्रकट है। सन्ने सप्तमकण के रूप में तृतीय सर्ग के उर्मिला तथा सप्तमकण के रूप में धारि है। यह काव्य का मूलार्थ है, क्योंकि कथा के दो प्रधान पात्र वहाँ एक ही धारि की भावनाओं तथा भावनाओं की प्रतिबिम्बित करते हैं वहाँ वचन-धामन की भावार्थिक प्रतिबिम्बितियों को भी निरूपित किया गया है। इसी प्रकार उर्मिला का कथा विषयक सम्भावण तथा सप्तमकण का प्रेम

१ ‘उर्मिला’, सप्त सर्ग, पृष्ठ ३६३।

२ वही, पृष्ठ ३६४।

विषयक सम्बा बलम्य भी, तत्वों का प्रत्येक करता है। कहीं-कहीं इनमें उन्मा देने वाली स्थिति भी पैदा हो गई है।

दूसरे रूप में बस्तुवाचों की परिणामता की जा सकती है। ये सुदीर्घ तथा धारणमित्र हैं। सबसे सम्बा भाषण राम का द्वितीय है राजसमा का है। इसमें बन-यात्रा की पृष्ठ-भूमि सिंहावलोकन, लक्ष्य आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है। युव-वेदना भी मजबूत कर यहाँ बिचार गई है। विनोयन सुधीव तथा अक्षर्य के बस्तुम्य बृहत् से संज्ञित छोटे बने बने हैं। इनमें भी परिस्थिति तथा अक्षर्यरतुदूत तत्वों का धनुधीलन किया गया है। इन भाषणों की कथानक की टाटान्यता की दृष्टि से विनोय प्रयोजन एवं उपाययता अल्पोचर नहीं होती प्रत्युत् इनमें विचारवाचों तथा मान्यवाचों से अक्षर्य होने के लिए प्रसूत सामग्री प्राप्त होती है। साथ ही कवि ने अपने युव की भाषण-माद्यार्थों से भी प्रभावित होकर इनकी सृष्टि की है।

रोषकता—'अमिता' के प्रायः सभी सम्बाचों में रोषकता के धंशों का प्रभाव नहीं है। सुदीर्घ बस्तुम्यों में इनका कुछ कम धंश मिलता है। कवि सामान्य वास्तविकता को भी सुयम्य बनाये रखा है—

सीता—यही विनोय अत्य बहूती है,  
तुम तो, अलग, बिना धम ही,—  
करते हो तत्कार्य निष्कमल  
अपने अक्षर्य के सम ही।

तबमल—अलग कृपा तुम्हारी है यह,  
जो तुम ऐसा कहती हो  
मानी सुध पर तुम अक्षर्य  
समस्त करनी रूती हो,  
है पैतृक अक्षर्य तुम्हारी  
यह तत्कार्य निष्कमल, हैवि,  
बेचिल-अहा प्रसार-राशि से  
बैने पाये तुम कल, हैवि।<sup>१</sup>

कथा-मूत्र को भी रोषकता से अक्षर्य किया जाता है और प्राची बन-यात्रा का भी संज्ञित कर दिया जाता है।<sup>२</sup> इसी प्रकार रोषक-तत्वों ने कथा की सरलता तथा बोध-गाम्बता में बहूत् योक्ताल दिया है।

निष्कर्ष—अमिता में छोटे संघत तथा टीटण सम्बाचों की अक्षर्यता हीं बिचारमय धारणमित्र तथा बस्तु-निष्कमल सम्बाचों की प्रभावता है। जहाँ कहीं भी छोटे सम्बाचों की परिणामता थी गई है वहाँ अक्षर्यक शीघ्र्य निष्कमल अक्षर्य प्रकृतिप्यु मांमिक तथा अक्षर्यमित है। सुदीर्घ बस्तुम्यों में दुकृता तथा बोधिकता के युग भी पाये हैं।

१ 'अमिता' बस्तु तार्, पृष्ठ ६०८।

२ बनी, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ ११६।

सम्बन्धों से काव्य में नाट्य-चित्र तथा मन-स्वित्त-विरलेपक उपादानों की विधा त्रिगुणित्त है। सम्बन्धों के प्रमुख उपकरणों में माना उद्देश्यों की सम्पूर्णि की है। 'सकेत' के सम्बन्धों में भी सीरजता, समा-बाधुपी, बाधद्वय व्यापकता संक्षिप्तता तथा विविधता दिखाई देती है, यह 'उमिता' में नहीं है।

## वस्तु-निरूपण

'उमिता' में कथा-चरित्र, भाव-स्यङ्गता प्रभावान्विति आदि के प्रतिरिक्त, विभाव पक्ष का भी निरूपण प्राप्त होता है। कवि-कल्पना ने कवीक उपादानों का उद्घाटन किया है जिनमें स्व-चित्रण, प्रकृति-वर्णन, परिचय-योजना इत्यादि प्रादि पाठे हैं। यहाँ पर वस्तु निरूपण तथा भाव-स्यङ्गता के दम्बोप्यामित रूप का भी वर्णन गया है।

रूप-चित्रण—कवि ने गायी तथा पुरुष, दोनों ही रूपों की सृष्टि की है। गायी-वर्ण के पद-व्यंज, उमिता तथा सीता के चित्र परस्पर चित्ताकर्षक हैं। ये चित्र प्रायः सभी धर्मों में प्राप्त होते हैं। कवि ने समग्र कर्मात्म की अपेक्षा छोटे-छोटे चित्र अधिक प्रदान किये हैं। सीता उमिता के वाक्य-चित्र की छाया वर्धनीय है—

इन छोटे मनु रस-रूपों की दुगम यदुर्ध्व है—

हास-रस से हँसी धमिल-पट भरने को पाई है।<sup>१</sup>

राम तथा लक्ष्मण के स्व-वर्णन में जीवन की प्रभावता है। राम के चित्रण में उपात उत्प का रम यदुर्ध्व हो गया है—

उठे राम निज सिंहासन से,—

बन्ध मनु धमि स्वमित्त तो,

बन्ध योग विद्विता, बाधुता,

बहु लीचन धमि मिल-मित्त सी।<sup>२</sup>

लक्ष्मण के चित्र में पौरुष-शक्ति तथा साधना की रेखाओं ने ही सक्रियता दिखाता है।<sup>३</sup>

'नदीम' की के रूप-चित्रणों में स्पृष्टता, परोपी-वृत्ति तथा मांसलता की प्रभावता नहीं है। उन्होंने इन का चित्रण वस्तुपरक न करके भाव या प्रतिष्ठियापरक धमिक किया है। उनमें स्पृष्ट प्रतिरजता का धभाव है। यह उनके शृंगार-रस के चित्रण के ठीक विपरीत है, क्योंकि शृंगार-रस में उन्होंने मांसलता की प्रभावता प्रदान की है। इन कारणों से, कवि ने कहीं भी अपने नायक-नायिका का समग्र रूप-वर्णन प्रस्तुत नहीं किया है और लक्ष्मण मांसल रूप अनुपलब्ध है।

मुद्रा-चित्रण—'उमिता' में कवीक पात्रों के हाव-भाव, क्रियाशीलता, अनुभाव आदि के विविध चित्र मिलते हैं।

१ 'उमिता', प्रथम सर्ग, पृष्ठ २८।

२. वही, अष्ट सर्ग, पृष्ठ २३२।

३ वही, तृतीय सर्ग, पृष्ठ ३३८-३३९।

उर्मिका का स्थिर चित्र इष्टम्ब है—

मानो गर्भ सृष्टि रचना कर धारि कल्पना बैठ रही हो,  
बुल-बुल आसित धीर बुल विस्मित मन से मानो बाहू पड़ी हों  
मन्तक रही है कुशल तुलिका में अनेक रंगों की कई  
धानो पंजरंकी छाड़ी की पड़ी लोचनों में परछाई।<sup>१</sup>

प्रस्तुत-चित्र में लक्ष्मण-सुमित्रा-उर्मिका का समूह अपनी छटा बिखेरता है—

सुमित्रा जन दोनों के बीच—  
हो रही थी क्यकसीन,  
कि जानो दो मध्याह्नो मध्य—  
हो रही प्रकृता सम्प्रा-नीन।<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि ने विभिन्न चित्रों तथा मुद्राओं का भाङ्गन कर अपनी कथा-कुरासता का परिचय दिया है। 'उर्मिका' में कउ-चित्रों की घपेसा मुद्रा-चित्रों की बहुलता है। इन चित्रों में धातुरिक सौन्दर्य का भी समुचित रूप से उद्घाटन किया है।

## प्रकृति-वर्णन

'उर्मिका' में प्रकृति-वर्णन के सुन्दर चित्र उपलब्ध होते हैं। कवि ने अपने कथानक में ऐसे दृश्यों की संयोजना की है, जहाँ वह अपने प्रकृति-अस्य को प्रस्तुत कर सके। सीता तथा उर्मिका की कथाविवेक लक्ष्मण-उर्मिका की विन्य-जन पात्रा धारि कई ऐसे कथांच हैं, जहाँ कवि ने सुन्दर प्रकृति-चित्रण किया है।

कवि ने अपने काव्य में प्रकृति को कई रूपों में प्रस्तुत किया है। कभी वह पृष्ठ-भूमि का निर्माण करती है और कभी वह भावोद्दीपन करती है। कई स्थलों पर उतका स्वतन्त्र चित्रण भी प्राप्त होता है। अनेक बार वह भावों का स्पष्टीकरण तथा क्पाङ्कन करती भी उद्योचर होती है। प्रस्तुत-काव्य में निम्नलिखित रूप में प्रकृति-चित्रण का भाङ्गन उपलब्ध है—

(क) वर्णनारमक प्रकृति-चित्रण—'नवीन' की ने प्रकृति के कई छोटे-बड़े चित्र प्रस्तुत किये हैं। इन चित्रों में प्राकृतिक वातावरण की विरासता तथा पृष्ठधार की उपलब्धि होती है। सीता, लक्ष्मण, शैश के प्राकृतिक परिवेश की रेखाओं का सुन्दर विस्तारण करती है—

चरत वावरका उपरपका घोडित पौं हौती थी—  
घारोहल को लप घबरोहल में मानो सोती थी—  
चरत की सुभ्रता धीर नू की कालिका मिरासी—  
जानी इवैत कृष्ण शैशो को बनी हुई थी लानी।<sup>३</sup>

(ख) संवेदनारमक प्रकृति-चित्रण—प्रकृति के प्राक-चित्रों की भी बहुलता

१ 'उर्मिका' द्वितीय सर्ग, पृष्ठ २८।

२ वही, पृष्ठ ११४।

३ वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ ३४।

दृष्टिगोचर होती है। प्रकृति तथा मानव-हृदय के मध्य सामंजस्य निरूपित करते हुए, प्रकृति का सम्बेदानात्मक रूप कई चित्रों में अभिव्यक्त हुआ है—

उड़पीव हुए, घातुर से,  
तठ क्लिप्तको तुमा रहे थे ?  
कुछ सैन निमन्त्रण बैठे,  
क्यों बाहें हुआ रहे थे ।<sup>१</sup>

(ग) भावोद्दीपक प्रकृति-वर्णन—कवि ने विशिष्ट भावों के उद्दीपनार्थ भी प्रकृति की संयोजना की है। प्रकृति भी उसी प्रकार का बातावरण उत्पन्न करती दृष्टिगोचर होती है। लक्ष्मण-जमिना की प्रस्तावित वन-यात्रा के पूर्व, प्रकृति का उद्दीपक रूप द्रष्टव्य है—

कुल कुलुमी से भेजे पत्र,  
पक्षियों के बीड़ों के द्वार,  
धीर निद्रा भेजा उनको कि है—  
घाब रस्कों का रात-बिहार;  
चिटक कलिकार् कहुने लयी—  
'रात हम भी देखेंगी घाब;  
न होंगी किन्तु उन्मिन्नित घभी  
क्योंकि लपटी है हमको लाब ।'<sup>२</sup>

कवि ने जमिना-विरह-वर्णन में पद-श्रुति-वर्णन की सुन्दर संयोजना की। जमिना के विरही मनोरसा तथा कृष्ण-भाव में अनेक श्रुतों एकत्रित होकर अपने सिबिर बना देती है।<sup>३</sup>

(घ) धार्लकारिक प्रकृति-वर्णन—'जमिना' में प्राकृतिक धार्लकरण भी प्राप्य है। कवि ने अपनी भावनाओं के स्पष्टीकरण हेतु, प्रतीकों तथा प्राकृतिक उपादानों का प्रभव प्रद्वय किया है। प्रस्तुत प्रकृति-चित्रण धार्लकारिक रूप में समीकता सिद्ध हुए है—

प्राची विद्या बपूटी के सम की जमिना बबू के लोचन,  
कुछ-कुछ उन्मीलित है; उनमें घाए है लक्ष्मण, रवि-रोचन  
घनी धार्ल के घोभित हैं वे, यथा प्रसन्न के पूर्व विद्याकर,  
या पहुँचा घासोक जमिना के कपोल के कुल लमस-तर ।<sup>४</sup>

(ङ) पूष्ठाधार प्रतिपादक प्रकृति-वर्णन—कवि की प्रकृति कथा को सहजरी है। वह कथा के अनुकूल अपने रूप की सजाती-सँवारती दृष्टिगोचर होती है। सीता की उजकृमाटी बानी गामा में प्रकृति का रमणीक रूप उत्साह-वर्द्धक और तपनाभिराम है—

१ 'जमिना', अतुर्थ सर्ग, पृष्ठ ३५४।

२. वही, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १२१।

३ वही, पंचम सर्ग, पृष्ठ ४३६।

४ वही, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ ९७



स्वर्ण छटा से जब घासोक्ति होती पर्वत खेती,  
तब माणों रवि किरण पर्वती की जसकी गुन बेती  
पर्वत माता अपने हिय का हिय विपला-विबधा कर,  
सूर्यदेव को जलाधर्म बेती भी हिय को विकला कर ।<sup>१</sup>

इस प्रकार कथानुकूल प्रकृति धपना परिवेष्ट उपस्थित करती है। सीता की कथा के प्रकृति में बड़ी उरसाह तथा नव-वेष्टता है, बड़ी उर्मिधा की माया में प्रेम-भृति की प्रसिद्धि मिली है।

(ख) उपदेश-परक प्रकृति-वर्णन—दोस्वामी तुलसीदास ने प्रकृति को उपदेशारमकता के आधार पर चित्रित किया है—

बामिनि बमक रही बन नाही । बल के प्रीति जबा बिर नाही ॥

बरपहि बलर भूमि निबटाए । जबा नबहि बुझ बिछा पाए ॥<sup>२</sup>

'नवीन' की ने यद्यपि उपदेशपरक प्रकृति-चित्रण का पूर्णरूपेण अनुवर्तन तो नहीं किया है, परन्तु उसकी झलक कहीं दृष्टिगोचर हो जाती है। निम्न पद्यांश में सचन बुद्ध धवनि की रसा करते उसी प्रकार बताया गया है; जिस प्रकार सुपुत्र अपनी माता की रसा करता है—

जब रवि अपने प्रखर करों में ज्वाला ले प्राता जा—

मुनहाने को पृथ्वी जब यह लोभित हो जाता जा—

तब वे सचन बुद्ध उत भू की करते वे रसबारी,

ध्यों सपुत्र बालक करता है रसित, निब झूठारी ।<sup>३</sup>

'नवी' की के काव्य में प्रकृति के उपदेशपरक चित्र प्रत्यक्ष ही हैं। इससे उसके श्रेष्ठ प्रकृति-चित्रण का परिचय भी प्राप्त होता है।

## दृश्यांकन

'उर्मिता' के हृदय विद्यान को दो बागों में विभाजित किया जा सकता है—(क) भौतिक चित्रण या निर्वाह चित्रण (ख) गार्हस्थ्यिक अथवा लौकिक या सजीव चित्रण।

भौतिक चित्रण के अन्तर्गत रोज-काम-बातावरण आदि का प्राकृतन किया जाता है और कवि अपने काव्य के सहायक उपकरणों की नियोजना करता है। प्रकृत-काव्य होने के नाते कवि ने नगर-उत्सव-संघान, बातावरण आदि का विस्तृत वर्णन किया है। भौतिक चित्रण में प्रसंग परिस्थिति आदि का विरलेपण अपेक्षित होता है।

(क) भौतिक चित्रण—कवि ने अपने काव्य का आरम्भ जनकपुरी के घोमा-वर्णन से किया है। इसका काव्य की पृष्ठभूमि का निर्माण हुआ है और ऐतिहासिकता का भी उद्गमक हुआ है।

१ 'उर्मिता', प्रथम सर्ग, पृष्ठ ३४।

२ 'दासविरतमानस', दिव्यगदा काण्ड १४।११।

३ 'उर्मिता', प्रथम सर्ग, पृष्ठ ४०।

बनक्युपुत्री के चारों ओर रखा-भाषीर है। इसमें चार द्वार हैं। दक्षिण एवं विभीषण की राज-धाम का भी विषय है। कवि ने उपयुक्त दृश्यों एवं भावों का वर्णन करके अपनी कथा-वस्तु के लिए उपयुक्त रस-बंध का निर्माण किया है। इन दृश्य-व्यंगनामों में ऐतिहासिक, सामाजिक एवं मातात्मक वातावरण तथा परिप्रेक्ष्य को सुझाया प्राप्त हुई है।

(क) गार्हस्थिक-विषय—'नवीन' भी ने अपने काव्य में गृहस्त्री-विषयक जीवन का भी कई परिशीलन तथा सजीव चित्र खींचे हैं। यद्यपि 'नवीन' भी ने राम-कथा को पारिवारिक बराबर पर ध्यान न करके, उसे सांस्कृतिक-परिप्रेक्ष्य में प्रस्तोता है; फिर भी वे गृहस्त्री-जीवन की व्यवस्था नहीं कर सके हैं।

'उर्मिसा' के शायद सभी पात्र गृहस्त्री हैं परन्तु इनमें से कल्पित सम्पन्न जीवन को ही कवि ने उल्लेख है। जनक, मलय तथा राम के गृहस्त्री-विषयक चित्र होते हैं। इस प्रकार वे चित्र स्पष्ट तथा विरल हैं। कवि ने मानसिक प्रतिक्रियाओं की ओर अधिक ध्यान दिया है और उनका सांस्कृतिक निष्पत्ति प्रस्तुत किया है।

गार्हस्थिक-विषय की रचनाएँ अपनी सीमाओं में कई विषयों प्रसंगों, मनोभावों तथा परिस्थितियों को पाठ-बद्ध करती हैं, अतएव उनका निम्नलिखित रूप में वर्गीकरण किया जा सकता है—(१) बाह्य रूप (२) वास्तव्य (३) वास्तव्य, (४) सुभूषा (५) बेबर-भाभी सम्बन्ध (६) मातृत्व (७) भगिनी-सम्बन्ध और (८) बेबर-समाज।

(१) बाह्य रूप—गृहस्त्री-जीवन पारिवारिक दृश्यों प्रियु-कीड़ा, सम्पन्न, विवाह वर-वार धार्मिक से सापुर्ण रहता है। वर का मध-गुण रहना गृहस्त्री-जीवन का बाह्य उपकरण है। कवि ने राजा जनक का यही प्रसंग प्रस्तुत किया है। दशरथ भी अपनी राजसभा में श्री सुमित्रा वन्या-पुर में, अपने पुत्र तथा पुत्र-वधुओं से सुखी, प्रसन्न तथा मोरब मण्डित दिखाई देती है। कवि ने इन उपकरणों के संकेत प्रदान किये हैं। गृहस्त्री-जीवन में माता-पिता, पति-बत्नी, बेबर-भाभी, मनद-भाभी स्वामी-परिवारक तथा सहायोगी आदि के धर्म सुबद्धि होते हैं।

(२) वास्तव्य—'उर्मिसा' में वास्तव्य-जीवन सम्बन्धी कल्पित प्रसंगों का ही उल्लेख आया है। मृगार-रस की प्रभावता होने के कारण, कवि ने गृहविषयक चित्र खींचे हैं। राम बीवा तथा जनक-मुनयना के भी धर्मार्थ-सम्पन्न चित्र हैं।

(३) वास्तव्य—सुमित्रा, लक्ष्मण के समान, अनुमन को भी उल्लेख है और उर्मिसा पर प्रभाव स्नेह की दृष्टि रखते हैं। सुमित्रा का वास्तव्य एकदमी न होकर, बहुमुखी है। कवि ने उनकी राम-बीवा के प्रति स्नेह-दृष्टि की विषय विवेचना गृहीत सर्व में की है। उनका वास्तव्य, व्यापक तथा निष्कण्ट है।

मुनयना का वास्तव्य अपनी लक्ष्मणों पर उभरा रहता है। सुमित्रा के समान वे भी वास्तव्य तथा समत्व की प्रतिपूर्ति हैं। सीता को भी वास्तव्य तथा मनसा के रंगों से कवि ने रंगा है। सीता के इन पार्श्व का उद्घाटन बहपण तथा उर्मिसा के प्रति मुक्तकर्म में हुआ है।

(४) सुभूषा—सीता तथा उर्मिसा, दोनों ही अपनी सखी तथा श्रेष्ठ व्यक्तियों के प्रति सम्मान, विनम्रता तथा सेवा की भावना को प्रकट करती दृष्टिपोषक होती हैं। उर्मिसा

ने तो अपनी सभी सखियों को अपनी सेवा-वृत्ति तथा विनम्रता से मोहित कर लिया था। वह मुमिता की सेवा में तत्पर दिखाई देती है। सीता भी मुमिता के प्रति अपनी भद्रा को उकेलती है।

(५) बैर-भानी सम्बन्ध—इस प्रसंग में उर्मिला-अनुष्ण एवं सीता-लक्ष्मण के चरित्रों को ही प्रमुखता प्राप्त हुई है। कवि ने बैर-भानी के सम्बन्ध को सम्मानपूर्वक तथा मधुर रूप में प्रस्तुत किया है। बैर-भानी प्रायः में गम्भीर विषयों की चर्चा भी करते हैं और हास-परिहास भी करते हैं। उर्मिला-अनुष्ण-सम्बन्ध में, कदा अनेक गम्भीर विषयों की चर्चा भी उठायी गई है। इसी प्रकार अन्तिम सर्ग में, लक्ष्मण और सीता भी गम्भीर विषयों पर पहुँच जाते हैं और प्रेम के स्वल्प वन-यात्रा की महत्ता राम-सीता द्वारिक के पाचार्यों तथा ज्यों पर वातावरण करते हैं।

इस पक्ष के अतिरिक्त, मधुर वितोष से परिष्कारित प्रसंगों की भी कल्पना की गई है। इसमें भद्रा के साप-साप मृदुलता एवं वाक-वातुषी के भी वर्णन होते हैं। इन प्रसंगों में रोचकता-वृद्धि में महत् योगदान प्रदान किया है।

इन सम्बन्धों में नर्पाशा का ध्यान रखा गया है। लक्ष्मण सीता के प्रति अपनी भद्रा-बाबना को प्रकट करते हैं और सीता भी लक्ष्मण पर पुनः प्यार करती है।

भ्रातृत्व—इस काव्य में राम-लक्ष्मण के भ्रातृत्व को ही प्रमुखता मिली है। भले एवं अनुष्ण की महान् मायन-शक्ति के मध-रस अस्वीकृत प्राप्त होते हैं। लक्ष्मण राम के प्रति एकनिष्ठ तथा पूर्ण निरत है। वे अपने जीवन पर सर्वाधिक प्रमाण राम का ही पाते हैं। लक्ष्मण को शत्रु का नायक बना देने पर भी कवि ने कहीं भी मायन-शक्ति में अक्षर या लक्ष्मण के चरित्र के उत्कर्ष उठाने के हेतु, राम का अपकर्ष प्रदर्शित नहीं किया है। राम उनके लिए पिता-पुत्र्य है। वे तो सिद्ध उनके अनुपम मात्र हैं। राम ने भी अपने स्नेह तथा ममत्व की समग्र वृष्टि लक्ष्मण पर की है। राम ने अपने भादर्य तथा लक्ष्मण ने अपनी उपस्था से काव्य के धार्मिक-गुण का स्तवन किया है। इस प्रकार दोनों के भादर्य प्रेम तथा अदृष्ट धारणा की कवि ने बड़ी सुन्दर व्याख्या की है।

(७) अग्नि सम्बन्ध—'उर्मिला' में सीता-उर्मिला-माधवों एवं अग्निशक्ति चारों बहिनों का वर्णन मिलता है परन्तु बड़ी प्रथम दो बहिनों ने काव्य-कथा पर अधिकतम स्थानित किया है, बड़ी अन्तिम दो बहिनों ने अपने नापोत्सेह से ही अपने चरित्र की रक्ति-भी समझ ली है।

सीता तथा उर्मिला के वात्स्यायना के चित्रों में दोनों की पारस्परिक स्नेहाओं एवं प्रेम की मानिकर्षयना हुई है। अपने वैवाहिक जीवन में यह प्रेम कम न होकर उतरोत्तर अक्षर-हाता जाता जाता है। तृतीय सर्ग में वन-ममन के प्रबंध में कवि ने इन-दोनों अग्निशक्तियों के अदृष्ट प्रेम तथा निष्ठा की कुशल अभिव्यक्ति की है।

अग्नि-सम्बन्ध के उद्गार, नगर-सम्बन्ध भी काफी उबर कर धारा है। धान्ता को 'नाकेत' की अपेक्षा 'उर्मिला' में अधिक रेखाएँ प्राप्त हुई हैं। धान्ता तथा उर्मिला का सम्बन्ध विनोद-व्यतिरिक्त तथा सौहार्दमय बताया गया है। इन सम्बन्ध में मूय-भाव की रक्षा भी की गई है।

(८) वैभवं—'उमिता' में वैभवं-समाज को प्रस्तुत नहीं मिली है। बिन्द-वज उनके उल्लेख मात्र ही प्राये हैं और वे भी अत्यन्त विरल। राम-कथा के विस्तार को ग्रहण न करने के कारण, कवि के पास वैभवं-समाज को प्रस्तुत करने का न तो समय ही वा और न स्थान।

निरुद्ध—'उमिता' के गार्हस्थ्यिक चित्रण में विपुलता तथा विविधसुखता का प्रभाव है। 'साकेत' के समान, उसमें उत्कर्ष तथा विस्तृत वर्णन का प्रभाव नहीं मिलता। 'नवीन' की इस विधा में गुप्त भी श्री लंकाई की स्पर्श नहीं कर सके हैं।

## विरह-वर्णन

पृष्ठसूक्ति—'नवीन' की श्री यह महान् विरोधता रही है कि उनकी उमिता का समस्त चरित्र, भाषोपास रूप में, विषय की छाया से वसित है। कवि ने विरह की वेदना के मूल उल्लेख को उसकी वास्तविकता से ही प्रबलमान कर दिया है। कपोत-कपोती की कथा विन्ध्य बन-नागा, हास-विदास के चित्रों में अन्तर्हित निरति का सुखम स्वयं प्रादि के समवेत सुख ने उमिता को बौरह वर्ष की विनोद-शाबना के कष्ट में साकर चढ़ा कर दिया है।

नव-नमन की बैला में, शान्त्य जीवन की वितासिता तथा मधुरता के स्पष्ट पर व्याप, वेदना, प्राकृतता, शोक उन्माद, करन, टीस, कराह प्रादि अपने डरे काम देते हैं। इस समाचार को सुनते ही उसकी दशा अत्यन्त दयनीय हो जाती है। वह प्राकृत-व्याकुल हो जाती है। उसकी बाणी सञ्जम जाती है, हृदय इषीभूत हो जाता है। धम्पता के माध्यम से उसका हृदयगत संचित व्यार, निबस कर बढ़ने लगता है। माया सिद्धि पड़ जाती है, कष्ट सबकड़ हो जाता है और उसका रोम-रोम सिहर उठता है। मन्तव्य वह अपने हृदय की समस्त वेदना तथा व्याकुलता को समेटकर और उसे अनुसिद्ध कर, अपने सवभण का कर्तव्य-वप से विचलित नहीं करती है। उसको टीस उसके कर्तव्य के प्राञ्जलवन में घिमट जाती है। सम्मण विधा के पश्चात् कवि ने समस्त विश्व में वेदना को डोकते पाया है। सम्पूर्ण विश्व की वेदना उसके हृदय में प्रासंचित हो गई है।<sup>१</sup>

स्वरूप तथा सीमा—'उमिता' के विरह-वर्णन को दो धर्म प्राप्त हुए हैं। इनमें कवि ने विरह की विविध रूपायों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। विरह-वर्णन में कवि ने प्राचीन पद्धति एवं मूल्य नाच-ओढ़ना का स्वस्तिम समन्वय उपस्थित किया है।

उमिता के विरह में कवि ने लानाविच भावनाओं को प्रस्तुतन प्रदान किया है। इसके लिए उन्होंने मीठ-वैसी को ही अपनाया है। विरहिणी ने अपने विरह-शाबना की सीमा की शोक के सन्निवृत्त का उपस्थित किया है। वह सवभण की ही 'मोति निजा माया, ममता काम, मोह, शोक प्रादि पर विजय प्राप्त कर, एक जीवन्त श्री मोति, प्रतीक्षा के मार्ग में अपना शोषक बजाये निरन्तर बैठी रहती है। कमी-कमी उसको शीप-सिद्धा विकल्पित होने लगती है, परन्तु फिर भी वह साहस, साधना तथा समन की धृष्टता नहीं करती। उसका विनोद, समिधाप नहीं वसितु बरवान है और उसमें मानवता की मूल प्रेरणा है।

भाव-विश्लेषण—पंचम धर्म में अलकान्दिनी के विनोद का सामर उल्लेख पड़ा है। उसमें टीस विरहानुभूति की उदात्त धर्मों अर्न्तमूखी ही रही है। उमिता ने अपने लोभिक

तथा अपने विमोह का ही परिचय दिया है। वह इस चोर संकट को धकेलते ही बहाना करता जाहूरी है। वह अपने प्रियतम को कर्तव्यभंगुत नहो करना चाहती। वह नहीं चाहती कि उसके स्वासोच्छ्वास के तारों में अक्षमल के हथ फँसकर, सम्बन्धित होने का प्रसाधन देवे।<sup>१</sup>

वह अपने शिखरी पति से प्रार्थना करती है कि उसके बिरह-बीजनकमी धवन बन में जो निराशा-निश्चिणी अपने मम-भावकों को लेकर चहुँपोर बोल रही है, उसका वह पसक की प्रार्थना और मुकुटि के तीर-क्रमान के धामय से हगकमी बाण से बच करे।<sup>२</sup> कविमें ने अपने नायिका के कृश-वास का बर्तन धरषय किया है। यह बिरह-भाव प्रभाव है। सुलसीवास ने लिखा है—

धन बीजन के है कवि पास न कोइ ।

कनगुरिया के सुबरी कपना होइ ।<sup>३</sup>

इसी प्रकार नायसी ने भी कृशता की रेखाओं में बाँधा है—

हाइ मए कुरि कियरी, बसे नई तन तति,

रोब-रोब तन हनि बटे, कहेसु बिबा एहि मति ।<sup>४</sup>

गुल की की 'उमिता' भी पूसती है—

सखी, साज बया में सुनी जा रही ।

मिलु खीबनी में, सुरा बया यही ।<sup>५</sup>

प्रसार की की पडा की भी यही बसा है—

शिविस झरीर, बतन निर्गुलक खरो धबिक धबोर सुनी,

दिय पत्र मकरन्द सुटी-सी, क्यों सुरभई हुई कनी ।<sup>६</sup>

इसी परिपाटी के अन्तर्गत, 'नवीन' की की उमिता के 'तन सीन' का कृशता की रक्षणीय है—

बिकल प्राण, धानुल नयन, ध्यानुलकन, तन सीन ।

हुडि बक्ति, दिय बुक-निरठ, धई-सुरत रस-नीन ।<sup>७</sup>

कवि ने उसके बिरह पर धाम्यारिमक रंग भी बढाना चाहा है। यह प्रेम-योनिनी इस निष्कर्ष पर पायी है कि जीवन में बिरह-अपवा से हाहाभर करना व्यर्थ है। इसका मूक धान करना चाहिये।

१ उमिता, पञ्चम सर्ग, पृष्ठ ४०० ।

२ वही ।

३ 'बरबे रामाबल', सुम्बर-काण्ड ।

४ उ० माताप्रसाद द्वारा सम्पादित 'नायसी प्रणवावती', कथाकल, बोहा १९१, पृष्ठ १६५ ।

५ 'साकेत', धवन लग, पृष्ठ २११ ।

६ 'अनापनी', निर्वेद पृष्ठ १११ ।

७ 'उमिता', पृष्ठ ४०२ ।

घण्ट में उसके प्रियतम सर्वव्यापक हो जाते हैं।<sup>१</sup> वह अपने प्रियतम का सर्वत्र आकांक्षार करती हुए इत से घड़ैत हो जाती है। उसका यह निनष्ट हो जाता है और वह नये सन्मण्ड-रूप बन जाती है—

मेरे कर में धनुष है, मेरे कर करवात,  
नई बनक जा उर्मिला, अस्मरु, वरारथ लाभ।<sup>२</sup>

पद्-शत्रु-वर्णन—उर्मिला भी व्याप-वेदना पर शत्रुओं के परिवर्तन का भी महन लाभ पड़ता है। पद्-शत्रुओं उसके जीवन में बिच्छू घूम मचाती हैं। कर्म ने यही परम्परगत रूप को ही ग्रहण किया है।<sup>३</sup>

‘साकेत’ के समय, ‘उर्मिला’ का भी पद्-शत्रु-वर्णन ग्रीष्म से भारम्भ होता है। ग्रीष्म-शत्रु अपने पूर्ण प्रवेग के साथ उसके मुहुत-पाव पर जाबा बोलती है। बिरहिली अपने रूप से श्रुत नहीं होती—

तपत व्याह, धमकत कुन्त, कुन्त, लक्ष्म मय बौन,  
बली जात, होइ छतत, पम्पगामिनि यह कौन ?<sup>४</sup>

वर्षा-शत्रु में उसका हृदय हलर उठता है, महन जर्मों पहारने लगती है, मन्नों में बदना का रंग बहने लगता है और मन्नुपाव के कारण, उसकी जीवन-स्मरिया पकित हो जाती है। फिर भी वह अपने सन्मोम्बुल है—

संतुषल है जीवन-वपर, पंक्रमयी नूँ जात,  
चिन्तन-चिन्तन याबिली, बली जात अनुत्पल।<sup>५</sup>

घरह शत्रु में पूर्ण अग्र प्रियतम का स्मरण विला देया है—

ह्यों पुरन यमि उरित हूँ, मसत गयन भंकार,  
ह्यों बिलकत क्षिप-भयन में, पीतम-सवि-साकार।<sup>६</sup>

विधिर शत्रु जानोहीपन करती है—

मानिगत भी मानना, बंध रहिबे की बाहु,  
सिन्धिर-निपाशा में करत, बलिभ क्षिप-जस्ताह।<sup>७</sup>

भाव के नेपों के प्रतिश्रिया भी इष्टव्य है—

परकत भाव के नेप विरत सब धीर,  
कंसत करल, नरकत हृदय, हीत दाम्य पनधोर।<sup>८</sup>

१ 'उर्मिला', पृष्ठ ५१२ ।

२ वही, पृष्ठ ५१२ ।

३ वही, पृष्ठ ५३६ ।

४ वही, पृष्ठ ५३७ ।

५ वही, पृष्ठ ५३८ ।

६ वही, पृष्ठ ५३९ ।

७ वही, पृष्ठ ५४० ।

८ वही, पृष्ठ ५४१ ।

हेमन्त ऋतु तो संक्षय तथा आर्षेयप्रभों को जन्म देती है। स्थिति का आकस्मिक इस प्रकार होता है—

रोम-रोम कौपि पठतु है, छिट्टरि जात शन-श्रव  
घोषित तें सुद परतु है, हिय-वेरना धर्मण ।<sup>१</sup>

बसन्त बहौ भाषा को बाँधता है, बहौ वेरना को भी उरसाता है—

घोषिं छिट्टरि बेराख्यमय, संक्षयमय हेमन्त  
पावत तब पय मामिनी, पुनि चिर भास बसन्त ।  
उठि आसत है हृदय तें, पुनि बच बोधन छाँस,  
भासा सुहृदाबसि सन्धुरि बुध्दु बेरना फाँस ।<sup>२</sup>

कवि न केवल ऋतु-परिवर्तन के प्रभावों को ही बिरहिली पर प्रोक्ष है, प्रत्युत प्रकृति में भी भाव-ताम्य उपस्थित किया है। वियोगिनी उमिता को प्रकृति के विभिन्न उपकरणों में अपने स्वामी के व्यक्तित्व के विविध संघों की धामा ही छट्टियोजर होती है। उसने अपने प्रियतम की विभिन्न भावनाओं को प्रकृति के विभिन्न रूपों में देखा-नरखा है। पतम्भ में उनका वैराग्य, छिट्टरियों में उनका क्विर धनुराव पाटल-कुमुम में ह्यास्यतरंग, पुष्प-गस्तबों में उनका धोकुमार्य, पटाग में उनकी चरण-पैणु, भारतम्भ में उनका तैज-बर्ष धोर पावत-ऋतु में उनकी मावकता का रंग धसकता दिखाई देता है ।<sup>३</sup>

वियोग अवस्थाएँ—बिरह की दस अवस्थाएँ या काम दशाएँ मानी गई हैं—अभिज्ञाया चिन्ता, स्मृति, पुस रूपन उदेय, प्रसाप उग्माव व्याधि, बहृता धोर मरण ।<sup>४</sup> 'अभिज्ञाया का चित्रण इन पंक्तियों में हुआ है—

तिपटि लपेटै सुजन तें तुमहि जीवनाधार,  
धाय, तिछावर ह्यै चहै, बस इतनी मनुहार ।<sup>५</sup>

लक्षण के लभ्य भष्ट होने की चिन्ता के कारण उमिता छट्टि नियेन करती है—

सुरि कनि देबहु तुम इतें है सुकुमार कुमार,  
धरनि बाईने हय इहाँ बिने छाँस के हार ।<sup>६</sup>

उमिता को अपने विमल दिनों की स्मृति हो जाती है—

इतनी इहता तो पट्टी मो कर उन करि प्यार,  
हौं बिदेह-तनया हृह, करि पठती लीत्कार ।<sup>७</sup>

१ 'उमिता', पृष्ठ ४४२ ।

२ वही, पृष्ठ ४४३ ।

३ वही पृष्ठ ५११ ।

४ श्री रामदहिम मिश्र 'काव्य-दर्पण', पृष्ठ १७६ ।

५ 'उमिता', पृष्ठ ४६२ ।

६ वही, पृष्ठ ४०० ।

७ वही, पृष्ठ ३०२ ।

लक्ष्मण के सुल-कथन के रूप में घनैक बोधे प्राप्त होते हैं। उर्मिला की स्मृति उनके दुर्गों का उद्घाटन कर रही है—

बहु जसाहु सम्य्य प्रति, उनकी बहु ठकुपाठ,  
सद्य स्मृति की प्रभुहु बहु, शिपहि करत सोस्साह ।<sup>१</sup>

बहु धारोकि तथा मानसिक उद्वेग से पीड़ित है—

भ्रातिपन की भावना, सद्य रहिये की चाह,  
शिरि निराछा में करत, घीसल शिप-उस्साह ।<sup>२</sup>

कवि ने जगदादाबस्या का चित्रण इन पंक्तियों में किया है—

भयो उर्मिला को हृदय, लक्ष्मण हृदय धनुष,  
करी उर्मिला सखनमय, लखन उर्मिला रूप ।<sup>३</sup>

प्रभाप, व्याधि, बड़ता एवं मरण के स्पष्ट मनोवृत्ति-परिचायक चित्र निरस्त हैं। कवि ने इन काम बहाधों के चित्रण में स्वच्छन्द भावसूचिकाओं का भी प्रयोग किया है केवल कवियों का अनुसरण मात्र नहीं।

पबस्परपतिका तथा प्रोपितपतिका—कवि ने उर्मिला का चित्रण पबस्परपतिका एवं प्रोपितपतिका नामिका के रूप में किया है। अपने स्वामी की प्रवास-वेला में वह दुःखी तथा खिन्न धरमय है परन्तु उनके मार्ग का चित्र नहीं बनती। कवि ने उसकी मनोव्यथा की मार्मिक व्यंजना की है।

रीति की छाप—कवि ने बिछ-व्यंजना के लिए दोड़े-सोरटे वाली मुक्कत वीली को अपनत्व प्रदान किया है। कवि के हृदय में प्राचीन काव्य के प्रति बड़ा मोह था। वे ही संस्कार नहीं प्रसूटित हुए हैं। यहाँ रीतिकालीन मनोवृत्ति का भी परिचय प्राप्त होता है। 'उमचरित मानस' में दोड़े-बीपाई की वीली अपनाई गई है। सम्भवतः कवि ने उसी का ही अनुवर्तन करते हुए, दोड़े-सोरटे की पद्धति को अपनाया हो। कवियों में कृष्ण की शक्ति के वर्णनात् संस्कार ने एतदर्थ, उनकी मुक्कत वीली को ही उतनी वेगस्कर समझ हो। साप ही, 'साकेत' में प्रगीतों के माध्यम से त्रियोगावस्था का चित्रण है, कवि ने दोड़ा-सोरटे की पूषक, धमिनक तथा संस्कारगत वीली को ही अपनाया उचित समझ। धार्मिक काव्य में यह पद्धति नहीं अपनाई गई है। दोड़ा, कवि का प्रिय, सहज तथा प्रबुल्लानुभूत शब्द है।

कवि पर जायसी, कबीर, रहीम आदि कवियों का पहल प्रभाव पड़ा है। जहाँ 'उर्मिला' में शैलिक-विभोग पर प्रबोतिक प्राम्थ्यन चढ़ाया है, वहाँ उसने जायसी प्रवृत्ति रहस्य वाली कवियों के सहज संवावसी का प्रयोग किया है। पंचम धर्म में प्रयुक्त शोभिनी, सुमिरिनी, कुनरी, प्याल ज्ञान तथा प्रियवत के प्रथम दैव की चर्चा आदि पर निर्गुण-सत्तों का स्पष्ट प्रथम परिबद्धित किया जा सकता है। जायसी के प्रभाव के कारण ही, कवि ने कहीं-कहीं शैलिक-व्यथा को शैलिक रूप प्रदान किया है। कवि ने कहा है—

१ 'उर्मिला', पृष्ठ ४८३।

२. वही, पृष्ठ ४४०।

३. वही, पृष्ठ ५१३।



सुट गई जर्मिता पस में  
 डेकर अपना जीवन धन  
 प्रिय के विद्रोह की लपटें,  
 बस गई यज्ञ हुआसन,  
 बिरहानल मय धरमल में  
 खिल जली तपस्या-कतिपा,  
 हिय यककन बनी सुमरबी,  
 संसृति बन गई प्रबुनिया ।<sup>१</sup>

जायसी भी कहते हैं—

बिरि, समुद्र सति, मेघ, कवि सखि न लछाहूँ यह भापि ।  
 सुहृद सती सराहिण, बरे सो भस पिउ लामि ।<sup>२</sup>

'नवीन' भी लिखते हैं—

कारी निधि, कारी प्रबलि कारी बिसि कृपचाप  
 कारी मयन कनौनिका, कारे केस-कलाप ।  
 कारे हुन कारी लता कारी सब संसार,  
 कारो-कारो छै रह्यो, हिय-विद्रोह-संसार ।<sup>३</sup>

जायसी की नाममती भी कहती है—

पिउ सी कहैव सविसड़ा हे नीरा हे काग ।  
 तो बनि बिरहै बरि मुई लेखिक सुपाँ इम्हू लाग ।<sup>४</sup>

जायसी के 'हरिमल प्रेम कि बाधि क्षरा' तथा रघीन आभावाग के भांगुषों को घर  
 वा भिर बवाने बाकी बात थी, मानो 'नवीन' भी यहाँ पुष्टि कर रहे हैं—

कैसे प्रीति बुराहण ? है धरि कठिन बुराण ।  
 हाव-भाव रंघ-रंघ सी, धरलि जठल हिय-बाव ।

काव्य-कवि के अनुसार, बिरह-वेता में प्रकृति की मर्दाना भी जाती है। पुरवास भी  
 बस-बनितारें भी प्रकृति को कोसती हैं—

बसुवन, तुम कत रह्य हरे ।

बिरह विषोष स्याम-सुन्दर के ठाड़े बनों व बरे ।<sup>५</sup>

नवीन भी ने भी काव्य-कवि का अनुसरण किया है। उनके बिरहिणी नास्तिक  
 उत्साह देखकर उदासीन हो जाती है—

१ 'जर्मिता', पृष्ठ ३८८ ।

२ 'जायसी नाममती', पृष्ठ ३०।१५ ।

३ 'जर्मिता' पृष्ठ ४०९ ।

४ 'जायसी नाममती', ३।९, पृष्ठ १३४ ।

५ 'शूर लागर' वरान सङ्ग्रह, ३८२८, पृष्ठ १३५३ ।

देखि क्या को बिहसिबौ, प्राची को मुहुहास,  
बिरहनि इन बिन दिनम में खीचत, होत बवास ।<sup>१</sup>

प्रकृति उसको भी-हीन दृष्टिगोचर होती है ।<sup>२</sup> परन्तु 'साकेत' की उर्मिसा इसके विपरीत कृत्य सम्पन्न करती दिखाई पड़ती है—

फुल सिखी आनख से तुम पर मेरा तोप,  
इम मनसिब पर ही सुने, शोष बेचकर रोब ।<sup>३</sup>

इस प्रकार कवि ने रीति-बद्ध तथा रीति-मुक्त, दोनों स्त्रियों की सृष्टि की है । अपनी बिरह-बर्णन को नये मानवतावादी संस्पर्ध प्रदान कर, उसने स्वच्छन्द मार्ग का अनुवर्तन भी किया है ।

प्रबन्ध संगति—काम्योत्कर्ष की दृष्टि से पंचम सर्ग अप्रतिम गरिमा मण्डित है परन्तु यह भी उचित है कि उर्मिसा का बियोग-बर्णन प्रबन्ध-प्रवाह में अचरोक्ष उत्पन्न करता है और अन्य तत्व को बिलुप्त कर देता है । अतुल्य एवं पंचम सर्ग में धाकर कथा-सरित सुख मया है ।

चरित्रों के प्राधान्य प्रेम-कथा की नियोजना एवं काव्य के हृदय को उद्घाटित करने के लिए इन सर्गों की नितास्त धातुशक्ति है । परिपाटीगत महाकाव्य की सम्पुति का यहाँ कवि-शैली भी नहीं था । अतएव अन्य उपकरणों को अज्ञान में लेने के कारण इस बर्णन तथा सर्गों की उपादेयता को निरर्थक स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

सारांश—'उर्मिसा' के अतुल्य सर्ग में बिरह-मीमांसा के अन्तर्गत प्रमुक्त भावों की व्याख्या की गई है । इस सर्ग का बही मूल्य है जो कि 'साकेत' के नवम सर्ग एवं 'कामायनी' के 'सम्भा' सर्ग का है । अतुल्य-पंचम सर्गों में काव्य-भी अज्ञात बिरह मई है ।

कवि ने उर्मिसा के बिरह-बर्णन को व्यक्तिगत कुटुंब तक ही सीमित कर उसे एकांगी नहीं बनाया है । उसे व्यापकता तथा विश्वासता को रखाएँ भी प्रदान की है । राम-कथा में सुमित्रा बदरब, भरत प्राणि विशेष प्रवेशणीय है । अतुल्य उर्मिसा के बिरहानु ने ही इन धर्म्य उपहारों को मानवता को प्रदान किया है—

मानवता किसि पावती, वे अमोल उपहार,  
यदि न उर्मिसा सबन में, होते हाहाकार ?<sup>४</sup>

कवि ने उर्मिसा के बियोग को अनेकसुखी दृष्टिकोणों से देखा-परखा है । साथ ही उसने मोक्षिक संस्पर्ध भी प्रदान किये हैं । बियोग को रहस्यकारी एवं अस्म्यारथपरक मानवतादर्श की बराबर पर तोलने की कल्पना कवि की अपनी शुरु है । फिर भी इतना ही निश्चित है कि 'साकेत' की उर्मिसा तथा 'प्रिय प्रवास' की उर्मिसा के समान 'उर्मिसा' की उर्मिसा की बिरहावस्था तथा उद्घाटनक अन्तिम इतनी परिमा-मण्डित तथा अद्वितीय नहीं हो सकी । फिर भी 'उर्मिसा' में धारण प्रेम तथा बेचना के व्यापकत्व के सुन्दर चित्र प्राप्य है ।

१ 'उर्मिसा', पृष्ठ ४२० ।

२ वही पृष्ठ ४२४ ।

३ 'साकेत', नवम सर्ग, पृष्ठ २२७ ।

४ 'उर्मिसा' पृष्ठ ४२६ ।

'साकेत' के विरह-बर्णन की कलात्मक सौन्दर्यता तथा मानवीय पक्ष की समकक्षता यह नहीं धर्यन कर सक्त है।

भाव-व्यंजना—'उमिषा' में भावना की अपेक्षा विचारों को अधिक प्रमुखता प्राप्त हो गई यद्यपि यह काव्य भाव-पूर्ण स्वर्णों से विहीन नहीं है। राम-कथा के सम्बन्ध में जो प्रतिस्तिप्रारम्भक एवं मन स्थिति विषयक दृष्टिकोण अपनाया है, उसने विचार प्रधानता के स्वल्प को भी पुष्ट कर दिया है।

प्रधान-रस—प्राचार्य निरुक्तान्त के मतानुसार, महाशब्द में शृंगार, भीर और शान्त में से किसी एक की प्रधानता होनी चाहिए—

शृंगारबीरशान्ता नामैकोऽङ्गीरस इष्यते।

संगानि सर्वेऽपि रसा सर्वे नाटकसंभवः।<sup>१</sup>

'उमिषा' का प्रधान रस शृंगार है और मूल भाव रति है। उमिषा की प्रधानता के कारण शृंगार रस को ही धीरे-स्वल्प प्राप्त हुआ है। कवि ने राम कथा को भी उमिषा के परिप्रेक्ष्य में ही रखा है। उमिषा-सदमण का संयोग और प्रमुखता उसका निरप्राम्भ शृंगार ही काव्य का हृदय वा सार-तत्व माना गया है। यद्यपि कवि ने कथन रस में शक्ति मन्थने कथना तथा वेदना की प्रधानता तथा उमिषा को कथना की मूर्ति की बात अनेक बार कही है, परन्तु इसे कथन-रस के द्वासीय भाव्यान्त रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता। राम धनबा धरत के नामकल्प में इस शब्द के धनी रस पर धनधर ही प्रभाव पड़ता और वह भीर रस या शान्त रस में परिणत हो जाता। परन्तु उमिषा के नामकल्प के कारण वह शृंगार का ही रूप धारण कर सका। इस काव्य में शंका विचार वेदना कथना आदि भावों को पोषक या सहायक भावों की ही स्थिति प्राप्त हो सकी है। इस प्रकार प्रस्तुत काव्य का धीररस शृंगार रस ही है और उसमें भी निरप्राम्भ शृंगार को प्राधान्य प्राप्त हुआ है।

भाव-पूर्ण स्वल्प—कथा के हृदय-स्पर्शी स्वर्णों की पहचान कवि की धानुक्तता का निरूप माना गया है।<sup>२</sup> काव्य के भाव-पूर्ण स्वर्णों का जयन, कवि की प्रवृत्ति एवं दृष्टिकोण होना चाहिये। कवि के काव्य के हीन गुणविशु कथना प्रेम तथा विरोध है। इन तीनों दोषों में इस काव्य में उत्कृष्ट स्वर्णों की सर्जना की है। सीता-उमिषा की वास-श्रीद्वार, सरयु-सद पर धनध-सलतापीय का पारस्परिक सम्पादन शत्रुधन-उमिषा का मधुर वाचनान्त पाम्ना-उमिषा परिवास विनय जन-यात्रा, राम-वनगमन की सदमण-उमिषा विषयक मन-स्थितियों की धर्मव्यक्ति बन बिना बैला में राम, मुनिना सीता उमिषा तथा शक्यल के परिष्कार, उमिषा की विरह-व्यथा संघ की राम-समा में राम-विनीक्षण-सुधीर की सुधीर बहूजाएँ और अन्त में पुनरु-विमान में राम सीता का मधुर तथा हास धानुपूर्ण सम्पादन को इस काव्य के मानिक स्वर्णों के रूप में ग्रहण किया जा सकता है।

सीता-उमिषा की कैलि-श्रीद्वारों में वासस्थ तथा धानुर्व की प्रधानता है। धनध

१ 'साहित्य-सर्वता' पृष्ठ बरिष्ठीय, श्लोक ११७।

२. प्राचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'बोस्वामी तुलसीदास', पृष्ठ ६८।

बनिताओं के परिचम्भार में हास, रति आदि को मुहरता मिसी है। सत्रुण-उमिता के मधुर वार्तात्वाप में मधुमता तथा प्रमदिव्युता ने प्रथम प्रकृष्ट किया है। यही स्थिति धाम्ना-उमिता सम्भार की है। ये सब स्वतन्त्र ध्वस्त हृदय-सर्वाँ रोचक तथा सरस बन पड़े हैं। इन प्रसंगों में कथा भागती है। ये काव्य के परपन्थ रससिद्ध स्वतन्त्र हैं। विन्ध्य-वन-यात्रा के प्रसंग में कवि ने संयोग-शृंगार के उत्कर्ष की श्रद्धा प्रदान की है। बिबा वेला तथा तत्सम्बन्धित प्रतिक्रियाओं के प्रसंग धर्षीय शोभस्वी बिबारोत्तेजक तथा मनोवैज्ञानिक हैं। इनमें एक साथ उत्साह, स्तुति तथा प्रखरता के धक में धारम-विनय, करुणा तथा वात्सल्य के दर्शन होते हैं। उमिता की विरह-भ्यसा में विप्रसम्म की उँचाई को कवि ने सुभा है। धाम्मन का उत्सेह कहीं-कहीं प्राप्त होता है। उदीपन विमान के धम्तगत प्राकृतिक उपादानों—यथा पद् श्रुतु बर्णन उदहन पुष्प, कम्भमा आदि की सुष्कु-भ्यंजना की गई है। उमिता के धनुमाओं की बिषद बिबेचना प्राप्त होती है—यथा धयु स्त्रेय, कम्म कृपता आदि। संघापी-माओं के बाबत समझ पुमङ्क धाये है। पूर्ण स्तुतियाँ तथा प्रथ में प्रिय से धरैत माव की स्थिति ने इस प्रकरण को पर्याप्त हृदयस्पर्शिता प्रदान की है। संघा की राज-समा के व्याख्यानों में धोबन्धिता बीबन-दर्शन तथा विनीत माओं की सृष्टि हुई है। धयोप्या-परावर्तन में सीता-सयमण सम्भार ने माधुर्य रोचकता, सजीवता करुणा धारम-दर्शन धाम्प्यारिकता तथा निबेद की गौर्षों को जोता है। धम्तम प्रसंग में हास्य, विप्रसम्म धाम्प आदि रसों की सुन्दर भक्तक मिसती है।

इस प्रकार कवि ने मार्मिक स्वसों का जपन, उमिता के धरिज-यापन तथा राम-कथा की सांस्कृतिक-व्याख्या के दृष्टिकोण से किया है। इन प्रसंगों में कवि को चित्रण तथा ध्येय क्रियान्विति में पर्याप्त सफसता प्राप्त हुई है।

माधुकरता—डॉ० नयेन्द्र के मतानुसार विस्तार तीव्रता तथा सूक्ष्मता के धाधार पर ही माधुकरता को कसोटी पर कसा जा सकता है।<sup>१</sup> उमिता के धरिज-चित्रण में विस्तार का प्रयोग हुआ है और उसके सम्पूर्ण विकास का जो निधार तथा करुणा की बयसी छाई रहती है, उसके धूर्तों का सुदमता का साव विकास दिखाना गया है। वन-यात्रा से उद्भूत धम्तर्षण तथा बहिर्षण के धाख्यानात्मक प्रसंग में तीव्रता ने अपनी तीव्र किरणों का बाल फैला दिया है। माधुकरता परीक्षक के इन तीनों तलों में से 'नवीन' जो में तीव्रता के गुण की ही प्रधानता बिबाई हैती है। बास-कैसि मांसन संयोग विम्भबमय प्रतिक्रियाएँ बीबन-दर्शन निष्पण आदि सभी धाधारसूत स्तम्भों में तीव्रता का रूप ही सर्वाधिक धाम्बल्यमान् है। उधमें न ही राम-कथा का ही विस्तार मितता है और न तद्विषयक प्रख्यात तथा मार्मिक प्रसंगों की सूक्ष्म-तत्सर्षिता।

कवि की प्रकृति प्रधानतया करुणा तथा प्रखर धर्तों में ही रमी है। इन्हीं को प्रतिधारी मोतकों से कवि का ध्यच्छिन्न बीबन तथा साहित्य की अपनी सीमा नापता है। कवि की मूल भावना, उमिता की भक्ति रही है। वह उमिता को मात्रा दृष्ट, धाराम्य तथा प्रेरणा-धुन के रूप में प्रकृष्ट करता है और अपनी समग्र धास्वा भदा एवं धारमरीनता को उनके धीधरणों में नतमस्तक होकर समर्पित करता है। कवि ने धानुयधिक रूप से राम-सीता को भी अपनी भक्ति समर्पित की है परन्तु इन धरिनों की रेखाएँ गहरी नहीं हो पाई हैं, वह एकनिष्ठ तथा एकधेयुध होकर उमिता की ही भक्ति एवं नाम-स्मरण करता है।

१ 'साहित्य : एक धम्पयन', पृष्ठ १४४-१४५।

'संकेत' के विरुद्ध-बर्तन की कलात्मक शोच्यता तथा मानवीय पक्ष की समकक्षता यह नहीं दर्शाने कर सका है।

भाव-व्यंजना—उर्मिला में भावना की अपेक्षा विचारों को अधिक प्रमुखता प्राप्त हो गई यद्यपि यह काव्य भाव-पूर्ण स्वतंत्रों से विहीन नहीं है। राम-कथा के सम्बन्ध में जो प्रतिष्ठित्यारम्भ एवं मन-स्थिति विषयक दृष्टिकोण अपनाया है, उसने विचार प्रधानता के स्वल्प को भी पुष्ट कर दिया है।

प्रधान-रस—प्राचार्य निम्बनाथ के मयादुसार, महाकाव्य में शृंगार, वीर वीर शान्त में से किसी एक की प्रधानता होनी चाहिए—

शृंगारवीरशान्ता तामैकोऽङ्गीर्य इभ्यते।

संयानि सर्वेऽपि रसा सर्वे नाटकसंयमः।<sup>१</sup>

उर्मिला का प्रधान रस शृंगार है वीर मूल भाव रसि है। उर्मिला की प्रधानता के कारण शृंगार रस को ही दीर्घ-स्वल्प प्राप्त हुआ है। कवि ने राम-कथा को भी उर्मिला के परिवेश में ही धरिका है। उर्मिला-नरमण का संयोग वीर प्रमुखता उसका विप्रसन्न शृंगार ही काव्य का मुख्य या सार-रस माना गया है। यद्यपि कवि ने कल्या रस में व्यन्ति मनाने कल्या तथा वेदना की प्रधानता तथा उर्मिला को कल्या ही सृष्टि की बात धनेक बार कही है, परन्तु इसे कल्या-रस के राष्ट्रीय प्राधान्य रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता। राम धनवा परम के मानकत्व में इस काव्य के धनी रस पर धन्य ही प्रभाव पड़ता वीर वीर रस का शान्त रस में परिवर्तित हो जाता। परन्तु उर्मिला के गायकत्व के कारण यह शृंगार का ही रूप धारण कर सक्ष्य। इस काव्य में धनका विषय वेदना, कल्या धारि भावों को पोषक वा उद्घाटक भावों की ही स्थिति प्राप्त हो सकी है। इस प्रकार प्रस्तुत काव्य का संवीर्य शृंगार रस ही है वीर रसमें भी विप्रसन्न शृंगार को प्राधान्य प्राप्त हुआ है।

भाव-पूर्ण स्वल्प—कथा के हृदय-स्पर्शी स्वतंत्रों की पहचान कवि की भावुकता का निकष माना गया है।<sup>२</sup> काव्य के भाव-पूर्ण स्वतंत्रों का अर्थ कवि की प्रकृति एवं दृष्टिकोण होना चाहिये। कवि के काव्य के हीन मूलविशेष कल्या प्रेम तथा विद्रोह हैं। इन तीनों मोसकों ने इस काव्य में बहुदृष्ट स्वतंत्रों की सर्वना की है। सीता-उर्मिला की बात-शीघ्राई, बरसु-रस पर धन-सतनामी का पारस्परिक सम्भाषण धनुष-उर्मिला का मधुर वार्त्तालाप धान्ता-उर्मिला परिव्राज विन्य धन-भागा, राम-धनमन की सखल-उर्मिला विषयक धन-विशेषियों की धर्मिकिक धन विवा बैठा में राम, मुमिता सीता, उर्मिला तथा सखल के शिखरार उर्मिला की विरुद्ध-स्वभा, संय की राज-सभा में राम-विनीय-मुदीय की मुदीय बहुश्राई वीर धन्य में पुण्य-विमान में राम सीता का मधुर तथा हास धान्ता सम्भाषण को इस काव्य के धार्मिक स्वतंत्रों के रूप में ग्रहण किया जा सकता है।

सीता-उर्मिला की धर्मिक-विशेषों में बाह्यस्व तथा बाह्य की प्रधानता है। धन्य

१ 'साहित्य-सर्वता' पृष्ठ परिच्छेद, इलोक ११०।

२. प्राचार्य रामकाय मुक्त 'मोक्षामी तुलसीदास', पृष्ठ ६८।

बनिताओं के परिचयार्थ में इस रति भावि को सुखरता मिली है। अनुपम-उर्मिसा के मधुर वार्त्तालाप में मृदुलता तथा प्रमदिव्यमुता ने प्रथम प्रहण किया है। मही स्थिति आन्ता-उर्मिसा सम्बन्ध की है। ये सब स्वस प्रत्यक्ष हृदय-स्पर्शि रोचक तथा सरस बन पड़े हैं। इन प्रसंगों में कथा मागती है। ये काव्य के परमण्डल रससिद्ध स्वस है। विन्ध्य-वन-यात्रा के प्रसंग में कवि ने शंबोग भृंगार के उत्कर्ष की मञ्जी प्रबान की है। विद्या वेत्ता तथा उत्सम्बन्धित प्रतिक्रियाओं के प्रसंग अतीव मोक्षसी, विचारोत्तेजक तथा मनोवैज्ञानिक है। इनमें एक साथ कथा, स्तुति, तथा प्रखरता के अंक में भारत-वित्त, कल्याण तथा वात्सल्य के दर्शन होते हैं। उर्मिसा की विरह-स्वभा में विप्रलम्भ की ठेकाई को कवि ने लुभा है। भारतम्बन का उल्लेख कहीं-कहीं प्राप्त होता है। उदीपन विभाव के अन्तर्गत प्राकृतिक उपादानों—जथा पद्-शुभ्र कर्म, उपवन पुष्प, अन्तमा भावि की सुशु-म्बजता की मई है। उर्मिसा के अनुमानों की विस्मय विवेचना प्राप्त होती है—यथा, प्रभु, स्नेह, कम्प कृपाता भावि। उंचारी-भाषों के वाक्म उमड़ मुमड़ पाये हैं। पूर्ण स्तुतियाँ तथा प्रसंग में प्रिय से प्रियेय भाव की स्थिति ने इस प्रकार को पर्याप्त हृदयस्पर्शिता प्रबान की है। उंचा की राज-समा के व्याख्यानों में मोक्षस्थिता, जीवन दर्शन तथा विनीत भावों की सृष्टि हुई है। प्रयोष्या-परवर्तन में, शीता-सकमण सम्बन्ध ने माधुर्य, रोचकता समीकता कल्याण, भारत-वर्तन आध्यात्मिकता तथा निर्बंध की गार्थों को जोता है। अन्तिम प्रसंग में हास्य विप्रलम्भ आत्म भावि रसों की सुन्दर मूलक मिलती है।

इस प्रकार कवि ने मार्मिक स्वसों का जनन, उर्मिसा के चरित्र-वाचन तथा राम-कथा की सांस्कृतिक-व्याख्या के दृष्टिकोण से किया है। इन प्रसंगों में कवि को विष्णु तथा श्वेय क्रियान्विति में पर्याप्त उपलब्धता प्राप्त हुई है।

मायुक्तता—डॉ० नयेंद्र के मतानुसार, विस्तार तीव्रता तथा सूक्ष्मता के आचार पर ही मायुक्तता को कसौटी पर कसा जा सकता है। उर्मिसा के चरित्र-विष्णु में विस्तार का प्रयोग हुआ है और उसके सम्पूर्ण विकास का जो विचार तथा कल्याण की बवनी छाई रहती है, उसके सुनों का सुलभता के साथ विकास दिखाया गया है। वन-यात्रा से उद्भूत अन्तर्द्वन्द्व तथा बहिर्द्वन्द्व के व्याख्यानारम्भ प्रसंग में तीव्रता ने अपनी तीव्र किरणों का जाल फैला दिया है। मायुक्तता परीक्षक के इन तीनों कसों में से 'नवीन' की में तीव्रता के गुण की ही प्रबानता दिखाई देती है। वाच-केसि, मांसल संयोग, विन्ध्यवनय प्रतिक्रियाएँ, जीवन-दर्शन निष्कर्षण भावि सभी आचारमूढ स्वम्बों में तीव्रता का रूप ही सर्वाधिक आणव्यत्ममा है। उसमें न तो राम-कथा का ही विस्तार मिलता है और न लक्ष्मिपयक प्रख्यात तथा मार्मिक प्रसंगों की सूक्ष्म-ससम्पत्तिका।

कवि की प्रकृति प्रबानतया कल्याण तथा प्रखर अंशों में ही रमी है। इन्हीं को प्रतिवाची मोक्षनों से कवि का व्यक्तित्व, जीवन तथा साहित्य भी अपनी सीमा नापता है। कवि की मूल वाक्मता उर्मिसा की मक्ति रही है। वह उर्मिसा को माता, इष्ट, आराध्य तथा प्रेरणा-सुत्र के रूप में प्रहण करता है और अपनी समग्र आस्था अर्था एवं आत्मवीर्यता को उनके बीचरतों में नतमस्तक होकर समर्पित करता है। कवि ने प्रागुपमिक रूप से राम-श्रीता को भी अपनी मक्ति समर्पित की है परन्तु इन चरित्रों की रेखाएँ बहरी नहीं हो पाई हैं, वह एकनिष्ठ तथा एकेश्वर होकर उर्मिसा की ही मक्ति एवं नाम-स्मरण करता है।

इस काव्य में बटनाओं की सञ्चयता कला का धारोहावरोह और प्रबन्धात्मकता की अपेक्षा, भावना तथा चिन्तन के रंग गाढ़ हो गये हैं। जीवन की सञ्चयता की अपेक्षा मानसिक सञ्चयता में अधिक धक प्राप्त किये हैं। इस प्रकार यह सही ढंग में 'पूरक काव्य' की संज्ञा पा सकता है।

## आधुनिकता

स्वरूप—शाचार्य मन्वदुतारे बाबूदेवी के मतानुसार, 'आधुनिक' शब्द सर्वथा सापेक्ष है और किसी भी वस्तु की आधुनिकता उसके ऐतिहासिक निर्माण-क्रम की परिधि में ही देखी जा सकती है।<sup>१</sup> संसार के सभी महान् काव्य अपने समय की शैतना से सम्बन्ध होते हैं। मनुष्य की शक्ति समस्या का विस्फोटन उनमें रहता है।<sup>२</sup>

'उर्मिका' में मन्वदुतारे काव्य के सहज ही दर्शन किये जा सकते हैं। यहाँ आधुनिकता के घनेक धंश समाविष्ट किये गये हैं। युग की राजनीतिक सामाजिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक भावनाओं ने इस काव्य पर अपने चिह्न धँसित किये हैं। इस दिशा में यह राष्ट्रीय आन्दोलन आन्धीबाधी युग-शैतना, धार्य-समाज सांस्कृतिक पुनरुत्थान बुद्धिवाद नारी-उत्थान आदि बटकों से प्रभावित हुआ है।

सांस्कृतिक क्षेत्र—कवि धार्य-समाज से प्रारम्भ से ही प्रभावित था। धार्य-समाज ने सांस्कृतिक पुनरुत्थान में प्रमुख योगदान दिया है।<sup>३</sup>

महाकवि रजोमनाथ के श्रमाव से कवि ने उर्मिका का रूप बना। उर्मिका के शरित का उद्घाटन और उसके जीवन-सूत्रों से कला-तन्त्र का निर्माण, साहित्यिक इतिहास में एक पावटन है और विचारों की बुनियाद में एक घमिनक व्यक्तित्व। इस नवीनता को यदि 'उर्मिका' में प्रतिष्ठित आधुनिकता की धारणा कहा जाये तो कुछ भी अशुचित न होगा।<sup>४</sup> वास्तव में यह काव्य की प्रधान आधुनिकता है।

राजनीतिक क्षेत्र—आन्धी भी के व्यक्तित्व तथा आन्धीबाधी युग शैतना से कवि एक घोषा तक प्रभावित हुआ है। राष्ट्रीय आन्दोलन के युग में सत्यनिष्ठ आन्धी भी के चरणों के पीछे बन-सेना तथा इतिहास जसा था। उसी का यह रूप है—

घातहृत्पर पराशित कुण्डित,  
भू कुट्टित उन्मुक्त हो,  
सत्यमेव विजयी हो, राजन्  
प्रेम-बिद्युत चम-सूतित हो,  
घाते-घाते ध्वजा धार्य की,  
पीछे-पीछे जन-सेना

१ शाचार्य मन्वदुतारे बाबूदेवी—आधुनिक साहित्य पृष्ठ ४११।

२ 'The Epic' page 88।

३ उर्मिका' तृतीय सर्ग, पृष्ठ १६८।

४ शाचार्य मन्वदुतारे बाबूदेवी—'आधुनिक साहित्य' पृष्ठ ४५।

भेता का यह घर्म सनातन,  
जप को विमल ज्ञान देना।<sup>१</sup>

राम को इस बात का खेद है कि सऊ-बल या हिंसा के भावार पर ही विजय प्राप्त हुई। प्रकारान्तर से यही महिषा का प्रभाव देखा जा सकता है—

एक खेद है यह अशोभित  
होकर सत्य हुआ विजयी  
यदि अज्ञान जप होती, तो वह  
होती पूर्ण विरुद्ध नयी।<sup>२</sup>

यही अत्याग्रह का प्रभाव भौका जा सकता है। राम को इस बात का भी दुःख है कि वे रावण का हृदय-निर्वहण नहीं कर सके—

यही दुःख है कि मैं बीरवर  
रावण-हृदय न चीत सका,  
इतना मर ही नहीं रह गया,  
बछरव मन्वन के वश का।<sup>३</sup>

अपनी युग भेदना से कवि घब्राना नहीं बच सका। उसने राष्ट्रीय धार्मिकता के पक्ष में अपने बीरवत की भी प्राणुति बसाई थी। राष्ट्रीय धार्मिकता का युग, अग्नि युग या संकल्पित काल का।<sup>४</sup> संकल्पित-काल की उत्पत्ति होने के कारण, कवि ने उसके सा-सार कण ग्रहण किये हैं। इस युग की गान्धीवादी भेदना के साथ ही साथ, वह अन्तिकारी-धरा से भी प्रभावित हुआ है। कवि का अन्तिकारी भी बिरोही तथा अन्तिकारी-गुणों से समाविष्ट रहा है। इसीलिए, उसके प्रमुखपात्र—उर्मिला, अकमल तथा राम अन्तिक एवं विमल का अनुमोदन करते हैं।<sup>५</sup> धार्मिक-महाप्रभु साम्राज्यवादी थे; 'नबीन' भी के राम साम्राज्यवाद के विरोधी हैं—

है साम्राज्यवाद का नाशक,  
बछरव-मन्वन राम सवा,  
है मौलिक बल विनाशक,  
जप-मान-रजन राम सवा।<sup>६</sup>

रावण को कवि ने साम्राज्यवाद का प्रतीक माना है और राम को आत्मवाद का—

महामहिम रावण का मेरा,  
नहीं व्यक्तिगत या भगवा,

१ 'उर्मिला', पृष्ठ सर्ग, पृष्ठ ५६५।

२ वही, पृष्ठ ५४२।

३ वही, पृष्ठ, ५४२।

४ वही पृष्ठ ५०५।

५ वही, पृष्ठ २४८।

६ 'उर्मिला', पृष्ठ सर्ग, पृष्ठ ५५५।



आत्मवाद, साध्यात्मवाद का  
बहु या अनमित नेत्र बढ़ा ।<sup>१</sup>

विचार-मन्थन—कवि ने राम के माथम से धार के मुग की प्रवाल विचारबाराधो  
पया—भौतिकवाद धर्मवाद धादि के विषय में भी अपने विचार प्रकट किये हैं ।<sup>२</sup> कवि के राम  
धर्मवाद के भी विरोधी हैं । वे धर्म को जीवन का ध्येय नहीं मानते—

धर्म प्रगति का बिह्व नहीं है  
बहु है प्रगति-बही का केन,  
बहु तो यों ही उतराया है,  
होने को बिहीन बैधेन ।<sup>३</sup>

राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना के महान् वायक इस कवि ने राष्ट्रधर्म के प्रति भी अपने  
विचार प्रकट किये हैं । उसे उसका एकांगी रूप प्राह्य नहीं ।<sup>४</sup> अपनी मुग की मानवतादर्शवादी  
धारा के अनुकूल वह विश्ववादी रूप की प्रमिष्यवता करता है—

है जग के नापरिह समी हम  
सब जय भर यह अपना है,  
सीमित है छ-विदेश-रूपता,  
मिथ्या भ्रम का सपना है ।<sup>५</sup>

विज्ञान—धार्मिक मुग में विज्ञान के प्रभाव की चेतना भी उर्ध्वमुखी है । विज्ञान ने  
जीवन को पुढ माना है । जीवन में इसे, प्रस्तित्व के लिए संघर्ष के रूप में देखा है । वह  
समर्पण व्यक्तियों के अनुकूल रहने की बात कहता है । इस विज्ञान का प्रभाव इन पंक्तियों में  
देखा जा सकता है—

जीवन में, बरदान समझना  
धर्मिणियों की ही जय है,  
मुढ में तनिक द्वेषकना  
ही मानवता का जय है ।<sup>६</sup>

राम, संका की राज-समा में जीवन की परिमाया भी प्रस्तुत करते हैं—

जीवन उतत मुढ है, जीवन  
धर्मि है, है जीवन ऐसा,  
है प्रयत्नमय गु बन जीवन,  
किर संघर्ष-मय देता ?<sup>७</sup>

१ उर्मिता, बृष्ट सर्ग पृष्ठ ५४१ ।

२ बही, पृष्ठ ५४० ।

३ बही, पृष्ठ ५४१ ।

४ बही, पृष्ठ ५४५ ।

५ बही, पृष्ठ ५४८ ।

६ बही, सुतीय सर्ग, पृष्ठ २१८ ।

७ बही पृष्ठ ५४१ ।

विज्ञान के विनाश मार्ग के पथिक होमे की बात को भी कवि ने बायीं प्रदान की है —  
 पीतिकता के लक्षण में पड़े,  
 यह विज्ञान हुआ सु-भार,  
 इसीलिए, हे आर्य, प्रत्यक्ष,  
 करना पड़ा पयोनिधि बार।<sup>१</sup>

सारांश—इस प्रकार 'उमिता' में नवयुग की शैलता का उभार देखा जा सकता है। इस कृति में प्राचीन तथा नवीन, दोनों का समन्वय प्राप्त होता है। हम यह कह सकते हैं कि पुरातन-युग में नूतन-कव्य को उपस्थित किया गया है। कवि ने बरिनों को बुद्धिवादी दृष्टिकोण से निरखाने-परखा है और उन्हें सीमितता में ही रहने दिया है। उन्हें मानवीय भूमि ही प्राप्त हुई है। युग की के समान, आचार्य रामकृष्ण शुक्ल का कथन, 'उमिता' के सम्बन्ध में, 'नवीन' की प्रति भी प्रयुक्त किया जा सकता है कि "प्राचीन के प्रति पूज्य मान और नवीन के प्रति उदाह, दोनों हमें हैं।"<sup>२</sup> 'सामेत्' के समान, 'उमिता' में सतही 'साधुनिकता'<sup>३</sup> का व्यवहार दृष्टिकोण नहीं होता। 'उमिता' में वहाँ एक ओर बौद्ध-सौरठा की शैली का प्रयोग कर कवि ने प्राचीन मनोवृत्ति की सूचना दी है, वहाँ दूसरी ओर उमिता का बिहोही रूप प्रस्तुत कर और राम को साधुनिक बनाकर, नवयुग का भूधार भी किया है। कवि की सांस्कृतिक पूर्वोपसन्धि तथा मानवतापूर्ण प्राप्ति ने, इस कव्य को नवीन युग की निधि बनाकर युग-सुमांतर की धरोहर के रूप में भी परिणत कर दिया है। इसमें ईसा की बीसवीं शताब्दी के किष्कारवस्था का ऊपेय तथा राष्ट्रीय आन्दोलन के उदरगर्भ की लाली की प्रथम धमका सुरचित है।

## सांस्कृतिक मनोभावना

'नवीन' की ने उमिता की भूमिका में यह स्पष्ट कर दिया है कि राम की धन-यात्रा एक महान् मार्गपूर्व आर्य-संस्कृति प्रसार-यात्रा थी। इस यात्रा को उन्होंने भारतीय संस्कृति प्रसारण एक महान् ब्रह्म के रूप में ग्रहण किया है।<sup>४</sup> इस सम्बन्ध-काव्य के प्रथम पात्र यथा— उमिता लक्ष्मण राम, सीता, जानकी, विभीषण आदि इस सांस्कृतिक परिवान की भाँति भाँति से उत्पन्न-विद्या करते हैं। राम को कवि ने मार्ग-जर्म एवं संस्कृति का युव-अवर्तक माना है। इस पुण्य-भूमि में 'उमिता' का सांस्कृतिक अध्ययन प्रप्रारंभिक न होया।

संस्कृति—कवि ने संस्कृति को धर्माधिब तथा मध्य-रूप में ही ग्रहण किया है। उनके यथानुसार संस्कृति को रूप-रेखा निम्नलिखित है—

युद्ध विचार-श्रीवृत्ता ही है,  
 निति सम्पत्ता संस्कृति की,  
 सबाधरल श्रीवृत्ता मात्र है,  
 लोचक संस्कृति, मठि, धृति, की।<sup>५</sup>

१ आचार्य रामकृष्ण शुक्ल—'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ ५१६।

२ आचार्य रामकृष्ण शुक्ल—'साधुनिक साहित्य', पृष्ठ ४६।

३ 'उमिता' की लक्ष्मण-चरणावर्णन-पुस्तक, पृष्ठ ६।

४ वही, पृष्ठ ५१५।

मीथिक्कादी तथा अर्धबाहिर्यो ने संस्कृति को अर्धार्जन के माप-दण्ड से धाँका है।<sup>१</sup> वह इन विचारों को भ्रामक मानता है।<sup>२</sup> वह भारतवर्ष को ही संस्कृति का मूलभार मानता है—

भारत-भार में ही अमर्यता  
का अस्ति अर्धर-भान अमर,  
अर्धो गृही संलय-संलय का  
तुन पड़ता है कर्मों का स्वर।<sup>३</sup>

धर्म-संस्कृति—धर्म-संस्कृति के आधुनिक पक्ष, बीरनारयण, नैतिकता किया-धीरता एवं विविध पाठों पर प्रकाश डालने के लिए कवि ने वैद, उपनिषद् भीमद्वयवर्णीता तथा कबीरदास आदि से आशोक प्राप्त किया है। वेदों से प्रभावित होकर ही कवि ने, धर्म-संस्कृति का यह महामूल्य बताया है जिसको प्रकटित करने का-माना अरु अरु धामने धामा—

तमसो मा ज्योतिर्विमय स्वप्न,  
सृष्टोर्मा अमृत ले अल,  
विद्या से संसुप्त सुप्ते कर्ण,  
अमृत अल, है अल अल अल।<sup>४</sup>

कवि ने उप को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया है। उपनिषद् का अर्थ है कि अज्ञान, उप यत्कि क ज्ञान ही अमृत का सृष्टि की रचना करता है—

स तपोऽन्यथा स तपस्तप्या इवम् सर्वमसृजत्<sup>५</sup>

अर्थात् 'जसने उप किया उप करके जसने इस सब की सृष्टि की। इसी बात को कवि ने इस रूप में प्रस्तुत किया है—

यह अज्ञान ही तपस्या के अल,  
अतिमय, अतिमय, अलित हुआ  
अनु-अनु में, अनु-अनु में अल  
अल तपोऽन्यथा अल अल अल।<sup>६</sup>

भीमद्वयवर्णीता के अरु अरु दि 'अमर्य' के अनुसार कवि भी अरु रचना के अरु में अरु-अरु को ही पाता है—

अरु अरु अरु-अरु होती है,  
अरु अरु अरु अरु अरु अरु  
अरु-अरु अरु अरु अरु है।<sup>७</sup>

१ अर्जिता, पृष्ठ अर्ध पृष्ठ ३३२।

२ वही।

३ वही, पृष्ठ ३४८।

४ वही, तृतीय अर्ध, पृष्ठ १६८।

५ अलतीपोपनिषद् २, ३।

६ 'अर्जिता', पृष्ठ अर्ध पृष्ठ ३४६।

७ वही तृतीय अर्ध, पृष्ठ २२२।

कवि ने सांस्कृतिक समन्वय के लिए कबीरवास के रूपक की ध्वनि प्रयुक्त की है—

जल में कुम्भ है, कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पाये ।  
फूटा कुम्भ, जल-जल ही समाना, यह तथ्य रह्यो खानी ॥

'नवीन' की भी कहते हैं—

कोसल नगरी हो सका है  
संक्रम है कोसल नगरी,  
भाण्ड हुआ जल-शक्ति-निमज्जित  
मिथ्य वहाँ वापी, गमरी ?<sup>१</sup>

धार्य-संस्कृति का मूल मन्त्र भारत-सुख रहा है ।<sup>२</sup> जेठा-सुग को कवि ने संक्रान्ति काल माना है ।<sup>३</sup> एक विचार काम को अमित करके बूझने में जाना ही संक्रान्ति काल है ।<sup>४</sup> ऐसे युग में धार्य-संस्कृति ने एक नूतन करवट खोयी । बन जाने का उद्देश्य ही धार्य-सांस्कृतिक विक्षयपटाका फहराना था ।<sup>५</sup> इसे धार्य-संस्कृति के जीवन का प्रथम क्षुभ प्रभाव माना गया ।<sup>६</sup> यह कार्य भी राम के ऐतिहासिक व्यक्तित्व द्वारा सम्पन्न हुआ ।

श्री राम को कवि ने जेठा-सुग की संस्कृति की प्यारी विभूति माना है ।<sup>७</sup> धार्य संस्कृति एवं सम्यता ने धनधनपुरी से लेकर लंका तक एक पथ की रेखा का निर्माण किया है ।<sup>८</sup> राम के धाम के भौतिकवाद से अस्त एवं धर्म को प्राधान्य देने वाले युग को 'विश्वास-मस्ति-भङ्गा के तीन सुनों से समन्वित संदेश को प्रयाण किया है ।<sup>९</sup>

इस प्रकार 'नवीन' की भी धार्य संस्कृति को प्रमुखता प्रदान की है और उसे परिष्कार-मय धन्वित किया है । समूचे काव्य पर धार्य संस्कृति की पुनीत किरने अपना चिह्न टांक रही हैं ।

धार्य-धर्म—धार्य संस्कृति के साथ कवि ने धार्य-धर्म के स्वल्प तथा महत्व की विषय विवेचना की है । उसने धार्य-धर्म के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों पार्श्वों को आभोगित किया है । राजावि जनक धार्य-धर्म के दार्शनिक पक्ष का विवेचन करते हैं—

धार्य-धर्म के धार्यायों ने सृष्टि तत्व है खोज निकाला  
एक सुन में बनने पुं का है सुगुड़ वह तत्व निराला

१ 'उमिषा' पृष्ठ सप्त, पृष्ठ ५६३ ।

२ वही, पृष्ठ ५७१ ।

३ वही, तृतीय सर्ग, पृष्ठ २२३ ।

४ वही ।

५ वही, पृष्ठ १६६ ।

६ वही, पृष्ठ १६९ ।

७ वही, पृष्ठ २६६ ।

८ वही पृष्ठ सप्त, पृष्ठ ५२० ।

९ वही, पृष्ठ ५७० ।

में है एक, किन्तु प्रजनन के हेतु अपनेको रूप बना है  
अमित विरोधाभासों का मैं अद्भुत पुत्र अनूप बना हूँ ।<sup>१</sup>

उपस्था स्वाम<sup>१</sup> सत्य<sup>२</sup> बन्धन-मुक्ति,<sup>३</sup> धारि को धार्य-धर्म में विषेय स्वात प्राप्त हुआ। मोमबाद को इनने धाधय नहीं दिया।<sup>४</sup> राजल को मोमबाद का परिचायक माना गया है।<sup>५</sup> धार्य-सम्पत्ता का कमी भी साम्राज्य-स्थापना का ध्येय नहीं रहा।<sup>६</sup> हमारे यहाँ यज्ञों की प्रचलता रही है। त्रिह-श्रुत-इत्यन की धारुतियों को रामयज्ञ की विद्वन्मना मानते हैं।<sup>७</sup> राम धम की सेवा को श्रुद्ध-यज्ञ मानते हैं।<sup>८</sup> धार्यों के लिए कास निस्सीमित धरोप एवं अस्तुहीन होता है।<sup>९</sup> वेदा-युग में धार्य-धर्म ने अपने सम्भवसतम रूप का प्रदर्शन किया था।<sup>१०</sup> इस प्रकार 'नवीन' को ने अपने वैष्णव संस्कारों को इस काव्य में प्रस्तुत किया है। सामान्यतः वे धार्य-धर्म को सांस्कृतिक एवं मानवतावादी भूमिका पर देखते हैं।

बर्णाधम-विभाग—'जनिता' में बर्णाधम-विभाग के भी संकेत यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं। जनकपुत्रि में ब्राह्मण 'मंगलाशीष्य' में रहते हैं।<sup>११</sup> वेदों की शिवासीबता 'राज-धर्म' में दिखाई पड़ती है।<sup>१२</sup> वेदा-युग के ब्राह्मण सामाजिक-प्रगति रत्न के सारथी हैं। वे छद्मवर्ती धर्मवादी उपस्थी योकाभावी विपन्न-श्रमा उत्तरवर्ती एवं मनस्वी हैं।<sup>१३</sup> वेद की स्वल्पता के रसक-अभिवपण मुहड़ पुत्राधों वाले तथा पराश्रयी हैं।<sup>१४</sup> न्यापारी कृपक, वैषम्य धारि नरमी-येवी हैं और धम की बाटिका को संभाले हुए हैं।<sup>१५</sup> पूत्र बल सेवा-रत हैं। उनका सिद्धान्त है—सेवाधर्म परमपद्मो योयितामप्यगम्य।<sup>१६</sup>

१ जनिता, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १०५।

२ वही, पृष्ठ सर्ग पृष्ठ ५४६।

३ वही पृष्ठ ५३१।

४ वही, पृष्ठ ५६५।

५ वही पृष्ठ ५४१।

६ वही, पृष्ठ ५४३।

७ वही, पृष्ठ ५४०।

८ वही, तृतीय सर्ग, पृष्ठ २६६।

९ वही, पृष्ठ १।

१० वही पृष्ठ २८२।

११ वही पृष्ठ २४३।

१२ वही प्रथम सर्ग, पृष्ठ १४।

१३ वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ १४।

१४ वही, पृष्ठ १८।

१५ वही।

१६ वही पृष्ठ १६।

१७ वही।

इसके प्रसिद्धि कवि ने समग्र मानव समाज को भी महत्व प्रदान किया है। लक्ष्मण ने अपने वन-यात्रा के कारणों में बन्धु-जनों को ज्ञान संस्कृति तथा शिक्षा से प्रासोक्तिक करना भी निरूपित किया है। वनवासियों के विमिर राग-विमोह भौतिक-प्रियता तथा घर्तकृत कवि को घूर कर, विद्या के समुद्र-दान से सब जीवन प्रदान करता है।<sup>१</sup> गम ने पीब, कवियों प्रावि का उद्धार किया और वे भी ध्यात्म-ज्ञान से प्रासोक्तिक हो गये। बाबर के 'बा' को विरहित करके, उनमें ज्ञान-विद्या बगा दी गई।<sup>२</sup>

नारी—कवि ने नारी के विविष्ट एवं सामान्य, दोनों पाशों का उद्घाटन किया है। बेवा-पुत्र की नारियाँ सौम्यवर्तनी कर्तव्य रता सुशिक्षिता तथा कष्टग्राहीता हैं।<sup>३</sup>

कवि ने नारी-विषयक अपने विभिन्न विचारों की प्रामाण्यता की है। प्रयोप्या-परावर्तन के समय, लक्ष्मण-सीता संवाद में नारी की विशेषता तथा महात्मा को भी स्वयं प्राप्त हुआ है। लक्ष्मण का यह मत है कि राम में नारीत्व की भांति अधिक है। नारी उनकी पोषण-कृत् है। नारी जीवन की हृदयपल्लवा है।<sup>४</sup> जीवन की सुमति के लिये नर को नारी, और नारी को नर होना चाहिये। दोनों को एक-दूसरे में वृत्तक छटना चाहिये। विरक्ति पूर्ण बुद्धि नहीं है जिसमें नारी को परस्पर ही होती है और वह जन-जन की देखना को नारी की नारी ही समझता है। जो नारीत्व के भंग से विहीन हो वह वस्तुतः जानर है।<sup>५</sup> सीता का मत है कि नर नारियों के हृदय की बात नहीं समझते हैं। हर की अपेक्षा नारी को अधिक पीब अनुभूति होती है।<sup>६</sup> 'प्रसाद' भी ने लिखा है—

समर्पण तो सेवा का सार,  
सबल लौकिक का यह पतवार,  
प्रायः से यह जीवन उत्तम  
दही पर तल में बिगत विचार।<sup>७</sup>

इसी प्रकार 'नवीन' भी नारी को धृति-मति-कर्मिणी के रूप में देखते हैं—

धर्म्य ! प्रहो प्रिय ! नारी का यह  
जीवन है धृति मति प्रतिभा।<sup>८</sup>

उर्मिला, नारी को फिर प्रतीक्षिका एवं परीक्षिता मानती है। वह फिर-विद्योग को यथावृत्ति से समस्त दीक्षित रहती है। वह अपने स्नेह प्रपौत्र को युग-युग तक प्रम्बवित रहती है।<sup>९</sup>

१ उर्मिला, नृतीय सर्ग, पृष्ठ १६५-१६५।

२ वही, पृष्ठ १६५, पृष्ठ १६६।

३ वही अथम सर्ग, पृष्ठ ११-२०।

४ वही, पृष्ठ ११, पृष्ठ ११०।

५ वही, पृष्ठ ११०-११४।

६ वही—पृष्ठ १११-११२।

७ 'समापनी', अष्टम सर्ग, पृष्ठ ४६-५०।

८ 'उर्मिला', नृतीय सर्ग, पृष्ठ २५१।

९ वही, पृष्ठ २५१।

श्री रामकुमार वर्मा के 'बिहारी' की चित्रा की 'नारियाँ' बह का प्रतिमान करती हुई भी, उसे प्रहिया रूप में प्रहण करती है।<sup>१</sup> इसी प्रकार उमिषा भी बिहोहाजि बकुर, अपनी वृत्ति का पर्यवेक्षण करके तथा प्रारम्भ-समर्पण में करती है। कवि ने मातृत्व का भी चित्रण किया है जिसका प्राचीन भारत में प्रत्यन्त सम्मान तथा उच्च-स्थान था।<sup>२</sup> सुमित्रा में यह रूप, स्वसम्पन्न प्रामा सेकर प्रामा है। इस प्रकार 'उमिषा' में नारी के विविध पक्षों का तथा प्रसन्न रूप और भावनाओं की व्यंजना मिलती है। इस कृति में नारीत्व को श्रेष्ठत्व प्रदान किया गया है।

राज्यादर्श—कवि ने राजतन्त्र का चित्रण किया है। राजा बलक के राज्य-शासन एवं प्रार्थन की पर्याप्त विवेचना की गई है। राज्य में मिथिला या बिहोह महाजनपद का उल्लेख आया है। राजप्रासाद के निकट ही दिव्य महामन्त्रालयापर बना हुआ है। मन्त्रीगण अपने कार्य में पूर्ण बख है। सेना-बिमान प्रत्यन्त ठोसती है जिसका प्रथम 'सचिव' होता है। युद्धों में धर्म को महत्व दिया जाता है। सन्धि-बिमान का वास्तविक 'मन्त्री' पर होता है।<sup>३</sup> साम्राज्याध्ययंत विषयों का निपटारा तथा निरीक्षण 'धमात्य' करते हैं। राजतन्त्र को संश्लिष्ट करते एवं राज्ययो-वृद्धि का वास्तविक सुमन्त्र पर होता है।<sup>४</sup> कवि ने राजतन्त्र में जन-व्ययान, प्रजा-सेवा तथा राज-उत्कर्ष को प्रशानता की है।<sup>५</sup>

दरबार को भी 'प्रजा-व्ययन'<sup>६</sup> राजा माना गया है। उनके शासन में प्रजा को व्यर्थ की चिन्ताओं ने प्रसिद्ध नहीं किया।<sup>७</sup> दरबार भी अपनी राज-सभा के बक्ष्य में जन-हित तथा कर्तव्य को प्रमुखता प्रदान करते हैं।<sup>८</sup> राम भी न दो मोठिकटावारी हैं और न भूमि-प्रजन सोमी। उनके कर्म सन्-सर्वेश लोह-व्ययान की भावना से प्रेरित करते हैं।<sup>९</sup> सु-वर्जन पर धामन रख जन-मुख्य उपयोग तथा विकास-प्रियता के कारण ही राजा का बव किया गया।<sup>१०</sup> लोह-रत्ना तथा विरह विरह के दो विरोधी विचिर होने के कारण ही राम-राज्य संपन्न हुआ।<sup>११</sup>

१. हमें भी बह का है प्रतिमान, किन्तु वह पूर्ण प्रहिया रूप;

नारियों का यह दाब अनुप, करेना पर्य कर्तता जाए।—श्री रामकुमार वर्मा 'बिहारी की चित्रा' सर्ग १२, पृष्ठ ११८।

२. Altekar—Position of Women in Hindu Civilization, chapter III page 118।

३. 'उमिषा' प्रथम सर्ग पृष्ठ २१।

४. वही पृष्ठ २२।

५. वही पृष्ठ २१।

६. वही द्वितीय सर्ग, पृष्ठ ८१।

७. वही वही, पृष्ठ ८१।

८. वही वही, पृष्ठ ७६।

९. वही, पृष्ठ सर्ग पृष्ठ ५२२।

१०. वही वही, पृष्ठ ५६१।

११. वही, वही, पृष्ठ ५५१।

इस प्रकार कवि ने राज्य-तन्त्र का चित्रण करते हुए भी, उसमें अपनी युग-चेतना के सरसिख सिखाये हैं। इस घासन-गडदि को उसने जन-हित सोच-रस्य तथा सर्वमुखाय-सर्वहिताय से मण्डित किया है। यह 'बसुधैव कुटुम्बकम्' का उपासक भी है।

समृद्ध-भरीत—'उमिता' में धार्य-संस्कृति के प्रबान बटकों मया—भात्म-ज्ञान, यज्ञ तप त्याग बसिदान तथा कर्तव्य-वचयणता को ही प्राधम्य मिसा है, परन्तु साथ ही कवि ने भारत की सामाजिक एवं धार्मिक समृद्धि तथा विविधताओं का भी धाकतन किया है। कवि ने सिस्य-कला, चित्र-कला, मूत्य-संगीत कला धादि कलाओं के रूप दिग्घ्यिष्ठ किये हैं। राज-प्रासाद मन्त्रालागार, धटासिध्दर्यै, मजन राजमार्ग, दुर्गद्वार बीबिकाएँ, स्थान धादि के चित्रांकन मिसते हैं। बाय, बागोचे पुष्प रय, सुरंग धस्त्र धस्त्र धादि के भी बर्णन मिसते हैं। धन सम्पदा बिपल-म्यापार लय-बिभय धादि की समृद्धि बटाई है। समाज का जीवन सम्पन्न धात सुस्तिर तथा प्रखल दिखाया गया है। धामोर प्रमोर के प्रचुर साजन धाप्य है। सभी धर्म के ब्यक्ति धपने कार्य एवं धर्म में वलबिध है। देय-स्वातन्त्र्य तथा लोच-रसा की माधना प्रबल है। धामम, तपोवन एवं चिजासयों में बिज्ञा-वीज्ञा, धम्ययन-धम्यापन, स्वाध्याय ब मनन-बिस्तन का पुनीत बाठाबरण कैना है। घासन-तन्त्र मुपठित एवं मुविम्यस्त है। प्रजा प्रदुम्भ है। वेता-मुग के ऋदि-सिद्धि की बृष्टि हो रही है। इस प्रकार कवि ने धार्मिक मृसम्यलता, प्रचुर सम्पदा सामाजिक सौरम्य एवं धर्मपालन के उपकरणों पर ही समृद्ध-भरीत के बहूविध चित्र लीचे हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत कव्य में संस्कृतिक चेतना ने अपना पर्याप्त बिस्तार तथा बिउदता निरूपित की है। 'साकृत' की धपेक्षा उमिसा' में धार्य-संस्कृति धोर धर्म की धंल-धनि धनिक प्रखर तथा प्रमबिध्दु प्रतीत होती है।

## महाकाव्यत्व

'नवीन' जी की महाकाव्य सम्बन्धी धारणा—'नवीन जी ने महाकाव्य पर विधिष्ठकमेण बिचार प्रतिादित नहीं किये हैं परन्तु उसके धात्र के युग में सिद्धने की उपयोगिता या धनुनयोगिता धावरधकटा धपका धनाधक्यकटा प्रतिपाद्य बिम्य धादि की पर्वा उन्होंने धबल की है।

'उमिता' की मूमिका में उन्होंने यह प्रल उठया है कि कया धात्र का युग प्रबन्ध काव्यों के सिध उपयुक्त है। इसके उत्तर स्वकन उन्होंने स्वयं यह सिद्धा है कि वर्तमान कास में प्रबन्ध-काव्यों की रचना के सिध जो बाठे बाबा-स्वक्य समझी बा सकठी हैं वे हैं—

(१) माय के मय स्वक्य का धोर सापेधाने क्व परिपूर्ण बिवास

(२) साहित्य में उन्म्यास धाद्य का धाविर्मान

(३) पधारमक रोली की धपेक्षा गधारमक रोली की धमिम्यकिउ-सरमता एवं धयं धइउ-मुकरता,

(४) मय की धपेक्षाकृत बन्धन-मुक्तता धर्पाद धनुध्रास धमक, बति, गति, माधा धादि के बन्धन का मय में तिरोधान

(५) वर्तमान जीवन की कुतगतिमता धत' उधमें समय के धधाय की स्थिति



(६) विज्ञान प्रभाव के कारण मानव की रोमांचकारी वृत्ति का सोप;

(७) पुरातनकाव्यों वैसी-स्तवों को काव्य में प्रविष्ट करने; की वृत्ति का वर्तमान विचार के धर्म प्रसारणस्य ।

(८) वर्तमान जीवन की संकुचता (Complexity), यतः उस जीवन में अच्युता घोर सहन विरासत का प्रभाव-

(९) सद् भाव सद् विचार, उदात्तरस के प्रति अर्थात् जीवन के उदात्तर सूर्यों के प्रति अनास्था धमझा घोर उपेक्षा घोर

(१०) पुरातनकाव्यीन धमझ असीम विरासत विराट् अपरिमितता (Vastness) का वर्तमान विज्ञान द्वारा संपीकरण ।<sup>१</sup>

'नवीन' भी का स्पष्ट मत है कि उपयुक्त कारणों के आधार पर वर्तमान युग की महाकाव्य या विराट्काव्य के अनुपपुक्त मानना अनुचित और अवैज्ञानिक है।<sup>२</sup> उनकी यह मान्यता है कि साहित्य-विकास को एककालीन सुध-परिवर्तित पर आधारित करने का प्रयास बहुधा हास्यास्पद हो जाता है।<sup>३</sup> उन्होंने लिखा है—

“मे वर्तमान युग का विराट् काव्य-वृत्तियों या महाकाव्यों के सुजन के लिये अनुपपुक्त नहीं मानता। यहपूर्वक बात यह है कि प्रबन्ध-काव्यों की घोर धाम भी अवृत्ति है। अतः मे बहु बात मानने में अतर्क है कि महाकाव्यों, प्रबन्ध-काव्यों का सुजन-अपराध इस युग की अवृत्ति के प्रतिभूत है। हाँ, विराट् काव्यों (Epic) का सुजन इतर सृष्ट्याम्बियों से नहीं हुमा है।”<sup>४</sup>

युगानुसूतता एवं भावस्फुटा के साथ 'नवीन' भी मे महाकाव्य के विषय पर मे अपने संक्षिप्त विचार प्रकट किये हैं। उनके मतानुसार काव्य के लिये ऐतिहासिक-पौराणिक विषय केवल मात्र अविच्छेद्य के तर्क के आधार पर स्वाभ्य या अर्थ नहीं हो सकते।<sup>५</sup> तन्निष्ठाकार का यह स्पष्ट मत है कि पुराने विषयों को मे नवीनता से सुसम्पन्न किया जा सकता है।<sup>६</sup> इस प्रकार कवि मे नवीनता को आकाश प्रदान कर, साहित्यिक अर्थ की अमर भी प्रस्तुत कर ही है। कवि मे कल-रस में कुछ अर्थ साने की बात कही मेरी है।<sup>७</sup> इससे यह विदित होता है कि कवि परिपाटी के साथ ही साथ नव-वैतना को मे महत्व देता है जिसके अन्तर्गत महाकाव्य की प्राचीन कलाटी उसकी वृत्ति के पौराणिक के लिए सम्पूर्णकाल प्रयुक्त नहीं हो जा सकती। आर ही कवि मे राम-कथा को मूलतः दृष्टिकोण एवं अर्थगत में

१ 'जिमा', भीलकालकाणार्थमस्तु, पृष्ठ—७।

२ वही पृष्ठ—४।

३ वही पृष्ठ—४।

४ वही, पृष्ठ—४।

५ वही, पृष्ठ—७।

६ वही, पृष्ठ—७।

७ वही प्रथम तर्क, पृष्ठ २।

देखा भी है जो सास्त्रीय ढाँचे में ठीक नहीं बैठ गई जा सकती। धर, इस पृष्ठभूमि पर, 'उमिषा' का महाकाव्यत्व-विवेचन समीचीन प्रतीत होता है।

उद्देश्य तथा प्रेरणा—'नवीन की द्वारा उमिषा की प्राण-प्रतिष्ठा, उसका चारित्रिक विकास तथा उसके प्रति अपनी समग्र भक्ति के उद्देशने को ही इस काव्य का मूलोद्देश्य एवं प्रेरणा मानी जा सकती है। कवि ने राम-कथा को भी उमिषा के केन्द्र में ही देखा है और उसका मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन किया है। धार्य-संस्कृति प्रसार को राम-कथा का मुभाधार माना गया है।

सुर्यघटित जीवन्त कथानक—'उमिषा' में बटना-कथा की प्रभावता न होकर, धनुर्मूर्ति की प्रमुखता है। इसका प्रभाव उसके प्रबन्ध-विन्यास पर भी प्रतिकूल रूप में परिलक्षित दिखाई पड़ता है। सम्पूर्ण कथा प्रख्यात है परन्तु राम कथा के निस्सूत उपेक्षित त्यक्त प्रपञ्च आक्षिप्त प्रसंगों एवं पात्रों को उभारा गया है। उसमें नाटक एवं गीतिकाव्य के तत्वों का सुन्दर सम्मिश्रण है। कथानक में रोचकता धोस्तुम्ब तथा नाटकीय वैषम्य उपलब्ध है। कथानक में काव्यिक, सुदुस तथा प्रतिष्ठितारमक पात्रों को प्रमुखता दी गई है।

समूचा काव्य सर्ग बद्ध है। यद्यपि धार्धार्य विषयनाथ से अष्टाधिक सर्गों का उल्लेख किया है, परन्तु इस विषय में मतसाम्य नहीं है। इस विषय में धार्धार्य दण्डों तथा भक्ति पुरासुद्धार गीत है। इस काव्य में छः सर्ग हैं। प्रत्येक सर्ग में एकाधिक छन्द का प्रयोग मिसला है और अन्त में प्रायः छन्द-परिवर्तन प्राप्य है। मंगलाचरण के रूप में उमिषा की प्रार्थना मिसती है।

धरस्तु ने कथा में जो भावि, मध्य एवं अन्त के अनुसन्धान का उल्लेख किया है, वह यहाँ प्राप्त होता है। कार्य-प्रवृत्तियों तथा संघर्षों का स्पष्ट चित्रण प्राप्त नहीं होता, बल्कि वे कृतिप्रय माना में उपलब्ध हो सकती है। तृतीय सर्ग में धर्म-सन्धि मिसती है। यह कृति मौलिक उद्भावनाओं से सर्वाधिक आत्मस्यमात् है। कवि ने पुराने चित्रों में नूतन रंग मरे हैं और कई चित्रों को नवीन सुविका से अक्षिप्त किया है। महाकाव्य का नामकरण भी कसौटी पर अक्षिप्त बैठता है। इस काव्य में प्रबन्ध-भार का अस्वाभाविक रूप प्राप्त नहीं होता। प्रबन्धात्मकता का प्रभाव है। अनुपम एवं पंचम सर्गों में धारक कथा का सूत्र लिख-मिष हो जाता है। कवि की नूतन चरित्र प्रवृत्तारण, सांस्कृतिक दृष्टिकोण एवं मौलिक अस्वाभाविकता की अकारणों के समक्ष यह कृति परिपार्थनीय है।

महत्त्वपूर्ण नायक—उमिषा के चरित्र का उद्घाटन इस काव्य की सर्वोपरि अक्षिप्त है। यह आश्चर्य कथा में प्रत्यक्ष-प्ररोध रूप में विद्यमान रहती है। उसके नायकत्व के विषय में दो मत नहीं हो सकते। उसकी प्रायः प्रतिष्ठा के कारण ही, कथानक को धार एवं स्वल्प की अथा पक्ष ही गई है। अक्षिप्त को भी पर्याप्त अक्षिप्तता एवं महत्ता प्राप्त हुई है। उमिषा-अक्षिप्त के आश्वास के समक्ष, राम-सीता की कथा आनुपमिक हो गई है, परन्तु उनके अक्षिप्तत्व की दृष्टि में कोई अन्तर नहीं धार है। कवि ने परिपार्थनीय अक्षिप्त के चरित्र में अक्षिप्त अक्षिप्त उपस्थित किया है। राम का चरित्र अक्षिप्त धार्य-संस्कृति के अक्षिप्त

एवं मानवता के प्रतीक के रूप में अन्विष्ट हुआ है। उमिषा में नारी-चरित्र एवं नारी जीवन का चरमोत्कर्ष रिक्तताया गया है जो कि द्विदोह कल्याण तथा विपार के तीन सुभों से संशान्ति होता है। इस प्रकार उमिषा में जहाँ एक घोर प्रेम-कथा घोर चरित्र-प्रधान काव्य का स्वस्म धारण किया है वहाँ वह सांस्कृतिक-सारनिधि भी बन गया है।

दोसी—'उमिषा' की माया-रोसी में पुरातन तथा नूतन का समन्वय दृष्टिबोधर होता है। उसमें प्रबन्ध-रोसी एवं यौति-रोसी दोनों का ही प्रयोग किया गया है। इसमें प्रथम से लेकर पुत्रीय धर्म तक प्रबन्ध-प्रवाह प्राप्य है। अतुर्प एवं पंचम सर्ग में गीत-रोसी में मन्त्री दिखाई है और अन्तिम सर्ग में मिश्रता है दार्शनिक विज्ञानेपण। कवि के प्राचीन काव्य के अनुसरण की अमिष्यक पंचम सर्ग के बोधा-सोरठा रोसी में होती है।

'उमिषा' की रोसी में कथा, गीत तथा नाटक के उपादानों का समन्वय है। कृति एकर-रक्ति तथा तीव्रता का विन्यास है। आचार्य नन्ददुमारे बाबुपेयी का मत है कि 'सुक्ति घोर संदीत काव्य के अस्करण है वे स्वतः काव्य नहीं हैं।' शर्मा की का पीछा इन अस्करणों से कभी नहीं छूटा इसलिये उनका काव्य अमिष्यकता प्रधान ही रहा। जब घोर जहाँ वहीं अमिष्यकता की प्रमुखता कम हुई, शर्मा को का काव्य घोर की नीरस हो गया। अराइरण के सिद्ध है उनका उमिषा भाष्यान।<sup>१</sup>

'उमिषा' में प्रोढ़, नावपूर्ण घोर अस्करण भाषा का स्थान मिला है। वह संस्कृत-निष्ठ है घोर अमिष्यकता के मुख्य से मुख्य है। प्रसाद-गुण प्रधान होकर, इस कृति की भाषा भाव-अर्थकता में समर्थ सीख पकड़ी है। उसमें यन्-उत्त अस्ति तथा घोष के बीपक भी प्रयोजित दृष्टियोजर होते हैं।

उमिषा की माया-रोसी को पर्याय परिवर्तन की भी आवश्यकता थी जिसे उसका रक्षिता अपने संघर्षमय जीवन के कारण मसो भाति तथा पुर्णस्म से सम्पन्न नहीं कर सका। फिर भी उनकी रोसी में अन्तुता घोरस्य घोर साम्नीय के प्रचुर वधान होते हैं।

प्रमावात्प्रिति तथा रस-अर्थकता—'उमिषा' में नायक तथा प्रसाद की अन्विति संतुलित एवं व्यक्तित्व है। उमिषा-अस्करण-मिशन उसका प्रमुख कार्य है और अपने चरित्र नामिका के चित्र का अनावरण तथा राम-वनमनन की सांस्कृतिक भाष्या के प्रसाद को चरितार्थ करने में कवि को पूर्ण साफल्य प्राप्त हुआ है।

'उमिषा' रसविकृत कृति है। उसमें तीव्रता का प्राचुर्य है। कवि ने शृंगार-रस के

१ "Maturity of Language may naturally be expected to accompany maturity of mind and manners. We may expect the language to approach maturity at the movement when it has a critical sense of the past, a confidence in the present and no conscious doubt of the future." T S Eliot, What is a classic page 14

१. आचार्य नन्ददुमारे बाबुपेयी—'हिन्दी साहित्य की नयी छतामी' चरित्र, पृष्ठ १।

विपन्नम् रूप को प्राभाव्य प्रदान कर, कसूटा तथा विवाय के बातावरण को सशक्त बनाया है। उसके समी पात्र अपना प्रभाव छोड़ते हैं और राम-कथा के सांस्कृतिक प्रयोजन की दृष्टि में बुद्धि करते हैं।

जीवनो प्रसिप्त एवं प्राणुषता—डॉ० सम्भूनाथ सिंह ने लिखा है कि "महाकाव्य की बीबनी-शक्ति इस बात पर निर्भर करती है कि वह समाज को कितनी शक्ति, कितना साहस और जीवन को कितनी ऊर्ध्व तथा आस्था प्रदान करती है। महाकवि जब अपनी संप्राणता को महाकाव्य में बीबन्त रूप में उतारता है, तभी महाकाव्य में वह सशक्त संप्राणता या पाठी है, जो युव-युव तक समाज को शक्ति और प्रेरणा प्रदान कर सकती है।" इस दृष्टिकोण से 'उदिसा' संप्राण एवं सशक्त कृति है, जिसमें युव-युवांतरों के लिए बीबनी-शक्ति तथा घास्वत सन्देश मरे पड़े हैं। जहाँ तक चिरन्तन सभ्यता के निरूपण का प्रश्न है, वह 'कामायनी' के समतुल्य एवं समकक्ष अविच्छिन्न की जा सकती है।

शाचार्य गन्धर्वुसारे बाबुदेयी ने लिखा है कि "महाकाव्य की रचना भारतीय संस्कृति के किसी महाप्रवाह, सम्मता के उद्गम, संगम, प्रलय किसी महान् चरित्र के विराट्-रूप्य अथवा भारत-रत्न के किसी चिर अमृत रहस्य को प्रदर्शित करने के लिए की जाती है।" यह कथन 'उदिसा' पर सटीक चरितार्थ किया जा सकता है। कवि ने ब्रैठा-युव के संक्रान्ति काल में महाप्रसिद्धि की बेधा में धार्य प्रगाम्य, आत्मवाद, मौक्तिकवाद, धर्मवाद, धर्मवाद, ज्ञानवाद, भोग वाद लोक-गशा परसासन अर्थात् राम-राज्य के संघर्ष की मार्मिक अर्थवना प्रस्तुत की है। धार्य धर्म, सम्मता तथा संस्कृति की महानुपसम्भियों तथा वरिमा की इसमें अन्धकार मिछी गई है। इस कृति में भारत समग्र बहु-चर को अपने अर्थ में समेट रखा है। मौक्तिकता, यागिक सम्मता, विज्ञान धार्मिक के असाइ पक्ष का उद्घाटन कर, कवि ने 'कामायनी' के समाज, अज्ञान-मिच्छा-विश्वास के तीन चिरन्तन प्रेरणात्मक मोक्तक हमारे युग को प्रदान किये हैं। मानवतावर्ष की निम्न के अतिरिक्त जीवन में आत्माकृति तपस्या, त्याग तथा कर्तव्य की वैदिक को समायो गया है। भारत के ममत्व कसूटाजीस, कर्तव्यरत तथा उत्सर्ग रूप का उन्मेष इस काव्य में दोहद-रिचिया का संचार करता है।

नूतन रंगों नवीन छवियों, नवस प्रसंगों तथा अमिनत परिवेश ने मिसकर एक अमूल्य रंभर्ष ही तैयार कर दिया है। जहाँ गरिमा का अ्योतिर्वीय पल रखा है सम्मता की निधि रीति प्रदान कर रही है। उदात्ता की अ्येति अर्ध-मुच्छी हो रही है और प्रलय कसूटा-कर्तव्य की वृष्टव्यी अमिनत-रत है। डॉ० मगेश ने लिखा है कि "महाकाव्य मानवपन की समस्त सम निपय कृतिशों को समन्वित करता है।" 'मनीन' या की 'उदिसा' भी इसी विधा में उत्कल प्रयास करती है।

पी विनकर ने लिखा है कि "महाकाव्य की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि स्वयं काव्य रचने के साथ-साथ वह अपनी रचना के अभाव से अन्त समकालीन कवियों को भी गई

१ डॉ० शम्भूनाथ सिंह—'हिन्दी महाकाव्य का स्वल्प-विकसत', पृष्ठ १२०।  
 २ शाचार्य गन्धर्वुसारे बाबुदेयी—'हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी', पृष्ठ ४४-४५।  
 ३ डॉ० मगेश—'अरस्तू का काव्य-शास्त्र' भूमिका, पृष्ठ १४१।

भावनाओं को धोर प्रेरित करे।<sup>१</sup> समय से प्रकाशित न होने के कारण, यह काव्य इस मुकुटत्व को संपन्न न कर सका। 'नवीन' की मुसल-दीतकार से। डॉ० बच्चन ने लिखा है 'प्रबन्ध काव्य के लिए त्रिषु भाव-विचार परिचीमा सन्तुलन धोर अनुपात-वैतना श्री भावस्वकटा हीरी है यह उनके ('नवीन' की) लिए सहज साम्य नहीं थी। 'उमिता' काव्य उनके हाथों धम्बवस्वत (Unmanageable) हो गया।"<sup>२</sup>

निष्पत्ति—डॉ० गोविन्दराम शर्मा के मतानुसार, इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'नवीन' की उमिता में महाकाव्योचित बटना-विस्तार प्रबन्ध-निर्बाह धोर वैविध्यपूर्ण जीवन श्री व्याख्या नहीं है फिर भी मार्मिक प्रसंगों श्री सृष्टि चरित्र-चित्रण श्री सफलता धोर उद्देश्य की महत्ता को ध्यान में रखते हुए हम उमिता श्री 'धर्म्य महाकाव्यों' में स्थान देता उचित ही समझते हैं।<sup>३</sup> श्री देवीचकर प्रबन्धी ने इसे महाकाव्य काव्यग्रन्थ माना है। उनका मत है कि जहाँ तक महाकाव्य का प्रश्न है, मेघ स्वयं विचार है कि यह धर्म्य उस गरिमा से युक्त नहीं है त्रिषुते महाकाव्य सम्पन्न होता है।<sup>४</sup> श्री कान्तिचन्द्र धोनरेखा ने इस कृति को बिराट् वीर के नाम से सम्बोधित करते हुए लिखा है कि 'उनका समस्त काव्य गीति-काव्य है। उमिता में भी उन्हींने महाकाव्य की धारत्रोक्त अथा का अनुसरण नहीं किया है। उसे मैं एक बिराट् वरि ही कहना चाहूँगा।'<sup>५</sup>

धाचार्य विरचनाय प्रसाद मिश्र ने संभावतरण प्रिय-प्रवास, साकेत कामायनी धारि को 'एकार्थ-काव्य' कहा है। उनका मत है कि "महाकाव्य में कथा प्रवाह विविध-संमिमाओं के साथ मोड़ देता धागे बढ़ता है, किन्तु एकार्थ काव्य में कथा प्रवाह के मोड़ कम होते हैं। प्रविष्टर बर्णनों या व्यंजनाओं पर ही कवि की दृष्टि रहती है।"<sup>६</sup> इस दृष्टि से 'उमिता' काव्य की शिवा में सोचा जा सकता है।

बस्तुतः उमिता' श्री परिगणना 'धर्म्य महाकाव्यों' में करके न ता उसके महाकाव्यत्व तथा महत्व का ठीक-ठीक मूल्यांकन ही किया जा सकता है धोर न उसे 'महाकाव्य' या 'बिराट् वीर' ही माना जा सकता है। साथ ही उसे एकार्थ-काव्य की पंक्ति में भी बैठना सुक्ति-युक्त नहीं। 'उमिता' के मूलन कथा-विन्यास धोर उतका सांगोपाग एवं रोचक चरित्र चित्रण सर्वतोमुखी सांस्कृतिक धनुषीक्षण एवं बिराट् काव्य वैतना उसे धर्म्य महाकाव्यों में स्थान प्रदण नहीं करते देती। इससे उतके काव्य-मूल्य की प्रबमानना ही होती है। उमिता' निरुद्ध महाकाव्य' ही नहीं है, प्रत्युत् उसमें जीरमठ कवानक सफल चरित्र-चित्रण मूलन कल्पना धरि कलात्मक संस्पर्ष महती बोधनी क्षिति तथा धास्वत भागरीय संवेध भी प्रोत्-प्रोत् है इनलिए यह सम्बोधन धयवा स्वका-निर्दशन संगत प्रतीत नहीं होता। 'उमिता' को बिराट्

१ श्री रामपारी सिंह 'रिनकर'— सिटी की धोर', पृष्ठ १६६।

२ डॉ० 'बच्चन' का मुझे लिखित (दिनांक २०-६-६२ के) पत्र में उद्धृत।

३ 'हिन्दी के धासुनिक महाकाव्य', पृष्ठ ४०५।

४ 'कल्पना' मूल १६६, पृष्ठ ६२।

५ साठारिक 'हिन्दुस्तान २' सुनाई १६६०, पृष्ठ २०।

६ धाचार्य विरचनायप्रसाद मिश्र—'धाकृत्य विमल', पृष्ठ ४५।

गौर मानता कल्पनिक प्रतिक है, तत्परतरु कम। इसमें उसके प्रबन्ध-शिल्प तथा महाकाव्य की उपाया ध्वनित होती है जो कि उचित नहीं है। प्राचार्य मिश्र जी के 'एनाथ काव्य'-विषयक लेख<sup>१</sup> बस्तु-विमर्श को ही प्रतिक मुहर बनाते हैं न कि समग्र काव्य-रचना को। अतएव, एनाथ-काव्य की विधा में भी उन्मुख होना सार्थक नहीं।

।३

वास्तव में उमिषा 'महाकाव्य' है और कवि का परम काव्य। डॉ० मुंचीराम वर्मा के यथानुसार, "बहु महाकाव्य तो है ही, पर सिद्धांततः महाकाव्य की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आ सकता।"<sup>२</sup> धारमोक्त बाण में समग्र प्रबन्धनाह्न न करने पर भी इसकी विराट् कल्पना केवल धर्मिक विचारणा, अर्थिककारी बस्तु-विमर्श प्रीति मानवीय-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य अफल परिशोभमान तथा जीवन-सन्देश इसे महाकाव्य की महिमामय प्रतिमा प्रभावित करते हैं। प्राचार्य नन्दबुसारे बाजपेयी का यह मत हमारी उपर्युक्त चारणा का अनुमोदन करता है कि 'महाकाव्यों के परम्परागत लक्षणों को पूर्ति न करने पर भी कोई प्रबन्ध-रचना महाकाव्य ही सकती है।<sup>३</sup> महाकाव्य के सर्वांग्य राष्ट्रीय लक्षणों की कसौटी पर रायचरित-मानस के ऐतिरिक्त द्वितीय की धम्य कोई भी रचना खरी नहीं उतरती।<sup>४</sup> प्रबन्धीन महाकाव्य स्वरूप तथा युग की मान तथा प्रवृत्ति को देखते हुए, हमें यथानुक्रम एवं यथासम्भव नियोजन करना चाहिये।

'कामायनी' के पश्चात् निकले महाकाव्यों में विभिन्न युगों का सेतु रूप छटिगोचर होता है, जिनमें 'उमिषा' भी है।<sup>५</sup> डॉ० रामप्रबध द्विवेदी ने 'उमिषा' को 'महाकाव्य' का ही सम्बोधन प्रदान किया है।<sup>६</sup> उसके महत्त्वोक्त के सम्बन्ध में उनका अभिमत सर्वथा सार्थक तथा उचित है कि इसर हास के रूपों में प्रकाशित महाकाव्यों में उसका विशेष स्थान है।<sup>७</sup>

१ 'बाङ्गमय विमर्श', पृष्ठ ४४-४५।

२ डॉ० मुंचीराम वर्मा का सुभे लिखित (बिनांक ३-२ १९३२) का शब्द।

३ प्राचार्य नन्दबुसारे बाजपेयी — 'साहित्यिक साहित्य', पृष्ठ ८०।

४ 'हिन्दी के साहित्यिक महाकाव्य', पृष्ठ १२८।

५ "इसके ऐतिरिक्त द्वितीय में 'कामायनी' के बाद महाकाव्यों की संख्या में वृद्धि हुई है। यद्यपि महाकाव्यकारों में 'धम्य और शैली के प्रति आग्रहकता का अभाव दिखाई पड़ता है परन्तु यह काव्य-परम्परा को नए युग में प्रतिष्ठित करने में प्रबन्ध सकल हुआ है। इन महाकाव्यों में रसधम्य और मार्मिक-व्यक्तों का अभाव नहीं है। तत्त्वज्ञान, गुरुत्वही, इच्छाधम, उमिषा बेबेही बन्धाल, साधन, लक्ष, सिद्धार्थ अर्थमान, शैवधम, विष्णुधम तथा पार्वती धमि अनेक प्रबन्ध-काव्यों में कवियों का अम अर्थ नहीं गया है। वस्तुतः ये काव्य हिन्दी-काव्य के विभिन्न युगों के सेतु रूप में दिखाई पड़ते हैं।"—डॉ० विश्वम्भर नाथ उपाध्याय, 'साहित्यिक हिन्दी कविता सिद्धांत और लीला' पृष्ठ ५८०।

६ डॉ० रामप्रबध द्विवेदी—साहित्यिक 'मात्र', २६ मई १९६०, पृष्ठ ८, काव्य १।

७ वही।

'साकेत' तथा 'उमिमा'—साकेत' और उमिमा में काफ़ी साम्य है और पर्याप्त वैपश्य भी। दोनों के प्रेरणा-स्रोत एवं युगीन परिस्थितियाँ एक समान रही हैं। दोनों का रचना-काल भी प्रायः एक सा ही है। 'साकेत' की रचना-मर्यादा सन् १९१४-१९३१ की है, जब कि 'उमिमा' की सन् १९२२-१९३४ ई। साकेत' सन् १९३२ में ही प्रकाशित हो गया, परन्तु 'उमिमा' सन् १९५० में। गुप्त की मूलरूप में प्रबन्ध-कवि हैं और उनका कवि उत्तरोत्तर पीढ़ीकवि में परिणत हुआ है। 'जबीन' की इसके विपरीत मूलतः पीढ़ी-कवि हैं और उनका कवि शनै-शनै प्रबन्ध-कवि के रूप में परिवर्तित हुआ है।

साम्य—दोनों कृतियों के रचना-काल में जहाँ साहित्य में छायावाद की भूमि थी, वहाँ राजनीति में बाल्मी मुग-वैतना थी। इसी हेतु दोनों मानवीवादी आध्यात्मिकता तथा नैतिकता राष्ट्रीय आन्दोलन जारी-आवृत्ति आदि के स्वर को प्रकटता प्रदान करते हैं। पार्श्वस्थ जीवन के मधुर तथा परिष्कारमय बिजों की ध्वनि दोनों ही कवियों ने संजोई है। दोनों ने दो वर्गों का उपयोग उमिमा के विरुद्ध-बर्णन में किया है। दोनों इन वर्गों में नीच-तत्त्वों को सर-घाँसों से लेते हैं।

इस प्रकार दोनों वर्गों की मूल अनुभूति प्रतिपाद्य विषय तथा ध्येय समान ही हैं। दोनों कवियों ने उमिमा के चरित्र के उद्घाटन करने का सफल प्रयास किया है। उमिमा साम्य का साम्य-जीवन राम-जनपात्रा के समय उमिमा की स्थिति, बन-यात्रा की सांस्कृतिक पीछे-बिचो-व्यथा और उमिमा-साम्य पुनर्निर्माण के प्रसंगों में दोनों कवि प्रायः एक मत हो जाते हैं।

दोनों कृतियों के विषय-साम्य के कल्पित दृष्टान्त प्राचीनिक एवं आर्थिक होंगे—

(१) साकेत—दूध लक्ष्मण ने सुरभ बड़ा पिये  
और बोले—एक परिष्कृत पिये।  
सिमिट-सी सहुता गई पिय की प्रिया,  
एक तीबल ध्यांग ही उसने रिया।  
किन्तु घाटे में उसे पिय ने किया,  
घाय ही फिर प्राप्य धपना से लिया।<sup>१</sup>

उमिमा—रक्षा लक्ष्मण से मस्तक धान—  
उमिमा की जंघा पर, और  
बुद कर बैत्र बड़ा ही सुबा  
प्रियतमा की घोबा की और,  
और धरन्धी झोड़ा की, रम्य,  
रबला के सुरभ गए सब ठार,  
परित झोड़ा ऐसे सुक रही—  
दिय ज्यों सुक धार्ये दो-बार।<sup>२</sup>

१ 'साकेत', प्रथम सर्ग, पृष्ठ ३०।

२ 'उमिमा', द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १२९।

(२) साकेत—भाषो मयूर, भाषो कपोल के बोड़े,  
भाषी कुरंग तुम को उड़ाम के तोड़े ।  
भाषो बिबि, बातक, बटक, न ग म्ब छोड़े,  
बड़ेही के कमबास-बर्ब हूँ बोड़े ।<sup>१</sup>

उर्मिला—कुरंगम कुरी ऐसो खेल,  
हरिहरियो, भाषी प्रपना भाष,  
देखती हो क्या कौतुक मरी—  
उर्मिला के लोचन-नाराच ।<sup>२</sup>

(३) साकेत—मैं धार्यों का धारहर्ष बताने प्राया  
वन-सम्पुल वन को लच्छ बताने प्राया ।  
तुल-माम्नि-सैतु मैं अप्पिल मचाने प्राया ।  
विश्वालो को विश्वास बिलामी प्राया ।<sup>३</sup>

× × ×  
वन में निज सावन सुनन धर्म से होगा  
बब नम से होया तब न कर्म से होगा ?  
बहु वन वन से हैं, बने बहल-बालर से,  
वे हुंदा सब धार्यल उनहूँ निज कर से ।<sup>४</sup>

उर्मिला—धार्य सम्यता, धार्य ज्ञान ही  
धार्यों की संस्कृत वाली  
पराधनता बिधा कर बैसब,  
बेह-भारती कम्पाली—  
धार्यों की ये सब विमसिया,  
वन में प्रसारिता होंगी,  
बटिल कुटिल प्रह्वान भावना—  
निश्चय पराबिता होगी ।<sup>५</sup>

× × ×  
धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक  
तरह बिभार सिखाने को,  
धार्य राम प्रबतीर्ण हुए हैं,  
वन को पम्ब दिखाने को ।<sup>६</sup>

१ 'साकेत', अष्टम सर्ग, पृष्ठ ११० ।

२ 'उर्मिला', द्वितीय सर्ग, पृष्ठ १२० ।

३ 'साकेत', अष्टम सर्ग, पृष्ठ १११ ।

४ वही, पृष्ठ ११८ ।

५ 'उर्मिला', तृतीय सर्ग, पृष्ठ १६८ ।

६ वही, पृष्ठ २११ ।



- (४) सार्वेत्—सीता श्रीर न बाल सकीं, पर्युपद् कण्ठ न खोल सकीं ।  
इपर उर्मिता सुग्न निरी रहकर 'हाय !' बड़ाम गिरी,  
लक्ष्मण ने हय मूढ लिये, सब ने बो-बो बूढ विभे ।<sup>१</sup>

उर्मिता—विमत उर्मिता की सुख-सतिहा,  
सीता का यलहार हुई  
सीता की सुख-सन्सारियां सुख,  
प्रिभिल हुई, साधार हुई ।  
सबन देखते रहे बुर से  
नयनों में बिपाव भर के,  
बै हो गए समाधि-मान-से  
बोती बात पाव करके ।<sup>२</sup>

- (५) सार्वेत्—कांप रही वो बेह-लता उठकी रह-रहकर  
रपक रहे थे प्रभु, कपोलों पर बह-बहकर ।  
बहु बर्षों की बाढ़, गई उसको जाने वो  
शुक्ति-सम्प्रीप्ता प्रिये, धरतू की यह जाने वो ।<sup>३</sup>

उर्मिता—प्रब जब मिले सिद्ध मे बोलों,  
प्रारम्भिक काँचस्य न या,  
हृदय मितल-सल नयन प्रवस ये  
बहु हृदय-बाणस्य न या,  
बपनों में प्रति मोरवता की  
पाली में या मोन परम,  
हृदयों में प्रदुर्गुति-बोध या,  
प्रणों में की शान्ति परम ।<sup>४</sup>

वैषम्य—साहस्य-के-साय ही साध वैमिष्य के भी सक्षण परिमाहित क्रिमे वा उक्ते है । 'सार्वेत्' के पूर्ववर्ती रचका होने के कारण उसका उर्मिता पर बोड़ा बहुत प्रभाव प्रकश्य पड़ा परन्तु कवि ने पौलिकता के रगडु को हाथ से नहीं छोड़ा है । 'उर्मिता' में मूलत उद्गमावनाओं तथा कल्पना-श्रुति ने अपनी प्रपत्य रूप भी निरून्ताया है । उर्मिता की अपेक्षा 'सार्वेत्' में प्रबन्धारमकता अधिक है परन्तु उर्मिता में उर्मिता तथा लक्ष्मण का प्रयाग प्राणायाम प्रदान कर, उनके करिषमत विशिष्टताओं को प्रयाग में लाने में 'नवीन' की को अधिक सफलता मिली है । इस दृष्टि में नामक-नामिका के रूप में लक्ष्मण तथा उर्मिता अर्थात् रूप में उष्ण-नदरक हो गये हैं ।

१ 'सार्वेत्', शतुर्बं लार्ग, पृष्ठ ८४ ।

२ 'उर्मिता', तृतीय लार्ग, पृष्ठ २६३ २६४ ।

३ 'सार्वेत्', द्वारण लार्ग, पृष्ठ ३३५ ।

४ 'उर्मिता', परऽ लार्ग, पृष्ठ ६३६ ।

यह निश्चित है कि सतयज्ञ-उमिता को कमा के बिना के मानिक बंधों को गुप्त भी पढ़ना सके है उदता 'नवीन' भी से सम्भव नहीं हो सका है। 'उमिता' में मानवीय तथा अधिपतनीय पदा उदता उमर कर नहीं आया है जितना 'साकेत' में। डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी ने लिखा है कि 'गुप्त भी के साकेत से किसी अर्थ में यह (उमिता) निम्न है। श्रुतिरिक्तता का का पूट अधिक यह है और तत्सम्बन्धी अर्थों में संभव भी कुछ कमो बिनाई है। साकेत में भी श्रुतिरिक्त स्पष्ट है किन्तु गुप्त भी ने नवीन भी की प्रेरणा मर्त्या का अधिक निर्वाह दिया है।"<sup>१</sup>

'नवीन' भी को उमिता अधिक भास्वर उदता विषय-वर्णन अधिक मन्मीर एवं समयाभूत हो सका है। 'नवीन' भी ने उमिता को अधिक बीजन-प्रसार तथा विघ्नता प्रदान की है। यह राम कथा उमिता की रसा पर हावी नहीं हो सके है। दोनों के लक्ष्य में सी काही अन्तर है। 'नवीन' भी ने सतयज्ञ का अधिक परिमार्जन किया है। एक इष्टान्त पर्याप्त होता। 'साकेत' के लक्ष्य केकेपी तथा बधरय की ही प्रबलता नहीं करते हैं, प्रत्युत, सीता की उद्वेगा करते हुए पाये जाते हैं। वे सीता से कहते हैं—

उठा पिता के भी विरह में  
किन्तु धार्य धार्या हो तुम,  
इससे तुम्हें क्षमा करता हूँ,  
धरला हो धार्या हो तुम।<sup>२</sup>

इसके विपरीत 'नवीन' भी के लक्ष्य इस उदत स्वभाव से कोर्षों दूर इष्टिगोचर होते हैं। वे धार्यता एवं विवेकशील हैं। 'साकेत'-सा अंतर्गत उनमें कहीं भी धरपी अन्त नहीं रिबलता। 'उमिता' के लक्ष्य सीता से कहते हैं—

पर तुम हो बिहे की बेटी,  
पुनःपुन हो बधरय की,  
तुम हो सह्यामिनी राम की  
विघ्न साधना के पथ की,<sup>३</sup>  
पावक सम तुम परम पवित्रा,  
धनस बीमिता, वैजयन्ती।<sup>४</sup>

इसके परिचित 'उमिता'-मनीषा के प्राय सभी उपकरणों में, 'साकेत' सम्बन्धी अन्तर निवेशित किने जा चुके हैं। सब विचारकर 'साकेत' एवं 'उमिता' समान-स्तर की कृतियाँ हैं। परन्तु जो ऐतिहासिक कहता साकेत को मिस्री, वह 'उमिता' को न मिला सकी। 'साकेत' के कहीं परिपाटी की श्रुतिता बनकर भी नूतन परम्परा का प्रसन्न किया वहाँ 'उमिता' इस प्रकार से सम्पन्न हो गई। कलात्मक-सौष्ठव का जो उत्कर्ष 'साकेत' में प्राप्य है, उदका 'उमिता' में

१ डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी—साहित्यिक 'धाम', २६ मई १९६०, पृष्ठ २, कासम ३।

२ 'साकेत' प्लावर्ता सर्ग, पृष्ठ १८१।

३ 'उमिता', पद्य सर्ग पृष्ठ ६१५।

४ वही पृष्ठ ६१४।



## काव्य-शिल्प

भूमिका—भारतीय चिन्ताशास्त्र में कवि-शक्ति को देवता विरोध की कृपा<sup>१</sup> अथवा परमेश्वर की देन<sup>२</sup> के रूप में ग्रहण किया गया है। इसी कवि-शक्ति का सम्बन्ध प्रतिभा से माना गया है जो कि कवित्व का बीज और कवि के कोई अगम्यतराज संस्कार-विरोध के रूप में मानी गई है।<sup>३</sup> आचार्य कुन्तक ने पूर्व-जन्म तथा प्रस्तुत-जन्म के संस्कारों के परिष्कार के प्रोत्सव प्राप्त कवि-शक्ति को ही प्रतिभा मना है।<sup>४</sup>

आचार्य खट्ट ने प्रतिभा को प्रकार की मानी है—सहजा और उतारा। इनमें से सहजा मनुष्य के जन्म से ही सम्बन्ध होने से अधिक श्रेष्ठ है।<sup>५</sup> 'नवीन' की प्रतिभा-सम्पन्न कवि है। उनकी प्रतिभा भी उतारा न होकर सहजा थी। वे कवित्व-शक्ति के नैसर्गिक बरदान से विभूषित थे। वे अमृत कवि थे, मर्ते नहीं मरते थे। वे अतीव सहृदय थे परन्तु काम्याभ्यास का उनमें अभाव रहा जो कि प्रतिभा की बीज-स्वरूप के परस्परन में आवश्यक भाग मना है।<sup>६</sup>

'नवीन' की में काव्य-साधना का पर्याप्त अभाव रहा है। इस तथ्य को उन्होंने भी स्वीकार किया है—

१ 'तस्याहं हेतुः कविदेवता यदुपसृप्यप्रसादाविजगम्यहृत्सम्'—पण्डित राजशेखर, एत पद्माकर, पृष्ठ ६।

२ 'कविता शक्ति परमेश्वर की देन है और इसीलिए कवियों की तरंग कुछ विमलल है।'—श्री राजाहर्म्यपुराण, नागरी प्रचारिणी मण्डल, छठे भाग, सं० १६०२, पृष्ठ १७४-७५।

३ 'कवित्वबीजं प्रतिभामात्मम्, अगम्यतराजसंस्कार विरोधः कविशक्तम्—आचार्य रामानुज, हिन्दी काव्यालंकार सुत्र, १११।१६।

४ 'प्रसन्ननासतनसंस्कारप्रौढ़ा प्रतिभा कविदेव कविशक्तिः'—हिन्दी बालिका बोधिका ११। २६, कारिका को व्याख्या, पृष्ठ १०७।

५ 'प्रतिभैव वरदेतिता सहस्रोत्पाद्या च सा हिषा भवति, पुसा सह बालबाधन योस्तु व्यापसी सहजा'—'काव्यालंकार' ११। १७।

६ 'Poeta nascitur, non fit' लैटिन शक्ति—कवित्व-शक्ति जन्म से ही सिद्ध होती है, कवि मर्ते नहीं जाते।—डॉ० बलदेवप्रसाद व्याख्याय कृत 'शक्ति-पुष्पवती', पृष्ठ ७ से उद्धृत।

७ 'अधिकत इकस श्रेयाः सुकवे सुकृतस्य कविषो नियतम्, अस्तिविनामग्यस्यवमियुक्तः पक्षिनामग्यम्।'—आचार्य खट्ट, 'काव्यालंकार', ११। २०।

८ प्रतिभैव भूताभ्यास सहिता कविता प्रति।

हिन्दुधर्मसूत्रिका श्रीव्यसिंहशास्त्रिणः—आचार्य बलदेव, 'अज्ञातोक्त', ११।१।

(क) 'वहाँ तक मेरी अपनी कविताओं का सम्बन्ध है, मैं सिर्फ यह कल्पना चाहता हूँ कि मैं 'कवि न होऊँ, नहिं बनुर कहाऊँ'। हाँ, बीच-बीचमें कुछ घुबो-सा मन में मँडराने लगता है और कुछ कहने को बसाविस हो उठती है। वहाँ तक छन्द-शास्त्र का तास्तुक है मैंने उसे बिलकुल ही नहीं पढ़ा। न मुझे रसों के नाम पानुम हैं न मैं वपय-भरण जानता हूँ। ताहम् मेरा यह बाबा जरूर है कि मेरे छन्द बीस-बासि नहीं होते फिर भी हूँ तो नाकामोही।<sup>१</sup>

(ख) 'यों कला की दृष्टि से पाठक को मेरे शीर्षों में शोष मिल सकते हैं। किन्तु मेरी भावना की उदात्तता का वहाँ तक सम्बन्ध है, वहाँ तक कलाविदों को उसमें सम्बेह करने का अवसर न मिलेगा।'<sup>२</sup>

(ग) 'यह मेरा एक और नीत-संबन्ध प्रकाशित हो रहा है। मैं इन शीर्षों के सम्बन्ध में क्या कहूँ? पाठक और समीक्षक अपनी-अपनी रचि के अनुकूल इस बात का निर्णय करेंगे कि ये कैसे हैं। अपनी सम्बन्ध में मैं निःसंकोच यह कह सकता हूँ कि मुझमें साधना का प्रभाव है। साहित्य-साधना के लिए, माता सरस्वती की उपासना के लिए, जिस एकनिष्ठता की आवश्यकता होती है वह मुझमें नहीं रही। जीवन एक प्रकार से उलझा-उलझा का रहा है। पढ़ा-पढ़ा सब कुछ भीतर से कुट-कुट हुई, सिखने बैठ गया। कमी-कमी तो ऐसा भगता है कि ब्यर्थ ही मैंने काव्य-रचना का प्रयास किया है। मेरे पास न धन्य हैं न कला कोशल है, न अध्ययन सामग्री है, और न स्वैर-सामर्थ्य। तन्तुबाम एक-एक तार पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, तब कहीं जाकर मर्ब से कह सकता है कि 'भीनी भीनी किनी करिया। एक में हूँ जो शर बनिमय शरों का ताना-बाना पूरने का नाटक रचता हूँ पर तन्तुबाम की ध्यान केन्द्रीयता की साधना नहीं कर सका हूँ।'<sup>३</sup>

'सुसखी बाबा' की पंक्ति, 'कवित्त बिकेक एक नहि मोरे' जन पर परिचय होती है। वे मस्त प्रकृति के व्यक्ति थे। श्री बाबादेव्युष्यवाच ने ठीक ही लिखा है कि जो शोष सुकवि हैं उन्हें जब दर्शन घाटी है तो फिर संसार के नियमों को दूर रखकर वे अपनी उर्मत को निकाल बाँधते हैं। परिचाहे तो उनकी स्वाभाविक कल्पना गप्ट हो जाती है और फिर उसका रस जाता रहता है।<sup>४</sup> कवि की अपनी इच्छा की प्रयासता के कारण ही उन्हें प्रजापति' के समान बताया गया है।<sup>५</sup>

बासुदेव में 'कव्याभ्यास एवं एतन्मुक्त साधना की दिशा में 'नवीन' जो कवीर के प्रतिष्ठा थे। जिनके विषय में प्राचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि 'सिरे से पैर तक के बरतमोला थे—बेपरबाह हड़ उम।'<sup>६</sup> वहाँ भी तो पढ़ा है—'कव्य' प्रयत्नरहितः।

१ कुकुन, पृष्ठ १६।

२ 'रतिकरेखा', पृष्ठ १।

३ 'अपलक' मेरे क्या त्रास शीत? पृष्ठ—४।

४ 'नापरी प्रचारिणी बहिरा', दृष्टा भाग तन् १६०२ पृष्ठ १७८-७९।

५ 'अपारे बाध्यतारे बहिरा प्रजापति,

पदा स्मे रोचते तिर्य तचेरं परिवर्तते—प्रतिपुत्र, १९६१०।

६ प्राचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य की मूिमिका, जलिकाल के प्रमुक्त कवियों का प्रकृति, पृष्ठ ६७।

इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य-सामग्री के प्रयास में उनका वाङ्मय यथोचित रूप में कलात्मक उत्कर्ष एवं परिष्कार प्राप्त नहीं कर सका। कवि के बहुविध बीभत्स की इसमें सबसे बड़ा कारण प्रतीत होता है। वह अपनी समय सृष्टियों को एकनिष्ठ नहीं कर सका। इसी पूर्वपीठिका पर, 'नवीन' की के काव्य के विलस-यत्न का अनुशीलन करना उचित प्रतीत होता है।

विस्तरेपणु—'नवीन' की के काव्य में विविध शैली भाषा एवं छन्दों का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। वे भावना-प्रिय एवं भावनेगोचर कवि थे। इस नाटे, उनके कला-मूल पर भी उनके भावों का प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है। उन्होंने काव्यात्मकार एवं काव्य वाङ्मय-संस्था को अधिक महत्त्व प्रदान नहीं किया। उन्हें अनुसृष्टि का कवि याग जा सकता है जिसके फलस्वरूप उनके काव्य में अनुसृष्टि की ही प्रवृत्तता हो गई है। कवि की प्रेरणा रस की ही अधिक प्रेरक बचाते हुए डॉ० नरेन्द्र ने लिखा है कि "अनुसृष्टि और कल्पना में अनुसृष्टि ही अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि काव्य का उद्देश्य यही है। कल्पना इस उद्देश्य का प्रतिफल प्राप्त करके ही प्रत्यक्ष उद्देश्य नहीं है।" 'नवीन' की की काव्य-कला के विस्तरेपणु से उन्मुख स्थिति की पुष्टि की जा सकती है।

काव्य-शैली—'नवीन' की की शैली को प्राक्-प्रधान एवं शैलि-शैली के रूप में चिह्नित किया जा सकता है। इन्हीं दो शब्दों में उनकी काव्य-कला का सार निहित है। इस प्रकार 'नवीन' की की काव्य-शैली को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :—(क) प्रबन्ध शैली, (ख) मुक्त-शैली, (ग) शैलि-शैली।

प्रबन्ध-शैली—'नवीन' की की प्रबन्ध शैली के दर्शन उनके महाकाव्य 'जिम्मा' तथा अन्यकाव्य 'मायासंज्ञा' में होते हैं। इस शैली को भी तीन भागों में बाँटा जा सकता है :—(क) बर्लन-प्रधान शैली, (ख) चित्रण-प्रधान शैली, (ग) भाव-प्रधान शैली।

बर्लन-प्रधान शैली—'नवीन' की ने चाणक्य शैली का उपयोग कथाओं के बर्लन में किया है। यह शैली सरल तथा समिवासादि युक्त है। इसका एक उदाहरण यहाँ है—

हो गया बुद्धों से अपने प्रतिघात ब्रह्म कामपुर,  
द्विषा की काला लड़की, पहचाने गया घुमा, घर-घर।  
देखा गलेसंज्ञक घर ने दुहा बन-बाह-भन बरिबर्लन,  
बसने देखा वह घण-पतन, देखा चिन्नीविषा का गर्तन।<sup>१</sup>

इस प्रकार कवि की बर्लन-प्रधान शैली में अपने काव्य का ही परिष्कृत प्रदान किया है।

१ डॉ० नरेन्द्र—'द्विषी चणक्यानीक', नृसिद्धा, पृष्ठ ७०।

२. मायासंज्ञा, पृष्ठ १२।

चित्रण-प्रधान शैली—बर्णन की अपेक्षा चित्रण में कथारसकता एवं सुन्दरता अधिक प्राप्त होती है। चित्रण-प्रधान शैली में कवि ने भावानुकूलता सरलता माधुर्य और मर्मस्पर्शिता को अपनाते वय सफल प्रयास किया है। चित्रण में कवि ने प्रवाह तथा प्रभावोत्पादकता का विशेष ध्यान रखा है —

पवन इतनम पय घाटी बही,  
संकुचित कलियां कुछ हिल उठी,  
हृदय में घारे रसु पराय,  
खतुपती के रज-सी मिल उठी।<sup>१</sup>

इस प्रकार 'नवीन' शैली में चित्रण-शैली से, अपने काव्य को अधिक आनुभव बना दिया है। चित्रण में कवि ने अभिव्यक्ति को हृदयस्पर्शी एवं प्रभावित्यु बनाया है।

भाव-प्रधान शैली—इस शैली में कथाप्रवाह एवं प्रकृतात्मकता से सरलता एवं मर्मस्पर्शिता के तत्वों का नियोजन किया है। कवि ने प्रसुखता इसी शैली का ही प्रथम प्रहण किया है। इसमें भावों के अनुकूल उच्च-योजना एवं परिवेद्य सृष्टि की गई है। कवि ने कल्याण के साथ उत्साह एवं प्रखरता के गुणों के कपाट खोले हैं—

हर घर में प्रखर-तरंग में—  
घर घर बिहोड़ मरा  
परम पुटव की होड़-कमिली  
है यह प्रकृत पद-धरत।<sup>२</sup>

'नवीन' शैली की प्रबन्ध शैली में भावना तथा चित्रांकन की विशेषताएँ हैं। उसमें गीत-तत्वों का भी समावेश है जिसके कारण यह मधुर तथा प्रभावमय हो गई है। कवि तथा प्रवाह के दृष्टिकोण से यह शैली प्रत्यन्त सफलोत्पत्ति की है।

सुखन शैली—कवि की रीतियों में सुखन-शैली को ही प्राधान्य प्राप्त हुआ है। इस शैली में उसके प्रबन्धकार्यों में भी अपना प्रभावपूर्ण स्थान बनाया है।

धर्म-शोभन में धर्म-तत्वों को ही सुखन की रचना की गई है।<sup>३</sup> यह शैली, प्रबन्ध-शैली से कई अर्थों में विभेद रखती है। प्रबन्ध-शैली में बहुत कथा तथा वर्णनात्मकता को प्राथमिकता दी जाती है, वहीं सुखन-शैली में इनको गौण स्थान प्राप्त होता है। सुखन-शैली में जीवन के किसी एक दाय उद्देश्य पर धरना मार्मिक बहना एवं संवेदनशील भाव को उद्घोषित किया जाता है जब कि प्रबन्ध-शैली पर माधुर्य महाकाव्य में सम्पूर्ण जीवन का विवेकपूर्ण धरोहर है। सुखन-शैली को निम्नलिखित अर्थों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) उत्कण्ठ-विभाजन (२) सुखन-विधान, (३) बोझ-विधान (४) शोभा

१ उमिला, पृष्ठ १२४।

२ बही पृष्ठ २५०।

३ 'सुखन इति कर्ण-कथन-कारण-कथा'—अभिलेख, प्रथम १३० अंश १२ पृष्ठ ४११।

(४) कुण्डलिया, (२) संयुक्त-विभाजन - (क) धनसी, (ख) सतसई, (३) उक्ति-वैचित्र्यगत विभाजन—(क) दृष्टकूट पद, (ख) सुक्ति ।

सुखरस विभाजन सुकृत-विधान—भाचार्य धर्मिण्ड्य सुख ने लिखा है कि 'ऐसा पद्य जिसका समस्त-निघण्टे पदों से कोई सम्बन्ध न हो, धर्मने विषय को प्रकट करने में स्वतः ही बलम हो, सुकृत कहलाता है । उसमें रस की पूर्णता तथा स्वादसम्बन्ध भी अपेक्षित है ।' भाचार्य राजशेखर ने ब्रह्मण्ड के सदस्य, सुकृत में भी वस्तु को नियोजित किया है ।<sup>१</sup> भाचार्य विस्वनाथ ने उसके विषय में लिखा है—

सुखोदय पद्ये न सुकृते सुकृतम् ।<sup>२</sup>

डॉ० रामसागर त्रिपाठी के मतानुसार जो काव्य धर्म-धर्मव्यगार के लिए परापूर्णी न हो, वह सुकृत कहलाता है ।<sup>३</sup> इस प्रकार सुकृत स्वावसन्धी तथा रसपूर्ण पद्य होता है । इसका 'नवीन' भी न प्रचुर प्रयोग किया है । कवि के सुकृत का एक दृष्टान्त द्रष्टव्य है—

शास्त्र धर्मित, धर्म योद्वा, यह प्रश्न-पत्र का सेन,  
भी में घाता घाज कसा हू जन सबको ने सेन ।<sup>४</sup>

सुखरस विभाजन दोहा-विधान—भाचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "जिस कवि में कल्पना की समाहार-शक्ति के साथ भाषा की समास-शक्ति जितनी ही अधिक होती उतनी ही वह सुकृत की रचना से सफल होगा ।"<sup>५</sup> इस समाहार-शक्ति का कुशल निर्वर्तन हमें 'नवीन' भी के दोहों में भी प्राप्त होता है । दोहों की विशेषता पर प्रकाश डालते हुए कविधर रघीन ने भी कहा है—

वीर्य दोहा धरन के, शास्त्र धरे धाहि ।

धर्मो रघीम नट कुण्डली, छिम्पि कृषि धर्मि धाहि ।<sup>६</sup>

'नवीन' भी के दोहों पर ऐतिहासिक-काव्य का पर्याप्त प्रभाव है । ये कवि के प्राचीन काव्य-संस्कारों के भी निर्वहक हैं । इनमें कवि ने विविध साधनाओं को अभिव्यक्त किया है । ऐतिहासिक प्रभाव तथा वीर्य की विशेषता के दृष्टिकोण से, यह दोहा द्रष्टव्य है—

छोपे छिन्नत हों तऊ, लगे तिरिछे बाल,

बोख न काहु बीजिए, उलटयी सकल विधान ।<sup>७</sup>

१ 'सुकृतमप्यनामिदमित्यु ( तस्य सत्त्वायां कम् ) तेन स्वतन्त्रतया परिसमाह्ननिरा-  
कृतान्धननि प्रबन्धनप्रवर्तानुक्तधर्मिण्ड्युच्यते । पूर्वपरमित्येकसेपि द्वि येन रसचर्चणा क्रियते  
तत्रैव सुकृतम् ।' 'ब्रह्मण्डको', धर्मिण्ड्य सुख की व्याख्या, तीसरा अंश, पृष्ठ १४१-४४ ।

२ 'काव्यमीमांसा, ब्रह्मण्ड्य ।

३ साहित्य दर्पण पद्य परिच्छेद, ११६ ।

४ डॉ० रामसागर त्रिपाठी—सुकृत काव्य और बिहारी, पृष्ठ १८ ।

५ 'कु कुम्', पृष्ठ ७६ ।

६ भाचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ २६८ ।

७ श्री सूर्यनारायण त्रिपाठी द्वारा संगृहीत, 'रहितम-सप्तक' ।

८ 'नवीन दोहाकली' मैना, धर्मिण्ड्य रचना ।



इसे संशोधन नाम, मरुतु रिक्त प्रकृति-पद ।<sup>२</sup>

संशोधन-विभाजन : पुनर्जाति—हिन्दी में पुनर्जाति नाम धीनरवास निरि धोर निरिधर  
 के अर्थ में प्रयुक्त है। 'नवीन' भी भी एक कृष्ण प्रकृति नाम है। इस शब्द  
 के अर्थ में प्रयुक्त है, जो कि तथा प्रयुक्तों को ही लिखा गया है, परन्तु 'नवीन' भी इस  
 अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। जहाँसे नूतन भाषा-योजना को स्थान प्रदान किया  
 है। इसमें व्यक्ति के कथन तथा वेचना के अनुकूल जहाँसे इस शब्द को भी व्यक्तिवादी  
 अर्थ को नियोजना में प्रयुक्त किया है—

कहा करी ? यह वेचना, तमुक्ति परे नहि बेक,  
 तकि-तकि में कोम है यहाँ संघम-बाण प्रक,  
 संघम बाण प्रक हिये में कतकि रहे मे,  
 पाव यहुर गम्भीर तीर के टाकि रहे मे,  
 भरि मरि प्राप्त है कोमल अतकिस्त पाती,  
 बुद-बुद बहि बनी सिधौती संचित पाती,  
 यहहु कौम ली मरुतु दण में यहाँ करी में,  
 हूँ मे यहरे पाव, बटावहु कहा करी में ?<sup>३</sup>

संशोधन-विभाजन : धरती—हिन्दी में धरती नामवाची शब्दों के संशोधनों के  
 नाम हैं— पुनर्जाति रोहावती रहीम की 'रहावती' की 'रहित रहावती'  
 धोर वर्तमान मुक में भी पुनारेमान नामों की । इनी नामवाची पति  
 प्राणी है, 'नवीन रोहावती' ।

भी धरतीपरतु मरु  
 प्रकृति विषय प्रकृति व्यापार,

कता यह है कि  
 दिनों की

- १
२. उचितता संशोधन नाम,
- ३ 'नवीन-रोहावती',

भी नष्ट न हो प्रौर बकेला भाव, विचार और चित्र भक्षण बमकता रहे।<sup>१</sup> यह विशेषता 'नवीन-बोझबसी' में प्राप्य है। 'नवीन बोझबसी' की भाव-ध्वजना विषय के धातुनिक रंग से प्रस्तुतीकरण एवं नबक दृष्टिकोण के कारण, सम्बन्धित परिपाटी का पूर्णरूपेण परिपोषण गयी करती।

संस्कृत विभाजन सतसई—इमारे महीं सतसई की बड़ी पुगनी परम्परा रही है। सतसई संस्कृत के 'सप्तशती' से उत्पन्न हुआ है। प्राकृत भाषा की 'भाषा-सप्तशती' संस्कृत-भाषा की भार्या-सप्तशती' और हिन्दी में 'गुलसी-सतसई' 'खीम-सतसई' बिहारी सतसई', 'मतिराम-सतसई', 'बृज-सतसई', 'विजय सतसई' 'रसनिधि-सतसई' 'राम-सतसई' 'वीर-सतसई' आदि इसी सतसई-परम्परा की कृतियाँ हैं। विद्योनी हरि की वीर-सतसई धातुनिक कास की कृति है। इसी प्राचीन तथा प्रसिद्ध सतसई नाम को 'उमिना-सतसई' कहन करती है। सतसई की प्राचीन परिपाटी में शृंगार शक्ति, नीति उपदेश एवं वीरत्व के भाव प्रतिपाद्य हैं। 'नवीन' की ये 'उमिना-सतसई' में बिप्रसम्म-शृंगार का प्रसिपादन किया है। इस सतसई में ७०५ दोहे सम्मिलित हैं जिनमें कतिपय छोटे भी हैं। 'बिहारी-सतसई' में भी दोहों के साथ कई-कई छोटे भी मिल जाते हैं। शृंगार-रस की परम्परा में, भाषा-सप्तशती, भार्या-सप्तशती, बिहारी-सतसई, मतिराम-सतसई, विजय-सतसई, रसनिधि-सतसई और राम-सतसई धाती हैं।

उक्ति-बैचित्र्य-गन विभाजन-दृष्टिकोण पर—कबीर, विद्यापति, सुरदास आदि के सहस्य 'नवीन' की ने भी एक नूट पर विद्या है। रघु पर कबीर और विद्यापति की ध्येसा सुर का धनिक प्रभाव परिमजित होता है, जिनके दृष्टिकोणों को, प्राचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने एक तरह के सन्धा-बचन वा उसटबासी ही माना है।<sup>२</sup> 'नवीन' की क्या यह पर इस प्रकार है जिसमें वाली तथा बुद्धि का बिलास भाव ही निघटा है—

यह शम्भर प्रिया की प्रतिभा, बहु सुप्रशस्तक जनका सोन,  
सुन्दर जनका मलित मनामक, मनहर बैचित्रिक जलान,  
बहु जनसार यत्न कर्म मम, भाकिन जनकी धन-धी,  
इस सबकी समृति जाय जठे तो, कैसे धारें ह्य हिय ही ?  
माई धन बंधु, क्या न तुम लमके हिय को सहन-धया ?  
तो हम फिर कैसे लमधर्ये, तुमको धपनी प्रेम-कथा ?<sup>३</sup>

इसमें बमत्कार एवं धातुनिकता की प्रयानठा है। मूलन विषय को छद्मस करती क बरख बहु बरिपाटी का पूर्ण रूपेण नहीं करता।

उक्ति-बैचित्र्य-गन विभाजन मुक्ति—प्राचार्य मन्मथुसारे बाजपेयी ने, 'नवीन' की की धारणिक रचनाओं को सुक्ति प्रयान कहा है।<sup>४</sup> की सद्गुणकण ध्येसी ने लिखा है कि "छोटी

१ 'साहित्य दर्शन', पृष्ठ २३१।

२ प्राचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—'हिन्दी साहित्य की कृतिका, सतसई, पृष्ठ ३५।

३ शम्भर-धीन, कवि की, १५ वीं कविता, ध्रुव ३।

४ प्राचार्य मन्मथुसारे बाजपेयी 'हिन्दी साहित्य—बोताबों प्रतापनी, विजय, पृष्ठ ३।

सोरी सूत्रात्मक उक्तियाँ बहुधा अपने में पूर्ण होती हैं और उक्ति-वैचित्र्य धरना स्वतन्त्र विचार व्यक्त धरना प्रमुख तथाकथ धरना बास्तविक निष्कर्ष का प्रमुख भाग धरने रखने के कारण, पाठकों और श्रोताओं के कर्ण में धरना स्थापन कर लेती हैं । प्राथमिक काल के दर्शन होने के कारण इनका बड़ा व्यापक प्रभाव पड़ता है । 'नवीन' की भी सूक्ति निधि, यहाँ में बिखरी पड़ी है । एक दृष्टान्त पर्याप्त है—

घरुत प्रातः, कारी निहा, इकटिक बुबहरी-बीर,  
तासज लोचनन में हुरे, तज इक संघ री बीर ।<sup>१</sup>

भी सद्गुरुकारण धरन्वी ने लिखा है कि "बूँद बिहारी कबीर रछीम तुमसी, बिदोनी हरि दुनारेसाज धीर बासकृष्ण समी के बोहों के धरनों में सूक्तिवाँ पक्षी है ।"<sup>२</sup> इस प्रकार 'नवीन' की भी धरनी काव्य-शैली में प्राचीन काव्य-शैली में प्राचीन मनोवृत्ति का भी परिचय दिया है । उनकी प्रस्तुत काव्य-शैली के धरनों में, भी लक्ष्मीनारायण 'सुभाषु' की यह उक्ति बरिताब की बा उकती है कि 'यह कहना बहुत ही भ्रमपूर्ण है कि पुराने कालों में नवीन जीवन का उत्साह व्यक्त नहीं किया जा सकता ।'<sup>३</sup> 'नवीन' की हर स्पष्ट मत बा कि पुराने विषयों को भी नवीनता से सुसज्जित किया जा सकता है । कहना न होना कि 'नवीन' की भी बोहा बीसाई-सोरख-गुण्डनी से समन्वित 'नवीन-दोहाबनी एवं 'उर्मिला-सतनई के प्राचीन प्राक्य स्वी पाठ में नये जीवन विषयों तलों एवं विचारों की इत को उद्देश्य है । वे परिपाटी का पालन करते हुए भी धरनी काव्य एवं विचारगत कल्पित विशेषताओं के कारण विभिन्न ही दृष्टिगोचर होते हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ने धरनी मुक्तक शैली में प्राचीन एवं नूतन का सुन्दर समन्वय उपस्थित किया है और इस शैली को नूतन भाव भंगिमाओं से भी परिष्कारित किया है ।

गीति-शैली—मुक्तक तथा गीति-शैली में कविबन्धु धरन्वी भी हैं । दोनों का धरन्वी निकटित करते हुए, डॉ० चण्डलता बुबे ने लिखा है कि दोनों में (मुक्तक और गीतिकार्य) धरन्वी के कारण एक भाव वा एक विचार पर ही कवि की दृष्टि टिकी रहती है । किन्तु एक भाव एक विचार और एक ही धरन्वी की प्रकृत एकता में जहाँ गीतिकार्य धरन्वीक माहात्म्यक एवं धारमाभिर्भावक होता है जहाँ गीतिकार्यकार का मूल प्रेरणा-केन्द्र उषी के हृदय की धरन्वीकता होती है, जहाँ भावों का ही एक भाव सङ्घर कवि को रहता है, जहाँ मुक्तककार धरन्वी धरन्वीकता में धरन्वीक की तीव्रता के प्रभाव में धरन्वीकता का तत्त्व नहीं जा पाता । वह धरन्वी धरन्वीकता को बुद्धि की विचारधारा में रंग कर एक बड़े ही कला पूर्ण का में धरन्वीकित करता है । कभी-कभी तो कलाका की इतनी ऊँची उड़ान भी लेने

१ साहित्य तरंग, पृष्ठ १३१ ।

२ वही ।

३ नवीन-दोहाबनी धरन्वी कविता ।

४ भी लक्ष्मीनारायण 'सुभाषु'—जीवन के तरंग और काव्य के सिद्धान्त पृष्ठ ४६ ।

मगता है कि उसकी अभिव्यक्ति में उक्ति अंतर्भाव या जाता है। यह उक्ति-वैचित्र्य गीतिकाम्य में स्थान नहीं पा सकता।<sup>१</sup>

साहित्यवर्षणकार ने 'सुख मार्ग' वेदपर्यं स्थितपाठ्यं सङ्ख्यते कहकर गीत को रूपक का सात्याप माना है।<sup>२</sup> निबन्ध काम्य का एक भेद मानकर वेद होने के कारण उसे गीति भी कहा गया है।<sup>३</sup> जान ड्रिंक वाटर ने लिखा है कि 'गीतिकाम्य सुख काम्यात्मक सक्ति द्वारा उद्भूत ऐसी अभिव्यक्ति है जिसमें धर्म्य कोई भी सक्ति सहकारी नहीं होती, एवं गीतिकाम्य पर्यायवाची शब्द है।'<sup>४</sup>

'नवीन' भी अपने आप को मूलतः गीतकार ही मानते थे प्रबन्धकार नहीं।<sup>५</sup> वे अपने व्यक्तित्व एवं प्रकृति से गीतकार ही थे। गीतों में ही उनका हृदय विभक्तकर बह निकला है। 'नवीन' भी की गीति-शैली को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—(क) पर शैली, (ख) प्रगीत-शैली (ग) लोकगीत-शैली।

पद-शैली—'नवीन' जो वे पर या गीतों का भी सूजन किया। इनमें उनका प्राचीन काम्य संस्कार वैष्णव भावना, संगीत ज्ञान एवं लग्नयता को मुख्य क्षेत्र प्राप्त हुआ है। इस शैली को अपने-तब प्रदान करने के कारण वे हिन्दी की प्राचीन गीतकारों की परिपाटी में अपना स्थान बना लेते हैं।

हमारे भक्त कवियों ने शास्त्रीय राम-उपनिषदों के आधार पर अपने गीतों या पदों की रचना की है। साथ ही, गीत में संगीतमय अभिव्यक्ति<sup>६</sup> को भी प्रसूचता प्रदान की गई है।

संगीत कवि के तन्तु-तन्तु में परिभ्रात या। वह उसे संस्कार रूप में ही प्राप्त हुआ था। इसीलिए, कवि ने अपनी प्रत्येक रचनाओं को शास्त्रीय आधार पर संगीतबद्ध करने का प्रयास किया है। उसकी इस प्रकार की रचनाओं में राम-उपनिषदों के नामोस्तेज प्राप्त हैं—यथा, सोरठ-

१ 'काम्यकर्मों के मूल स्रोत और उनका विकास', पृष्ठ ४७९।

२ साहित्यवर्षण, पृष्ठ परिच्छेद, श्लोक १२५।

३ श्री रामचंद्र मिश्र, काम्यवर्षण, पृष्ठ २५०।

४ 'But since it is most commonly found by itself in short poems which we call lyric, we may say that the characteristic of the lyric is that it is the product of pure poetic energy unassociated with other energies and that lyric and poetry are synonymous terms'—John Drink Water, The Lyric P 64

५ "Lyrical it may be said implies a form of musical utterance in words governed by overmastering emotion and set free by a powerfully concordant rhythm" Ernest Phys, Lyric Poetry', Foreword p 6

६ 'गीतम-नदिरा' या 'पावस-नीड़ा, गीत, ४१ की रचना।

देश, बाह्यतः स्यात्, वैरवी राग २ राग सारंग ३ भासावरी ध्रुपद ४ राग चम्पाक  
तिस्सासा ५ आदि । 'भासावरी ध्रुपद' में लिखित इस वीथ में सुर तुलसी, मीथ, मन्दास आदि  
मन्य कवियों की पर-सेनी के कतिपय सूत्र या विरासे हैं—

हृद मय को घेर है गहन सपन शम्भुकार,  
धम्बर के ऊपर है प्रमित निखिल तिमिर मार ।<sup>१</sup>

कवि ने शक्तिपरक गीतों का भी निर्माण किया जो कि इसी परम्परा से ही उद्भूत  
हैं । इस प्रकार के गीतों पर सुर तथा मीथ का पहला प्रभाव है ।

प्रगीत-दोसी—वीथ या पद-वीथ और प्रवीथ में अन्तर है । शास्त्रोक्त रचना वीथ है  
और प्राधुनिक ढंग के ध्रुपद को प्रवीथ की कला से विभूषित पाया है । हमारे भक्त कवियों  
की रचनाओं को वीथ या पद कहा जाता है, परन्तु भाजकल की मूठन से ही विहित सुकल  
रचनाएँ 'प्रगीत संज्ञा प्राप्त रचनाएँ प्रगीत' संज्ञा करती हैं ।

'नवीन' की में, पुरातन एवं मूठन के समन्वित रूप के विद्यमान होने के कारण,  
उन्होंने वीथ तथा प्रवीथ दोनों ही प्रकार की विधाओं में अपनी कला-कृशमता प्रकट की है ।  
उनकी प्रगीत-दोसी को दो प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है—(क) अधिर्म्यजना-यत विद्येष्टा,  
(ख) क्यमय विद्येष्टा ।

अधिर्म्यजनायत विद्येष्टा—श्रौतिकाम्य की अधिर्म्यक्ति एवं प्रस्तुतीकरण की सेती में  
अनेक लक्षों की संयोगना होती है जिनमें निम्नलिखित प्रमाण हैं—(१) धार्याधिर्म्यजना  
(२) संगीतरसकटा (३) अनुभूति की पूर्णता (४) भाषा का ऐक्य । उपर्युक्त लक्षणों के  
विशेष से ही अधिर्म्यजनायत दोसी का संयोग बिना उपस्थित किया जा सकता है ।

धार्याधिर्म्यजना—भीमती महादेशी वर्मा ने लिखा है कि "सुख-दुख की भावावेधमयी  
धरसा विद्येष्ट का विने-श्रुति लक्षों में स्वर साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है ।"<sup>२</sup>  
'नवीन' की के धार्याधिर्म्यजनों को ही वीथ का शास्त्र भावरण पहनाया है । उनकी  
धार्याधिर्म्यजना में हृदय खोजकर धरती बात को उपस्थित करने का तब दृष्टिकोण होता  
है । वे धरती मान्यता पर प्रकाश डालते हैं—

१ 'वीथन-मदिरा' या 'बाबल-वीथ' बसन्त बहादुर, पृ. ७ की रचना ।

२ वही, मिन मये जीवन डगर में, पृ. २१ की रचना ।

३ वही, काँच-काँच पृ. ८ की रचना ।

४ वही, पराजय पृ. २२ की रचना ।

५ प्रत्येक, धरत, पृ. १ की रचना ।

६ 'धरतक' धरतक बस बसक करो, पृ. १०७ ।

७ 'धाता', धरती बाल, पृ. ७ ।

बोसो कब भीरसठा आई मेरे रसमय अमिष्यंजन में ?  
प्रतिविराग भी हुआ रसीला यमकर मेरे रस बन्धन में ?  
अन्तर से मूला-मूला हूँ पर, अन्तर में हूँ रस-भाष  
नहीं हुआ प्राचीन प्रमी हूँ नित्य मधीन रतिक रंजन में ।<sup>१</sup>

‘नवीन’ भी के काम्य में रागात्मक आवेश तथा मनोवेधों की तीव्रता का प्राचुर्य है ।  
अमिष्यंकि ने अपना सरस रूप ही प्रवक्षित किया है ।

संघीतात्मकता—बास्तव में कविता सद्यमय संघीत है और संघीत अन्विमय कविता ।<sup>२</sup>  
‘नवीन’ भी की मीठि-सीसी संगीत के मार्ग से प्राचुर्य है । आचार्य नन्दबुलारे बाम्बेयी ने  
भी उनकी परबर्ती रचनाओं को ‘संगीत प्रमान’ बताया है ।<sup>३</sup>

‘नवीन’ के प्रगीत-दृश्य में संघीत की अन्त-सञ्जिता को प्रबहुमान देखा जा सकता है ।  
बो हयान्त पर्याप्त हूँ—

रन-रुन, गुन-गुन रन-रुन, गुन-गुन भरमरी पांजनिया गु बारी,  
तब-मन-प्रास-अवस्य अमि-नन्वित, आई यह अरुणा सुकुमारी ।  
बन-बन में कम्पन-निष्पन्वन भर भर बिबरा सनन समीप्य,  
बंध-अवजियों के अन्तर से मूले नब-नब स्वागत के स्वन ।<sup>४</sup>

अन अन-अवरागत अमित सूर  
अन अन-यह अनहूब नाद गहर  
अन अन-ये अमि सुरपती संवर ।<sup>५</sup>

अनुमति की पूर्णता—गीति-काम्य में अनुमति की विधिष्टता तथा प्रभावोत्पादकता  
का विशेष ध्यान रखा जाता है । उनका तीव्र तथा मर्मस्पर्शी होना अत्यावश्यक है । ‘नवीन’  
भी में अनुमति अपना विचार की अनुर्लंघा बोध नहीं है । उनकी विचारशील रचनाओं पर  
भी मार्गों का ही सरस आचरण है । उनकी कल्पना शक्ति उनकी अनुमति को मूर्त रूप देने में  
समर्थ है । उन्होंने अपनी प्रिय वृत्तियों को ही विधिष्ट अमिष्यंकि प्रदान की है । प्रगीत में  
मानव की विधिष्टतम अनुमतियों का ही प्रथम प्राप्त होता है ।

मार्गों का देखव—मार्गों की प्रभावशीलता तथा देखव का मानव-मन पर गहन प्रभाव  
पड़ता है । मार्गों में सी मधुर, कोमल तथा सुकुमार मार्गों की अमिष्यंकि ही गीतिशिल्प को

१ स्वरस-वीथ, द्विधा लोप, १७ वीं रचना ।

२ “Poetry is music in words and music is poetry in  
round”—The New Dictionary of thoughts compiled by T  
Edward and Enlarged and revised by C N Catrevas and J  
Edwards P 470

३ आचार्य नन्दबुलारे बाम्बेयी—हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी विमर्श, पृष्ठ ३ ।

४ ‘रमिरेखा’, आई यह अरुणा सुकुमारी, पृष्ठ १ ।

५ ‘तिरवच की ललाकारें या ‘गुपूर के स्वन’ चाये गुपूर के स्वन अन-अन, ४१ वीं  
रचना ।

उत्कृष्ट प्रमाण करती है। इस प्रकार पर शृंगार तथा कथ्य रस ही उपयुक्त तथा प्रभावशील माध्यम हो सकते हैं। 'नवीन' का गीतिकाम्य करुणा तथा रति की पापा की गुंथता ही अपसर होता है। शृंगार उनके जीवन के साथ ही साथ, काव्य का भी रसराज है। उनके पीठि-काव्य में भावानुभूति की सच्चाई तथा धार्मिक की सहज प्राप्ति है। उनके गीतों का माध-मध्व जितना प्रखर तथा समृद्ध है उतना कदा-मध्व नहीं। वे गीत के प्रारम्भ मध्य तथा अन्तिम स्थिति के सम्यक अनुबन्धन में एक सीमा तक ही सफल हो पाये हैं। मार्गों की अवस्थिति भी धरना पूर्ण रूप नहीं निहार पायी है।

कल्पित विद्येयता—'नवीन' जी ने विभिन्न प्रकार के गीतों का सूजन किया है, जिनमें पृथक् पृथक् शैली के दर्शन प्राप्त होते हैं। उनके गीतिकाम्य में, प्रगीत के निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं—(१) अन्तरंग रूप—(क) प्रथमगीत (ख) देश-प्रेम के गीत, (ग) विचारपरक प्रगीत, (घ) प्रकृतिपरक प्रगीत (च) मनुष्यादी प्रगीत (२) बहिरंग रूप—(क) सम्बोध गीत (ख) शोक-गीत, (ग) पत्र-गीत।

अन्तरंग रूप—'नवीन' जी के प्रथम-गीत के दृष्टान्त उनके प्रेम-काव्य में प्राप्य है। इन गीतों की सर्वप्रमुखता है। देश-प्रेम के प्रगीतों के अन्तर्गत कवि ने बन्धना प्रवृत्ति, जागरण, धर्मिपान आदि विन्धन धनस धारि के पीठ लिखे। विचारपरक प्रगीतों के माध्यम से कवि ने अपने आधुनिक काव्य की प्रस्तुत किया। प्रकृतिपरक प्रगीत, कवि की रचनाओं में यत्र-यत्र बिखरे पड़े हैं और उनके माध्यम से कवि ने प्रकृति को आत्मन्धन भावोद्दीपन पृष्ठाधार, चित्राङ्ग धारि के रूप में ग्रहण किया है। मनुष्यादी या हातावादी प्रगीतों में कवि के प्रेम काव्य का भोग परा या जमाव ने अपनी प्रतिबन्धिता पायी है।

इन गीतों के सूजन में बड़ी एक ओर अनुभूति की निष्कपटता मिलती है, बड़ी धानेय के कारण गीत की समुचित व्यवस्था पर बरका पहुँचता है। इसका माध-मध्व अत्यन्त समृद्ध है। उच्चो प्रतिबन्धिता में संगीतमयता के कुछ परिष्कारित है।

बहिरंग रूप—सम्बोध-गीत में सम्बोधन होता है और सामान्यतया उसकी वस्तु, माधना एवं शैली प्रथम यत्रवा माधनातिरेकपूर्ण होती है। 'नवीन' जी ने भी अनेक सम्बोध गीतों की रचना की है, यथा, 'आहारी के प्रति' १ 'आयु से', २ 'मही मन्त्र-दृष्टा है शक्तिवर' ३ 'या मेरे मधुकर' ४ 'तुम हो गए पराए' ५, 'मो प्रवाली', ६ 'मो सुरमी बासे', ७ 'मोसे के

१ 'A rhymed (rarely unrhymed) lyric, often in the form of an address generally dignified or exalted in subject, feeling and style"—Oxford English Dictionary, p 563

२ बु बुम, पृष्ठ ९५ ३० ।

३ 'कवालि' पृष्ठ ६६-७० ।

४ 'विमोहा-स्तवन', पृष्ठ १११ ।

५ 'साहायिक प्रताप', १२ अंश १९५५, पृष्ठ १ ।

६ 'बहारण-वीर', ४१ की रचना ।

७ 'बीरन-वहिरा' या 'धावत-वीर', ११ की रचना ।

८ बड़ी १० की रचना ।

ति' १, 'मरत बचत के तुम हे जन-मण' २, 'तु बिद्रोह रूप प्रसवकर' ३ 'गरस पियो तुम गरस  
मो' ४, 'बरती के पूत' ५, 'मो सबयों में मानेबासे' ६, 'हे सुरस्य पाठपय मामी' ७, 'मो तुम  
निबल बीर' ८, 'सुनो-सुनो मो सोने बासे' ९, 'मो तुम भिरे प्यारे बवान' १० 'धरे तुम हो  
भल के भी कास' ११ 'सैनिक बोंस' १२ धावि बाहुवी को सम्बोधित करता हुआ कवि कहता है—

अपने तरल शुभ्र अंजस में  
छुपा रखो निधि कील ?  
करा बिधा हो, छहूँ, तो क्यों  
इतनी इठलाती हो ?  
रंवे, क्यों उमड़ी जाती हो ? १३

'निरासा' ने भी 'यमुना के प्रति' कहा है—

बता कहीं यह बंसीबट ?  
कहीं गए नटनागर क्याम ?  
बल चरखों का क्याकुल पतघट,  
कहीं धाज यह बुम्बायाम ? १४

इस प्रकार कवि ने सम्बोध-गीतियों में चराचर को सम्बोधित किया है जिसमें प्राकृतिक  
उपादान, राष्ट्रीय चापरण के सम्बोधन महात्मा गान्धी धावि सम्मिलित हैं।

'नवीन' भी ने शोक-गीतियों (Elegy) का भी निर्माण किया है। शोक-गीत के  
विषय में कहा गया है कि उसमें कवि प्रिय या महान् पुरुष की मृत्यु से उत्पन्न शोक धरवा  
साधारण धति से अत्यन्त नैतिक व्यथा को प्रकट करता है। उसका दुःखदाय एवं कष्टना से  
पूर्ण होना तथा निश्चारत्मक होना, अत्यन्त आवश्यक होता है। वह छोटी होती है किन्तु अन्तमें

- १ 'धीरज-अधिरा' या 'पावस-पीड़ा' १०५ वीं कविता।
- २ 'प्रसवकर' तीसरी कविता।
- ३ वही, १३ वीं कविता।
- ४ वही, १४ वीं कविता।
- ५ वही, २० वीं कविता।
- ६ वही, २५ वीं कविता।
- ७ साप्ताहिक 'प्रताप', ३१ दिसम्बर १९३५, मुखपृष्ठ।
- ८ 'प्रसवकर', ३६ वीं कविता।
- ९ वही, ४५ वीं कविता।
- १० वही, ४७ वीं कविता।
- ११ वही, ४८ वीं कविता।
- १२ वही, ५३ वीं कविता।
- १३ 'कुसुम', पृष्ठ २६।
- १४ 'परिमल', पृष्ठ ४६।



भावामिच्छति सहसा नहीं होती।<sup>१</sup> 'नवीन' की ही शोकगीतियों में, 'कहे बाबा',<sup>२</sup> 'उह गए गुम निमित्त मर में'<sup>३</sup> कमला गैहक की स्मृति में<sup>४</sup> धारि की पचना की जा सकती है। कवि के 'मृत्यु-गीतों को भी इसी श्रेणी में ही रखा जा सकता है।

पत्र-गीत—Epistle—स्वरूप पत्रात्मक होता है। 'नवीन' की के 'दो पत्र',<sup>५</sup> 'पातो' 'पत्र व्यवहार',<sup>६</sup> 'पत्र'<sup>७</sup> धारि कविताओं को इस श्रेणी में परिगणित किया जा सकता है, परन्तु कवि ने शृंगार के मूल विषय के आधार पर ही, प्रेमी प्रिय के पत्र-व्यवहार का रूप प्रस्तुत किया है।

शोकगीत-गीती—कवि के कठिपव गीतों की पुनः एवं सय, शोक गीतों के समीप दृष्टियोपर होती है। कबली का एक दृष्टान्त देखिये—

घन घरसे, तब हो न सजन-आतिथन का संयोग है,  
तो फिर कैसे मिट सकता है, द्वेष का प्रतुत विषय है ?  
बब भ्रमकारों समित्त निमित्तियै, हो बाबुर का धोर है,  
तब हन हनस कहेंगी जनते, तुम्हारा धोर न धोर है।<sup>८</sup>

इन गीतों में भी शोकगीत की पुनः का आशय प्रकृत किया गया है—

बूब सिबोती, सुह प्रथियारे,  
बाकी बकिया करे पुकारे,  
तब तु बाकी सुनियों ना  
पुइया, शीति को सरम  
बहूते बतैयो ना।<sup>९</sup>

हमारे बलम को कोर न जयइयो, धर बनि माइया मकार है,  
कमान की जन-जन बनि करियै, न पावल मनकार, है।<sup>१०</sup>

१ 'A short Poem of lamentation or regret called forth by the decease of a beloved or revered person or by a general sense of a pathos of morality It should be remembered that it must be mournful meditative and short without being ejaculatory'—Encyclopedia Britannica' Vol. IX, p 252 263

२. 'कु कुम', पृष्ठ ५१ ५३।

३. अलक पृष्ठ ६४-६५।

४. 'बवासि', ६८-६९।

५. 'कु कुम', पृष्ठ ८०-८१।

६. 'बवासि', पृष्ठ १०४ १०५।

७. 'दीन-मरिच' या 'बाबत-मीना', २१ की कविता।

८. बही ७९ की रचना।

९. 'बवासि', पृष्ठ ४८।

१०. 'कु कुम', पृष्ठ ८१।

११. 'बवासि', पृष्ठ ८१।

इस प्रकार कवि ने विविध काव्य-शैलियों को घपनाकर घपनी बहुमुखी प्रतिमा का परिचय दिया है। कवि की काव्य-शैलियाँ उसके विषयानुसृत्य हैं। उनमें सुमनस-गीतों को ही, मनुपात एवं पुण के दृष्टिकोण से सर्वोपरि महत्त्व प्राप्त हुआ है।

## काव्य-भाषा

'नवीन' की की भाषा का स्वस्व बड़ा विवादास्पद एवं प्राक्षेपों का केन्द्र बना है। उनकी भाषा में कई बोली के शब्दों का मिश्रण प्राप्त होता है। श्री सच्चिदानन्द वात्स्यायन ने लिखा है कि "नवीन की सिद्धास्तवः, सुदुर्गामी है और मानते हैं कि हिन्दी के शब्द-सम्बन्ध में संस्कृत-शुद्ध शब्दों को छोड़ कर इसके शब्द नहीं होने चाहिये। किन्तु व्यवहार में वह किसी शब्द को उपयोगी पाने पर उसके कुस-शील-संस्कार के प्रत्येक की चिन्ता नहीं करते हैं।"<sup>१</sup>

'नवीन' की ने प्रमुखतया कड़ीबोली एवं ब्रजभाषा में रचनाएँ की हैं। उनके बोले में इन्हीं बोलों भाषाओं में प्राप्त होते हैं। वे इस प्रकार दोनों भाषाओं की कड़ी के रूप में उपस्थित होते हैं।

भाषा रूप—'नवीन' की की भाषा विभिन्न प्रभावों एवं स्तरों को लेकर बसती है। उसमें कड़ीबोली ब्रजभाषा, प्रबन्धी, कनीबी, मालवी, कुश्लेशब्धी एवं उर्दू के शब्दों एवं प्रभाव को पच-तन देखा जा सकता है। इन स्तरों के दृष्टान्त इस प्रकार हैं—

कड़ीबोली—हुआ बहु पराया बहु पीतम भी जिसको तुम समझे थे घपना,  
उसने ही यदि स्थाय दिया सब सब क्या नाम किसी का घपना ?<sup>२</sup>

ब्रजभाषा—उसके प्राय एक दिन घाली,  
परे कुसुम सो पाँचल वै,  
हैं हिचकी, बसु घटभानी, कसु  
रोमी री मनजाबना वै।<sup>३</sup>

प्रबन्धी-कनीबी—इली हुपहरी, किरमें तिरकी हुइ, सीम् नबरीक रे,  
घमी बुर तक रीक पने हूँ, पच की सम्बो लीक, रे,  
घाब सीम् के पहले ही तुम, पहुँचा हो जिय-मेह रे,  
हुम कहु धाई हूँ इस्वर रे, रल पदेण पैहु रे  
बन परबेगे, रस बरतैया होगी धृष्टि मिहाल, रे,  
डोला लिये बलो तुम बन्बी, झौडो घटपट बाल, रे।<sup>४</sup>

मालवी—कवि मालवा-नुब का, घटाएब, उसके काव्य में मालवी-भाषा के भी यह तत्र प्रयोग मिलते हैं यथा—'बीब' (पङ्क-लिखकर) 'देन बीब (टीक बीब में) घाबि।

१ श्री सच्चिदानन्द वात्स्यायन—'प्राज का भारतीय साहित्य', पृष्ठ ३२१।

२ 'बिम्ब', पृष्ठ ३५।

३ 'कुसुम', पृष्ठ ७५।

४ 'बिम्ब', पृष्ठ ४७।

सुन्दरलक्ष्मी—'नवीन' की ये सुन्दरलक्ष्मी के भी कतिपय शब्दों का प्रयोग किया है, यथा—'बैर-बैर (बार-बार) 'प्रिया' (घाम) प्रादि ।

उद्गु—कवि प्रारम्भ में उद्गु से काफ़ी प्रभावित था । उसके प्रभाव को इन पंक्तियों में देखा जा सकता है—

मयनों में मरी सुमारी की फलकें कुछ मारी-भारी थीं,  
तुमने देखा था यूँ घोसा कुछ बहुत पुरानी मारी को  
जस दिन ही से हो गई हमारी प्राँकें जरा बिरानी ली  
जब तुम प्राइ पहिचानी ली ।<sup>१</sup>

इस प्रकार कवि के भाषा का रूप विशय एवं विविध प्रभावों को लिये हुए है । उसमें कई त्रुटियाँ एवं दोष भी ध्या मये हैं । श्री रामरत्न सारस्वत दत्त ने लिखा है कि "एक कुछ खड़ीबोली का प्रयोग करते हैं परन्तु पं० बाबूहृष्यु शर्मा 'नवीन' कमी-कमी बड़ा बड़बड़ भासा कर देते हैं । प्रायः खड़ीबोली लिखने में ब्रजभाषा से तो परहेज करते हैं, परन्तु ठेठ-पैवारु छन्द करने से नहीं हिचकते । प्रकट्टर सन् १९१४ ई० की 'बीणा' में प्रायः एक कविता 'निर्माण' शीर्षक छपी है । जिसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

कल मलित करल ग्यासों से—  
बब-बब सिहरे यह द्वियरा ।  
धनधन मनु गुरुर ध्वनि से—  
जमड़े धब रह रह द्वियरा ॥

पाठक देखें कि द्वियरा और 'जिबरा' शब्द मिलने कर्णकण्ट है इसके बजाय यदि द्विया' और 'जिया' तक होता तो गनीमत थी । क्योंकि इन शब्दों का प्रयोग कम से कम ब्रजभाषा में होता है । परन्तु 'द्वियरा' और 'जियरा' तो ठेठ बँवारु छन्द है । नहीं मानूम ऐसे शब्द इतने बड़े मुकवि की कलम से कैसे निकल गये । बैसे प्रायः कविता बड़ी चुटीली होती है इसमें कोई धारधर नहीं ।<sup>२</sup>

भाषा संगठन—'नवीन' की ये शब्द-शोष की सीमाएँ कथी व्यापक हैं । उन्होंने सभी प्रकार के शब्दों से धनगी भाषा का संगठन किया है । उनके भाषा-निर्माण में निम्नलिखित शब्दों का रूप प्राँकें या सजता है ।—(क) दम्भ-शोष—(१) दैशन-शब्द (२) सद्-कारती के शब्द (३) धियेनी के शब्द—(ख) शब्द-शय (१) प्रिय शब्द (२) कठिन शब्द (३) धनकठिन शब्द (४) विविध शब्द प्रयोग (५) शब्दों की लोड़ मरोड़—(ग) श्वाकरल-शय (१)—धिया-प्रयोग (२) शोष ।

शब्द-शोष—'नवीन' की मस्त तथा धननुति प्रधान कवि थे । उन्होंने अपने काव्य में बसा ही धोषा प्राँकों की ही प्राधिक बिन्ता की । उन्होंने शब्दों का अपने मनमोचीपन में शायोप किया है । उनके काव्य में निम्नलिखित विविध शब्द प्राप्त होते हैं—

१ 'बयाति', पृष्ठ ९१ ।

२ 'बाध्य-बतापर', द्विती साहित्य के वर्तमान सुरुबि सुन्दाई, १९११ पृष्ठ १९ ।

द्वितीय शब्द—‘नवीन’ जो ने प्रचुर-भाषा में देशज शब्दों का प्रयोग किया है उनमें से प्रबिर्वाच्य ये हैं—

घाँसड़ियाँ, मैल, लकड़ी, बिछरी, मिरी, मेह, पाटी बगारो बरी, बिराने, बाट बौहता, घाँट सिन्धौसी, मुँह पबियादे, पकिमा ध्यान कौबता बन्नाम आगप पठीब लटना घापुन, इमरे, बिबाइ, निहाल बीरली नामी, बुम्ना फरफन्द, बहूँ हीइ रीठि, बाँच सेन हाट, उमागर, ऊबड़-काबड़ मारग बरसों, बैर-बैर पेद-पेद धाँ, नितयो, चमाचम, बरे-बरे, घनाड़ी, कब्र घरे, मेघ, मोजन-बीजुरी, नेक, बौ, मुरब, माघा बोमे, छीकी, सिरख रखा है, चारवे निबही बरबोरी, भाग छोक सफादे, लपोठे हुवे, छिगगी कबहूँ, उबैला, लसला बतार्ई, बाट, राउर लोक बरबता बिगाने पटका म्हाइ-मरबाइ मयोच, धादि ।<sup>१</sup>

जो श्याम परमार ने लिखा है कि “(द्वितीय) शब्द नवीन की रचनाओं को हृदय झरी तो बगुंते ही हैं, इतने सन्देश नहीं परन्तु लड़ीबोसी में ये प्रयोग जब प्रथिक्त सिद्धकर ‘देवी प्रयोगों के प्रति जो हमारे पूर्वाग्रह हैं उन्हें न दूर कर दें तब तक ये प्रायः घटवटे ही बनें।’<sup>२</sup> बोलचाल की भाषा के शब्दों का प्रयोग से काव्य में सज्जता तथा साधारणोत्तरण की स्थिति अत्यन्त छोटी है। पाश्चात्य विद्वान् हेरिड के अनुसार, “अपेक्षी को महान् काव्य रचनाओं का नवीन अंग बोलचाल की भाषा से सपुञ्ज है।”<sup>३</sup>

चतुर्थ शब्दों के शब्द—‘नवीन’ जो ने सर्व-शरती के शब्दों का प्रचुर-परिमाण में उपयोग किया है। वे शब्द ये हैं—

कन्धान बर्ना लुठन सरकार, बसाएँ की सामान, बैतुछ लजाना, छाकी, जामी, नई, कई कई बैररती हुआएँ बाह दर फरीरामी बँचे खाक परमान लटाने, धन्देदा, परा बला घारी, हृदयम नबरीक रिखा, कुमारी मुँ, मत्सा, नाकिम बिबाबाण, बहरी, बैर, मुसाफिर, उमाछा मीबस, नाछनी, बैमर, बाँच बर-बर, घोर भाबिब हल्ली, सर, धम्पार, सरमाया, सामा, घासमान माँ, कारबाँ साधारी परवाइ, फुर्ता, मर, खटा, खान्ती, बजानी, खल, रिक्त घटा परिलो, कैरी पून, निबराबे, राज, कलम फुर्गत कनेजे, मजा, घनमस्ती, नयाँ, जिण्दवी बँबीरे, दुस्कार, क्यार फीब, कहीर मबी मधगुल, क्यास, गुबार, क्यूकशी, लरुती धरमाब, क्यार लसिध सिरलामा धाग नमीमल, दम, बेहोपी, खाली, पाछ सोख, बेहाल, हिस्साव धादि ।<sup>४</sup>

१ ‘नवीन’ जो जो काव्य-कृतियों के आधार पर ।  
 २. ‘विद्यम’, ‘नवीन’ और उनकी कविताएँ, प्रथम, १९५४, पृष्ठ ५३ ।

३ “A great deal of the greatest English Poetry is made up entirely of words which people use in very ordinary speech.”—Nature of English Poetry, P 109

४ नवीन जो जो कृतियों के आधार पर ।  
 ११

धर्मजो के धर्म — नवीन जी ने धर्मजो के धर्मगत विरस धर्मों का ही प्रयोग किया है जिन्हें नयन्य माना जा सकता है। एक इत्यान्त इत्यर्थ है—

कैसे तुम्हें मैं पुकार कहो प्रेम,  
मिससे इधर तम हुआ प्राज के डैम ?<sup>१</sup>

स्व-भाषा में दूसरे भाषा के धर्मों का धारणा भाषा की नवीनी-शक्ति तथा पावन-शक्ति का ही परिचायक होता है, परन्तु कवि को एक दिशा में सतर्क रहना चाहिये कि वे काव्य का कहीं तक शृंगार कर सकते हैं? पाश्चात्य-समीक्षक काइडन ने इस प्रकार के धर्मों के प्रति सख्य रहने का परामर्श दिया है।<sup>२</sup>

शब्द-रूप—प्रत्येक कवि अपने इच्छिकोण एवं संस्कार से नवीनीयत होकर अपनी काव्यभाषा के धर्मों के प्रति धारणा अनुसृत पैदा करता है। नवीन जी का भी इस सम्बन्ध में विशेष इच्छिकोण रहा है, जिसके कारण उन्होंने कुछ धर्मों को प्रिय बताया और कुछ को छोड़ा मरोड़ा।

प्रिय शब्द—कल्पित शब्द काव्य में बहुप्रयुक्त होते हैं जिनसे उनके प्रति कवि प्रियता की प्रतीति होती है। पद्य जी को 'विर' शब्द अधिक प्रिय है और नवीन जी ने निम्नलिखित धर्मों पर अपनी ममता उकेर दी है—मोहित मम तब त्वरीम मेसो, पैसो क्रियि हिय धारि।

कठिन शब्द—कवि ने अपने काव्य में कल्पित विविध धर्मों का प्रयोग किया है जो कि एक प्रकार से सामान्य धर्मों और धर्मजो धर्मों के पर्याय या एकांतर के अंग पर प्राये हैं। ये धर्म धर्मोत्पत्ति हैं—

(१) मिलकी रूपमा से हे बुसुमित अपकरण नीप।<sup>३</sup>

(अपकरण नीप = इन्द्रियरूपी कल्पित शब्द)

(२) तुम मम विरम सनिहा, तुम मम मग्दर-मुमन।<sup>४</sup>

(मग्दर मुमन = प्रवास पुण्य धारणा स्वर्ग-मुमन)

(३) मम धर्मण धार्ही के मुम ही हो इच्छा-रम।<sup>५</sup>

(इच्छा मुम कल्पित)

१ 'अपलक' पृष्ठ ५८।

२ "A poet must first be certain that the word he would introduce is beautiful in the Latin, and is to consider in the next place, whether it will agree with the English idiom, after this he ought to take the opinion of judicious friends such as are learned in both languages"—Dramatic Poetry and other Essays P 264

३ 'रतिमरेता' पृष्ठ ११।

४ 'वही', पृष्ठ १५।

५ 'वही', पृष्ठ ११।

महाकाव्य संमिता

- (४) सगत-मगन, जन्मन-जन्मन मन, तन्तुवाय सम सुख-म्यान-रत ।<sup>१</sup>  
(तन्तुवाय = बुलकर बुलाहा)
- (५) भाव सिञ्जिनी धारमार्यण की बड़ जाए जीवन प्रजगव पर ।<sup>२</sup>  
(सिञ्जिनी = प्रत्यंभा, प्रजगव = दंतु-अनुय)
- (६) ऋतुमय अपृत कुम्भ बिप जाय, जब हो इन बालों की सर-सर ।<sup>३</sup>  
(ऋतुमय = महामय)
- (७) सवसित बसुधा—प्रतन्मुया मुबमय धृत्य कर उठे बर-पर ।<sup>४</sup>  
(सवसित = जम सिञ्जित मसन्मुया = एक प्रकार की प्रपसरा)
- (८) प्रब दुर्बह है नैस मार यह, दुर्बह है यह श्वास-समाज ।<sup>५</sup>  
(श्वास = तारे, श्वास समाज = तारक-समाज)
- (९) शीत मोर सुमन सहस तब अडु सुतकाल, प्रास ।<sup>६</sup>  
(शीतमोर = बेसा मस्किफ)
- (१०) पुन्न प्रियक सम लहरी तय कुसुमित साड़ी नब,  
रम्य हैम पुप्यक सम निबारा तब द्वि-बैसब  
बहुम सुमन-राशि सहस, सोऽनुमार्य, प्रियतम, तब,  
जैत रहा तब सोरम पारिजल के समान ।<sup>७</sup>  
(प्रियक = कन्दम्ब, हैम पुप्यक = चम्पा बहुम = मौसिरी पारिजात = हरसिया)
- (११) अडु मंडुल बंडुल सम सिहर रही है रह रह,  
युबिका प्रमूत करे तब बबनों से प्रहरह ।<sup>८</sup>  
(मंडुल = बेंत की सता युबिका = बूड़ी)
- (१२) नैरे प्रिय, मन्बाबर शीत-शबास-यबम हूत ।<sup>९</sup>  
(मन्बाबर = उपेक्षा युक्त)
- (१३) बीला के ककुम बने ये अनु न बेस-काल,  
नैरा प्रसितल बना इतक रसमय प्रवाल ।<sup>१०</sup>  
ककुम-बीला की तुम्ही, एक ऊपर, एक नीचे ।  
(प्रवाल = बीला-बरह)

१ 'रसिमरेका', पृष्ठ ६१ ।

२ वही, पृष्ठ ४३ ।

३ वही ।

४ वही ।

५ वही पृष्ठ ७८ ।

६ वही, पृष्ठ ११८ ।

७ वही, ।

८ वही, पृष्ठ ११६ ।

९ वही, पृष्ठ १२६ ।

१० 'नवावि' पृष्ठ १० ।

- (१४) मैं कर पाया प्राण-स्फुरण जब अपने प्रतिस्पर्धन-बाहुन में ।<sup>१</sup>  
(प्रतिस्पर्धन-बाहुन = सख)
- (१५) जब उठा घानड लय का, मग्न ध्वनि यूँही घपन में ।<sup>२</sup>  
(घानड = डोल या मुरंग)
- (१६) निज तिरस्करिली सपेठे प्रमथ जब वो घाब कर से ।<sup>३</sup>  
(तिरस्करिली = प्रहस्यक्षणी पटावरण)
- (१७) घाब सहरे तब धमर स्वर मृत्यु-तीर्थनिक बधलन में ।<sup>४</sup>  
(मृत्यु तीर्थनिक = गान-बाध-मृत्यु साम्ब)
- (१८) प्रबल काल-बाली में, बीबन-शण, सुख्य तम ।<sup>५</sup>  
(प्रबल = बसू)
- (१९) मानव जो घाली पर मण्डित हूँ अरुध बिह्व ।<sup>६</sup>  
(अरुध बिह्व = अरुध अर्थात् बाब अरुध बिह्व अर्थात् बाबो के निधान)
- (२०) बन-यण-मन की बचलता के मे अपनक प्रतिस्पर्धन घाए ।<sup>७</sup>  
(अपनक = अस्विकर)
- (२१) करुण काल, रज कल-कल में जीवन खोज रहे ये मंडल 'बिह्वल'<sup>८</sup>
- (२२) तब मुक्त समयमान जिना, सगन खिन्न-खिन्न स्मरण ।<sup>९</sup>  
(स्मयमान = स्मित मुस्काय से खिन्ना हुआ)
- (२३) जब देखा तनी निजे प्राबल विक्र-कास-धरर ।<sup>१०</sup>  
(विक्रकास-धरर = किनाड़े विक्र और कल रूपी वो किनाड़े)
- (२४) कमल बुँदे धानी मर भीनी तब एली-बंसियाँ घलताई ।<sup>११</sup>  
(एली = मुगी)
- (२५) दस है यह बिजनि मय, काल है समत कम मय ।<sup>१२</sup>
- (बिजनिमय = वर्तमान भौतिक विज्ञान का यह विद्वान्त है कि देण और काल—अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड समस्त प्रचरण धीस है ।)

१ 'बवासि', पृष्ठ १७ ।

२. वही, पृष्ठ २० ।

३ वही ।

४ वही ।

५. वही, पृष्ठ ३६ ।

६ वही पृष्ठ ३६ ।

७ वही पृष्ठ ८८ ।

८ वही।

९. वही, पृष्ठ ६४ ।

१० वही, पृष्ठ १०४ ।

११ 'निरजन ही सलकारें या 'मुपुर के स्वग' चौबी कविता ।

१२ वही ३५ वीं कविता ।

(२६) यादृच्छिकं प्रणु भेदनं लीलां दध तत् नह्यं किंसी ने जानी ।<sup>१</sup>

(यादृच्छिकं प्रणुभेदनं घीसा = भवने प्राप प्रणु-स्फोट । )

(२७) जिसे बीसि सक्रिय तरवों को खेरी में उछलने लेखा है ।<sup>२</sup>

(बीसि सक्रिय तरवों = बीसे रेडियम इत्यादि)

(२८) 'नी बग्घन कील' रहित, यह अजरर दार-अजर ।<sup>३</sup>

(२९) मेरे हाथों में है 'खेपलिया' बुझिया की ।<sup>४</sup>

(३०) बीर्ल बोर्ल 'बात-बसन' दुगति है लीका की ।<sup>५</sup>

डॉ० चर्मबीर भारती के मतानुसार 'नब पठवारों के लिए 'खेपलिया' बीर पाव के लिए 'बात-बसन' और पहले के छन्द में नंबर के लिये 'नी-बग्घन-कील' का प्रयोग देखकर बरबस डॉ० रघुबीर और पछित सुन्दरनाथ दोनों को ही शमा कर देने की जी होता है ।"<sup>६</sup>

उपर्युक्त विवेचना में सिर्फ़ ये ही छन्द भयना वाक्य लिये गये हैं, जिनके अर्थ कवि ने स्वयं दे दिये हैं। इन छन्दों के प्रतिरिक्त भी अनेक छन्द इसी प्रकार के विधिष्ट एवं प्रकथित हैं जिनका 'नबीन-वाक्य' में प्रयोग मिसठा है। उन्हे के प्रसिद्ध कवि पाखिर की कविता बरबसकी से कुछ कविता को चुनकर एक मुद्रावरे में हकीम धापा जात ने जो कहा था उसी में ही हमारा मन्तव्य भी सम्मिलित है—

अपर भयना कहा तुम प्राप ही समझे, तो क्या समझे ?

यका कहने का तब है इक कहे और बूझरा समझे ।

कलासे 'बीर' समझे और बबाने 'बीर का' समझे

अपर इनका कहा यह प्राप समझे या सुरा तबझे ।<sup>७</sup>

अप्रकथित शब्द—उपरिलिखित विवेचन में, कतिपय शास्त्रीय विधिष्ट एवं विचित्र शिवा के अत्रकथित एवं कठिन शब्दों के दृष्टान्त बिदे मये हैं। इनके प्रतिरिक्त भी कई शब्द ऐसे हैं यथा—सैतुलिय, धान बिबा सो फिर-फिर हेर रछा हेठ, कटिक उमरु कहुनी, लसक तसे, लरी लोचन-रुक हहरै, निरखो, पुरे हो, जिय बोह गात्र मिस, पतिपापमा, सैतो, सिध, तव दिन, नाधा, बिबार, भंडै, पे, मनो, नयन पुट, कठ धारि ।

विचित्र अर्थ-प्रयोग—कवि ने अनेक स्थान पर विचित्र अर्थों का प्रयोग किया है, जिनके कारण कुछ महापग-सा भी प्रतीत होने लगता है—यथा

(१) बल कठनी सो बीबन-बीपक

'नब से', होऊ मय्य ।<sup>८</sup>

१ 'सिरजन की ललकारें' या 'दुपूर के खन', २५ वीं कविता ।

२ 'अपलक', पृष्ठ ६८ ।

३ वही ।

४ वही ।

५ वही ।

६ 'बातोचना', अंश १९५२, पृष्ठ ६१ ।

७ 'माधुरी' बीज, सं० १६८८, पृष्ठ ३९४ से उद्धृत ।

८ 'कु-कुन' पृष्ठ ३० ।



- (१४) मैं कर पाया प्रालम्ब-स्फुरण कब अपने प्रतिस्पर्धक-बाह्य में ।<sup>१</sup>  
(प्रतिस्पर्धक-बाह्य = कर्म)
- (१५) बस उठा घामद तप का मग्न दृष्टि मु बी गजन में ।<sup>२</sup>  
(घामद = होस या मूर्ख)
- (१६) निज निरस्फुरिणी स्पेडे धमय बल हो घाम कर है ।<sup>३</sup>  
(निरस्फुरिणी = प्रकृत्यव्यती पटावरण)
- (१७) घाम लहुरे तप धमर इबर मृत्यु-तीर्थिक बहलम में ।<sup>४</sup>  
(मृत्यु तीर्थिक = घाम-बाध-मृत्यु साम्य)
- (१८) प्रबल बल-वाली में, जोवन-बल, मुखा तम ।<sup>५</sup>  
(प्रबल = बल)
- (१९) मालव की धरती पर घण्टित हूँ घण्ट-बिन्दु ।<sup>६</sup>  
(घण्ट बिन्दु = प्रथम धर्मात् भाव प्रथम बिन्दु धर्मात् बाधों के निघान)
- (२०) जन-मल-जन की अक्षतता के ये अपलक प्रतिस्पर्धक धार ।<sup>७</sup>  
(अपलक = अस्तिर)
- (२१) शल शल, रज कल-कल में जीवन खोज रहे ये मंजुल बिन्दु ।<sup>८</sup>
- (२२) तब मुझ समयमान बिना, समय विघ्न-विघ्न इतरण ।<sup>९</sup>  
(समयमान = स्थिर, मुस्कान से बिना हुपा)
- (२३) बस हैदा तभी मिले घातु रिक्त-बाल-धर ।<sup>१०</sup>  
(रिक्त-बाल-धर = बिना है रिक्त धीर बाल कभी हो बिना है)
- (२४) कमल मुझे मानों धर भीनी तब एली-अखियाँ घलसाई ।<sup>११</sup>  
(एली = मुषी)
- (२५) दस है यह बिनि धय, काल है सतत कलम धय ।<sup>१२</sup>  
(बिनिधय = वर्तमान भौतिक विज्ञान का यह सिद्धांत है कि देल और काल—धर्मात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सतत प्रसरण धीस है ।)

१ 'बालि', पृष्ठ १० ।

२ वही, पृष्ठ १० ।

३ वही ।

४ वही ।

५ वही, पृष्ठ ३६ ।

६ वही पृष्ठ २३ ।

७ वही, पृष्ठ ८८ ।

८ वही।

९ वही, पृष्ठ ६४ ।

१० वही, पृष्ठ १०४ ।

११ निरवध की लपकारों या 'गुण के स्वयं' भीनी कविता ।

१२ वही २५ वीं कविता ।

(२६) याहृच्छिद्रक घण्टु मेवम सीता एव तक नहीं किसी ने जानी ।<sup>१</sup>

(याहृच्छिद्रक घण्टुमेवम सीता = अपने प्राप घण्टु-स्त्रोटे ।)

(२७) बिसे बीसि सक्षिय तत्त्वों को घेसी में उतने लैदा है ।<sup>२</sup>

(बीसि सक्षिय तत्त्वों = जैसे रेखियम इत्यादि)

(२८) 'नौ बन्दन कीस' रहित, यह बज्ररंज बाढ-कण्ड ।<sup>३</sup>

(२९) मेरे हावों में है 'खेपलियां बुबिया को ।<sup>४</sup>

(३०) बीरुं झीरुं 'बात-बसन', बुपति है नौका को ।<sup>५</sup>

डॉ० बर्षबोर भारतीय के मतानुसार, 'बन फलवारों के लिए खेपलियां घोर पात्र के लिए 'बाढ-बसन' घोर पहले के छन्द में लंपर के लिये 'नौ-बन्द-क्रेस' का प्रयोग देखकर बरबय डॉ० रबुबोर घोर पश्चिम मुम्बेरलास दातों को ही लमा कर देने को भी होता है ।'<sup>६</sup>

उपर्युक्त विवेचना में सिर्फ़ के ही छन्द अपना बाक्स लिये गये हैं, जिनके अर्थ कवि ने स्वयं दे दिये हैं। इन छन्दों के प्रतिरिक्त भी अनेक छन्द इसी प्रकार के विद्विष्ट एवं प्रचलित हैं जिनका 'नबोन'-काम्य में प्रयोग मिलता है। उर्दू के प्रसिद्ध कवि यासिन की कठिन सम्भावनी से कुछ कविता को सुनकर एक मुघायरे में इकौम भाया जान ने जो कहा या उसी में ही हमारा मन्तव्य भी सम्मिलित है—

भगर अपना कहा तुम प्राप ही समझे, तो क्या समझे ?

मजा कहने का तब है इक कहे घोर बुरा समझे ।

कलामे 'बीर' समझे घोर बजाने 'बीर जा' समझे

भगर इनका कहा यह प्राप समझे या बुरा समझे ।<sup>७</sup>

अप्रचलित छन्द—उपरिलिखित विवेचन में, कठिनप शास्त्रीय विद्विष्ट एवं विचित्र शिवा के अप्रचलित एवं कठिन छन्दों के दृष्टान्त दिये गये हैं। इनके प्रतिरिक्त भी कई छन्द ऐसे हैं यथा—सैगुसिय, प्राग बिबा हो फिर-फिर हेर रहा हेठ कठिक उम्फक, कहनो तलक लसे, लरै, सोचन-टक हड्डरे निरखो, दुरे हो, जिय बोड गात्र भित पतियाएगा, सेनो विष तब डिय, नासा बिहार, भ्रष्टि पै, मनो, नयन पुट, कत घारि ।

विचित्र छन्द प्रयोग—कवि ने अनेक स्थान पर विचित्र छन्दों का प्रयोग किया है, जिनके कारण कुछ महापन-सा भी प्रतीत होने लगता है—यथा

(१) जल उठने को जीवन-बीपक

'नकु से', होऊ बग्य ।<sup>८</sup>

१ 'तिरजन की ललकारें' या 'दुपूर के स्वम', २३ वीं कविता ।

२ 'अपलक' पृष्ठ ९८ ।

३ वही ।

४ वही ।

५ वही ।

६ 'बातोचना', अर्पित १९५२ पृष्ठ ९१ ।

७ 'मातुरी' अंश, सं० १९८८, पृष्ठ १६४ से उद्धृत ।

८ 'कुबुम' पृष्ठ ३० ।

- (२) यदि धा जाओ तो मिट जाए, 'खटका भव-सब का',  
प्रिय तो दूब चुका है सुरज का जाने क्या का ?<sup>१</sup>
- (३) धीरे से रस तिल बसियाँ जो 'समुद्र' तुमने कही थी ।<sup>२</sup>
- (४) खेस खेस में तुम मनमौजी यदि हमको बो 'घटका' एक  
तो बत, उस 'इक टकसे' से ही हो जाये जीवन कस्याल ।<sup>३</sup>
- (५) मन्थन के बार्प-बार्प इन 'गघाटों' में उसभा लघु मन ।<sup>४</sup>
- (६) एक भवब 'पघाटा'—सा है इस हस्तो के भवनेपन में ।<sup>५</sup>
- (७) इस करिया के 'पघाटे में' बैठ बिजन के 'तघाटे में' ।<sup>६</sup>
- (८) कैरा मैरा क्या जाता है ? यह मैं क्या को क्या समझऊँ ?  
'खितिर खितिर' हँसने बासों को मैं क्यों हृदय-मम बतलाऊँ ।<sup>७</sup>

बैठे कविता में लोक-प्रचलित शब्द (Slang) उरवे जान पैरा करते हैं पर नबीन को उनका इतना अनुचित प्रयोग करते हैं कि उनका प्रभाव बिपरीत ही पड़ता है ।<sup>८</sup>

कहीं उल्लेख कम भी अनुचित प्रयोग हुआ है—क्या भव-नीक अनुभव है खायास विमठाबसोकन स्मरणोपम, घुन्नालुब धारि । डॉ० पुठ के मतानुसार इस प्रकार के शब्द सर्वत्र सरस रूप में ही प्रयुक्त न होकर काव्य की क्लिष्टता के लिए भी उत्तरदायी रहे हैं ।<sup>९</sup>

शब्दों की तोड़ मरोड़—'नबीन' की नै शब्दों को काफ़ी तोड़-मरोड़ भी है धीरे धपने इच्छानुसूत बना लिया है । इस तोड़-मरोड़ के पृष्ठ में तीन उपादान दृष्टिगोचर होते हैं—

(१) प्राचुर्य की उत्पत्ति हेतु, (२) धावस्पर्शानुसार ।

प्राचुर्य की उत्पत्ति हेतु—बसियाँ सुरतियाँ प्रबसियाँ बहिनो चुगत पतियाँ रनियाँ, बाकी काँकरिया सुरभी मनुष्य नबिया बदन कारिख, मारम मुरत घाबर, पतिया बुरल एहन, नार, मेया धावे-जाके बायी बिछोड़ मद रहसि पहनो भरसता बरस, पात मयत्र बिनने, सागी अरसि धान पपाटे, धिन बिबा पाक छैन परपंची उनने परतीठ, पुंहियाँ भखियाँ, निररे बरल-उरे, निररे उपायी, गगन घटा हास बुनी ठाम पखियाँ मत्तार, बिहरे, बछाइ महवाँ डारे, ठाभूठे, सात्रनियाँ भंडुडियाँ बुरल नाम लियासी भ्यरी एनने धापुन मेठी धादि ।

धावस्पर्शानुसार—बहभयोनी, सन्ध्या-कासे, मुखिया मघोर, हरियाधोपे

१ 'रिजरेसा' पृष्ठ ५६ ।

२ 'मयलक' पृष्ठ २० ।

३ वही, पृष्ठ २६ ।

४ वही पृष्ठ ३४ ।

५ वही, पृष्ठ ३० ।

६ वही ।

७ वही, पृष्ठ ६६ ।

८ डॉ० पार्थवीर भारती—'घासोचना', अनेत १६५१, पृष्ठ ६१ ।

९ प्राचुरिक शिरो कवियों के काव्य निदान, पृष्ठ ३३० ।

काम्य-छन्द

निकराली शैलेष, मधुरा पीर धवललोका, हिये निराशी समाया, जहरी मित्तमिहरी  
इत्यादि ।

व्याकरण-रूप—हमारे यहाँ व्याकरण का बड़ा महत्व है । उसे बाखी का संस्कारक  
कहा गया है—

अपमिदमेव हि विद्युयां शुचिषदबाधयप्रमात्तयास्त्रेभ्य ।  
परसंस्कारो वाचां बाधस्य सुबाधकाव्यफला ॥

'नवीन' जो व्याकरण के नियमों के अनुगत नहीं रहे, इसीलिए उनके काम्य में काफ़ी  
भारिष्कार दिखाई देता है जो कि खलता है । भी सुभाकर पाण्डेय ने लिखा है कि 'माया  
उनकी नियन्त्रणहीन तथा छन्द कहीं-कहीं उच्छ्वेद हो गये हैं, किन्तु यह दोष नहीं है । इनका  
ऐसा संपर्याय व्यक्तित्व ही है जो बचन स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं ।'<sup>१</sup>

क्रिया प्रयोग—कवि ने निम्नलिखित विभिन्न क्रिया-प्रयोग किये हैं—

देखो हों झर उठे हो, दुतराबे है, होता जाय, जानूँ हूँ, टीस उठे हूँ, कोसो हो पड़ो  
हो, मेरा करे है, बिया करे हूँ, मरा करे हूँ, तरा करे हूँ मगो हो, जानो  
हो निजा किए, मुनो हो, पड़ो हो, उरित होये, उठे हूँ सोचूँ हूँ इत्यादि ।

जहाँ कविता के प्रभाव के कारण उन्होंने कतिनाय विभिन्न क्रिया प्रयोग किये हैं  
पथा—

(क) हम तो प्राणो घाम प्राणबन ग्यान तुम्हारा 'बरा करे हूँ'<sup>२</sup>  
(ख) बरल के बर से कहीं बल्लुर 'बबला जाय है' ।

इन प्रयोगों से रसात्मक प्रभाव को पर्याप्त छवि पहुँचती है । 'उमिसा' में भी 'जानू  
हूँ 'सोचूँ हूँ 'रेरो पाई' 'नबी', 'उनका हिया' आदि के प्रयोगों की प्रचण्डी संख्या है ।  
बोय—कवि ने क्रियान्तों के विभिन्न प्रयोगों के द्वारा प्रसम्प्य श्रुतियाँ की हैं । उनमें  
निम्नार्जन का काफ़ी प्रभाव है । उनमें माया, निग आदि सम्बन्धी श्रुतियाँ भी मिल जाती हैं ।  
उसके दो दृष्टान्त पर्याप्त हैं—

(१) गिय, तुम मेरे पागस हिय को, हो पगली-सी मून  
बायुर्वन तब बबान बनी, में बनी रई का तुल ।<sup>३</sup>

उसमें 'रई का तुल' के स्थान पर 'रई की तुल' होना चाहिये था ।

(२) बहुत हुपा इतना बय बीता, प्रब नुछ तो उत्तर बो ।  
गियतम, प्रब अत्तर तर भर बो ।<sup>३</sup>

यय 'पुस्सिय नहीं; यपिनु श्रीनिग है एतरब', 'बहुत हुपा इतना बय बीता' के स्थान  
पर 'बहुत हुपा इतना बय बीती' होना चाहिये था ।

१ 'हिन्दी साहित्य और साहित्यकार', पृष्ठ २०६ ।

२ 'कुसुम', पृष्ठ ७१ ।

३ 'अवलोक', पृष्ठ १७ ।

बासकृष्ण वर्मा 'नवीन' व्यक्ति एवं काव्य  
 डॉ० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि उनकी भाषा पर समाव-रचना की छाया भी  
 नहीं पड़ी है।<sup>१</sup> डॉ० प्रभाकर माधवे के मतानुसार उनकी काव्य-रचना में एक प्रयत्नात्मक है,  
 उनकी भाषा में अनन्य अटपटी प्रयत्नी ऐसी है 'यह रंग ही क्या है, कृपा ही बूझा है।  
 यह व्यक्तित्व का अटपट यह पकड़पकत और सहजता उनकी कविता में एक नवा ही स्वर  
 पर है।'<sup>२</sup>

## भाषा-सौन्दर्य

विशिष्टतारें— नवीन की की भाषा के परिष्कृत रूप के एक पद्य के होते हुए  
 उसका एक बूझा पारस भी है जो कि उसके शीघ्र या सौन्दर्य से सम्बन्ध रखता है। इस पद्य  
 के उद्घाटन से ही, हम कुछ निष्कर्ष पर आ सकते हैं। सामान्यतया नवीन की की भाषा  
 सहज तथा सरल है। सहजता का महत्त्वपूर्ण दोस्तानी तुलसीदास ने भी किया है—  
 सरल कवित कीरति बिमत  
 सोइ पावसहि सुजात।<sup>३</sup>

एक भारतीय धारणा 'नवीन, मुसद्दाकुमारी कोहान नैपासा  
 पादि की रचनाएँ कुमारों की समझ में आ सकने वाली और स्फूर्तमयी हैं।'<sup>४</sup>  
 सहज-मुपम होने के परिष्कृत नवीन की की भाषा की बूझी विष्टिपता उसका अर्थिक  
 बिष्ठाप है। वे उर्ध्व-प्रियता से महत्त्व की ओर उन्मुख हुए हैं। उनकी धारणात्मक रचनाओं में  
 उर्ध्व का काव्यी प्रभाव है। इस वीची में उनकी परिष्कृत की भी प्रभावित कर रहा था।  
 की सेवोपरत रस्तोगी ने लिखा है कि प्रायः अपनी सभी कविताओं में नवीन की ने इनी प्रकार  
 की सरल भाषा तथा सुबोध ऐसी की प्रयत्ना है। कहीं कहीं पर भाषाबोध में नवीन की ने  
 उर्ध्व की परिष्कृत गैरी की भी प्रयत्ना है पर ऐसे रचनाओं पर उनकी उक्ति और भी अधिक  
 भाषिक हो गई है।<sup>५</sup>

पानी परबर्डी रचनाओं में कवि उर्ध्व का महत्तर बिटोपी हो गया। वह उसे ऐसी भाषा  
 पानने तथा जिना हमारे जन-जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं।<sup>६</sup> उनसे अपने ही काव्य के  
 नहीं प्रत्युत दूसरों के काव्य से जो उर्ध्व के चरणों को पुन-पुनः निकालने शुरू कर दिने।<sup>७</sup>

१ 'सापुनिक काव्य-संघ' पृष्ठ २४।

२ 'हिन्दी साहित्य की बहानी' राष्ट्रीयता की पारा, पृष्ठ १०१ १०२।

३ 'रामचरितमानस', बालराण्ड पृष्ठ ४७।

४ डॉ० प्रभाकर माधवे 'बीणा' भारत में कुमार-साहित्य के विकास की

साहाय्यता नवम्बर १९४६, पृष्ठ ३२।

५ 'हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास' पृष्ठ ३२३ ३२४।

६ की सुमीन्द्रनार धीरानन्द 'अष्टक'—सुमारका, की बालकृष्ण वर्मा 'नवीन'  
 के एक में 'कानिक सं' २०११ पृष्ठ १०।

७ 'बट-बीकत', पृष्ठ ३०।

उसकी भाषा संस्कृत-निष्ठ हो गई और उसकी यह मान्यता थी कि संस्कृत ही ऐसी भाषा है जो कि इस देश में क्षत्र्य भाषा-मन्त्रियों द्वारा अधिक सरलतापूर्वक समझी जा सकती है और समझी जाती है।<sup>१</sup> इस प्रकार संस्कृत-निष्ठ भाषा उसकी तृतीय विशेषता रही है जिसे उसने उर्दू भाषा तथा धौली की क्षत्रीय द्वितीय विशेषता को प्रतिरक्षित रखे प्राप्त किया है। कवि की तृतीय विशेषता तथा कुछ, उसमें धामरण बना रहा। वह संस्कृतमयी भाषा के पुनीत मन्दिर का शाश्वत पुबारी बन गया।

कवि की भाषा के विविध रूप उसकी विभिन्न कृतियों में प्राप्त होते हैं। माधुर्य का गुण उसके पंथ-संग्रहों में सरल, प्रसाद युक्त मुख एवं प्रवाहमयी भाषा 'उर्मिता' में और प्रीति तथा गान्धीय का रूप 'प्राणार्पण' एवं वार्त्तिक काम्य में प्राप्त है। उसकी भाषा ने अपने स्वयं तथा गलन को बराबर विकसित एवं प्रमत्तशील रखा है।

प्रबन्ध काव्य की भाषा—'नवीन' की के प्रबन्ध-काव्यों में भाषा का प्रवेशाकृत व्यवस्थित रूप प्राप्त होता है। उनकी 'उर्मिता' में ब्रजभाषा तथा लड़ीबोली, दोनों का ही रूप प्राप्त होता है। ब्रजभाषा का रूप काफी परिष्कृत है; लड़ीबोली से भी अधिक। एक हृदयस्त पर्वस्त होता—

मेरी हलकी लुनरिया, रंगी तिहारे रग,  
बेकह इत उत सुपत है, धरणा करणा जर्म।  
गौत गगन द्वि में उके, इत भारत के ठाट,  
यो संकल्पन को उकृत, द्वि विष भूष विराट।<sup>२</sup>

'उर्मिता' में लड़ी बोली की यह स्थिति नहीं है। उसके कई स्तर प्राप्त होते हैं। प्रथम सर्ग से अन्तिम सर्ग के भाषा-स्तर में अन्तर है। दोनों सर्गों के हृदयन्त, इस तथ्य को प्रमाणित कर सकते हैं, समर्थ हो सकेंगे—

या जाती है पुरजन प्रिया नेह में ये पपीन्ती,  
गौरी बाहुँ धमल सुपटा वेष्टिता हूँ ठपीन्ती,  
मानो कोई लच्छक लसिका मलि के भाव धारे,  
पुष्पाधिष्ठा सुचित मन हो, नाचती कु ब-हारे।<sup>३</sup>

यह भाषा हरिषीव की स्मृति बिसाती है। अन्तिम सर्ग की भाषा का रूप भी हृदय है—

इत मन इत मज करती, केंचती  
पग पर पय बरती परती—  
कनी निरसली, कनी पिबलती,  
संजल-संजल डरती डरती।<sup>४</sup>

१ 'द्वितीय प्रचारक', द्वितीय साहित्य की समस्यार्थ, अग्रेल, १९५४, पृष्ठ ६।

२ 'उर्मिता', ब्रजम सर्ग

३ वही, प्रथम सर्ग, पृष्ठ १८७।

४ वही, अष्ट सर्ग, पृष्ठ ५८१।

दोनों माया-रूपों में काफ़ी अन्तर था पया है। द्वितीय माया कम प्रसार का स्मरण दिलाता है। दोनों 'सविचार' के मध्य की माया की भी परब करनी पाहिमि। इसका भी एक दृष्टान्त पर्याप्त होया—

सुम्हको जीवन-सार्पकता का,  
देवि, धाम सन्धेअ मिला  
सुम्ह ज्ञान विज्ञान प्रचारित—  
करने को यत्न-वैश मिला;  
नय-विचार-प्रखनन का मूकक—  
यह सक्तिविक बनेश मिस्र।<sup>१</sup>

बहु पर्याप्त सुप्त की श्री स्मृति को हरा करता है। इस प्रकार 'उमिता' में विविध-स्तरों का प्रयोग हुआ है। उसके पीछे, उसके रचना-काल का कारण रहा है। प्रथम सर्व एवं काम्य सर्वों के मध्य द्वारध बयों का व्यवधान उपस्थित हो गया था। उसी ने माया को प्रतिक स्तरों को बना दिया।

'उमिता तथा प्राणार्पण' की माया में भी पर्याप्त अन्तर है। परिष्कर एवं कलात्मक-बोध्य श्री दृष्टि से 'उमिता ही नहीं नवीन की का कोई भी अन्व उस ऊँचाई तक नहीं पहुँच सकता है। नवीन' की समस्त माया तथा कलागत शौर्यस्य को बहु चक्रेनी ही दोनों में समर्थ है। यह काफ़ी सज्ज एवं परिष्कृत कृति है। दोनों की माया का अन्तर यही देखा जा सकता है—

उमिता—नय चरत, नि-साधन जीवन,  
अन यत्न होन प्रवाती में  
ज्योति अखण्ड-वखण्ड अयाए,  
बिबक या सायाती में,  
ज्ञान शिक्षा प्रखलित अनिगत  
दियलाएवी सुम्हे रिधा,  
अद् प्रकाश घालोक हरेगा—  
अन-अय हिय को दुह मिशा।<sup>२</sup>

प्राणार्पण—घोर अंधकार में अयापी आत्म-वीर-बाली  
रिधाएँ संशोवी, टिया घालोकित-आसमान  
बिहमूल, बिहून अय-अग अय-अय हुआ  
अमित समाज को मिला अकल्पत वीर-शान  
निबय हो मरु वाहुने को दिया आत्म-अल,  
रखकर हपेती वर अपने अमल प्राण,

१ 'उमिता' मूनीय सर्प, पृष्ठ ११४।

२, वही पृष्ठ २००।

घरे इतिहास, बहु तो या निज प्राणार्पण  
केवल यहाँ का बहु मीति-वस्तु मन-बाण ।<sup>१</sup>

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'प्राणार्पण' की भाषा अधिक परिपक्व, साधु, मँची हुई एवं व्याकरण-सम्मत है। उसमें क्रियापदों का प्रयोग मो कान्ही हर एक सुबिम्बास हुआ है। उसकी बड़ीबोबी, धी परिमात्रित तथा लयी हुई है। यहाँ प्रथम भाषा प्रकटा देशज शब्दों की उतना स्वान भी नहीं मिल पाया है। भाषा का सम्यक् एक ही स्तर इष्टिगोचर होता है। यहाँ 'रमिजा' की भाषा हरिमीय सुष्ठु एवं प्रसाद का स्मरण मिलती है, यहाँ 'प्राणार्पण' की निराला का। उसमें निराला के धोज तथा मार्बन का प्रसन्न परिहार है।

सौष्टव्य—'नवीन की की काव्य भाषा में चित्रात्मकता स्वच्छता सुविमता, काव्यत्व धार्मिक संक्षिप्त अभिव्यक्ति एवं प्रसाधारण भाषा अधिकार का वैशिष्ट्य प्राप्त होता है, यथा—

(१) चित्रात्मकता—मैं तुमको निज पीत सुनाऊँ।

तुम बैठो कम सम्पुञ्ज धपना बीनोद्युक्त पीताम्बर पहिने।  
धीर बनें संगुतिर्वा मेरी तब मनुस्य बरलों के पहिने,  
तुम धाकली सजाए बेली चिह्न-चिह्न हो सुभे उतहुने,  
यही साम है मेरे प्रियतम, तुम कटो मैं तुम्हें मनाऊँ।  
मैं तुमको निज पीत सुनाऊँ ।<sup>२</sup>

(२) स्वच्छता—नयन स्मरण धम्बर में,

जमके तब अक्षय-कवण नयन स्मरण धम्बर में  
बिचल, बिमल, सज्जम कमल बिससे मम मन-तर में,  
नयन स्मरण धम्बर में ।<sup>३</sup>

(३) सुविमता—बड़े हुबे हैं फुल सजुटो पर अजित-अमित पग पटले बरते  
सहसा तिलिज निहार रहे हैं हम मन में फुल उरते-उरते ।<sup>४</sup>

(४) काव्यत्व—जान मोम, जामुन, पीपल की धारें भूल रही हैं मूला,  
जानो जामुन में ही प्राया बहु साधन पथ मूला मूला ।  
धार्ई कर्वा यहाँ छिंशर, मैं पावत में किमुक-बन मूला ।<sup>५</sup>

(५) प्रार्थना—प्रण तुम्हारे कर के कण्ठ,

जानो मेरे बहुत पात हो धाज बज उठे  
जान-जान जान-जान ।  
प्रण तुम्हारे कर के कण्ठ ।<sup>६</sup>

१ 'प्राणार्पण', पृष्ठ ४९ ।

२ 'रमिज-रमिजा', पृष्ठ ७९ ।

३ यही, पृष्ठ ८ ।

४ यही, पृष्ठ १३५ ।

५ यही, पृष्ठ १३ ।

६ 'प्राणार्पण', मार्ब, १८४६, पृष्ठ ३ ।



- (६) संक्षिप्त अत्रिष्यति तद्-भावना, मद्रुकि-हित, कई तिहायी प्रीत  
बरी-सोचनन में भरपो सुरस वैह-नवनीत ।<sup>१</sup>
- (७) असाधारण भाषा अघिकार—सत्य प्रेरणा की लेखनी से, कृति प्रकट से,  
आत्म बलिदान रक्त मति से सुहानी यह;  
शिवकालापन विभिन्नक, महाकाल इवात्पुत,  
काल-पुष्ट-अंकित है अजर कहानी यह ।<sup>२</sup>

इस प्रकार कवि ने अपनी भाषा-सौन्दर्य एवं अघिकार का भी पर्याप्त निदर्शन किया है ।

प्रतीक योजना—राष्ट्रीय एवं छायावादी कवियों ने अपनी काव्य में प्रतीकों का विपुल प्रयोग किया है । राष्ट्रीय-काव्य में 'एक भारतीय आत्मा तथा छायावादी-काव्य में प्रसार में इसके अष्ट दृष्टान्त प्रस्तुत किये हैं । 'नवीन' भी के काव्य में भी प्रतीकों की संयोजना उपलब्ध है परन्तु वह पर्याप्त समृद्ध नहीं है । एक दृष्टान्त इष्टव्य है—

तु दाकटार बना है—बापी,  
नन्द-अंस का अक्षित काल ।<sup>३</sup>

इसमें निहित राष्ट्रीय प्रतीकवाद का स्पष्टीकरण इस प्रकार है—दाकटार = पण्डित की अर्थात् अत्याग्रही नन्द-अंस = अग्नि आति ।

एक भारतीय आत्मा' में अराधन बु आसन कई बार के रूप में अग्नि-आति का स्मरण किया है । वहीं उन्होंने 'कृष्ण को मोहन रूप में ब्रह्मिष्ठ किया है, वहीं 'नवीन' भी ने भी प्रधारास्तर से इसे स्वीकार किया है और 'मोहन' या 'मुहु गोपाल' को कैदियों या अत्याग्रहियों पर अतिथार्थ किया है । 'नवीन' भी काठगुह के बासी कैदों का मोहन तथा मुहु गोपाल के रूप में, अमिनस्त्र करत है—

बुलिय वैदियां अगकाला यह,  
अलता मारक आल,  
ससोना यह अत बौहन जाल ।  
देवा वैद्री अहने मीने अचना मुहुगोपाल ।  
ससोना यह अतमोहन जाल ॥<sup>४</sup>

'नवीन' भी ने बौहन अरु का प्रयोग अपनी प्रियतमा के लिए भी किया है ।

कवि ने भारत को 'मुष्यतर' माना है ।<sup>५</sup> पाश्ची जो को 'एक भारतीय आत्मा' ने

१ 'नवीन-बोहावनी', पृ. १० रचना ।

२ 'आलार्थल', पृष्ठ ४६ ।

३ 'तु तुम', पृष्ठ २ ।

४ 'अनर्धकर' ११ भी कविता ।

५. तु तुम, पृष्ठ ४ ।

मोहन प्रायि वर्णों से याद किया है, परन्तु 'नवीन' भी मैं उन्हें सदा 'नीसकण्ठ' ही माना है। इसी 'नीसकण्ठ' के पर्याय के रूप में उन्होंने, उन्हें भैरव नटनागर या शिबधरकर के रूप में भी स्मरण किया है। राष्ट्रीय संग्राम के दिनों में 'नीसकण्ठ' को शब्द-प्रियता तथा भावार्थ को कवि ने मजे के लीचे उठार दिया था। 'गरल-यान' को कवि ने महान् युग-धर्म एवं पुनीत कर्तव्य माना है। इसके विविध रूप उसके काव्य में प्राप्य हैं। प्रेम राष्ट्रीय-क्षेत्र एवं वर्धन सभी क्षेत्रों में, गरल-यान का कवि विस्मरण नहीं कर सका है क्योंकि उसने स्वयं गरल-यान किया है।

इस प्रकार 'नवीन' भी की प्रतीक-योजना राष्ट्रीय प्रतीक-योजना की कड़ी को ही पुष्ट करती दृष्टिमोक्षर होती है। इस दिशा में कवि एक भारतीय धारणा के समकक्ष नहीं पहुँच पाया है।

गुण-वृत्ति तथा रीति—'नवीन' भी मैं निवर्णों का पोषण नहीं किया। स्वाभाविक रूप से जो गुण या वृत्ति उनके काव्य में आ गई वही उनके शृंगार बनी। वे इस विधा में कदापि बेगुनाह नहीं रहे। इस विधा में उनके विविध रूप इन दृष्टान्तों में परले जा सकते हैं—

(क) गुण—

(१) भास्य—रुम-रुम, स्न-भुम, गहूँ-गहूँ  
वेजतियाँ चूँचै,  
बरल-बलन की प्रांखल मर में जैसे रही तुजारे  
किसक-किसक मनु सोठ बहाली है बिबेह की लसियाँ,  
प्रात पवन से चिटकी है वो छोटी-छोटी कसियाँ।<sup>१</sup>

(२) प्रोब—प्राणों के साने पड़ जाएँ,  
माहि माहि-रब मन में छाए,  
नास और सत्यानाशों का—  
सुबीघार जग में छा जाए  
बरसे घाय, बलब बस जाएँ,  
मस्मसात् भूधर हो जाएँ।<sup>२</sup>

(३) प्रसाद—भार्य राम पर तुझने पड़कर  
पू को कुछ पुड़िया ऐसी,  
कि बस तुम्हारे कर में उनकी  
वृत्ति हुई पुड़िया औसी।<sup>३</sup>

(ख) वृत्ति—

(१) उपलागरिका—इस स्वाहा ! स्वाहा ! में कितना  
पीरक है कितना बल है ?

१ 'उर्मिला', पृष्ठ २४।

२ 'कु कुम', पृष्ठ १०।

३ 'उर्मिला', पृष्ठ ३३५।

घातमदान को करम बेदना—

मैं भी प्रिय, चित्तनी कम है !<sup>१</sup>

- (२) पकवा—मस्त हुई भावों की गरिमा,  
महिमा सब सम्पत्त हुई,  
सुभे न देना, इतिहासों के  
पक्षी, मैं गतधीर हुआ,  
घात अहम की धार कुप्लिता  
है, जाती तूहीर हुआ।<sup>२</sup>

- (३) कामला—सखि, बन-बन पल मरने  
अबल निराह-मगन मन उम्मन प्राण-पवन रल तरबे,  
री सखि, बन-बन पल-मन मरने।<sup>३</sup>

'नवीन' को नै विदित्ये पीछे का विधान स्वीकार नहीं किया। इनके काव्य में शोक युग की प्रधानता है। श्री नतिनविशोचन धर्मा ने उनकी रचनाओं को शोक से ही अनुप्राणित पाया है।<sup>४</sup> यह शोक उनकी राष्ट्रीय रचनाओं के साथ ही साथ दार्शनिक कृतियों प्राणार्पण एवं उर्मिता में भी है। इसके पश्चात् ही मातुर्व का अन्तक घात है। विविध दुर्घों से घने-निपटी 'नवीन' को कविता अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन पड़ी है। इसीलिए श्री मबानीचंकर धर्मा विशेषी ने लिखा है कि 'इनकी कविताएँ पाठक के हृदय पर सीधा प्रभाव डालती हैं।'<sup>५</sup>

शब्द-शक्तियाँ—नवीन को के काव्य में शब्द-शक्तियों का भी समुचित परिपाक प्राप्त होता है। वे मूलतः लक्षणा के कवि हैं। उनके काव्य में शब्द-शक्तियों के निदर्शक दृष्टान्त निम्नलिखित हैं—

- (क) धनिषा—विफल उपवन द्वार को सा मिते हैं,  
सुरनिमय कुपर बिनमें ये बिते हैं  
सुहो के सुख समोरल से हिते हैं  
बदेती-मदन-सम्पुट धन बिते हैं।<sup>६</sup>

- (ख) लक्षणा—हेल संकलों को क्यों प्रिय के लोचन की सुवि द्विप में जाये,  
ये बंचन क्या टिक बाएँे उनके उन नपनों के घारे ?

१ 'उर्मिता' पृष्ठ २६८।

२ 'कुतुम्', पृष्ठ १४।

३ 'वपनक', पृष्ठ ६४।

४ श्री नतिनविशोचन धर्मा—'बदुरंग भावा निरगन्धावती, द्विरी भावा धीर  
उनका साहित्य पृष्ठ १००।

५ हमारा द्विरी साहित्य धीर भावा बरिबार', प्रकाश ब्रह्मिंत सुदुमार पुग।

६ 'उर्मिता', पृष्ठ ११।

कहाँ सजन के नित पसीर हम । धोर कहीं ये जपल प्रभाये ?  
 जलित कर्जनों ने प्रीतम के बे लोचन-गुल रंज न पाए ।<sup>१</sup>  
 बिरोध-मूढक हास्यिक भावमगिमा का प्रदर्शन यहाँ हुषा है—

पर्यं रहित रज हुषा, कहे तो, मेरे बन का झरझराया ?  
 मैं तो हूँ मरुभूमि का भूग, प्रिय हूँ ना जाने कितना व्याघा ?<sup>२</sup>

(घ) धर्मजना—बया हो बिचित्र कीतुक यह—

झपारों से जस झपके,  
 पत्थर से पानी निकले  
 पानी में लपटें लपके ।<sup>३</sup>

‘नबीन’ की का काव्य अत्यन्त बेमूर्छा है और उसमें प्रभावामिर्ध्वजना के यथेष्ट पुण प्राप्त होते हैं। इस प्रकार, नबीन की की समग्र काव्य भाषा योजना अनेक तर्कों से संपन्न है। यह एक धोर यदि अपरिपक्व है तो बूझरी धोर पर्याप्त धोबपूर्ण भी। नबीन की ने स्वयं अपने काव्य के विषय में कहा है—

“मेरे काव्य में अमिर्ध्वजना का अलेश भी नहीं है। उनमें कल्प की सुन्दरता अवेदनात्मक ही है परन्तु वे झपाझप से दूर नहीं हैं। बिचार सरल और बोध-व्यय हैं। गीतों में वेप-उत्सव की प्रभावता, एक ही निवेदन एक ही परिपाटी तथा एक ही रस होता है। मेरे गीतों में चिन्तन को उकसाने वाले अनेक स्वस मिलेंगे। यदि कुछ और अत्यन्त नहीं है। उनमें बो-बार संस्कृत शब्दों का काठिन्य मिस सजता है परन्तु अमिर्ध्वजना कुछ नहीं है। मेरे भाव व्यक्त करने को सौखी सुन्दर है, यह मैं कैसे कहूँ ? इसका निर्णय तो पाठकों के ऊपर ही निर्भर है, पर मैं यह और बैकर कह सकता हूँ कि मेरे गीतों में भावत भावुठता तथा अमिर्ध्वजना की मिसमिसाहट है। रसरज-भूमि, गीतों का मर्म है। संयोग और विरोध दोनों पक्षों के अद्यन होते हैं। पर संयोग बहुत कम तथा अधिष्ठार मानसिक और कहीं-कहीं कुछ अनुकूल, अतीत अद्यतनों के रति-सलों का पाव जिसमें विरोध भी मिसता है। प्रेम-गीतों में भारतीय के रसग मिलेंगे। विरोध में प्रकृति के स्वर्णों का बल भी रहता है। मैं तो यह नहीं कहता कि प्रकृति का सुन्दर बिचल करने में बड़ा पट्ट है पर हाँ इसका निर्णय भी पाठकों पर भी छोड़ दिया है।”<sup>४</sup>

यहाँ ऐसा प्रतीत होता है कि भी अद्यतनी भी की समीक्षा के लार को ही नबीन’ की ने अद्यतनी अंतर्कता महोदय ने ही प्रस्तुत कर दिया है।

१ ‘बयासि’ पृष्ठ ८२ ।

२ कहीं, पृष्ठ १०६ ।

३ ‘अमिसा’, पृष्ठ १०४ ।

४ भी सुधीनभूमि अद्यतनी—‘अद्यतनी—भूमि, भी अद्यतनी अद्यतनी ‘नबीन’ की एक अंत, कालिक सं० २०११, पृष्ठ ११ ।

आत्मदान की श्रम देखा—  
 मैं भी प्रिय, छिनी छल है !<sup>१</sup>

(२) पक्षपात—बस्त हुई भावों की गरिमा,  
 महिमा सब सम्पत्त हुई,  
 मुझे न छोड़ो, इतिहासों के  
 पक्षों, मैं पतथीर हुआ,  
 आत्म आत्म की बार कुठिलता  
 है, जामी तुलोर हुआ।<sup>२</sup>

(३) कामवा—सखि, बन-बन धन परजे  
 अरुण निनाह-मयन मन उगमन प्राल-पवन-रस तरजें,  
 री सखि, बन-बन धन-गन परजे।<sup>३</sup>

'नवीन' की ये विशिष्ट रीति का विधान स्वीकार नहीं किया। इनके कव्य में धोक प्रसन्न की प्रभावता है। श्री नसिमबिलोचन शर्मा ने उनकी रचनाओं को धोक से ही अनुप्रासित पाया है।<sup>४</sup> यह धोक उनकी राष्ट्रीय रचनाओं के साथ ही साथ दार्शनिक कृतियों प्राणार्पण एवं समिता में भी है। इसके पश्चात् ही माधुर्य का शब्दांक बाटा है। विविध पुण्यों से सनी-सिपटी 'नवीन' की कविता अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन पड़ी है। इसीलिए श्री मजानीशंकर शर्मा त्रिनेत्री ने लिखा है कि 'इनकी कविताएँ पाठक के हृदय पर सीधा प्रभाव डालती हैं।'<sup>५</sup>

शब्द-शक्तियाँ—'नवीन' की ये कव्य में शब्द-शक्तियों का भी समृद्धि परिपाक प्राप्त होता है। ये धूमक लक्षणा के कवि हैं। इनके कव्य में शब्द-शक्तियों के निरचक लक्ष्यात् निम्नलिखित हैं—

(क) अनिपा—विपन्न अवसन इतर को धा मिले हैं,  
 सुरनिमय पुष्प जिनमें ये खिले हैं  
 सुही के तुल्य समीप्य से खिले हैं,  
 जमेली-मयन-सम्पुट सब खिले हैं।<sup>६</sup>

(ख) लक्षणा—बैक बँवनी को क्यों प्रिय के लोचन की सुधि हिय में जाये,  
 ये बँवत क्या टिक पाएँगे उनके उन लपनी के धागे ?

१ 'उर्मिला', पृष्ठ २१८।

२ 'कुसुम', पृष्ठ ६४।

३ 'अपलक्ष', पृष्ठ ६४।

४ श्री नसिमबिलोचन शर्मा—'अदुर्बल ध्याया निबन्धावली', द्वितीय भाग्य धीर  
 बस्तका साहित्य पृष्ठ १७।

५ 'हमारा द्वितीय साहित्य धीर भाग्य परिवार', प्रचार प्रवर्तित सुकुमार सुब।

६ 'उर्मिला', पृष्ठ १२।

कहाँ सज्जन के मिलि नजीर हुम । धीर कहीं ये अपन प्रमाये ?  
 कलित खंजनों में प्रोत्तम के के लोचन-गुण रंजन पाए ।<sup>१</sup>

विरोध-सूचक काव्यसिद्धि भावनीयता का प्रदर्शन यहाँ हुआ है—

पल रहित रव हुमा, कही तो, मेरे मन का अर्क-प्रवासा ?  
 मैं तो हूँ मरमय का मृग, म्रिय, हूँ ना जाने कितना व्यासा ?<sup>२</sup>

(ग) अर्थव्यंजना—क्या ही विचित्र कोयुक्त यह—

अंधारों से जल टपके,  
 परपर से पानी निकले  
 बानी में लपटें लपके ।<sup>३</sup>

'नबीन' जी का काव्य ध्वनित बेगुण्य है और उसमें प्रमादाभिध्वजना के संकेत गुण प्राप्त होते हैं। इस प्रकार, 'नबीन जी की समय काव्य भाषा योजना, अनेक ठानों से संमलित है। यह एक ओर यदि अपरिपक्व है तो दूसरे ओर पूर्णतः प्रोक्तपूर्ण भी। 'नबीन जी के स्वयं अपने काव्य के विषय में कहा है—

“मेरे काव्य में अविध्वजना का स्वर भी नहीं है। उनमें कलन की सुन्दरता अवेदनरमक ही है वरन्तु वे व्यापार से दूर नहीं हैं। विचार सरल और बोध-गम्य हैं। गीतों में मेल-मरद की प्रकल्पना, एक ही निवेदन, एक ही परिपाटी तथा एक ही रव होता है। मेरे गीतों में चिन्तन को उरुसाने वाले अनेक रसल मिलेने। गति कुछ और प्रस्युत नहीं है। उनमें दो-चार संस्कृत शब्दों का काव्यमय मिलन करता है परन्तु अविध्वजना कुछ नहीं है। मेरी भाषा अत्यन्त सरल को सीसी सुन्दर है यह मैं कैसे कहूँ ? इसका निर्णय तो पाठकों के अन्दर ही निर्भर है, पर मैं यह और बेकर कह सकता हूँ कि मेरे गीतों में अत्यन्त अत्युक्त तथा अविध्वजना की अतिप्रकल्पना है। रसदास-धृगार, गीतों का अर्थ है। संवीत और विषय दोनों पक्षों के अन्तर्गत होने हैं। पर संवीत बहुत कम तथा अतिरिक्त काव्यसिद्धि और कहीं-कहीं कुछ अत्युक्त, अत्यन्त अत्यन्तों के रसि-शरतों का माद अिसमें विषय भी मिलता है। प्रेम-गीतों में आत्मीय के अन्तर्गत मिलने। विषय में प्रकृति के स्वधर्मों का अन्त भी रहता है। मैं तो यह नहीं कहूँ कि प्रकृति का सुन्दर चित्रण करने में बड़ा पद है पर ही इसका निर्णय भी पाठकों पर भी छोड़ रहा है।”<sup>४</sup>

यहाँ देखा प्रतीय होता है कि श्री अक्षयनी जी की समीक्षा के पार को ही 'नबीन' जी ने अथवा अक्षयनी महोदय ने ही प्रस्तुत कर दिया है।

१ 'इकासि' पृष्ठ ८३ ।

२ 'कही', पृष्ठ १०६ ।

३ 'अर्थव्यंजना', पृष्ठ ३७४ ।

४ श्री सुपोत्तुमार श्रीवास्तव—'अन्त'—पुष्पाक्षर, श्री अत्युक्त अर्थ 'नबीन' जी के एक अर्थ, काव्यसिद्धि सं० २०११, पृष्ठ ११ ।

असंकार-विधान—काव्य की शोभा में योप देने वाले धर्म को धर्मकार कहा गया है।<sup>१</sup> काव्य में धर्मकारों का धर्मकारत्व इतना ही है कि वे काव्य में रह धीरे जाव के धर्मित होकर स्थित रहें।<sup>२</sup> 'ममीन' की वे धर्मकारों को धर्मता ध्येय नहीं माना। वे स्वतः उनके काव्य में धर्म विराजे हैं। नीचे कविपय धर्मकारों के दृष्टान्त विधे जाते हैं—

(१) अनुप्रास—सुश्रुता का जलमें न विहार,  
न संशय का जलमें कुप्य लेख  
न बसेज, न श्लेष, न टैल धरोप,  
मिले हृदयेश परम धरमेज।<sup>३</sup>

(२) उपमा—जयपाल ने सीता-बदलों में  
घठकर किया नम धरम  
धर्मों सदैव विवदास कर रहा,  
सुख मति का धर्मिणधन।<sup>४</sup>

(३) व्यङ्ग्य—प्राची लीं विन-मति मिले, मिरगी विरह-बुध इन्द्र,  
स्त्रियो जल-धर-द्विप धरम, किलसे धन-धर-धर।  
प्रकृति धिरल-जल धरम में, धन-धन उठी नहुम  
नील-धरम-धरम धरि, नहराई धरवाप।<sup>५</sup>

(४) धर्मिण—राम सुमित्रा के कलधरम  
पर धिर रज यों व्यक्त हुए—  
मानो ननु धरम-धरम सब  
धरम-धरम-धरम हुए।<sup>६</sup>

(५) विरोधाभास—काव्य-काव्य विषय वीर्य के  
सुम निधकारल-किन्तु धरि;  
द्विप-द्विधर धरताने जाने  
किन्तु धर सुम किन्तु धरि।<sup>७</sup>

१ 'काव्यशोभाकरान्यर्थासंकाराप्रकृतौ'—भाषार्थे इण्ड्री, 'काव्यादर्श' २।१।

२ 'रसनावावितारध्यामाधिव्य विनिधेयमसु, धर्मिण्योनां लक्ष्मीधर्मकारत्वसाधनम्'—  
हिन्दीधर्मशास्त्र, द्वितीय उद्योते, पृष्ठ १११।

३ 'उमिता' पृष्ठ १३५।

४ वही, पृष्ठ १७४।

५ वही, पृष्ठ ४११।

६ वही पृष्ठ ३०५।

७ वही पृष्ठ १७०।

- (१) अतिशयोक्ति—रह-रह कर नाम-मण्डल में  
 बहुपण नामके कैंप-कैंप के,  
 पचवा बुझ-मरी निवा के,  
 बुझ के सब घाले तपके ।<sup>१</sup>
- (२) व्यतिरेक—बैस खंबनों को, क्यों प्रिय के सोचन की तुमि हिय में बाये ।  
 ये खंबल क्या टिक पाएँगे उनके उन नयनों के प्राये ।<sup>२</sup>
- (३) समुक्त का मूर्त्तकरण—मचल-मचल कर 'उल्लंघा' से छोड़ा 'नीरवता' का साथ ।  
 बिच्छ 'प्रतीक्षा' ने भीरे से क्या, मिठुर हो तुम हो साथ ।  
 नाह बहुर की कबिर उपासिका मेरी इच्छा हुई हूतना,  
 बहुकर उस मित्तव्य बासु में जला पया मेरा बिस्वात ॥<sup>३</sup>
- (४) मानसोकरण—सीधी है मोस कणों से  
 यह धर्म-राशि इच्छियारी,  
 पू-पू कर टपक रही है  
 जसदी धंधियारी सारी ।<sup>४</sup>

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ने साहस्यमुक्तक धर्मकारों का अधिक प्रयोग किया है। जयमा कमर तथा उत्प्रेक्षा उसके प्रिय धर्मकार हैं। इन्हीं में ही उसकी कृति रमी है। उसके काव्य में धर्मकार भावोत्कर्ष के साधन रूप में प्राये हैं।

छन्द-योजना<sup>५</sup>—'नवीन' की प्रथम मोठकार हैं, अतएव छन्द-योजना को उनके प्रबन्ध-सद्यों में ही विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। यहाँ पर उनके प्रबन्ध काव्यों के छन्दों पर विचार करना उचित होगा।

प्रबन्ध-काव्य के छन्द—उर्मिसा—'उर्मिसा' में धर्मिक स्वतों पर प्रायः १६ १६ मात्रा के चार चरण युक्त छन्दों का प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ—

जसो हे निरो टूटी कलम—१६ मात्रा, १० अक्षर ।

जसो जस घोर, किसी के पास

छोड़ दो कलिभूष की मसि यहीं,

करो भेता सुप में कुछ बात ।<sup>६</sup>

१ 'उर्मिसा', पृष्ठ ३६३ ।

२ 'जबासि', पृष्ठ ८२ ।

३ 'सरस्वती', विसम्बर १९१८ पृष्ठ १०२ ।

४ 'उर्मिसा' पृष्ठ ३६४ ।

५ 'नवीन' की के छन्दों को कवीटो पर कसने के लिए निम्नलिखित दो पुस्तकों का प्राथम लिया गया है—(क) श्री जयशंकरप्रसाद 'मानु',—'छन्द : प्रयाकर' ; (ख) डॉ० पुस्तुसास गुप्त—'धार्मिक हिन्दी काव्य में छन्द-योजना' ।

६ 'उर्मिसा', पृष्ठ १ ।



प्रस्तुत काम्य में निम्नलिखित छंद प्राप्य है—

- (१) सार छन्द—बैचि, जिनै, तेरो घटचित पाया पाया है मैं,  
 किसबाहू भरिताम्बुजि-मज्जन के हित पाता है मैं—  
 जनि प्रयस्य बलबती सहर है, पाहन पाता है मैं,  
 हृदय जिना पर तब बरणों को बैचि विजयता है मैं।<sup>१</sup>
- (२) तुमैक छन्द—बिचि-सी, कल्पने, सुप्रबनिसा यह—  
 हुई सम्पूर्ण, तो सब बसिया यह—  
 जसो देखें तुरो सुबिभरला यह—  
 बनक रूप रसिधा, गुम सकारना यह।<sup>२</sup>
- (३) मन्वाकान्ता छन्द—से प्राए है सरल जग की स्नेह की मे विदारी,  
 धा बँदी है बनस्पुन की बाजिका में बिहारी,  
 क्यों जाता है, पबिक सब तू बनरी ठीर ? धा रे  
 सारे जता पून मपुर की मासुरी है यहाँ रे।<sup>३</sup>
- (४) कुकुम छन्द—जो प्रांतु तुम बरत पड़ो, यह—  
 प्याया है कायब मेरा  
 प्यासी बनम हृदम प्यासा है,  
 प्यासों का है यह डेरा।<sup>४</sup>
- (५) शूद्रपा छन्द—मय सुमिट-तरब को जिनै  
 कल्पना नवनीत निकाला ?  
 किनै रस-बान विपा यह  
 नित मया, धतीत, निराला ?<sup>५</sup>
- (६) शोहा—जल बरतत कतरत हृदय मारी-मारी होय  
 बरतावत मर रंग कपेड, धन बूनरी निबीय।<sup>६</sup>
- (७) सौरठा—हान होन, रब हीन, रीती परी मूरंग यह,  
 करहु पाहि जपनि करि गहोप घमोर मुहु।<sup>७</sup>

१ 'जिनै', पृष्ठ ५।

२. बहो, पृष्ठ १२।

३ बहो, पृष्ठ १५।

४ बहो, पृष्ठ १७०।

५. बहो, पृष्ठ १४४।

६ बहो पृष्ठ ४०३।

७ बहो, पृष्ठ ४६६।

कवि ने पंचम सर्ग का निर्माण दोहों से ही किया है जिनमें कतिपय चोरे भी आ गए हैं।

(घ) प्राणार्पण—छन्दों के दृष्टिकोण से प्राणार्पण अधिक परिष्कृत है। 'उदिसा' के समान उसने छन्द ढीले-ढाले नहीं हैं। प्राणार्पण की सम प्रथमा ठर्र 'राधेश्याम रामायण' की ठर्र से कुछ मिलती है।

'प्राणार्पण' के प्रथम सर्ग में दूर-दूर मात्राओं के छः चरण से युक्त छन्द हैं। यों वरुण की दृष्टि से इसमें २१ वरुण भी मिलते हैं, फिर भी इसे लगभग नहीं कहा जा सकता। एक दृष्ट्यान्व फर्माव होगा—

घटनाओं का यह विषय नहीं, कोई कल्पना उड़ान नहीं,  
यह कोई कथा बिलास नहीं, मिरा स्वप्नम निम्नारा नहीं,  
जो-जो बेका है आँसों से, जो-जो भेला है इस तन पर  
जो-जो मीया है जीवन में, जो-जो बीतो है इस पग पर,  
उसका यह किञ्चिन्मात्र यहाँ छोट-सा किञ्चर्शन मर है  
ये हैं मेरे पूजा-प्रयुक्त, मेरे अडा का निर्भर है।'

इसके प्रत्येक चरण में ३२ ३२ मात्राएँ हैं और प्रथम चरण में २१ वरुण। द्वितीय सर्ग में भी मात्राओं के छः चरण से युक्त छन्द प्राप्त होते हैं। तृतीय सर्ग में ३० ३० मात्राओं के छः चरणों से युक्त छन्द मिलते हैं। वरुणों की संख्या बद्यपि अधिकतर २२ ही है परन्तु किसी-किसी में अनियत संख्यक वरुण प्राप्य हैं। उदाहरणार्थ—

	मात्रा	वरुण
महाप्राण की हृदय-वेदना महाप्राण ही जान सके	३०	२०
घतल सित्पु की पहुराई को लसु बामन पय जान सके	३०	२२
जिसने मानव की गुदता में प्रभु अभ्युत विश्वास किया,	३०	२२
जिसने उस अडा के पीछे सतत हलाहल गरुज पिया	३०	२२
यदि मर को पशु बनते बेका यह गरुज परलेखार्कर,	३०	२३
तो सोचो उसकी आहुतता, जो ससु प्राणी मर-तन-अर।	३०	२१

तृतीय सर्ग में ही एक छन्द और भी प्राप्य है जो कि ३२ ३२ मात्राओं के छः चरण से युक्त है। वरुण संख्या अनियत है।

चतुर्थ सर्ग में ३२ वरुण वाले समवायिक दण्डक छन्द का प्रयोग दिखाई पड़ता है। इस सर्ग में प्रमुक्त वृत्त छन्द भी, समवायिक दण्डक छन्द प्रतीत होता है।

स्फुट-कृतिया के अन्य छन्द—कवि ने अपनी अन्य काम्य-कृतियों में निम्नलिखित छन्द भी प्रयुक्त किये हैं—

(क) चौपाई—'तबीन-सोहाबसी' में चौपाई भी प्राप्य हैं। एक दृष्ट्यान्व देखिये—

कहा पन्थ की सोक सुरसुरी, कहा मासु की नीति बासुरी,  
जो तर शक्ति-प्रसाद-बल पाई, हूँति हूँति जय-जैवाल उठाई ।<sup>१</sup>

(क) कुपवली—यह छन्द, दोहा और रोमा कवियों से मिलकर बनता है। बोहे के बा  
और रोले के बार चरण मिलकर इसमें छः चरण हो जाते हैं और प्रत्येक चरण की २८  
मात्राएँ मिलकर १४४ मात्राएँ हो जाती हैं। जिस शब्द से इसका आरम्भ होता है, प्रायः उसी  
शब्द से उसका अन्त भी किया जाता है। 'नवीन' की की 'कुपवली' देखिये—

कहा करो ? यह बेचना, लम्बि परै नहि निक,  
तकि तकि के कोऊ के रहुो सशय-बाण प्रनेक  
संशय बाण प्रनेक हिये में कसकि रहे थे,  
पाथ गहर पन्नीर तीर के टसकि रहे थे,  
नरि-नरि घासत है कोमल बल बिसत घाली,  
बूध-बूध नहीं बनी सिधोती संचित जाती  
कस्तु करैत ली मरुम, बल में यहाँ मरौं में ?  
है ये गहरे पाथ, बलाबहु कहा करौं में ?<sup>२</sup>

सुबत छन्द—इन्हीं में सुक छन्द का प्रवर्तन महाप्राण निराशा से किया। शेरसफियर  
ने भी अपनी कविता में शून्य वृत्त की उद्घोषणा की थी।<sup>३</sup> 'नवीन' की की इस छन्द में  
सिद्धि कविता के दृष्टांत दर्शनीय है। यह कविता सन् १९२० में लिखी गई थी—

स्वामिनि तुम्हारी क्षति  
बैची पाथ

बहुर के गनीर कल नीर बीच  
मिलमिल लो—

निष्ठुर ली—

स्वामिनि तुम्हारी क्षति ।<sup>४</sup>

सन् १९२३ की एक कविता भी दर्शनीय है—

प्रणवा है, से तुमसे

निज सम्बन्धन बात बहूँ क्यूँते,

करो प्रणवा जनकी

कि है आरम-विश्वास कगूँ इतना ।

१ 'नवीन-बोहावली' पृष्ठ १० वीं पद्यवा ।

२ 'नवीन-बोहावली', ९वें पद्यवा ।

३ Shakespeare was the first who to shun the pains  
of continual rhyming, invented that kind of writing which  
we call blank verse. —J Dryden, 'Dramatic Poetry and other  
Essays' Page 186

४ साप्ताहिक 'सतवाता', लम्हारी क्षति, २२ जनवरी १९२० पृष्ठ ६०४ ।

हैं, पर, एक पटक है—  
 कि अब गोपनीयता रहे इतनी—  
 तो फिर, संग चलने में,  
 क्या कोई शक्ति रह जाती है ?<sup>१</sup>

छन्द-दोष—कवि ने अपने छन्दों का उचित परिष्कार नहीं किया, इसलिए उनमें दोष भी विद्यमान है। 'उमिषा में धनेक छन्द-मंग पाये जाते हैं। 'प्रासापण' में गतिबंध का दोष था गया है—

हो गया कु कुमों से अपने अभिशाप प्रस्त कानपुर नगर।<sup>२</sup>

क्यासि' में भी गति मंग दोष का एक दृष्टान्त दृश्य है—

कि उन सुपनों के हुए हैं शून ही मर संस्करण दे।

यहाँ पर प्रथम शब्द 'कि' बीज होना चाहिये था। मात्रा दोष का भी एक दृष्टान्त देखिये—

बीयन-ज्योति सुप्त है अहा,  
 सुप्त है संस्करण की शक्ति।<sup>३</sup>

उपरिस्तिष्ठित पंक्तियों में दो-दो मात्राओं का समाव है क्योंकि समग्र कविता १३ पंक्तियों वाली पंक्तियों से युक्त है। इस प्रकार कवि ने छन्दों की अपने भाषामिथ्या का माध्यम बनाया था। छन्दों में भावों को बाँधा जाता है इसलिए भावों की महत्ता कम नहीं होती। 'निराला', 'नबीन' आदि कवियों ने छन्दों के सहारे नहीं प्रत्युत अपनी रचना के अन्तःकरण से भावों को जगम दिया है। इस प्रकार के व्यक्तियों से छन्द के अन्तरेतापूर्वक अनुवर्तन की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

निष्कर्ष—भाषार्थ नन्दबुसारे बाजपेयी ने लिखा है कि "धर्मों की की भावुकता और उनकी काव्य शक्ति के बीच अल्प कोटि का सामंजस्य योड़ी ही रचनाओं में मिलता है।"<sup>४</sup> श्री उदयचंद्र मट्ट ने भी कहा है कि "उनके काव्य में परिष्कार का समाव है। यदि उनमें साधना-शक्ति होती तो उनकी कवित्व शक्ति प्रबल हो उठती। उनका काव्य तो उस सदान के समान है जिसमें पुष्प व कण्टक, दोनों ही मिलते हैं। कहीं-कहीं काव्य की जगम छट्टिभोर होती है अन्यथा परिधम अत्रि प्रतीत होता है। उनकी प्रथम दिनों की रचनाओं में परिधम अत्रि दिखाई पड़ता है।"<sup>५</sup>

नबीन' की के भाव-मद्य के समझ उनका छिन्म-मद्य दुर्बल पड़ गया है। डॉ० नमोन्

१ 'प्राज्ञकत, बुराब, कुम, १९५६, पृष्ठ ३।

२ 'प्रासापण', पृष्ठ १२।

३ 'कु कुम' पृष्ठ १२।

४ भाषार्थ नन्दबुसारे बाजपेयी— हिन्दी साहित्य—बीसवीं शताब्दी', पृष्ठ ३।

५ श्री उदयचंद्र मट्ट—नई दिल्ली से हुई प्रथम भेंट (दिनांक २४-५ १९६१)

ने लिखा है कि "उनके काव्य का महत्त्व इसमें है—कहीं स्तर कभी ऊँचा है कहीं धरमन्त सामान्य । उसमें कब्यारमक सौष्ठव कम है ।"<sup>१</sup>

'नवीन' को ने प्रधानतया अपने काव्य का माध्यम गीत ही बनाया । उनके पास गीति काव्य के योग्य, मान-अवयव हृदय अक्षय या परम्पु भाषा के परिभाषित रूप ने उनका साप नहीं दिया । डॉ० धीरेन्द्र वर्मा और डॉ० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि (उनकी) भाषा 'एक भारतीय धारणा' को भाषा की भाँति ही ऊबड़-खाबड़ है, उसमें साहित्यिक सुसुप्ति नहीं है ।<sup>२</sup>

वास्तव में 'नवीन' की के व्यक्तित्व की 'बुर-सूँक मस्तो और राष्ट्रीय जीवन को देखते हुए, उनसे कला-साधना की भाषा एवं प्रवेसा नहीं की जा सकती थी । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "राजनीतिक संघर्षों से पुरसृत पात्र पर ने कविता लिखते हैं ।"<sup>३</sup> ऐसी स्थिति में ने अपने काव्य का यथोचित परिष्कार नहीं कर सके और उसे स्पष्ट नहीं बना सके ।

१ डॉ० तयेन्द्र का सुके लिखित (विशोक २५-२६१२ का) कथ ।

२ 'साहित्यिक हिन्दी काव्य' पृष्ठ ११२ ।

३ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—'हिन्दी साहित्य', पृष्ठ ४७६ ।

नवम अध्याय

निष्कर्ष

में लिखा है कि "उनके काव्य का महत्व इसमें है—कहीं स्तर काफ़ी ऊँचा है कहीं सरलता साधारण। उसमें कलात्मक सीप्टन कम है।"<sup>१</sup>

'नवीन' की नै प्रबानतया अपने काव्य का माध्यम गीत ही बनाया। उनके पास पीठिकाव्य के शोक, भाव-प्रबण हृष्य प्रबन्ध या परम्पु भाषा के परिमार्जित रूप में उनका साप नहीं रिया। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा और डॉ० रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि (उनकी) भाषा 'एक भारतीय भारता' की भाषा की भाँति ही ऊबड़-खाबड़ है, उसमें साहित्यिक सुवर्षि नहीं है।<sup>२</sup>

वास्तव में नवीन की के व्यक्ति के 'बर-दूक मस्ती' और राष्ट्रीय जीवन को देखते हुए, उनसे कला-साधना की माधा एवं अपेसा नहीं की जा सकती थी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "राजनीतिक संघर्षों से फुरसत पाने पर वे कविता लिखते हैं।"<sup>३</sup> ऐसी स्थिति में वे अपने काव्य का यथोचित परिष्कार नहीं कर सके और उसे स्पष्ट नहीं बना सके।

१ डॉ० नगेन्द्र का सुमे लिखित (दिनांक १५-८ १९६९ का) पत्र।

२ 'साहित्यिक द्वितीय काव्य', पृष्ठ ३९९।

३ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—'द्वितीय साहित्य' पृष्ठ ४०६।

नवम अध्याय

निष्कर्ष





## बृहत्त्रयी

कविवर श्री वासुदेव धर्मा 'नवीन' के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सम्पूर्ण एवं मध्यम श्रेणी के तीन आधारभूत तत्व हैं— (क) युग-तत्व (ख) व्यक्ति-तत्व (ग) काव्य-तत्व ।

इन्हीं तीन महान् एवं विस्तृत उपादानों से उनका सांघोषांग रूप निमित्त होता है और निरंतर-उत्तर कर हमारे समक्ष पाता है । इन्हीं उपकरणों के धनमाह्वान से, निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है । पैठर ही मोठी निकाले जा सकते हैं ।

युगतत्व—'नवीन' की ने अपने युग को संक्षिप्त-काल' कहा है । 'यथा गुण तथा नाम के अनुसार, कवि ने अपने युग को 'त्रिभंगु-काल' 'सन्धि-काल' और 'वापस की संज्ञा भी प्रदान की है । संकल्पित-काल में युग, पुरातन को प्रतिनिधित्व करके नूतन के द्वार को खटखटाता है । इस युग में प्राचीन और नवीन का समन्वय होता है । पुरातन बाटे-बाटे अपनी प्रतिष्ठाया खोड़ बैठा है और नूतन, अपनी सबसे किरणों को बिखीरते करते समता है । ऐसे काल-क्षणों में युगस्त्वान् एवं आगुति को सबग समीर, धन-धन को धमिनद परिवेष्ट की गन्ध प्रदान करने समती है ।

समन्वय का सात्त्विक-गुण ऐसे काल-काल में धृतीव ध्यानाकृष्ट योग्य है । समन्वय का निरूपण करना भी अत्यावश्यक है । आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की इस विषय में मर्मस्पर्शी 'सूक्ति' है—समन्वय का महत्त्व है कुछ मुकुता कुछ हूसरों के लिए वाच्य करना ।' प्रत्येक सन्धि-युग में यह समन्वय सक्षिप्त रहता है । मनवान् तथागत बुद्ध, तुलसीदास धावि ने इसके अनुकरणीय धारसे उपस्थित किये । 'नवीन' के संक्षिप्त-काल के लोकायक और 'धिरूप' के सहस्र 'धनासक्त योगी एवं धनभूत बापू ने भी यही कार्य किया । 'नवीन' में भी समन्वय है परन्तु अपने रंग का ।

'नवीन' का युग धरि तथा मरि का युग वा । उसमें संस्कृति के पुनर्जागरण-काल के मुख और राष्ट्रीय चेतना की वृद्धि के समन्वित प्रभावों का प्रोत्साहन चित्र प्रारम्भ था । यह अत्यन्त सविनयपूर्ण तथा विद्युत्कम्पनों से परिष्कारित काल-खण्ड था । नवीन ने जिस समय अपने कवि-जीवन तथा राष्ट्रापित व्यक्तित्व की पैठरियों को छोडा उध समय साहित्य तथा राजनीति दोनों के ही बरेष्य-क्षेत्रों में 'नव' का 'रव' छा रहा था और 'यत' का 'मत' इतिहास के पृष्ठों में बिसीन होने के लिए उत्सुक था ।

राजनीति में विस्मय-युग की परिसमाप्ति और गान्धी-युग की सुगन्धि सर्वत्र छा रही थी । साहित्य में द्विवेदी-युग के 'सूक्त' का स्थान छायावाद का 'सूक्त' ग्रहण करने के लिए कटिबद्ध होने लगा । साहित्य तथा राजनीति की दो महत्त्वपूर्ण कड़ियाँ और युगांतरकारी घण्टाय इस समय बंगन खोल रहे थे । काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अपने मीढ़-निर्माण में रत थीं । गान्धीवाद का धार्मिक-व्रत एवं जन-स्फुरण समय भारत में जड़वीयमान् होने लगा ।

१ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी—'हिन्दी साहित्य की भूमिका' पृष्ठ १०३ ।

घाचार्य मन्त्रदुसारे बाबूदेवी ने इस संश्रान्ति-काल के साहित्यिक-क्षेत्र विषयक पत्र के सम्बन्ध में सर्वथा सटीक टिप्पणी की है। सन् १९ से सन् २ तक का समय इस स्वच्छन्दता वाली काव्य-प्रवृत्ति के अधिक गह्रा होकर छायावाद की विशिष्ट काव्य-रीती के रूप में परिचित होर परिणत होने का समय गह्रा जा सकता है।<sup>१</sup> परिणामस्वरूप 'नवीन' के काव्य में वहाँ एक और स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रवृत्ति का प्रगट होना जर बनाने लगीं वहाँ हुए ही और बाबूदेवी का युग-चेतना से भी बड़ अतिरिक्त होने लगा। ये दोनों युग उसमें अपनी सम्बन्धित छवि बिखेरने लगे।

'नवीन' ने अपने आपकी संश्रान्ति-काल का प्राणी गह्रा है। यह संश्रान्ति-काल का सुदृढ़-सूत्र 'नवीन' के जीवन तथा काव्य को समझने-बुझने की समर्थ-कुंजी है। इस सूत्र को पकड़े बिना 'नवीन' दर्शन का प्रसा<sup>२</sup> प्राप्त नहीं हो सकता। कवि जीवन पर ही यह चरितार्थ नहीं होता है, प्रत्युत यह कवि को अत्यन्त प्रिय या क्योंकि उसमें उसका समय राष्ट्रीय साहित्यिक व्यक्तित्व प्रतिबिम्बित होता था। यह उसकी धारणा की धारावाही थी। 'नवीन' ने वहाँ-उहाँ इस तत्व को प्राथम विद्ये है और उद्ये के रंज में ही सराबोर होकर, अपनी 'अविद्या' में राम के जेता-युग को भी संश्रान्ति-काल घोषित किया है और अरुण एवं किमीपण से उसके महत्त्व की मूर्ति बनवाई है।

'नवीन' के 'विशङ्क-काल' के गरिमाय सुत्र 'समन्वय' का सम्बन्ध कवि के 'त्व' से ही है 'पर' से नहीं। वे संश्रान्ति-काल की प्रतिवृत्ति थे। राजनीति तथा साहित्य दोनों क्षेत्रों में इसे अपनी मूर्ति परखा जा सकता है। 'नवीन' में विशङ्क-युग तथा गान्धी युग दोनों का ही समन्वय प्राप्त होता है। विशङ्क-युग की अक्षयिता उष्णता एवं अनस-सहृदी, कवि को कुछ तो प्रत्यक्ष ही प्राप्त हुई और कुछ परोज। लोकमान्य विशङ्क ने बासकृष्ण पर हाथ रखकर अपनी अनेक विरहयत्नी संघर्ष के माध्यम से ही की थी। कुछ तत्व कवि में, गद्येष्ट की के माध्यम से प्राये बिनकी परम्परा भी अपना प्रावि स्रोत, विह्वल उद्वेगोपक शिल्प में अपना रूप संवारती थी। गान्धी-युग ने कवि को जीवन और उन्मेष प्रदान किया। यह गर्वना के स्वर को धार्मिक मूल्यों में बाँधने लगा। कवि के अन्त-गान तथा अन्त-गान की रचनाओं में इन दो स्वतन्त्रता संश्रान्त के अन्तक तथा अन्तक युग-मूल्यों तथा उनके काम की समस्त चेतना को वाली का वर्णन प्राप्त हुआ है।

'नवीन' ने, अपने युग की दोनों प्रकार की सामाजिक तथा राष्ट्रीय-अन्ति का पान किया था। कवि की राष्ट्रीय-रचनाओं में इनका स्वरूप अपनी भाषा गा रहा है। सांस्कृतिक पुनर्चेतना के तत्वों को भी अपना प्रयत्न करने के कारण कवि की वाली को सांस्कृतिक-स्वतन्त्र में ही साक्षर तथा मनोहारी प्रयत्न-स्वतन्त्र मिले।

साहित्यिक-क्षेत्र में भी कवि ने अपने समन्वय को अपने काव्य में विद्यमान रखा। उद्ये में भी संश्रान्ति काल के सहस्र पुपुठन तथा मूठन का गठ-बन्धन है। वहाँ एक और कवि ने महारणा गान्धी मलेहंकर विद्याधी तथा विनोबा भावे सहस्र अन्त-स्रोतों पर अपनी पुष्प-बन्धिनी

१ घाचार्य मन्त्रदुसारे बाबूदेवी—'अन्तिक' छायावाद का आरम्भ कब हुआ ?

समर्पित की, वहाँ वह समिधा के परित्यक्त एवं उपेक्षित आस्थान की काम्पात्मक भूमिभूमि में भी निष्ठापूर्वक रहा। वहाँ उसने मुक्तक प्रवीत और मुक्त-सुन्द की प्रभुतात्मक काम्य-पद्धतियों को अपनाकर, समय के ढंग के साथ अपने भी पम मिलाये, वहाँ पर, हृष्टकूट बोहा चोपाई, छोरज, कुण्डसियाँ लिखकर, अपने प्राचीनता के मोह को भी प्रवर्धित किया। एक भार वह पचासवाली-वर्ष, भौतिक-शास्त्र एवं भ्रष्ट-विज्ञान की काम्पात्मक टिप्पणियाँ करता है, वहाँ दूसरी ओर अपने जीवन-वर्षों को उपनिषद् एवं वैदिक के चिर प्रेरणास्वर गीत से पोषित करता है। वह गीत के भीत पाठा है तो सुमिदान-वृत्त की भी सांस्कृतिक-शक्ति दिखता है। इस प्रकार तबोत में युग-धर्म बोध उठा है।

'नवीन' ने युग की बाणी को अपनी कविता का सुहाय बनाया। युग की इस भावपरक एवं काम्योत्प्रेरक भूमिका में, कवि ने मण्डेय की सहस्र 'बोर' प्रत्यकार में धारम ज्ञान-दीप बाणी को प्रशंसित करनेवाले, युग-द्रष्टा का संरक्षण एवं सम्बर्द्धक भाव प्राप्त किया। कवि की काम्य-कृतिकार्य अपने फलस्रव प्रस्तुतित करने लगी और जीवन की उत्कृष्टता राष्ट्रीय-युग पर प्रसर हो गई।

'प्रताप' की तेजस्विता तथा प्रखरता को 'नवीन' के राष्ट्रीय-योद्धा के जीवन में उत्कर्ष प्राप्त हुआ। वे धार्मिक योद्धा बने रहे। उन्होंने परतन्त्रता से घृष्ट किया, परिस्मृतियों से भाहा लिया; सामाजिक बन्धनों से लड़ते रहे और भाषिक विपन्नता की तीक्ष्ण बाणों को उछाड़ते रहे। उन्होंने हिन्दी के लिए अपनी कर्म करो और धन में लोगों से भी बचो तक बुद्ध करके रहे। बहिर्जगत् का यह युद्ध उनके अन्तर्जगत् में भी अन्तर्जगत् का रूप धारण कर लेता था। राष्ट्रीय-संघर्ष के दिनों में उनके प्रणयों मन तथा कर्तव्योन्मुख भावना में जो आरागह के भीतर संघर्ष बसा करता था, उसकी भाँकी भी उनके प्रेम-काम्य में देखी जा सकती है। अपनी बुद्धावस्था में, लौकिक तथा अलौकिक संघर्ष में कवि का मन-वैष्णवी भगवन् की ओर ही उन्मुख हो गया था। 'नवीन' के बहिर्जगत् एवं अन्तर्जगत् की भूमिभूमि ही उनका कर्मठ जीवन एवं प्रभविष्णु काम्य है।

इस युग-संघर्ष की भीषण वेला तथा उत्तेजना में कवि के बहिर्जगत् तथा अन्तर्जगत् की संयोजनकरणी-युक्त भावना परिपक्व एवं प्राज्ञ-व्यक्ति-सम्पन्न बना रहा। 'नवीन' की काम्यानुभूतियों एवं प्रेरणा-स्रोत के अनुजीवनार्थ भी उनके युग-तत्त्व को समझना अत्यावश्यक है। वे धरी तथा मयार्थ अनुभूतियों के कवि ने और वे सब स्फुरण, स्पन्दन, कम्पन तथा भावनाएँ, उन्हें अपने युग, समाज तथा जीवन से ही प्राप्त हुईं। नवीन की उन कवियों में से हैं जिनके व्यक्तित्व को समझ लेने पर, उनका काम्य-तत्त्व अपने आप ही अपनी अन्त-भूमियों के अक्षुण्ण बोल देता है।

व्यक्ति-तत्त्व—'नवीन' की का व्यक्तित्व उनके युग-तत्त्व की ही उतक है। युग ने ही उनके व्यक्त को गढ़ा और दोनों का प्रतिबिम्ब काम्य में दिखाई पड़ा। इस अक्षय-योद्धा में मातृश की मरुत के साथ उत्तरपदेश की कर्मठता धरना विचित्र मिश्रण बनायी है। बालकृष्ण के वैष्णवी भाव-संस्कार, उसे अमित-निधि प्रदान करते हैं। वे संस्कार उनके काय सौंड तथा वर्तन को बुद्धि की को प्राणान्वित करते हैं। वैष्णव-गीतों तथा बातावरण में 'नवीन' के कवित्व को स्फुरित किया काम्य-संगीत को

राष्ट्रीय तथा परिपाटीगत रूप से संयोजित किया और धर्म तथा सम्भारपरक रचनाओं के मूल को उल्लेखित किया। ये ही संस्कार कभी पान्थी की धोर उम्मुल हो जाते हैं और कभी बिनाबा की धोर। इन्हीं से ही कभी ससकी धर्मि धमइकर उमिवा के चरणांमुकों में बा विराजती है और कभी बछेचर्कर विद्याओं के बसिवात को महिमामय रूप प्राप्त होता है जिसमें कवि का बड़ा-निर्दर धर-धर करके सतत प्रबहमान रहता है।

कवि की बाल्य-विराटा एवं विदुर-बीवन, बहाँ उसे 'हुम धनिकेठन' का गायक बनाते हैं 'मस्त फमीर' तथा 'बोमी की बुनिया में से जाते हैं' बहाँ श्रुमारिक रचनाओं के भी हृदय खोलते हैं। कवि के जीवन का उन्मेष तथा बय-प्राप्ति से उत्पन्न विस्तनपरक इष्टिकोण भी उसके काव्य-व्यक्ति-रत्न पर अपनी धमिट बिह्न छोड़ बने।

'नबोम' के व्यक्ति-रत्न के तीन सुत्र हैं—मानुष्यता, कस्तुरा एवं बिरोह। मानुष्यता ने उसके समग्र काव्य पर अपना घासन जमाया है। इसी कारण उसका चिन्तन-पद्य भी कमबोर हो गया। उसकी मानुष्यता कभी पटीकों, धातों तथा पीड़ित व्यक्तियों का पक्ष लेती, कभी प्रभाव या घनाचार के निरुद्ध लसकार बनकर उद्बोधित हो जाती और कभी विनम्रता एवं बड़ा के रूप में शान्त प्रतिभा बन जाती। मानुष्यता के कारण ही कवि कभी ईश्वर को चुनौती देने समता और कभी सुकवि की किसी समस्यशी रचना को सुनकर, उसके चरखों में बिर पड़ता। यही मानुष्यता राष्ट्रीय-धीत को धनस-बीत में परिछुठ कर बेगी और रहस्यवादी प्रवृत्तियों को धर्मि एवं रोषक धर्मिव्यक्ति में। इसी मानुष्यता के कारण माया धनयुद्ध हो जाती धर उन्मेष बन जाते और कलात्मक परिष्कृति मन मसोस कर रह जाती। वास्तव में मानुष्यता को कवि-व्यक्तित्व का सर्वप्रमुख तथा संघासनकारी-सुत्र मानना चाहिये। यह उसके मनोवृत्तियों का सिरमौर है और सभी श्रात-बशात कृत्यों क्रियाशीलता तथा प्रतिनिध्याओं में बैठी रहती है। यह रूप बरस-बरस कर भी धाती इष्टिकोचर होती है। उदाह के क्षेत्र में पहुँचकर ठेकसी बन जाती धोब की बिधा में धमइकर प्रखर बन जाती रति के प्रति अपनी धनुनय-विनय भरी बेचना उड़ेबती और धणु-बिज्ञान से अपनी धसहमति प्रकट करती। बध के क्षेत्र में पहुँचकर धीमोत्सर्जन कर जाती और जीवन की कठोर तथा संघर्षरत भूमिका में धोवित्वाधीनित्व के बन्धन को धर्मिक धामय नहीं देती। यही मानुष्यता सिद्धासनों को ठुकराती और कुटीरों को गबे बजाती। उजवूठव तथा मन्वि-पद्य को ठुकराकर, 'हुम धनस निरंजन के बंधन' पाने में ही धारम-धुष्टि मागती। यही मानुष्यता बड़े-बड़े से टकराने में बय उत्पन्न नहीं होने देती और जीवन के धेस धमइकर, बसमें बूझते रहने की उत्प्रेरणा प्रदान करती। मानुष्यता का उत्स ही अनधी कस्तुरा' तथा 'बिरोह' की धान्य वृत्तियों में बिर बिह्नमान रहता।

कस्तुरा ने कवि-व्यक्तित्व को धमिट रंभावेष्टित किया है। यह धोबसी रचनाओं में धीन-धीन व्यक्तियों तथा पराभूत धारण की स्थिति से उत्पन्न धोब की तीव्र प्रतिक्रिया के रूप में बिह्नमान रहती है। धिय के प्रति निवेदनों में धनुनय-विनय तथा धासैतिक काव्य में धर्मि की धारमशीलता तथा समर्पण के रूप में इष्टिकोचर होती है। उसका बहरा पुट उसके प्रबन्ध-काव्यों में ती धाधय बा सफटा है।

कवि ने धाजीवन बिरोह किया। उसकी उमिवा, सवमस राम धारि धमी बिरोह-

तत्व की प्रशंसा करते हैं और उसे जीवन में बरेष्य मानते हैं। इस अज्ञानतात विद्रोही तथा मस्तमोक्षा ने गौरांग-महाप्रभुओं के विरुद्ध विद्रोह किया। क्या तया निष्ठा के प्रश्न पर 'नबीन' विप्लव करने में कभी भी घागा-पीछा नहीं देखते थे। सामाजिक अनाचार तथा प्राथमिक दुःखस्या से उनका व्यक्ति और कवि बूमता ही रहा। गान्धी जी के परम अनुयायी होने पर भी, हिन्दी के प्रश्न पर, कवि उनसे भी विद्रोह कर बैठ। नेहरू जी के निष्ठापूर्ण अनुयाय होने पर भी राष्ट्रमाया के प्रश्न पर, उनसे भी अपनी स्पष्ट तथा प्रखर असहमति प्रकट कर दी। 'नबीन' की कहानी ही विद्रोह की खबानी सुनने को मिसती है। काव्य के कसा-पक्ष में भी उनके विद्रोह ने कृषा ही प्रसंग बना लिया है जिसका रंग ही तबा है।

'नबीन' के व्यक्तित्व में भी उनके संघान्ति-भाव' के 'समन्वय का सूत्र कार्यरत है। वे विरोधी गुणों के विचित्र तथा अनुटे समुच्चय हैं। ईश्वरवादी तथा धनीश्वरवादी दोनों ही रूप उनमें देखे जा सकते हैं। बलिबेदी के गामक तथा मनुवादी काव्य-प्रवृत्तियों के पोषक के रूप उनमें श्रुत्य हैं। वे विनीत तथा उदर, मडासु तथा विरोधी विनम्र एवं प्रसर, सनी रूपों में सामने आये। वे प्रणय तथा चिन्तन दोनों के आबरणों को खोलते हैं। मनुवात तथा परम-दान, दोनों को ही उन्होंने एक-सा ममत्व प्रदान किया। वे झुंकर भी बने और सस्रवर भी उठे। उन्होंने प्रेम के आये 'मत्सा टेका और बन्धु के सामने छापी खोस दी। उनकी छापी थोड़ी भी परन्तु हृदय सचिदनशील। उनकी बाहुएँ बलिष्ठ भी परन्तु अन्त-करुण कइल्यारं। वे प्रेम से रोय की धोर बड़े। ससीम में असीम को बूँझ। पाथिक की अर्पाथिक की शीति प्रदान की। उनका कवि-व्यक्तित्व समन्वय की मंजूषा है। उन्होंने मियीग में योग के बर्धन किये। प्राकार्पण में सार्भमीमिक मानबता के अन्दूटे रूप को विरोधा। स्वुन में, सुदम के समन्वय की साचना की। आकर्षण तथा समर्पण की गाँठ बाँधी। रति-निष्ठा से यति बन गये।

हम कह सकते हैं कि रति तथा यति मसि एवं असि का पचाकर समरसता का निदर्शन करने वाला ऐसा व्यक्तित्व हिन्दी में अद्याभियों के बाद उत्पन्न हुआ। यह अपनी को ही सागी रखता है—उपर 'कबीर और इबर निरासा। मुय के बड़बानक को जितने पीस्य तबा मस्ती के साब 'नबीन' ने पिया यह एक निरासी ही कहानी है जिसे इतिहास भूषने का साहय नहीं कर सकता। विप्लव को कवि ने अपना मुन-भर्म एवं आत्म-कर्त्तव्य माना। यरीबी दुःख, विपत्ति, दुष्टिस-निवृत्ति, दमन, बाकल सामाजिक असन्तोय, संघर्ष अन्तर्द्वन्द्व प्रलय अक्षयता विमोच-अथा अहि आसिगित जीवत के अणु आपीरिक कष्ट आदि के हसाइस का वे अस्मित पान कर गये। उन्होंने अग्नि-दान किया और हारों से अग्नि को बबोच दिया। उनके हृदय की प्रणयाम्नि उन्हें सामती रही और आरामाग्नि की तृप्ति के सिध् उनका 'हंसा' निरुच्छ मयन में अपने देने कैलाकर, 'आसि' तथा 'अत्स' को प्रहम्' की अग्नि को मुंजाबमान् करने सगठा था। उन्होंने यन तथा आत्मा दोनों की टीस तथा टोह को सहन-बहन किया। उन्होंने अन्त-आयन दोनों को ही, अपना अहयोगी बनाया। वे विजय पराजय दोनों में ही झूमते रहे। उन्होंने सब कुछ समर्पण कर लिया, अपनी मस्ती के सिधे, राष्ट्र-माता के सिधे हिन्दी-आरती के सिधे और बापी की आराधना के सिधे। वे झुंटे नहीं। उन्होंने तिर दिया परन्तु सार नहीं दिया। कबीर की अति उन्होंने सब कुछ सटाकर

'मीन' सभी प्राण की स्थिति को उत्पन्न कर घोर मनिकेतन की बीतपगी वृत्ति प्रकृष्ट कर बीतपड़े पर लड़े हो गये। वह एक ऐसा चौराहा था जहाँ उनकी राष्ट्रीय मान्योसन को कहानी पत्रकारिता काव्य की महिमामयी निधि तथा ममतामय मानव की विभूतता अपने आप ही एकत्रित हो जाती थी। वे राष्ट्रीय-संघाम के बीरवन्त तथा मनोमूढ प्रतिभ्य थे और वे कविता की साकार प्रतिमा। इस परम-संवीत के प्रयेवा हलाहल बर्न के प्रवर्तक घोर हिमवी के नीबकन्ठ में युग के हलाहल का पान करके उसे प्राणत बनाकर काव्य-कुम्भ में उल्लेख दिया। इसीलिए कवि यह वा सका—

उन्नत होकर बनते मनोवेव प्रदम छति  
 संवम ही से खिलती हिय की रागामुरति,  
 तुम्हें नहीं देती है बोमा यह हेव मति  
 तुमने तो रक्खा है अपना बिर घोर नाम,  
 राको, हे, राको, निब जोय-प्रनत एक याम।

× × ×

तुम तो ही नीलकण्ठ, खिच्य हुमाहूम घारी।<sup>१</sup>

वह गरल-बेधी का गायक विप्लान करके भी अपने व्यक्तित्व को समुत्तमय ही बनाये रखा। उसका नैतिक व्यक्तित्व अनुप्राण तथा रसराज से समन्वित था और समुत्तमयी बोधि से भास्वर। उसका व्यक्तित्व हिन्दी की नेत्र व्यक्तित्व सम्पन्न कवियों को पक्ति की बोमा को विद्वुसित कर सकता था। कवि चिर-नवीन बना रहा। उसके जीवन के निजत्व प्राप्ति कर लेने पर भी उसका काव्य-तत्व चिर नवीन तथा चिरकालिक है। उसका काव्यकमी यद्यप्यौर ही युग-युगान्तर तक अपनी बाखी को निःसृत करता रहेगा।

काव्य-तत्त्व— युग तथा व्यक्ति-तत्व के साम्यत्व जीवन ने ही काव्य-तत्व को जन्म दिया है। श्री प्रभावचन्द्र धर्मा ने सिखा है कि "कवि 'नवीन' मोटे रूप से तीन भागों में विभक्त होता है, राष्ट्रीय जागरण का मायक प्रणव-गीतों का प्रयेवा और बीकोत्तर युग की अनुसाह्य का भाकसनकर्ता। नवीन की का राष्ट्रीय-कवि कर्मभूमि के बाह-प्रतिवाटों की संवेचना से बनता उनका प्रेमगीतनायक उनकी मनोभूमि के रंगीत सौन्दर्य बोध की उपज है और उनका कस्त्र कोऽहम् बासा भेयस प्रिय है। उनका धमकेतन अष्टा-मक्ति परम्परा से उद्भूत हुआ है।"<sup>२</sup>

इस प्रकार नवीन की काव्यबारा राष्ट्रीय प्रेम एवं धार्मिक प्रवृत्तियों से प्रेरित करके बढ़ती है। इनके धरिरीक उनके प्रबन्ध कर्मों में कवि का प्रबन्धकार अपनी प्रतिमा विकीरी करता है। इस प्रकार कवि ने मीत एवं प्रबन्ध-काव्य के दो रूपों को अपनी बाखी का नर्षत्व प्रदान किया। 'नवीन' की काव्य में अनुभूति तत्व की प्रधानता है। उद्यमें संवेत तथा सूक्ति को बहुलता इष्टिगीकर होती है। उनका भाव-मल कितना समुत्त एवं प्रबल है, उतना धिक्न-गल नहीं। 'नवीन' की काव्यनैतिक जीवन कार्यन्वयता

१ 'स्मरण-वीच २०वीं कविता।

२ 'प्राकाशवाही बाँस, इन्दौर, प्रसाप्य-लिखि ५, १२ १९६०।

क्रमयामात्र एवं मौक्तिक संघर्षों ने उन्हें काव्य-साधना करने के बजाकर प्रबान नहीं किये। इसीलिए, उनके काव्य में परिष्कार का पक्ष दुर्बल रह गया। कवि ने यद्यपि थोड़ा परिमार्जन पत्र-तत्र करने का प्रयास किया था परन्तु वह सायर का नौका-संतरण ही कहलावेगा। वास्तव में माया धर्मकार सुन्यादि को कवि ने कभी धपना इष्ट नहीं माना। वह बात कहना जानता था और कह देता था। यही उसका धर्मोद्देश्य था। साज-सज्जा को धपेला कवि ने भावों के प्रेक्षु को ही धमिक महत्त्व प्रदान किया। इस तथ्य के होते हुए भी कवि की धनवद् तथा फलकृतामयी माया तथा धेनी की धपनी दृष्टि है जिसमें वैचगिकता धार्मिक तथा प्रभावोत्पादकता परिष्कारित है। उनमें धोक की प्रगल्भता धपने उत्कर्ष पर है। 'नवीन' की जीवन तथा प्रत्यक्ष प्रेरणाओं के कवि रहे हैं धतएव उन्होंने धपने काव्य में उसके ध्यावहारिक तथा वास्तविक रूप को ही स्वागत किया है, जिसके फलस्वरूप, उनकी माया तथा धेनी की धेवाज धर्मों एवं धर्तु धेनी से धोठ प्रोठ हो गई है। कवि उत्तरोत्तर संस्कृत एवं संस्कृतमयी धध्यावसी की धोर उन्मुक्त होठा जला गया जिसके परिणामस्वरूप उसकी धारौनिक धधिम्यक्ति के समान उसकी धाया-धोजना भी संस्कृतनिष्ठ होठी जली गई। धपने धुक-धर्न की धीग ने भी कवि को संस्कृतमयी धाया धिन्तनपरक रचनाओं धिस्व मानवता-मयी धृतिधों तथा गान्धीय की धोर उन्मुक्त किया।

इस प्रकार 'नवीन' की के काव्य-उत्पत्ति में क्रमध- धिकास तथा प्रोद्धि के धर्जन होते हैं धोर कवि ने धपने काव्य की परिष्कृति धध्यात्म-विषयक धृतिधों में की। उनका काव्य धृदय से धारमा की धोर, सुधित से धंगीठ की धोर धोर धीठों से प्रबन्ध की धोर उन्मुक्त होठा है। उनकी काव्य-साधना का पाठ धर्पाठ धिस्तुत एवं प्रधस्त है धिसमें धर्नैक धीपानों के धर्जन किये जा सके हैं।

## महत्त्वयी

कवि के हिन्दी बाध्मक के प्रदेय धरिमा तथा साहित्य में स्वागत निर्धारण के हेतु धने धीग धपाधानों के धाधार पर, उसका धधुधेसन करना उचित प्रतीठ होठा है—(क) धरिमांकन (ख) महत्त्वांकन (ग) सुस्थांकन।

उपरिनिर्दिष्ट धीन तत्व धीे उसके काव्य-धी तथा नूतन धोधधान की मधी मीति धिधेचना करने में धधर्ष हो सकेधे। 'बृहत्तयी' ने जहाँ उसके काव्य ध्यक्तित्व की धीठिका तथा काव्य-धिलेपण का धंजन किया है, वहाँ 'महत्त्वयी' उसकी धरिमा-महिमा धैठिहासिक धुस्य हिन्दी काव्य को धधिमज धैन धोर 'नवीन' के कवि-ध्यक्तित्व के धोरध-धुठों को उधुपाठित करने का प्रयास करती है।

धरिमांकन—कवि के काव्य की धरिमा तथा महिमा के धंजन के हेतु उधे, दो धधों में धिमाधित करना सधुचित प्रतीठ होठा है—(१) 'नवीन' का प्रदेय, (२) 'नवीन' धारा नव प्रधर्तन।

(१) 'नवीन' का प्रदेय—'नवीन' की के हिन्दी-काव्य के प्रदेय के धिलेपण के समय धनेक धिष्य धपने महिमा-धाधा कहठे उधर-निधर कर धाठे हैं। 'नवीन' ने बहुधिय रचनाधों का निर्माधित किया धिनमें मानव-धीधन की नागा प्रधर की धृतिधों, धिधों, धटमाधों धोर धुठों को स्वागत मिसा है। वे राष्ट्रिय-काव्य के धुरस्कर्ता हैं, धीधन के मधभरे धायक हैं



घोर रक्तस्य को बुझने वाले चिन्तक कलाकार । उनका प्रबन्धकार, मृतक शास्त्र-शामरी को अपने भावनाओं में स्वागत प्रदान करता है । इस प्रकार उनका सतत सर्जनाधीन व्यक्तिगत, हिन्दी भाषामय की शास्त्रयत सेवा में भावीजन रत रहा ।

'नवीन' की की राष्ट्रीय सांस्कृतिक रचनाओं में हिन्दी में मृतक भाव-सूमिकाओं को जग्न दिया है । वे पोडा तथा कवि दोनों के प्रत्यक्ष, इस काव्य में युग की महर्षे धपना स्नेह पाती है । 'नवीन' की का राष्ट्रीय-काव्य एक घोर व्यक्तिकारियों एवं उपपन्धियों की बाखी के मोक्ष को अपने में धारमस्य करता है, जो बुरी घोर काव्यो की के प्रपापिक मुक्तों को भी धपना स्नेह प्रदान करता है । कवि के प्रत्यक्षवर्ती हो नहीं प्रत्युत् प्रत्यक्ष-भोक्ता होने के कारण उसके राष्ट्रीय काव्य में जीवन के स्पन्दन प्राये है घोर बाखी का जो उमार मितता है वह हिन्दी के राष्ट्रीय-काव्य में धपनी धानी नहीं रहता । कवि ने अपने काव्य में पटनाओं तथा तप्यों को प्रतिष्ठियात्मक एवं भावपरक रूप प्रदान करके उसके अरबधिक सामयिकता के मोह से बर्धित कर दिया है जो कि शास्त्रयत-काव्य के लिए धर्यावश्यक है । उसकी राष्ट्रीयता भावबुद्ध्यामयी है घोर ससमें बस्तुपरक विम्ब न धाकर प्रवृत्तिपरक प्रतिविम्ब हृष्टियोचर होते हैं ।

हिन्दी की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-भारा में कवि ने नवीन धप्याम्य को संसज किया है जो कि भाषाबाधिता उत्कृष्टता धोबस्वितता ध्रमिष्ठ तथा विष्मक के मुहक पृष्ठों से संयुक्त है । 'नवीन' के राष्ट्रीय-काव्य की प्रबहेलना करना एक युग तथा उसकी मायिक काव्यात्मक धरोहर से काव्य-भी को वधित करना है । कवि ने राजनीति की धारा की धपेक्षा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को धधिक प्रधय दिया है, जिसके कारण उसके काव्य में स्वाभित्त तथा उन्धतर मुक्तों के उत्स प्राप्त होते हैं । इसी उत्स से ही उसका स्वातन्त्र्योत्तर विधममानधताकाधी रूप एवं महर्षि निनोबा के व्यक्तिगत की सांस्कृतिक व्याख्या धादि के प्रबधक उत्सक हुए हैं ।

कवि के राष्ट्रीय-सांस्कृतिक-काव्य की सर्वाधिक महान् उपलब्धि है 'प्राणार्पण' । इसका धनेक हृष्टियों से कवि-जीवन में महर्षक है । कवि, प्रायः अपने राष्ट्रीय काव्य धरवा कारगुह प्रसूत रचनाधों में बेस की राजनीतिक उभस-धुबल के प्रत्यक्ष-विष्मण से बिरक्त रहा है । इस काव्य में कवि को राष्ट्रीय जन-जीवन के स्पन्दन का प्रत्यक्ष धनुमायक प्रमाणित कर दिया है । युग-वेतना का धितना सम्पक, निरस्त एवं प्रमाधपूर्ण धाकसन इस कृति में हुआ है वह उसके काव्य में ही नहीं धपितु उस युग की धत्यस कृतिधों में हो पाया है । हुतात्मा धरोध की के महर्षि-मन्धित व्यक्तिगत पर बधये ससध साहित्यिक प्रसूनों में, प्राणार्पण का प्रसूत सर्वाधिक प्रमाधपूर्ण तथा धुबाध-धुक्त है । युग की पृष्ठभूमि एवं धरोध की के व्यक्तिगत का ऐसा प्रबध, धम्नीर, उदात्त एवं सभ्य विस्लेषण धत्यक धुर्धय है । यह कवि 'नवीन' की, हिन्दी काव्य को बुरी महान् हैन है । यह इस धरिपायी की धिरमौर हृति है । विधय तथा काव्य दोनों ही हृष्टियों से इसका हिन्दीकाव्य के हृष्टिधस में धपना पृक्त तथा धन्वीय स्वागत है ।

'नवीन' की का प्रेम-काव्य धपने युग की धायाकाधी प्रवृत्तियों के धनुक्त है । उसमें विप्रसम्म-धुंधार-रस का प्रधानत्व है जिसके धररुध के विधोध के धुष्पु-कलाकृष्टा है । नवीन की ने प्रेम का धोन्धय धीधन विष्मणधुधृति धादि के जो मांसक एवं मर्येस्यधी विध पदान किये हैं वे हिन्दी की धुंधार-धरम्यध की धीधृष्टि ही करते हैं । कर्णोने प्रणम को भी धपनी धीधन् धनुधृति से मन्धित किया है, जिसके कारण वह धीधन की बधकनों से धाधुर्ल है ।

'नबीन' की के बार्शनिक काव्य में उनका भारतीय दर्शन, संस्कृति एवं काव्य-परम्परा का रूप ही समृद्ध हुआ है। उनकी बार्शनिक रचनाएँ उन्हें ईश्वरवासी भक्त एवं मातृक बार्शनिक के रूप में ही प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने निवृत्ति मार्ग की अपेक्षा, प्रकृति मार्ग को ही अपनाकर, अपने जीवन-दर्शन की सामाजिक उपादेयता तथा आभारभूमि की भी सोचा बड़ाई है। उनका बार्शनिक-काव्य हमारे अध्यात्मपरक काव्य-साहित्य की सम्पदा को विपुल बनाता है और प्राबुतिक काव्य के इतिहास में अपनी निरासी छाप छोड़ जाता है।

'नबीन' की के मरण-गीत प्राबुतिक हिन्दी काव्य ही क्या, समग्र हिन्दी काव्य की चिर-वन्दनीय रत्न-संभूषा है। प्राबुतिककाव्य में किसी भी कवि ने उनके जैसे आत्मामय एवं यन्मोर प्रतिपादनमय गीत नहीं लिखे। 'नबीन' की का यह हिन्दी भारती को सर्वथा नूतन, मौलिक एवं प्रौढ़ प्रवेय है जिसकी समकक्षता सम्भव नहीं।

'उमिषा' नबीन की का इच्छोटा महाकाव्य है। इसमें कवि ने उमिषा के चरित्र की काव्यमय उल्लेखा तथा बिस्मृत रूप की सुन्दर तथा महान् स्रष्टवना की है। उमिषा का जैसा बिस्मृत साबोपास एवं नूतन उद्गमावनाओं से युक्त चित्र 'नबीन' ने प्रदान किया है वह अमूल्य अमरत्य है। राम-जगन्नाथ का सांस्कृतिक अनुवर्णन कर, कवि ने इस काव्य की पीठिका को सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक तथ्यों से भी परिपुष्ट कर दिया है। उमिषा की सरस अन्वयारण, मौलिक प्रसंगोद्गमावनाओं नूतन चरित्र-सृष्टि हास-परिहास के दृश्य राम-राजराज की अमिनक व्याख्या, ललित प्रकृति चित्रण एवं कल्पना-नैमज की दृष्टि से राम-काव्य की परम्परा में इसका अनुपमेय स्थान है। इसने राम-कथा के अर्थों की सम्पुष्टि की है। एतदर्थ इसे 'पूरक-काव्य' की संज्ञा प्रदान की जा सकती है। इसमें राम-सीता की कथा न होकर उमिषा अन्वय की गाथा है। रामायणी कथा को कवि ने नहीं प्रहण किया, उसके प्रमुख अंशों का ही सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक बिस्लेषण किया है। यह काव्य अद्भुत मौलिकता तथा विशिष्टताओं से परिष्कारित है। 'उमिषा', वहाँ 'नबीन' काव्य की सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति है और कवि के मत्त-पताका एवं चिरन्तन काव्य-नैमज की अक्षयवाटिका है, वहाँ यह हिन्दी काव्य की महती तथा सारमयित उपलब्धि है। इधर के कतिपय वर्षों में प्रकाशित प्रबन्धकृतियों में उसने अपना अग्रतम स्थान बना लिया है। यह रचना कवि की बाणी का अख्यान है जो कि बुन-बुबाधरों तक हिन्दी काव्य-संसार में गुंजायमान रहेगा और मुद्रास फैलाता रहेगा। 'नबीन' का एक मात्र यह प्रवेय ही उनको हिन्दी के श्रेष्ठ कवियों की पंक्ति में शोभायमान करने के लिए पर्याप्त है।

'नबीन' ने अपने शास्त्रीय राम-उमिषियों से बड़ गीतों के द्वारा विद्यापति, पुरदास, तुलसीदास, मीराबाई, अन्वदास आदि की परिपाटी की धामा भी बड़ाई है। उनके प्रवीत प्राबुतिक हिन्दी प्रपीतों के बाह्यमय में अपना अद्वितीय स्थान बनाते हैं। उनके प्रवीतों को सङ्ग भारतानिर्मलता एवं संवीत पक्ष का मार्ग उनको सुन्दर उपलब्धि है। उनकी, हिन्दी के प्रौढ़ तथा मानिक नीतकारों में, परिपलना की जा सकती है।

'नबीन' ने हिन्दी के अन्व-कोष की अभिवृद्धि की है और उसे सर्वसाधारण तक गम्य बनाने के लिए, पर्याप्त स्वानीय एवं वैचर्य अर्थों को प्रयोग किया है। यह भी उनकी पृथक् उपलब्धि ही मानी जायेगी।

राष्ट्रीय-काव्यकार का यह पुरस्कर्ता कवि अपने काव्य में खड़ीबोली तथा ब्रजभाषा के समन्वित प्रयोग को दर्शाकर, इन दोनों भाषाओं के सेतु का कार्य सम्पन्न करता है। इससे उसके मुख्यराष्ट्रीय व्यक्तित्व तथा समन्वयकारी प्रवृत्तियों के दर्शन प्राप्त होते हैं। उसने नूतन मनोवृत्ति के साथ ही साथ प्राचीन मनोसंस्कारों की भी विवेचना की है। आधुनिक युग में व्यक्तिव्यक्ति के प्राचीन माध्यम एवं छन्द अपनाकर कवि ने अपनी धनुमन्वय विशेषता का ही उद्घाटन किया है। इस प्रकार 'नवीन' भी ने हिन्दी भण्डार की श्रीवृद्धि में बहुमूल्य, मर्मस्पर्शी एवं चिरस्मृत प्रदेय दिया है जो कि हमें गौरवान्वित ही करता है।

(२) 'नवीन' द्वारा नव प्रवर्तन—'नवीन' भी मौखिक प्रतिभा-सम्पन्न और सर्वोत्तमोत्तम विधान के स्रष्टा कवि थे। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व ने जनमानस में ही धार्मिक नूतन पथों को सजा, भाषों को बताना, पीलों को सगाया और चारों ओर का निवारित किया।

वर्तमान हिन्दी काव्य में जो आधुनिक निम्नतियों—यथा महात्मा गान्धी, प्रेमचन्द धारि पर प्रबन्ध-काव्य लिखे जा रहे हैं इस परिपाटी के मुस में हम 'नवीन' भी के 'प्राणार्पण' काव्य को रक्त स्रष्टे हैं और उद्युत्तरात् इस परम्परा का मूल्यांकन किया जा सकता है। कई समीक्षकों ने आधुनिक हिन्दी काव्य में 'नाचबाव' 'विप्लवबाव' 'प्रगतिबाव' एवं 'हामाबाव' के प्रवर्तन का ज्ये 'नवीन' भी को ही प्रशान किया है।

'नवीन' भी ने राष्ट्रीय-संभ्रम के उत्तेजना प्रदान करने में विद्रोहमयी कविताओं का सूजन किया था। सगरी इस प्रकार की कई कविताओं में विघ्न का तत्व प्रखरतापूर्वक विद्यमान है। उन्होंने हिन्दी में 'नाचबाव' की इस काव्य-धारा को जन्म प्रदान किया। इस प्रसंग में भी प्रकाशचन्द्र पुस्त ने लिखा है कि " 'नवीन' की कविता में राष्ट्रबाव का अन्तन पड़ता ही गया है और नजरूस के नाचबाव का प्राथमिक हिन्दी रूप भी हमें इन्हीं की रचना में मिलता है।<sup>१</sup>

आधुनिक हिन्दी काव्य में अद्विष्ट एवं विप्लव के गीत बितनी तेजस्विता तथा प्रभावोत्पादकता के साथ 'नवीन' भी ने गाये उसकी सारी गहरी दिखारी पकड़ी। हिन्दी में वे विप्लवबाव के संस्थापक हैं। डॉ. उदयनाथमल सिन्हा ने लिखा है कि 'यह ( 'नवीन' भी ) प्रवृत्तिवादी अद्विष्टाचार के प्रवर्तक हैं।<sup>२</sup>

'नवीन' भी की अद्विष्टपरक रचना में सामाजिक तथा धार्मिक दोनों ही क्षेत्रों में खोम एवं परिवर्तन की वृत्ति प्रखरतम रूप में छष्टिबोहर होती है। इसी आधार पर ही उन्हें 'प्रगतिबाव' का भी उच्चायक माना गया है। श्री बालक्रीवस्वाम झास्त्री ने लिखा है कि ' 'नवीन' भी ने धार्मिक कितरण की धनुचित पद्धति पर भी छष्टि फेंकी है और देश की परीची को देखकर ऐसा स्वर भी फूँक्य है जिससे यह मान्य हो कि वह बर्न-युद्ध चाहते हैं। अगर धार्मिक के प्रगतिबाव का आधार और कारण धार्मिक है तो यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि इसका

१ 'हिन्दी साहित्य की जनकारी परम्परा', पृष्ठ १२५।

२ डॉ. उदयनाथमल सिन्हा—'हिन्दी भाषा तथा साहित्य', आधुनिक काव्य, पृष्ठ १७०।

पहला बीच द्विष्टी में 'नबीन' ने बोया।<sup>१</sup> श्री देवीचरण रस्तोगी ने भी लिखा है कि "प्रगतिवाद का पहला सोनात बिन्दुवाद था। उनकी 'बिन्दु-मान' नामक कविता इसी प्रथम सोनात की प्रतिनिधि रचना है। उनकी 'बूटे पत्ते' नामक रचना की भी प्रगतिवादी काव्य-भारत के विकास में ऐतिहासिक महत्त्व है।"<sup>२</sup>

हिन्दी में 'हालाबाद' के प्रवर्तन का श्रेय बच्चन को दिया जाता है। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से, 'नबीन' ने ही सर्वप्रथम मधुबाब की काव्य में प्रवृत्तारण्य की। उनकी 'साकी' नामक कविता और 'उमिला' के कतिपय शंस इस तत्त्व के साक्षी हैं। इन रचनाओं में मधुबाब का प्रोढ़ रूप भी पाया जाता है। डॉ० राजेश्वर गुप्त ने कवि के जीवनकाल में ही लिखा था कि "हिन्दी के आलोचक यदि धमा करें तो भेद यह दावा है कि हिन्दी में मधुबाब के उच्चायक बच्चन नहीं, नबीन हैं। जब हायद बच्चन के किछोर हाथ प्याला धामने में दिक्कते या सङ्कुचते थे तब नबीन का कवि कहता था—'बूटे दो बूटे में बुझनेवाला मेरी प्यास नहीं।'<sup>३</sup> कवि की मृत्तु के पश्चात्, अपने एक संस्मरण में डॉ० चिन्मगर्तविह 'सुमन ने भी लिखा है कि "यही नहीं, बच्चन के जिस हालाबाद ने दो दसकों तक पाठकों को महमस्त बनाया, उसका सर्वप्रथम उत्स नबीन के उकनाते प्याले से ही छलका था।"<sup>४</sup> डॉ० बच्चन ने भी इस तत्त्व की स्वीकार किया है। इस सम्बन्ध में उनका विवरण अग्रपृष्ठ पर मीमा है—

"१९३२ में मेरी कविताओं का एक संग्रह 'दिरा हार' के नाम से प्रकाशित हो गया था। जहाँ तक सुझे स्मरण आता है, तब तक हाला, प्याला, मसुवाला, मसुसाला के प्रतीकों के प्रति मेरे मन में कोई आकर्षण न था। मेरे मन में उत समय का भावनाएँ हिलोरेँ मार रही थीं, उनके लिए मेरे इन प्रतीकों के चुनाव में नबीन की के उनसु ल वीन (साकी) ने कितनी ग्रह ही होगी, इसका अनुमान लगाना मेरे लिए कठिन है। हायद नबीन जी से प्रेरणा ले, प्रकृता स्वतः सम्प्रेषित हो जो भगवतीवरण बर्मा मो ऐसे वीत रच रहे थे—'बस मत कह देना धरे पिसाने वाले हम नहीं बिमुक्त हो बापस जाने जाने'। त्रिदेवी-मिसे के कुछ ही महीने बाद मैंने 'हालाबाद' जमर खोपाम का अनुवाद किया। धोर उसके बाद ही 'मसुसाला' और 'मसुवाला' के कतिपय वीतों की रचना की। तथाकथित हालाबाद का महत्त्व प्रवर्तन करने के लिए हिन्दी के सुप्रभे समालोचकों ने सुझे बिजनी गालियाँ दी हैं, काब्र, उनमें से कुछ के नबीन की धोर भगवतीवरण बर्मा के लिए भी सुरक्षित रखने क्योंकि इस मामले में पेशवस्त्री का काम इन्हीं मेरे बोगों संवेदों ने किया था।"<sup>५</sup>

इन सब तथ्यों के हांठे हुए भी, 'नबीन' का नै मधुबाब क प्रवर्तक होने का कमी भी

१ श्री आनटीबस्तम शास्त्री—साहित्य दर्शन' हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय-भारत, पृष्ठ १२०-१२१।

२ 'हिन्दी साहित्य का बिन्दुवाद' इतिहास, पृष्ठ ३२३।

३ साप्ताहिक 'नवरात्र', कोमल समिर्ष्यज्ञा क कवि नबीन बीपावली-बिठोवाक, सन् १९५०।

४ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', २० मई, १९६२, पृष्ठ ६।

५ डॉ० हर्षचन्द्राय 'बच्चन'—'नए पुराने भरोख', पृष्ठ २१।

बाधा नहीं किया । उन्होंने अपनी 'काको' कविता को अपनी मस्ती में ही लिखा है जो कि उनके व्यक्तित्व का प्रमुख धर्म थी ।<sup>१</sup>

'नवीन' की अपनी प्रवृत्ति के अनुसार अपने को किसी बार के कठपिरे में नहीं बाँधना चाहते ।<sup>२</sup> प्रगतिवादी दर्शन से उनका मतभेद था ।<sup>३</sup> श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त के मतानुसार, 'नवीन' अपनी प्रवृत्ति में तो प्रगतिवादी है किन्तु सिद्धांत में नहीं ।<sup>४</sup>

इस प्रकार 'नवीन' की ने अपनी तपोभूत लैकनी तथा माधुक हृदय से हिन्दी-वाङ्मय को अलग बटोहरा ही है; वह फिर अभिमतवर्गीय है ।

१ 'उन्होंने जब अपनी कविता 'काको'—प्याले हो प्याले में भरने वाली मेरी प्याल लड़ी—लिखी थी तो मैंने भी उस पर एक 'पैरोडी' लिखी थी जो 'जवाबी प्रताप' में ही दपी । इस हालाबादी कविता के लिखने के १३बाद ही जब से एक बार म्बासियर आये थे, तब मेरी उनसे इस कविता के विषय में बातचीत हुई थी । मैंने उनसे कहा था कि 'वास्तव में हालाबाद के प्रवर्तक तो हिन्दी में थाप है । इस पर उन्होंने सुभते अपनी प्रसहृषति प्रकट करते हुए, कहा था कि मैं 'हालाबाद के प्रवर्तक होने का कोई दावा नहीं करता । इस बार के प्रवर्तक होने से सुभे कीन बड़ा भारी श्रेय प्राप्त हो जायेगा ? साथ ही मैंने यह कविता 'काको' के रूप में या उतसी बड़ीभूत होकर नहीं लिखी, प्रसुद् अपनी नैतर्निक भाषणाधी के कारण और मस्ती में ही लिखी थी । मेरी उनसे यह कर्षा म्बासियर के 'जवाबी प्रताप' कार्यालय में ही हुई थी ।'—'जवाबी प्रताप' के मृतपूर्व सम्पादक और इन्दीर लक्ष्मण के वर्तमान सम्पादक-प्रायुक्त श्री सुविष्टिर कार्बब से हुई प्रत्यक्ष मेट (दिनांक ११-१२ १९६१) में बात ।

२ 'धीर किर, मैं यह भी नहीं जान पाया हूँ कि मैं कौन कौन हूँ । हमारे लीवाभ्य से हमारे आलोचना-शास्त्र ने बड़ी उन्नति की है । परिवर्नी, वाध्यवसायी विद्वाह विचारकों ने वर्तमान हिन्दी-साहित्य में धर्मिकानैक बाबों के दर्शन हमें कराये हैं । सुभ, जैसे प्रब्रान-सिमिटाभ्यस्य आनामनभ्रसाक या बहुकमीनित ये 'आलोचक' महानुभाव ; तेभ्य श्रीपुरवेभ्यो नमः । इन महानुभावों की आलोचना-तत्त्व-बीनिष्ठाओं के प्रकाश में हम देख सके हैं कि हमारे काभ्य-साहित्य में सामाबाद है, भाषाबाद है, कावरीय आभ्याबाद है, रीमाँचबाद है, वलापनबाद है, वर्म-संधयोत्तेजक प्रयतिबाद है, पू बीबावी-कोषण-समन्धीताबाद है, सामन्तबाद है, प्राकृतिक सुकम तीम्बर्यबाद है प्रवृत्ति-प्रतिपत्ति सीमातबाद है, सितली-रंय-कौर्द बाद है, प्राध्यात्मिकबाद है, धारकाबाद है, कबाधताबाद है, और, और भी न जाने कबा-बाद है । इन सब बाबों की कसती में मेरे पीत पाक धून जायेंगे, यह मैं जानता हूँ ।'  
—'प्रपलक भूनिष्ठा, पृष्ठ—४ ।

३ 'मेरा निवेदन है कि प्रवृत्तिशून्यता के नाम पर नहीं इस प्रकार के नव कल्प का रूप अपने रूप-वेपथि मनोविचारों का ऐसा प्रबल प्रवर्तक हो रहा हो, नहीं साहित्य का ऐतदिक मुम्माकन कैसे हो सकता है ?'—'नवाति', भूनिष्ठा, पृष्ठ ७ ।

४ श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त—'नया हिन्दी साहित्य', पृष्ठ १६० ।

## महत्वाकन

सामान्य अध्ययन—की बिनकर वे लिखा है कि "आपके व्यक्तिगत यात्रा और आपके स-मीत मरनेवासी नहीं है। उनके भीतर स्वयंसेवक भारत के मन का साथ मर चुका है। उनके भीतर आमावाय-युग की बड़े कोमल किरण बमकटी है जो एक प्रसन्न, निर्भीक और तपस्व कवि के निरखत हृदय पर पड़ी थी एक ऐसा कवि, जिसे बनाच-सिंहार और कबीरजी के लिए प्रसन्न नहीं था जो अपने उमड़ते हुए नाओं से रातोंरात मुक्त हो जाने को इंतज़ार बाधित होकर लिखता था कि मुझ फिर समरांमण की पुकार उसकी सीधा कर रही थी।"<sup>१</sup>

वास्तव में 'नबीन' की के कवि-व्यक्ति में विभिन्न प्रवृत्तियों के अपने धाँवें खोसी थी। स्वयंसेवकवादी काव्य-वृत्तियों के युग में उनका कवि-ओशन अपना सूत्र पाठ पाठा है। डॉ० श्रीमतीराज्यसुख के महातुसार, "द्वितीय-युग को आलोचनात्मक और निरक्षरतात्मक प्रवृत्ति विरोध से स्वयंसेवक और प्रभुयुति को उत्प्रेरणा मिली। यही स्वयंसेवकतावाद है। स्वयंसेवकतावाद मानवता स्वयंसेवकता यनोद्विष्ट है।"<sup>२</sup> कवि के चेतनात्मक-रूप में छायावादी काव्य-वृत्ति प्रभु उपादान प्राप्त होते हैं। एक दृष्टान्त वर्णित है—

मैं हूँ सम्मय साग-सज्जता,  
 फलकटा की हूँ आबिरलता  
 अक्षय अक्षरत मेह-अग्नि की,  
 'मैं हूँ उत्तमी हुई सरलता'।<sup>३</sup>

सुसनात्मक अध्ययन—'नबीन' की से ४५ वर्ष तक काव्य साधना थी। उन्होंने मुनि-द्वितीय-युग के तीन युगों को पार किया। इस दृष्टिकोण से, वे अपने काव्य में, अपने समकालीनों से कई विभेद रखते हैं। उनकी, समकालीनों से तुलना करने पर, यह न प्रष्ट हो सकता है।

जो मैनिनीतरण सुख तथा 'नबीन' की का काव्य, साम्य एवं वैपश्य के रूप प्रस्तुत होता है। दोनों ने ही राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-यात्रा के कयाद खोले हैं। दोनों ने ही आर्य महायोत्सवाव द्वितीय के लेख से प्रेरणा ग्रहण करके, उमिष्ठा की काव्यगत उत्प्रेरणा निवारण किया। दोनों ही महात्मा गांधी एवं आचार्य विनोबा भावे से प्रभावित हुए। मैं ही ही महावि विनोबा को परिपक्व कृतियों के रूप में अपनी भावात्मिका धरित करे हैं।

इन सब साम्य के होते हुए भी, दोनों में वैपश्य अन्तर है। पूरत की की राष्ट्रीयताओं में यहाँ अन्तर कुछ तथा आर्यनी दृष्टिकोणर हाती है, यही 'नबीन' में जोड़ तथा अन्तर। 'साकेत' में जो काव्यात्मक अन्तर, मानवीय बर्तों की अन्तरता, अन्तरात्मक अन्तर तथा प्रवृत्तियां अन्तर के अन्तर होते हैं, उनका 'उमिष्ठा' में अन्तर है। 'उमिष्ठा' में तीन से उसके अन्तर को जो विचारता गुणन रेखाएँ एवं प्रवृत्तियां अन्तर की हैं बड़े साकेत

१ 'बट-वीर्य', पृष्ठ ३५।

२ 'आधुनिक काव्य यात्रा', वर्तमान काव्य की यात्रा, वर्तमान युग, पृष्ठ २०७।

३ 'उमिष्ठा', पृष्ठ ५०।

की धीमाओं में नहीं दिखाई पड़ती । साकेत ने जो ऐतिहासिक तथा महिमामय स्तान बनाया, वह 'जमिना के नाम में ही नहीं सिखाया । पुस्तक ने गांधीवार के व्यावहारिक पक्ष को अपनाया; परन्तु 'नवीन' की ने गांधीवार का भावनामय रूप में व्यक्तन किया, उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं का उद्घाटन किया । पुस्तक ने ग्रामिण यज्ञ के व्यावहारिक पक्षों को बड़ी सरसता के साथ अपने काव्य में बाँधा है, परन्तु 'नवीन' की ने उनके प्रवर्तक के व्यक्तित्व तथा सम्बन्धों को सांस्कृतिक सुत्यांजन की बाणी प्रदान की है ।

पुस्तक की साधना के कवि है श्री 'नवीन' की प्रतिभा के । दोनों के वैष्णव हाते हुए भी राम-भक्ति की भाषा पुस्तक में प्रयुक्त है; परन्तु 'नवीन' के काव्य पर वैष्णव प्रभाव पुस्तक से धीकृत हुए हैं । पुस्तक में मर्यादा का प्राबल्य है, 'नवीन' की में मस्ती का । दोनों ने ही सांस्कृतिक भूमिका को काफ़ी महत्त्व प्रदान किया है, परन्तु उसका जितना संश्लिष्ट तथा समाजोपयोगी उद्घाटन पुस्तक को कर सके, 'नवीन' की से सम्भव नहीं था । 'नवीन' की ने राजनीति में सक्रिय भाग लिया जबकि पुस्तक की की सहानुभूति ही इस विद्या में थी । एक ने अपने कर्मों से धीरे-धीरे अपनी सैकतों से राष्ट्रीय-संघाम में बटकर हिस्सा लिया । 'नवीन' की ने दो बातों का ही पुनः-निष्ठ बने हैं । राजनीतिक व्यस्तता ने 'नवीन' के मार्ग में काफ़ी रोड़े धटकाये जिनसे उनका काव्य भी मर्यादा-समय पुस्तक की साहित्य की शक्ति समाप्त होता । हिन्दी काव्य के इतिहास में जो स्तान पुस्तक की ने बनाया; वह 'नवीन' की नहीं बना पाये । कवि का राष्ट्रीय संघर्ष ही इसमें प्रमुख कार्यकारी रहा ।

श्री माकनसाल जतुर्वेदी 'एक भारतीय धारणा' और 'नवीन' की—बहुत कुछ धर्मों में एक ही मोक्ष में संतुष्ट करते हैं । दोनों ही राष्ट्रीय संघर्ष में बूझ, कारगुह की यात्राएँ को पर-गृहस्थों के सुख की सिर्जना के धीरे-धीरे संस्वरी के साथ ही धारणा भारतमाता की भी पूर्ण धरना की । दोनों ने राष्ट्रीय को संरक्षित पर लिया ।

मस्ती ने हिन्दी को सा प्रतिभाएँ हैं—एक एक भारतीय धारणा' माकनसाल जतुर्वेदी द्वारा बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' । माकनसाल जतुर्वेदी, पम्बीको द्वारा की गई नई संघाम की साम्प्रदायिकता के रंग में रंग गए, जोनों के पीछे सुनाने सके धीरे-धीरे साक्षात्कृत साक्ष्य की विनोदित उदात्तता की धीरे-धीरे बड़े बने । बालकृष्ण वर्मा 'नवीन' ने संघाम को संघाम माना जीवन को धारणा का प्रतिष्ठान माना । ऐसा व्यक्ति जिसेही कहसता है क्योंकि उसका एक, धीमाओं को नहीं जानता बन्धनों को नहीं मानता । दोनों कवि बहुत दूर तक समाजी ने पर एक-दूसरे के समान उल्टे-धरने में (धीरे-धीरे) बूझ हो जाता था ता धीरे-धीरे का स्पष्ट चित्र धारणा रचता था । एक की व्यास शक्ति की महति-वर्माजुगामिनी की तो धीरे-धीरे की प्रचण्ड बुद्धि । 'नवीन' ने प्रकृत मानव का रूप धारण कर, जब प्रेम की धमिली छोड़ी वा विरोध का संघर्ष पूँजा तो वह महाभारत के भीष्मपुत्र की शक्ति नर और गायपक्ष की एकतरफ़ा पा पाये ।<sup>१</sup>

श्री भीष्म वर्मा तथा श्री रामकृष्ण वर्मा ने लिखा है कि 'माकनसाल में एक लोच्य धारणा' लिखसत है । इसी धारणा का पावन 'नवीन' ने भी किया था किन्तु उनमें

१ 'राज्यपाली', सम्पादकीय, स्वर्णाय 'नवीन' की । जून १९३६, पृष्ठ-२३ ।

एतस्यवाद की अपेक्षा माबाबेध का प्रामाण्य है। साधारण धर्मों में जैसे ज्वालामुखी का ध्वनिप्रवाह है।<sup>१</sup> उक्त दोनों समीक्षकों ने दोनों की ही भाषा को ऊबड़-खाबड़ बताया है।<sup>२</sup>

'एक भारतीय धारणा' का राष्ट्रवाद बड़ा बस्तुररक एवं रहस्यमय है, बड़ा 'नवीन' का भावपरक। जतुबेदी जी में 'नवीन' का ध्येय उतने धर्मों में प्राप्त नहीं। राष्ट्रीय प्रतीकों की निवृत्ती योजना जतुबेदी जी ने की; उतनी 'नवीन' ने नहीं। 'नवीन' का कवि बिच सरस तथा सुमय बना रहा, परन्तु जतुबेदी जी में दुस्वृता की मात्रा अधिक है। नवीन की अपेक्षा जतुबेदी जी अधिक सुनिष्ठ-प्रधान हैं। दोनों के मीत सुन्दर हैं। धारार्थ नन्ददुसारे बाबपेयी ने भी लिखा है कि उनके (एक भारतीय धारणा के) मुक्तकों में प्रगोशात्मक सीप्यब रूठा है, जो साधारणत सुनिष्ठ-प्रिय कवियों में नहीं देखा जाता। यही बात 'नवीन' जी के सम्बन्ध में भी लागू होती है।<sup>३</sup>

जतुबेदी जी की अपेक्षा 'नवीन' में प्रयीनात्मक सीम्यर्प अधिक है। संगीतमयता तथा उसके शास्त्रोक्त साधार का बिडना 'नवीन' ने ग्रहण एवं प्रस्तुत किया, उतना 'एक भारतीय धारणा' ने नहीं। दोनों में बैप्युब-संस्कार है, परन्तु नवीन में ये संस्कार अधिक उमर कर पाये हैं। 'नवीन' का कवि, सबा-सर्बदा स्पष्ट तथा प्राब सरस रहा है, परन्तु जतुबेदी जी का कवि, कई स्वार्थों पर उलभ मया है। उर्धु के प्रभाव की दोनों में ग्रहण किया परन्तु यह प्रभाव 'नवीन' की अपेक्षा 'एक भारतीय धारणा' पर अधिक परका मा सफटा है। नवीन अपने जीवन के उत्तरकाल में इस प्रभाव से मुक्त हा मये थे परन्तु एक भारतीय धारणा पर यह मात्र को बिद्यमान है। संस्कृत-निष्ठ हिन्दु के प्रति निवृत्ती निष्ठा तथा कर्मगत 'नवीन' में इच्छिनोबर होती है, उतनी जतुबेदी जी में नहीं। एक भारतीय धारणा का काव्य 'बन्धोक्ति का काव्य है, जबकि 'नवीन' का कवक' का।

काव्य-श्रवण एवं अनुपात के इच्छिनोय से 'नवीन' जतुबेदी जी से भागे ही रीकते हैं। दोनों को ही प्रकापन प्रभाव से स्नेह रहा, इसलिए दोनों की ही कृतिमाँ समय पर प्रकापित नहीं हुईं। 'एक भारतीय धारणा' का कवि-व्यक्तिरत्व सिर्फ मुक्तककार ही बना रहा, जबकि 'नवीन' मुक्तककार के अतिरिक्त प्रबन्धकार भी थे। जतुबेदी जी ने प्रबन्धकाव्य का सृजन नहीं किया, जबकि 'नवीन' ने महाकाव्य तथा साह्यकाव्य का निर्माण किया। गरीब की दोनों के ही इच्छेव थे परन्तु जहाँ एक भारतीय धारणा की अविध्यनिष्ठ स्फुट मुक्तक-बिडायों तक ही सीमित रह गई, जहाँ 'नवीन' ने साह्य-काव्य के संगठित कृति के रूप में उनके व्यक्तित्व की बरिमा का धारकन किया।

एक भारतीय धारणा की अपेक्षा 'नवीन' का कवि-व्यक्तिरत्व तथा काव्य-रीतिमाँ, अधिक व्यापक एवं प्रसस्त हैं। 'ठनिसा' की महती उद्गमावना तथा प्राणार्पण की ही भाषा का जतुबेदी जी में निवृत्त अभाव है। दोनों की प्रसिद्धि का साधार राष्ट्रीयता है, परन्तु दोनों

१. सासुनिक हिन्दु काव्य, निवेदन, पृष्ठ १० ११।

२. वही, पृष्ठ १६९।

३. धारार्थ नन्ददुसारे बाबपेयी—'हिन्दु साहित्य : बीसवीं शताब्दी', चिन्नहि,



में ही प्रेमपत्र के उद्घाटन का प्राधान्य है। पत्र के अतिरिक्त दोनों ने ही पत्र में ही काम किया। दोनों ही निबन्धकार कहानोकार, गद्य-काव्य लेखक तथा सुन्दर बक्ता रहे हैं। 'नवीन' की प्रपेक्षा 'एक भारतीय धारणा' का पत्र, अधिक बहुमुखी तथा प्रचलित है। 'एक भारतीय धारणा' मासिककार भी है। 'एक भारतीय धारणा' को बक्षुत्व-कला बहोई प्रसंकारमयी पीबु-बाणी रखी है, बहोई 'नवीन' में प्रोज विहंगार तथा प्रभावोत्साहकता थी। एक में कवित्व की प्रधानता है; दूसरे में शीरर का। 'नवीन' की जितने समय तक परिस्थितियों में तब राजनीति में सक्रिय रहे, उतने बक्षुबेरी की नहीं।

इस प्रकार राष्ट्रीय-संस्कृति काव्य के इन दो अग्रदूतों के कवि-व्यक्तित्व में साम्य के साथ वैपम्य भी है। दोनों ने पत्रकार के भावर्ष भी प्रस्तुत किये। 'प्रभा' तथा 'प्रताप' का दोनों ने ही सम्पादन किया। बहोई 'एक भारतीय धारणा' ने 'प्रभा' का प्रवर्तन किया बहोई 'नवीन' को ने उसका उन्नयन। 'प्रताप' में 'नवीन' को ही अधिक क्याति मिली। 'नवीन' की द्वारा सिधे अग्रदूतों को जितना अन्य पत्रों में वाकित्व प्राप्त हुआ, उतना बक्षुबेरी की को नहीं।

दोनों ही राष्ट्रीय-कवियों ने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्यबाण की भीबुद्धि की है। 'नवीन' में 'एक भारतीय धारणा' की प्रपेक्षा राष्ट्रीय के सांस्कृतिक पत्र को अधिक विस्तार मिला है। 'नवीन' की प्रपेक्षा 'एक भारतीय धारणा' में सामयिकता अधिक है। 'नवीन' की सांस्कृतिक सूनिष्ठा ने उन्हे सामयिक नहीं बनने दिया। 'एक भारतीय धारणा' के राष्ट्रीय-काव्य के अर्थगत के लिए तरकासीन बटनाओं की सूचनाएँ आवश्यक हैं, परन्तु 'नवीन' के लिए आवश्यक होती हुई भी उतनी आवश्यक नहीं है। दोनों ही कवियों ने तिलक तथा बखेरा से प्रभावित होकर नयी शक्ति व निद्रोह के प्रनुवाय में अन्तर उपस्थित कर दिया है। 'नवीन' का कवि इस विधा में अधिक आच्छन्नित सम्पन्न है। 'नवीन' समाज तथा अर्थ की समस्याओं की ओर भी मुझे परन्तु एक भारतीय धारणा ने इस विधा में अपना अधिक विस्तार नहीं किया। इस प्रकार 'एक भारतीय धारणा' में राष्ट्रीय की सजगता की प्रधानता है; जबकि 'नवीन' में उसके प्रोज तथा सांस्कृतिक-पत्र की।

शिपारामचररा पुत्र एवं 'नवीन' की दोनों ही ने राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य बाण में अग्रपाहल किया। पुत्र भी ने उसके सांस्कृतिक पार्स को सजगता प्रधान की, 'नवीन' ने राष्ट्रीय का की। इस बाण के अन्तर्गत 'नवीन' को पुत्र भी की प्रपेक्षा अधिक क्याति प्राप्त हुई। दोनों ही महारत्ना गान्धी बखेराबंकर विचारों तथा बिनोबा से प्रभावित हुए। दोनों ने ही प्रबन्ध एवं सुकृत-काव्य का सूजन किया। उर्मिता बखेरी कृति पुत्र-साहित्य में बुरलम है।

पुत्र की के विषय में डॉ. नरोत्तर के सतानुसार, "द्वितीय में गान्धी की के उत्प-विस्तार की प्रत्यक्ष अमिभ्यवित केवल एक ही कवि में मिलती है और वास्तव में बहोई एक ऐसा कवि है जो अपनी साहित्यिक भावना के बल पर बखेरी अपनी शैतना का अर्थ बना सका है। 'नवीन' में श्रीबाण का मान-यत्न ही था पाया है। बखेरा की पर सिखित दोनों के अग्रदूतों में से शान की मद्रिमा तथा अरिज-काव्य का सुन्दर निबर्तन प्राप्त होता है। अरतोत्सर्ग' में

वहाँ बचना-बिस्तार प्रकृत्यात्मकता तथा सारिकता के दर्शन होते हैं वहाँ 'प्राणार्णव' में उदात्ता श्लोक, व्यक्तित्व की महिमा तथा संस्कृत-निष्ठ भाषा की सम्पदा मिली है। गुप्त की तथा नबीन को, दोनों ने अपने काव्य में कल्याण को काफी महत्व प्रदान किया है परन्तु नबीन' की में यह कल्याण त्रिकोण का भी रूप धारण कर लेती है। गुप्त की की कला अहाँ चिन्तनमय है, वहाँ नबीन की कला योविमय। राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता के क्षेत्र में मल्ले ही काव्य-साधना गुप्त की में अधिक हो, परन्तु नबीन' का प्रभाव तथा श्लोक अविस्मरणीय है।

'दिनकर' और 'नबीन' में स्थिति राष्ट्रीयता श्लोक तथा मनस-मान का स्वर प्रायः एक समान है। माव-पद्य में दोनों समकक्ष हैं परन्तु कला पक्ष 'दिनकर' का अधिक प्रौढ़ है। डॉ. रवीन्द्रप्रसाद बर्मन के मतानुसार "दिनकर' के काव्य में नबीन से अधिक श्रवासा है। वे स्थिति का विविध रूपों में प्राकृत्य करते हैं।'

प्राचार्य नम्बदुसारे बाबुपेयी ने लिखा है कि रामधारीसिंह 'दिनकर' का काव्य इन दोनों ('नबीन' तथा 'एक भारतीय घातना') में बहुत पोछे का है किन्तु परिमाण में और काव्य-प्रकार में भी कदाचित् उनसे घाये बढ़ गया है। वहाँ हमें स्मरण रहना होगा कि कवि 'नबीन' और माखनमाल देव-वेश के व्यावहारिक कार्य और उसमें उररक जानेवासी प्रशान्तियों में व्यस्त रहते हैं जबकि 'दिनकर' का रास्ता अधिक सुगम और निराश्रय है। 'दिनकर' की 'उर्वशी' को जो सम्मान पोछे ही समय में मिल गया वह 'उर्वशी' को घनी तक प्राप्त नहीं हो सका है। इन सब तथ्यों के रूढ़े हुए भी, 'दिनकर' को नबीन में घनता बिना में प्रभावित किया है।

श्रीमती सुमद्राकुमारी चौहान तथा 'नबीन' का काव्य भी राष्ट्रीय-सांस्कृतिक शरातक पर धा विस्तार है। सुमद्रा की में वहाँ सरकता तथा प्रसार गुण की प्रभावता है वहाँ 'नबीन' में श्लोक तथा प्रायेय की। चिप्लब-नायन तथा पराक्रम-शीत' के समान सुमद्रा की की 'भाँसी की रानी' तथा 'बीरों का कैसा हो बसम्त' को भी शक्ति मिली यद्यपि दोनों की शक्ति में 'नबीन' का पक्ष प्रचली है। दिनकर के समान, सुमद्रा भी भी कवि से प्रभावित हुई है।

राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-भार के प्रचली कवि भी मैमितीधर गुप्त भी माखनमाल चतुर्वेदी, की सिधाराचमधरण गुप्त, श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' और श्रीमती सुमद्राकुमारी चौहान के काव्य के साथ 'नबीन' के काव्य की तुलना कर लेने के परभाव इनमें छायावादी काव्य-भार की और भी उन्मुख होगा चाहिये जिससे 'वृहत्पेयी में प्रभाव, निरुसा और पन्त के नाम पाते हैं।

'प्रसाव' तथा 'नबीन' दोनों में सांस्कृतिक विषयों को घनने काव्य का विषय बनाया और प्रेम तथा यौवन के भीत माये। सांस्कृतिक विषयों को जितना बिस्तार तथा घालीनता के साथ प्रसार उच्चरचित कर सके हैं वह नबीन' के बरा की बात नहीं थी। 'प्रसाव' पर राष्ट्रवाद का परोस प्रभाव पड़ा और उनके काव्य की वह पृष्ठभूमि बनकर घाया है। 'नबीन' की शक्ति का ही वह सुवाधार है।

१ डॉ० रवीन्द्रप्रसाद बर्मा—'हिन्दी काव्य पर घालीन प्रभाव', पृष्ठ २३६।

२ प्राचार्य नम्बदुसारे बाबुपेयी—'हिन्दी साहित्य—श्रीमती शताब्दी', पृष्ठ ५।

में ही प्रेमपद्य के चर्चाटन का प्राणाम्य है। पद्य का पतिरिक्त, दोनों में ही पद्य में भी काम किया। दोनों ही निरन्तरकार, कल्पनीकार, पद्य-काव्य सेकक तथा सुन्दर बनता रहे हैं। 'नवीन' की प्रपेक्षा एक भारतीय धारणा का गद्य, अधिक बहुमुखी तथा प्रशस्त है। 'एक भारतीय धारणा' गद्यकार भी है। एक भारतीय धारणा की बनसुत्व-कला यहाँ धर्मेकारमयी पीयूष-वाणी रही है, यहाँ 'नवीन' में प्रोब विद्युत्वाव तथा प्रभावोरसारकटा की। एक में कवित्व की प्रधानता है दूसरे में बीरत्व की। 'नवीन' की जितने समय तक परिस्थितियों में तथा राजनीति में कवित्व रहे, उतने कवुर्वेही भी नहीं।

इस प्रकार राष्ट्रीय-संस्कृति काव्य के इन दो ध्ययुतों के कवि-व्यक्तित्व में साम्य के साथ वैपय भी है। दोनों ने पत्रकार के धारण भी प्रस्तुत किया। 'प्रमा' तथा 'प्रताप' का दोनों ने ही सम्पादन किया। यहाँ 'एक भारतीय धारणा' ने 'प्रमा' का प्रवर्तन किया यहाँ 'नवीन' को ने उचका सम्मनन। 'प्रताप' में 'नवीन' को ही अधिक स्वाति मिली। 'नवीन' की द्वारा लिखे ध्ययुतों को जितना धन्य पत्रों में वायित्व प्राप्त हुआ, उतना कवुर्वेही को भी नहीं।

दोनों ही राष्ट्रीय-कवियों ने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-कार की भीवृद्धि की है। 'नवीन' में 'एक भारतीय धारणा' की प्रपेक्षा राष्ट्रवाव के सांस्कृतिक पक्ष को अधिक विस्तार मिला है। 'नवीन' की प्रपेक्षा 'एक भारतीय धारणा' में सामयिकता अधिक है। 'नवीन' की सांस्कृतिक भूमिका ने उन्हे सामयिक नहीं बनने दिया। 'एक भारतीय धारणा' के राष्ट्रीय-काव्य के ध्ययन के लिए उरकाकीन बटनाओं की सूचनाएँ प्रावस्यक है परन्तु 'नवीन' के लिए प्रावस्यक हीठी हुई भी उतनी प्रावस्यक नहीं है। दोनों ही कवियों ने तिलक तथा यण्डेय की से प्रभावित होकर भी कवित्व व विरोह के धनुषाव में प्रन्तर उपस्थित कर दिया है। 'नवीन' का कवि इस विधा में अधिक प्रावृत्तित सम्मन है। 'नवीन' समाज तथा धर्म की समस्याओं की धोर भी मुझे परन्तु 'एक भारतीय धारणा' ने इस विधा में अपना अधिक विस्तार नहीं किया। इस प्रकार 'एक भारतीय धारणा' में राष्ट्रवाव की उचनता की प्रधानता है; जबकि 'नवीन' में उसके प्रोब तथा सांस्कृतिक-पक्ष की।

सियारामधररत सुष्ठ एवं 'नवीन' की दोनों ही ने राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य-कार में धनवाहन किया। पुष्ठ की ने उसके सांस्कृतिक पार्श्व को उचनता प्रधान की 'नवीन' ने राष्ट्रीय रूप को। इस धारा के धन्यवेत 'नवीन' को पुष्ठ की की प्रपेक्षा अधिक स्वाति प्राप्त हुई। दोनों ही महत्त्वा पान्की, गणीयकंकर विद्यापी तथा विनोबा से प्रभावित हुए। दोनों ने ही प्रवन्ध एवं मुक्तक-काव्य का सूजन किया। 'उपिना बैठी कृति पुष्ठ-साहित्य में कुर्जन है।

पुष्ठ की के विषय में डॉ० नगेन्द्र के मतानुसार, "हिन्दी में पान्की की के उरव-विन्दन की प्रत्यक्ष धमिध्वित केवल एक ही कवि में मिलती है धोर बास्टव में यही एक ऐसा कवि है जो 'पनी साहित्य प्रावता के बल पर उसे धनवी उचनता का धन बना सका है। ' 'नवीन' में 'वाव का भाव-पक्ष ही या पाया है। गणीय की पर लिखित दोनों के कव्य-काव्यों में धन की महिमा तथा कवि-काव्य का सुन्दर निवर्जन प्राप्त होता है। 'धालोत्तर्भ' में

वहाँ बटना-बिखार प्रबन्धात्मकता तथा सारिक्कता के दर्शन होते हैं वहाँ 'प्राणार्णव' में उद्यत्ता भोज व्यक्तित्व की महिमा तथा संस्कृत-निष्ठ भाषा को सम्पन्न मिली है। पुठ जी तथा नबीन जो, दोनों ने धरने काम्य में कल्पना को काँची महत्व प्रदान किया है परन्तु नबीन जी में यह कल्पना शिरोह का भी रूप धारण कर लेती है। पुठ जी की कथा वहाँ बिलम्बमय है, वहाँ 'नबीन' की कला मोहितमय। राष्ट्रीय-सांस्कृतिक बहिष्ता के क्षेत्र में भले ही काम्य-साधना पुठ जी में अधिक हो परन्तु नबीन का प्रभाव तथा भोज अधिक प्रचलित है।

'दिनकर' और 'नबीन' में अत्यन्त राष्ट्रीयता भोज तथा जन-समान का स्वर प्राप्त एक समान है। भाव-व्यक्त में दोनों समरूप हैं परन्तु 'कथा पत्र' 'दिनकर' का अधिक प्रौढ़ है। डॉ. रवीन्द्रप्रसाद वर्मा के मतानुसार " 'दिनकर' के काव्य में नबीन से अधिक ज्ञाना है। वे अत्यन्त का विविध रूपों में व्यक्त करते हैं। "

भाषार्थ मन्मथसूतार बाजपेयी ने लिखा है कि रामधारीसिंह 'दिनकर' का काव्य इन दोनों ('नबीन' तथा 'एक भारतीय वादना') से बहुत पाठ्य का है किन्तु परिमाण में और काव्य प्रकर्ष में भी कदाचित् उनके साथे बढ़ गया है। यहाँ हमें स्मरण रखना होगा कि कवि 'नबीन' और माकनलाह देव-नेशा के व्यावहारिक कार्य और उनका अन्तर्गत होनेवाली प्रयत्नियों में व्यस्त रहते हैं जबकि 'दिनकर' का राला अधिक मुगम और निरतार है। 'दिनकर' की 'उर्वशी' को भी सम्मान बोधे ही समय में मिल गया वह 'उर्वशी' को भसी तक प्राप्त नहीं हो सका है। इन सब वर्णों के रहते हुए भी 'दिनकर' को नबीन ने परतो दिया में प्रभावित किया है।

श्रीमती सुमद्रासुमारी चौहान तथा 'नबीन' का काव्य भी राष्ट्रीय-सांस्कृतिक बलवत्त पर सा मिलता है। सुमद्रा जी में वहाँ सरलता तथा प्रभाव युक्त की प्रधानता है वहाँ 'नबीन' में भोज तथा भावभंग की। विष्णु-नामन तथा 'पद्य-गीत' के समान, सुमद्रा जी की 'भौषी की राजी' तथा 'भीरों का कैना हो बहम्प' को भी बराबरी मिली, यद्यपि दोनों की कथा में 'नबीन' का पक्ष प्रचली है। दिनकर के समान सुमद्रा जी भी कवि से प्रभावित हुई हैं।

राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-धारा के प्रचली बहिष्ता की शैक्तीकरण पुठ जी माधनलाह बतुर्वी, श्री विद्यारामचरण पुठ, श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' और श्रीमती सुमद्रासुमारी चौहान के काव्य के साथ 'नबीन' के काव्य की तुलना कर लेने के पश्चात्, इमें सामान्यता का परोल प्रभाव पड़ा और उनके काव्य की यह पुच्छुमि बनकर आया है। 'नबीन' की कथा के नाम धरते हैं।

'प्रसाद' तथा 'नबीन', दोनों ने सांस्कृतिक विषयों को धरने काम्य का विषय बनाया और प्रेम तथा जीवन के पीठ माये। सांस्कृतिक विषयों को जितना बिलगा तथा धारीकता के साथ प्रसाद उद्घाटित कर सके हैं वह 'नबीन' के बस की बात नहीं थी। 'प्रसाद' पर राष्ट्रवाद का परोल प्रभाव पड़ा और उनके काव्य की यह पुच्छुमि बनकर आया है। 'नबीन' की कथा का ही वह सुसाधार है।

१ डॉ० रवीन्द्रप्रसाद वर्मा — 'हिन्दी काव्य पर परिचय प्रकाश', पृष्ठ २३६।

२ भाषार्थ मन्मथसूतार बाजपेयी — 'हिन्दी साहित्य — बीसवीं शताब्दी', पृष्ठ ४।

'प्रसाद' तथा 'नबीन' के प्रेम-काव्य तथा श्रृंगारिक रचनाओं में समानता होते हुए भी विषमता प्रत्यक्ष है। दोनों के अग्रकाल प्रणय-भावनाएं ही इस श्रृंगार को जन्म दिया। दोनों ने ही जीवन-भंग को मोतसदा प्रयास की। दोनों ने ही प्रेम की परिणति प्रणय-रस में की है। दोनों ने ही बिछानुसृष्टि का काव्यमय श्रृंगार किया है। प्रसाद ने जितनी काव्य-प्रतिभा साधुर्भूत तथा प्रमद्विष्णुता इस विद्या में उद्घाटित की वह 'नबीन' में नहीं है। धाँसु जेसी कृति नबीन के काव्य में अनुपलब्ध है। दोनों के काव्य में प्रकृति-चित्रण एवं गीति-काव्य की प्रधानता है। इस विद्या में प्रसाद का कला रस जितना परिभाषित है, उतना नबीन का नहीं। 'नबीन' ने आस्तोच संकीर्ण के पक्ष को जितनी प्रयुक्तता तथा प्रमद्विष्णु प्रदान की है, वह 'प्रसाद' में, उतने अनुपात में नहीं पा पाई है।

सुकककार के प्रतिरिक्त दोनों का प्रबन्धकार भी साहित्य की भी-वृद्धि करवा है। 'अमावसी की माया के दर्शन कहीं नहीं 'बनिसा' में भी हो जाते हैं। दोनों ही भौतिकवादा, विज्ञान नवयुग की शैतना सादि के प्रभावों को अपने महाकाव्यों में व्यक्त करते हैं। गान्धीवादी शैतना ने दोनों महाकाव्यों को प्रभावित किया है, परन्तु 'नबीन' को अधिक। दोनों ही पाकिस्तान और विज्ञान का विरोध करते हैं और बुद्धि की अपेक्षा जीवन में अज्ञान के महत्व को निरूपित करते हैं। अमावसी-या महाकाव्यरस विराट् जीवन रचने तथा प्रौढ़ कवित्व-शक्ति, 'बनिसा' में अनुपलब्ध है। दोनों को भौतिकवादा बन्धीय है।

'निरासा' तथा 'नबीन' दोनों ही कुछ क्षेत्रों में काफी निष्कट दृष्टिगोचर होते हैं। दोनों ने ही गरल तथा उपेक्षा-गान किया है। दोनों का ही व्यक्तित्व तथा पौरुष, अनिश्चयीय है। दोनों की ही मस्ती फनकड़ता तथा निरुत्साहन अपनी बरोबर है। दोनों ने ही जिज्ञेह को अपने जीवन तथा काव्य में मुद्रितान् किया। दोनों की ही कविताओं में शोक तथा ठेकस्वित्ता के दर्शन होते हैं। दोनों ने ही सुकक तथा प्रबन्ध-काव्यों को सृष्टि की है। दोनों ने ही संस्कारों के रूप में अपने संकीर्ण-प्रेम को प्राप्त किया। दोनों के संकीर्ण होने तथा पापक के रूप में दो मत नहीं हो सकते।

'निरासा' की माया का शोक 'नबीन' में है। 'नबीन' के अज्ञान-गान की आत्मस्वित्ता का अनुसाह 'निरासा' के गीतों में नहीं मिलता। 'राम की शक्ति पूजा तथा तुलसीदास' की माया 'नबीन' के प्राचार्यस में देखी जा सकती है। फिर भी 'निरासा' माया की विद्या में 'नबीन' से घाब बढ़ गये हैं।

इन दोनों कवियों में यह अन्तर दृष्टिगोचर होता है कि 'निरासा' साहित्यिक परम्पराओं व शैलियों के अधिक समीप थे। माया तथा अज्ञानों में अधिक परिभाषित एवं सकारणता थी। 'नबीन' के अज्ञानों में उतने ही प्रखर वेग के होते हुए भी उनकी सकारणता में अनेक स्वानों पर अग्रवर्णित प्रयोग भी मिलते हैं। यद्यपि वे अपने विशेष-व्यक्तित्व के परिचायक हैं। 'निरासा' की ने हिन्दी काव्य को जितना प्रभावित किया उतना 'नबीन' ने नहीं। दोनों ने ही प्रायः एक साथ ही काव्य-नैष्ठिक प्रारम्भ किया था परन्तु 'निरासा' ने जो साहित्यिक तथा परम्परागत कृति में अपना स्थान बनाया उससे 'नबीन' अपने को दूर ही रखे रहे।

पन्त तथा 'नबीन' ने प्रेम प्रकृति तथा सामाजिक-धार्मिक स्थिति के क्षेत्र में अपने सम्पन्न किये हैं। 'नबीन' की पन्त से बरिष्ठ है। दोनों ने ही गीति-काव्य की कवितां जोड़ीं

परन्तु 'पंथ'-सा मायुर्न तथा मोडि-काव्य-द्विज 'नबीन' के काव्य में अपनी उपस्थिति नहीं पाता । उपरिनिष्ठित कवियों के प्रतिरिक्त 'नबीन' के काव्य की तुलना महादेवी बर्मा, भगवतीचरण बर्मा एवं बच्चन से की जा सकती है ।

'नबीन' तथा 'महादेवी बर्मा' के मोडि-काव्य विरहानुभूति एवं कल्याणवाद की स्थिति समान होते हुए भी, पर्याप्त दीपमयवी हैं । 'नबीन' के रहस्यवाद में दार्शनिकता का उतना प्रबल रूप नहीं दिखाई देता जितना महादेवी जी का । 'नबीन' का छास्त्रीय संगीत पक्ष प्रबल पुष्ट है, परन्तु महादेवी बर्मा का काव्य-सौन्दर्य उच्चतर है । कल्याण की छाया से दोनों का काव्य प्रनिभूत है ।

'नबीन' तथा भगवतीचरण बर्मा की श्रान्ति, मत्स्य तथा मधुवादी प्रवृत्तियों में सादृश्य है । श्रान्ति तथा मत्स्य के क्षेत्र में 'नबीन' धारक है । दोनों में धार्मिक विषयताओं की भार भी ध्यान दिया है । 'नबीन' में बहुत आलोच्य है, वहीं भगवती बाबू में प्रसन्नियुता । 'नबीन' के मधुवाद का बर्मा जी तथा बच्चन ने काफी सम्बर्द्धन किया ।

'नबीन' तथा 'बच्चन' का क्षेत्र प्रेम तथा मधुवाद में समान दिखाई पड़ने पर भी असमान है । 'बच्चन' के प्रणय में नवीनता है । 'नबीन' ने बहुत भावना का प्रधानता की वहीं बच्चन ने उसके प्रभाव-पक्ष को । 'नबीन' के मधुवाद के बीच को वट-वृक्ष में परिणत करने का श्रेय 'बच्चन' को ही है । हिन्दी के प्राबुनिक कवियों के प्रतिरिक्त 'नबीन' की तुलना प्रथम भाषा के कवियों से भी की जा सकती है ।

'नबीन' तथा माइकेल मधुसूदन बस ने सांस्कृतिक तथा वैचारिक असमानता होते हुए भी 'उमिषा' में बहुत मौलिकता नूतन हृदयकोण तथा अनिन्ध प्रसंगानुभावनाएँ हैं जो कि 'मिथ्या-वच' में उपलब्ध हैं । 'नबीन' ने विधानात्मक पार्श्व को अपनी उर्वर कल्पना-शक्ति से परिवर्तन किया और मधुसूदन ने विधानात्मक पक्ष को उद्घाटित करके, हमारे धर्म-धर्म तथा विवेक-बुद्धि को सजग उत्तर्क तथा उत्पुस्तित कर दिया ।

अधेजी कवियों में 'नबीन' रोली के निकट है । रोली का प्रोज काव्य प्रवाह तथा प्रसन्नियुता 'नबीन' के राष्ट्रीय-काव्य में प्राप्त है । रोली को प्रान्तिमयी वाली का वर्चस्व 'नबीन' का भी पापेन रहा है । रोली को कविता प्रोड टू वेल् विण्ड की काव्य-मति तथा ऐक्यता 'नबीन' में है । रोली के 'छोकाकृत विचारों को प्रकट करने वाले गीत' उमिषा के विचार में दबे जा सकते हैं । 'नबीन' की किसी भी ऐम्प्टिक कवि के द्वारा विशेष रूप से प्रभावित नहीं हुए, क्योंकि उनकी काव्य-परम्परा तथा चिन्तन का सात अधेजी के रोमांटिक कवि न होकर, एक धार कानिशाद मधुसूति कबीर, मूर न मोरा है तो दूसरी धार उपनिषद् वेदात्त एवं भीता ।

'नबीन' और 'बायल' के प्रेमकाव्य एक-दूसरे के निकट पाते हैं । बायल को प्रणयानुभूति का साहित्य 'नबीन' में है । 'बायल' के ही समान 'नबीन' ने अपनी समस्त

१. सम्य और सिमित लीय अपने अंतराओं पर आबरण डाले रहते हैं किन्तु बायल अपनी सभी भावनाओं का विमल अपनी कविताओं में करता पा । यही उसकी विशेषता थी ।

भाषनाओं का विनाश धनी कविताओं में किया। उन पर कोई भावपूर्ण नहीं बासा। उसके समान 'जीवन के निराशा पत्र को नवीन' में भी अपने अन्तिम वर्षों की कविताओं में व्यक्त की है। इनके बावजूद भी 'नवीन' की निराशा है बाधा सङ्गुत होती दृष्टिगोचर होती है। अपने जीवन के उत्तरार्ध में बाबरन' ने लिखा था—

मेरे दिन पीली पत्तियों में हैं,  
प्रेम के दुष्प्र घोर कम सब नष्ट हो चुके हैं,  
पहलताप, घाव घोर ब्यथा हों,  
एक मात्र मेरी है।<sup>१</sup>

'नवीन' की ये भी अपनी एक अन्तिम कविता में लिखा था—

जो बीत जाती बासती जेला जीवन की,  
सुमित हो जाती समित-सुनि कल्पित कुलों की,  
बिहूँसा होगा उद्यान कभी मन सौम्य में—  
धन तो है सुनि केवल जीवन को कुलों की।<sup>२</sup>

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'नवीन' के कवि-व्यक्तित्व के निकट हिन्दी में नहीं 'एक भारतीय भारत' तथा 'निराशा' दिखाई देते हैं वहाँ प्रीति में रीति' एवं बाबरन'। वास्तव में उनका कवि-व्यक्तित्व अपनी उपाया प्राप्त ही बना है।

'नवीन' की में प्रसाद और पन्थ के सहस्य काल्य प्रतिभा की। गुप्त की के समान प्रबन्ध की उद्गमना शक्ति से वे प्रापुर्ण थे। जतुर्षी की की राष्ट्रवादी उद्यमता को वे अपने अन्तःकरण में महसूस करते थे। महादेवी की खस्वानुमृति की प्रीति उनके अन्तस् को प्रीति कर चुकी थी। डॉ० देवराज ने उनकी माया-रीति में निरपत्ता का प्रीति पाया है।<sup>३</sup> की सूर्यनामपण व्यास ने उनमें पन्थ की कोमलता, प्रसाद की की प्रीति और निरपत्ता की की शार्ङ्गिकता देखी है।<sup>४</sup>

विशिष्ट अध्ययन—इन सब तथ्यों के होते हुए भी कवि के मार्ग में जो राजनीति भाई अपने हमारे कवि की उद्यमता कला-अमता तथा साहित्यिक परम्परा को निगल लिखा। यदि वे प्रसाद व पन्थ के समान सिर्फ साहित्य की सेवा ही में रत रहते तो धन्य हमारे समीक्षकों की कविता में महत्त्व तथा स्वायत्त-निर्धारण के बँटवारे में 'नवीन' को राष्ट्रीय अर्थ प्रदान करना पड़ता।

१ 'बाबरन की मानसिक बीरताओं पर परिचय उत्तरी कविताओं में मिलता है। जीवन के पिछले समय, वह अपने जीवन से हताश हो गया था।'—की किमोबर्धकर व्यास 'बोरोपीय साहित्यकार', पृष्ठ १५६ ५७ और १५८।

२. की किमोबर्धकर व्यास—'बोरोपीय साहित्यकार', पृष्ठ १५८।

३ साक्षात्क 'हिन्दुस्तान', ३ जुलाई, १९६०, पृष्ठ २३।

४ डॉ० देवराज—'सुग-वेतना', जगदरी, १९५५, पृष्ठ ७०।

५ 'बीणा', कविबर नवीन की कविता, मार्च, १९६४, पृष्ठ ४०५।<sup>५</sup>

वे मूलतः कवि थे और यही उनकी बाल्य-प्रतिभाया रही थी।<sup>१</sup> साहित्यवासियों ने उनको राजनीति का प्राथमी समझा और राजनीति ने उनकी कवि सुसम भावुकता के सिद्ध को पक्का कर, अपने क्षेत्र में प्रसक्त प्रमाणित कर दिया। इन दोनों के मध्य हमारा कवि झुलटा ही रह गया। नियति की इस विचित्र तथा निर्मम सीला का झूर पाव, इस ढँग से धायक ही कोई बन पाया हो। श्री भगवतीचरण वर्मा ने उनके जीवन-काल में लिखा था कि 'यह नवीन का दुर्भाग्य रहा है कि उनका जीवन राजनीति की धारा में बिखर गया। भावना-प्रधान प्राणी होने के नाते वेद्य-कल्याण और जन-हित पर उन्होंने अपने प्राणको समर्पित कर दिया। नवीन में प्रबन्ध-काव्य लिखने की क्षमता है, पर उनकी, अपने को बंदोर कर बैठने की क्षमता को राजनीति का पैर। 'नवीन' का व्यक्तित्व सुक्यत, कलाकार का व्यक्तित्व है, वह राजनीतिज्ञ का व्यक्तित्व नहीं है।'<sup>२</sup>

यह राजनीति के बावत छँटे चुके हैं अर्थात्सि के कुसुम सुकुलित हो गये हैं और उनका काव्य-व्यक्तित्व अपने तेजस्वी रूप में सुकरा रहा है।

## मूल्यांकन

युग-द्रष्टा एवं युग-स्रष्टा—'नवीन' जी के काव्य के मूल्य तथा महत्ता की क्लामी, उनके युग प्रेरक कवि-व्यक्तित्व में अन्तर्हित है। उन्होंने अपने सम-सामयिक कवियों और काव्य प्रवाह को सहस्रों से प्रभावित किया है। उनका प्रेरणास्वर व्यक्तित्व एवं प्रभाव-युक्त हमारी धातुनिक-काव्य की विविध यतिविधियों में भ्रूँक उठा है।

भगवतीचरण वर्मा<sup>३</sup> 'दिनकर',<sup>४</sup> बच्चन<sup>५</sup> अथवा<sup>६</sup> आदि कवियों ने उनके प्रभाव की

१ "मेरी तो जीवन में केवल एक प्रतिबन्ध, कवि बनने की रही है और ईश्वर ने मेरी इस प्रतिबन्ध को पूर्णरूप से विकसित ही किया।"—('नवीन') 'सुधारम्भ', काठिक, सं० २०११, पृष्ठ १०।

२ श्री भगवतीचरण वर्मा—'प्राज्ञकल', वासकृष्ण वर्मा 'नवीन' दिसम्बर, १९५७, पृष्ठ ७-८ तथा १६।

३ "पर सत्य तो यह है कि मैं नवीन को ही घनने से सबल और समर्थ एक मात्र कवि मानता हूँ। न जाने क्यों नवीन की कविताओं के प्रति सुझमें प्रारम्भ से ही ईर्ष्या तक पहुँचने वाली रुचि रही है। उनमें भावना का जो मुक्त प्रवाह रहा है उनमें प्रोत्साहना की जो प्रकृता रही है, उससे सुझे सब से प्रभावित किया। 'नवीन' की कविताओं से मैं क्लृप्ता प्रभावित हुआ हूँ, यह बतलाना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।"—'प्राज्ञकल', दिसम्बर, १९५७, पृष्ठ ८२।

४ 'बट-वीपस', पृष्ठ ३५।

५ 'नट-पुराने मरीजे', पृष्ठ २१।

६ 'विदेशी कवियों में मुझे शैली, कोट्स और बायरन के अतिरिक्त थोडेन, स्पेण्डर और डेनुई की कविताएँ प्रभावित करती हैं। द्वितीय कवियों में निराला और 'नवीन' ने सुझे सबसे अधिक प्रेरणा दी है।—श्री रामेश्वर शुक्ल अथवा—'मैं इनसे मिलता', १९५९।



स्पष्टोक्ति की है। उनके द्वाग्धि-गीतों ने भारत के सामुदायिक का ही नहीं प्रत्युत् हिन्दी के राष्ट्रीय-जीहा को मा मंडित कर दिया था जिसके फलस्वरूप उसमें से धनेक स्वर-मंडितियों ने जन्म लिया। मधुवार की प्रतिष्ठिता में विजयवादा प्राया।<sup>१</sup> श्री 'धनेक' ने अपनी एक कविता में 'नवीन' के सुप्र-प्रेरक कवि-व्यक्तित्व की प्रमिष्यवना की है—

हूँ हूँ-हूँ पर नाच रहे तेरे उद्वेगस सुरभि-व्यामल  
हूँ कण्ठ-कण्ठ में पूज रहे तेरे धीतों की ध्वनि-बंधन।  
हूँ बस-बस में घबक रहे तेरे बिहकोटों की ज्वाला,  
धोरे कुर्बानी के गायक। प्रति सुबक तुम्हें पढ़ मतवाला।  
कितनों के बन्धन तोड़ चुकी तुम्हारे तुम्हारी सेवानी।  
प्रसाद-योग्य का सागर प्रति धनेक में हो बेटे बानी।  
यह कैसी नाचानी समता, हूँ मृत्यु काँपती जिसके डर,  
हूँ पड़ी तुम्हारी कवितायें मेरी खोया के इधर-उधर।<sup>२</sup>

डॉ० बन्धन ने सर्वथा ठीक सिद्धा है कि 'नवीन' की के अपनी कविताओं की पोड़ी-सी उषा करने के कारण हिन्दी कविता का पिछले ४०-४५ वर्ष का इतिहास ही झुका धोर विच्छिन्न हो गया है। आयाबाद के धार्मिक धार्मिक में इस उस्तास की ('नवीन' की के उस्तास) कर नहीं की गई पर इन पत्रियों को, इन भावनाओं ने कितनों की मनो-धन्वियों को जोसा होगा। आयाबाद-युग को इसके उस्तास, समाज में इसके आचरणका तथा काव्य में इसकी प्रमिष्यवित का समझना होगा। तब हम देखेंगे कि प्रसाद, निरासा, पत्त, महादेवी के साथ हूँ नवीन को भी लड़ा करना होगा। जिना नवीन की काव्य-वेग को समझे आयाबादी-युग की व्याख्या झुका ही होगी और एक धनिशाली कवि के प्रति धन्याय भी होगा।<sup>३</sup>

युग-मुख्य की धर्ना—'नवीन' की के साहित्य में स्वान-निर्धारण एवं काव्य के प्रमुह पक्ष के विषय में विनिच धारणार् एवं धनेक मठ है। श्री मधुवीधरल धर्मा के मठानुसार, बासकृष्ण शर्मा हिन्दी के वर्तमान सर्वभेष्ठ कवियों में है।<sup>४</sup> श्री किशोर के कथनानुसार, हमारे नवीन, मिलिग प्रेमी, हूय धारि ऐसे कवि है जिन्हें हिन्दी के उद्वेगोटि के कवियों में सर्व-स्वात दिया था उच्छा है।<sup>५</sup> श्री प्रभाकर धर्मा ने सिद्धा है कि स्वर्गीय पं बासकृष्ण शर्मा 'नवीन' हिन्दी काव्याकाश के धनमोल नसत्र है।<sup>६</sup> डॉ० सावित्री सिद्धा ने सिद्धा है कि बासकृष्ण शर्मा 'नवीन' राष्ट्र के योग्य के कवि है—उनकी कविता में धर्मा के धन्य संस्कार जीवन के धोख धोर रस में पप कर एक विविध काव्यास्वात की सृष्टि करते हैं।<sup>७</sup> श्री सुरेशचन्द्र पुत्र ने सिद्धा है कि

१ 'हिन्दी साहित्य का विद्वत् धीर कानपुर', पृष्ठ १२१-१३० तथा १५७-१५८।

२ 'विद्वत्', कविधर 'नवीन' के प्रति, धनतुवर १९४१ सुप्रपृष्ठ।

३ 'नवे-पुराने करीबे', पृष्ठ १७।

४ 'सरस्वती' जुन १९६० पृष्ठ १२४।

५ 'निकु' ध', मुझे भी कुछ कहना है पृष्ठ ४।

६ धार्मिकधारी-धार्मा हन्धोर प्रसारण-विधि ५ ११ १९६।

७ 'भारतीय बासकृष्ण', हिन्दी, पृष्ठ ५६६।

में बालकृष्ण धर्मा 'नबीन' की कविताओं में राष्ट्र के प्रति एक बिंदुप्राधान्य की भावना का उल्लेख रहा है। उन्होंने हमें भाव और कर्म, दोनों ही दृष्टि से एक नूतन सम्यक् प्रदान किया है। व्यक्तित्व को बचाकर रखने की प्रेरणा वह उसक प्रकटीकरण में अधिक विश्वास रखते हैं।<sup>१</sup> 'नबीन' की को गिताङ्क ८ दिसम्बर १९५६ ई० को, दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की धोर से प्रदत्त 'प्रमिनम्न-पत्र' में कहा गया था कि साहित्य में भारतीय प्रसिद्धि एक ऐसे कवि की प्रसिद्धि रही है जो प्रचारक नहीं कुछ कमाकर है, जो मनुष्यों को सुधारने के लिए नहीं, उन्हें लोकोत्तर मानन्द देने को गान करता है, जिसने धीरे-धीरे, सपाट की धीरे-धीरे अपनी कल्पना को दे रखा है, जो कबल हत्य ही नहीं प्रकल्प बालकृष्णता का भी बिचामी है घटएव, उसका सारा क्रिया-व्यञ्जक उस एक विद्या की धीरे-धीरे उभर है जिस विद्या में 'कथावि ?' की बिरलर डेर सूँव रही है।<sup>२</sup>

'नबीन' की के कवि-व्यक्तित्व के मुख्योक्त में भी बिभिन्न मत-मतांतर प्राप्त होते हैं। डॉ० विभवन्त सिंह 'सुमन' ने उन्हें सन्त-कवियों की परम्परा की कोटि में रखा है<sup>३</sup> जो भी कान्तिचन्द्र सोनरेवसा उन्हें भारत की सर्वश्रेष्ठ मण्डित परम्परा का प्राधुनिक कवि मानते हैं।<sup>४</sup>

भाचार्य मन्मथनारे काव्येयी ने लिखा है कि श्री बालकृष्ण धर्मा, श्री 'भारतीय भारत' और श्री दिनकर' धोर उस के स्वरेव प्रेमी कवि हैं।<sup>५</sup> डॉ० मंगेश ने उन्हें राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-भार के कवियों के अन्तर्गत रखा है।<sup>६</sup> उन्होंने लिखा है कि 'नबीन' को न छायावादी है धोर न स्वच्छन्दतावादी उनके काव्य का प्रमुख स्तर राष्ट्रीय-सांस्कृतिक ही है।<sup>७</sup> डॉ० सावित्री सिन्हा, 'श्री हंसराज धर्मदास' श्री सुरेशचन्द्र गुप्त 'श्री देवीपरण रस्तोमी' 'श्री० धनन्त' 'श्री० इन्द्रनाथ मदान' 'श्री नरसिंह बसोवन धर्मा' 'श्री भादि' उनीचक उन्हें इसी श्रेणी का कवि मानते हैं।

१ 'काव्यानुसोचन' हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय भावना, पृष्ठ २४६।

२ 'प्रमिनम्न-पत्र', दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दिनांक ८-१२ १९५६ ई।

३ साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान', २० मई १९६२, पृष्ठ ८।

४ 'बीणा', प्रगल्भ सितम्बर, १९६० पृष्ठ ५२२।

५ हिन्दी साहित्य—बोसकी शतावली, पृष्ठ ३।

६ 'प्राधुनिक हिन्दी-काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ' पृष्ठ १६-१६।

७ डॉ० मनेश का मुझे लिखित (२५-१९६२ का) पत्र।

८ 'भारतीय काव्य-स्य', पृष्ठ ५६६।

९ 'हिन्दी साहित्य की परम्परा', पृष्ठ ५३।

१० 'हिन्दी काव्यानुसोचन', पृष्ठ २४६।

११ 'हिन्दी साहित्य का विवेकानन्दक इतिहास', पृष्ठ १२२।

१२ 'हिन्दी साहित्य का सहज वर्ण', पृष्ठ ३००।

१३ 'काव्य-सरोवर' पृष्ठ ६।

१४ 'कतर्क भाषा निबन्धावली'।

कतिपय समीक्षकों ने 'नवीन' को को राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्य-आद्य के अन्तर्गत— 'भाष्यनसास अनुर्वेरी स्कून में परिगणित किया है। डॉ प्रभाकर भाष्यने माखनसास बी को उनका काव्यगुह' मानते हैं।<sup>१</sup> डॉ बर्मवीर भारती ने भी 'नवीन' को को इसी स्कून' का कवि माना है।<sup>२</sup> श्री दाम्बिन्द्रिय द्विवेदी ने लिखा है कि सब मिसाकर 'नवीन' माखनसास स्कून के एक अतिरिचित बोधन है। यही कवि अपने गीतिकाव्य में कुछ बोधन-सरस होकर भी पाया है, मानो कठिन तब में मर्मर संपीत बना हो।<sup>३</sup> श्री सरनारायण द्विवेदी ने लिखा है कि कुछ सोच नवीन को छायावादी कवियों की श्रेणी में रखते हैं। इस कवन की सत्यता पर विचार करना यहाँ उचित नहीं प्रतीत होता। किन्तु हमें ऐसा लगता है कि 'नवीन' को समी 'बाधों' और 'स्फुलो से ऊपर के अथवा दूधरे अर्थों में बहु स्वयं अपने आपही में एक 'बाध' है। यदि उन्हें किसी के साथ रखा भी जा सकता है तो वह माखनसास की 'अनुर्वेरी' हैं, न कि प्रसाद निराका पन्त महादेवी और बच्चन।<sup>४</sup>

भाचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'नवीन' को 'स्वच्छन्द-आद्य' के अन्तर्गत रखा है।<sup>५</sup> भाचार्य हुजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि छायावाद की मूलधार से पूर्वक किन्तु विस्वासी में सम्पूर्ण स्वच्छन्दतावादी पत्ररूप कवि बालकृष्ण शर्मा की उग्राम भाषणों वाली कविताएँ इसी बाध में लिखी गईं।<sup>६</sup> डॉ मयीरब निध के मतानुसार काव्य के क्षेत्र में नवीन की स्वच्छन्दतावादी है—भाषा छन्द भाव सबमें ये स्वच्छन्दता के प्रेमी हैं।<sup>७</sup> श्री रामेश्वर सिंह पौड़ ने भी उनके स्वच्छन्दतावादी भाषों की बर्णना की है।<sup>८</sup>

डॉ० मुंजीराम शर्मा ने लिखा है कि 'नवीन' की काव्य प्राक् रोमांसवादी है। इसी के साथ उनके रहस्यवादी भीत भी संश्लिष्ट है और राष्ट्रवाद तथा बलिदान से सम्बन्धित कविताएँ भी।<sup>९</sup> उन्होंने रोमांस को ही बीरत्व का प्रेक एवं रहस्यवाद के रूप में परिचित पाया है।<sup>१०</sup> 'नवीन' की के रोमैण्टिक रूप की बर्णना डॉ सक्मीशामर बाप्ट्यैय<sup>११</sup> एवं श्री अंबिका सिंह चौहान ने भी की है।<sup>१२</sup>

१ 'व्यक्ति और काव्य', पृष्ठ ११३-११४।

२ 'भासोचना', अग्रेल, १९५२ पृष्ठ ८८।

३ 'संचारिणी', पृष्ठ २१४-२१५।

४ 'सांस्कृतिक धारा' २९ मई १९६०, पृष्ठ ९।

५ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' पृष्ठ ७२१।

६ 'हिन्दी साहित्य' पृष्ठ ४७६।

७ 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास', पृष्ठ २२०।

८ 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास', पृष्ठ ३०७।

९ डॉ सुशीराम शर्मा, कानपुर का मुझे लिखित (दिनांक ६-९-६२ का) पत्र।

१० वही, (१९-८-१९६२ का) पत्र।

११ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' पृष्ठ २०८।

१२ 'हिन्दी साहित्य के अस्ती बर्ण', पृष्ठ १०९।

श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने उन्हें छायावादी कविता करने में कुशल माना है।<sup>१</sup> डॉ० बच्चन ने लिखा है कि "जिसे हम छायावाद-गुण कहते हैं उसमें तबीन भी का प्रमुख स्थान है। उन्हें भलय कर छायावाद की जितनी व्याख्या की गई है, मेरी समझ में वह अधूर्ण है। तबीन भी श्री रचनाओं के प्रकाश में भाने पर यह बात अधिक स्पष्ट हो सकेगी।"<sup>२</sup> डॉ० रामधरब द्विवेदी<sup>३</sup> तथा श्री मबानीरांकर बर्मा द्विवेदी<sup>४</sup> ने भी क्रमशः छायावाद-गुण एवं 'प्रसाद प्रवर्धित सुकुमार-गुण' में उनका विवेचन किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'तबीन' भी के कवि-व्यक्तित्व के स्थान को विभिन्न भाषों, स्कूलों एवं काव्य-चारकों में रखा गया है।

वास्तव में उन्हें सत्य वा सविज्ञ-परम्परा का कवि मानना उचित नहीं। उन्होंने न तो किसी को भनना काव्य पुद्ग' ही बताया<sup>५</sup> और न उन्हें माखनसान स्कूल में ही रखा जा सकता है। कवि के मस्ती भरे, राष्ट्रप्राी एवं प्रखर यौवन के विस्तार को एक स्कूल' के यौवन की सीमाओं में परिमित कर देना, कवि तथा समय युग के साथ म्याय नहीं करता है। हिन्दी के गोलकण्ठ प्रणवानुमूर्ति के ऋगुराज एवं कथम्भ के यौवन को कौन बाँध सका है? यदि हम धावकल स्कूल की भाषा में ही बहुत अधिक सोचने लग गये हो और बनराज को पिम्बर-बढ़ करने पर उठावसे हो गये हो तो इससे भेयस्कर यद्ही रहेना कि हम 'स्योत्र-स्कूल' का ही उन्हें सत्य बना दें जिसके इस उपाकथित—'माखनसान स्कूल' के प्रवर्तक भी सत्य है और इन दोनों के धर्तिरिक्त, 'सनेही' भी, मगबतीचरण बर्मा प्राप्ति भी इसकी राष्ट्रीय काव्य चार-परम्परा की सीमाओं में घा जाते हैं। इस विज्ञा में, मेरा विवेचन है कि 'तबीन' भी मुसल स्वच्छरणावादी कवि हैं, परन्तु उनके काव्य का 'प्रसुख-स्तर' राष्ट्रीय-सांस्कृतिक ही माना जा सकता है।

वस्तुतः 'तबीन' भी किसी मतवाच के ज्ञायक नहीं थे।<sup>६</sup> डॉ० बच्चन ने लिखा है कि 'तबीन' को को बाद के बच्चन में बाँटना ठीक नहीं होगा वे बीचन से बँधे थे।'<sup>७</sup> वे युग-धर्म

१ 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास', पृष्ठ ४६७।

२ 'नए पुराने सरोखे', पृष्ठ ३७।

३ Hindi Literature, page 204-205

४ 'हमाध हिन्दी साहित्य और भाषा परिवार', पृष्ठ ३४३।

५. 'मेरे ऊपर किसी व्यक्ति-विशेष का प्रभाव नहीं, जिससे कि हमें साहित्यिक प्रेरण प्राप्त हुई हो या प्रोत्साहन मिला हो—( 'तबीन' )।'<sup>६</sup>—'सुगारम्म', कालिक, सं० २०११, पृष्ठ १०।

६ 'मेरा सदा से यह विचार रहा है और आज भी है कि साहित्य किसी बाद विशेष को सीमाओं में बाँधना नहीं किया जा सकता।'<sup>७</sup>—'साहित्य समीक्षा', भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी ही है, पृष्ठ १०६।

७ डॉ० हरिधरराय 'बच्चन' का मुझे लिखित ( दिनांक २०-०२-१९६२ का ) पत्र।

से प्रभावित होकर भी उससे ऊपर उठ गये थे ।<sup>१</sup> वे युग के होते हुए भी, युग-युग के बन गये ।

कवि-व्यक्तित्व के मूल्यांकन की दृष्टि में, निपति के शूर-व्येम्प के मूक्तत्व की भी प्रबलता नहीं की जा सकती जिसके एक पारस का अनुभाटन या मगबतीकरण बर्मा में, कवि की मृत्यु के पूर्व और दूसरे पारस का विरसेपण डॉ० बच्चन ने कवि की मृत्यु के पश्चात् किया है ।

श्री मगबतीकरण बर्मा ने सिद्धा या कि "मैं अपनी ईर्ष्या-विषय देखता हूँ, हर जगह 'महान् कवि' और 'महान् कलाकार' धरे पड़े हैं । उन महान् कवियों और कलाकारों में अपनी को महान् कहलवाने की कला है । उनके प्रागे-पीछे महान् आलोचक घूमते हैं और वे 'महान् आलोचक' उनके समर्थन का बस प्राप्त किये हुए हैं । बहुत कुछ सिद्धा या रहा है उनके ऊपर, एक पक्षीय संघर्ष है, कव्यमकस है । और इन संघर्षों के बीच, इन छोटी-छोटी इप्सियों के बीच कुछ अपनी में लीये हुए, बच्चों की तरह सरल दुनिया के दुःख-मुख पर अपनी प्रतिरूप को बिखेरते हुए, अपनी क्षमता और प्रतिभा से निपट बनवान कलाकार भी मौनुर है । ऐसे कलाकारों में मैं पण्डित बासवपुत्र धर्मा 'नवीन' को सर्वप्रथम मानता हूँ ।"<sup>२</sup>

इसी मूल-मूल के दूसरे पक्ष की कड़ियाँ खोलते और 'कविवर नवीन' का मूल्यांकन करते हुए, डॉ० बच्चन ने सिद्धा है कि 'सङ्गीतोलो हिन्दी कविता का इतिहास बीसवीं शताब्दी की श्रावु का इतिहास है । इतने कम समय में दिन कवियों की साधना में हिन्दी कविता को भारत की धन्य प्रांतीय मापार्यों को समकल हो नहीं, दिन कविता के मानविच में एक सम्पन्न स्थान की अधिकारिली बनाया, उनमें प्रसाद, निधता, मल और महावैधी का नाम सबसे पहले सिद्धा या सकता है—प्रकाशन की ओर से उदासीन न रहते तो इस खेती में 'नवीन' का भी स्थान होता ।"<sup>३</sup>

प्रगत में, आचार्य मन्मदुसारे बाबरेयी के सारणित तथा अनुमित धर्मों में हम कह सकते हैं कि 'नवीन' को का हमारे साहित्य में सम्मानित स्थान है । उनकी कुछ महत्तर रचनाएँ उन्हें अपने कवि के साधन पर बैठ देती हैं ।"<sup>४</sup>

राष्ट्रवाद के वैतातिक, प्रेम-यक्ति काव्य के रसधान शार्ङ्गिक काव्य के नविकेता एवं पत्रकृता के इस महाकवि 'नवीन' की काव्य-बाली इतिहास के मानसरोवर को उदा-सर्वथा तरंगानित करती रहेगी और युग-युगान्तरों का नृन्कार । अपराजय योद्धा 'राष्ट्रमाया' के

१ 'साहित्य युग-धर्म के प्रभाव से न तो सम्पन्न रहता ही है और न रहा जा ही सकता है । फिर भी साहित्य में युग-धर्म का बड़ी तरह व्येककर है, जो आश्रित समाज के कल्याणकर होता है । मानव एक युग का नहीं, युग-युग का व्ययों एवं मन्वन्तरों का संश्लित सांस्कृतिक प्रतीक है । प्रगत साहित्यकारों को युग-व्येम्प के कालिक आदेश से पूर्णतः धनिमूत नहीं होगा साहित्ये ( 'नवीन' ) ।"—साहित्य-समीक्षावर्ति, पृष्ठ १८६ ।

२ 'आनन्दल', विम्वर १९५७, पृष्ठ ७ ।

३ साङ्गातिक 'हिन्दुस्तान', 'यह महत्ताता—निराता' ११ फरवरी, १९६९, 'निराता' इन्वित-संक, पृष्ठ ६ ।

४ 'हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी', पृष्ठ ३ ।

निष्कर्ष

'दबीपि,' एवं सुव-निर्माणा 'नबीन' का यह बखनीय रूप हमारे राष्ट्रमय को धारण  
बपोहर है—

४३१

में बेबदुत, मैं अमिदुत हूँ मन पूत फिर बतिबानी,  
नबजीवन का उजायक मैं धर्गारों की मेरी वाली  
मम माता रग्यों से निकसी मेरे नि श्वातों की ब्याला  
मेरी वाणो में बख घोप, मेरे लपनों में उजियाला ।'



परिशिष्ट





## कविता-तालिका

विशेष—अस्तुत-परिशिष्ट में मनीष की की समस्त उपलब्ध कविताओं की, उनकी रचना तिथि के क्रमसुचार, सूची प्रस्तुत की जा रही है। जिन कविताओं पर टैक्सन-तिथि अनुपलब्ध है, वहाँ अनुमानित तिथि (अ०) दी गई है।

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
१	सूर्य के प्रति	उन्नाव	सन् १९१५	अप्रकाशित- धसगृहीत
२	आवाहन	कानपुर	सन् १९१५ (अ०)	प्रथम प्रकाशित कविता धसगृहीत
३	तार	,	"	धसगृहीत
४	दरौन	"	"	"
५	बिच्छाकुस	,	,	"
६	संबोध	"	सन् १९१९ (अ०)	,
७	सुखी की लान	"	"	"
८	कुसुममीनार	"	सन् १९२० (अ०)	"
९	मिशन	,	"	,
१०	भारतीयक लक्ष्मी	"	,	"
११	धैर—कहाँ ?	,	,	"
१२	दीप-निर्वाण	,	"	"
१३	समर्पण	"	"	"
१४	स्वामत	"	"	"
१५	सूखे घास	,	सन् १९२१ (अ०)	कुंठम
१६	भाकुस की अपासना	,	,	सीजन-मन्त्रित
१७	सन्ध्या के प्रकाश में	,	"	धसगृहीत
१८	माँच मिथौरी	"	,	"
१९	स्वर्गीय पं० मन्मथ त्रिवेदी गजपुरी की मृत्यु पर	,	"	"
२०	गुहामत	"	"	"
२१	विद्य	"	सन् १९२२ (अ०)	"
२२	कल्याणेश्वर की भीष	"	,	"

क्रम- संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना तिथि	विशेष
२३	विस्मृता उमिता	लखनऊ जेल	नवम्बर, दिसम्बर, १९२२	उमिता
२४	बाने पर	कानपुर	सन् १९२३ (घ०)	कुंकुम
२५	प्रापमन की जाह	"	"	बीबन-मरिच
२६	तुम्हारे सामने	"	"	"
२७	कुछी के चरणों में	"	"	घसंगुहीत
२८	सावधान	"	१९२३ (घ )	कुंकुम
२९	रखा-बन्धन	"	"	"
३०	हस्त-पुस्त	"	सन् १९२४ (घ०)	कुंकुम
३१	उपनाम	"	"	घसंगुहीत
३२	बिठा के फूल घाँसु	"	"	"
३३	सेजिस्ट्रेटिव कौतिक में दिन्दी	"	"	"
३४	विप्लव-गामन	"	१९२३ (घ०)	कुंकुम
३५	पाकाली	"	"	"
३६	पात	"	"	"
३७	घने	"	"	"
३८	दीपमाता	"	"	"
३९	धोमस धरौकी	"	१९२५ (घ०)	"
४०	श्रुति बयानग्य की पुष्प स्मृति में	"	"	"
४१	बड़े हावा	"	"	"
४२	विस्वव्यापी	"	सन् १९२६ (घ०)	बीबन-मरिच
४३	तुम्हारी धनि	"	"	घसंगुहीत
४४	परीक्षा के प्रश्न-पत्र	"	"	कुंकुम
४५	धुन	"	"	बीबन-मरिच
४६	मावुत	"	"	"
४७	बाहुपी के प्रति	"	१९२७ (घ०)	कुंकुम
४८	एक कहानी	"	"	"
४९	बैठात तान	"	"	"
५०	धपूसी भाषा	"	"	"
५१	सखी	"	१९२८ (घ०)	"
५२	बैबसी	"	"	"
५३	बीबन का धोर	"	"	"
५४	दिव के कटक	"	"	"

परिशिष्ट

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-दिनांक	विशेष
५५	प्रविकल्प	कानपुर	१९१९ (म०)	विशेष
५६	यांचामोषा	"	"	"
५७	अटोके श्री राणी	"	"	"
५८	पटाजय-नील	"	"	"
५९	सूर्य-संग	"	"	"
६०	निपत्त्रण	"	"	"
६१	दीपावली	"	"	"
६२	निमोडी हुआ	"	"	"
६३	प्रताप	"	"	"
६४	पीठ	"	"	"
६५	दुम्हाण पनचट	"	"	"
६६	सो पत्र	"	"	"
६७	त्वपठ	"	"	"
६८	ध्याकुम	"	"	"
६९	तम मल से तुमको प्यार किया है	गान्धीपुर जेल कानपुर	"	"
७०	पटाजय	गान्धीपुर जेल कानपुर	२ जनवरी १९३०	बीकन-मदिर
७१	बिम्बा	"	३ नवम्बर, १९३०	प्रसयंकर
७२	जय पार	"	"	"
७३	सैना	"	"	"
७४	मही-मही	"	"	"
७५	दिग्-भ्रम	"	"	"
७६	इच्छाए	"	"	"
७७	द्विबोला	"	"	"
७८	सैना	"	"	"
७९	मनोरम	"	"	"
८०	समुद्रेष	"	"	"
८१	बस विन	"	"	"
८२	निपत्त्रण	"	"	"
८३	सिमार	"	"	"
८४	समुद्रार	"	"	"
८५	सर्ग के प्रति	"	"	"
८६	कुपडरी	"	"	"
८७	बोव	"	"	"
८८		"	"	"
८९		"	"	"
९०		"	"	"
९१		"	"	"
९२		"	"	"
९३		"	"	"
९४		"	"	"
९५		"	"	"
९६		"	"	"
९७		"	"	"
९८		"	"	"
९९		"	"	"
१००		"	"	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
८८	१९३० के वर्ष की समाप्ति पर	गान्धीपुर बैल	३१ १२ ६०	प्रलयंकर
८९	सिद्धर पर		१९३० (प्र०)	मुकुट
९०	प्रबन्धना	कानपुर	,	"
९१	योगन-मदिरा	"		
९२	प्रसन्नोत्तर	,		योगन-मदिरा
९३	पत्र-भ्यवहार	,		,
९४	सम्पाद	,	"	,
९५	व्यासा	गान्धीपुर बैल	१ १ ३१	"
९६	तामिक		८-१ ३१	
९७	खिचड़ी	,	९ १ ३१	प्रलयंकर
९८	यदिबाबु बजाने वाले		१ १ ३१	योगन-मदिरा
९९	विस्मृत ताल	"		कथासि
१००	मेरी दूरी गाड़ी		११ १ ३१	योगन-मदिरा
१०१	बहू बाँकी खींची		१२ १ ३१	,
१०२	कानपुर	,	१३ १ ३१	
१०३	मणि		"	,
१०४	बेखी	,	२० १ ३१	
१०५	बर्हीत-मोष		१-२ ३१	
१०६	बापु से		८-२ ३१	कथासि
१०७	माक-मेष		११-२ ३१	,
१०८	संलग्न-वैद्य	"	२०-२ ३१	नवीन-बोहावसी
१०९	रस फुडियाँ	"	२४-२ ३१	रस्मिरेखा
११०	बाब		,	नवीन-बोहावसी
१११	अणुल		२६-२ ३१	कथासि
११२	कुचल	"	३ ३ ३१	योगन-मदिरा
११३	पन्थ	"	९ ३ ३१	"
११४	किमिश्म	कानपुर	७-४ ३१	"
११५	दूरी बीछा	रेल पथ कानपुर		"
११६	तो जाने दो	बिरबाब	४-१ ३९	"
११७	किर से	रेलपथ, बनारस		
११८	एक छूट	कानपुर	२८-८-३१	"
		कानपुर	१०-९ ३१	,
		रेलपथ इटावा		
		इलाहाबाद	२५-९ ३१	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
११६	बोगी	रेलपथ-टाटा कानपुर	२८-६ ३१	रस्मिरेखा
१२०	ऊमड़ नाम	कानपुर	७ १० ३१	मीबन-मदिरा
१२१	घाघा	"	२२ १० ३१	"
१२२	घरी मानस की मन्दिर	"	१३ १० ३१	रस्मिरेखा
१२३	हिसोर	"	"	"
१२४	तड़पन	"	२०-१०-३१	मीबन-मदिरा
१२५	बड़े बत्ती	"	७-११ ३१	"
१२६	बिबासी	"	६ ११ ३१	"
१२७	प्रथम प्यार का कुम्भ	"	२१-११ ३१	रस्मिरेखा
१२८	मिच्छा	"	२४-११ ३१	बिबासि
१२९	विप-मान	"	७-१२ ३१	प्रसयंकर
१३०	व्यक्ति	"	२०-१२ ३१	"
१३१	पत्र	पानीपुर जेल	सन् १९३१	मीबन-मदिरा
१३२	साफी	कानपुर	"	रस्मिरेखा
१३३	मसमय	"	"	मीबन-मदिरा
१३४	प्रभावित बहि	"	"	"
१३५	गाये	"	"	"
१३६	मकुछाइट	"	सन् १९३२ (म०)	प्रसंगुहीत
१३७	रुन मुन-मुन	कैलाबाद जेल	"	रस्मिरेखा
१३८	सखी की सुष	"	"	प्रसयंकर
१३९	मठ लोड़े गहण सपना	"	१०-८-३२	मीबन-मदिरा
१४	कुबली	"	१२-८-३२	"
१४१	हे सुरस्य भारत पबगामी	"	२४-९ ३२	प्रसयंकर
१४२	घरह निदा	कानपुर	१४ १०-३२	मीबन-मदिरा
१४३	एक बार तो बैच	कैलाबाद जेल	३१ १० ३२	प्रसयंकर
१४४	सपना मृदु मोनास	"	१ ११ ३२	"
१४५	प्रज्ञान	"	२४ ११ ३२	मीबन-मदिरा
१४६	घरे घुरसी बाले	"	"	"
१४७	पुकार	"	२७-११ ३२	"
१४८	घरी बचक उठ	कानपुर	१९३२ (म०)	"
१४९	पफिय प्रतीसा	"	"	"
१५०	छेड़ो न	"	"	"
१५१	प्रणय-लय	"	"	"
१५२	पावय-मीना	कैलाबाद जेल	सन् १९३२	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
१५३	सन्मापण	धर्मीयड़ बैल	सन् १९३३	प्रसर्गकर
१५४	बनराम	बरेली बैल	२२ १ ३३	वीथन-मखिरा
१५५	मंद-ज्योति	"	२३ १ ३३	"
१५६	बसन्त	"	३०-१ ३३	"
१५७	सीर-कम्पान	फिजाबाब बैल	२९-८-३३	"
१५८	मिच्छारी	"	२९-८ ३३	धपलक
१५९	निमन्त्रण	कानपुर	सन् १९३४ (म०)	धसंगुष्टीय
१६०	धान्त	धर्मीयड़ बैल	१७-१ ३४	धपलक
१६१	छोटे की स्मृति में	"	२०-१ ३४	वीथन-मखिरा
१६२	पय-निरीक्षण	धर्मीयड़ बैल	२१ १ ३४	प्रसर्गकर
१६३	मर-मर हूँ फिर उठ घाए	,	१३-२ ३४	विरचन की कलकारें
१६४	मेरे कटमापर	कानपुर	८-४ ३४	प्रसर्गकर
१६५	संस्मरण बैरगा	"	१८-११ ३४	वीथन-मखिरा
१६६	अमजाल	"	१९३४ (म०)	"
१६७	बिन्दिया	"	"	"
१६८	निद्रोत्थित बैह	"	"	"
१६९	घोषी सूरत	"	"	"
१७०	धमिफायर सम्भाव	"	"	"
१७१	बसन्त बहार	"	६-२ १९३५	रश्मिरेखा
१७२	बछी के पुत	घाजापुर	२१ २ ३५	प्रसर्गकर
१७३	फिरफिरी	कानपुर	धर्मीयड़ १९३५	वीथन-मखिरा
१७४	निवेदन	"	मई, १९३५	"
१७५	कहूँ मैंने दो	"	१४-५ ३५	रश्मिरेखा
१७६	कुम्भ बत्ती	"	जुलाई ३५	वीथन-मखिरा
१७७	मिल गये जीवन-बपर में	रेलपथ कानपुर इलाहाबाद	११-७-३५	रश्मिरेखा
१७८	कॉन-कॉन	धर्मीयड़	अक्टूबर ३५	वीथन-मखिरा
१७९	गोव	रेलपथ कानपुर इलाहाबाद	१२-११ ३५	"
१८०	बच्चों की स्वामिनी घुम	कानपुर	दिसम्बर ३५	"
१८१	क्या ?	,	१९३५ (म०)	"
१८२	द्विचरार धेरी	"	"	"
१८३	मिलन साथ यह इतनी क्यों	"	"	"
१८४	एकचित्त	"	"	"

क्रम-संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
१८३	दृषा-कोर	कानपुर	१९३५ (म)	योगन-मदिरा
१८९	पिसा दो	"	"	"
१८७	पावित्र	"	जनवरी ३६	"
१८८	प्रस्ताव मेरा	रेलपथ, इसाहाबार	२४ १ ३६	'
१८९	मनस-मान	कानपुर	मार्च, ३६	प्रलयंकर
१९०	कमला गेहूँ की स्मृति में	कानपुर	१८-३ ३६	कवासि
१९१	मात्र हृदयसे प्राप्त	"	मई, ३६	प्रपत्रक
१९२	कब किससे प्रभु बरखे ?	"	"	कवासि
१९३	मान कैसा ?	"	७-५ ३६	"
१९४	कुहूँ की बात	"	"	रविमरेखा
१९५	मो प्रवासी	रेलपथ बिरसांव कानपुर	५-६ ३६	कवासि
१९६	बोसाबस वृत्ति	कानपुर	जुलाई, ३६	सिरजन की लसकारें
१९७	सबन भेरे सो रहे हैं	"	प्रपत्रक, ३६	कवासि
१९८	कवासि ?	"	२८-११ ३६	"
१९९	गुन सो प्रिय	"	३ ४ ३७	प्रपत्रक
२००	मकुर माल	"	जुलाई, ३७	सिरजन की लसकारें
२०१	कस्तूर ? कोऽहम् ?	"	"	प्रलयंकर
२०२	बूँटे पत्ते	"	३१-७-३७	"
२०३	गरक बिबात	"	१४-९ ३७	"
२०४	नबीन-बोहाबसी	रेलपथ बिरसांव कानपुर-जर्द	१८-११ ३७	नबीन-बोहाबसी
२०५	जीवन बपरिया	कानपुर	१९३७ (म०)	"
२०६	कामन की नाव	"	३०-९ ३८	स्मरण-शीप
२०७	पक्रित	"	"	प्रपत्रक
२०८	पक्रित	"	३-१०-३८	"
२०९	सामुय्य बाँधा	"	६ १० ३८	"
२०९	फिर बहो	"	"	"



क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना तिथि	विशेष
२१०	मम में	कानपुर	८-१०-३८	अपसक
२११	दुई का सोच	,	२३-१०-३८	स्मरण-शीप
२१२	माग छोड़ा	रेमपथ हरदोई- कानपुर	१-१२-३८	क्यासि
२१३	हम अक्षर निरंजन के बंधन	कानपुर	२-१२-३८	प्रसंगिक
२१४	बट्टू सिंहाबसोफन	"	७-१२-३८	अपसक
२१५	अगच्छिता तब शीपमाता	"	१०-१२-३८	क्यासि
२१६	प्रिय मैं धाव मरी धारी सी	बखनऊ	१५-१२-३८	"
२१७	अतिमलिन	कानपुर	१६-३८ (अ०)	"
२१८	उड़ियमान	,	११-३९	"
२१९	तुम युव-युग की पहिचानी सी	"	५-१२-३९	"
२२०	स्वप्न मम बन घासि साकार	"	२०-४-३९	अपसक
२२१	पहन तमिजा की परिखा	बरेली बैल	२२-४-३९	प्रसंगिक
२२२	मरे जाँह	रेमपथ कानपुर कानून	१-५-३९	अपसक
२२३	प्रिय । लो हूँ युव हूँ सुरत	कानपुर	२६-३-३९	रस्मिरेखा
२२४	मैक-भाषम	"	"	क्यासि
२२५	बोसै बासो	"	"	,
२२६	पावस-नीड़ा	"	१-७-३९	रस्मिरेखा
२२७	घाव लेंगे लोम री	,	२८-७-३९	"
२२८	अभिछाप	"	१-८-३९	क्यासि
२२९	बर् देहि	"	१-८-३९	अपसक
२३	घाउर्या	बखनऊ	१३-८-३९	स्मरण-शीप
२३१	बहुरंगी	कानपुर	"	"
२३२	मंजीर बैद का घरम	"	२७-८-३९	"
२३३	कील छा बहु राव बापा	"	"	अपसक
२३४	छन्पा बन्धन	"	२९-८-३९	रस्मिरेखा
२३५	प्रिय जीवन-नर अवार	"	१०-९-३९	क्यासि
२३६	मिरेह	"	"	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
२३७	क्या न सुनोमि बिनब हमारी	कानपुर	२१ १२ ३९	अपसक
२३८	बयासीसबैं कर्पन्ति में	"	२६ १२ ३९	सिरजन की सतकारें
२३९	बस-बस धब न मषो बहू बीबन	"	८ १ ४०	अपसक
२४०	हम नूतन पिय पाए	रेसपब सखनऊ- कानपुर	१७-२ ४०	कवासि
२४१	धामे जुपुर के स्वत मन-मन	कानपुर	२१ ३ ४०	सिरजन की सतकारें
२४२	समा गई माबकता मन में	,	२३ ३ ४०	अपसक
२४३	अस्मिर बने रहे तुम ठारे	"	,	रश्मिरेखा
२४४	हम धनिकेतन	"	१ ४ ४०	"
२४५	बिनय	"	४ = ४०	स्मरण-धीप
२४६	फिर नूँये नब स्वर प्रिय	"	"	कवासि
२४७	धो हिरणी की धाँधौबानी	"	१८-८-४०	स्मरण-धीप
२४८	भाग में महामुख्य की फ़ैसी		३-७-४१	मृत्सु-नाम
मैनी बेश				
२४९	बेतन भी मुष्मय है	,	२८-४१	"
२५०	क्या है यह अण्णकार	"	३ = ४१	"
२५१	झँक सके धार-धार	"	८-८-४१	"
२५२	मृत्सु-नाम	"	९-८-४१	"
२५३	क्या तुम जाग रहे हो प्रहरी	"	१३-८-४१	"
२५४	कैसा है मृत्सु-नाम	,	२४-८-४१	"
२५५	धार्, धाब बची छाहार्	"	१-९ ४१	"
२५६	महन सघन अण्णकार	"	१ १० ४१	"
२५७	सूजन झँक	"	९ १०-४१	"
२५८	धबिरस बेतना की बार	"	१३ १०-४१	"
२५९	मरपट-पाट	"	१६ १० ४१	"
२६०	मिट गए हैं जिब मैरे	कानपुर	१० १२ ४१	"
२६१	प्रियतम, तब हम हर जरणों में	"	२१ १२ ४१	"
२६२	यह प्यासा में पी म कहीं	मैनी बेश	१६४१ (घ०)	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्वत	रचना-तिथि	विशेष
१६३	पहेली	तैली बेल	१९४१ (घ)	मृत्सु-नाम
१६४	हमारे बालक की धमक धवा	"	"	"
१६५	कैसा मरख समीचा धामा	"	"	"
१६६	प्रनांतर	"	"	"
१६७	धो तुम प्राखों के बहिहारी	"	"	प्राखार्पख
१६८	नवन-निमलख	कानपुर	३ १-४२	स्मरण-वीप
१६९	मृत्सु के दुड़ियों के बीच	"	११ १-४२	"
१७०	धव कब तक खोर्मे घानन	"	१३ १-४२	कवासि
१७१	के खण्ड	"	१९ १-४२	स्मरण-वीप
१७२	बिभसित बिस्वात	रैलपय काशी स कानपुर	२६ १ ४२	"
१७३	तुम हो मए पणए	रैलपय फूँव से कानपुर	३१ १-४२	"
१७४	हम परिखाम के घाही है	कानपुर	९ ३ ४२	"
१७५	कपालम्भ	"	४५ ४२	तबीन-बोझावती
१७६	पै न हरे बनखाम	"	५-५ ४२	"
१७७	सखि बन-बन बन मरजे	"	१५-६ ४२	धपलक
१७८	हम तो घोस-बिन्दु घम हरेके	"	५-७-४२	कवासि
१७९	कैसे निधि के खपने	"	१५-७-४२	मृत्सु-नाम
१८०	मैखाम कल्पमान	"	३ -८ ४२	कवासि
१८१	तुम मरी घाँवों की पुकती	उन्नाव बेल	१२-९-४२	स्मरण-वीप
१८२	मरल वियो तुम मरल वियो	"	१ १०-४२	प्रसंगिकर
१८३	धपलक-धमक भरो	"	१३-१० ४२	धपलक
१८४	तुम हसे पहाणते हो	"	११ ११ ४२	रस्मिरेखा
१८५	बिबा या झिय की बरनि	"	२ १२ ४२	"

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
२८९	नयन स्मरण धम्बर में	उल्लास बैल	४ १२ ४२	रश्मिरेखा
२९०	कसिका इक बबुल पर फसी	"	१० १२ ४२	कवासि
२९१	छिदुरे है निकल प्राण	"	११ १२ ४२	रश्मिरेखा
१९२	उड़ जवा	कानपुर	१९४२ (६०)	कवासि
२९३	दिजर-बट्ट सिंह उबाव	"	"	प्रसर्पकर
२९४	बड़गड़ाहट ममन मर में	"	"	"
२९५	फिर बही	"	"	स्मरण-बीप
२९६	बिस्मरण	उल्लास बैल	१ १ ४३	अपसक
२९७	धा नामो प्रिय, साकार बने	"	१९ १ ४३	"
२९८	बिन्दु सिन्धु छोड़ जसी	"	२२ १ ४३	"
२९९	प्रवीणा	"	२३ १ ४३	गभीर-बोहावसी
३००	प्रिय मम मग धाम धान्त	"	३० १ ४३	कवासि
३०१	मेरे परिपत्नी	"	३ २ ४३	रश्मिरेखा
३०२	धो सदियों में धामेबासे	"	२ ३-४३	प्रसर्पकर
३०३	स्नि पर दिन बीत जैसे	"	४ ३ ४३	कवासि
३०४	राग-विराग	"	५ ३ ४३	गभीर-बोहावसी
३०५	धनबास	"	६ ३-४३	"
३०६	प्यार बना मेरा अभिषाव	"	१८-३ ४३	स्मरण-बीप
३०७	हमारी क्या होती क्या फाय	"	२१ ३-४३	रश्मिरेखा
३०८	गमनन नीर मरे	"	२२ ३ ४३	अपसक
३०९	प्राणबल, मेरी कौन बिछात ?	"	२७-३ ४३	"
३१०	धा धा रानी बिस्मृति धा धा	"	२८-३-४३	रश्मिरेखा
३११	धब यह रोना बोना क्या	"	२९ ३ ४३	स्मरण-बीप
३१२	मत मुँहमोड़ धरे बैबरी छबै	"	५ ४ ४३	रश्मिरेखा
३१३	निराशा क्यों हिय मपित करे	"	"	अपसक
३१४	तुम महि जानत हो	"	८ ४ ४३	रश्मिरेखा
३१५	मेरे धम्बर में निपट	"	"	स्मरण-बीप
३१६	धिये छया	"	"	"
३१७	तू मत नुके कोयनिना छबि	उल्लास बैल	८ ४ ४३	रश्मिरेखा
३१८	सुना सब संसार हुआ	"	९ ४ ४३	धिरजन की ललकारें
३१९	बन दर्जन छाय	"	"	अपसक
३२०	इति थी	"	१० ४ ४३	"
३२१	ठरवर धाम हुए धनुषी	"	११-४-४३	रश्मिरेखा

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थान	रचना-तिथि	शेष
३१८	बिडोही	उद्यान बेरा	१२-४-४३	प्रसयंकर
३१९	परब मेरे सागर पहाड़	,	२२-४-४३	"
३२०	मेरे साथी अज्ञात नाम	बरेली बेरा	३०-५-४३	,
३२१	रोको है रोको	"	३१-५-४३	स्मरण-वीप
३२२	क्या परबस बनमस पस मानस	,	८-६-४३	प्रसयंकर
३२३	पूँट हलाहुल	,	११-६-४३	
३२४	बर्षा लोके	,	१३-६-४३	रश्मिरेखा
३२५	ऐसा क्यों हूँ पबिकार	,	१८-६-४३	प्रसयंकर
३२६	यह है विजय का पस मार	,	२३-६-४३	"
३२७	भूमिस तब चित्र प्राण	,	१०-७-४३	रश्मिरेखा
३२८	ये आए ! ये आए	,	१७-७-४३	प्रसयंकर
३२९	तुनो तुनो धो सोने बालो !	,	२९-७-४३	"
३३०	धो मसबूर, किसान छो	,		,
३३१	कस सभी कपी बनमस	,	४-८-४३	,
३३२	घाकासा का लस	,	८-८-४३	स्मरण-वीप
३३३	तुम बिरकास हंसो पूसो	,	९-८-४३	रश्मिरेखा
३३४	धंगारों की मझिनी	"	१३-८-४३	स्मरण-वीप
३३५	काट में सापनी रसा दुखिमा	,	१५-८-४३	प्रसयंकर
३३६	यह है बापर यह है बापर	,	२४-८-४३	सिरजन की ससकारें
३३७	हंसिनि छड़ि अकास	,	२५-८-४३	नवीन-बोहावसी
३३८	है निज बस तन, पुर्न स्वबस मन	,	५-९-४३	सिरजन की ससकारें
३३९	तुम नि-सावन	,	६-९-४३	नवीन-बोहावसी
३४०	मानस की क्या अन्तिस गति-बिधि	,	८-९-४३	सिरजन की ससकारें
३४१	विजय-बस माहर	,	९-९-४३	नवीन-बोहावसी
३४२	राजेस्वर मानस	,	१४-९-४३	सिरजन की ससकारें
३४३	बसक छो बस धो	,	२८-९-४३	"
३४४	बैरानगर	"		
३४५	सो बह गाठा दूट रखा है	,	८-१०-४३	स्मरण-वीप
३४६	अबहापरबिता	,	७-११-४३	सिरजन की

क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
१४७	बिहँस उठो प्रियतम तुम	बरेली जेल	१८-११-४३	रश्मिरेखा
१४८	धार्मिक मह प्रदण्ड		२०-११-४३	"
१४९	सुकुमारी			
१५०	क्यों उलझे मन	"	२२-११-४३	
१५१	तिमिर भार	"	२४-११-४३	अपसक
१५२	यह रहस्य उड़वाटन रत मन		५-१२-४३	सिरजन की ससकारें
१५३	यह प्रवास धामास	"	६-१२-४३	नबीन-दोहाबली
१५४	मकबब का मृग	"	"	कवासि
१५५	पाठी	"	७-१२-४३	"
१५६	४६ बें बर्लि के बिल	"	८-१२-४३	अपसक
१५७	अस्तित्व नाम	"	९-१२-४३	"
१५८	प्राण, तुम्हारी हँसी सबीबी	"	१०-१२-४३	रश्मिरेखा
१५९	मैं तुमको निब गीत सुनाऊँ	"	११-१२-४३	"
१६०	भीग रही है मेरी रात	"	१२-१२-४३	"
१६१	क्या है ठक सपनों के पुर में	"	१३-१२-४३	"
१६२	मेरे प्रियतम, मेरे मंगल	"	१४-१२-४३	"
१६३	गरक के कीड़े	"	१७-१२-४३	प्रसयकर
१६४	तुम अन्-फिन् अकठार, रे	"	१९-१२-४३	कवासि
१६५	सबन करो संतत रस-बर्षण	"	२०-१२-४३	अपसक
१६६	प्राण तुम्हारे कर के कंकण	"	२१-१२-४३	
१६७	पीत	"	"	प्रसयकर
१६८	प्रिय तुमम कर सो मम लल-मल	"	२३-१२-४३	अपसक
१६९	क्यों धके तन क्यों बके मन ?	"	"	सिरजन की ससकारें
१७०	छोमें ये बन्द-झार	"	२५-१२-४३	कवासि
१७१	मेरे धरीत की ज्योति सहर	"	२८-१२-४३	प्रसयकर
१७२	हम हैं मस्त फकीर	"	२९-१२-४३	अपसक
१७३	क्या मैं कर सकता हूँ इत को अहठ	"	३०-१२-४३	सिरजन की ससकारें
१७४	मेरे प्राणाधिक	"	१-१-४४	नबीन-दोहाबली
१७५	अर्थ्य कारण शून्यता	"	८-१-४४	सिरजन की ससकारें

क्र.सं.	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	व्यक्ति एवं काल
३७९	हरक हरक मठ मिर, रे हय बस	बरेली जेल	६ १ ४४	अपकृत
३८०	सतत-प्रवासी	"	११ १ ४४	नवीन-शोहाबखी
३८८	मस्त छो	"	"	प्रसन्नकर
३८८	कवि जी	"	१२ १ ४४	स्मरण-धीप
३८८	जड़ गए तुम निमित्त भर में	"	१५ १ ४४	अपकृत
३८९	बन जल प्रसह कम का	"	१९ १ ४४	नवाधि
३८९	पागर में सामर	"	२१ १ ४४	स्मरण-धीप
३८९	भेदन-बीणा	"	२२ १ ४४	नवाधि
३८४	सूख-भुझैया	"	३० १ ४४	दिरजन की कलकारें
३८५	प्रिय बस वो	"	१-२-४४	"
३८६	खलक गैह-वन-भीर छो	"	२-२ ४४	रश्मिरेखा
३८७	तुम मेरी लोभ लहर	"	३ २-४४	नवाधि
३८८	हिम में सदा बौरनी छाई	"	८ २ ४४	रश्मिरेखा
३८८	घरे तुम हो कस के भी काज	"	६ २ ४४	प्रसन्नकर
३८०	पीबन-मवाह	"	१३ २ ४४	दिरजन की कलकारें
३८१	आन तुम्हारा बर करे है	"	१४ २ ४४	अपकृत
३८२	तेरा मेरा माता क्या है ?	"	१७ २ ४४	
३८३	फयुन में छावन	"	१८-२ ४४	रश्मिरेखा
३८४	प्रियजन ठन प्रियजन	"	२१ २ ४४	"
३८५	मेरे प्रियन खंजन घाए	"	२३-२ ४४	नवाधि
३८६	प्राण तुम मेरे हृषय दुखार	"	२७-२ ४४	रश्मिरेखा
३८७	स्मरण-कष्टक	"	१ ३ ४४	"
३८८	पान अन्ति का शंख बन रहा	"	८-३ ४४	"
३८९	पान है होसी का लोहर	"	९ ३ ४४	"
४०	विनिपाठ	"	१६ ३ ४४	दिरजन की कलकारें
४०१	पहेली मानक	"	२६ ३ ४४	नवीन-शोहाबखी
४०२	एकाकीनन	"	"	दिरजन की कलकारें
४०३	याद-नवे	"	८-४ ४४	नवीन-शोहाबखी
४०४	यथावस्था	"	"	दिरजन की कलकारें

क्रम संख्या	रचना-शीपक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
४०५	तुम मम मन्दार सुमन	बरेली जेल	१०-४-४४	रश्मिरेखा
४०६	बढ़ रहा है मार घेरा	"	११-४-४४	ध्रुवसक
४०७	चिन्ता	"	१५-४-४४	प्रलयकर
४०८	कामनिक भवसर	"	२२-४-४४	रश्मिरेखा
४०९	क्यों रोते हो यार	"	२३-४-४४	प्रलयकर
४१०	घो तुम भविष्य बीर	"	२५-४-४४	
४११	घो मेरे मधुराघर	"	१-५-४४	रश्मिरेखा
४१२	नास्तिक का भाषार	"	"	सिरजन की बसकारें
४१३	द्विषा-सोप	"	२-५-४४	स्मरण-बीप
४१४	क्यास मौन हाहाकार	"	३-५-४४	"
४१५	आमो, मेरे प्राण-पिरीते	"	६-५-४४	रश्मिरेखा
४१६	स्मरण-बिहंगम	"	९-५-४४	स्मरण-बीप
४१७	घेरा क्या क्या कसन ?	"	१०-५-४४	ध्रुवसक
४१८	घेरा मन	"	१२-५-४४	रश्मिरेखा
४१९	ग्वर मरीक रहा है	"	१८-५-४४	ध्रुवसक
४२०	धरणी-धरणी बाट	"	२४-५-४४	नबीन-बोहाबसो
४२१	क्या बतमाएँ रोने वाले	"	११-६-४४	स्मरण-बीप
४२२	उखी बैपुरि में लोका	"	१२-६-४४	प्रलयकर
४२३	भाभी की चिन्ताएँ	"	१६-६-४४	कवासि
४२४	सुन्दर	"	१८-६-४४	सिरजन की बसकारें
४२५	बुलकित मम रोम-रोम	"	३-७-४४	कवासि
४२६	सेनिक । बीत !!	"	१७-७-४४	प्रलयकर
४२७	पै तो सजल धा ही रही थी	"	४-८-४४	कवासि
४२८	प्राणधन यह महमत्त बयार	"	६-८-४४	रश्मिरेखा
४२९	उगमें धावन के धरावर	"	९-८-४४	स्मरण-बीप
४३०	तब मुझ मुसकलत प्राण	"	१२-८-४४	रश्मिरेखा
४३१	आमो, प्रिय हृदय लयो	"	१३-८-४४	ध्रुवसक
४३२	मम मन पंखो धनुषावा	"	१६-८-४४	रश्मिरेखा
४३३	मेरे मौन लयी प्राण	"	१७-८-४४	ध्रुवसक
४३४	तुम हँसते से प्राण	"	२३-८-४४	स्मरण-बीप
४३५	केन्द्र-बिन्दु	"	२४-८-४४	
४३६	पह बिराग-बिबाद क्यों	"	१२-९-४४	कवासि
४३७	डरक बहो मेरे रस निर्जर	"	१-१०-४४	रश्मिरेखा



क्रम संख्या	रचना-शीर्षक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
४३८	सुम न घाना घतिथि बनकर	बरेली बेब	१०-१०-४४	घपसक
४३९	एक हो खै है येरे बन	"	सन् १९४४	प्रसन्नकर
४४०	मेरे बननाबक श्री बाणी	"	१९४४ (म०)	घसंगुहीठ
४४१	मानक एक भरखु बन्द	"	"	"
४४२	सिरबन की सलकारे मेरी	"	"	सिरबन की सलकारे
४४३	नौछ निर्वाण	"	"	"
४४४	घसंगारी नट	"	"	"
४४५	सुय हो	"	"	"
४४६	एक नीय	कानपुर	सन् १९४३ (म०)	घसंगुहीठ
४४७	घो सुम मेरे प्यारे बनान	बरेली बेब	६-१२-४३	प्रसन्नकर
४४८	घो सिरखन बाल बेरे	कानपुर	११-५-४३	घपसक
४४९	खिलनी दूर पघारे हो	"	११-६-४३	स्मरण-बीप
४५०	दुमर-सा कटवा है	"	"	"
४५१	सुम बिन बीबन, प्रियतम	"	२५-११-४३	क्यासि
४५२	येरी प्राण-प्रिया	रेसपय दिल्ली कानपुर	१३-३-४६	घपसक
४५३	घामो साकर बनो	कानपुर	६-६-४६	क्यासि
४५४	येरे स्मरण-बीप की बाती	"	११-४-४६	"
४५५	मित्री सिल्लारे देस	"	१७-८-४६	नवीन-बोहावती
४५६	फिर मा कई दिवासी	"	२३-१०-४६	स्मरण-बीप
४५७	येरी कह सतत टैर	"	२०-१२-४६	घपसक
४५८	हिन्दुस्तान हमारा है	नई दिल्ली	सन् १९४७ (म )	घसंगुहीठ
४५९	बोब घरे, हो पक के प्राणी	"	२९-३-४७	सिरबन की सलकारे
४६०	सुमने बीन क्या ब सही है ?	कानपुर	२९-६-४७	घपसक
४६१	पासु-बन्धना	दिल्ली	सन् १९४८ (म )	घसंगुहीठ
४६२	मैं निब मार बहल कर सूना	कानपुर	२८-४-४८	स्मरण-बीप
४६३	विस्मरण-बेब	"	२९-४-४८	"
४६४	मेरे मधुमय स्वप्न रंभीते	"	३-३-४८	क्यासि
४६५	रान का प्रतिधान क्या प्रिय	"	४-५-४८	घपसक
४६६	ब्राह्मों के पाहुन	"	६-५-४८	क्यासि

क्रम- संख्या	रचना-शीपक	रचना-स्थल	रचना-तिथि	विशेष
४६७	मे छोटा बा	दिल्ली	सन् १९४९ (घ०)	भरतगृहीत
४६८	तुम्हीं तुम		'	'
४६९	पान-निरत मम मन क्षम	मसूरी	१८-४-४९	स्वाति
४७०	त्रिभुंजमति	दिल्ली	१९४९ (घ०)	भरतगृहीत
४७१	मह ठप का ध्रुवतारा	"	सन् १९५० (घ०)	"
४७२	कौन गीत तुम घाब लिखोगे ?	"	"	"
४७३	हम फिर नूतन	"	सन् १९५१ (घ०)	'
४७४	घड़ो मन्त्रद्वष्टा हे ऋषिकर		१-४-५३	विनोबा-स्तम्भन
४७५	सकल	दिल्ली	२-५-५३	"
४७६	बल चुकी है बतिका		३-५-५३	'
४७७	पस्वि-संभार	'	८-५-५३	"
४७८	महाप्राण के स्वन	'	१२-५-५३	"
४७९	ईशावास्योपनिषद् बोसा	'	२२-५-५३	"
४८०	इस घण्टी पर लाना है	"	९-६-५३	"
४८१	बीबन-सफला	"	सन् १९५४ (घ०)	भरतगृहीत
४८२	भाषो धमराई में भाष	"	१७-५-५४	स्मरण-वीप
४८३	अष्टम करण-बन्धना	कानपुर	२३-७-५४	प्रसवकर
४८४	बीबन-मुस्तक	दिल्ली	५-९-५४	"
४८५	सुखमय चित्रमय	'	सन् १९५५ (घ०)	भरतगृहीत
४८६	तुम युग-परिवर्तक कासेम्बर	"	"	"
४८७	सुमसे बोले उर्ध्वपशुंग	"	"	"
	बाते पबौठ		"	"
४८८	कहो कब हो सकेगा बाल	'	"	"
	यह बीबन धजस साबन			
४८९	भरत-संघ के तुम हे	"	१८-१-५५	प्रसवकर
	बन-नास			
४९०	इन्द्र समुष्मय	कानपुर	२०-५-५५	विरजन की सतकारें
४९१	मेरे मन	'	२१-५-५५	"
४९२	निब सत्ता की रेखा	'	२२-५-५५	"
४९३	दुःख	'	'	"
४९४	बूढ़ीरती म्नामा	'	"	'
४९५	निरत मुक्ति-मुक्ति	'	२३-५-५५	'
४९६	धौं नून-मुक्त धौं	'	३०-५-५५	"
	एहि धार्मिकता है बीबन			

(व) अन्यत्र संकलित कविताएँ—

[प्रस्तुत सूची में, जगत्काव्य-संकलनों एवं ग्रन्थों के नाम दिये जा रहे हैं जिनमें नवीन की भी विविध कविताओं को स्थान प्रदान किया गया है।]

- (१) प्रथम के कृत—(महामानव की पर लिखित कविताओं का संग्रह)
- (२) धार्मिक हिन्दी-काव्य—
- (३) धार्मिक काव्य-संग्रह—
- (४) आकाशवाणी-काव्य-संग्रह—भाष १
- (५) आकाशवाणी-काव्य-संग्रह—भाष २
- (६) कवि भाषणी—
- (७) कविताएँ १९५४—
- सम्पादक डॉ० राजेश गुप्त, मुनिबंसल प्रेस, प्रयाग; 'महामानव के प्रति' (पृ० ४-६)।
- सम्पादक डॉ० धीरेन्द्र बर्मा एवं डॉ० रामकुमार बर्मा, सरस्वती पब्लिशिंग हाऊस, प्रयाग पंचम संस्करण, सं० २००६, 'विजय-मायन' (पृ० ३६५-३६७); 'तीन सूत्रों का यह माना' (पृष्ठ ३६७-४०८); 'कब किससे भुव भरल के ?' (पृष्ठ ४०८-४०९) 'तुहू की बात' (पृष्ठ ४०९-४१०), 'साजन मेरे सो रहे है' (पृ ४१०-४११) 'निज निज के बाग' (पृ ४१२-४१४), 'हिम-र र मेरी' (पृ ४१४-४१५)।
- सम्पादक डॉ० रामकुमार बर्मा, द्वितीय साहित्य सम्मेलन प्रयाग सं० २०११, सप्तम संस्करण, पराजय पीठ (पृ० ६६-६८)।
- पब्लिकेशन डिबीजन दिल्ली, प्रप्रेस, १९५७ बन-तारिण मग-बीनहरसि है (पृ ७५-७६)।
- पब्लिकेशन डिबीजन दिल्ली, प्रप्रेस १९५७, गायन-स्वन भर सो (पृ० ६६-७०)।
- सम्पादक, श्री सुमित्रानन्दन पन्त श्री बातकल्प्य राव और डॉ० मंगेश, साहित्य सदन, बिरगांव (झाँसी), सं० २०१०, यह हिन्दुस्तान हमारा है (पृ २८० से २८१) पराजय पीठ (पृ० २८१-२८७) सुन्दर (पृ २८७-२८९) मानव की क्या अन्तिम पति विधि (पृ २९०-२९५) अग्नि सीखा काव में (पृ० २९५-२९६) कुल सुम (पृ० २९६-३०४) अम-बाग (पृ० ३०४-३०६) आकाश का दब (पृ ३१०-३११); कठिका एक बसुल पर पूर (पृ० ३११-३१२), श्री हिरणी श्री घोषीबाग (पृ० ३१२-३१४)।
- सम्पादक, श्री अजितकुमार तथा श्री देवीबाग बनस्ती, साहित्य निकेतन, कानपुर, प्र

- संस्करण १९५५ ई०, पंच शील पंच लील (पृ० १६-३७) ।
- (८) कवियों की क्रांती—  
छात्रहितकारी पुस्तकमाला, प्रयाग सन् ५१  
विप्लव गायन (पृ० १५८-१५९), अगत उबारो  
(पृ० १५९-१६०) ।
- (९) काव्यसरोवर—  
सम्पादक डॉ० इन्द्रनाथ महाल पञ्जाब विश्व  
विद्यालय प्रथम संस्करण, सन् १९५०,  
विप्लव गायन (पृ० २१-५४) खेड़ो न  
(पृ० ५३-५६) ।
- (१०) काव्य-बारा—  
सम्पादक श्री शिवदानसिंह चौहान तथा  
श्री गोपालकृष्ण कौस भारमाराम एण्ड संस  
विस्नी सन् १९५५ रहस्य उड़वाटन  
(पृ० ६९-७६)
- (११) पाल्ही अमितलाल-ग्रन्थ—  
सम्पादक श्री सोहन शास द्विवेदी, इण्डियन  
प्रेस प्रथम द्वितीय संस्करण १९५६  
है धुरस्य बारा पचमामी (पृ० २१) ।
- (१२) मिडुल—( आसियर राम्य वर्तमान  
कवि हुरय )  
सम्पादक श्री रामकिशोर शर्मा 'किशोर'  
साहित्यिक मित्र-मन्थन आसियर, सन् ३२  
गौका निर्वाह (पृ १०-११); खेड़ो न  
(पृ० १२-१३), साक्षी (पृ० १३-१५)  
क्या करौ हो मोल (पृ० १५-१६), विप्लव  
गायन (पृ० १६-१८) ।
- (१३) परिचय—  
सम्पादक श्री आन्तिप्रिय द्विवेदी साहित्य  
सदन, चिरमाँव प्रथमावृत्ति, सं० १९८३ ।
- (१४) पुष्करिणी—  
सम्पादक श्री 'अज्ञेय' साहित्य सदन चिरमाँव,  
प्रथमावृत्ति सं० २०१६ वि०, हम हैं  
मस्त फकीर (पृ १८१) हम अलिकेतन  
(पृ० २८२-२८३) नामो प्राण विरीठे  
(पृ० २८३); माबनेष (पृ २८४) प्रिय लो  
हूब चुका है सूरज (पृ० २८४-२८५),  
केतन बीछा (पृ० २८६) प्रिय मैं घाब  
मरी अघरी सी (पृ० २८६-२८८) डोलैबालो  
(पृ० २८८-२८९) मैं तो सवन का ही रही पी  
(पृ० २८९-२९०) ओ हिरनी की आँखोंवाली  
(पृ० २९०-२९३, कलिका हक बबुल पर  
फूली (पृ २९३-२९४) हम ता घोस-बिन्दु  
सम डरके (पृ० २९४) पयजय गीत (पृ०

२९५-२९६), गणेशसंकर अनुबंध साहित्य (पृ० २९७-२९८), विश्वकृष्ण (पृ० २९८-२९९) क्या मैं कर सकता हूँ इत्यादि का संग्रह (पृ० २९९-३०१) कर्त्तव्य ? कोशुम् (पृ० ३०१-३१०) बस चुकी है धरिका (पृ० ३१०-३११)।

(१५) भारतीय कविता—

साहित्य प्रकाशनी नई दिल्ली प्रथम संस्करण सन् १९५६, प्रहो मन्त्र इत्यादि है अपिबर् (पृ० ५३५-५७०)।

(१६) सुन्धी अभिनन्दन ग्रन्थ—

सम्पादक श्री बासकृष्ण शर्मा 'तवीन' श्री भीमारायण अनुबंधी श्री उदयसंकर भट्ट, श्री बलभद्र भट्ट श्री देवेश सत्यार्षी, सुन्धी अभिनन्दन ग्रन्थ समिति नई दिल्ली क्रीन पीठ पुनः प्रकाशित (पृ० ५४५-५४६)।

(१७) राष्ट्रीय कविताएँ—

संस्कृतकर्ता श्री विशालिबास मिश्र सुन्धी विभाग उत्तर प्रदेश द्वितीय संस्करण बुलाई, १९५८ ई०, विष्णव गायन (पृ० ८९)।

(१८) राजधानी के कवि—

सम्पादक श्री गोपालकृष्ण कौल तथा श्री रामाचतार श्यामी निर्माण-प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९५३, हिम में छाया शायली झाई (पृ० १-३); मन्मथ का मूक (पृ० ३५); सुबन बीसा (पृ० ६)।

(१९) क्याम्बर—

सम्पादक, 'श्री भद्रेश' तथा श्री सर्वेश्वर बवास संकेतना भारतीय ज्ञानपीठ काशी प्रथम संस्करण; सन् १९६६; कश्मिरा बहुस पर फूली (पृ० ११९-१२२)।

(२०) साहित्य-कथन—

सम्पादक श्री वैशेषिकुमार, राजपाल एम्ब सन्ध, दिल्ली द्वितीय संस्करण सन् १९५६ विष्णव गायन (पृ० १५५-१५८) लिखर पर (पृ० १५९)।

(२१) सीहार्न सुन—

(एशिया के महाकवि श्री मोन नावची के भारत आगमन पर समर्पित)—द्वितीय कथन कथकता १ विष्णव, १९३३ ई० पुनःपुन (पृ० ३३-३४)।

(२२) संकेत—

सम्पादक श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा 'मीताम प्रकाशन प्रयाग निज समाज की रक्षा (पृ० २३५-२३८)।

(२३) हिन्दी के वर्तमान कवि और  
उनका काव्य—

सम्पादक पं० गिरिजादत्त शुक्ल 'मिरीच' का  
क्यासी पुस्तक मंडार, बनारस प्रथम संस्करण  
जून १९५४, बस बस घर न मपो यह जीवन  
(पृ० १११ ११२) ।

(२४) हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेम-गीत—

सम्पादक श्री छेमचन्द्र मुमन हिन्दू पाकेट बुक्स  
प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, प्रथम संस्करण,  
मठ गृह मोक़ घरे बेररौ (पृ० ८०-८१) ।



परिशिष्ट—३

## श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की गद्य रचनाएँ

[‘नवीन’ की की स्व-रचित-काव्य-कृतियों की सूचिकाओं आदि के पद्यांशों के प्रतिरिक्त  
अन्य प्राप्त रचनाओं की सूची]—

(क) गद्य-काव्य—

(१) त्रितीय चिन्ता—

प्रभा, १ नवम्बर १९२० पृ० ३०४।

(२) कमला मानी—

पश्चित नेहरू अभिनन्दन-ग्रन्थ विनोद पुस्तक  
मन्दिर, भायरा प्रपमावृत्ति त्रिपि १४ नवम्बर  
१९४८, पृष्ठ २९३०।

(ख) कहानियाँ—

(३) सत्यु—

सरस्वती बनवरी १९१८ पृष्ठ ४२-४३।

(४) परिवार बीणा—

प्रतिभा, मार्च, १९१८ पृष्ठ ३७२-३७३।

(५) मोई बीजी—

श्री धारण १२ अक्तूबर, १९२० पृ०  
२८-३३।

(६) बावली—

प्रभा १ जून १९२२, पृ० ४२२-४२३।

(७) मैरा स्या—

प्रभा मार्च, १९२३ पृष्ठ १९२-१९७।

(८) हाड़ का कंकाल—

साप्ताहिक ‘प्रताप’।

(ग) भारतकथा एवं संस्मरण—

(९) मेरी अपनी बात—

नवदलित सन् १९३९।

(१०) राष्ट्रपति के बर्तन—

(मौलाना अबुल कसाम आजाद पर लिखित  
लेख) साप्ताहिक ‘प्रताप’, २० जुलाई, १९४५।  
साप्ताहिक ‘प्रताप’ १८ दिसम्बर, १९४५,  
पृष्ठ २।

(११) हा। विरहम्मर नाथ—

श्री नारायणप्रसाद धरोड़ा अभिनन्दन-ग्रन्थ,  
१३-१२ १९३० पृष्ठ ४२।

(१२) पूजनीय धरोड़ा श्री—

बासमकुन्द गुप्त स्मारक-ग्रन्थ सं० २००७  
पृष्ठ ४०१-४०३।

(१३) हे, जिन्होंने धसक बगाया—

ब्राह्मन्त वर्ष कामेव, कानपुर हीरक बयस्ती  
विद्येपाठ-पत्रिका सन् १९४२ पृ० ८२-८३।  
संस्मरण साप्ताहिक ‘हिन्दुस्तान’ अग्रस्त सन्  
१९४२।

(१४) एष धाई बालो देल—

वही।

(१५) श्री मैथिलीसरण गुप्त—

(१६) बवाहर भाई



(१७) एकाराजनानिष्ट वैदिकीधरस्य कुत—

(१८) प्रेमकाव्य-एक स्मृति चित्र—

(१९) बीनबन्धु एषी महमर किरवई—

(२०) पुष्यस्मोक गणेश जी—

(२१) शशा साहब भावसंकार—

(घ) निबन्ध एवं धालोचना—

(२२) माननीय पण्डित मोतीलाल नेहरू —

(२३) श्री मैपिडीधरस्य स्वर्णजयन्ती—

(२४) द्विन्दुस्तानी का प्रचार वातक है—

(२५) हम किरर जा रहे हैं ?—

(२६) स्वाध्याय धीर सत्साहित्य सृजन—

(२७) सत्य-कवि

(२८) ब्रह्म-साहित्य की महत्ता और उपयोगिता

(२९) कौन कहता है कि तुमको

आ सकेगा कास

(३०) द्विन्धी में पारिभाषिक सम्भावनी

(३१) भारतीय संविधान की भाषा-विषयक

नीति का विरोध क्यों ?

(३२) कुछ विचारणीय प्रश्न

(३३) राष्ट्र भाषा द्विन्धी के प्रति हमारा

कर्तव्य—

(३४) कतिपय प्रसिद्ध तथा महत्वपूर्ण सम्पादकीय टिप्पणियाँ एवं लेख—

(३५) दैनिक प्रताप की १३ एवं १९ जनवरी,

१९२१ की सम्पादकीय टिप्पणियाँ ।

(३६) पचासो देव—

(३७) राखी—

(३८) पतन—

(३९) लण्डन के पतने से —

(४०) वे—

(४१) मिरची की बूनी और लमाचा

(४२) बहिष्कार में कच्चे —

राष्ट्र कवि मैपिडीधरस्य पुत्र धर्मिनन्दन-काव्य,  
पृष्ठ ३५२ ३५५ ।

आजकल, अफसुवर, १९५२ ।

बही जनवरी, १९५५, पृ० २६ २९ ।

बही मार्च, १९५५ पृ० १४ १७ ।

विपचना मार्च, १९५६ पृष्ठ ९२-९३ ।

प्रभा, जनवरी, १९२०, पृष्ठ ४६ ४८ ।

काव्यकलाधर अग्रैल, १९३६ पृष्ठ ३३७-  
३३९ ।

आगामी कल, मई, १९४४ पृष्ठ ३२ ।

दिन्यावाखी ११ अग्रेष्ठ १९४९ पृष्ठ ३ ।

बीणा बून, १९५० पृष्ठ ४६९ ४७१ ।

घाई बीरसिंह धर्मिनन्दन-काव्य दिन्धी, सन्

१९५४ पृ० १७६ १८६ ।

पञ्जमावरी कास्मून, सं० २०१६ १७,

पृष्ठ ९ १० ।

साप्ताहिक 'प्रताप' २२ मार्च १९४९ पृष्ठ

११ १५ ।

दैनिक 'जनसत्ता' ८ सित०, १९५३ पृ० २ ।

बही १० सित०, १९५३ पृ० २ ।

बही २३ ९ १९५६ पृ० २ ।

पञ्जमावरी कास्मून, २०१६ १७ । पृष्ठ ५१

५२ ५३ ५४ ।

महात्मायान्धी पर लिखित लेख साप्ताहिक  
'प्रताप' ।

बही ।

बही ९ अगस्त १९३१ ।

बही, अगस्त १९३१ ।

बही ।

बही ।

श्री सियाचम धरण गुप्त पर लिखित लेख  
साप्ताहिक प्रताप, सियाचमधरस्य कुप्त प्रक ।

- (४२) आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी—  
 साप्ताहिक प्रठाप, सन् १९३९ ।
- (४३) मुष्कामिरी टोकने में वह नपुंसकता  
 कैसी ?  
 सम्पादकीय टिप्पणी, साप्ताहिक प्रठाप ३०  
 अप्रैल, १९३९ ।
- (४४) वैजली सन्धास—  
 सम्पादकीय टिप्पणी, सारणी, २७ अक्टूबर  
 १९४२ ।
- (ब) भूमिकाएँ
- (४५) श्री कथाहर-बोहानसी—  
 दोहा-संग्रह नाथरी निकेतन धारण, प्रथम  
 संस्करण, १९३९ ई०, कवि श्री स्वामिसुन्दर  
 दीक्षित की कृति श्री भूमिका ।
- (४६) ज्वाला—  
 काव्य-संग्रह, कवि श्री केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'  
 की कृति श्री भूमिका 'ज्वाला की तरंग' १०  
 जुलाई १९२९ ई ।
- (४७) अर्ध-रत्न—  
 काव्य-संग्रह सरस्वती प्रकाशन मन्दिर, प्रयाग,  
 प्रथमावृत्ति, सं० १९६८ वि० कवि श्री  
 अययन्तसरण चौहरी की कृति श्री भूमिका  
 अर्ध-रत्न (पृ० १४) ।
- (४८) नीर-वचनावली—  
 काव्य-संग्रह, भाई बीरसिंह प्रतिगन्धनग्रन्थ-  
 समिति नई दिल्ली सन् १९५१ ई० भाई  
 बीरसिंह की कृति श्री भूमिका 'कवि-परिचय ।
- (४९) चैतना—  
 काव्य-संग्रह कवि श्री बाबूराम पाटीबाल की  
 कृति श्री भूमिका ।
- (५०) महात्मा दाम्भी—  
 पत्रिकाकेन्द्र किरीचन, सुचना व प्रसार  
 मन्त्रालय, भारत सरकार, दिल्ली प्रथमावृत्ति,  
 नवम्बर १९५५ भूमिका दाम्भी-वर्तन  
 (पृ० १२२) ।
- (घ) कतिपय विशिष्ट साहित्य-पत्र
- (५१) अपनी जीवन दाम्भी मास्यता के विषय में प्रकाश डालनेवाला श्री बाबूराम  
 निम्पुरामकर की को लिखित ६३ १९२९ का पत्र 'पराङ्कर की नीर पत्रकारिता',  
 पृष्ठ ८७ पर प्रकाशित ।
- (५२) अपनी साहित्यिक मास्यता के विषय में श्री बनारसीदास कपूरुंकी को लिखा  
 गया पत्र विद्यालय भारत, अक्तूबर, १९३७ ई० पृष्ठ ४७२ पर प्रकाशित ।
- (५३) अपनी साहित्यिक मास्यता के विषय में श्री प्रभागचन्द्र शर्मा को लिखित पत्र,  
 धानापी कन्न, बनवरी १९४२ में प्रकाशित ।
- (५४) अपना जीवन-विवेक्षण करने वाला श्री रामोदरदास भगतानी को लिखित  
 (दिनांक ४१ १९४८ का) पत्र, अप्रकाशित ।

(५३) अपनी काव्य-रसशाहीकृति का निष्पन्न, श्री रामानुजदास भीवास्तव को सिद्धित (विनांक ४ जून १९५४ का) पत्र, प्रकाशित ।

(५४) अपनी विचारधारा के प्रतिपादक, श्री रामनारायण सिंह मयूर को सिद्धित दो पत्र साप्ताहिक 'भाब', २९ मई, १९६० पृष्ठ १० पर प्रकाशित ।

(ज) आकाशवाणी वार्ता

(५७) हिन्दी साहित्य की समस्यार्थ—

रेडियो संग्रह पुनर्दि-सितम्बर, १९५३ ।

(५८) विनोबा—

आकाशवाणी प्रसारिका, पुनर्दि-सितम्बर १९५४ ।

(५९) माई बीरसिंह—

आकाशवाणी प्रसारिका, अग्रेष्ठ-जून, १९५७ ।

(झ) बिसिष्ट साहित्यिक भाषण

(६०) नामपुर साहित्य सम्मेलन के अन्तर्गत आयोजित कवि सम्मेलन के समापति-पत्र से विना गया कवि का अन्धश्रवण समिन्धावण काव्य-कसावर, अग्रेष्ठ १९३६ ।

(६१) कनरागृह से मुक्ति के पश्चात्, पत्रकार द्वारा सम्मानित किमी जार्ज पर कवि का कानपुर में भाषण सन् १९४५, आषाढी कल, अग्रेष्ठ १९४५ पृष्ठ ३ पर प्रकाशित ।

(६२) संयुक्त प्रांतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के पंचम अधिवेशन में हिन्दी के पद्य एवं हिन्दुत्वानी के विरोध में दिया गया कवि का भाषण ३१ मार्च १९४५ ई० बीछा अग्रेष्ठ १९४५, पृ २२२ पर प्रकाशित ।

(६३) उत्तरप्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, काशी के सप्तम अधिवेशन में कवि का अन्धश्रवण भाषण—'राष्ट्रमाता संस्कृति का अविच्छेद्य अंग है', 'बीछा' नवम्बर १९४७ पृष्ठ १७-२२ पर प्रकाशित ।

(६४) ब्रजसाहित्य मन्थन के सहरनपुर के स्युट अधिवेशन में कवि का अन्धश्रवण भाषण ब्रज-भारती अंक ३-४ स० २०६ ।

(६५) मध्यभारत हिन्दी साहित्य सम्मेलन के आशियर अधिवेशन में कवि का अन्धश्रवण भाषण विक्रम, दिसम्बर १९५२ पृष्ठ ७-९ पर प्रकाशित ।

(६६) उत्तरप्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के बस्ती अधिवेशन में कवि का अन्धश्रवण भाषण स० २०११ की कर्म-विचारण पुस्तिका में प्रकाशित ।

(६७) निश्चित मात्रा बंग-साहित्य सम्मेलन के ३२वें अधिवेशन (आगरा) के उत्सवकार्य में आयोजित हिन्दी साहित्य एवं कवि-सम्मेलन के समापति पत्र से दिया गया कवि का अन्धश्रवण भाषण, साहित्य अकादेमी, दिसम्बर १९५३ पृ० २४९-२५१ पर प्रकाशित ।

## Constituent Assembly Debates

Subject	Date	Name of book.	Pages
1947 1 Presentation of credentials and signing of register	20th to 25th Jan. 1947	The constituent Assembly debates Vol. II 1947	267
2 Interim Report on fundamental rights.	28th April to 2nd May 1947	» Vol. III 1947	453
3 Election changes from Bengal and Punjab.	14th to 31st July 1947	Vol. IV 1947	543-544
4 Report on the Principles of a model provincial constitution.	"	"	583-584
5 Resolution re: National Flag.	"	"	753-754
6 Incidents connected with the flag Hoisting ceremony in certain parts of India.	14th August to 30th August, 47	» Vol. V, 1947	26-27 and 33
7 Report of the Union power committee.	"	"	46 and 76-79
8 Rehabilitation of refugees from Pakistan.	18th Nov 47	Vol. I No. 2 1947	65
9 Dishonouring the Indian Union Flag	19th Nov 47	» Vol. No. 3 1947	157
10 Press (special powers) Bill (Hindi speech)	"	"	265 268
11 Quantity of Iron steel and cement in Indian Union.	20th Nov 47	» No. 4	303
12 Measures for Protection of Border Areas.	25th Nov 47	Vol. I No. 7	569
13 The Railway Budget General discussion.	"	"	623-631
14 Motion for adjournment of re-announcement to decontrol Sugar and consequent rise in prices.	25th Nov 1947	Vol. I No. 7	981

	Subject	Date	Name of book	Page-
15.	Motion re : food policy of the Government of India.	25th Nov 1947	Vol. I No. 7	1635-37& 1674
16.	Motion to reduce demand for Ministry of Industry and supply Removal of control over cloth yarn and other than food		"	1310
17	Question re. National Museum and Library for India,	"	"	1597-58
18.	Consumption of Petrol.		"	962
19	Control of Khandasari and Gur		"	1438
20	Cow-dung gas plant.	,	"	931
21	Development of Industries	"	"	929
22.	Evacuation of Hindus from N W F Province.	"	"	1329
23.	Resolution Re. organisation of a National Militia.	27th Nov 1947	" No. 9	811-812
24	Explanation of Misunder standing	"	"	817
25.	Armed Forces (special powers)	11th Dec. 47	Vol. III No. 1	1733-1738 39-40
26.	Exemptions to members of constituent Assembly Provisions of Arms Act.	12th Dec. 1947	" " No. 2	1800
27	Manufacture of Vegetable Ghee.	"	"	943
1948.				
28.	Arrest of Shri V D Tripathi.	27th Jan. 48	Vol. VI 1948	2-3
29	Arrangements for Evacuation of Non-Muslims left in Bahawalpur state.	26th Jan. 1948	"	1
30.	Draft constitution Article B-A	4th Nov 48 to 8th Jan. 49	VII 1948-49	573
31	Motion (General Discussion)	"	"	45-214-15 and 272 75

Subject	Date	Name of book.	Page.
32. Motion re. preparation of Electoral rolls.	4th Nov 48 to 8th Jan. 49	VII 1948-49	1372-73
33. Programme of business 1949	"	"	19-21
34. Addition of para 4-A to constituent Assembly Rules (schedule).	16th May to 16th June 49	Vol. No. VIII 1949	363 & 366
35. Hindi Numerals on car Number plates.	"	"	745-46.
36. Ratification of common Wealth decision.	16th May to 16th June 49.	Vol. No. VIII 1949	11, 14, 20, 37, 38 & 40
37. Report of Advisory Committee on minorities.	"	"	275-76
38. Draft constitution Article 24.	30th July to 18th Sept. 49	, IX 1949	1197 1274 1275, 1281 1283 & 1284 667
39. Article 294	"	"	1313-14, 1317 1353, 1399 1400, 1432, 1435, 1463 & 1467
40. New Part XIV A (Language).	"	"	517
41. Draft Constitution First schedule.	6th to 17th Oct. 49	, X 1949	484, 501, 502, 509, 512, 522, 526, 527 551 52, 562
42. Draft constitution Amendments of Articles.	14th to 16th Nov 49	XI 1949	63, 581 590 595 690-667, 69
3. Third Reading.	"	"	932.
Government of India Act (Amendment) Bill.	"	XI 1949	

Lok Sabha Debates

Subject	Date	Name of book.	Page.
1953			
1. Law Minister's speech re. speaker's certificate on India Income tax (Amendment) Bill.	1st May 1953	Lok Sabha Debates Vol. 9 IV V	5545-5549
2. Vindhya Pradesh Legislative Assembly (Prevention of disqualification) Bill-Motion to consider	11 5-53	Lok Sabha Debates Vol. IV V	6356-63
3. Special Marriage Bill-Motion to Join the Joint committee of the Houses.	14-12 53	" X	2062 & 2065
4. " "	16-12 53	" "	2300
1954			
5. Demands for grants-1954-55 Broad-casting, Motion to reduce the Demand-Music Policy and work of Light Music Units of A. I. R.	8-4-54	" Vol. III	4572 75
6. Programme policy of AIR	"	"	4366-67
7. Ministry of Information and Broad-casting	"	"	4360-77
8. Motion to reduce the Demand Music Artists servicing committee.	"	"	4375-77
9. Delimitation commission (Amendment) Bill-Motion to consider	18-12-54	Vol. IX	3341-44
10. Resolution Re Removal of speaker	"	"	3285-86
1955			
11. Insurance (Amendment) Bill Motion to consider	6-12 55	Vol. IX	1572.
12. " "	7 12-55	"	1642-1643.
13. Report of states Re-organisation commission.	14-12 55	Vol X	2586.

1956

	Subject	Date	Name of book	Page.
14	Proceedings of Legislature (Protection of Publication) bill by Shri Feroze Gandhi.	23-3-55	Vol. II	3552
15.	" "	5-4-56	Vol. III	4630-4634
16.	" " (Amendment to refer to select committee)	"	"	4630-4634
17	Calling attention to Matter of urgent Public importance. Government policy with regard to Algeria	22 5-56	Vol. V	9106





## सन्दर्भ-ग्रन्थ

- (१) संस्कृत-ग्रन्थ
- (१) अथर्ववेद
- (२) अमिनव गुप्त— अम्यासोकसोचन ।
- (३) अग्निपुराण
- (४) धानन्दचर्चन— ' अम्यासोक
- (५) इलाहाबादोपनिषद् ।
- (६) श्वेत
- (७) कठोपनिषद्
- (८) कामिदास— मेघदूत
- (९) कुण्डक— द्वितीयकथोक्ति प्रीति
- (१०) कन्नडो द्वाराकाप्रसाद धर्मा द्वारा अनूदित—रामायण
- (११) कबलाय— रसगंगाधर
- (१२) कौटिल्य उपनिषद्
- (१३) कबी— काव्यादर्श
- (१४) कामा— काव्यालंकार
- (१५) कष्ट— काव्यालंकार
- (१६) राजशेखर— काव्यमीमांसा
- (१७) कामत— द्वितीय काव्यालंकार सूत्र
- (१८) विरुनाथ— साहित्य-दर्पण
- (१९) मित्र द्वारा सम्पादित— उत्तररामचरित
- (२०) श्रीमद्भगवद्गीता
- (२१) हेमचन्द्र— काव्यानुशासन
- (२) हिन्दी-ग्रन्थ
- (२२) अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिदोष'
- (२३) " वैदेशी बनवास
- (२४) द्वितीय माया घोर साहित्य विकास
- (२५) अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी समाचार-पत्रों का इतिहास
- (२६) अनन्त— द्वितीय साहित्य के सहज बर्त
- (२७) अज्ञेय— पुष्करिणी
- (२८) अक्षयप्रसाद— कविताएँ १९५४
- (२९) आकाशवाणी काव्य संग्रह माघ १

(१०) आकाशवाणी काव्य संगम	भाग २
(११) भारतीश्रवाव सिंह	संभविता
(१२) आशा युता—	सुधीबोली काव्य में अभिव्यक्ति
(१३) आन का भारतीय साहित्य	
(१४) इन्द्रनाथ मदान—	काव्य सरोवर
(१५) इन्द्रनाथ सिंह—	हिन्दी साहित्य चिन्तन
(१६) उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन	बाती अभिवेदन सं० २०११ का कार्य-विवरण
(१७) उदयमानुसिंह	महावीरप्रसाद द्विवेदी और उनका युग
(१८) उमाकान्त—	मैत्रिलीधरराय पुस्तक—कवि और भारतीय संस्कृति के आस्थावा
(१९) उदयशंकर मट्ट—	राष्ट्र
(४०)	विचर्जन
(४१)	मरु पंचरत्न (सम्पादित)
(४२) उष	व्यक्तिगत
(४३) उपेन्द्रनाथ अग्रवाल	संकेत
(४४) उदयनारायण विजारी—	हिन्दी भाषा तथा साहित्य
(४५) एकेश्वरशर्मा	
(४६) श्यामिनी कौशिक-कता—	माधनमान चतुर्वेदी जीवनी
(४७) कमलाकान्त पाठक—	मैत्रिलीधरराय पुस्तक—व्यक्ति और काव्य
(४८) कन्हैयादास—	कवि के प्रस्ताव
(४९) कवियों की शरीर—	
(५०) कामिस बुद्धे—	रामकथा
(५१) केदारदेव उपपाध्याय—	नवीन दर्शन
(५२) केशरी नारायण शुक्ल—	साधुनिक काव्यकारा
(५३) केदारनाथ मिश्र 'प्रियात—	ज्वाला
(५४) कुंजबिहारी बाजपेयी—	तस्वीर तुम्हारी हूँ
(५५) मयाप्रसाद दुसत 'समैहो'—	राष्ट्रीय बीणा
(५६)	त्रिगुण तरंग
(५७) माधवी अमिनन्दन इन्ड—	
(५८) मोहन राम शर्मा—	हिन्दी के साधुनिक महाकाव्य
(५९) गोपासधरराय सिंह—	बगवाणक
(६०) शुक्मल सिंह—	मुरबही
(६१) गुलाबराय—	सिद्धान्त और अध्ययन
(६२) मंगलप्रसाद पाण्डेय—	महादेवी का विवेचनारामक गद्य
(६३) बनुरसेन धामी—	हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास

(६४) कमलवती पाण्डेय—	हिन्दी की हिमायत क्यों ?
(६५) बसवंत प्रसाद—	भरना
(६६) " "	सङ्घ
(६७) " "	कामायनी
(६८) " "	काम्य कला तथा काम्य निबन्ध
(६९) " "	भाँसू
(७०) बहादुरदास मेहता—	मेरा कहानी
(७१) " "	हिन्दुस्तान की समस्याएँ
(७२) " "	राष्ट्रपिता
(७३) बनभायप्रसाद भाजु—	छन्द प्रमाकर
(७४) बाबडेकर—	धार्मिक भारत
(७५) बानकीबस्तम साहू—	साहित्य-दर्शन
(७६) सुसमीदास—	कवितावली
(७७) " "	बरने रामायण
(७८) " "	विनयपत्रिका तथा रामचरित मानस
(७९) बबानन्द सारस्वती—	सत्यार्थ-प्रकाश
(८०) बघरन घोष—	समीक्षा-साक्ष
(८१) देववत शास्त्री—	पर्योषणकर विद्यार्थी
(८२) " "	साहित्य-कारों की भारतकथा
(८३) देवीचरण रस्तोगी—	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास
(८४) देवीप्रसाद बनन 'विक्रम'—	साहित्यकार निकट से
(८५) देवराज—	छायावाद का पठन
(८६) दीसतरुण सुष्ठ द्वारा सम्पादित—	विश्वक नियोग में शोकाधु
(८७) दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन का वार्षिक विवरण सन् ५६-६०	
(८८) " "	अभिनन्दन-पत्र दिनांक = १२ ५६
(८९) श्रीरेणु बर्मा द्वारा सम्पादित—	हिन्दी साहित्य-कोष
(९०) श्रीरेणु बर्मा और रामकुमार बर्मा	धार्मिक हिन्दी काम्य
(९१) नन्दकुमार बाजपेयी—	हिन्दी साहित्य—बीसवीं शताब्दी
(९२) " "	धार्मिक साहित्य
(९३) " "	श्री भगवतीप्रसाद बाजपेयी अभिनन्दन-पत्र (सम्पादित)
(९४) मयेन्द्र—	बन बासा
(९५) " "	साकेत—एक अध्ययन
(९६) " "	विचार और विवेचन

(६७) नवेन्द्र—	प्राबुनिक हिन्दी कविता की सूक्ष्म प्रकृतियाँ
(६८) ,,	विचार और विश्लेषण
(६९) ,,	परस्तु का काव्य-शास्त्र
(१००)	हिन्दी ध्वन्यालोक (सम्पादित)
(१०१) ,,	पारसी काव्य-शास्त्र की परम्परा
(१०२) नमिनविशेषण शर्मा द्वारा सम्पादित—	चतुर्बेध भाषा निबन्धावली
(१०३) नरेन्द्र वैद्य—	राष्ट्रीयता और समाजवाद
(१०४) नरेन्द्रचन्द्र चतुर्बेदी—	हिन्दी साहित्य विकास और कानपुर
(१०५) ठाकुरप्रसाद सिंह—	महाभाग
(१०६) पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' —	मैं इनसे मिला, बूझरी फिस्त
(१०७) परमेश्वर द्विवेद—	भीरा
(१०८) ,,	युवकान्ता प्रेमचन्द
(१०९) फूलमिस्रीदारमय्या—	कविता का इतिहास
(११०) पुस्तसाह दुग्गल—	प्राबुनिक हिन्दी-काव्य में कल्प योजना
(१११) पं० मेहता—	
(११२) प्रकाशचन्द्र गुप्त—	हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा
(११३)	नया हिन्दी साहित्य
(११४)	साहित्य भार
(११५) प्रभाकर भास्कर—	व्यक्ति और वाक्य
(११६) ,,	हिन्दी साहित्य की कहानी
(११७) प्रतिपाद सिंह—	बीसवीं शताब्दी के महाकाव्य
(११८) प्रभाकर शर्मा—	भास्करवाणी बाठी, इन्दीर, प्रसारण-विधि
(११९) —	५ १२ १९६०
(१२०) प्रेमचन्द—	प्रेमचन्द सर्वस्व भाग १
(१२१) प्रेमनारायण टण्डन—	प्रसाद का काव्य
(१२२) बलदेवप्रसाद मिश्र	द्विवेदी भीमासा
(१२३) बनारसी चतुर्बेदी—	साकेत सप्त
(१२४)	रेखाचित्र
(१२५)	धर्मरक्षणीय रामप्रसाद बिस्मिल (सम्पादित)
(१२६)	गणेश स्मारक कल्प (सम्पादित)
(१२७) बाबुराम पासीवाल —	भेदना
(१२८) —	बालमकुन्द स्मारक कल्प
(१२९) बालेश्वर प्रसाद सिंह	स्वराज्य बर्षण (सम्पादित)
(१३०) बैजनाथसिंह 'विनोद'	द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र
(१३१) भवबन्धुधरल चौहरी—	धर्मना
(१३२) भवानीचन्द्र शर्मा द्विवेदी—	इन्द्राण हिन्दी साहित्य और भाषा परिचार

(१३२) भगवतीघरण वर्मा—	मञ्जुश्या
(१३३) —	भारतीय वाङ्मय
(१३४) भारतभूषण भद्रबास—	डॉ० नरेश के श्रेष्ठ निबन्ध
(१३५) —	भारतभूषण व्याख्यान भाग १
(१३६) —	माई बीरसिंह अभिनन्दन ग्रन्थ
(१३७) महात्मा यात्री	मेरे समकालीन
(१३८) महात्मा यात्री	
(१३९) महावीरप्रसाद द्विवेदी—	रसज्ञ-रंजन
(१४०) महादेवी वर्मा—	माता
(१४१) ”	साम्बन्धीत
(१४२) माताप्रणय गुप्त द्वारा सम्पादित—	बापसी प्रत्यावर्ती
(१४३) माखनलाल खतुबेदी—	हिमकिरीटिनी
(१४४) ,	माता
(१४५) ,	समर्पण
(१४६) ”	भूषणरण
(१४७) ”	भमीर इण्डे मरीच इण्डे
(१४८) मेहताबसिंह खन्निप द्वारा सम्पादित—	स्वयंज्य बीणा
(१४९) मैत्रिणीघरण गुप्त—	स्वरोच संगीत
(१५०) ,	वीरगंगा
(१५१) मैत्रिणीघरण गुप्त—	मेघनाथ बच
(१५२)	संकेत
(१५३) ”	स्वास्मात् उमर जम्मान
(१५४) ,	बर्कसहर
(१५५)	भूमिभाव
(१५६) —	मिथ बन्धु विनोद
(१५७) —	मुंशी अभिनन्दन ग्रन्थ
(१५८) रघुवीरघरण मिश्र—	जननायक
(१५९) रघोश्याम ठाकुर—	प्राचीन साहित्य
(१६०) रघोश्याम वर्मा—	हिन्दी काव्य पर श्याम-प्रभाव
(१६१) रघुवंश शास गुप्त—	रवि बाबू के कुछ गीत
(१६२) रामकिशोर वर्मा किशोर	निर्द्वन्द्व
(१६३) रामेश्वरलाल शम्भेरबाबू ठाकुर—	धार्मिक हिन्दी कविता में प्रेम और शौन्दर्य
(१६४) रामसागर तियाठी	मुकन्द काव्य और बिहारी
(१६५) रामकृष्ण 'बैनीपुरी'—	विद्यापति की पदावली
(१६६) रामभाषण भापुर—	काव्यांजलि
(१६७) रामलाल सिंह—	धार्मिक निबन्ध

(१६८) रामचंद्रिन मिश्र—	काव्य-वर्णन
(१६९) —	राष्ट्रकवि मैथिलीधरराय ब्रह्म अभिनन्दन-काव्य
(१७०) —	राज्यपि अभिनन्दन काव्य
(१७१) रामानन्द तिवारी	पार्ष्वी
(१७२) रामचन्द्र मुक्त द्वारा सम्पादित—	बाबरी सम्भावनी
(१७३) ,	बोस्वामी दुमरीदास
(१७४) ,	हिन्दी साहित्य का इतिहास
(१७५) रामदत्तास वर्मा	प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ
(१७६) रामचारी सिंह 'दिनकर'—	मिट्टी की धोर
(१७७)	पन्त प्रसाद धोर मैथिलीधरराय
(१७८)	संस्कृति के चार प्रश्नाय
(१७९)	बट-पीपल
(१८०) रामचरित उपाध्याय द्वारा सम्पादित—	राष्ट्र भारती
(१८१) रामप्रकाश द्विवेदी—	हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा
(१८२) रामकुमार वर्मा—	चिठीक की चिंता
(१८३) "	विचार-वर्त्मन
(१८४)	कबीर का रहस्यवाद
(१८५)	प्राचिनिक काव्य-संग्रह
(१८६) रामबहोरी मुक्त व मगीरय मिश्र—	हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास
(१८७) राजेश्वरप्रसाद—	भारतकाव्य
(१८८)	बापू के कर्मों में
(१८९) राजेश्वर —	प्राचिनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य
(१९०) सरस्वतीनारायण 'मुर्खामु'—	कीर्तन के उत्पन्न और काव्य के सिद्धान्त
(१९१) सरस्वतीनारायण बुद्धे—	साहित्य के चरण
(१९२) सरस्वतीदास बापुर्वे—	हिन्दी साहित्य का इतिहास
(१९३) सरस्वतीदेवकर व्यास—	पराङ्कर की धोर पत्रकारिता
(१९४) सरस्वतीकांत वर्मा—	नयी हिन्दी कविता के प्रतिमान
(१९५) बिनोबा माके—	साहित्यिकों से
(१९६) विश्वनाथप्रसाद मिश्र—	बाह्यमय विमर्श
(१९७)	हिन्दी का सामयिक साहित्य
(१९८) विश्वनाथ चौहान—	प्राचिनिक हिन्दी काव्य में रहस्यवाद
(१९९) विश्वनरनाथ उपाध्याय—	प्राचिनिक हिन्दी कविता सिद्धान्त और समीक्षा
(२००) विजयेश्वर स्नातक तथा	हिन्दी साहित्य और उसकी प्रगति
शेखरचन्द्र मुनज—	
(२०१) विजयेश्वर स्नातक—	हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास
(२०२) बिनोबदेवकर व्यास—	बोरोपीय साहित्यकार

(२०३) —	बीर कचनाबती
(२०४) सङ्गुतघरण भवस्यो—	हिन्दी गद्य-नाथा
(२०५) " "	साहित्यतरंग
(२०६) सुवीन्द्र—	हिन्दी कविता में युगान्तर
(२०७) " "	साहित्य समीक्षाबन्धि (सम्पादित)
(२०८) सुमित्रानन्दन पन्त—	ग्रन्थि
(२०९) " "	पुंजन
(२१०) " "	ष्योत्सना
(२११) " "	पन्तब
(२१२) " "	प्राधुनिक कवि भाग २
(२१३) " "	स्मृति-चित्र
(२१४) सुरेशचन्द्र गुप्त—	हिन्दी काव्यानुष्ठीसन
(२१५) " "	प्राधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त
(२१६) सुधाकर पाण्डेय—	हिन्दी साहित्य और साहित्यकार
(२१७) सुखसम्पत्ति राय—	भारतवर्ष और उसका स्वातन्त्र्य-संग्राम
(२१८) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'—	परिमत्त
(२१९) " "	भनामिका
(२२०) " "	प्रपद्य
(२२१) सूर्यनारायण त्रिपाठी—	रङ्गिजन-वाचक (संगृहीत)
(२२२) काशी नागरी प्रचारिणी सभा	सूर-सागर
(२२३) सिमाचमसरण गुप्त—	भारतोत्सर्ग
(२२४) —	सैठ गोविन्दराव धर्मिनन्दन ग्रन्थ
(२२५) सोमनाथ गुप्त—	हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास
(२२६) —	सीहार्न सुमन
(२२७) संघवीय कनिसे बल दिल्ली—	वापिक विवरण सन् ६०-६१
(२२८) श्रीराम शर्मा—	संघर्ष और समीक्षा
(२२९) —	श्री नारायण प्रसाद धरोड़ा धर्मिनन्दन ग्रन्थ
(२३०) —	स्वतन्त्रता की संझार
(२३१) धम्मूनाथ सिंह—	हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास
(२३२) धम्मूनाथ पाण्डेय—	प्राधुनिक हिन्दी काव्य में निरापावाद
(२३३) विष्णु कुमार शर्मा—	हिन्दी साहित्य युग और प्रकृतियाँ
(२३४) विबदाल सिंह चौहान—	काव्यभारा
(२३५) विबनाचरण मिश्र—	राष्ट्रीय बीणा
(२३६) विबपुजन सहाय—	विबपुजन रचनाबन्धी
(२३७) वीर कुमारी—	प्राधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना
(२३८) वाङ्मयता दुबै—	काव्य-प्रयोगों के मूल-रूप और उनका विकास



(१६८) रामरहित मिथ—	काव्य-रसण
(१६९) —	राष्ट्रकवि मैबिसीधरण गुठ धर्मनन्दन-प्रण्य
(१७०) —	राजपि धर्मनन्दन प्रण्य
(१७१) रामानन्द त्रिवादी	पार्वती
(१७२) रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित—	बामसी प्रभाबती
(१७३) ,	गोस्वामी तुलसीदास
(१७४) ,	हिन्दी साहित्य का इतिहास
(१७५) रामविभास वर्मा	प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ
(१७६) रामचारी सिंह 'दिनकर—	मिट्टी की भार
(१७७)	पल प्रसाद और मैबिसीधरण
(१७८)	संस्कृति के चार प्रध्याय
(१७९)	बट-नीपत्र
(१८०) रामचरित उपाध्याय द्वारा सम्पादित—	राष्ट्र भारती
(१८१) रामधरध द्विवेदी—	हिन्दी साहित्य के विकास की समस्या
(१८२) रामकुमार वर्मा—	चिन्ता की चिन्ता
(१८३)	विचार-वर्धन
(१८४)	कबीर का रहस्यवाद
(१८५)	धार्मिक काव्य-संग्रह
(१८६) रामबहोरी शुक्ल व मगीरम मिथ—	हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास
(१८७) राजेन्द्रप्रसाद—	भारतकथा
(१८८)	बापू के कर्मों में
(१८९) रघुि राव—	धार्मिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य
(१९०) लक्ष्मीनारायण 'सुर्बासु'—	जीवन के तत्त्व और कव्य के सिद्धान्त
(१९१) लक्ष्मीनारायण शुक्ल—	साहित्य के चरण
(१९२) लक्ष्मीनारायण बापुदेव—	हिन्दी साहित्य का इतिहास
(१९३) लक्ष्मीशंकर व्यास—	पराङ्मुख भी और पत्रकारिता
(१९४) लक्ष्मीकांत वर्मा—	नयी हिन्दी कविता के प्रतिमान
(१९५) विनोबा भावे—	साहित्यिकों से
(१९६) विश्वनाथप्रसाद मिथ—	बाह्यमय विमर्श
(१९७)	हिन्दी का सामयिक साहित्य
(१९८) विश्वनाथ शौक—	धार्मिक हिन्दी काव्य में रहस्यवाद
(१९९) विश्वमरणाथ उपाध्याय—	धार्मिक हिन्दी कविता सिद्धान्त और समीक्षा
(२००) विश्वेश्वर स्नातक तथा	हिन्दी साहित्य और उसकी प्रगति
श्रीमच्छन्द मुनन—	
(२०१) विश्वेश्वर स्नातक—	हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास
(२०२) विनोदशंकर व्यास—	बोलेनीय साहित्यकार

(२०३) —	धीर बचनावली
(२०४) सहस्रसुन्दरणी अक्षरसौ—	हिन्दी गद्य-भाषा
(२०५) " "	साहित्यतरंग
(२०६) सुधीन्द्र—	हिन्दी कविता में युगान्तर
(२०७) " "	साहित्य समीक्षात्मक (सम्पादित)
(२०८) सुमित्रानन्दन पन्थ—	ग्रन्थि
(२०९) ,	पुष्पन
(२१०) ,	क्योस्मा
(२११) " "	पत्सब
(२१२) ,	प्राधुनिक कवि भाग २
(२१३) ,	स्मृति-चित्र
(२१४) धुरेशचन्द्र गुप्त—	हिन्दी काव्यानुवीक्षण
(२१५) ,	प्राधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त
(२१६) सुबाकर पाण्डेय—	हिन्दी साहित्य और साहित्यकार
(२१७) सुखसम्पत्ति राम—	भारतवर्ष और उसका स्वातन्त्र्य-संग्राम
(२१८) सूर्यदाम्बल त्रिपाठी 'निराला'—	परिमल
(२१९)	अनामिका
(२२०) " "	मपरा
(२२१) सूर्यनाथचरण त्रिपाठी—	रश्मिना-नाटक (संगृहीत)
(२२२) काशी मागरी प्रचारिणी समा	सुर-सागर
(२२३) सिवारामधरसु गुप्त—	धार्मोत्सर्ग
(२२४) —	सेठ योबिन्दास अभिनन्दन ग्रन्थ
(२२५) सोमनाथ गुप्त—	हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास
(२२६) —	सौहार्द मुमन
(२२७) संश्लेष्य काशिम दस दिवसी—	काविक निबन्धन सन् ६०-६१
(२२८) श्रीराम धर्म—	संघर्ष और समीक्षा
(२२९) —	श्री मारायण प्रसाद अरोड़ा अभिनन्दन ग्रन्थ
(२३०) —	स्वतन्त्रता की स्मृति
(२३१) धम्मूनाथ सिंह—	हिन्दी महाकाव्य का स्वल्प विकास
(२३२) धम्मूनाथ पाण्डेय—	प्राधुनिक हिन्दी काव्य में निराशावाद
(२३३) विष्णुमार शर्मा—	हिन्दी साहित्य: युग और प्रकृष्टिर्पा
(२३४) विबदान सिंह चौहान—	काव्यपारा
(२३५) विबनारायण मिश्र—	राष्ट्रीय शैली
(२३६) विषणुजन सहाय—	विषणुजन रचनावली
(२३७) वीस कुमारी—	प्राधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना
(२३८) चन्द्रलता दुबे—	काव्य-साठों के मूल-रूप और उनका विकास

(२३८) —	संकर सर्वस्व
(२४०) शान्तिप्रिय द्विवेदी —	संचारिणी
(२४१) —	सुकुल प्रतिनयन ग्रन्थ—
(२४२) स्वामिमुन्दर लाल शीतल—	बबाइर-बोहावती
(२४३) इबारीप्रसाद द्विवेदी—	हिन्दी साहित्य की घूमिका
(२४४)	हिन्दी साहित्य
(२४५) हरिवंद राय बच्चन—	मकुशाता
(२४६) " "	प्रहमपत्रिका
(२४७) " "	नये पुराने फरोखे
(२४८) हरिश्चन्द्र प्रेमी—	शाब के लोकप्रिय हिन्दी कवि
	मानवतासु अतुर्बेदी
(२४९) हरबैच बाहरी—	हिन्दी की काव्य क्षेत्रों का विकास
(२५०) हुंसराज धरबाब—	हिन्दी साहित्य की परम्परा
(२५१) क्षेम—	छायावाद के गौरव चिह्न
(२५२) बिसोचन पाण्डेय—	साकेत बर्धन
(२५३) ज्ञानवती बरवार—	भारतीय नेताओं की हिन्दी सेवा
(३) बंगला-ग्रन्थ	
(२५४) बबैर नाथ बन्धोपाध्याय तथा	
सबनीकान्त बास द्वारा सम्पादित	सेवनाथ बस
(२५५) रबीन्द्रनाथ ठाकुर—	गोपीबलि

## (4) English Books

256 A. K. Dasal.	Social Back-ground of Indian Nationalism.
257 Arbindo.	The Renaissance in India.
258. Alrokar	Position of women in Hindu civilization.
259 Aptey	Sanskrit English Dictionary
260. Balraj Madhok.	A study in Indian Nationalism
261 Contemporary thought of India	
262. Constituent Assembly Official Debates Reporters.	
263. Dutta and Sarakar	Text Book of Modern History Part III
264 Dean Inge.	Personal Religion and life of Devotion.
265. Dryden.	Dramatic Poetry and other essays.
266. E. H Car	Nationalism.
267 Edith Bonet.	Literature and Life.

- 268 Ernest Rhys. Lyric Poetry
- 269 Encyclopaedia Britannica Vol. XX
- 270 Encyclopaedia of Religion and Ethics.
- 271 Feuerbach and end of classical German Philosophy
272. Gurumukh Nihal Singh. Land Marks in Indian Constitutional and national development.
- 273 Henry Tomas. Living Biographies of Famous men.
- 274 Hole Brook Jackson. Readers and critics.
- 275 Hudson. An Introduction to the study of Literature
276. Ishwari Prasad and Subedar A History of Modern India
- 277 Jadunath Sarkar A short History of Aurangzeb.
- 278 Jawaharlal Nehru Discovery of India
- 279 John Key Indian Mutiny
280. J Middleton Mury The problem of style.
- 281 John Drink water The Lyric.
282. Abercrombie. The Epic and Essay
- 283 L S Harris. Nature of English Poetry
- 284 Mayor Sexual life in Ancient India Vol. I
- 285 Mahendra Kumar Sarkar Hindi Mysticism.
286. N C. Ganguly Raja Ram Mohan Roy
- 287 Oxford English Dictionary
- 288 Parliamentary Debates. Official Reports.
- 289 Pascal. The German Ideology
- 290 Rabindra Nath Tagore. Gitanjali
- 291 R R Bhatnagar The Rise and growth of Hindi Journalism.
292. R. Palme Dutt. India Today and To-morrow
293. Ram Avadh Dwivedi. Hindi Literature
294. R. W Livingstone. Selected Passages.
295. S. Johnson Lives of English Poets.
296. S. R. Sharma The making of Modern India.
- 297 S. H Butcher The poetics of Aristotle.
298. S. N Gupta The Cultural Heritage of India
- 299 T S. Elliot. What is a classic.
- 300 The complete poetical works of Percy Bysshe Shelley edited by Thomas Hutchinson 1952.

- 301 The Pocket book of quotation  
tion
302. The Oxford dictionary of  
Quotations.
- 303 T Edwards. The new dictionary of thoughts.
- 304 Vinay Kumar Sarker Creative India
- 305 W P Ker Epic and Romance.
306. W M Dixon English Epic and Heroic Poetry
- 307 World and the Individual.
- 308 World Dictionary

## पत्र-पत्रिकाएँ

### (१) हिन्दी-पत्र

(क) वैदिक-पत्र	
(१) मूर्तन	सन् १९४१
(२) धाम	१३-५-५१
(३) जागरण	११ १२-५९
(४) नव भारत टाइम्स	२३-३ ३०
(५) नव भारत	२३ ३-५८, ८-२२ १९३३
(६) नव जीवन	३०-७-५१, १२ ११-५१
	३०-११ ५१
(७) नवराष्ट्र	२४-७-३० (नवीन परिधिपत्र)
(८) नई बुनिया	१३ मई १९३० (दीपावली विशेषांक)
(९) प्रताप	२३-६ ३४, ४ ५-३० ५ ५ ३०
	६-५-३० २९ ४-६२ धारि
(१०) प्रमाण-पत्रिका	२३-५ ३० (नवीन परिधिपत्र)
(११) सैनिक	७-११-३१ (दीपावली विशेषांक)
(१२) द्विदुस्त्रान	१८-७-५८ १० १२-५९
	२३ ३-६२
(ख) अर्थ साप्ताहिक-पत्र	
(१३) प्रणवीर	९ ३ २५
(ग) साप्ताहिक-पत्र	
(१४) धर्म्युदय	४ जून १९४५
(१५) धाम	२९ मई १९३०
(१६) धाम्या	२४ जुलाई १९३० १५ अगस्त १९३०
(१७) धर्म्युदय	सन् ६१
(१८) नवराष्ट्र (रायपुर)	दीपावली विशेषांक सन् ५७
(१९) नवयुव वारिस धंक	
(२०) प्रताप	सन् १९१३ से १९३३ ई० के विभिन्न मन्वन्वित स्पूट धंक
(२१) प्रहरो	१९ १०-६० (दीपावली विशेषांक)
(२२) कवक	३१ ३-५१
(२३) कविष्णु	सन् १९३०

- (२४) मठपाला  
(२५) मन्मथप्रवेश सम्बन्ध  
(२६) योगी  
(२७) रामराज्य

- (२८) रघुमेरी  
(२९) विष्णु-बास्ती  
(३०) सारथी  
(३१) सैनिक  
(३२) द्विन्दुस्तान

- (घ) पालिक-पत्र  
(३३) हृदयक  
(३४) पालिक-पत्र  
(३५) अन्तिक  
(३६) अन्तिक  
(३७) अन्तिक

(३८) आध्यामी कर्म

(३९) आधा—

(४०) अन्तिक—

(४०) अन्तिक—

८-१-२७, २९-१-२७

४-८-६२

२ अग्रेष १९६०

१ जून १९४५ (पत्रकार घंटा) १६ मार्च  
१९५३ १५ अगस्त १९६० (स्वतन्त्रता दिवस  
विशेषांक)

२६ जुलाई १९६०, २५ अगस्त १९६०

११ अग्रेष १९४९

१७ अगस्त १९४२

अन्तिक विशेषांक

अगस्त, १९६२ २६ सितम्बर ५६, ६ सितम्बर  
१९५९, १५ मई १९६०, ३ जुलाई १९६०,  
(नवीन स्मृति घंटा) १० जुलाई १९६०, १४

अगस्त १९६० (स्वतन्त्रता दिवस विशेषांक)

१३ अगस्त १९६१ (स्वतन्त्रता दिवस घंटा)

२४ सितम्बर १९६१, २० मई १९६२ ८

जुलाई ६२

१०-५ १५

अन्तिक, १९५४, अन्तिक, १९५६

अगस्त १९६३

मई १९४७ सितम्बर, अन्तिक, १९४७ मार्च

१९४८, अन्तिक १९४८, मई १९४९,

अगस्त ४९ अन्तिक ३९, अन्तिक १९५५,

मार्च १९५३ अन्तिक ३३ अगस्त ३३

सितम्बर ३५ अन्तिक ५६ जून ५६ अन्तिक

५६ अग्रेष ५७ सितम्बर ५७ अन्तिक ५८,

जून ६०, मार्च ६१, सितम्बर ६२

अन्तिक ४२, मई १९४४ अग्रेष १९४५

जुलाई १९४५, मार्च १९४६ जून १९४६

जून २७, जुलाई २७ अगस्त २७ सित० २७

अन्तिक २८, जून २८, सित० २८, अन्तिक

१९२८

अन्तिक १९२७

जून १९६० सितम्बर ६०

- (४१) कारम्बिनी  
 (४२) काव्य-कलाकर  
 (४३) कृति  
 (४४) कीमुनी  
 (४५) किशतन  
 (४६) कानुति  
 (४७) कापरला  
 (४८) कीचन चाहित्य  
 (४९) क्यास्ता  
 (५०) त्यापमूमि
- (५१) नर्मदा  
 (५२) नवा समाज  
 (५३) नई घाट  
 (५४) नवनीत  
 (५५) प्रभा  
 (५६) प्राच्य मारुती  
 (५७) प्रतिभा  
 (५८) बज भारती  
 (५९) माकुटी  
 (६०) पुनारम्भ  
 (६१) युग पैठना  
 (६२) कुमाठर  
 (६३) राष्ट्र बाली  
 (६४) राष्ट्र मारुती  
 (६५) रसबंजी
- नवम्बर १९६०  
 जुलाई १९६५, घमेल १९६६  
 घमेल १९६०, मई ६०  
 दिसम्बर ४६  
 जून-जुलाई ६१ (नवीन विद्योपांक)  
 सितम्बर ६१  
 ११ अक्तूबर, १९६२  
 मई १९६०  
 जनवरी ६२ (कावेस संक)  
 घासिन सं० १९८५, काविक सं० १९८५  
 मार्गशीर्ष सं० १९८५, पौष सं० १९८५,  
 फासुन सं० १९८५, चैत्र सं० १९८५, वैशाख  
 सं० १९८६, आषाढ, सं० १९८६, भावेल  
 संवत् १९८६, भाद्र पद सं० १९८६  
 अक्तूबर १९६१, घमेल सहीर गरीसरांकर  
 विद्यार्थी स्मृति संक घगस्त १९६३ नवीन  
 स्मृति संक ।  
 जनवरी १९६२  
 जुलाई १९६२  
 अक्तूबर १९६०  
 काव्यवा (सन् १९१३ १९१५) पीर कानपुर  
 (सन् १९२० १९२६) के प्राय समग्र संक ।  
 जुलाई-अगस्त, १९६२ (परबिन्द विद्योपांक)  
 नवम्बर १९१७, दिस० १९१७, मार्च १८,  
 घमेल १८, जुलाई १८, जून १९१९ अगस्त  
 १९, जून १९२० अक्तूबर १९२०  
 संख्या १४ सं० २००६ मार्गशीर्ष सं० २०१६  
 फासुन सं० २०१६ १७ (नवीन स्मृति संक)  
 १५ नवम्बर १९२३ जनवरी १९२६, फरवरी  
 २६, चैत्र सं० १९८८  
 काविक संवत् २०११  
 जनवरी १९५५  
 २८ नवम्बर १९४३  
 जून १९६०  
 जून १९६० घमेल १९६१  
 मित० १९६२



(६६) विश्वबन्धु

(६७) विशाल मारुत

(६८) विश्वम

(६९) विश्व-मित्र

(७०) बीणा

(७१) सरस्वती

(७२) सप्त-सिद्ध

(७३) समाज

(७४) साहित्य-सन्धेय

(७५) सुधा

(७६) श्री शारदा

(७७) हिन्दी प्रचारक

(७८) हिन्दी मनोरंजन

(७९) इंद

(८०) दिनप्रत्य

सुम्नाक

जुलाई १९२८ जुलाई १९३२, अक्तूबर ३०  
दिसम्बर १९३७, जून ६० जनवरी ६२  
फरवरी-मार्च ६२अप्रैल, १९४२, मई १९४२ अक्तूबर १९४२  
दिसम्बर १९४४ फरवरी १९४१ मई  
१९४१ जून १९४२ मार्च १९४४ अप्रैल  
१९४४नवम्बर १९३३, दिसम्बर १९३३ रजत-  
बयली विशेषांक सन् १९१७-१९४४मार्च १९३४ अक्तूबर १९३४ मार्च १९३५,  
अप्रैल १९३६ नवम्बर १९३७ जून १९४०,  
जुलाई १९४२, मार्च १९४४, अप्रैल १९४५,  
अगस्त १९४५, नवम्बर १९४६ नवम्बर ४७  
जून १९५०, जुलाई १९५०, फरवरी १९५२,  
अप्रैल-मई ५२ मध्यमार्ग विशेषांक जून  
१९५२ जून १९५३ जून १९६०, अग-  
स्त ६० (नवीन विशेषांक)जुलाई १९०८, जुलाई १९१३, जुलाई  
१९१८, अप्रैल १९१८, दिस० १९१८,  
अगस्त १९२० फरवरी १९२१ मई  
१९२२, हीरक बयली विशेषांक सन् १९००  
१९५६ मई १९६० जून १९६०,  
जुलाई ६०

अप्रैल १९६१

अप्रैल १९५४

जून १९५२

नवम्बर १९३१

अक्तूबर १९२० मार्च १९२१, अक्तूबर  
१९२१ नवम्बर १९२१

अप्रैल १९५४

मार्च-अप्रैल १९२७

दिसम्बर १९३१ नवम्बर १९३१, अक्तूबर  
१९४१ (कवितार्क)

जुलाई १९६

(८१) त्रिपत्तना	मार्च १९५६, जून १९६० अगस्त १९६१
(८२) बौद्धिक पत्र	
(८२) आलोचना	अगस्त, १९५२, अक्टूबर १९५६
(८३) आकाशवाणी प्रसारिका	जुलाई-सित० १९५५, जुलाई दिसम्बर १९५५, अगस्त-जून १९५०
८४) जगद	जनवरी १९५३
८५) नागरी प्रचारिणी पत्रिका	द्वितीय भाग सन् १९०२ अंक प्रथम सं० २०१७
(८६) राष्ट्र बीणा	जुलाई १९६०
(८७) रेडियो मंच	जुलाई-दिसम्बर १९५३
(८८) सम्पन्न पत्रिका	मासिक-मार्गशीर्ष अंक १८८२
(८९) साहित्य	अगस्त १९६०
(९०) संस्कृति	जून-जुलाई १९६०
(९१) बालिक-पत्र	
(९१) आकाशवाणी विविधा	सन् १९६०
(९२) राष्ट्रीय हवाईया महाविद्यालय मुंबई, ओपल (प० प्र०)	अगस्त १९६०

ENGLISH MAGAZINES

- (93) Banaras Hindu University Journal Silver Jubilee Number 1942
- (94) Christ Church College, Kanpur Diamond Jubilee Number, 1952 1957 58
- (95) Hindi Review, June 1959
- (96) The Leader 21 2 1924

(३) विविध

(क) व्यक्तिगत सुबनार्द एवं संस्मरण (ख) विविध व्यक्तिगत-पत्र (ग) नबीन जी के प्रकाशित एवं प्रकाशित पत्र आदि ।



(८१) त्रिपय्या	मार्च १९५१, जून १९६० अप्रैल १९६१
(८२) त्रैमासिक पत्र	
(८२) आसोचना	अप्रैल १९५२, अक्टूबर १९५६
(८३) आकाशवाणी प्रसारिका	जुलाई-सित० १९५४ जुलाई दिसम्बर १९५५, अप्रैल-जून १९५७
(८४) जनपद	जनवरी १९५३
(८५) नाबरी प्रचारिणी पत्रिका	छत्र भाम सन् १९०२ अंक प्रथम सं० २०१०
(८६) राष्ट्र बीणा	जुलाई १९६०
(८७) रेडियो मंच	जुलाई-सितम्बर १९५३
(८८) सम्मेलन पत्रिका	प्राधिन-भारतीय संघ १८८९
(८९) छात्रिका	अप्रैल १९६०
(९०) संस्कृति	जून-जुलाई १९६०
(९१) वार्षिक-पत्र	
(९१) आकाशवाणी विविधा	सन् १९६०
(९२) राजकीय इमीडिया महाविद्यालय पत्रिका, सोपान (स० प्र०)	अप्रैल १९६०

ENGLISH MAGAZINES

- (93) Banaras Hindu University Journal, Silver Jubilee Number 1942
- (94) Christ Church College, Kanpur Diamond Jubilee Number, 1952 1957 58
- (95) Hindi Review, June 1959
- (96) The Leader 21 2 1924

(३) विविध

(क) व्यक्तिगत सूचनाएँ एवं संस्मरण (ख) विभिन्न व्यक्तिगत-पत्र (ग) नवीन जी के प्रकाशित एवं अप्रकाशित पत्र आदि ।